भा० दि० जैनसंघ-ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमालाका उद्देश्य

प्राकृत संस्कृत आदि भाषा में निबद्ध दि० जैनागम,
दर्शन, साहित्य, पुराण आदिको यथासम्भव
हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित करना



सञ्चालक

भा० दि० जैनसंघ

ग्रन्थाङ्क १-६

प्राप्तिस्थान
मैनेजर
भा० दि० जैन संघ
चौरासी, मथुरा

मुद्रक—कैलाश प्रेस, बी० ७/९२ डाड़ाबाग (सोनारपुरा) वाराणसी ।

स्थापनाब्द] प्रति ८०० [वी० नि० स० २४६८

Sri Dig Jain Sangha Granthamala No 1-VI

KASAYA-PAHUDAM
VI
PRADESHAVIBHAKTI

BY

GUNADHARACHARYA

WITH

CHURNI SUTRA OF YATIVRASHABHACHARYA

AND

THE JAYADHAVALA COMMENTARY OF

VIRASENACHARYA THERE-UPON

EDITED BY

Pandit Phulachandra Siddhantashastri

EDITOR MAHABANDHA

JOINT EDITOR DHAVALA

Pandit Kailashachandra Siddhantashastri,

Nyayatirtha, Siddhantaratna,

Pradhanadhyapak, Syadvada Digambara Jain

Vidyalaya, Varanasi.

PUBLISAED BY

THE SECRETARY PUBLICATION DEPARTMENT

THE ALL-INDIA DIGAMBAR JAIN SANGHA

CHAURASI, MATHURA.

VIRA-SAMVAT 2484) VIKRAMA S. 2[illegible]

विषय-सूची

Sri Dig. Jain Sangha Grantha Mala

Foundation year—] [—Vira Niravan Samvat 2468

Aim of the Series —

Publication of Digambara Jain Siddhanta, Darsana, Purana, Sahitya and other works in Prakrit, Sanskrit etc. possibly with Hindi Commentary and Translation

DIRECTOR —

SRI BHARATAVARSIYA DIGAMBARA JAIN SANGHA

NO 1 VOL VI

To be had from —

THE MANAGER
SRI DIG. JAIN SANGHA
CHAURASI MATHURA,
U P (INDIA)

Printed by
KANHAIYALAL GUPTA
At The Kailash Press, Sonarpura Varanasi

800 Copies, Price Rs. Twelve only

प्रकाशक की ओर से

कसायपाहुडके छठे भाग प्रदेशविभक्तिको पाठकोंके हाथोंमें देते हुए हमें हर्ष होता है। इस भागमें प्रदेशविभक्तिका स्वामित्व अनुयोगद्वारपर्यन्त भाग है। शेष भाग, स्थितिक तथा झीणाझीण अधिकार सातवें भागमें मुद्रित होगा। इस तरह प्रदेशविभक्ति अधिकार दो भागों में समाप्त होगा। सातवां भाग भी छप रहा है और इसके भी शीघ्र ही छपकर तैयार हो जाने की पूर्ण आशा है।

इस प्रगतिका श्रेय मूलतः दो महानुभावोंको है। कसायपाहुडके सम्पादन प्रकाशन आदिका पूरा व्ययभार डोंगरगढ़के दानवीर सेठ भागचन्द्रजीने उठाया हुआ है। पिछली बार संघके कुण्डलपुर अधिवेशनके अवसर पर आपने इस सत्कार्यके लिये ग्यारह हजार रुपये प्रदान किये थे और इस बार बामोरा अधिवेशनके अवसर पर पाँच हजार रुपये पुनः प्रदान किये हैं। आपकी दानशीला धर्मपत्नी श्रीमती नर्वदाबाई जी भी सेठ साहबकी तरह ही उदार हैं और इस तरह इस दम्पतीकी उदारताके कारण इस महान् ग्रन्थराजके प्रकाशनका कार्य निर्बाध गतिसे चल रहा है।

सम्पादन और मुद्रणका एक तरहसे पूरा दायित्व पं० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीने वहन किया हुआ है। इस तरह उक्त दोनों महानुभावोंके कारण कसायपाहुडका प्रकाशन कार्य प्रशस्त रूपमें चालू है। इसके लिये मैं सेठ साहब उनकी धर्मपत्नी तथा पण्डितजीका हृदयसे आभारी हूँ।

काशीमें गङ्गा तट पर स्थित स्व० बाबू छेदीलाल जी के जिन मन्दिरके नीचेके भागमें जयधवला कार्यालय अपने जन्म कालसे ही स्थित है और यह सब स्व० बाबू छेदीलालजीके पुत्र स्व० बाबू गणेशदास जी तथा पौत्र बा० सालिगरामजी और बा० ऋषभदासजीके सौजन्य तथा धर्मप्रेमका परिचायक है। अतः मैं उनका भी आभारी हूँ।

ऐसे महान् ग्रन्थराजका प्रकाशन पुनः होना संभव नहीं है। अतः जिनवाणीके भक्तोंका यह कर्तव्य है कि इसकी एक एक प्रति खरीद कर जिनमन्दिरोंके शास्त्र भण्डारोंमें विराजमान करें। जिनबिम्ब और जिनवाणी दोनोंके विराजमान करनेमें समान पुण्य होता है। अतः जिनबिम्बकी तरह जिनवाणीको भी विराजमान करना चाहिये।

जयधवला कार्यालय
भदैनी काशी
वीरजयन्ती—२४८४

कैलाशचन्द्र शास्त्री
मंत्री साहित्य विभाग
भा० दि० जैन संघ

विषय-सूची

कसायपाहुडस्स

पदेसविहत्ती

पंचमो अत्थाहियारो



सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारओवइट्ठं

क सा य पा हु डं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

जयधवला

तत्थ

पदेसविहत्ती णाम पंचमो अत्थाहियारो

णमिऊण अणंतजिणे अणंतणाणेण दिट्ठसब्भावे ।

कम्मपदेसविहत्तिं वोच्छामि जहागमं पयदो ॥ १ ॥

अनन्त ज्ञानके द्वारा जिन्होंने सब पदार्थोंको जान लिया है उन अनन्तनाथ जिनको नमस्कार करके कर्मप्रदेशविभक्तिको आगमके अनुसार सावधान होकर कहता हूँ ॥ १ ॥

§ १. 'पयडीए मोहणिज्जा०' एदिस्से विदियमूलगाहाए पुरिमद्धम्मि[1] णिलीण-पयडि-ट्ठिदि-अणुभागविहत्तीओ परूविय संपहि तिस्से चेव गाहाए पच्छिमद्धम्मि[2] अवट्ठिदउक्कस्समणुक्कस्सं ति पदेण सूचिदपदेसविहत्तिं भणिस्सामो। एदेण पदेण पदेसविहत्ती कथं सूचिदा ? उच्चदे—उक्कस्सं ति पदेण उक्कस्सपदेसविहत्ती परूविदा। अणुक्कस्सं ति पदेण वि अणुक्कस्सविहत्ती जाणाविदा। जेणेदाणि वि दो वि पदाणि देसामासियाणि तेण एत्थ मूलुत्तरपयडिपदेसविहत्तिगब्भा पदेसविहत्ती णिलीणा त्ति दट्ठव्वं। तत्थ–

❀ पदेसविहत्ती दुविहा—मूलपयडिपदेसविहत्ती च उत्तर[3]पयडिपदेसविहत्ती च।

§ २. एवं पदेसविहत्ती दुविहा चेव होदि, तदियादिपदेसविहत्तीणमसंभवादो। एत्थतण 'च' सद्दो उत्तसमुच्चयट्ठो त्ति दट्ठव्वो। ण विदिओ 'च' सद्दो अणत्थओ, दुविहणयाणुग्गहट्ठमवट्ठिदाणं दोण्हं 'च' सद्दाणमेयत्थत्ताभावादो[4]।

❀ तत्थ मूलपयडिपदेसविहत्तीए गदाए।

---

§ १ 'पयडीए मोहणिज्जा०' इस दूसरी मूल गाथाके पूर्वार्धमें समाविष्ट प्रकृतिविभक्ति, स्थितिविभक्ति और अनुभागविभक्तिका कथन करके अब उसी गाथाके उत्तरार्धमें आये हुए 'उक्कस्समणुक्कस्स' पदके द्वारा सूचित होनेवाली प्रदेशविभक्तिको कहेंगे।

शंका—'उक्कस्समणुक्कस्स' इस पदसे प्रदेशविभक्ति कैसे सूचित हुई ?

समाधान—'उक्कस्स' इस पदके द्वारा उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति कही गई है और 'अणुक्कस्स' इस पदके द्वारा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति कही गई है। यत ये दोनों पद देशामर्षक हैं अत यहाँ मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्ति और उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्तिरूप प्रदेशविभक्ति गर्भित है, ऐसा जानना चाहिये। वहाँ—

❀ प्रदेशविभक्ति दो प्रकारकी है—मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्ति और उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्ति।

§ २ इस प्रकार प्रदेशविभक्ति दो प्रकारकी ही होती है, क्योंकि तीसरी आदि प्रदेशविभक्तियाँ सभव नहीं हैं। यहाँ पर जो 'च' शब्द आया है वह उक्त अर्थका समुच्चय करनेके लिये है ऐसा समझना चाहिये। यदि कहा जाय कि उक्तका समुच्चय एक ही 'च' शब्दसे हो जाता है अत चूर्णिसूत्रमें आया हुआ दूसरा 'च' शब्द व्यर्थ है सो भी कहना ठीक नहीं है, क्योंकि दो 'च' शब्द द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयकी अनुकूलता बतलानेके लिये दिये गये हैं, अत वे दोनों एकार्थक नहीं हैं।

❀ उनमेंसे मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्तिके समाप्त होने पर।

---

१ आ०प्रतौ 'पुरिमत्थम्मि' इति पाठः। २, आ०प्रतौ 'पच्छिमत्थम्मि' इति पाठः। ३ आ०प्रतौ '–पदेसविहत्ती उत्तर–' इति पाठ। ४ ता०प्रतौ 'मसद्दाणमेयत्तत्थाभावादो' इति पाठ।

§ ३ मूलपयडिपदेसविहत्तीए परूविदाए पच्छा उत्तरपयडिपदेसविहत्ती परूविदव्वा त्ति एदेण वयणेण जाणाविदं । तेणेदं देसामासियं सुत्तं । एदस्स विवरणट्ठं परूविदउच्चारणमेत्थ भणिस्सामो—

§ ४ पदेसविहत्ती दुविहा—मूलपयडिपदेसविहत्ती उत्तरपयडिपदेसविहत्ती चेव । मूलपयडिपदेसविहत्तीए तत्थ इमाणि बावीस अणिओगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति । तं जहा—भागाभाग १ सव्वपदेसविहत्ती २ णोसव्वपदेसविहत्ती ३ उक्कस्सपदेसविहत्ती ४ अणुक्कस्सपदेसविहत्ती ५ जहण्णपदेसविहत्ती ६ अजहण्णपदेसविहत्ती ७ सादियपदेसविहत्ती ८ अणादियपदेसविहत्ती ९ धुवपदेसविहत्ती १० अद्धुवपदेसविहत्ती ११ एगजीवेण सामित्तं १२ कालो १३ अंतरं १४ णाणाजीवेहि भंगविचओ १५ परिमाणं १६ खेत्तं १७ पोसणं १८ कालो १९ अंतरं २० भावो २१ अप्पाबहुअं २२ चेदि । पुणो भुजगार-पदणिक्खेव-वड्ढि-ट्ठाणाणि च ।

§ ५. संपहि भागाभागं दुविहं—जीवभागाभागं पदेसभागाभागं चेदि । तत्थ जीवभागाभागं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्कस्सपदेसविहत्तिया[1] जीवा सव्वजीवाणं केवडिओ भागो ? अणंतिमभागो । अणुक्कस्सपदेस० जीवा सव्वजी० अणंता भागा[2] । एवं तिरिक्खोघं ।

---

§ ३ मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्तिका कथन करके पीछे उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्ति कहनी चाहिये यह इस चूर्णिसूत्रके द्वारा बतलाया गया है। अतः यह सूत्र देशामर्षक है, इसलिए इसका व्याख्यान करनेके लिये कही गई उच्चारणावृत्तिको यहाँ कहते हैं—

§ ४ प्रदेशविभक्ति दो प्रकारकी है—मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्ति और उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्ति। उनमेंसे मूलप्रकृतिप्रदेशविभक्तिमें ये बाईस अनुयोगद्वार जानने योग्य हैं। वे इस प्रकार हैं—भागाभाग १ सर्वप्रदेशविभक्ति २, नोसर्वप्रदेशविभक्ति ३, उत्कृष्टप्रदेशविभक्ति ४ अनुत्कृष्टप्रदेशविभक्ति ५, जघन्यप्रदेशविभक्ति ६, अजघन्यप्रदेशविभक्ति ७, सादिप्रदेशविभक्ति ८ अनादिप्रदेशविभक्ति ९, ध्रुवप्रदेशविभक्ति १०, अध्रुवप्रदेशविभक्ति ११, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व १२ काल १३, अन्तर १४ नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय १५, परिमाण १६, क्षेत्र १७, स्पर्शन १८, काल १९, अन्तर २०, भाव २१ और अल्पबहुत्व २२। इनके सिवा भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ये अनुयोगद्वार और भी हैं।

§ ५ अब भागाभागको कहते हैं। वह दो प्रकारका है—जीवभागाभाग और प्रदेशभागाभाग। उनमेंसे जीवभागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

---

१ आ० प्रतौ 'मोह० उक्कस्सिये पदेसविहत्तिया' इति पाठः। २. आ०प्रतौ 'अणंता भागं' इति पाठः।

§ ६. आदेसेण णिरय० णेरइएसु मोह० उक्क० पदेस० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। अणुक्क० असंखेज्जा भागा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्स-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइदो त्ति। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०-सव्वट्ठसिद्धि० उक्क० पदेसवि० सव्व० केवडि० ? संखे०भागो। अणुक्कस्स० संखेज्जा भागा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ७. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदे०। ओघेण मोह० जहण्णाजहण्ण० उक्कस्साणुक्कस्स०भंगो। एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ८. पदेसभागाभागाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० भागाभागो णत्थि, मूलपयडिअप्पणाए पदभेदाभावादो[1]। अथवा मोहणीय-सव्वपदेसा सेससंतकम्मपदेसेहिंतो किं सरिसा असरिसा त्ति संदेहेण विणडिय[2]-

§ ६ आदेशसे नरकगतिमें नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब नारकी जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले असख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? सख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ७ जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकर्मकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका भागाभाग उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंके भागाभाग की तरह होता है। इस प्रकार अनाहारीपर्यन्त सर्व मार्गणाओंमें ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—जिन जीवोंकी सख्या अनन्त है उनमें अनन्तैकभाग जीव उत्कृष्ट प्रदेश विभक्तिवाले होते हैं और अनन्त बहुभाग जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं। जिनकी सख्या असख्यात है उनमें असख्यातैकभाग जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले और असंख्यात बहुभाग जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं। तथा जिनकी सख्या सख्यात है उनमें सख्यातैकभाग जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले और सख्यातबहुभाग जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं। इसी प्रकार जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका भागाभाग होता है, क्योंकि उत्कृष्ट प्रदेशसचय और जघन्य प्रदेशसंचयकी सामग्री सुलभ नहीं है जैसा कि आगे स्वामित्वानुगमसे ज्ञात होगा।

§ ८ प्रदेशभागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयका भागाभाग नहीं है, क्योंकि मूलप्रकृतिविभक्तिकी अपेक्षा पदभेद नहीं है। अथवा मोहनीयकर्मके सब प्रदेश शेष सत्कर्मप्रदेशोंके समान होते हैं अथवा असमान होते हैं इस सन्देहसे व्याकुल शिष्यकी बुद्धिकी व्याकुलताको दूर करनेके

१ ता०प्रतौ 'पदेसभेदाभावादो' इति पाठ। २ ता०प्रतौ 'विगडिय' इति पाठ।

सिस्सस्स पुव्विल्लउत्तविणासणट्ठमिमा परूवणा एत्थ असंबद्धा वि कीरदे। तं जहा—जोगवसेण कम्मसरूवेण परिणदकम्मइयवग्गणक्खंधे पुंजिय पुणो आवलियाए असंखे०-भागेण भागं घेत्तूण तद्दव्वं पुध ट्ठविय पुणो सेसदव्वं सरिसअट्ठभागे कादूण[1] एवं ठवेदव्वं— । पुणो आवलियाए असंखे० भागं विरलिय पुव्वमवणिदभागं समखंडं कादूण दिण्णे तत्थेगखंडं मोत्तूण बहुखंडेसु पढमपुंजे पक्खित्तेसु वेदणीयभागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए समखंडं करिय दादूण तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेसबहु-रूवधरिदखंडेसु विदियपुंजे पक्खित्तेसु मोहणीयभागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदं अवट्ठिदविरलणाए समखंडं करिय दादूण तत्थेगभागं मोत्तूण सेसबहुभागेसु सरिस तिण्णिभागे करिय मज्झिल्लतिसु पुंजेसु[2] पुध पुध पक्खित्तेसु णाणावरणीय-दंसणा-वरणीय-अंतराइयाणं भागा होंति। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए समखंडं करिय दादूण पुणो तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदेसु सरिसवेभागे कादूण चउत्थपुंजे पक्खित्तेसु णामा-गोदभागा होंति। पुणो सेसेगरूवधरिदं पंचमपुंजे पक्खित्ते आउअभागो होदि। सव्वत्थोवो आउअभागो। णामा-गोदभागा दो वि सरिसा विसेसाहिया। णाण-दंसण-अंतराइयाणं भागा तिण्णि वि सरिसा विसेसाहिया।

किये असम्बद्ध होने पर भी यह कथन यहाँ किया जाता है। जो इस प्रकार है—योगके वशसे कर्मरूपसे परिणत हुए कार्मणवर्गणा स्कन्धको एकत्र करके उसमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर जो द्रव्य आवे उसे पृथक् स्थापित कर और शेष द्रव्यके समान आठ भाग करके इस प्रकार स्थापित करे— । फिर आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके पहले अलग किये गये भागके समान खण्ड करके विरलित राशिपर देनेपर वहाँ एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंको प्रथम पुंजमें मिलाने पर वेदनीयकर्मका भाग होता है। फिर एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त शेष द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके देनेपर वहाँ एक अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको छोड़कर शेष सब विरलित रूपोंपर दिये गये खण्डोंको दूसरे पुंजमें मिला देनेपर मोहनीयकर्मका भाग होता है। पुनः एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त शेष द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके देकर उनमेंसे एक भागको छोड़कर शेष बहुभागोंके समान तीन भाग करके मध्यके तीन पुंजोंमेंसे प्रत्येकमें एक एक भागके मिलाने पर ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय और अन्तरायकर्मके भाग होते हैं। पुनः एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त शेष द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके देकर उनमेंसे एक विरलित रूपपर दिये गये खण्डको छोड़कर शेष सब रूपोंपर दिये गये खण्डोंके दो समान भाग करके चौथे पुंजमें मिलानेपर नामकर्म और गोत्रकर्मके भाग होते हैं। पुनः शेष बचे एक खण्डको पंचम पुंजमें मिलानेपर आयुकर्मका भाग होता है। अतः आयुकर्मका भाग सबसे थोड़ा है। नामकर्म और गोत्रकर्मके दोनों भाग समान हैं, किन्तु आयुकर्मके भागसे विशेष अधिक हैं। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मके तीनों भाग समान हैं, किन्तु नामकर्म और गोत्र-

1 ता प्रतौ 'अट्ठभागं कादूण' इति पाठः। 2. ता प्रतौ 'तिसु जेसु' इति पाठः।

मोहणीयभागो विसेसाहिओ। वेयणीयभागो विसेसाहिओ। जहा बंधमस्सिदूण अट्ठण्णं कम्माणं पदेसभागाभागपरूवणा कदा तहा संतमस्सिदूण वि कायव्वा, विसेसाभावादो। णवरि अट्ठण्हं कम्माणं सव्वदव्वस्स असंखे०भागो आउअदव्व। णाणावरण-दंसणावरण-मोह-णाम गोदंतरायाणं दव्वं पादेक्कं सव्वदव्वस्स सत्तमभागो देसूणो। वेयणीयस्स सत्तमभागो सादिरेयो। एवं चदुसु वि गदीसु बंध-संते[1] अस्सिदूण पदेसभागाभाग-परूवणा अट्ठण्हं पि कम्माणं कायव्वा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

कर्मके भागसे विशेष अधिक हैं। मोहनीयकर्मका भाग उक्त कर्मोंके भागसे विशेष अधिक है और वेदनीयकर्मका भाग मोहनीयकर्मके भागसे विशेष अधिक है। जैसे बंधको लेकर आठों कर्मोंके प्रदेशोंके भागाभागका कथन किया है वैसे ही सत्ताकी अपेक्षासे भी करना चाहिये, दोनोंमें कोई अन्तर नहीं है। इतनी विशेषता है कि आठों कर्मोंका जो सब द्रव्य है उसके असंख्यातवें भागप्रमाण आयुकर्मका द्रव्य है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, नाम, गोत्र और अन्तराय कर्मोंमें से प्रत्येक का द्रव्य सर्व द्रव्यके कुछ कम सातवें भागप्रमाण है और वेदनीयकर्मका द्रव्य कुछ अधिक सातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार चारों ही गतियोंमें बंध और सत्ताकी अपेक्षा आठों कर्मोंके प्रदेशोंके भागाभागका कथन करना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—जीव प्रतिसमय एक समयप्रबद्धका बंध करता है। यदि उत्कृष्ट योग आदि उत्कृष्ट प्रदेशबन्धकी सामग्री होती है तो उत्कृष्ट समयप्रबद्धका बंध करता है अन्यथा अनुत्कृष्ट समयप्रबद्धका बंध करता है। इसी प्रकार जघन्य और अजघन्य समयप्रबद्धके बन्धके विषयमें भी जानना चाहिये। बन्ध होते ही वह समयप्रबद्ध आठ भागोंमें विभाजित हो जाता है। उसके विभाजित होनेका जो क्रम मूलमें बतलाया है उसे अंकसदृष्टिके रूपमें इस प्रकार समझना चाहिए—कल्पना कीजिये कि समयप्रबद्धके परमाणुओंका परिमाण ६५५३६ है और आवलिके असंख्यातवें भागका प्रमाण ४ है। अत ६५५३६ में ४ से भाग देने पर लब्ध १६३८४ आता है। इस एक भागको जुदा रखकर बहुभाग ६५५३६—१६३८४=४९१५२ के आठ समान भाग करने पर प्रत्येक भागका प्रमाण ६१४४ होता है। इनमेंसे प्रत्येक कर्मको एक एक भाग दे दो। फिर आवलिके असंख्यातवें भाग ४ का विरलन करके १ १ १ १ और शेष बचे एक भाग १६३८४ के चार समान भाग करके प्रत्येक एक पर दो। आजकलकी रीतिके अनुसार इसी बातको कहना होगा कि ४ का भाग १६३८४ में दो और लब्ध एक भाग ४०९६ को जुदा रखकर शेष बहुभाग १६३८४—४०९६=१२२८८ वेदनीयको दो। जुदे रखे एक भाग ४०९६ में फिर ४ से भाग दो। लब्ध एक भाग १०२४ को जुदा रखकर शेष बहुभाग ४०९६—१०२४=३०७२ मोहनीयको दो। शेष बचे एक भाग १०२४ में फिर ४ से भाग दो। लब्ध एक भाग २५६ को जुदा रखकर शेष बहुभाग १०२४—२५६=७६८ के तीन समान भाग करके ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तरायको दो। शेष एक भाग २५६ में पुन ४ का भाग देकर लब्ध एक भाग ६४ को जुदा रखो और शेष बहुभाग २५६—६४=१९२ के दो समान भाग करके नाम और गोत्रको एक-एक भाग दो। बाकी बचा एक भाग ६४ आयुकर्मको दो। ऐसा करनेसे प्रत्येक कर्मको इस प्रकार द्रव्य मिला—

---

१ ता०प्रतौ 'बंधे संते' इति पाठः।

§ ९. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण जहण्णसमयपबद्धमस्सिदूण अट्ठण्हं कम्माणं पदेसबंटणविहाणस्स उक्कस्ससमयपबद्धबंटणविहाणभंगो। जहण्णसंतमस्सिदूण अट्ठण्हं पि कम्माणं पदेसबंटणस्स उक्कस्ससंतकम्मपदेसबंटणभंगो। एवं णादूण णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

वेदनीय	मोहनीय	ज्ञानावरण	दर्शनावरण	अन्तराय
६१४४	६१४४	६१४४	६१४४	६१४४
१२२८८	३०७२	२५६	२५६	२५६
१८४३२	९२१६	६४००	६४००	६४००

नाम	गोत्र	आयु
६१४४	६१४४	६१४४
९६	९६	६४
६२४०	६२४०	६२ ८

अतः सबसे कम भाग आयुको मिला। उससे अधिक भाग नाम और गोत्रको मिला। नाम और गोत्रसे अधिक भाग ज्ञानावरण आदिको मिला। उनसे अधिक भाग मोहनीयको और मोहनीयसे अधिक भाग वेदनीयको मिला। यह बटवारा बंधकी अपेक्षासे बतलाया है। बन्धकी अपेक्षा जो आठों कर्मोंका बटवारा किया है उसी प्रकार सत्त्वकी अपेक्षा भी जानना चाहिये। किन्तु जिस प्रकार सात कर्मोंका बन्ध निरन्तर होता है उस प्रकार आयु कर्मका बन्ध निरन्तर नहीं होता। अतः बन्धकी अपेक्षा आठ कर्मोंका जो भाग पहले बतलाया है वह सत्त्वकी अपेक्षा नहीं प्राप्त होता। किन्तु आठों कर्मोंका जो समुचित द्रव्य है आयुकर्मका द्रव्य उसके असंख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है, अतः वेदनीयको छोड़कर शेष छह कर्मोंमेंसे प्रत्येकका द्रव्य कुछ कम सातवें भाग और वेदनीयका द्रव्य साधिक सातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। इस प्रकार बन्धकी अपेक्षा सत्तामें स्थित द्रव्यमें इतनी विशेषता है। इस विशेषताके अनुसार सब द्रव्यका असंख्यातवाँ भाग सबसे पहले अलग करदे। यह आयुकर्मका भाग होगा। शेष असंख्यात बहुभागका सात कर्मोंमें उसी क्रमसे बटवारा कर ले जिस क्रमसे बन्धकी अपेक्षा किया है। तात्पर्य यह है कि सत्त्वकी अपेक्षा बटवारा करते समय आयुके बिना सात कर्मोंमें ही 'बहुभागे समभागो' इत्यादि नियमके अनुसार बटवारा करना चाहिये और आयुकर्मको अलग सब संचित द्रव्यका असंख्यातवाँ भाग दे देना चाहिये। मान लीजिये सब संचित द्रव्यका प्रमाण ६५५३६ है और असंख्यातका प्रमाण ३२ है तो ६५५३६ में ३२ का भाग देने पर २०४८ प्राप्त होते हैं। इस प्रकार सब द्रव्यका यह जो असंख्यातवाँ भाग प्राप्त हुआ वह आयुकर्मका हिस्सा है। अब शेष रहा ६३४८८ सो इसका पूर्वोक्त विधानसे शेष सात कर्मोंमें बटवारा कर लेना चाहिये।

§ ९. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे जघन्य समयप्रबद्धकी अपेक्षा आठों कर्मोंके प्रदेशोंके बँटवारेका विधान उत्कृष्ट समयप्रबद्धके बँटवारेके विधानकी तरह है। तथा जघन्यप्रदेशसत्त्वकी अपेक्षा आठों ही कर्मोंके प्रदेशोंका बँटवारा उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके बँटवारेके समान होता है। इस प्रकार जानकर अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ १०. सव्वविहत्ति-णोसव्वविहत्तीणं दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० सव्वपदेसा सव्वविहत्ती। तदूणो णोसव्वविहत्ती। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ११. उक्कस्स-अणुक्कस्सविहत्ती० दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण मोह० सव्वुक्कस्सदव्वं उक्कस्सविहत्ती। तदूणमणुक्कस्सविहत्ती। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ १२. जहण्णाजहण्णविहत्ति० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० सव्वजहण्णं पदेसग्गं जहण्णविहत्ती। तदुवरि अजहण्णविहत्ती। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ १३. सादि-अणादि-धुव-अद्धुवाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क० अणुक्क० जहण्ण० किं सादिया किमणादिया किं धुवा किमद्धुवा? सादि-अद्धुवा। अज० किं सादिया ४? अणादिया धुवा अद्धुवा वा। आदेसेण सव्वासु गदीसु सव्वपदाणि सादि-अद्धुवाणि। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

---

§ १० सर्वविभक्ति और नोसर्वविभक्तिका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके सब प्रदेशोंको सर्वविभक्ति कहते हैं और उन से न्यून प्रदेशोंको नोसर्वविभक्ति कहते हैं। अर्थात् यदि सब प्रदेशोंमें से एक भी प्रदेशको कम कर दिया जाय तो वे प्रदेश नोसर्वविभक्ति कहे जाते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ११ उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके सर्वोत्कृष्ट द्रव्यको उत्कृष्ट विभक्ति कहते हैं और उससे न्यून द्रव्यको अनुत्कृष्टविभक्ति कहते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ १२ जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके सबसे जघन्य प्रदेशोंको जघन्य प्रदेशविभक्ति कहते हैं और उससे ऊपरके प्रदेशोंको अजघन्य प्रदेशविभक्ति कहते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ १३ सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव अनुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति, अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति और जघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है? सादि और अध्रुव है। अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है? अनादि, ध्रुव और अध्रुव है। आदेशसे सब गतियोंमें सब पद सादि और अध्रुव होते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—मोहनीयकर्मके क्षय होनेके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है और इससे अतिरिक्त सब अजघन्य प्रदेश सत्कर्म है, अत अजघन्य प्रदेश सत्कर्ममें सादि विकल्प सम्भव नहीं, शेष तीन अनादि, ध्रुव और अध्रुव सम्भव हैं। अनादिका खुलाशा तो पहले किया ही है। तथा भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव और अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव विकल्प होता है। अब रहे उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशसत्कर्म सो इन तीनोंमें सादि और अध्रुव

§ १४ सामित्तं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च । उक्कस्सए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्कस्सिया पदेसविहत्ती कस्स ? जो जीवो बादरपुढविकाइएसु बेहि सागरोवमसहस्सेहि सादिरेएहि ऊणियं कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ० एवं वेयणाए पुव्वविहाणेण संसरिदूण गदो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु तेत्तीससागरोवमाउट्ठिदीएसु उववण्णो । तदो उव्वट्टिदसमाणो पंचिंदिएसु अंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो तेत्तीससागरोवमाउट्ठिदिएसु णेरइएसु उववण्णो । पुणो तत्थ अपच्छिमतेत्तीससागरोवमाउणिरयभवग्गहण-अंतोमुहुत्तचरिमसमए वट्टमाणस्स मोहणीयस्स उक्कस्सपदेसविहत्ती । एत्थ उवसंहारस्स वेयणाभंगो ।

ये दो ही विकल्प सम्भव हैं। जघन्य प्रदेशसत्कर्म तो क्षय होनेके अन्तिम समयमें होता है इसलिये उसमें सादि और अध्रुव ये दो ही विकल्प सम्भव हैं यह स्पष्ट ही है। इसी प्रकार उत्कृष्ट और उसके पश्चात् होनेवाला अनुत्कृष्ट भी कादाचित्क है, इसलिये इनमें भी सादि और अध्रुव ये दो विकल्प ही सम्भव हैं। यह तो ओघसे विचार हुआ। आदेशसे विचार करने पर चारों गतियाँ अलग-अलग जीवोंकी अपेक्षा कादाचित्क हैं, इसलिए इनमें उत्कृष्ट आदि चारों पद सादि और अध्रुव होते हैं। अन्य मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषता जानकर उत्कृष्ट आदिके सादि आदि पदोंकी योजना कर लेनी चाहिये।

§ १४ स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? जो जीव बादर पृथिवीकायिकोंमें कुछ अधिक दो हजार सागर कम कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहा। इस प्रकार वेदना अनुयोगद्वारमें कहे गये विधानके अनुसार भ्रमण करके नीचे सातवीं पृथिवीके तेतीस सागरकी आयुवाले नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। उसके बाद वहाँसे निकल कर पञ्चेन्द्रियोंमें अन्तर्मुहूर्त काल तक रह कर पुनः तेतीस सागरकी स्थितिवाले नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। इस प्रकार तेतीस सागरकी आयुवाले नरकमें अन्तिम भव ग्रहण करके जब वह जीव उस भवके अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें वर्तमान होता है तो उसके चरम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। यहाँ उपसंहार वेदनाअनुयोगद्वारके समान जानना चाहिये।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी वही जीव हो सकता है जिसके अधिकसे अधिक कर्मप्रदेशोंका संचय हो। ऐसा संचय जिस जीवको हो सकता है उसीका कथन यहाँ किया गया है। खुलासा इस प्रकार है—जो जीव बादर पृथिवीकायिकोंमें त्रस पर्यायकी उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक दो हजार सागर कम कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहा। वहाँ रहते हुए बहुत बार पर्याप्त हुआ और थोड़ी बार अपर्याप्त हुआ। तथा जब पर्याप्त हुआ तो दीर्घायुवाला ही हुआ और जब अपर्याप्त हुआ तो अल्पायुवाला ही हुआ। ये दोनों बातें बतलानेका कारण यह है कि अपर्याप्तके योगसे पर्याप्तका योग असंख्यातगुणा होता है और योगके असंख्यातगुणा होनेसे पर्याप्तके बहुत प्रदेशबंध होता है। तथा जब जब आयुबंध किया तब तब उसके योग्य जघन्य योगसे किया, जिससे मोहनीयके लिये अधिक द्रव्यका संचय हो सके। तथा बारम्बार उत्कृष्ट योगस्थान हुआ और बारम्बार विशेष संक्लिष्ट परिणाम हुए। इस प्रकार बादर पृथिवीकायिकोंमें भ्रमण करके बादर त्रस पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। यद्यपि स्थावर पर्यायका निषेध कर देने से ही सूक्ष्मत्वका निषेध हो जाता है क्योंकि स्थावरपर्यायके सिवा अन्यत्र

§ १५. आदेसेण णेरइएसु ओघं। एवं सत्तमाए पुढवीए। णेरइयाणं पढमाए

सूक्ष्मता नहीं पाई जाती। फिर भी विग्रहगतिमें वर्तमान त्रसोको सूक्ष्म नामकर्मका उदय न होते हुए भी सूक्ष्म माना जाता है, क्योंकि वे अनन्तानन्त विस्रसोपचयोसे उपचित औदारिक नोकर्मस्कन्धोंसे विनिर्मित देहसे रहित होते हैं। इसीलिये यहाँ त्रस पर्यायके साथ वादर शब्दका प्रयोग किया है। वादर त्रस पर्याप्तकोंमें भ्रमण करते हुए भी पर्याप्तके भव वहुत धारण करता है और अपर्याप्तके भव कम धारण करता है आदि वातें लगा लेनी चाहिये जैसे कि वादर पृथिवीकायिकोंमें भ्रमण करते हुए वतलाई थीं। इस प्रकार वादर त्रस पर्याप्तकोंमे भ्रमण करके अन्तिम भवमें सातवें नरकके नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। नरकमें उत्कृष्ट सक्लेश होनेसे उत्कृष्ट स्थितिवन्ध होता है, इसलिये अन्तिम भवमें नरकमें उत्पन्न कराया है। शायद कहा जाय कि यदि ऐसा है तो वारम्बार नरकमें ही उत्पन्न क्यों नहीं कराया सो इसका उत्तर यह है कि वह जीव नरकमें ही वारम्वार उत्पन्न होता है। किन्तु लगातार नरकमे उत्पन्न होना सभव न होनेसे उसे अन्यत्र उत्पन्न कराया गया है। नरकमें भी उत्पन्न होता हुआ सातवें नरकमें ही वहुत वार उत्पन्न होता है, क्योंकि अन्य नरकोंमें तीव्र सक्लेश और इतनी लम्बी आयु वगैरह नहीं होती। आशय यह है कि वादर त्रसकायकी स्थिति पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक दो हजार सागर है। इतने काल तक वादर त्रसपर्यायमें भ्रमण करते हुए जितनी वार सातवे नरकमे जानेमें समर्थ होता है उतनी वार जाकर जव अन्तिम वार सातवें नरकमें जन्म लेता है तो उस अन्तिम भवके अन्तिम समयमें उस जीवके मोहनीयकर्मका उत्कृष्ट प्रदेशसचय होता है, अत वह जीव उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी है। साराश यह है कि उत्कृष्ट प्रदेशसचयके लिए छ वस्तुएँ आवश्यक हैं—एक तो लम्बी भवस्थिति, दूसरे लम्बी आयु, तीसरे योगकी उत्कृष्टता, चौथे उत्कृष्ट सक्लेश, पाँचवें उत्कर्षण और छठा अपकर्षण। लम्बी भवस्थिति और लम्बी आयुके होनेसे विना किसी विच्छेदके बहुत कर्मपुद्गलोंका ग्रहण होता रहता है, अन्यथा निरन्तर उत्पन्न होने और मरने पर बहुतसे कर्मपुद्गलोंकी निर्जरा हो जाती है। तथा उत्कृष्ट योगस्थानके रहने पर वहुत कर्म-परमाणुओंका वन्ध होता है और उत्कृष्ट सक्लेश परिणामके होने पर उत्कृष्ट स्थितिवन्ध होता है जिससे कर्मनिषेकोंकी जल्दी निर्जरा नहीं होती। इसी तरह उत्कर्षणके द्वारा नीचेके निषेकोंमें स्थित बहुतसे परमाणुओंकी स्थितिको वढ़ाकर ऊपरके निषेकोंमें उनका निक्षेपण करता है और अपकर्षणके द्वारा ऊपरके निषेकोंमें स्थित थोड़े परमाणुओंकी स्थितिको घटाकर नीचेके निषेकोंमें उनका स्थापन करता है। अनुभागविभक्तिमें यह वतला ही आये हैं कि निषेक रचनामें नीचे नीचे परमाणुओंकी सख्या अधिक होती है और ऊपर ऊपर वह कमती होती जाती है। अत उत्कर्षण अपकर्षणके द्वारा नीचे तो थोड़े परमाणुओंका निक्षेपण होता है, किन्तु ऊपर अधिक परमाणुओंका निक्षेपण करता है और ऐसा होनेसे प्रदेशसचयमें वृद्धि ही होती है। इन्हीं वातोंको लक्ष्यमें रखकर उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके स्वामीका कथन किया है। वादर पृथिवी-कायिकोंमें ही क्यों उत्पन्न कराया गया आदि प्रश्नोंका समाधान आगे उत्तरप्रदेशविभक्तिमें ग्रन्थकार स्वय करेंगे, अत यहाँ नहीं लिखा है। इस प्रकार यद्यपि अन्य सव ग्रन्थोंमें अन्तिम समयमें ही उत्कृष्ट प्रदेशसचय वतलाया गया है, किन्तु आगे जयधवलाकारने यह वतलाया है कि किसी किसी उच्चारणामें नरकसम्वन्धी चरिम समयसे नीचे अन्तर्मुहूर्तकाल उतरकर उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामित्व होता है, क्योंकि आयुके वधकालमें मोहनीयका क्षय होनेसे वादको जो सचय होता है वह बहुत नहीं होता।

§ १५. आदेशसे नारकियोंमें ओघकी तरह जानना चाहिए। इसी प्रकार सातवीं

जाव छट्ठि त्ति मोह० उक्क० पदेस० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो तिरिक्खेसु उववण्णो तत्थ संखेज्जाणि अंतोमुहुत्तियतिरिक्खभवग्गहणाणि भमिदूण लहुमेव अप्पप्पणो णेरइएसु उववण्णो तस्स पढमसमयणेरइयस्स उक्कस्सपदेसविहत्ती।

§ १६. तिरिक्खगदीए तिरिक्खचउक्कम्मि मोह० उक्क० पदेस० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो संतो अप्पप्पणो तिरिक्खेसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मोह० उक्क० पदेस० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्तएसु उववण्णो तत्थ दो-तिण्णिभवग्गहणाणि भमिदूण पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स उक्कस्सिया पदेसविहत्ती। एवं मणुसचउक्क-देव-भवणादि जाव सहस्सारो त्ति।

§ १७. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मोह० उक्क० पदेस० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदसमाणो दो-तिण्णिभवग्गहणाणि तिरिक्खेसु उववज्जिय मणुस्सेसु उववण्णो सव्वलहुं जोणिणिक्खमणजम्मणेण जादो अट्ठवस्सिओ

पृथिवीमें जानना चाहिए। पहलीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो गुणितकर्मांशवाला जीव सातवीं पृथिवीसे निकलकर तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ अन्तर्मुहूर्तकी आयुवाले तिर्यञ्चोंके संख्यात भव ग्रहण करके जल्दी ही अपने अपने योग्य प्रथमादि नरकोंमें उत्पन्न हुआ। प्रथम समयवर्ती उस नारकीके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है।

विशेषार्थ—यद्यपि मोहनीयकर्मका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय सातवें नरकके अन्तिम समयमें होता है। किन्तु यहाँ प्रथमादि नरकोंमें उसे प्राप्त करना है, इसलिये सातवें नरकसे तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न करावे और अन्तर्मुहूर्तके भीतर जितने भव सम्भव हों उतने भव प्राप्त करावे। अनन्तर जिस नरकमें उत्कृष्ट प्रदेशसंचय प्राप्त करना हो उस नरकमें उत्पन्न करावे। इस प्रकार उत्पन्न होनेके पहले समयमें उस उस नरकमें मोहनीयका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय प्राप्त होता है।

§ १६. तिर्यञ्चगतिमें चार प्रकारके तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? गुणितकर्मांशवाला जो जीव सातवीं पृथिवीसे निकलकर अपने अपने योग्य तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? गुणितकर्मांशवाला जो जीव सातवीं पृथिवीसे निकलकर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ और वहाँ दो तीन भवग्रहण तक भ्रमण करके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। इसी प्रकार चार प्रकारके मनुष्य सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सहस्रार स्वर्ग तकके देवोंमें जानना चाहिये।

§ १७. आनतसे लेकर नवग्रैवेयक तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? गुणितकर्मांशवाला जो जीव सातवीं पृथिवीसे निकलकर दो तीन बार तिर्यञ्चोंमें भवग्रहण करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और जल्दीसे जल्दी योनिसे निकलनेरूप जन्मके द्वारा

दव्वलिंगी संजादो। तदो तप्पाओग्गपरिणामेण अप्पप्पणो देवेसु आउअं बंधिदूण अंतोमुहुत्तेण कालगदसमाणो अप्पप्पणो देवेसुववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णस्स मोह० उक्क० पदेसविहत्ती। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति मोह० उक्क० पदेस० कस्स? जो जीवो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदूण दो-तिण्णिभवग्गहणाणि तिरिक्खेसु उववज्जिय मणुस्सेसु उववण्णो सव्वलहुं जोणिणिक्खमणजम्मणेण जादो अट्ठवस्सिओ संजमं पडिवण्णो। अंतोमुहुत्तेण आउअं बंधिदूण कालगदसमाणो अप्पप्पणो देवेसुववण्णो तस्स पढमसमयदेवस्स मोह० उक्कसिया पदेसविहत्ती। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

उत्पन्न होकर आठ वर्षकी अवस्थामें द्रव्यलिंगी हुआ। उसके बाद जिसको जहाँ उत्पन्न होना है उसके योग्य परिणामसे अपने अपने योग्य देवोंकी आयु बाँधकर अन्तर्मुहूर्त पश्चात् मरण करके अपने अपने योग्य देवोंमें उत्पन्न हुआ। उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? गुणितकर्मांशवाला जो जीव सातवीं पृथिवीसे निकलकर तिर्यञ्चोंमें दो तीन भवग्रहण करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और जल्दीसे जल्दी योनिसे निकलनेरूप जन्मके द्वारा उत्पन्न होकर आठ वर्षको अवस्थामें सयम धारण किया। पश्चात् अन्तर्मुहूर्तके द्वारा आयुबन्ध करके मरकर अपने अपने योग्य देवोंमे उत्पन्न हुआ। उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है। इसी प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी जैसे ओघसे बतलाया गया है वैसे ही आदेशसे भी जानना चाहिये। जहाँ जहाँ जो विशेषता है वह मूलमें बतला ही दी है। उसका आशय इतना ही है कि उत्कृष्ट प्रदेशसचयके लिये उक्त प्रक्रियासे बादर पृथिवीकायिकोंमें भ्रमण करके बार बार सातवें नरकमें जन्म लेना जरूरी है। जब सातवें नरकमें अन्तिम बार जन्म लेकर वह जीव अपनी आयुके अन्तिम समयमें वर्तमान होता है तब उसके उत्कृष्ट प्रदेशसचय होता है। उसीको गुणितकर्मांशवाला कहते हैं। वह गुणितकर्मांशवाला जीव सातवें नरकसे निकलकर पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यञ्च ही होता है, क्योंकि सातवें नरकवालोंके लिये ऐसा नियम है। इसीलिये तिर्यञ्चगतिमें तो उसकी उत्पत्ति तिर्यञ्चोंमें बतलाकर उसीको उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी बतलाया है और अन्य गतियोंमें तिर्यञ्च पर्यायमेंसे जल्दीसे जल्दी निकालकर अपने अपने योग्य गतियोंमें शास्त्रोक्त क्रमसे उत्पन्न कराके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी बतलाया है। प्रत्येक इतर गतिमेंसे जो जल्दीसे जल्दी निकाला गया है उसका कारण यह है कि उस गतिमें अधिक काल तक ठहरनेसे सञ्चित उत्कृष्ट प्रदेशकी अधिक निर्जरा होना सम्भव है। इसीलिये तिर्यञ्चगतिमेंसे मनुष्यगतिमें ले जाकर आठ वर्षकी अवस्थामें सयम धारण कराकर और अन्तर्मुहूर्तके बाद ही मरण कराकर अनुदिशादिकमें उत्पन्न कराया है। अत गुणितकर्मांश जीव ही जब उस उस गतिमें जल्दीसे जल्दी जन्म लेता है तो उसीके प्रथम समयमें उस गतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसचय होता है। गति मार्गणामें जिस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशसचयका स्वामी बतलाया है उसी प्रकार इन्द्रिय मार्गणासे लेकर अनाहारक मार्गणातक विचारकर उत्कृष्ट प्रदेशसचयके स्वामीका कथन करना चाहिये। तात्पर्य यह है कि जो मार्गणा गुणित कर्मांशवालेके सातवें नरकके अन्तिम समयमें बन जाय

§ १८ जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० जहण्णपदे० कस्स? जो जीवो सुहुमणिगोदजीवेसु पलिदो० असंखेज्जदिभागेणूणिय कम्मट्ठिदिमच्छिदो। एवं वेयणाए भुजविहाणेण चरिमसमयसकसाई जादो तस्स मोह० जहण्णपदेसविहत्ती। एवं मणुसतियस्स।

उसकी अपेक्षा प्रदेशसंचयका स्वामी नहीं जान लेना चाहिये और जो मार्गणा वहाँ घटित न हो उस मार्गणाको शास्त्रोक्त विधिसे अतिशीघ्र प्राप्त कराकर उसके प्रथम समयमें उसकी अपेक्षा उत्कृष्ट प्रदेशसंचय जानना चाहिये। उदाहरणार्थ अनाहारक मार्गणामें उत्कृष्ट प्रदेश संचय जानना है तो सातवें नरकसे निकालकर विग्रहगतिद्वारा अन्य गतिमें ले जाय और इस प्रकार मरणके बाद प्रथम समयमें अनाहारक अवस्था प्राप्त कर ले।

§ १८ जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो जीव सूक्ष्म निगोदिया जीवोंमें पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहा। इस प्रकार वेदनामें कहे गये विधानके अनुसार जो अन्तिम समयमें सकषायी हुआ है उसके मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। इसी प्रकार सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनीमें जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जो जीव सूक्ष्म निगोदिया जीवोंमें पल्यके असंख्यातवें भागहीन सत्तर कोड़ीकोड़ी सागर काल तक रहा। वहाँ भ्रमण करते हुए अपर्याप्तके भव बहुत धारण किये और पर्याप्तके भव थोड़े धारण किये। अपर्याप्तका काल अधिक रहा और पर्याप्तका काल थोड़ा रहा। जब जब आयु बंध किया तो उत्कृष्ट योगके द्वारा ही किया। तथा अपकर्षण और उत्कर्षणके द्वारा ऊपरकी स्थितिवाले अधिक निषेकोंका जघन्य स्थितिवाले नीचेके निषेकोंमें क्षेपण किया और नीचेकी स्थितिवाले निषेकोंमेंसे थोड़े निषेकोंका ऊपरकी स्थितिवाले निषेकोंमें क्षेपण किया। अर्थात् उत्कर्षण कमका किया अपकर्षण ज्यादाका किया। तथा अधिकतर जघन्य योग ही रहा और परिणाम भी मंद संक्लेशवाले रहे। सारांश यह है कि गुणित-कर्मांससे बिलकुल उलटी हालत रही, जिससे कर्मसंचय अधिक न हो सके। इस प्रकार सूक्ष्म निगोदिया जीवोंमें भ्रमण करके बादर पृथिवी पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। अकायिक पर्याप्तक आदिसे निकलकर जो जीव मनुष्योंमें उत्पन्न होता है वह जल्दी संयमादि ग्रहण नहीं कर सकता इसलिये बादर पृथिवी पर्याप्तकोंमें उत्पन्न कराया है। सबसे छोटे अन्तर्मुहूर्तकालमें सब पर्याप्तियोंसे पूर्ण हुआ। जो जीव सबसे छोटे अन्तर्मुहूर्तकालमें पर्याप्तियोंको पूर्ण नहीं करता उसके एकान्तानुवृद्धि योगका काल अधिक होता है और ऐसा होनेसे कर्म प्रदेशसंचय अधिक होता है। अन्तर्मुहूर्त पश्चात् मरकर एक पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। संयमके द्वारा बहुत कालतक संचित द्रव्यकी निर्जरा हो सके इसलिये एक पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न कराया है। जल्दीसे जल्दी अर्थात् सातवें माहमें गर्भसे निकला और आठ वर्षका होने पर संयम धारण किया। कुछ कम एक पूर्वकोटि तक संयमका पालन किया। अन्तर्मुहूर्तप्रमाण आयु शेष रहने पर मिथ्यात्वमें चला गया। मिथ्यात्वमें मरण करके दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ। सबसे लघु अन्तर्मुहूर्तकालमें पर्याप्त हो गया। अन्तर्मुहूर्त बाद सम्यक्त्वको धारण किया। कुछ कम दस हजार वर्षतक सम्यक्त्वके साथ रहकर अन्तमें मिथ्यादृष्टि हो गया। मिथ्यात्वके साथ मरकर बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। सबसे छोटे अन्तर्मुहूर्त कालमें पर्याप्त हो गया। अन्तर्मुहूर्त पश्चात् मरकर सूक्ष्म

§ १९. आदेसेण णेरइएसु जो जीवो खविदकम्मंसिओ अंतोमुहुत्तेण कम्मक्खयं काहदि त्ति विवरीयं गंतूण णेरइएसु उववण्णो तस्स पढमसमयणेरइयस्स मोह० जहण्णपदेसविहत्ती। एवं सत्तसु पुढवीसु सव्वतिरिक्ख-मणुस्सअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २०. कालाणुगमो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि। उक्कस्सए पयदं। दुविहो णिद्देसो–ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क० पदेस० केवचिरं कालादो

निगोदिया पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डक घातके द्वारा पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण कालमें कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके फिर भी बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। इस प्रकार नाना भव धारण करके बत्तीस बार सयम धारण करके, चार बार कषायोंका उपशम करके, पल्यके असख्यातवें भाग वार सयम, सयमासयम और सम्यक्त्वका पालन करके अन्तिम भवमें एक पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमे उत्पन्न हुआ। सातवें मासमें योनिसे निकला और आठ वर्षका होने पर संयमको धारण किया। कुछ कम एक पूर्वकोटि काल तक सयमका पालन करके जब थोड़ी आयु वाकी रही तो मोहनीयका क्षपण करनेके लिये उद्यत हुआ। इस प्रकार जव वह दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें पहुँचता है तो उस जीवके मोहनीयकर्मकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। इसी प्रकार सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें भी उक्त क्षपितकर्मांशवाले जीवके दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति जाननी चाहिए।

§ १९ आदेशसे नारकियोंमें क्षपितकर्मांशवाला जो जीव अन्तर्मुहूर्तके द्वारा कर्मक्षय करेगा ऐसा वह जीव उलटा जाकर नारकियोंमें उत्पन्न हुआ, उस प्रथम समयवर्ती नारकीके मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। इसी प्रकार सातों नरकों, सब तिर्यञ्च, मनुष्य-अपर्याप्त और सव देवोंमें जानना चाहिये। तथा इसी प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—आदेशसे जघन्य प्रदेशसत्कर्मका विचार करते समय ओघसे जो क्षपित कर्मांशवालेकी विधि पीछे वतला आये हैं वह सब विधि यहाँ भी जाननी चाहिये। अन्तर केवल इतना है कि ओघसे जहाँ अन्तर्मुहूर्तमें दसवें गुणस्थानके अन्त समयको प्राप्त होनेवाला था वहाँ अन्तर्मुहूर्त पहले यह उस मार्गणाको प्राप्त कर लेता है जिस मार्गणामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म प्राप्त करना है। उदाहरणार्थ कोई ऐसा क्षपितकर्मांशवाला जीव है जो तदनन्तर क्षपकश्रेणि पर ही चढ़ता पर इकदम परिणाम बदल जानेसे वहीं तत्काल मिथ्यात्वमें जाता है और मरकर नरकमें उत्पन्न होनेके पहले समयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामी होता है। इसी प्रकार यथायोग्य विचारकर शेष सब मार्गणाओंमें जघन्य प्रदेशसत्कर्मका स्वामी कहना चाहिये जिससे कर्मोंका सचय बहुत अधिक न होने पावे। यहाँ मूलमें जो यह कहा है कि जो अन्तर्मुहूर्तमें कर्मोंका क्षय करेगा किन्तु वैसा न करके जो लौट जाता है सो यह योग्यताकी अपेक्षा कहा है। अर्थात् क्षपितकर्मांशवालेके क्षपकश्रेणिपर चढनेके पूर्व समयमें जितना द्रव्य सत्त्वमें रहता है उतना जिसका द्रव्य सत्त्वमें हो गया है। अव यदि उससे कम द्रव्य प्राप्त करना है तो वह क्षपकश्रेणिमें ही प्राप्त हो सकता है। ऐसी योग्यतावाला जीव यहाँ विवक्षित है।

§ २० कालानुगम दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका कितना काल

होदि ? जहण्णुक० एगस० । अणुक० ज० वासपुधत्तं, उक्क० अणंतकालं । आदेसेण णेरइएसु मोह० उक्क० केवचिरं ? जहण्णुक० एगस० । अणुक० ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । एवं सत्तमाए । पढमादि जाव छट्ठि त्ति मोह० उक्क० ओघं । अणुक० जह० जहण्णहिदी समऊणा, उक्क० सगसगुक्कस्सहिदीओ । तिरिक्ख० उक्क० ओघं । अणुक० जहण्ण० खुद्दाभवग्गहणं, उक्क० अणंतकालं० । पंचिंदियतिरिक्ख तियम्मि उक्क० ओघं । अणुक० जहण्णुक्कस्सहिदीओ । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० उक्क० ओघं । अणुक० ज० खुद्दाभवग्गहणं समयूणं, उक्क० अंतोमु० । एवं मणुसअपज्ज० । मणुसतियम्मि मोह० उक्क० ओघं । अणुक० जह० खुद्दाभ० अंतोमु० समयूणं, उक्क० सगट्ठिदी । देवेसु मोह० उक्क० ओघं । अणुक० ज० दसवस्ससहस्साणि समऊणाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । एवं सव्वदेवाणं । णवरि अणुक० ज० सगसगजहण्णहिदी[1] समऊणा, उक्क० उक्कस्सहिदी संपुण्णा । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल वर्षपृथक्त्व और उत्कृष्ट काल अनन्तकाल है । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिये । पहलीसे लेकर छठी पृथिवी तक मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह जानना चाहिए । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण जानना चाहिए । तिर्यञ्चोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह जानना चाहिए । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अनन्तकाल है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी जीवोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए । शेष तीन प्रकारके मनुष्योंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल सामान्य मनुष्योंमें एक समय कम क्षुद्रभवग्रहण प्रमाण और मनुष्य पर्याप्त तथा मनुष्यिनियोंमें एक समय कम अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसी प्रकार सब देवोंमें जानना चाहिए । इतना विशेष है कि अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

---

१ आ० प्रतौ 'ज० समय जहण्णहिदी' इति पाठः ।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल सर्वत्र एक समय कहनेका कारण यह है कि सर्वत्र एक समयके लिये ही उत्कृष्ट प्रदेशसचय होता है। जिसने मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिको प्राप्त करनेके बाद नरकसे निकलकर और अन्तर्मुहूर्तके भीतर तिर्यञ्च पर्यायके दो तीन भव लेकर अनन्तर मनुष्य पर्याय प्राप्त की है वह यदि आठ वर्षका होनेके बाद ही क्षपकश्रेणीपर चढकर मोहनीयका नाश कर देता है तो उसके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका वर्षपृथक्त्व काल पाया जाता है। यह अनुत्कृष्टका सबसे कम काल है, क्योंकि इसका इससे और कम काल नहीं बनता, इसलिये अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल वर्षपृथक्त्व कहा। तथा इसका ओघसे उत्कृष्ट अनन्त काल कहनेका कारण यह है कि अधिकसे अधिक इतने काल तक घूमनेके बाद यह जीव नियमसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिको प्राप्त कर लेता है। उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके विषयमें दो मत हैं—एक यह कि गुणितकर्मांशवाले नारकीके अपनी आयुके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है और दूसरा यह कि मरनेके अन्तर्मुहूर्त पहले होती है। प्रथम मतके अनुसार सामान्यसे नरकमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति का जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त नहीं प्राप्त होता, क्योंकि उत्कृष्टके बाद अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति प्राप्त होते समय वह जीव अन्य गतिवाला हो जाता है। हाँ दूसरे मतके अनुसार अन्तर्मुहूर्त काल प्राप्त होता है। यही कारण है कि नरकमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। तथा उत्कृष्ट काल तेतीस सागर स्पष्ट ही है। यही व्यवस्था सातवें नरकमे है। प्रथमादि नरकोंमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जो अपनी अपनी जघन्य स्थितिमेंसे एक एक समय कम कहा है सो इसका कारण यह है कि इन नरकोंमें उत्पन्न होनेके पहले समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सम्भव है, अत एक समय कम किया है। तथा उत्कृष्ट काल जो अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण बतलाया है वह स्पष्ट ही है। तिर्यञ्चोंमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जो खुद्दाभवग्रहणप्रमाण बतलाया है सो इसका कारण यह है कि तिर्यञ्चसामान्यके उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति लब्ध्यपर्याप्त तिर्यञ्चके नहीं होती, अत पूराका पूरा खुद्दाभवग्रहणप्रमाण काल अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल बन जाता है। तथा उत्कृष्ट काल जो अनन्तकाल बतलाया है सो स्पष्ट ही है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जो अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण बतलाया है सो इसका कारण यह है कि यद्यपि इनके भवके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति सम्भव है इसलिये जघन्य आयुमेंसे एक समय कम हो जाना चाहिये पर जो जीव नरकसे निकलता है उसके सबसे जघन्य आयु नहीं पाई जाती, अत अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल जघन्य आयुप्रमाण कहा और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। यहाँ उत्कृष्ट-स्थितिसे अपनी अपनी उत्कृष्ट कायस्थिति ले लेनी चाहिये। पचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यञ्चके जो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल खुद्दाभवग्रहणमेंसे एक समय कम बतलाया है सो यह एक समय उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका है। इसे कम कर देने पर अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य-काल आ जाता है। तथा पचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यञ्चकी उत्कृष्ट कायस्थिति अन्तर्मुहूर्त है, अत इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतलाया है। इसी प्रकार लब्ध्य-पर्याप्त मनुष्यके अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल घटित कर लेना चाहिये। शेष तीन प्रकारके मनुष्योंमें सामान्य मनुष्यकी जघन्य स्थिति खुद्दाभवग्रहणप्रमाण है और शेष दो की अन्तर्मुहूर्त है। सामान्य मनुष्यकी तो जो एक समय कम जघन्य स्थिति है वही अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल प्राप्त होता है, क्योंकि इसके इस आयुमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका एक समय सम्मिलित है। तथा शेष दोके जघन्य आयु अन्तर्मुहूर्तमेंसे एक समय कम कर देना चाहिये,

§ २१ जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० जहण्ण० जहण्णुक्क० एगस०। अज० अणादिओ अपज्जवसिदो अणादिओ सपज्जवसिदो। आदेसे० णेरइएसु मोह० ज० जहण्णुक्क० एगस०। अज० ज० दसवस्ससहस्साणि समऊणाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि संपुण्णाणि। पढमादि जाव सत्तमि त्ति ज० ओघं। अज० सगसगजहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी संपुण्णा। तिरिक्खपंचयम्मि मोह० ज० ओघं। अज० ज० सगसगजहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी[1] संपुण्णा। एवं मणुसचउक्कम्मि। देवाणं णेरइयभंगो। एवं भवणादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति। णवरि अज० ज० जहण्णट्ठिदी समऊणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी संपुण्णा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

क्योंकि यह एक समय उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका है। तथा इन तीनों प्रकारके मनुष्योंकि अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जो उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण बतलाया है सो यहाँ स्थितिसे अपनी अपनी कायस्थिति लेनी चाहिये। [इसी प्रकार देवोंमें सर्वत्र अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण घटित कर लेना चाहिये। किन्तु जघन्य काल कहते समय जघन्य स्थितिमेंसे एक समय कम कर देना चाहिये, क्योंकि यह एक समय उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिसम्बन्धी है। आगे अनाहारक मार्गणा तक यही क्रम जानना चाहिये।

§ २१ जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका काल अनादि अनन्त और अनादि सान्त है। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समयकम दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल सम्पूर्ण तेतीस सागर है। पहलेसे लेकर सातवें नरक तक जघन्य प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समयकम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। पाँचों प्रकारके तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका काल ओघकी तरह है। अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समयकम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार चार प्रकारके मनुष्योंमें जानना चाहिए। सामान्य देवोंमें नारकियोंके समान भंग है। इसी प्रकार भवनवासियों से लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतना विशेष है कि अजघन्य विभक्तिका जघन्य काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे सर्वत्र मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है क्योंकि स्वामित्वानुगमके अनुसार बतलाये हुए क्रमसे सर्वत्र एक समयके लिये ही जघन्य प्रदेशसंचय होता है। ओघसे अजघन्य विभक्तिका काल भव्यकी अपेक्षा अनादि-सान्त है और अभव्यकी अपेक्षा अनादि-अनन्त है, क्योंकि अभव्यके कभी जघन्य प्रदेशविभक्ति नहीं होती। आदेशसे सब गतियोंमें अजघन्य प्रदेशविभक्तिका जघन्य-

---

१ आ० प्रतौ 'समऊण उक्क ट्ठिदी' इति पाठः।

३

§ २२. अंतरं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं चेदि। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क० पदेसविहत्तीए अंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्क० अणंतकालं। अथवा जहण्णेण असंखेज्जा लोगा, गुणिदपरिणामेहिंतो पुधभूदपरिणामेसु असंखेज्जलोगमेत्तेसु जहण्णेण संचरणकालस्स असंखे०लोगपमाणत्तादो। अणुक्क० जहण्णुक्क० एगसमओ। आदेसेण णेरइएसु मोह० उक्क० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जहण्णुक्क० एगस०। एवं सत्तमाए। पढमादि जाव छट्ठि त्ति मोह० उक्कस्साणुक्क० णत्थि अंतरं। एवं सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-सव्वदेवे त्ति। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

काल एक समय कम अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी सम्पूर्ण उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

§ २२ अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर काल कितना है? जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है। अथवा जघन्य अन्तरकाल असख्यात लोकप्रमाण है, क्योंकि गुणितकर्मांशके कारणभूत परिणामोंसे भिन्न परिणामोंमें सचरण करनेका जघन्य काल असख्यात लोकप्रमाण है। अनुत्कृष्टविभक्तिको जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। आदेशसे नारकियोंमें मोहकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर नहीं है। अनुत्कृष्ट विभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार सातवें नरकमे जानना चाहिये। पहलेसे लेकर छठे नरक तक मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है, क्योंकि उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति गुणितकर्मांशिक जीवके होती है और एक बार उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होकर पुन. इसे प्राप्त करनेमें अनन्तकाल लगता है। अथवा उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल असख्यात लोक है। कारणका निर्देश मूलमें किया ही है। और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है यह स्पष्ट ही है। तथा उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल एक समय है, अत अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है, क्योंकि अनुत्कृष्ट विभक्तिके बीचमें एक समयके लिये उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके हो जानेसे एक समयका अन्तर पड़ता है। आदेशसे सामान्य नारकियोंमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर नहीं है, क्योंकि अन्तर तब हो सकता है जब उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके बाद अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होकर पुन उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति हो, किन्तु ऐसा किसी भी गतिमें नहीं होता, क्योंकि उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके अन्तरको प्राप्त करनेके लिये विविध गतियोंका आश्रय लेना पड़ता है। अत किसी भी गतिमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर काल नहीं है। सामान्य नारकियोंमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है, क्योंकि सातवें नरकमें अन्तिम अन्तर्मुहूर्तके प्रथम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति मानी गई है। किन्तु जिनके मतसे अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है उसके अनुसार यह अन्तर नहीं बनता। इसी प्रकार सातवें नरकमें समझना चाहिये। पहलीसे लेकर छठी पृथिवी तक तथा तिर्यञ्च, मनुष्य और देवोंमें सर्वप्रथम जन्म लेनेवाले गुणितकर्मांश जीवके जन्म लेनेके प्रथम समयमें ही उत्कृष्ट

§ २३. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० जहण्णाजहण्ण० पदेसविहत्तीणं णत्थि अंतरं । एवं चदुगदीसु । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ २४. णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो—जहण्णओ[1] उक्कस्सओ चेदि । उक्कस्से पयदं । तत्थ अट्ठपदं—जे उक्कस्सपदेसविहत्तिया ते अणुक्कस्सपदेसस्स अविहत्तिया । जे अणुक्कस्सपदेसविहत्तिया ते उक्क०पदेसस्स अविहत्तिया । एदेण अट्ठपदेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्कस्सियाए पदेसविहत्तीए सिया सव्वे जीवा अविहत्तिया १ । सिया अविहत्तिया च विहत्तिओ च २ । सिया अविहत्तिया च विहत्तिया च ३ । अणुक्कस्सस्स वि विहत्तिपुव्वा तिण्णि भंगा वत्तव्वा । एवं सव्वणेरइय सव्वतिरिक्ख मणुस्सतिय-सव्वदेवे त्ति । मणुसअपज्जत्ताणमुक्क० अणुक्क० अट्ठभंगा । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

विभक्ति होती है, अतः यहाँ न उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर होता है और न अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका अन्तर होता है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिये।

§ २३. अब जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे क्षपित कर्मांशवाले जीवके दसवें गुणस्थानके अन्तमें मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। उसके बाद मोहका सद्भाव नहीं रहता, अतः न जघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तर प्राप्त है और न अजघन्य विभक्तिका अन्तर प्राप्त होता है। आदेशसे जिन गतियोंमें क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानकी प्राप्ति सम्भव नहीं है उनमें क्षपित कर्मांशवाला जीव मोहका क्षपण न करके उसके पूर्व ही छोड़कर जिस जिस गतिमें जन्म लेता है उसके प्रथम समयमें ही जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है। अन्यथा नहीं होती अतः आदेशसे भी दोनों विभक्तियोंका अन्तर नहीं होता। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिका अन्तरकाल क्यों सम्भव नहीं है इस बातको उक्त विधिसे घटित करके जान लेना चाहिए।

§ २४. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टसे प्रयोजन है। उसमें अर्थपद है—जो उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव हैं वे अनुत्कृष्ट प्रदेशोंकी अविभक्तिवाले होते हैं और जो अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव हैं वे उत्कृष्ट प्रदेशोंकी अविभक्तिवाले होते हैं। इस अर्थपदके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा कदाचित् सब जीव अविभक्तिवाले होते हैं १। कदाचित् अनेक जीव अविभक्तिवाले और एक जीव विभक्तिवाला होता है २। कदाचित् अनेक जीव अविभक्तिवाले और अनेक जीव विभक्तिवाले होते हैं ३। अनुत्कृष्टके भी विभक्तिको पूर्वमें रखकर तीन भंग होते हैं। तात्पर्य यह है अनुत्कृष्ट विभक्तिकी अपेक्षा भंग कहते समय

---

१ आ प्रतौ 'दुविहो वि जहण्णओ' इति पाठः ।

§ २५. जहण्णए पयदं । तं चेव अट्ठपदं कादूण पुणो एदेण अट्ठपदेण उक्कस्स-भंगो । एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं ।

जहाँ अविभक्तिपद रखा है वहाँ अनुत्कृष्टकी अपेक्षा विभक्ति शब्द रखना चाहिये । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये । मनुष्य-अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिमेंसे प्रत्येककी अपेक्षा आठ आठ भग होते हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—जिनके उत्कृष्ट प्रदेशसचय होता है उनके उस समय अनुत्कृष्ट प्रदेशसचय नहीं होता और जिनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसचय होता है उनके उस समय उत्कृष्ट प्रदेशसचय नहीं होता । यह अर्थपद है, इसको आधार बनाकर उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षासे तीन और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षासे तीन कुल प्रत्येककी अपेक्षा तीन तीन भग मूलमें बतलाये गये हैं । उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कम होते हैं और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले अधिक होते हैं । तथा ऐसा भी समय होता है जब उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला एक भी जीव नहीं होता । अत. जब सब जीव मोहकी उत्कृष्ट विभक्तिवाले नहीं होते तब सब जीव मोहकी अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले होते हैं । और जब एक जीव मोहकी उत्कृष्ट विभक्तिवाला होता है तब शेष जीव मोहकी अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले होते हैं । तथा जब अनेक जीव मोहकी उत्कृष्ट विभक्तिवाले होते हैं तब अनेक शेष जीव अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले होते हैं, इस प्रकार उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट की विभक्ति और अविभक्तिकी अपेक्षा तीन तीन भग होते हैं किन्तु मनुष्य अपर्याप्तक चूँकि सान्तर-मार्गणा है, अत उसमें उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा आठ और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा आठ भग प्राप्त होते हैं । यथा—कदाचित् सब लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य उत्कृष्ट प्रदेश-अविभक्तिवाले होते हैं १ । कदाचित् सब उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं २ । कदाचित् एक उत्कृष्ट प्रदेशअविभक्तिवाला होता है ३ । कदाचित् एक उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला होता है ४ । ये चार एक सयोगी भग हैं । दो सयोगी भग भी इतने ही होते हैं । इस प्रकार ये सब आठ भग हुए । अनुत्कृष्टकी अपेक्षा भी इतने ही भग जानने चाहिये । इस प्रकार सान्तर और निरन्तर मार्गणाओंका ख्याल करके जहाँ जो व्यवस्था लागू हो वहाँ उसके अनुसार भग ले आने चाहिये ।

§ २५ जघन्यसे प्रयोजन है । उत्कृष्टमें कहे गये पदको ही अर्थपद करके फिर उस अर्थपदके अनुसार जघन्यमें भी उत्कृष्टके समान भग होते हैं । इस प्रकार सब मार्गणाओंमें ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—जिसके जघन्य प्रदेशविभक्ति होती है उसके अजघन्य प्रदेशविभक्ति नहीं होती और जिसके अजघन्य प्रदेशविभक्ति होती है उसके जघन्य प्रदेशविभक्ति नहीं होती । यह अर्थपद है । इसको लेकर उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टकी तरह ही भग योजना कर लेनी चाहिये । अर्थात् कदाचित् सब जीव मोहकी जघन्य प्रदेशविभक्ति वाले नहीं होते १ । कदाचित् अनेक जीव अविभक्तिवाले और एक जीव विभक्तिवाला होता है २ । कदाचित् अनेक जीव विभक्ति-वाले और अनेक जीव अविभक्तिवाले होते हैं ३ । इसी प्रकार अविभक्तिके स्थानमें विभक्ति करके अजघन्यके भी तीन भग होते हैं—कदाचित् सब जीव मोहकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति-वाले होते हैं १ । कदाचित् अनेक जीव विभक्तिवाले और एक जीव अविभक्तिवाला होता है २ । कदाचित् अनेक जीव विभक्तिवाले और अनेक जीव अविभक्तिवाले होते हैं ३ । ये तीन तीन भंग

§ २६. परिमाणं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्कस्सपदेसवि० के० ? असंखेज्जा आवलि० असंखे०-भागमेत्ता । अणुक्क० विह० अणंता । एवं तिरिक्खोघं । आदेसेण णेरइएसु मोह० उक्क० अणुक्क० असंखेज्जा । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्स-मणुस्स अपज्ज० देव-भवणादि जाव सहस्सारो त्ति । मणुस्सपज्ज०-मणुसिणी० सव्वट्ठसिद्धिम्मि उक्कस्साणुक्क० संखेज्जा । आणदादि जाव अवराइदो त्ति उक्क० संखेज्जा । अणुक्क० असंखेज्जा । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ २७. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० ज० वि० केत्ति० ? संखेज्जा । अज० अणंता० । एवं तिरिक्खोघं । आदेसे० णेरइएसु मोह० जह० ओघं । अज० असंखेज्जा । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस-मणुस

सब गतियोंमें होते हैं । मात्र मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जघन्यकी अपेक्षा आठ और अजघन्यकी अपेक्षा आठ भंग होते हैं । इन भंगोंका नामनिर्देश उत्कृष्टके समान कर लेना चाहिये । इस प्रकार आगे भी निरन्तर और सान्तर मार्गणाओंका कथन करके वहाँ जो व्यवस्था सम्भव हो उसे वहाँ लगा लेनी चाहिये ।

§ २६. परिमाण दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं, अर्थात् आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले अनन्त हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले असंख्यात हैं । इस प्रकार सब नारकी सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च सामान्य मनुष्य मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सहस्रार स्वर्ग तकके देवोंमें जानना चाहिये । मनुष्य पर्याप्त मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीव संख्यात हैं । आनत स्वर्गसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें उत्कृष्ट विभक्तिवाले संख्यात हैं और अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले असंख्यात हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—जो राशियाँ अनन्त हैं उनमें आवलिके असंख्यातवें भाग जीव उत्कृष्ट विभक्तिवाले और शेष अनन्त जीव अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले होते हैं । जो राशियाँ असंख्यात हैं उनमें दोनों विभक्तिवालोंका प्रमाण असंख्यात असंख्यात होता है । किन्तु आनतसे लेकर अपराजित विमान पर्यन्त उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका प्रमाण संख्यात और अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका प्रमाण असंख्यात है, क्योंकि उत्कृष्ट विभक्तिवाले आनतादिकमें पर्याप्त मनुष्य ही जाकर पैदा होते हैं और वे संख्यात हैं । तथा जो राशियाँ संख्यात हैं उनमें दोनों विभक्तिवालोंका प्रमाण संख्यात है ।

§ २७. जघन्यसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले कितने हैं ? संख्यात हैं । अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले अनन्त हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी जघन्य विभक्तिवाले ओघकी तरह हैं । अजघन्य विभक्तिवाले असंख्यात हैं । इसी प्रकार सब नारकी सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और

अपज्ज०देव-भवणादि जाव अवराइदो त्ति। मणुसपज्ज० मणुसिणी०-सव्वट्ठसिद्धिम्हि जहण्णाजहण्णपदेस० संखेज्जा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २८. खेत्तं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्कस्सपदेसवि० केवडि खेत्ते? लोगस्स असंखे०भागे। अणुक्क० सव्वलोगे। एवं तिरिक्खोघं। सेसमग्गणासु उक्कस्साणुक्क० लोग० असंखे०-भागे। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २९. जहण्णए पयदं। जहण्णाजहण्णपदेस० उक्कस्साणुक्कस्सभंगो।

§ ३०. पोसणं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० उक्क०-अणुक्क० खेत्तभंगो। एवं तिरिक्खोघं।

भवनवासीसे लेकर अपराजित तकके देवोंमे जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिमें जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले सख्यात हैं। इस प्रकार अनाहारीपर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका प्रमाण ओघसे और आदेशसे भी सख्यात ही होता है, क्योंकि क्षपितकर्मांश ऐसे जीवोंका परिमाण संख्यात ही होता है और अजघन्य विभक्तिवालोंका परमाण अपनी अपनी राशिके अनुसार अनन्त, असख्यात और सख्यात होता है।

§ २८ क्षेत्र दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीवोंका सब लोक क्षेत्र है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। शेष मार्गणाओंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ २९ जघन्यसे प्रयोजन है। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका क्षेत्र उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंके समान है।

विशेषार्थ—ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण हैं, अत इनका वर्तमान क्षेत्र लोकके असख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले शेष सब जीव हैं और ये सब लोकमें पाये जाते हैं, इसलिये इनका क्षेत्र सर्वलोक कहा है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें इसी प्रकार क्षेत्र घटित कर लेना चाहिये। शेष गतियोंमें क्षेत्र ही लोकके असख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए उनमें दोनों विभक्तियोंकी अपेक्षा लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र कहा है। तथा आगे एकेन्द्रिय आदि व दूसरी मार्गणाओंमें अपने अपने क्षेत्रको देखकर वह घटित कर लेना चाहिये। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंमें भी इसी प्रकार क्षेत्र घटित कर लेना चाहिए।

§ ३० स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें

आदेसेण० णेरइएसु मोह० उक्क० खेत्तभंगो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस० देसूणा। एवं सत्तमाए। पढमपुढवीए खेत्तं। विदियादि जाव छट्ठि त्ति मोह० उक्क० खेत्तभंगो। अणुक्क० सगपोसणं। सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस्स मोह० उक्क० खेत्तभंगो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। देवेसु मोह० उक्क० खेत्त। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णव चोद्दस० देसूणा। भवणादि जाव अच्चुदा त्ति उक्क० खेत्तभंगो। अणुक्क० सग-सगपोसणं। उवरि उक्कस्साणुक्क० खेत्तभंगो। एवं णेदव्वं जाव अणाहारो त्ति।

§ ३१ जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० जहण्णाजहण्णपदेसविह० उक्कस्साणुक्कस्स०भंगो। एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं जाव अणाहारो त्ति।

मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालों का स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रसनालीके कुछ कम छ बटे चौदह भागप्रमाण है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिये। पहली पृथिवीमें क्षेत्रके समान स्पर्शन है। दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी पर्यन्त मोहकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका अपना अपना स्पर्शन जानना चाहिये। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब मनुष्योंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और सर्वलोक है। देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ व कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण है। भवनवासीसे लेकर अच्युत स्वर्ग तकके देवोंमें उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका अपना अपना स्पर्शन है। अच्युत स्वर्गसे ऊपर उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ३१ जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका स्पर्शन उत्कृष्ट विभक्तिवालोंके स्पर्शनकी तरह है। और अजघन्य विभक्तिवालोंका स्पर्शन अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंकी तरह है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त सब मार्गणाओंमें ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका काल एक समय कहा है और वह विभक्ति सातवें नरकमें तो अन्तिम अन्तर्मुहूर्तके अन्तिम समयमें या प्रथम समयमें होती है और अन्यत्र जन्म लेनेके प्रथम समयमें होती है, अतः ओघसे और आदेशसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका जो क्षेत्र है वही स्पर्शन भी है। अर्थात् लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र और स्पर्शन दोनों हैं। किन्तु अनुत्कृष्ट विभक्ति एकेन्द्रियादि सब जीवोंके पाई जाती है अतः ओघसे अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी ही तरह सर्वलोक है क्योंकि सर्वलोकमें वे पाये जाते हैं। तथा आदेशसे नारकियोंमें वर्तमान कालकी अपेक्षा लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है और अतीतकालकी अपेक्षा स्वस्थानस्वस्थान, विहारवत्स्वस्थान वेदना कषाय और विक्रियाके द्वारा लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है। तथा मारणान्तिक और उपपादपदके द्वारा त्रसनालीके

अपज्ज०देव-भवणादि जाव अवराइदो त्ति। मणुसपज्ज० मणुसिणी०-सव्वट्ठसिद्धिम्मि जहण्णाजहण्णपदेस० संखेज्जा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २८. खेत्तं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्कस्सपदेसवि० केवडि खेत्ते? लोगस्स असंखे०भागे। अणुक्क० सव्वलोगे। एवं तिरिक्खोघं। सेसमग्गणासु उक्कस्साणुक्क० लोग० असंखे०भागे। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २९. जहण्णए पयदं। जहण्णाजहण्णपदेस० उक्कस्साणुक्कस्सभंगो।

§ ३०. पोसणं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० उक्क०-अणुक्क० खेत्तभंगो। एवं तिरिक्खोघं।

भवनवासीसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिमें जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले संख्यात हैं। इस प्रकार अनाहारीपर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—जघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका प्रमाण ओघसे और आदेशसे भी संख्यात ही होता है, क्योंकि क्षपितकर्मांश ऐसे जीवोंका परिमाण संख्यात ही होता है और अजघन्य विभक्तिवालोंका परिमाण अपनी अपनी राशिके अनुसार अनन्त, असंख्यात और संख्यात होता है।

§ २८ क्षेत्र दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीवोंका सब लोक क्षेत्र है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। शेष मार्गणाओंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ २९ जघन्यसे प्रयोजन है। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका क्षेत्र उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंके समान है।

विशेषार्थ—ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, अत इनका वर्तमान क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले शेष सब जीव हैं और ये सब लोकमें पाये जाते हैं, इसलिये इनका क्षेत्र सर्वलोक कहा है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें इसी प्रकार क्षेत्र घटित कर लेना चाहिये। शेष गतियोंमें क्षेत्र ही लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए उनमें दोनों विभक्तियोंकी अपेक्षा लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र कहा है। तथा आगे एकेन्द्रिय आदि व दूसरी मार्गणाओंमें अपने अपने क्षेत्रको देखकर वह घटित कर लेना चाहिये। जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंमे भी इसी प्रकार क्षेत्र घटित कर लेना चाहिए।

§ ३० स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें

§ ३२ कालो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ चेदि । उक्कस्सए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्क०पदेस० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अणुक्क० सव्वद्धा । एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुस्स-देव भवणादि जाव सहस्सारो त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु मोह० उ० जह० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । अणुक्क० सव्वद्धा । एवमाणदादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति । मणुसअपज्ज० मोह० उक्क० ओघं । अणुक्क० जह० खुद्दाभवग्गहणं समऊणं, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

तक अपने अपने स्पर्शनको जानकर स्पर्शन घटित कर लेना चाहिये । जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिकी अपेक्षा भी इसी प्रकार स्पर्शन जान लेना चाहिये ।

§ ३२. काल दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार, सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासी से लेकर सहस्रार स्वर्गतकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार आनतसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका काल ओघकी तरह है । अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय कम क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—पहले एक जीवकी अपेक्षा कालका निरूपण किया है । अब नाना जीवोंकी अपेक्षा काल बतलाते हैं । यदि ओघसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव एक समय तक होकर द्वितीयादिक समयोंमें नहीं हुए तो उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है और यदि उपक्रमण काल तक निरन्तर उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव होते रहे तो उत्कृष्ट काल आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है । तथा ओघसे अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सदा पाये जाते हैं । ऐसा कोई समय नहीं है जब अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले जीव न हों, क्योंकि सभी संसारी जीव मोहसे बद्ध हैं । मूलमें सब नारकी आदि और जितनी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी यह ओघव्यवस्था घट जाती है, अत उनके कथनको ओघके समान कहा । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनी संख्यात हैं, अत वहाँ उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा । सर्वार्थसिद्धिमें भी यह व्यवस्था जाननी चाहिये । आनतादिकमें यद्यपि असंख्यात जीव हैं तो भी वहाँ मनुष्य ही उत्पन्न होते हैं, अत वहाँ भी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय प्राप्त होता है । मनुष्य अपर्याप्त सान्तर मार्गणा है और उसका जघन्य काल क्षुद्र भवग्रहण और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अत उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले कुछ जीव मनुष्य अपर्याप्तक हुए और एक समय तक उत्कृष्ट विभक्तिके साथ रहकर अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले हो गये । तथा क्षुद्र भवग्रहण काल तक रहकर मरकर अन्य पर्यायमें चले गये तो मनुष्य अपर्याप्त उत्कृष्ट विभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय और अनुत्कृष्टविभक्तिवालोंका जघन्य

कुछ कम छे बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन है। प्रथम नरकमें क्षेत्रकी ही
असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है। दूसरे नरकसे लेकर छठे नरक तक वर्तमान
लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है। तथा अतीतकालकी अपेक्षा स्वस्थान
वत्स्वस्थान, वेदना, कषाय और विक्रिया पदके द्वारा लोकका असंख्यातवाँ भाग
मारणान्तिक तथा उपपादके द्वारा त्रसनालीकी अपेक्षा दूसरी पृथिवीमें कुछ
भागप्रमाण, तीसरीमें कुछ कम दो बटे चौदह भागप्रमाण, चौथीमें कु
भागप्रमाण, पाँचवीमें कुछ कम चार बटे चौदह भागप्रमाण और छठीमें
भागप्रमाण स्पर्शन है। सामान्य देवोंमें वर्तमानकी अपेक्षा लोकका
है और अतीत कालकी अपेक्षा विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय
त्रसनालीका कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन है, क्योंकि
नहीं जा सकते। तथा मारणान्तिकपदके द्वारा त्रसनालीका कुछ कम
स्पर्शन है, क्योंकि नीचे दो राजू और ऊपर सात राजू इस तरह
मारणान्तिकसमुद्घात करनेवाले देव स्पृष्ट करते हैं। भवनवासी आ
अपेक्षा लोकका असंख्यातवाँ भाग स्पर्शन है और अतीतकालकी अ
स्थान, वेदना, कषाय और विक्रियापदके द्वारा त्रसनालीका कुछ कम
प्रमाण अथवा कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन है, क्यो
और ऊपर सौधर्म कल्पके विमानके ध्वजदण्ड तक डेढ राजू इ
राजूमें तो स्वय ही विहार कर सकते हैं और ऊपरके देवोंके ले
तक विहार कर सकते हैं। तथा मारणान्तिक समुद्घातके द्वारा त्रसना
भागप्रमाण स्पर्शन है, क्योंकि मन्दराचलसे नीचे कुछ कम दो रा
तरह नौ राजू होते हैं। उसमें तीसरी पृथिवीके नीचेका कुछ भाग
नहीं जाते। सौधर्मसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंने अतीतकाल
कषाय और विक्रियापदके द्वारा त्रसनालीका कुछ कम आठ बटे चौदह
है। मारणान्तिकपदके द्वारा सौधर्म-ईशान कल्पके देवोंने त्रसनालीका
भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है और सानत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प
कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है। उ
ईशान कल्पके देवोंने त्रसनालीका कुछ कम डेढ़ बटे चौदह भागप्रमाण
सौधर्मकल्प पृथिवीतलसे डेढ राजू के भीतर है। तथा उपपाद
माहेन्द्रकल्पके देवोंने त्रसनालीका कुछ कम तीन बटे चौदह,
कुछ कम साढ़े तीन बटे चौदह, लान्तव-कापिष्ठ कल्पवालोंने कुछ क
शुक्र-महाशुक्रवालोंने कुछ कम साढ़े चार बटे चौदह और शतार-सहस्रार
पाँच बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है। स्वस्थानस्वस्थानकी
असंख्यातवाँ भाग स्पर्श किया है। आनतसे लेकर अच्युत कल्प तकके
विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय विक्रिया और मारणान्तिकपदके द्वारा त्रस
बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है, क्योंकि चित्रा पृथिवीके ऊपर
देवोंका गमन नहीं होता ऐसी आगमग्रन्थोंकी मान्यता है। इस प्रक
प्रदेशविभक्तिवालोंका स्पर्शन जानना चाहिये। अच्युत स्वर्गसे ऊपर अनु
भी स्पर्शन लोकका असंख्यातवाँ भाग ही है। तथा इन सबमें उत्कृष्ट प्र
स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इसी प्रकार

§ २५. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० ज० अज० उक्कस्साणुक्कस्सभंगो। एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं।

§ २६. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ २७. अप्पाबहुगं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं चेदि। उक्कस्सए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० सव्वत्थोवा उक्क०पदेसविहत्तिया जीवा। अणुक्क०पदेसवि० जीवा अणंतगुणा। एवं तिरिक्खोघं। आदेसेण णेरइएसु सव्वत्थोवा मोह० उक्क०पदेसवि० जीवा। अणुक्क०पदेसवि० जीवा असंखे०गुणा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्स-मणुस्सअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइद त्ति। मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धि० सव्वत्थोवा मोह० उक्क०पदेसवि० जीवा। अणुक्क०पदेसवि० जीवा संखेज्जगुणा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति। एवं जहण्णप्पाबहुअं वत्तव्वं। णवरि जहण्णाजहण्णविसेसो णायव्वो।

एवं बावीसअणिओगद्दाराणि समत्ताणि।

---

§ २५. जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य विभक्तिवालोंका अन्तर उत्कृष्ट विभक्तिवालोंके अन्तरके समान है और अजघन्य विभक्तिवालोंका अन्तर अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंके अन्तरके समान है। इस प्रकार सब मार्गणाओंमें जानना चाहिये।

विशेषार्थ—चूंकि अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले सदा पाये जाते हैं अतः उनके अन्तरका कोई प्रश्न ही नहीं है। किन्तु मनुष्य अपर्याप्त मार्गणा चूंकि सान्तर मार्गणा है और उसका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग होता है अतः उसमें अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका भी जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर उतना ही कहा है। इसी प्रकार अन्य सान्तर मार्गणाओंमें यथायोग्य जानना चाहिये। उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है। अर्थात् यदि उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला एक भी जीव न हो तो कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अनन्तकाल तक नहीं होता। इसी तरह जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका भी अन्तर होता है।

§ २६. भावकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

§ २७. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघ से मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च सामान्य मनुष्य मनुष्यअपर्याप्त सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजितविमान पर्यन्तके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यपर्याप्त मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये। इसी प्रकार जघन्य अल्पबहुत्व कहना चाहिये। इतना विशेष है कि उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टके स्थानमें जघन्य और अजघन्य कहना चाहिये।

§ ३३. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० जह० पदेसवि० ज० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया । अज० सव्वद्धा । एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं । णवरि मणुस्सअपज्ज० अज० अणुक्क०भंगो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ३४. अंतरं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं चेदि । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० उक्क०पदेसवि० अंतरं केव० कालादो होदि ? जह० एगसमओ, उक्क० अणंतकालं । अणुक्क० णत्थि अंतरं । एवं सव्वमग्गणासु । णवरि मणुस्सअपज्ज० अणुक्क० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

काल एक समय कम क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण प्राप्त होता है । तथा उत्कृष्ट काल क्रमश आवलिके असख्यातवें भाग और पल्यके असख्यातवें भाग होता है, क्योंकि मनुष्य अपर्याप्त मार्गणाका उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भाग है । उतने काल तक उसमें अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले रहे फिर एक भी जीव उस मार्गणामें नहीं रहा । आगे अनाहारक मार्गणा तक अपनी अपनी मार्गणाकी विशेषता जानकर पूर्वोक्त विधिसे कालका कथन करना चाहिये । जो सान्तर मार्गणाएँ हों उनमें लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंके समान उनके अन्तर कालका विचार कर कथन करना चाहिये और निरन्तर मार्गणाओंमें जहाँ जितना काल सम्भव हो इसका विचार करके कालका कथन करना चाहिये ।

§ ३३ जघन्य से प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सख्यात समय है । अजघन्य विभक्तिवालोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार सब मार्गणाओंमें ले जाना चाहिये । इतना विशेष है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अजघन्य विभक्तिवालोंका काल अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंकी तरह जानना चाहिए । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे अजघन्य विभक्तिवाले जीव अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंकी तरह सदा पाये जाते हैं और जघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल सख्यात समय है, क्योंकि क्षपकश्रेणीके निरन्तर आरोहणका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल सख्यात समय ही है । इसी प्रकार निरन्तर सब मार्गणाओंमें यथायोग्य जानना चाहिये । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अजघन्य विभक्तिवालोंका काल अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंकी ही तरह जघन्यसे एक समय कम क्षुद्र भवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्टसे पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण होता है उसका कारण पूर्वमें बतलाया है । इसी प्रकार यथायोग्य अन्य सान्तर मार्गणाओंमें जानना चाहिये ।

§ ३४ अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका अन्तरकाल कितना है ? जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका अन्तर नहीं है । इसी प्रकार सब मार्गणाओंमें जानना चाहिए । इतना विशेष है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्य के असख्यातवें भागप्रमाण है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ३५ जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० ज० अज० उक्कस्साणुक्कस्सभंगो । एवं सव्वमग्गणासु णेदव्वं ।

§ ३६ भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ३७. अप्पाबहुअं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं चेदि । उक्कस्सए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० सव्वत्थोवा उक्क०पदेसविहत्तिया जीवा । अणुक्क०पदेसवि० जीवा अणंतगुणा । एवं तिरिक्खोघं । आदेसेण णेरइएसु सव्वत्थोवा मोह० उक्क०पदेसवि० जीवा । अणुक्क०पदेसवि० जीवा असंखे०गुणा । एवं सव्वणेरइय सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्स-मणुस्सअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइद त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धि० सव्वत्थोवा मोह० उक्क०पदेसवि० जीवा । अणुक्क०पदेसवि० जीवा संखेज्जगुणा । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति । एवं जहण्णप्पाबहुअं वत्तव्वं । णवरि उक्कस्साणुक्कस्साणं जहण्णाजहण्णणिद्देसो कायव्वो ।

एवं बावीसअणिओगद्दाराणि समत्ताणि ।

---

§ ३५. जघन्यसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी जघन्य विभक्तिवालोंका अन्तर उत्कृष्ट विभक्तिवालोंके अन्तरके समान है और अजघन्य विभक्तिवालोंका अन्तर अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंके अन्तरके समान है । इस प्रकार सब मार्गणाओंमें जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—चूंकि अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले सदा पाये जाते हैं अतः उनके अन्तरका कोई प्रश्न ही नहीं है । किन्तु मनुष्य अपर्याप्त मार्गणा चूंकि सान्तर मार्गणा है और उसका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग होता है अतः उसमें अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका भी जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर उतना ही कहा है । इसी प्रकार अन्य सान्तर मार्गणाओंमें यथायोग्य जानना चाहिये । उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है । अर्थात् यदि उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला एक भी जीव न हो तो कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अनन्तकाल तक नहीं होता । इसी तरह जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्तिवालोंका भी अन्तर होता है ।

§ ३६ भावकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये ।

§ ३७. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघ से मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सब से थोड़े हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार सब नारकी सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च सामान्य मनुष्य मनुष्यअपर्याप्त सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजितविमान पर्यन्तके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये । इसी प्रकार जघन्य अल्पबहुत्व कहना चाहिये । इतना विशेष है कि उत्कृष्ट और अनुत्कृष्टके स्थानमें जघन्य और अजघन्य कहना चाहिये ।

§ ३८. भुजगारविहत्तीए तत्थ इमाणि तेरस अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणादि जाव अप्पाबहुए त्ति । तत्थ समुक्कित्तणाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण अत्थि० मोह० भुज०-अप्पदर-अवट्ठिदविहत्तिया जीवा । एवं सव्व-मग्गणासु णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ३९. सामित्ताणु० दुविहो णिद्देसो-ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० भुज०-अप्प०-अवट्ठिदाणि[1] कस्स ? मिच्छादिट्ठिस्स सम्मादिट्ठिस्स वा । एवं सव्वणेरइय-तिरिक्खचउक्क०-मणुस्सतिय-देव०-भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति । पंचिंदिय-तिरिक्खअपज्ज० मोह० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० कस्स ? अण्णदरस्स मिच्छादिट्ठिस्स । एवं मणुसअपज्ज० । अणुदिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति एवं चेव । णवरि सम्मादिट्ठिस्से

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे उत्कृष्ट विभक्तिवाले जीव सबसे थोडे हैं। जो राशियाँ अनन्त हैं उनमे उत्कृष्ट विभक्तिवालोंसे अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले अनन्तगुणे हैं। जिनकी राशि असख्यात हैं उनमें उत्कृष्ट विभक्तिवालोंसे अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले असख्यातगुणे हैं और जिनकी राशि सख्यात हैं उनमें उत्कृष्ट विभक्तिवालोंसे अनुत्कृष्ट विभक्तिवाले सख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार जघन्य प्रदेशविभक्तिवाले सबसे कम हैं और उनसे अजघन्य प्रदेशविभक्तिवाले अपनी अपनी राशिके अनुसार अनन्तगुणे, असख्यातगुणे या सख्यातगुणे हैं।

इस प्रकार बाईस अनुयोगद्वार समाप्त हुए।

§ ३८ भुजकारविभक्तिका कथन करते हैं। उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्वपर्यन्त तेरह अनुयोगद्वार होते हैं। उनमें समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तिवाले जीव हैं। इसी प्रकार सब मार्गणाओंमें जानना चाहिये। अर्थात् सभी मार्गणाओंमे मोहनीयकी उक्त तीनों विभक्तिवाले जीव पाये जाते हैं।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे मोहनीयकर्मकी मूलप्रकृतिमें भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीन ही विभक्तियाँ होती हैं, चौथी अवक्तव्य विभक्ति नहीं होती, क्योंकि मोह-नीयकी सत्ता न रहकर यदि पुन उसकी सत्ता हो तो अवक्तव्य विभक्ति हो सकती थी, किन्तु ऐसा सभव नहीं है, क्योंकि दसवें गुणस्थानके अन्तमें मोहनीयकी सत्त्वव्युच्छित्ति करके जीव क्षीणकपाय हो जाता है, फिर वह लौटकर नीचे नहीं आता, अत अवक्तव्यविभक्ति नहीं होती।

§ ३९. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तियाँ किसके होती हैं ? मिथ्यादृष्टि अथवा सम्यग्दृष्टिके होती हैं। इसी प्रकार सब नारकी, चार प्रकारके तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव, और भवनवासीसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिये। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तिया किसके होती हैं ? किसी भी मिथ्यादृष्टि जीवके होती हैं। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिये। इतना विशेष है कि

---

१ आ०प्रतौ 'भुज०अवट्ठिदाणि' इति पाठ ।

त्ति वत्तव्वं। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ४० कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण। ओघेण मोह० भुज०-अप्पद० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-सव्वदेवे त्ति। णवरि पंचिं०तिरि०-अपज्ज० मोह० भुज०-अप्प० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं मणुसअपज्ज०। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

सम्यग्दृष्टिके कहना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—यह प्रदेशसत्कर्मविभक्तिका प्रकरण है, अतः यहाँ सत्तामें स्थित मोहनीयके कर्मप्रदेशोंके बढ़नेको भुजगारविभक्ति कहते हैं, घटनेको अल्पतर विभक्ति कहते हैं और उतनेके उतने ही रहनेको अवस्थितविभक्ति कहते हैं। ओघसे और आदेशसे ये तीनों ही विभक्तियाँ मिथ्यादृष्टिके भी होती हैं और सम्यग्दृष्टि के भी होती हैं, क्योंकि बन्ध और निर्जराका दोनों ही के सत्कर्मप्रदेशोंमें वृद्धि भी होती है, हानि भी होती है और वृद्धि-हानिके बिना समवस्थता भी रहती है। किन्तु पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त तथा मनुष्य अपर्याप्त सम्यग्दृष्टि नहीं होते, अतः उनमें तीनों विभक्तियोंका स्वामी मिथ्यादृष्टि जीव ही होता है। इसी प्रकार अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके सब देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, अतः उनमें सब विभक्तियोंका स्वामी सम्यग्दृष्टि ही होता है। अन्य मार्गणाओंमें इसी प्रकार अपनी अपनी विशेषता जानकर घटित कर लेना चाहिये।

§ ४० कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इस प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे भी तीनों विभक्तियोंका जघन्य काल एक समय है, क्योंकि विवक्षित समयमें किसी जीवने भुजगार अल्पतर या अवस्थित विभक्ति की तो दूसरे समयमें उससे भिन्न दूसरी विभक्ति उसके हो सकती है तथा ओघसे और आदेशसे भुजगार और अल्पतर विभक्तिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि भुजगार और अल्पतर विभक्तियाँ अधिकसे अधिक पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक पाई जाती हैं आगे नहीं। अवस्थित विभक्तिका जघन्य काल एक समय तो पूर्ववत् ही है। तथा उत्कृष्ट काल जो संख्यात समय कहा है सो अवस्थितके कालको देखकर यह प्ररूपणा की है। नारकी आदि अन्य मार्गणाओंमें भी यह व्यवस्था बन जाती है इसलिये इनके कथनको ओघके समान कहा है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्त तथा मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तकी उत्कृष्ट स्थिति अन्तर्मुहूर्त है, अतः इनके भुजगार और अल्पतर प्रदेशविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। अन्य मार्गणाओंमें अपनी अपनी विशेषता जानकर यह काल घटित करना चाहिए।

§ ४१. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण । ओघेण मोह० भुज०-अप्प० अंतरं ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । एवं तिरिक्खोघे । आदेसेण णेरइएसु भुज०-अप्पद० अंतरमोघं । अवट्ठिद० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं सव्वणेरइय-पंचिं०तिरि०तिय-मणुसतिय-देव-भवणादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति । णवरि अवट्ठिदस्स सगसगट्ठिदी देसूणा । पंचिं०तिरि०अपज्ज० मोह० तिण्हं पदाणं ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवं मणुसअपज्ज० । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

---

§ ४१ अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असख्यात लोकप्रमाण है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें भुजगार और अल्पतरविभक्तिका अन्तर ओघकी तरह है। अवस्थित-विभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार सब नारकी, तीन प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकार के मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमे मोहनीय-की तीनो विभक्तियोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे भुजगार और अल्पतर प्रदेशविभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय है, क्योंकि एक समय तक विवक्षित विभक्ति रहकर दूसरे समयमें अन्य विभक्तिके हो जानेसे जघन्य अन्तरकाल एक समय प्राप्त होता है। तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि, भुजगार या अल्पतर प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट-काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिये उक्तप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है। अवस्थित विभक्तिका जघन्य अन्तरकाल एक समय पूर्ववत् ही है। तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल असख्यात लोकप्रमाण है, क्योंकि क्षपित कर्मांशरूप परिणाम असख्यात लोकप्रमाण हैं, इललिये इतने काल तक अवस्थित प्रदेशविभक्ति न हो यह सम्भव है। समान्य तिर्यञ्चोंमें यह अन्तर-काल वन जाता है, इसलिये इसके कथनको ओघके समान कहा है। नारकियोंमें अवस्थित विभक्तिके उत्कृष्ट अन्तरको छोड़कर शेप सव अन्तरकाल ओघके समान है, इसलिये यह सव अन्तरकाल ओघके समान कहा है। नरककी ओघस्थिति तेतीस सागर है, इसलिये अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तर तेतीस सागरसे कुछ कम प्राप्त होता है, क्योंकि नरकमें उत्पन्न होनेके प्रारम्भमे और अन्तमें जिसने अवस्थितविभक्ति की और मध्यमें अल्पतर या भुजगार करता रहा उसके अवस्थित प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर वन जाता है। मूलमें जो अन्य मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी अवस्थित विभक्तिके उत्कृष्ट अन्तरकालको छोड़कर पूर्वोक्त व्यवस्था वन जाती है। तथा जिस मार्गणाका जितना उत्कृष्ट काल है उसमेसे कुछ कम कर देने पर उस उस मार्गणामें अवस्थित विभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर काल वन जाता है। पचेन्द्रिय तिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्त व मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तकी उत्कृष्ट कायस्थिति अन्तर्मुहूर्त है, इसलिये इनमें सब

§ ४२ णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० णियमा अत्थि। एवं तिरिक्खोघे। आदेसेण णेरइएसु मोह० भुज०-अप्पद० णियमा अत्थि। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिओ च १। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिया च २। धुवेण[1] सह तिण्णि ३। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसतिय-देव-भवणादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति। मणुसअपज्ज० मोह० तिण्णि पदा भयणिज्जा। भंगा २६। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

पदोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय व उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहा है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक अपनी अपनी स्थितिका विचार करके तीनों पदोंका अन्तरकाल जान लेना चाहिये।

§ ४२. नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय अनुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् अनेक जीव भुजगार और अल्पतरविभक्तिवाले हैं और एक जीव अवस्थित विभक्तिवाला है १। कदाचित् अनेक जीव भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले हैं और अनेक जीव अवस्थितविभक्तिवाले हैं २। ध्रुव भंगके मिलानेसे ये तीन भंग होते हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयके तीनों पद भजनीय हैं। भंग छब्बीस होते हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे तीनों विभक्तिवाले नाना जीव सदा पाये जाते हैं, इसलिये अन्य किसी भंगको स्थान ही नहीं है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें भी तीनों विभक्तिवाले सदा पाये जाते हैं, इसलिये इनकी प्ररूपणा ओघके समान है। नारकियोंमें मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले जीव नियमसे होते हैं और अवस्थित विभक्तिवाले विकल्पसे होते हैं, अतः मोहनीयकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले नियमसे हैं यह एक ध्रुव भंग होता है जो कि सदा रहता है। इसके सिवा दो भंग होते हैं जो मूलमें बतलाये हैं। सब गतियोंमें ये ही तीन भंग होते हैं। केवल मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अपवाद है। चूँकि मनुष्य अपर्याप्त सान्तर मार्गणा है अतः उसमें तीनों विभक्तियाँ विकल्पसे होती हैं और इस तरह २६ भंग होते हैं। वे इस प्रकार हैं—कदाचित् भुजकार विभक्तिवाला एक जीव होता है १। कदाचित् अनेक जीव होते हैं २। कदाचित् अल्पतर विभक्तिवाला एक जीव होता है ३। कदाचित् अनेक जीव होते हैं ४। कदाचित् अवस्थितविभक्तिवाला एक जीव होता है ५। कदाचित् अनेक जीव होते हैं ६। कदाचित् भुजगारवाला एक जीव और अल्पतरवाला एक जीव होता है ७। कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव और अल्पतरवाला एक जीव होता है ८। कदाचित् भुजगारवाला एक जीव और अल्पतरवाले अनेक जीव होते हैं ९। कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव और अल्पतरवाले अनेक जीव होते हैं १ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है ११। कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव और अवस्थित-

---

1 ता० प्रतौ 'धुवेण' इति पाठः।

§ ४३. भागाभागाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० भुज० संखेज्जा भागा । अप्प० संखे०भागो । अवट्ठि० असंखे०भागो । एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइद त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धी० एवं चेव । णवरि अवट्ठिद० संखे०भागो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

वाला एक जीव होता है १२ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं १३ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं १४ । कदाचित् अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है १५ । कदाचित् अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है १६ । कदाचित् अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं १७ । कदाचित् अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं १८ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव, अल्पतरवाला वाला एक जीव और अवस्थित वाला एक जीव होता है १९ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव, अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है २० । कदाचित् भुजगार वाला एक जीव, अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं २१ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव, अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है २२ । कदाचित् भुजगारवाला एक जीव, अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थित-वाले अनेक जीव होते हैं २३ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव, अल्पतरवाला एक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं २४ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव, अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाला एक जीव होता है २५ । कदाचित् भुजगारवाले अनेक जीव अल्पतरवाले अनेक जीव और अवस्थितवाले अनेक जीव होते हैं २६ । इस प्रकार ६ भग एक सयोगी, १२ भग द्विसयोगी और ८ भग त्रिसयोगी होते हैं । कुल मिलाकर २६ भग होते हैं । सान्तर और निरन्तर मार्गणाओंकी अपेक्षा गतिमार्गणामें जो भगोंकी प्रकिया बतलाई है आगेकी मार्गणाओंमें भी उसी प्रकार यथायोग्य घटित कर लेना चाहिये ।

§ ४३ भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी भुजगारविभक्तिवाले जीव सख्यात बहुभागप्रमाण हैं, अल्पतरविभक्तिवाले जीव सख्यातवें भागप्रमाण हैं और अवस्थितविभक्तिवाले जीव असख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासी-से लेकर अपराजित विमानतकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । इतना विशेष है कि अवस्थित विभक्तिवाले जीव सख्यातवें भागप्रमाण हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—भागाभागानुगमसे यह बतलाया गया है कि विवक्षित राशिमें अमुक अमुक विभक्तिवाले कितने भागप्रमाण हैं ? और परिमाणानुगमसे उनका परिमाण अर्थात् सख्या बतला दी गई है । जैसे ओघसे मोहनीयकी प्रदेशविभक्तिवाले जीवोंमें सख्यात बहु-भाग भुजगारविभक्तिवाले जीव होते हैं, सख्यातैक भागप्रमाण अल्पतर विभक्तिवाले जीव होते हैं और असख्यातवें भागप्रमाण अवस्थित विभक्तिवाले जीव होते हैं । फिर भी इन तीनों विभक्तिवालोंकी सख्या अनन्त है । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी, और सर्वार्थसिद्धि-वालोंका प्रमाण चूँकि सख्यात है, अत उनमें अवस्थित विभक्तिवाले भी सख्यातवें भागप्रमाण कहे हैं । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

§ ४४ परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० दव्वपमाणेण केत्तिया? अणंता। एवं तिरिक्खोघं। सेसमग्गणासु सव्वपदा असंखेज्जा। णवरि मणुसपज्ज० मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धि० तिण्णि पदा संखेज्जा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ४५ खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० केवडि खेत्ते? सव्वलोगे। एवं तिरिक्खोघं। सेसमग्गणासु मोह० तिण्णि पदा० लोग० असंखे०भागे०। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ४६ पोसणाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण० मोह० भुज०-अप्पद०-अवट्ठि० केवडियं खेत्तं पोसिदं? सव्वलोगो। एवं तिरिक्खोघं। आदेसेण णेरइएसु मोह० तिण्णिपद० लोग० असंखे०भागो छ चोद्द० देसूणा। पढमपुढवि० खेत्तं। विदियादि जाव सत्तमपुढवि-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस-सव्वदेव मोह० तिण्णं पदाणं सगसगपोसणं णादूण वत्तव्वं। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

---

§ ४४ परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीव द्रव्यप्रमाणसे कितने हैं? अनन्त हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। शेष मार्गणाओंमें सब पदवाले जीव असंख्यात हैं। इतना विशेष है कि मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिमें तीनों विभक्तिवालोंका परिमाण संख्यात है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ४५ क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? सर्वलोक क्षेत्र है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। शेष मार्गणाओंमें मोहनीयकी तीनों विभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ४६ स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तिवालोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? सर्वलोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी तीनों विभक्तिवालोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और त्रसनालीके कुछ कम छै बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पहली पृथिवीमें क्षेत्रकी तरह स्पर्शन जानना चाहिये। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकी सब पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें मोहनीयकी तीनों विभक्तिवालोंका अपना अपना स्पर्शन जानकर कहना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—तीनों विभक्तिवालोंका क्षेत्र और स्पर्शन जैसे पहले मोहनीयकी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट विभक्तिवालोंका क्षेत्र और स्पर्शन घटित करके बतलाया है वैसे ही जानना चाहिये।

§ ४७. कालाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदे० । ओघेण मोह० तिण्णिपद-वि० केवचिरं० कालादो होंति ? सव्वद्धा । एवं तिरिक्खोघं । आदेसेण णेरइएसु मोह० भुज०-अप्पद० ओघं । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्स-देव-भवणादि जाव अवराइदं ति । एवं मणुसपज्ज० मणुसिणीसु । णवरि अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया । एवं सव्वट्ठसिद्धि० । मणुसअपज्ज० भुज०-अप्प० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो । अवट्ठि० णेरइयभंगो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ४८. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० तिण्हं

---

§ ४७ कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी तीनों विभक्तिवाले जीवोंका कितना काल है ? सर्वदा है । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति-वालोंका काल ओघकी तरह है । अवस्थित विभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजित विमानतकके देवोंमें जानना चाहिये । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये । इतना विशेष है कि अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सख्यात समय है । इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिये । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार और अल्पतर विभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है । अवस्थितविभक्तिवालोंका काल नारकियोंकी तरह जानना चाहिये । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—मोहनीयकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित प्रदेशविभक्तिको करनेवाले नाना जीव सदा पाये जाते हैं, इसलिये इनका काल सदा कहा । सामान्य तिर्यञ्चोंमें भी यह व्यवस्था घट जाती है इसलिये उनमें भी उक्त विभक्तियोंका काल सदा कहा । नारकियोंमें यद्यपि भुजगार और अल्पतरका काल सदा है पर अवस्थितके कालमें फरक है । बात यह है कि नाना जीव अवस्थितविभक्तिको एक समय तक करके द्वितीयादि समयोंमें अन्य विभक्तिको भी प्राप्त हो सकते हैं और तब अवस्थित विभक्तिवाला एक भी जीव नहीं रहता है, इसलिए इसका जघन्य काल एक समय है । अब यदि नाना जीव निरन्तर अवस्थित प्रदेशविभक्तिको करते हैं तो उपक्रम कालके अनुसार आवलीके असख्यातवें भाग प्रमाण काल तक ही कर सकते हैं, इसलिये अवस्थित प्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल आवलीके असख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है । मूलमें और जितनी मार्गणाएं बतलाई हैं उनमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये । किन्तु मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनी सख्यात हैं, इसलिये इनमें अव-स्थित विभक्तिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । सर्वार्थसिद्धिमें मनुष्य पर्याप्तकोंके समान काल घटित कर लेना चाहिये । लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य सान्तर मार्गणा है । इस मार्गणाका उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिये इसमें भुजगार और अल्पतरका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण कहा है । पर अवस्थित विभक्तिका उत्कृष्ट काल पूर्वोक्त विधिसे आवलीके असख्यातवें भागप्रमाण ही प्राप्त होता है ।

§ ४८. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे

पदाणं विहत्तियाणं णत्थि अंतरं । एवं तिरिक्खोघं । आदेसेण णेरइएसु भुज०-अप्प० णत्थि अंतरं । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । एवं सव्वणेरइय सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस्सतिय-सव्वदेवा त्ति । मणुसअपज्ज० भुज०-अप्पद० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० णेरइयभंगो । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ४९. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

§ ५०. अप्पाबहुअं दुविहं—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० सव्वत्थोवा अवट्ठिदविहत्तिया जीवा । अप्पदरविहत्ति० जीवा असंखे०गुणा । भुज०विहत्ति० संखे०गुणा । एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देव-भवणादि जाव अवराइदो त्ति । मणुसपज्ज०[1] -मणुसिणी-सव्वट्ठसिद्धि० सव्वत्थोवा मोह० अवट्ठि०

मोहनीयकी तीनों पदविभक्तियोंका अन्तर नहीं है । इसी प्रकार सामान्य तिर्यंचोंमें जानना चाहिये । आदेशसे नारकियोंमें भुजगार और अल्पतर विभक्तियोंका अन्तर नहीं है । अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है । इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच, तीन प्रकारके मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भुजगार और अल्पतर विभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण है । अवस्थितविभक्तिवालों का अन्तर नारकियों के समान है । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओघसे तथा सामान्य तिर्यंचोंमें तीनों विभक्तिवाले जीव सदा पाये जाते हैं, इसलिये उनका अन्तरकाल नहीं है । आदेशसे भी सामान्य नारकियोंमें भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले जीव सदा पाये जाते हैं, इसलिये उनमें अन्तरकाल नहीं है । हाँ अवस्थितविभक्तिवाले जीव कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक पाये जाते हैं अतः उनमें अन्तर होता है और अन्तरका जघन्य प्रमाण एक समय और उत्कृष्ट प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण है । अर्थात् इतने काल तक नारकियोंमें अवस्थितविभक्तिवाले जीव नहीं पाये जावें यह सम्भव है । इसके बाद कोई न कोई जीव अवस्थित विभक्तिवाला अवश्य होता है । सब नारकी आदि अन्य गतियोंमें अन्तरकी यही व्यवस्था है । मात्र मनुष्य अपर्याप्त इसके अपवाद हैं । सो जानकर उनमें अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिये ।

§ ४९. भावानुगम की अपेक्षा सर्वत्र औदयिकभाव होता है ।

§ ५०. अल्पबहुत्व दो प्रकार का है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी अवस्थित विभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं । अल्पतर विभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । भुजगार विभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इस प्रकार सब नारकी, सब तिर्यंच, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजित विमान तक के देवोंमें जानना चाहिये । मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें मोहनीयकी अवस्थित

1 आ प्रतौ 'मणुसअपज्ज' इति पाठः ।

विहत्ति० जीवा। अप्प०विहत्ति० संखे०गुणा। भुज० संखेज्जगुणा। एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

§ ५१. पदणिक्खेवे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअं चेदि। तत्थ समुक्कित्तणं दुविहं—जह० उक्क०। उक्क० पय०। दुविहो णि०—ओघेण आदे०। ओघेण मोह० अत्थि उक्क० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च। एवं सव्वत्थ गइमग्गणाए। एवं जाव अणाहारे त्ति। एवं जहण्णयं पि णेदव्वं।

§ ५२. सामित्तं दुविहं—ज० उक्क०। उक्क० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० एइंदियस्स हदसमुप्पत्तियकम्मस्स जो सण्णिपंचिंदियपज्जत्तएसु उववण्णल्लगो अंतोमुहुत्तमेगंताणुवड्ढीए वड्ढियूण तदो परिणामजोगं पदिदो तस्स उक्कस्सपरिणामजोगे वट्टमाणस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्समवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स? अण्णदरस्स खवगस्स सुहुमसांपराइयस्स चरिमसमए वट्टमाणयस्स।

§ ५३. आदेसेण णेरइएसु मोह० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० असण्णिस्स हदसमुप्पत्तियकम्मेण णेरइएसु उववण्णल्लगस्स अंतोमुहुत्तमेयंताणुवड्ढीए वड्ढियूण

विभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अल्पतर विभक्तिवाले उनसे संख्यातगुणे हैं और भुजगार विभक्तिवाले जीव उनसे भी संख्यातगुणे हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघसे और आदेशसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं। अल्पतर विभक्तिवाले उनसे अधिक होते हैं और भुजगार विभक्तिवाले उनसे भी अधिक होते हैं। कहाँ कितने अधिक होते हैं इसका प्रमाण मूलमें बतलाया ही है।

§ ५१ अब पदनिक्षेपका कथन करते हैं। उसमें ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। उसमें में समुत्कीर्तना के दो भेद हैं—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्ट से प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीय की प्रदेशविभक्तिमें उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान होते हैं। इसी प्रकार सर्वत्र गतिमार्गणामें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारकपर्यन्त ले जाना चाहिए। इसी प्रकार जघन्यका भी कथन करके ले जाना चाहिये।

§ ५२ स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्ट से प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकार का है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीय की उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? हतसमुत्पत्तिक कर्मवाला जो एकेन्द्रिय जीव सञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ और अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त एकान्तानुवृद्धि योगसे वृद्धिको प्राप्त होकर परिणामयोगस्थानको प्राप्त हुआ। उत्कृष्ट परिणाम योगस्थानमें वर्तमान उस जीवके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसी जीवके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानके अन्तिम समयमें वर्तमान क्षपकके उत्कृष्ट हानि होती है।

§ ५३ आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है? जो असञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ नारकियोंमें उत्पन्न हुआ और अन्तर्मुहूर्त

परिणामजोगेण वड्ढिदस्स तस्स उक्क० वड्ढी । तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरस्स असंजदसम्माइट्ठिस्स अणंताणुबंधिविसंजोएंतस्स अंतोमुहुत्तं गंतूण विसंजोयणगुणसेढीसीसए उदिण्णे उक्क० हाणी । अथवा कदकरणिज्जभावेण उप्पण्णस्स जावे गुणसेढीसीसयमुदयमागदं ताधे उक्क० हाणी । एवं पढमाए । भवण०-वाण० एवं चेव । णवरि हाणीए कदकरणिज्जसामित्तं णत्थि । बिदियादि जाव सत्तमा त्ति मोह० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा तप्पाओग्गसंतकम्मादो उवरि वड्ढावेंतस्स । तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं । उक्क० हाणी पढमपुढविभंगो । णवरि कदकरणिज्जसामित्तं णत्थि । एवं जोदिसिएसु ।

§ ५४ तिरिक्खगदीए तिरिक्खाणमुक्कस्सवड्ढी अवट्ठाणमोघं । उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० संजदासंजदस्स अणंताणु०विसंजोजयस्स विसंजोयणगुणसेढीसीसए उदिण्णे तस्स उक्क० हाणी । अथवा उक्क० हाणी कदकरणिज्जस्स कायव्वा । एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए । णवरि जोणिणीसु कदकरणिज्जसंभवो णत्थि । पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० मोह० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्ण० एइंदियस्स हदसमुप्पत्तियकम्मंसियस्स

पर्याप्त एकान्तानुवृद्धि योगसे वृद्धिको प्राप्त होकर परिणाम योगस्थानको प्राप्त हुआ उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है और उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले अन्यतर असंयतसम्यग्दृष्टिके अन्तर्मुहूर्त काल बिताकर विसंयोजनाकी गुणश्रेणिके शीर्षभागकी उदीरणा होनेपर उत्कृष्ट हानि होती है। अथवा जो कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टि नरकमें उत्पन्न हुआ उसके जब गुणश्रेणिका शीर्ष उदयमें आता है तब उत्कृष्ट हानि होती है। इसी प्रकार प्रथम नरकमें जानना चाहिए। भवनवासी और व्यन्तरोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतना विशेष है कि हानिकी अपेक्षा जो कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिको हानिका स्वामी बतलाया है वह भवनवासी और व्यन्तरोंमें नहीं होता। दूसरी से लेकर सातवीं पृथ्वी तक मोहनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? अपने योग्य सत्कर्मको आगे बढ़ानेवाले किसी भी सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि जीवके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी पहली पृथ्वीकी तरह जानना चाहिये। इतना विशेष है कि इनमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिकी अपेक्षा हानिका स्वामित्व नहीं होता। इसी प्रकार ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिये।

§ ५४ तिर्यञ्चगतिमें सामान्य तिर्यञ्चोंमें उत्कृष्ट वृद्धि और उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी ओघकी तरह जानना चाहिये। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले अन्यतर संयतासंयतगुणस्थानवर्ती तिर्यञ्चके विसंयोजनाकी गुणश्रेणिके शीर्षभागकी उदीरणा होनेपर उत्कृष्ट हानि होती है। अथवा तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होनेवाले कृतकृत्य वेदकसम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट हानि कहनी चाहिये। इसी प्रकार तीनों प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनियोंमें कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि उत्पन्न नहीं होता अतः उनमें कृतकृत्यकी अपेक्षा उत्कृष्ट हानि नहीं कहना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो हतसमुत्पत्तिक कर्मकी सत्तावाला अन्यतर एकेन्द्रिय जीव पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न

पंचिं०तिरि०अपज्ज० उववज्जिय अंतोमुहुत्तमेयंताणुवड्ढीए वड्ढिदूण परिणामजोगे पदिदस्स तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० जो संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ कादूण मिच्छत्तं गदो अविणट्ठासु गुणसेढीसु पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० उववण्णो तस्स जाधे गुणसेढीसीसयाणि उदयमागदाणि ताधे मोह० उक्क० हाणी। एवं मणुसअपज्ज०। मणुस०मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु[1] ओघं। सोहम्मादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति विदियपुढविभंगो। णवरि उक्क० हाणी उवसामय-पच्छायदस्स कायव्वा। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मोह० उक्क० वड्ढी० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स तप्पाओग्गसंतकम्मादो उवरि वड्ढावेंतस्स तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्क० अवट्ठाणं। उक्क० हाणी सोहम्मभंगो। एवं जाव अणाहारि त्ति।

होकर अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त एकान्तानुवृद्धि योगके द्वारा वृद्धिको प्राप्त होकर परिणाम योगस्थानको प्राप्त होता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो जीव संयमासंयम और संयमकी गुणश्रेणि रचनाको करके मिथ्यात्वमें गिरकर गुणश्रेणिके नष्ट न होते हुए ही पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ है उस जीवके जब गुणश्रेणिका शीर्षभाग उदयमें आता है तब मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशहानि होती है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये। मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें ओघकी तरह जानना चाहिये। सौधर्म स्वर्गसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें दूसरी पृथिवीकी तरह भंग है। इतना विशेष है कि जो उपशामक देवपर्यायमें आकर उत्पन्न होता है उसके उत्कृष्ट हानि कहनी चाहिये। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मोहनीयकी उत्कृष्ट प्रदेशवृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर सम्यग्दृष्टि अपने योग्य सत्तामें स्थित प्रदेशसत्कर्मको ऊपर बढ़ाता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी सौधर्मकी तरह जानना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—कर्मप्रदेशोंकी सत्तावाला जीव जब अधिकसे अधिक प्रदेशोंकी वृद्धि करता है तब उत्कृष्ट वृद्धि होती है और जब कोई जीव अधिकसे अधिक कर्मप्रदेशोंकी निर्जरा करता है तब उत्कृष्ट हानि होती है। इन्हीं दोनों बातोंको लक्ष्यमें रखकर मूलमें ओघसे और आदेशसे उत्कृष्ट वृद्धि और उत्कृष्ट हानिका स्वामित्व बतलाया गया है। कोई एकेन्द्रिय जीव पहले सत्तामें स्थित कर्मप्रदेशोंका घात करके थोड़े कर्मप्रदेशवाला होकर पीछे सञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें जन्म ले। वहाँ अपर्याप्त कालमें उसके एकान्तानुवृद्धि योगस्थान होता है जो कि क्रमशः बढ़ता हुआ होता है। एक अन्तर्मुहूर्तकाल तक इस योगके साथ रहकर पर्याप्त होने पर परिणाम योगस्थानवाला हुआ। पीछे जब वह उत्कृष्ट परिमाणयोगस्थानमें वर्तमान रहता है तब वह जीव उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी होता है। योगस्थानके अनुसार ही कर्मप्रदेशोंका प्रदेशबन्ध होता है और सञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकके ही सर्वोत्कृष्ट योगस्थान होता है अतः एकेन्द्रिय जीवको हतसमुत्पत्तिककर्मवाला करके पीछे सञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकमें उत्पन्न

---

१ आ० प्रतौ 'मणुसपज्ज०मणुसिणीसु' इति पाठः।

कराया है और वहीं उसके उत्कृष्ट योगस्थान बतलाया है ताकि कर्मप्रदेशोंका अधिकसे अधिक बन्ध होनेसे पूर्व सत्त्वसे सबसे अधिक वृद्धिको लिये हुए सत्त्व हो। इसी प्रकार दसवें गुणस्थानवर्ती क्षपकके दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें मोहनीयके अवशिष्ट बचे सब निषेकोंकी सत्त्वव्युच्छित्ति हो जानेसे उत्कृष्ट हानि होती है। यह तो हुआ ओघसे। आदेशसे सामान्य नारकियोंमें, प्रथम नरकमें भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें जब हतसमुत्पत्तिककर्मवाला असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव जन्म लेता है तब उसके उत्कृष्ट वृद्धि बतलाई है जो ओघके समान ही है। केवल एकेन्द्रियके स्थानमें असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय कर दिया है, क्योंकि एकेन्द्रिय जीव उक्त स्थानोंमें जन्म नहीं ले सकता। इन स्थानोंमें उत्कृष्ट हानिका स्वामी अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले असंयतसम्यग्दृष्टिको उस समय बतलाया है जब अनन्तानुबन्धीकी गुणश्रेणी रचनाका शीर्ष भाग निर्जीर्ण होता है। आशय यह है कि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना के लिये अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण ये तीन करण जीव करता है। इनमेंसे अपूर्वकरणके प्रथम समयसे ही स्थितिघात, अनुभागघात गुणश्रेणी और गुणसंक्रम ये चार कार्य होने लगते हैं। स्थितिघातके द्वारा स्थितिसत्कर्मोंका घात करता है। अनुभागघातके द्वारा अनुभागसत्कर्मोंका घात करता है। तथा गुणश्रेणी करता है जिसका क्रम इस प्रकार है—अनन्तानुबन्धीके सर्वनिषेक सम्बन्धी सब कर्मपरमाणुओंमें अपकर्षण भागहारका भाग देकर एक भागप्रमाण द्रव्यका निक्षेपण उदयावलिमें करता है और अवशेष बहु भागप्रमाण कर्म परमाणुओंका निक्षेपण उदयावलीसे बाहर करता है। विवक्षित वर्तमान समयसे लेकर आवलीमात्र समयसम्बन्धी निषेकोंको उदयावली कहते हैं। उनमें जो एक भागप्रमाण द्रव्य दिया जाता है सो प्रत्येक निषेकमें एक एक चय घटते क्रमसे दिया जाता है। तथा उदयावलीसे ऊपरके अन्तर्मुहूर्तके समय प्रमाण जो निषेक होते हैं उन्हें गुणश्रेणी निक्षेप कहते हैं, इस गुणश्रेणी निक्षेपमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेपण करता है, अर्थात् उदयावलीसे बाहरकी अनन्तरवर्ती स्थितिमें असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्यका निक्षेपण करता है। उससे ऊपरकी स्थितिमें उससे भी असंख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेपण करता है। इस प्रकार गुणश्रेणी आयाम शीर्षपर्यन्त असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे निषेकोंका निक्षेपण करता है। इस गुणश्रेणी आयामके अन्तिम निषेकोंको गुणश्रेणी शीर्ष कहते हैं— अर्थात् गुणश्रेणि रचनाका सिरो भाग गुणश्रेणि शीर्ष कहलाता है। यह गुणश्रेणिशीर्ष जब निर्जीर्ण होता है तो उत्कृष्ट हानि होती है। अथवा जैसे अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके समय अधःकरण आदि तीन परिणाम होते हैं वैसे ही दर्शनमोहकी क्षपणाके समय भी ये तीनों परिणाम और उनमें होनेवाला स्थितिघात, अनुभागघात और गुणश्रेणि आदि कार्य होता है। विशेष बात यह है कि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनामें जो गुणश्रेणि रचना होती है उससे दर्शनमोहकी क्षपणामें होनेवाली गुणश्रेणिका काल थोड़ा है तथा निक्षिप्यमाण द्रव्य उससे असंख्यातगुणा असंख्यातगुणा है अतः अनन्तानुबन्धीके गुणश्रेणिशीर्षके द्रव्यसे दर्शनमोहके गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्य असंख्यातगुणा है, अतः कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि मनुष्य मरकर यदि नरकमें उत्पन्न होता है तो उस जीवके गुणश्रेणिशीर्षका क्षय होता है तब भी उत्कृष्ट हानि होती है। किन्तु एक ऐसा मनुष्य यदि नरकमें उत्पन्न हो तो पहलेमें ही उत्पन्न होता है, न द्वितीयादि नरकोंमें उत्पन्न होता है और न भवनत्रिकमें ही उत्पन्न होता है, अतः प्रथम नरकमें उसीके उत्कृष्ट हानि होती है और शेष नरकोंमें तथा भवनत्रिकमें विसंयोजना वालेके गुणश्रेणिशीर्षकी निर्जरा होने पर उत्कृष्ट हानि होती है। तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें उत्कृष्ट वृद्धि तो ओघकी तरह हतसमुत्पत्तिककर्म करनेवाले एकेन्द्रिय जीवके संज्ञी पञ्चेन्द्रिय-

§ ५५. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदे०। ओघेण मोह० जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ? अण्णद० जो संतकम्मादो जहण्णाविरोहिणा असंखे०-भागेण वड्ढिदो तस्स जह० वड्ढी हाइदे हाणी एगदरत्थावट्ठाणं। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्स-सव्वदेवा त्ति। एवं जाव अणाहारि त्ति।

पर्याप्तकोंमें जन्म लेने पर और वहाँ पहले कहे गये क्रमसे उत्कृष्ट परिणामयोगस्थानमें वर्तमान होने पर होती है तथा उत्कृष्ट हानि भोगभूमिकी अपेक्षा तो उत्कृष्ट भोगभूमिमें जन्म लेनेवाले कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिके जब दर्शनमोहके गुणश्रेणिशीर्षका उदय होता है तब होती है और कर्मभूमिया सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यञ्चके जब यह पञ्चमगुणस्थानमें वर्तमान होते हुए भी अनन्तानुबन्धीकी पूर्वोक्त क्रमसे विसयोजना करता हुआ अनन्तानुबन्धीकी गुणश्रेणि रचना करके उसके गुणश्रेणिशीर्षकी निर्जरा करता है तब उत्कृष्ट हानि होती है। यहाँ सम्यग्दृष्टिके न बताकर सयतासयतके बतलानेका कारण यह है कि अविरतसम्यग्दृष्टिसे सयतासंयतके असख्यातगुणी निर्जरा बतलाई है और गुणश्रेणिका काल थोड़ा बतलाया है, अत अविरत सम्यग्दृष्टिके गुणश्रेणिशीर्षके द्रव्यसे सयतासयतके गुणश्रेणिशीर्षके द्रव्यका प्रमाण असख्यात गुणा होनेसे हानिका परिणाम भी अधिक होता है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें इतनी विशेषता है कि वहाँ उत्कृष्ट वृद्धिके लिये हतसमुत्पत्तिक एकेन्द्रिय जीवको सज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न कराना चाहिये। तथा उत्कृष्ट हानिके लिये सयमासयम अथवा सयम धारण करके और गुणश्रेणि रचनाको करके मिथ्यात्वमें गिरकर तिर्यञ्चायुका बन्ध करके पचेन्द्रिय अपर्याप्तकोंमें जन्म लेनेवाले जीवके जब सयमासयम अथवा सयम धारण कालमें की हुई गुणश्रेणिका शीर्ष भाग उदयमें आता है तब उत्कृष्ट हानि होती है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिये। शेष मनुष्योंमें ओघकी तरह समझना चाहिये। सौधर्म आदिके देवोंमें जो सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि देव सत्तामें स्थित कर्मप्रदेशोंको अधिक बढ़ाता है उसीके उत्कृष्ट वृद्धि होती है और मनुष्यपर्यायमें जो जीव उपशमश्रेणि पर चढकर गुण श्रेणि रचना करके मरकर सौधर्मादिकमें जन्म लेता है उसके जब गुणश्रेणिका शीर्ष उदयमें आता है तो उत्कृष्ट हानि होती है। सर्वत्र अवस्थानका विचार मूलमें बतलाई गई विधिके अनुसार जानना चाहिये।

§ ५५ जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान किसके होता है ? जो सत्तामें स्थित कर्मप्रदेशोंको जघन्यके अविरोधी असख्यातवें भाग रूपमे बढाता है उसके जघन्य वृद्धि होती है तथा उतनी ही हानि होने पर जघन्य हानि होती है और दोनोंमेसे किसी एकके जघन्य अवस्थान होता है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—जो जीव सत्तामें स्थित कर्मप्रदेशोंको असख्यातवें भागप्रमाण घटाता है उसके जघन्य हानि होती है। जो असख्यातवें भागप्रमाण बढाता है उसके जघन्य वृद्धि होती है। किन्तु यह घटाया हुआ व बढाया हुआ असख्यातवाँ भाग ऐसा होना चाहिये जिसे जघन्य कहनेमें कोई विरोध न आ सके। ओघसे व आदेशसे जघन्य हानिमें सर्वत्र असख्यातभागहानि होती है तथा जघन्य वृद्धिमें सर्वत्र असख्यातभागवृद्धि होती है, अत शेष सब मार्गणाओंका कथन ओघके समान कहा। तथा जघन्य वृद्धि या हानिके बाद जो अवस्थान होता है वह सर्वत्र जघन्य अवस्थान है यह कहा। इसके सिवा अवस्थान और किसी भी प्रकारसे जघन्य बन नहीं सकता।

§ ५६. अप्पाबहुअं दुविहं—जह० उक्क०। उक्क० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण सव्वत्थोवा मोह० उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं च। हाणी असंखे० गुणा। एवं सव्वगइमग्गणासु। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ५७. जह० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तिण्णि वि सरिसाणि। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ५८. वड्ढिविहत्तीए तत्थ इमाणि तेरस अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति। समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० अत्थि असंखे०भागवड्ढी हाणी अवट्ठिदाणि। एवं सव्वत्थ णेदव्वं।

§ ५९. सामित्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदे०। ओघेण मोह० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदाणि कस्स? अण्णदरस्स सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा। एवं सव्वणेरइय तिरिक्ख-पंचिं०तिरि०तिय-मणुसतिय-देवा भवणादि जाव उवरिम गेवज्जा त्ति। पंचिं०तिरि०अपज्ज०[1]-मणुसअपज्ज०-अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०विह० को होइ? अण्ण०। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६०. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०

---

§ ५६. अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी उत्कृष्ट वृद्धि और उत्कृष्ट अवस्थान सबसे थोड़े हैं और उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। इस प्रकार सब गति मार्गणाओंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ५७. जघन्यसे प्रयोजन है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान तीनों ही समान हैं। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिए।

§ ५८. अब वृद्धिविभक्तिका कथन करते हैं। उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व पर्यन्त तेरह अनुयोगद्वार होते हैं। समुत्कीर्तनानुगम दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थान होते हैं। इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिये।

§ ५९. स्वामित्वानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि असंख्यातभागहानि और अवस्थान किसके होते हैं? किसी भी सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टि जीवके होते हैं। इस प्रकार सब नारकी सामान्य तिर्यञ्च, तीन प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च तीन प्रकारके मनुष्य सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित विभक्तिका स्वामी कौन होता है? उक्त अपर्याप्तोंमें कोई भी मिथ्यादृष्टि और उक्त देवोंमें कोई भी सम्यग्दृष्टि जीव स्वामी होता है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

§ ६०. कालानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी

---

१ आ० प्रतौ 'पंचिंतिरि-अपज्ज' इति पाठः।

भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठसमया। अथवा अंतोमुहुत्तं सव्वोवसामणाए। एवं मणुसतिए। एवं चेव सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय० देवगदी० देवा जाव सव्वट्ट-सिद्धि त्ति। णवरि अवट्ठि० अंतोमु० णत्थि, तत्थ सव्वोवसमाभावादो। पंचिं०तिरि०-अपज्ज० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठस०। एवं मणुसअपज्ज०। एवं जाव अणाहारि त्ति।

असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात-आठ समय है। अथवा सर्वोपशमनाकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त है। तीन प्रकारके मनुष्योंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए। सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, तीन प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, देवगतिमें सामान्य देव और सर्वार्थसिद्धितकके प्रत्येक देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। इतना विशेष है कि इन नारकी आदिमें अवस्थितविभक्तिका अन्तर्मुहूर्त काल नहीं होता, क्योंकि उनमें मोहनीयकी सर्वोपशमना नहीं होती। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तोंमें असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—पहले वृद्धि और हानिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण घटित करके बतला आये है, असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात भागहानिका भी उतना ही काल प्राप्त होता है, अतः इनका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा। भुजगारविभक्तिमें अवस्थितका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय घटित करके बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिये। विशेष बात इतनी है कि वहाँ संख्यात समयका प्रमाण नहीं खोला है किन्तु यहाँ उसका खुलासा कर दिया है। मालूम होता है एक परिणाम योग-स्थानका उत्कृष्ट काल सात आठ समय है इसीलिये यहाँ अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल सात आठ समय कहा है। अथवा उपशमश्रेणिमें मोहनीयका सर्वोपशम करके जीव जब उप-शान्तमोह गुणस्थानमें जाता है तो वहाँ अन्तर्मुहूर्तकाल तक एक भी परमाणु निर्जीर्ण नहीं होता और वहाँ न नये कर्मका बन्ध ही होता है। इस तरह वहाँ वृद्धि और हानि न होकर अन्तर्मुहूर्त काल तक अवस्थान ही रहता है। यही कारण है कि सर्वोपशामनाकी अपेक्षा अवस्थितप्रदेशविभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा। सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनी इनके उक्त व्यवस्था अविकल बन जाती है, इसलिये उनमें सब कथन ओघके समान कहा। आगे सब नारकी आदि कुछ और मार्गणाएँ भी गिनाई हैं जिनमें अवस्थित-विभक्तिके अन्तर्मुहूर्त कालको छोड़कर शेष सब व्यवस्था बन जाती है, इसलिये वहाँ भी इसके कथनको छोड़कर शेष सब कथन ओघके समान कहा। परन्तु इन मार्गणाओंमें उपशम-श्रेणिपर आरोहण नहीं होता, अतः सर्वोपशमना न बननेसे अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट-काल अन्तर्मुहूर्त नहीं प्राप्त होता, अतः इसका निषेध किया। पचेन्द्रिय तिर्यञ्च लब्ध्यपर्याप्तके और मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तके असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल जो अन्तर्मुहूर्त बतलाया सो इसका कारण यह है कि इस मार्गणावाले एक जीवका

§ ६१ अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। आदेसेण णेरइएसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० ओघं। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवं सव्वणेरइय०। णवरि अवट्ठि० उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। तिरिक्खेसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० ओघभंगो। एवं पंचिं०तिरिक्खतिए। णवरि अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। एवं मणुसतिए। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं मणुसअपज्ज०। देवगदीए देवेसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णेरइयभंगो। एवं भवणादि जाव सव्वट्ठा त्ति। णवरि अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। एवं जाव अणाहारि त्ति।

उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष कथन सुगम है। आगे अनाहारक मार्गणा तक भी यथायोग्य विचार कर यह काल जानना चाहिये।

§ ६१ अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यात भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तर ओघकी तरह है। अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतना विशेष है कि अवस्थितका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। तिर्यञ्चोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर ओघकी तरह है। इसी प्रकार तीन प्रकारके पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतना विशेष है कि अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार तीन प्रकारके मनुष्योंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। देवगतिमें देवोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि असंख्यातभागहानि और अवस्थितका अन्तर नारकियोंके समान है। इसी प्रकार भवनवासीसे लेकर सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त जानना चाहिये। इतना विशेष है कि अवस्थितका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—भुजगार प्रदेशविभक्तिका कथन करते समय भुजगार, अल्पतर और अवस्थितप्रदेशविभक्तिका जिस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकाल बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितप्रदेशविभक्तिका ओघ व आदेशसे एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकाल जानना चाहिये। उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है, इसलिये यहाँ पृथक् पृथक् घटित करके नहीं लिखा।

§ ६२. णाणाजीवेहि भंगविचयाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० णियमा अत्थि । एवं तिरिक्ख० । आदेसे० णेरइय० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा० णियमा अत्थि । सिया एदे च अवट्ठिदो च । सिया एदे च अवट्ठिदा च । एवं सव्वणिरय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसतिय-देवा भवणादि जाव सव्वट्ठा त्ति । मणुसअपज्ज० मोह० सव्वपदा भयणिज्जा । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ६३ भागाभागाणुगमेण[1] दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० अवट्ठि० सव्वजी० केवडिओ भागो ? असंखे०भागो । असंखे०भागवड्ढि० सव्वजी० के० ? संखे०भागो । असंखे०भागहा० सव्वजी० केव० भागो ? संखेज्जा भागा । अथवा

§ ६२ नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे पाये जाते हैं । इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे होते हैं । कदाचित् अनेक जीव हानि और वृद्धिवाले और एक जीव अवस्थितविभक्तिवाला होता है । कदाचित् अनेक जीव हानि और वृद्धिवाले और अनेक जीव अवस्थितविभक्तिवाले होते हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उक्त सब पद विकल्पसे होते हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—ओघसे तीनों प्रदेशविभक्तिवाले नाना जीव सदा हैं, अत. असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं यह कहा । सामान्य तिर्यञ्चोंमें भी ओघ प्ररूपणा अविकल बन जाती है, इसलिये उनके कथनको ओघके समान कहा । नारकियोंमे असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव सभी नियमसे हैं । केवल अवस्थित विभक्तिवाले जीव कभी नहीं होते, कभी एक होता है और कभी अनेक होते हैं, इसलिये तीन भंग हो जाते हैं । आगे और भी मार्गणाएँ गिनाई हैं उनमें भी यह व्यवस्था बन जाती है, इसलिये उनमें भी सामान्य नारकियोंके समान तीन भंग कहे हैं । मनुष्य लब्ध्यपर्याप्त यह सान्तर मार्गणा है, अत इसमें तीनों पद भजनीय हैं । इनके कुल भंग २६ होते हैं । खुलासा अनेक बार किया है उसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिये । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक अपने अपने पदोंके अनुसार और सान्तर निरन्तर मार्गणाओंके अनुसार जहाँ जितने भंग संभव हों घटित करके जान लेना चाहिये ।

§ ६३ भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं । असंख्यातभागहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । अथवा असंख्यातभागहानिवाले जीव कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं और

1 ता०आ०प्रत्यो 'भागाभागभंगविचयाणुगमेण' इति पाठ ।

असंखे०भागहाणि० केव० ? संखे०भागो । असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा । एसो मूलुच्चारणापाढो[1] । एदेसिं दोण्हं पाढाणमविरोहो[2] जाणिय वत्तव्वो । एवं सव्वत्थ । एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति । मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु मोह० असंखे०भागहाणि-अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? संखे० भागो । असंखे०भागवड्ढि० सव्वजी० केव० ? संखेज्जा भागा । वड्ढि-हाणीए विवज्जासो त्ति । एवं सव्वट्ठे । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ६४ परिमाणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० असंखे०

असंख्यातभागवृद्धिवाले संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । यह मूल उच्चारणाका पाठ है । इन दोनों पाठोंमें जानकर अविरोधको घटित कर लेना चाहिये । इसी प्रकार सर्वत्र समझना चाहिए । इस प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजिततकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं । असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । वृद्धि और हानिमें विपर्यास भी है अर्थात् दूसरे पाठके अनुसार असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं और असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये ।

विशेषार्थ—राशियाँ तीन हैं असंख्यातभागवृद्धि प्रदेशविभक्तिवाले, असंख्यातभागहानि प्रदेशविभक्तिवाले और अवस्थितप्रदेशविभक्तिवाले । इनमेंसे कौन कितने भागप्रमाण हैं इसमें मतभेद है । एक उच्चारणके अनुसार तो असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव थोड़े हैं और असंख्यातभागहानिवाले जीव अधिक हैं और मूल उच्चारणाके अनुसार असंख्यातभागहानिवाले जीव थोड़े हैं और असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव बहुत हैं । वीरसेन स्वामी कहते हैं कि जिससे इन दोनों पाठोंमें विरोध न रहे इस प्रकार इसकी संगति बिठानी चाहिये । हमारा ख्याल है कि कभी क्षपितकर्मांशवाले जीव अधिक हो जाते होंगे और कभी गुणित कर्मांशवाले जीव थोड़े रह जाते होंगे । तथा कभी इससे उलटी स्थिति भी हो जाती होगी । मालूम होता है कि इसी कारणसे दो उच्चारणाओंमें दो पाठ हो गये होंगे । वास्तवमें देखा जाय तो ये दोनों पाठ एक दूसरेके पूरक ही हैं । परन्तु इन दोनों दृष्टियोंसे कथन करते समय अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंके कथनमें अन्तर नहीं पड़ता । ये दोनों अवस्थाओंमें एकसे रहते हैं । आगे सब नारकी आदि जो और मार्गणायें गिनाई हैं उनमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये इसलिये उनके कथनको ओघके समान कहा है । परन्तु मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देव संख्यात हैं, इसलिये वहाँ अवस्थितविभक्तिवाले भी सब जीवोंके संख्यातवें भागप्रमाण कहे हैं । शेष कथन पूर्ववत् है । इसी प्रकार आगेकी मार्गणाओंमें भी यथायोग्य व्यवस्था जानकर भागाभाग कहना चाहिये ।

§ ६४ परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव कितने

1. ता० प्रतौ '—पाढो' इति पाठः । 2. ता० प्रतौ 'पाढाणमविरोहो' इति पाठः ।

भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केत्तिया ? अणंता। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइएसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केत्ति० ? असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदिय-तिरिक्ख-मणुस-मणुसअपज्ज०-देवा भवणादि जाव अवराइदा त्ति। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि केत्ति० ? संखेज्जा। एवं सव्वट्ठे। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६५. खेत्ताणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० केव० खेत्ते ? सव्वलोगे। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइए० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि- अवट्ठि० केव० खेत्ते ? लोग० असंखे०भागे। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचि०तिरिक्ख-सव्वमणुस-सव्वदेवा त्ति। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६६. पोसणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि०विह० के० खेत्तं पोसिदं ? सव्वलोगो। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइए० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० खेत्तं० ? लोगस्स असंखे० भागो

हैं ? अनन्त हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असख्यातभागवृद्धि, अस ख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अस ख्यात हैं। इसी प्रकार सव नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मोहनीयकी अस ख्यातभागवृद्धि, अस ख्यातभागहानि और अवस्थित विभक्तिवाले जीव कितने हैं ? स ख्यात हैं। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

विशेषार्थ—परिमाणाणुगममें ज्ञातव्य बात इतनी ही है कि ओघसे तो तीनों विभक्तिवाले अनन्त हैं। यही बात सामान्य तिर्यञ्चोंकी है। आदेशसे जिस गतिकी जितनी सख्या है उसी हिसाबसे वहाँ तीनों विभक्तिवाले जीव हैं।

§ ६५ क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सर्व लोक क्षेत्र है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

§ ६६ स्पर्शानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्वलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असख्यातवें भाग और

छ चोद्दसभागा देसूणा। पढमाए खेत्तं। बिदियादि जाव सत्तमा त्ति असंखे०भागवड्ढि-हा० अवट्ठि० सगपोसणं कायव्वं। सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस० असंखे०भागवड्ढि-हाणि अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। देवेसु असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि हाणि लोग० असंखे०भागो अट्ठ णव चोद्दसभागा देसूणा। एवं सोहम्मीसाण०। भवण-वाणवें०-जोदिसि० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठ णव चो०भागा। उवरि सगपोसणं णेदव्वं। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६७ णाणाजीवेहि कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० केवचिरं ? सव्वद्धा। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइय० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० केव० ? सव्वद्धा। अवट्ठि० केव० ? जह० एगस०, उक्क० आवलि०असंखे० भागो। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुस-देवा भवणादि जाव अवराइदा त्ति। मणुसपज्जत्त मणुसिणीसु असंखे०भागवड्ढि-हा० सव्वद्धा। अवट्ठि०

त्रसनालीके कुछ कम छ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पहली पृथिवीमें स्पर्शन क्षेत्रकी तरह है। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी पर्यन्त असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका अपना अपना स्पर्शन करना चाहिये। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब मनुष्योंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और सर्वलोक है। देवोंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ तथा कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण है। इसी प्रकार सौधर्म, ईशान स्वर्गके देवोंमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका स्पर्शन लोकका असंख्यातवां भाग और चौदह राजुमेंसे कुछ कम साढ़े तीन भाग कुछ कम आठ भाग और कुछ कम नौ भाग है। ऊपरके देवोंमें अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—ओघ और आदेशसे जिनका जितना क्षेत्र है तीनों विभक्तिवालोंका वहाँ उतना ही क्षेत्र है यह पूर्वोक्त कथनका तात्पर्य है। सो ही बात स्पर्शनानुगमकी समझनी चाहिये। ओघसे जो स्पर्शन है वह यहाँ तीनों विभक्तिवालोंका ओघसे स्पर्शन प्राप्त होता है और प्रत्येक मार्गणाका जो स्पर्शन है वह वहाँ उस उस मार्गणामें तीनों विभक्तिवालोंका प्राप्त होता है, इसलिये अलग-अलग प्रत्येकका खुलासा नहीं किया।

§ ६७. नाना जीवोंकी अपेक्षा कालानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका कितना काल है ? सर्वदा है। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंका कितना काल है ? सर्वदा है। अवस्थितविभक्तिवालोंका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, सामान्य मनुष्य सामान्य देव और भवनवासीसे लेकर अपराजित विमानतकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवालोंका काल

जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। अथवा मणुसतिए अवट्ठि० उक्क० अंतोमु०। एवं सव्वट्ठे। णवरि अवट्ठि० अंतोमुहुत्तं णत्थि। मणुसअपज्ज० असंखे०भागवड्ढि-हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ६८. अंतराणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे०। ओघेण मोह० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं। एवं तिरिक्खा०। आदेसेण णेरइय० मोह० असंखे०भागवड्ढि-हा० णत्थि अंतरं। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिं०तिरिक्ख-मणुसतिय-सव्वदेवा त्ति। णवरि मणुसतिए अवट्ठि उक्क० वासपुधत्तं। मणुसअपज्ज० असंखे०भागवड्ढि-हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। एवं जाव अणाहारि त्ति।

सर्वदा है। अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सख्यात समय है। अथवा तीन प्रकारके मनुष्योंमें अवस्थितविभक्तिवालोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि सर्वार्थसिद्धिमें अवस्थित-विभक्तिवालोंका अन्तर्मुहूर्त काल नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मोहनीयकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलि-के असख्यातवें भागप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—भुजगारविभक्तिमें ओघ और आदेशसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थित का नाना जीवोंकी अपेक्षा जो काल घटित करके बतला आये हैं वही यहाँ क्रमसे असख्यात-भागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितका काल ओघ और आदेशसे घटित कर लेना चाहिये। उससे इसमें कोई अन्तर नहीं है, अत यहाँ पुन नहीं लिखा। केवल यहाँ सामान्य मनुष्य, मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंके अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल विकल्पसे जो अन्तर्मुहूर्त बतलाया है सो यह सर्वोपशमनाकी अपेक्षा बतलाया है और भुजगारविभक्तिमें इसके कथनकी विवक्षा नहीं की गई है वैसे यह काल वहाँ भी बन जाता है।

§ ६८ अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवालोंका अन्तर नहीं है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिये। आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी असख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवालोंका अन्तर नहीं है। अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असख्यात लोकप्रमाण है। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, तीन प्रकारके मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिये। इतना विशेष है कि तीन प्रकारके मनुष्योंमें अवस्थितविभक्तिवालोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमे असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिवालोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असख्यात लोकप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त जानना चाहिये।

§ ६९ भावाणु० सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

§ ७० अप्पाबहुआणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० सव्वत्थोवा अवट्ठि० । असंखे०भागवड्ढी० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणी संखे०गुणा । अथवा हाणीए उवरि वड्ढी संखे०गुणा । एवं सव्वणेरइय०–सव्वतिरिक्ख-मणुस०-मणुसअपज्ज०–देवा भवणादि० अवराजिदा त्ति । मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु सव्वत्थोवा अवट्ठि० । असंखे०भागवड्ढी० संखे०गुणा । असंखे०भागहाणी संखे०गुणा । वड्ढि-हाणीणं विवज्जासो वा । एवं सव्वट्ठे । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

वड्ढी समत्ता ।

§ ७१ एत्तो ट्ठाणपरूवणा जाणिय वत्तव्वा ।

एवमेदेसु पदणिक्खेव-वड्ढि-ट्ठाणेसु परूविदेसु

मूलपयडिपदेसविहत्ती समत्ता होदि ।

विशेषार्थ—पहले कालानुगमके विषयमें जो लिख आये हैं वही अन्तरानुगमके विषयमें जानना चाहिये । अर्थात् भुजगारविभक्तिमें नाना जीवोंकी अपेक्षा तीनों पदोंका जो अन्तर काल बतलाया है वही यहाँ भी तीनों पदोंकी अपेक्षा सर्वत्र जानना चाहिये । खुलासा वहाँ कर आये हैं इसलिये यहाँ नहीं किया है । केवल वहाँ मनुष्यत्रिकमें अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर जो वर्षपृथक्त्व बतलाया है सो वह उपशमश्रेणिके उत्कृष्ट अन्तरकालकी अपेक्षा कहा है । भुजगारविभक्तिमें भी अवस्थितविभक्तिका यह अन्तर काल सम्भव है पर वहाँ इसकी विवक्षा नहीं की गई है, वैसे यह अन्तरकाल वहाँ भी बन जाता है ।

§ ६९. भावानुगमकी अपेक्षा सर्वत्र औदयिक भाव होता है ।

§ ७०. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे अवस्थितप्रदेशविभक्तिवाले जीव सबसे थोड़े हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धिप्रदेशविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिप्रदेशविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं । अथवा हानिसे वृद्धि संख्यातगुणी है । अर्थात् अवस्थितविभक्तिवालोंसे असंख्यातभाग-हानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं और इनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार सब नारकी सब तिर्यंच सामान्य मनुष्य मनुष्य अपर्याप्त, देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित तकके देवोंमें जानना चाहिये । मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंमें अवस्थित-विभक्तिवाले सबसे थोड़े हैं । इनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं । अथवा वृद्धि और हानियोंका विपर्यय भी है । अर्थात् अवस्थितविभक्तिवालोंसे असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं और इनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार सर्वार्थसिद्धिमें है । तथा इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिये ।

इस प्रकार वृद्धि अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

§ ७१ इसके पश्चात् स्थानोंका कथन जानकर करना चाहिये ।

इस प्रकार इन पदनिक्षेप वृद्धि और स्थानोंका कथनकर चुकनेपर

मूलप्रकृति प्रदेशविभक्ति समाप्त होती है ।

❀ उत्तरपयडिपदेसविहत्तीए एगजीवेण सामित्तं ।

§ ७२. संपहि एत्थ उत्तरपयडिपदेसविहत्तीए भागाभागो सव्वपदेसविहत्ती णोसव्वपदेसविहत्ती उक्कस्सपदेसवि० अणुक्कस्सपदेसवि० जहण्णपदेसवि० अजहण्ण-पदेसवि० सादियपदेसवि० अणादियपदेसवि० धुवपदेसवि० अद्धुवपदेसवि० एगजीवेण सामित्तं कालो अंतरं णाणाजीवेहि भंगविचओ परिमाणं खेत्तं पोसणं कालो अंतरं सण्णियासो भावो अप्पाबहुअं चेदि तेवीस अणियोगद्दाराणि । पुणो भुजगारो पद-णिक्खेवो वड्ढी ट्ठाणाणि त्ति अण्णाणि चत्तारि अणियोगद्दाराणि । एत्थ आदिल्लाणि एक्कारस अणियोगद्दाराणि मोत्तूण पढमं सामित्ताणिओगद्दारं चेव किमट्ठं परूविदं ? ण, तेसिमेक्कारसण्हमेत्थेवुवलंभादो ।

§ ७३. संपहि एदेण सामित्तसुत्तेण सूचिदाणमेक्कारसण्हमणिओगद्दाराणं ताव परूवणं कस्सामो । तं जहा—एत्थ भागाभागो दुविहो—जीवभागाभागो पदेसभागा-भागो चेदि । तत्थ जीवभागाभागमुवरि कस्सामो, णाणाजीवविसयस्स तस्स एगजीवेण सामित्तादिसु अपरूविदेसु परूवणोवायाभावादो । तदो थप्पमेदं कादूण उत्तरपयडि-पदेसभागाभागं ताव वत्तइस्सामो, तस्स सव्वाणियोगद्दाराणं जोणीभूदस्स पुव्वपरूवणा-जोगत्तादो । तं जहा—उत्तरपयडिपदेसभागा० दुविहो—जह० उक्क० । उक्क० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । तत्थ ओघेण मोह० सव्वपदेसपिंडं गुणिदकम्मंसिय-

---

❀ उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्तिमें एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्वको कहते हैं ।

§ ७२ अब यहाँ उत्तरप्रकृतिप्रदेशविभक्तिमें भागाभाग, सर्वप्रदेशविभक्ति, नोसर्वप्रदेश-विभक्ति, उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति, जघन्य प्रदेशविभक्ति, अजघन्य प्रदेशविभक्ति, सादि प्रदेशविभक्ति, अनादि प्रदेशविभक्ति, ध्रुव प्रदेशविभक्ति, अध्रुव प्रदेशविभक्ति, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व, काल, अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, सन्निकर्ष, भाव, और अल्पबहुत्व ये तेईस अनुयोगद्वार होते हैं । इनके सिवा भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ये चार अनुयोगद्वार और होते हैं ।

शंका—यहाँ आदिके ग्यारह अनुयोगद्वारोंको छोड़कर पहले स्वामित्वानुयोगद्वार ही क्यों कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वे ग्यारह अनुयोगद्वार इसी स्वामित्वानुयोगद्वारमें गर्भित पाये जाते हैं, इसलिए पहले स्वामित्वानुयोगद्वारका ही कथन किया है ।

§ ७३ अब इस स्वामित्वका कथन करनेवाले सूत्रसे सूचित होनेवाले ग्यारह अनुयोगद्वारोंका कथन करते हैं । वह इस प्रकार है—यहाँ भागाभाग दो प्रकारका है—जीव भागाभाग और प्रदेशभागाभाग । उनमें जीव भागाभागको आगे कहेंगे, क्योंकि जीव भागाभाग नाना जीवविषयक है, अत एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व आदिका कथन किये बिना उसके कथन करनेका कोई उपाय नहीं है । अतः उसे रोककर उत्तरप्रकृतिप्रदेशविषयक भागाभागको कहते हैं, क्योंकि वह सब अनियोगद्वारोंका उत्पत्तिस्थान होनेसे पहले कहे जानेके योग्य है । उसका कथन इसप्रकार है—उत्तरप्रकृतिप्रदेशभागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश उनमें ।

विसयकम्मट्ठिदिसंचिदणाणासमयपबद्धे घेत्तूण बुद्धीए पुंजं कादूण ठविय पुणो एदमणंतखंडं कादूणेयखंडं सव्वघादिभागो त्ति पुध ट्ठविय सेसबहुभागदव्वमावलि० असंखे०भागेण खंडेदूणेयखंडं पि पुध ट्ठविय सेसदव्वं सरिसबेभागे कादूण पुणो पुव्वमवणिय पुध ट्ठविदमावलि० असंखे०भागेण खंडिदूणेयखंडमेगदव्वमाघेत्तूण सरिसीकदबेभागेसु तत्थ पढमभागे पक्खित्ते कसायभागो होदि। इदरो वि णोकसायभागो। संपहि णोकसायभागं घेत्तूणेदमावलि० असंखे०भागेण खंडिदूणेयखंडमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो सेसदव्वं पंचसमभागे कादूण पुणो आवलि० असंखे०भागं विरलिय पुव्वमवणिय पुध ट्ठविददव्वं समखंडं करिय दादूण तत्थेयखंडं मोत्तूण सेससव्वखंडसमूहं घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते वेदभागो होदि। तिण्हं वेदाणमण्णोण्णाउसरूवेण विवक्खियत्तादो। पुणो सेसेगखंडमेदिस्से चेव विरलणाए उवरिमसमखंडं कादूण तत्थेगखंडपरिहारेण सेससव्वखंडे घेत्तूण बिदियपुंजे पक्खित्ते रदि-अरदीणमण्णोण्णभागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए समखंडं कादूण तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदाणि घेत्तूण तदियपुंजे पक्खित्ते हस्स-सोगभागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्ठिदविरलणाए समपविभागेण दादूण तत्थेयखंडं परिवज्जणेण सेस-

---

से ओघसे गुणितकर्मांशको विषय करनेवाली कर्मस्थितिके भीतर संचित हुए नाना समयप्रबद्धरूप समस्त प्रदेशपिंडको लेकर बुद्धिके द्वारा उसका एक पुंज करके स्थापित करो। पुनः उसके अनन्त खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्ड सर्वघाति प्रकृतियोंका भाग है। उसे पृथक् स्थापित करो। शेष बहु भाग द्रव्यको आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित करके एक भागको भी पृथक् स्थापित करो। शेष द्रव्यके समान दो भाग करके पुनः पहले निकालकर पृथक् स्थापित किये गये एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर एक भाग प्रमाण द्रव्यको अलग करके शेष सब द्रव्यको समान दो भागोंमेंसे प्रथम भागमें मिलाने पर कषायोंका भाग होता है। तथा इतर भाग भी नोकषायोंका भाग होता है। अब नोकषायोंके भागको लेकर उसमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो और एक भागको अलग करके पृथक् स्थापित करो। फिर शेष द्रव्यको समान पांच भागोंमें विभाजित करके पुनः आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके, पहले पृथक् करके पृथक् स्थापित किये गये द्रव्यके समान खण्ड करके विरलित राशि पर दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंके समूहको लेकर प्रथम पुंजमें जोड़ देनेपर वेदका भाग होता है, क्योंकि यहांपर तीनों वेदोंकी अभेद रूपसे विवक्षा है। पुनः शेष बचे एक खण्डको आवलिके असंख्यातवें भाग रूप विरलन राशिके ऊपर समान खण्ड करके दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंको लेकर दूसरे पुंजमें जोड़ देनेपर रति और अरतिका मिला हुआ भाग होता है। पुनः शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त हुए द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके दो। उनमेंसे एक विरलन अंक पर दिये गये एक खण्डको छोड़कर शेष सब विरलित रूपों पर दिये गये खण्डोंको लेकर तीसरे पुंजमें जोड़ देने पर हास्य और शोकका भाग होता है। फिर शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त हुए द्रव्यको अवस्थित विरलनके ऊपर समान भाग करके दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष बचे हुए बहुत खण्डोंको

बहुखंडेसु चउत्थपुंजे पक्खित्तेसु भयभागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदे पंचमपुंजे पक्खित्ते दुगुंछाभागो होइ। तदो एत्थेसो आलावो कायव्वो—सव्वत्थोवो दुगुंछाभागो। भयभागो विसेसाहिओ। हस्स-सोगभागो विसे०। रदि-अरदिभागो विसे०। वेदभागो विसेसाहिओ त्ति।

§ ७४. अथवा णोकसायसयलदव्वं घेत्तूण पंचसमपुंजे कादूण पुणो पढमपुंजम्मि आवलि० असंखे०भागेण खंडेदूणेयखंडमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो एदं चेव भागहारं जहाकमं विसेसाहियं कादूण विदिय-तदिय-चउत्थपुंजेसु भागं घेत्तूण पुणो एवं गहिद-सव्वदव्वे पंचमपुंजे[1] पक्खित्ते वेदभागो होदि। हेट्ठिमा च जहाकमं दुगुंछा-भय-हस्स-सोग-रदि-अरदीणं भागा होंति त्ति वत्तव्वं। एत्थ वि सो चेवालावो कायव्वो, विसेसा-भावादो।

चौथे पुंजमें जोड़ देने पर भयनोकषायका भाग होता है। फिर शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त हुए द्रव्यको पाँचवें पुंजमें जोड़ देने पर जुगुप्साका भाग होता है। अतः यहाँ ऐसा आलाप करना चाहिए—जुगुप्साका भाग सबसे थोड़ा है। उससे भयका भाग विशेष अधिक है। उससे हास्य-शोकका भाग विशेष अधिक है। उससे रति-अरतिका भाग विशेष अधिक है और उससे वेदका भाग विशेष अधिक है।

§ ७४ अथवा, नोकषायके समस्त द्रव्यको लेकर उसके पाँच समान पुञ्ज करो। फिर पहले पुञ्जमें अवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक खण्डको घटाकर पृथक् स्थापित करो। पुनः इसी भागहारको क्रमानुसार विशेष अधिक विशेष अधिक करके उससे दूसरे, तीसरे और चौथे पुंजमें भाग देकर इस प्रकार गृहीत सब द्रव्यको पाँचवें पुंजमें जोड़ देने पर वेदका भाग होता है और नीचेके भाग क्रमशः जुगुप्सा, भय, हास्य शोक और रति-अरतिके भाग होते हैं ऐसा कहना चाहिये। यहाँ पर भी वही आलाप कहना चाहिये, क्योंकि दोनोंमें कोई भेद नहीं है।

विशेषार्थ—मोहनीयकी उत्तरप्रकृतियोंमें भागाभागके दो भेद करके पहले प्रदेश भागाभागका कथन किया है। प्रदेशभागाभागके द्वारा यह बतलाया जाता है कि उत्तर प्रकृतियोंमें किस प्रकृतिको कितना द्रव्य मिलता है। अर्थात् प्रति समय बंधनेवाले समय प्रबद्धमेंसे मोहनीयको जो भाग मिलता है वह उसकी उत्तरप्रकृतियोंमे तत्काल विभाजित हो जाता है। इस प्रकार सञ्चित होते होते मोहनीयकी उत्तर प्रकृतियोंमें जिस क्रमसे सञ्चित द्रव्य रहता है उसका विभागक्रम यहाँ बतलाया है। चूँकि इस ग्रन्थमें प्रकृति आदि सभी विभक्तियोंका कथन सत्तामें स्थित द्रव्यको लेकर ही किया है, अन्यथा बध्यमान समयप्रबद्धका विभाग तो तत्काल हो जाता है जैसा कि पहले हमने लिखा है। विभागका जो क्रम बतलाया है उसका खुलासा इस प्रकार है—मोहनीयकर्मका जो सञ्चित द्रव्य है उसमें अनन्तका भाग दो। एक भागप्रमाण सर्वघाति द्रव्य होता है और शेष बहुभागप्रमाण द्रव्य देशघाती होता है। एक भागप्रमाण सर्वघाति द्रव्यको अलग रख दो, उसका बँटवारा बादको करेंगे। पहले बहुभागप्रमाण देशघाती द्रव्य लो। उसमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो। लब्ध एक भागको जुदा रखकर शेष बहुभागके दो समान भाग करो। उन दो भागोंमेंसे एक भागमें अलग रखे हुए एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर बहुभागको मिला दो। यह भाग कषायका होता है,

---

१ ता०प्रतौ 'गहिदसव्वपुंजे पंचपुंजे' इति पाठः ।

और शेष एक भाग सहित दूसरा भाग नोकषायका होता है। जैसे यदि मोहनीय कर्मके संचित द्रव्यका प्रमाण ६५५३६ कल्पित किया जावे और अनन्तका प्रमाण १६ कल्पित किया जावे तो ६५५३६ में १६ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ४०९६ आता है। यह सर्वघाती द्रव्य है और शेष ६५५३६−४०९६=६१४४० देशघाती द्रव्य है। देशघाती द्रव्यका बटवारा देशघाती प्रकृतियोंमें ही होता है। अतः इस देशघाती द्रव्य ६१४४० में आवलिके असंख्यातवें भागके कल्पित प्रमाण ४ से भाग देने पर लब्ध एक भाग १५३६० आता है। इस एक भागको जुदा रखनेसे शेष बहुभाग ६१४४०−१५३६०=४६०८० रहता है। इस बहुभागके दो समान भाग करनेसे प्रत्येक भागका प्रमाण २३०४० होता है। इसमें जुदा रखे हुए एक भाग १५३६० के बहुभाग ११५२० मिला देनेसे २३०४०+११५२०=३४५६० संज्वलन कषायका द्रव्य होता है और बचे हुए एक भाग ३८४० सहित दूसरा समान भाग २३०४० अर्थात् २३०४०+३८४०=२६८८० नोकषायका द्रव्य होता है। नोकषाय नौ हैं, किन्तु उनमेंसे एक समयमें पाँचका ही बन्ध होता है—तीनों वेदोंमेंसे एक वेद, रति-अरतिमेंसे एक, हास्य शोकमेंसे एक और भय तथा जुगुप्सा। अतः तीनों वेदों, रति-अरति और हास्य-शोकमें अभेद विवक्षा करके संचित द्रव्यका बटवारा भी उसी रूपसे बतलाया है। इसलिये नोकषायको जो द्रव्य मिलता है वह पाँच जगह विभाजित हो जाता है। उसके विभागका क्रम इस प्रकार है—नोकषायके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देकर लब्ध एक भागको जुदा रखो और शेष बहुभागके पाँच समान भाग करो। फिर जुदे रखे हुए एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो। लब्ध एक भागको जुदा रखकर शेष बहुभागको पाँच समान भागोंमेंसे पहले भागमें जोड़ देनेसे जो द्रव्य होता है वह द्रव्य वेदका होता है। फिर जुदे रखे हुए एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक भागको जुदा रख शेष बहुभागको पाँच समान भागों-मेंसे दूसरे भागमें जोड़ देनेसे रति-अरतिका द्रव्य होता है। इसी प्रकार जुदे रखे एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर और एक भागको फिर जुदा रख शेष बहुभागको तीसरे भागमें जोड़नेसे हास्य-शोकका भाग होता है। फिर जुदे रखे एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर बहुभाग चौथेमें मिलानेपर भयका भाग होता है। फिर शेष बचे एक भागको पाँचवें समान भागमें जोड़ देनेसे जुगुप्साका भाग होता है। जैसे नोकषायका द्रव्य २६८८० है। इसमें आवलिके असंख्यातवें भागके कल्पित प्रमाण ४ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ६७२० आता है। उसे अलग रखनेसे शेष २६८८०−६७२०=२०१६० बचता है। उसके पाँच समान भाग करनेसे प्रत्येक भागका प्रमाण ४०३२ होता है। जुदे रखे हुए एक भाग ६७२० में ४ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग १६८० आता है। इसे अलग रखकर शेष बहुभाग ६७२०−१६८०=५०४० को पहले समान भाग ४०३२ में जोड़नेसे वेदका द्रव्य ९०७२ होता है। फिर जुदे रखे एक भाग १६८० में ४ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ४२० आता है। इसे जुदा रखकर शेष बहुभाग १६८०−४२०=१२६० को दूसरे समान भागमें जोड़नेसे ४०३२+१२६०=५२९२ रति-अरतिका द्रव्य होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये। यहाँ एक बात समझ लेना आवश्यक है कि मूलमें एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग न देकर यह लिखा है कि आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करो और प्रत्येक विरलित रूपपर जुदे रखे हुए एक भागके समान भाग करके दे दो। किन्तु ऐसा करने का मतलब ही जुदे रखे हुए भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देना होता है। जैसे १६ में ४ का भाग देनेसे चार आता है यह एक भाग है, वैसे ही चारका विरलन करके और प्रत्येक विरलित रूपपर १६ को ४ समान भागोंमें करके रखने पर एक भागका प्रमाण ४ ही आता है। यथा—$\frac{४\ ४\ ४\ ४}{१\ १\ १\ १}$। अतः

§ ७५. संपहि कसायभागमावलि० असंखे०भागेण भागं घेत्तूणेगखंडं पुध ट्ठविय सेसदव्वं चत्तारि सरिसपुंजे कादूण तदो आवलि० असंखे०भागमवट्ठिदविरलणं कादूण

दोनोंमे कोई अन्तर नहीं है। आगे भी जहाँ जहाँ आवलिके असख्यातवें भागका विरलन करके उसके ऊपर जुदे रखे द्रव्यके समान भाग करके एक एक रूपपर एक एक भाग रखनेका कथन किया है वहाँ उसका मतलब जुदे रखे हुए द्रव्यमें आवलिके असख्यातवें भागका भाग देना ही समझना चाहिये। मूलमें अथवा करके विभागका दूसरा क्रम भी बतलाया है। उस क्रमके अनुसार नोकषायको जो द्रव्य मिला है उसके पाँच समान भाग करो। फिर पहले भागमें आवलिके असख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको अलग रख दो। फिर दूसरे भागमें कुछ अधिक आवलिके असख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको अलग स्थापित कर दो। फिर तीसरे भागमें उससे भी कुछ अधिक आवलिके असख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको पृथक् स्थापित करो। फिर चौथे भागमें उससे भी और अधिक आवलिके असख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको पृथक् स्थापित करो। भाग दे दे करके पृथक् स्थापित किये हुए इन चारों भागोंको पाँचवें समान भागमें जोड़ देनेसे वेदका द्रव्य होता है। और पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे समान भागमें भाग देकर जो पृथक् द्रव्य स्थापित किये थे उन द्रव्योंके सिवाय पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे समान भागमेंसे जो द्रव्य शेष बचता है वह क्रमानुसार जुगुप्सा, भय, हास्य-शोक और रति-अरतिका भाग होता है। जैसे नोकषायके द्रव्यका प्रमाण २६८८० है। इसके पाँच समान भाग करनेसे प्रत्येक भागका प्रमाण ५३७६ होता है। पहले ५३७६ में आवलिके असख्यातवें भाग ४से भाग देने से लब्ध एक भाग १३४४ आता है, इसे पृथक् स्थापित करनेसे शेष द्रव्य ५३७६ − १३४४ = ४०३२ बचता है। दूसरे समान भाग ५३७६ में कुछ अधिक आवलिके असख्यातवें भाग ६ से भाग देने से लब्ध एक भाग ८९६ आता है। इसे पृथक् स्थापित करनेसे शेष द्रव्य ५३७६ − ८९६ = ४४८० बचता है। तीसरे ५३७६ में उससे भी कुछ अधिक आवलिके असख्यातवें भाग ८ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ६७२ आता है। इसे पृथक् स्थापित करनेसे शेष द्रव्य ५३७६ − ६७२ = ४७०४ बचता है। चौथे ५३७६ में उससे भी कुछ अधिक आवलिके असख्यातवें भाग १२से भाग देनेसे लब्ध एक भाग ४४८ आता है। उसे पृथक् स्थापित करनेसे शेष द्रव्य ५३७६ − ४४८ = ४९२८ बचता है। इस प्रकार भाग दे दे करके पृथक् स्थापित किये गये एक एक भागको १३४४ + ८९६ + ६७२ + ४४८ = ३३६० पाँचवें समान भाग ५३७६ में मिला देनेसे वेदका द्रव्य ८७३६ होता है और बाकी बचे द्रव्योंमें से क्रमश' ४०३२ द्रव्य जुगुप्साका, ४४८० द्रव्य भयका, ४७०४ द्रव्य हास्य-शोकका और ४९२८ द्रव्य रति-अरतिका होता है। इस क्रमसे विभाग करनेमें भी बटवारेका परिमाण वही आता है जो पहले प्रकारसे करनेसे आता है। हमारे उदाहरणमें जो अन्तर पड़ गया है उसका कारण यह है कि भागहार आवलिके असख्यातवें भागको हमने भाग देनेकी सहूलियतके लिये अधिक बढ़ा लिया है। अर्थात् उसका प्रमाण ४ कल्पित करके आगे कुछ अधिक कुछ अधिकके स्थानमें ६, ८ और १२ कर लिया है। यदि वह ठीक परिमाण में हो तो द्रव्यका परिमाण पहले प्रकारके अनुसार ही निकलेगा।

§ ७५ अब कषायको जो भाग मिला था उसमें आवलिके असख्यातवें भागका भाग देकर एक भागको पृथक् स्थापित करो। शेष द्रव्यके चार समान पुंज करो। उसके बाद आवलिके असख्यातवें भागका अवस्थित विरलन करके उसके ऊपर पहले घटाये हुए

तस्सुवरि पुव्वमवट्टिदमाण समपविभागेण दादूण तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदाणि घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते लोभसंजल०भागो होदि। सेसेगरूवधरिदमवट्टिदविरलणाए उवरि पुणो वि समखंडं करिय दादूण तत्थेगरूवधरिदपरिहाणेण सेससव्वरूवधरिदाणि घेत्तूण विदियपुंजे पक्खित्ते मायासंज०भागो होदि। पुणो सेसेगरूवधरिदमवट्टिदविरलणाए पुव्वविहाणेण दादूण तेणेव कमेण घेत्तूण तदियपुंजे पक्खित्ते कोहसंजलणभागो होदि। सेसेगरूवधरिदं घेत्तूण चउत्थपुंजे पक्खित्ते माणसंजल०भागो होदि। एत्थाल्लावो कायव्वो—माणभागो थोवो। कोहभागो विसेसाहिओ। मायाभागो विसे०। लोभभागो विसे०। अथवा कसायसव्वदव्वं सरिसचत्तारि भागे कादूण पुव्वविहाणेणावलि० असंखे०भागं परिवाडीए विसेसाहियं करिय पढम-विदिय-तदियपुंजेसु भागं घेत्तूण चउत्थपुंजे तम्मि भागलद्धे पक्खित्ते लोभसंजल०भागो होदि। हेट्ठिमा वि विलोमकमेण माया-कोह-माणसंजलणाणं भागा होंति। एत्थ वि सो चेवालावो कायव्वो। एद च सत्थाणगुणिदकम्मंसियमस्सिऊण भणिदं, खवगसेडीए अक्कमेण संजलणाणमुक्कस्सदव्वाणुवलंभादो। किं कारणं। खवगसेडीए णोकसायसव्वदव्वे कोहसंजलणम्मि पक्खित्ते

एक भागके समान विभाग करके स्थापित करो। उनमेंसे एक विरलित रूप पर स्थापित किये हुए भागको छोड़कर बाकीके विरलित रूपों पर स्थापित किये हुए सब भागोंको एकत्र करके पहले पुंजमें मिला देने पर संज्वलन लोभका भाग होता है। शेष एक विरलनके प्रति प्राप्त द्रव्य को फिर भी अवस्थित विरलनके ऊपर समान खण्ड करके दो। उनमें से एक विरलित रूप पर दिये गये भागको छोड़कर शेष सब विरलित रूपों पर दिये गये भागोंको एकत्र करके दूसरे पुंजमें मिला देने पर संज्वलन मायाका भाग होता है। पुनः शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको अवस्थित विरलन राशिके ऊपर पहले कहे गये विधानके अनुसार देकर वहाँ उससे एक भागको छोड़ कर और शेष बचे सब भागोंको एकत्र करके तीसरे पुंजमें मिला देने पर संज्वलन क्रोधका भाग होता है। शेष एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त हुए द्रव्यको लेकर चौथे पुंजमें मिला देनेपर संज्वलन मानका भाग होता है। यहाँ आलाप कहते हैं। मानका भाग थोड़ा है। उससे क्रोधका भाग विशेष अधिक है। उससे मायाका भाग विशेष अधिक है। उससे लोभका भाग विशेष अधिक है। अथवा कषायके सब द्रव्यके समान चार भाग करके पूर्व विधानके अनुसार आवलिके असंख्यातवें भागको क्रमानुसार विशेष अधिक करके पहले, दूसरे और तीसरे पुंजमें भाग देकर उस लब्ध भागको चौथे पुंजमें मिला देने पर संज्वलन लोभका भाग होता है। नीचेके भी भाग विलोमक्रमसे संज्वलन माया, संज्वलन क्रोध और संज्वलन मानके भाग होते हैं। यहाँ पर भी वही आलाप करना चाहिये। यह विभाग स्वस्थान गुणितकर्मांशिकको लेकर कहा है क्योंकि क्षपकश्रेणीमें एक साथ संज्वलन कषायोंका उत्कृष्ट द्रव्य नहीं पाया जाता है।

शंका—क्षपक श्रेणीमें संज्वलन कषायोंका उत्कृष्ट द्रव्य एक साथ क्यों नहीं पाया जाता ?

समाधान—क्षपकश्रेणीमें नोकषायके सब द्रव्यका संज्वलन क्रोधमें प्रक्षेप कर देने पर संज्वलन क्रोधका द्रव्य होता है। क्रोध संज्वलनके द्रव्यका मान संज्वलनमें प्रक्षेपकर देने

कोहसंजल०दव्वं होदि। कोहसंज०दव्वे माणसंजलणम्मि पक्खित्ते माणसंज०-दव्वं होदि। माणसंज०दव्वे मायासंज० पक्खित्ते मायासंज०दव्वं होदि। मायासंज०-दव्वे लोभसंजलणम्मि पक्खित्ते लोहसंजलणदव्वं होदि त्ति एदेण कारणेण णत्थि तत्थ भागाभागो, जुगवमसंभवंताणं भागाभागविहाणोवायाभावादो। अधवा जुगव-मसंभवंताणं पि सव्वदव्वाणं बुद्धीए समाहारं कादूण एसो भागाभागो कायव्वो।

पर मान सज्वलनका द्रव्य होता है। मान सज्वलनके द्रव्यको माया सज्वलनके द्रव्यमें मिला देनेपर माया सज्वलनका द्रव्य होता है। और माया सज्वलनके द्रव्यको लोभसज्वलनके द्रव्यमें मिला देनेपर लोभसज्वलनका द्रव्य होता है। इस कारणसे क्षपकश्रेणीमें भागाभाग नहीं है, क्योंकि इनका एकसाथ पाया जाना सम्भव न होनेसे वहाँ भागाभागके विधान करनेका कोई उपाय नहीं है।

अथवा प्रकृतियोंके एक साथ असभवित भी सब द्रव्यका बुद्धिके द्वारा समूह करके यह भागाभाग करना चाहिये।

विशेषार्थ—देशघाती द्रव्यका जो भाग सज्वलन कषायको मिला है उसका बटवारा उक्त दोनों क्रमानुसार चार भागोंमें होता है। जैसे कषायके भागका परिमाण ३४५६० है। उसमें आवलिके असख्यातवें भागके कल्पित प्रमाण ४ से भाग देनेसे लब्ध ८६४० आता है। इस एक भागको जुदा रख शेष बहुभाग ३४५६०–८६४०=२५९२० के चार समान भाग करो। फिर जुदे रखे एक भाग ८६४० में ४ का भाग देकर लब्ध एक भाग २१६० को अलग रखकर शेष बहुभाग ८६४०–२१६०=६४८० को प्रथम समान भाग ६४८० में जोड़ देनेसे ६४८०+६४८०=१२९६० सज्वलन लोभका भाग होता है। फिर जुदे रखे एक भाग २१६० में फिर ४ का भाग देनेसे लब्ध एक भाग ५४० को जुदा रखकर शेष बहुभाग २१६०–५४०=१६२० को दूसरे समान भाग ६४८० में जोड़नेसे सज्वलन मायाका भाग ६४८०+१६२०=८१०० होता है। जुदे रखे भाग ५४० में फिर ४ का भाग देकर लब्ध एक भाग १३५ को जुदा रखकर शेष बहुभाग ५४०–१३५=४०५ को तीसरे समान भागमें जोड़नेसे सज्वलन क्रोधका भाग ६४८०+४०५=६८८५ होता है। शेष बचे एक भाग १३५ को चौथे समान भागमें मिलानेसे सज्वलन मानका भाग ६४८०+१३५=६६१५ होता है। दूसरे क्रमके अनुसार कषायके सर्व द्रव्य ३४५६० के चार समान भाग करके पहले, दूसरे और तीसरे समान भागमें क्रमसे आवलिके असख्यातवें भागसे, कुछ अधिक आवलिके असंख्यातवें भागसे और उससे भी कुछ अधिक आवलिके असख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध तीनों एक एक भागोंको जोड़कर चौथे समान भागमें मिलानेसे सज्वलन लोभका भाग होता है और पहले, दूसरे और तीसरे समान भागमेंसे अपने अपने लब्ध एक एक भागको घटानेसे जो द्रव्य शेष बचता है वह क्रमसे सज्वलन मान, सज्वलन क्रोध और सज्वलन मायाका द्रव्य होता है। जैसा कि प्रारम्भमें ही कह आये हैं। गुणितकर्मांश जीवके प्रदेश सत्कर्मको लेकर ही यह विभाग किया गया है। क्षपकश्रेणीमें यद्यपि सज्वलनचतुष्कका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है किन्तु वह एक साथ चारों कषायोंका नहीं होता, किन्तु जब पुरुषवेद और नोकषायोंके प्रदेशोंका प्रक्षेप सज्वलन क्रोधमें हो जाता है तब सज्वलनक्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। जब यही क्रोध मानमें प्रक्षिप्त हो जाता है तब मानका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिए। अत क्षपक श्रेणिमें भागाभाग नहीं होता। फिर भी यदि वहाँ भागाभाग करना ही हो तो उनके सब द्रव्य-का समाहार करके कर लेना चाहिये।

§ ७६ संपहि मोह० दव्वमणंतखंडं कादूण पुव्वमवणिदेयखंडं दव्वं सव्वघादिपडिबद्धं घेत्तूण तम्मि आवलि० असंखे०भागेण खंडिदेयखंडं पुध ठविय सेसदव्वं सरिसतेरहपुंजे कादूण पुणो आवलि० असंखे०भागं विरलिय पुव्वमवणिददव्वपमाणमावेयूण समखंडं करिय दादूण तत्थेयखंडमुद्धा सेसबहुखंडाणि घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते मिच्छत्तभागो होदि। एवं सेसपुंजेसु वि सव्वकिरियं जाणिऊण भागाभागे कीरमाणे अणंताणु०लोभ-माया-कोह-माण-पच्चक्खाणलोह-माया-कोह-माण-अपच्चक्खाणलोभ-माया-कोह-माणभागा जहाकमं होंति। एत्थालावे भण्णमाणे अपच्चक्खाणमाणमादिं कादूण जाव मिच्छत्तं ताव विसेसाहियकमेण णेदव्वं। अहवा एदं चेव सव्वघादिपडिबद्धसव्वदव्वं घेत्तूण सरिसतेरहपुंजे कादूण पुणो आवलि० असंखे०भागेण पढमपुंजम्मि भागं घेत्तूण पुध ठविय तदो एदं चेव[1] भागहारं परिवाडीए विसेसाहियं कादूण जहाकमं सेसेक्कारसपुंजेसु वि भागं घेत्तूण भागलद्धसव्वदव्वमेगपिंडं करिय तेरसपुंजे पक्खित्ते मिच्छत्तभागो होदि। सेसा वि जहाकममणंताणु०लोभादीणं भागा पच्छाणुपुव्वीए होंति त्ति घेत्तव्वं। एत्थ सव्वत्थ वि भागहारस्स विसेसाहियभावकरणे रासिपरिहाणिमुहेण सिस्साणं पडिबोहो समुप्पाएयव्वो। एत्थ वि पुव्वुत्तो

---

§ ७६ अब मोहनीयके द्रव्यके अनन्त खण्ड करके पहले घटाये हुए सर्वघातिप्रतिबद्ध एक खण्डप्रमाण द्रव्यको लेकर उसमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो। एक भागको पृथक् स्थापित करके शेष द्रव्यके समान तेरह पुंज करो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके पहले अलग स्थापित किये गये द्रव्यके समान खण्ड करके विरलित राशिपर दो। उन खण्डोंमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंको लेकर पहले पुंजमें मिला देनेपर मिथ्यात्वका भाग होता है। इस प्रकार शेष पुंजोंमें भी सब क्रियाको जानकर भागाभाग करने पर क्रमशः अनन्तानुबन्धी लोभ, अनन्तानुबन्धी माया अनन्तानुबन्धी क्रोध अनन्तानुबन्धी मान प्रत्याख्यानावरण लोभ प्रत्याख्यानावरण माया, प्रत्याख्यानावरण क्रोध प्रत्याख्यानावरण मान अप्रत्याख्यानावरण लोभ अप्रत्याख्यानावरण माया अप्रत्याख्यानावरण क्रोध और अप्रत्याख्यानावरण मानके भाग होते हैं। यहाँ आलापका कथन करनेपर अप्रत्याख्यानावरण मानसे लेकर मिथ्यात्व पर्यन्त विशेष अधिक विशेष अधिक क्रमसे ले जाना चाहिए। अथवा इसी सर्वघातीसे प्रतिबद्ध सब द्रव्यको लेकर समान तेरह पुंज करके फिर आवलिके असंख्यातवें भागसे प्रथम पुंजमें भाग देकर एक भागको पृथक् स्थापित करो। फिर इसी आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण भागहारको क्रमसे विशेष अधिक विशेष अधिक करके क्रमानुसार शेष ग्यारह पुंजोंमें भी भाग दे देकर भाग देनेसे लब्ध सब द्रव्यका एक पिण्ड करके तेरहवें पुंजमें मिला देनेपर मिथ्यात्वका भाग होता है। शेष भाग भी क्रमानुसार पश्चादानुपूर्वी क्रमसे अनन्तानुबन्धी लोभ आदिके होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिये। यहाँ सर्वत्र ही भागहार आवलिके असंख्यातवें भागके विशेष अधिक करनेपर जो राशिकी उत्तरोत्तर हानि होती है उसी द्वारा शिष्योंको बोध उत्पन्न कराना चाहिये। यहाँ पर भी पूर्वोक्त ही आलाप करना चाहिये

---

१ आ०प्रतौ 'एवं चेव' इति पाठः।

चेवालावो कायव्वो, विसेसाभावादो ।

§ ७७. संपहि दंसणतियस्स सत्थाणभागाभागे कीरमाणे मिच्छत्तभागं तिप्पडिरासिय तत्थ पढमपुंजं मोत्तूण विदियपुंजे पलिदो० असंखे०भागेण भागं घेत्तूण भागलद्धे अवणिदे सम्मत्तभागो होदि । पुणो गुणसंकमभागहारं किंचूणीकरिय तदिय-

---

क्योंकि जो पहले कहा है उससे कोई अन्तर नहीं है ।

विशेषार्थ—देशघाती द्रव्यका बँटवारा बतलाकर अब सर्वघाती द्रव्यके भागाभागका क्रम बतलाते हैं जो बिल्कुल पूर्ववत् ही है । सर्वघाती द्रव्यका यह विभाग मोहनीयकी केवल तेरह प्रकृतियोंमें ही होता है एक मिथ्यात्व और बारह कषाय । जब अनादि मिथ्यादृष्टि जीवको प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है तो मिथ्यात्वका ही द्रव्य शुभ परिणामोंसे प्रक्षालित होकर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूप परिणत होता है, अत उन्हें पृथक् द्रव्य नहीं दिया जाता । यहाँ भी सर्वघाती द्रव्यमें आवलिके असख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक भागको जुदा रख शेष बहुभाग द्रव्यके तेरह समान भाग करने चाहिये । लब्ध एक भागमें पुन आवलिके असख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको जुदा रख शेष बहुभाग पहले भागमें मिलानेसे मिथ्यात्वका द्रव्य होता है । जुदे रखे एक भागमें पुन आवलिके असख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको जुदा रख बहुभाग दूसरे समान भागमें मिलानेसे अनन्तानुबन्धी लोभका भाग होता है । इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये । दूसरे क्रमके अनुसार सर्वघाती द्रव्यके तेरह समान भाग करके बारह भागोंमेंसे पहले भागमें आवलिके असख्यातवें भागसे और शेष ग्यारह भागोंमें कुछ कुछ अधिक आवलिके असख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक एक भागोंको जोडकर तेरहवें भागमें मिलानेसे मिथ्यात्वका द्रव्य होता है और बारह समान भागोंमें अपने अपने लब्ध एक भागको घटानेसे जो जो द्रव्य बचता है वह क्रमसे अप्रत्याख्यानावरण मान, क्रोध, माया, लोभ, प्रत्याख्यानावरण मान, क्रोध, माया, लोभ और अनन्तानुबन्धी मान, क्रोध, माया और लोभका भाग होता है । यहाँ अन्तमें ग्रन्थकारने कहा है कि दूसरे क्रममें जो भागहार आवलिके असख्यातवें भागको कुछ अधिक किया है सो कितना अधिक करना चाहिये यह बात गणितकी प्रक्रिया द्वारा शिष्योंको बतला देना चाहिये । यहाँ एक बात खास तौरसे ध्यान देने योग्य यह है कि गोमट्टसार कर्मकाण्डमें सर्वघाती द्रव्यका बटवारा देशघाती प्रकृतियोंमें भी करनेका विधान किया है और इसलिये तेरहमें सञ्ज्वलनचतुष्कको मिलाकर मोहनीयके सर्वघाती द्रव्यका विभाग सत्रह प्रकृतियोंमें किया है । जैसा कि कर्मकाण्डकी गाथा न० १९९ और २०२ से स्पष्ट है । श्वेताम्बर ग्रन्थ कर्मप्रकृतिके अनुसार सर्वघाती द्रव्यके दो भाग होकर आधा भाग दर्शनमोहनीयको और आधा भाग चारित्रमोहनीयको मिलता है । तथा देशघाती द्रव्यका आधा भाग कषायमोहनीयको और आधा भाग नोकषायमोहनीयको मिलता है । दर्शनमोहनीयको जो आधा भाग मिलता है वह सब मिथ्यात्वप्रकृतिका होता है और चारित्रमोहनीयको जो भाग मिलता है वह बारह कषायोंका होता है तथा उसका आलाप वही होता है जो कि यहाँ मूलग्रन्थमें बतलाया है ।

§ ७७ अब दर्शनत्रिकके स्वस्थानकी अपेक्षा भागाभाग करने पर मिथ्यात्वको जो भाग मिला उसकी तीन राशियाँ करो । उनमेंसे पहले पुंजको छोड़ दो । दूसरे पुंजमें पल्यके असख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक भागको उसी पुञ्जमेंसे घटा देनेपर जो शेष बचे वह सम्यक्त्वका भाग होता है । फिर गुणसक्रमभागहारका जो प्रमाण कहा है उसमेंसे कुछ कम करके उससे

पुंजे भागे हिदे भागलद्धं तम्मि चेवावणिदे सम्मामि०भागो होदि। पढमपुंजो वि अद्धवो मिच्छत्तभागो होदि। अथवा सम्मत्त-मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सदव्वं बुद्धीए एगपुंजं कादूण पुणो तिण्णि सरिसभागे करिय तत्थ पढमभागे पलिदो० असंखे० भागेण भागं घेत्तूण भागलद्धदव्वस्स किंचूणमद्धं विदियपुंजे पक्खिविय सेसदव्वम्मि तदियपुंजे पक्खित्ते जहाकमं सम्मामिच्छत्त-सम्मत्त-मिच्छत्तभागा होंति। एत्थ सम्मामि०भागो थोवो। सम्म०भागो विसे०। मिच्छ०भागो विसे०।

§ ७८. संपहि सव्वसमासत्थाणं एत्थ भण्णमाणे अपच्चक्खाणमाणभागो थोवो। कोधे विसेसाहिओ। मायाए विसे०। लोभे विसे०। पच्चक्खाणमाणे विसे०। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसे०। अणंताणु०माणे विसे०। कोहे विसे०। मायाए विसे०। लोभे विसेसाहिओ। सम्मामि० विसे०। सम्मत्तभागो विसेसा०। मिच्छत्तभागो विसे०। दुगुं छाभागो अणंतगुणो। भयभागो विसे०। हस्स-सोगभागो विसे०। रदि-अरदिभागो विसे०। वेदभागो विसे०। माणसंज०भागो विसे०। कोह संज०भागो विसे०। मायासंज०भागो विसे०। लोभसंज० विसे०। एवं मणुसतिए।

तीसरे पुंजमें भाग दो। लब्ध भागको उसी पुंजमेंसे घटा देनेपर जो शेष बचता है वह सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिका भाग होता है। और पहला पूरा पुञ्ज मिथ्यात्वका भाग होता है। अथवा सम्यक्त्व, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यका बुद्धिके द्वारा एक पुंज करके पुनः उसके तीन समान भाग करो। उसमेंसे पहले भागमें पल्यके असंख्यातवें भागसे भाग देकर भाग देनेसे जो द्रव्य प्राप्त हुआ उसके कुछ कम आधे भागको दूसरे पुंजमें मिला दो और शेष द्रव्यको तीसरे पुंजमें मिला दो। ऐसा करने पर क्रमसे सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और मिथ्यात्वके भाग होते हैं। यहाँ सम्यग्मिथ्यात्वका भाग थोड़ा है। सम्यक्त्वका भाग उससे विशेष अधिक है और मिथ्यात्वका भाग उससे विशेष अधिक है।

§ ७८. अब यहाँ सब भागाभागोंका संक्षेपमें कहते हैं—अप्रत्याख्यानावरण मानका भाग थोड़ा है। क्रोधका भाग उससे विशेष अधिक है। मायाका भाग उससे विशेष अधिक है। लोभका भाग उससे विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानका भाग उससे विशेष अधिक है। क्रोधका भाग उससे विशेष अधिक है। मायाका भाग उससे विशेष अधिक है। लोभका भाग उससे विशेष अधिक है। अनन्तानुबन्धी मानका भाग उससे विशेष अधिक है। क्रोधका भाग उससे विशेष अधिक है। मायाका भाग उससे विशेष अधिक है। लोभका भाग उससे विशेष अधिक है। सम्यग्मिथ्यात्वका भाग उससे विशेष अधिक है। सम्यक्त्वका भाग उससे विशेष अधिक है। मिथ्यात्वका भाग उससे विशेष अधिक है। जुगुप्साका भाग उससे अनन्तगुणा है। भयका भाग उससे विशेष अधिक है। हास्य-शोकका भाग उससे विशेष अधिक है। रति-अरतिका भाग उससे विशेष अधिक है। वेदका भाग उससे विशेष अधिक है। मानसंज्वलनका भाग उससे विशेष अधिक है। क्रोध संज्वलनका भाग उससे विशेष अधिक है। माया संज्वलनका भाग उससे विशेष अधिक है और लोभ संज्वलनका भाग उससे अधिक है। इसी प्रकार तीन प्रकारके मनुष्योंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—पहले लिख आये हैं कि सम्यक्त्व प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका बन्ध नहीं होता, इसलिए बन्धकालमें दर्शनमोहनीयका जो द्रव्य मिलता है वह सबका सब

§ ७९. आदेसेण णेरइ० उक्कस्ससंतकम्माणि घेत्तूणेवं चेव भागाभागो कायव्वो। णवरि मिच्छत्तभागमसंखे०खंडाणि कादूण तत्थेयखंडमेत्तो सम्मामि०भागो होइ। कारणं सुगमं। अण्णं च णोकसायुक्कस्ससतकम्ममस्सियूण भागाभागे कीरमाणे णोकसाय-

---

मिथ्यात्व प्रकृतिको मिल जाता है। जब अनादि मिथ्यादृष्टि या सादि मिथ्यादृष्टि जीवको उपशमसम्यक्त्वको प्राप्ति होती है तो सम्यक्त्व प्राप्त होनेके प्रथम समयमें ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व रूप कर्मांशोंकी उत्पत्ति हो जाती है। जैसे चाकीमें दले जानेसे धान्य तीन रूप हो जाता है—चावलरूप, छिलके रूप और चावलके कण तथा छिलके मिले हुए रूप उसी तरह अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके द्वारा दला जाकर दर्शनमोहनीयकर्म भी मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूप हो जाता है। उपशमसम्यक्त्व प्राप्त होनेके प्रथम समयसे ही मिथ्यात्वके प्रदेश गुणसक्रमभागहारके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वरूपमें परिणमित होने प्रारम्भ हो जाते हैं। यहाँ गुणसक्रम भागहारका प्रमाण पल्यके असख्यातवें भाग-प्रमाण है। किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वमे प्रदेशोंको लानेके लिए जो गुणसक्रमभागहार है उससे सम्यक्त्व प्रकृतिमें प्रदेशोंको लानेमे निमित्त गुणसक्रम भागहार असख्यातगुणा है। इस भागहारके द्वारा उपशमसम्यग्दृष्टि जीव पहले समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें बहुत प्रदेश देता है, सम्यक्त्वमें उससे असख्यातगुणे हीन प्रदेश देता है। किन्तु प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमे जितना द्रव्य देता है उससे असख्यातगुणा द्रव्य दूसरे समयमें सम्यक्त्वमें देता है और उससे असख्यातगुणा द्रव्य उसी दूसरे समयमे सम्यग्मिथ्यात्वमें देता है। तीसरे समयमें सम्यग्मिथ्यात्वसे असख्यातगुणा द्रव्य सम्यक्त्वमें और उससे असख्यातगुणा द्रव्य सम्य-ग्मिथ्यात्वमें देता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त गुणसक्रम भागहार होता है। उपशम-सम्यक्त्वके द्वितीय समयसे लेकर जब तक मिथ्यात्वका गुणसक्रम होता है तब तक सम्य-ग्मिथ्यात्वका भी गुणसक्रम होता है। अङ्गुलके असख्यातवें भागरूप प्रतिभागसे भाजित होकर सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य प्रति समय सम्यक्त्व प्रकृतिमें सक्रमित होता है। अत इन तीनों प्रकृतियोंके प्रदेशसत्कर्मका भागाभाग जाननेके लिये मिथ्यात्वके भागके तीन भाग करो। पहला भाग मिथ्यात्वका द्रव्य है। दूसरे भागमें पल्यके असख्यातवें भागसे भाग देकर जो लब्ध आवे उसे उसी भागमेंसे घटा देने पर जो द्रव्य शेष रहे वह सम्यक्त्वका द्रव्य है। तीसरे भागमें कुछ कम पल्यके असख्यातवें भागसे भाग देकर जो लब्ध आवे उसे उसी भागमेंसे घटानेसे जो शेष बचता है वह सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य होता है। ऐसे ही दूसरा प्रकार भी समझना चाहिये। ऐसा करनेसे सबसे कम द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वका होता है। उससे अधिक द्रव्य सम्यक्त्वका होता है और उससे भी अधिक मिथ्यात्वका द्रव्य होता है। आलापोंके सक्षेप अर्थात् अल्पबहुत्वमें अनन्तानुबन्धी लोभसे सम्यग्मिथ्यात्व का द्रव्य जो विशेष अधिक कहा है उसका कारण यह है कि यहाँ पर सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य ग्रहण किया है और उसका स्वामी दर्शनमोहकी क्षपणा करनेवाला जीव जब मिथ्यात्वका सब द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वमें क्षेपण कर देता है तब होता है। इसी प्रकार सम्यक्त्व प्रकृतिके विषयमें भी जानना चाहिये। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ७९ आदेशसे नारकियोंमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मको लेकर इसी प्रकार भागाभाग करना चाहिए। इतना विशेष है कि मिथ्यात्वके भागके असख्यात खण्ड करके उनमेंसे एक खण्ड-प्रमाण सम्यग्मिथ्यात्वका भाग होता है। इसका कारण सुगम है। तथा नोकषायके उत्कृष्ट सत्कर्मको लेकर भागाभाग करने पर नोकषायके सब द्रव्यका एक पुञ्ज करो। फिर उसमें

सव्वदव्वमेगपुंजं कादूण पुणो तम्मि तप्पाओग्गसंखेज्जरूवेहि खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तं हस्स-रदिदव्वं होदि त्ति तमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो सेसदव्वादो तप्पाओग्गसंखेज्जरूवेहि खंडिदेयखंडं पुध ट्ठविय सेसदव्वमावलि० असंखे०भागेण खंडेदूणेगखंडं पि अवणिय पुध ट्ठविय अवणिदसेसं सरिससत्तपुंजे कादूण तत्थ विदियवारमवणिदसंखेज्ज-भागं तिण्णि समभागे कादूण पढम-विदिय-तदियपुंजेसु पक्खिविय पुणो आवलि० असंखे०भागमवट्ठिद०विरलणं कादूण पुव्वमवणिदअसंखे०भागमेत्तदव्वमावलि० असंखे०भागपडिभागिय समखंडं करिय दादूण तत्थेयखंडपरिवज्जणेण सेससव्वखंडाणि घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते पुरिसवेदभागो होदि। पुणो सेसेगखंडं पुव्वविहाणेण दादूण तत्थेयखंडमवसेसिय सेसासेसखंडाणि घेत्तूण विदियपुंजे पक्खित्ते भयभागो होदि। एवं सेसेयखंडमवट्ठिदविरलणाए उवरि समपविभागेण दादूण एक्केक्कखंडं परिहाणीए सेसबहुखंडाणं संछुहणविहाणे कीरमाणे दुगुंछा-णवुंसय-अरदि-सोग-इत्थिवेदभागा जहाकमं विसेसहीणा भवंति। णवरि णवुंसयवेद-अरदि-सोगभागेसु बंधगद्धापडिभागेण संखे०भागमेत्तदव्वपक्खेवो जाणिय कायव्वो। संपहि हस्स-रदिदव्वं घेत्तूणावलि० असंखे०भागेण खंडेदूणेयखंडमवणिय सेसदव्वं सरिसबेपुंजे कादूण तत्थेगपुंजम्मि

तत्प्रायोग्य संख्यात रूपोंसे भाग देने पर वहाँ एक खण्डप्रमाण द्रव्य हास्य-रतिका होता है, इसलिये उसे घटाकर अलग रखना चाहिये। फिर शेष द्रव्यको उसके योग्य संख्यातरूपोंसे खण्डित करके उनमेंसे एक खण्डको पृथक् रखो। फिर शेष द्रव्यको आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित करके लब्ध एक भागको घटाकर पृथक् स्थापित करो। बाकी बचे द्रव्यके समान सात भाग करो। तथा दूसरी बार घटाये हुए संख्यातवें भागके तीन समभाग करके पहले, दूसरे और तीसरे समान भागोंमें मिला दो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागका अवस्थित विरलन करके पहले घटाये हुए असंख्यातवें भागमात्र द्रव्यके आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण खण्ड करके विरलित राशि पर दे दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेष सब खण्डोंको लेकर पहले भागमें मिलाने पर पुरुषवेदका भाग होता है। फिर शेष बचे एक खण्डका पूर्व विधानके अनुसार देकर अर्थात् आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके उसके ऊपर शेष बचे एक खण्डके आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण खण्ड करके दे दो। उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर बाकी बचे सब खण्डोंको लेकर दूसरे भागमें मिलानेसे भयका भाग होता है। उस बाकी बचे एक खण्डको अवस्थित विरलनराशिके ऊपर समान खण्ड करके दो। उनमेंसे एक एक खण्डको छोड़कर उत्तरोत्तर शेष बहुत खण्डोंको तीसरे आदि भागोंमें क्रमसे मिलाने पर जुगुप्सा, नपुंसकवेद, अरति शोक और स्त्रीवेदके भाग होते हैं जो क्रमसे विशेष हीन विशेष हीन होते हैं। इतना विशेष है कि नपुंसकवेद अरति और शोकके भागोंमें बन्धकालके प्रतिभागके अनुसार संख्यात भागमात्र द्रव्यका प्रक्षेप जानकर करना चाहिये। अर्थात् इनमेंसे जिस प्रकृतिका जितना बन्धकाल है उसके प्रतिभागके अनुसार संख्यातवें भागमात्र द्रव्यको जानकर उसका प्रक्षेप उस उस अपने द्रव्यमें करना चाहिए। अब हास्य-रतिके द्रव्यको लेकर आवलिके असंख्यातवें भागसे उसे भाजित करके लब्ध एक भागको उसमेंसे घटाकर शेष द्रव्यके दो समान

पुव्वमवणिददव्वमाणेदूण पक्खित्ते रदिभागो होदि । इयरो वि हस्सभागो होदि । एत्थ हस्समादिं कादूण जाव पुरिसवेदो त्ति ताव सत्थाणभागाभागालावं भणियूण तदो सव्वसमासालावं वत्तइस्सामो । तं जहा—सम्मामि०भागो थोवो । अपच्चक्खाणमाणभागो असंखे०गुणो । कोधभागो विसेसाहिओ । मायाभागो विसे० । लोभभागो विसे० । पच्चक्खाणमाणभागो विसे० । कोधभागो विसे० । मायाभागो विसे० । लोभभागो विसे० । अणंताणु०माणभागो विसे० । कोधभागो विसे० । मायाभागो विसे० । लोभभागो विसे० । सम्मत्तभागो विसे० । मिच्छत्तभागो विसे० । हस्सभागो अणंतगुणो । रदिभागो विसे० । इत्थिवेदभागो संखे०गुणो । सोगभागो विसे० । अरदिभागो विसे० । णवुंसयवेदभागो विसे० । दुगुंछाभागो विसे० । भयभागो विसे० । पुरिसवेदभागो विसे० । माणसंजलणभागो विसे० । कोधसंज०भागो विसे० । मायासंज०भागो विसे० । लोभसंज०भागो विसे० । एत्थ भागाभागपरूवणावसरे अप्पाबहुआलावो असंबद्धो त्ति णाणादरणिज्जो, भागाभागविसयणिण्णयजणणट्ठमेव परूविज्जमाणस्स तदालावस्स सुसंबद्धत्तदंसणादो । एवं पढमपुढवि०-तिरिक्खतिय-देवा सोहम्मादि जाव सव्वट्ठा त्ति । एवं विदियादिछपुढवि-पंचिं०तिरि०जोणिणी-पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुस-

---

भाग करो । उनमेंसे एक भागमें पहले घटाये हुए एक भाग द्रव्यको लेकर जोडने पर रतिका भाग होता है और दूसरा भाग हास्यका होता है । यहाँ हास्यसे लेकर पुरुषवेद पर्यन्त स्वस्थान भागाभागका अलाप कहकर अब सक्षेपसे सब अलापोंको कहेंगे । वह इस प्रकार है—सम्यग्मिथ्यात्वका भाग थोड़ा है । उससे अप्रत्याख्यानावरणमानका भाग असख्यातगुणा है । उससे क्रोधका भाग विशेष अधिक है । उससे मायाका भाग विशेष अधिक है । उससे लोभका भाग विशेष अधिक है । उससे प्रत्याख्यानावरणमानका भाग विशेष अधिक है । उससे क्रोधका भाग विशेष अधिक है । उससे मायाका भाग विशेष अधिक है । उससे लोभका भाग विशेष अधिक है । उससे अनन्तानुबन्धीमानका भाग विशेष अधिक है । उससे क्रोधका भाग विशेष अधिक है । उससे मायाका भाग विशेष अधिक है । उससे लोभका भाग विशेष अधिक है । उससे सम्यक्त्वका भाग विशेष अधिक है । उससे मिथ्यात्वका भाग विशेष अधिक है । उससे हास्यका भाग अनन्तगुणा है । उससे रतिका भाग विशेष अधिक है । उससे स्त्रीवेदका भाग संख्यातगुणा है । उससे शोकका भाग विशेष अधिक है । उससे अरतिका भाग विशेष अधिक है । उससे नपुसकवेदका भाग विशेष अधिक है । उससे जुगुप्साका भाग विशेष अधिक है । उससे भयका भाग विशेष अधिक है । उससे पुरुषवेदका भाग विशेष अधिक है । उससे मानसज्वलनका भाग विशेष अधिक है । उससे क्रोधसज्वलनका भाग विशेष अधिक है । उससे माया सज्वलनका भाग विशेष अधिक है । उससे लोभ सज्वलनका भाग विशेष अधिक है । इस भागाभागके कथनके अवसर पर अल्प बहुत्वका कथन करना असम्बद्ध है यह मानकर उसका अनादर नहीं करना चाहिये; क्योंकि भागाभागविषयक निर्णयके करनेके लिए ही अल्पबहुत्वविषयक आलाप कहा गया है, अत वह सुसम्बद्ध है । इसी प्रकार पहली पृथिवी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चपर्याप्त, सामान्य देव और सौधर्म स्वर्ग से लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए । इसी प्रकार दूसरी से लेकर छ पृथिवियोंमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिनी, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चअपर्याप्त,

अपज्ज०-भवण०-वाण०-जोदिसिया त्ति। णवरि दंसणतियदव्वमसंखे० खंडेदूण तत्थ बहुखंडा मिच्छत्तभागो होदि। सेसमसंखे०खंडे कादूण तत्थ बहुखंडा सम्मामि०भागो होदि। सेसेगभागो सम्मत्तदव्वं होदि। एत्थालावे भण्णमाणे सम्मत्तभागो थोवो। सम्मामि०भागो असंखे०गुणो। अपच्चक्खाणमाणभागो असंखे०गुणो। कोहभागो विसे०। मायाभागो विसे०। उवरि पुव्वविहाणेण णेदव्वं जाव लोभसंजलणभागो त्ति। एवं जाव अणाहारि त्ति।

मनुष्य अपर्याप्त, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषियोंमें जानना चाहिए। इतना विशेष है कि दर्शनमोहनीयकी तीनों प्रकृतियोंके द्रव्यके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुत खण्ड तो मिथ्यात्वके भाग होते हैं। शेष बचे खण्डोंके असंख्यात खण्ड करो। उनमेंसे बहुखण्ड प्रमाण द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वका भाग होता है। शेष एक भाग सम्यक्त्वका द्रव्य होता है। यहाँ आलाप करते हैं—सम्यक्त्वका भाग थोड़ा होता है। सम्यग्मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा होता है। अप्रत्याख्यानावरण मानका भाग असंख्यातगुणा होता है। क्रोधका भाग विशेष अधिक होता है। मायाका भाग विशेष अधिक होता है। आगे संज्वलन लोभके भाग पर्यन्त पहले कही हुई रीतिके अनुसार आलाप करना चाहिये। अर्थात् जैसा पहले कह आये हैं वैसा ही कहना चाहिये। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये।

विशेषार्थ—आदेशसे नारकियोंमें भी मोहनीयके प्रदेशसत्कर्मका भागाभाग ओघकी ही तरह होता है। अन्तर केवल इतना है कि एक तो यहाँ सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका भागाभाग सबसे थोड़ा है। दूसरे नोकषायोंके विभागमें कुछ अन्तर है जो कि मूलमें बतलाया ही है। इसका खुलासा इस प्रकार है—नोकषायके सब द्रव्यका एक पुञ्ज बनाकर उसमें उसके योग्य संख्यातसे भाग दो। लब्ध एक भाग प्रमाण द्रव्य हास्य और रतिका होता है अतः उसे अलग स्थापित कर दो। शेष द्रव्यमें फिर संख्यातसे भाग दो और लब्ध एक भाग प्रमाण द्रव्यको अलग स्थापित कर दो। शेष द्रव्यमें फिर आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो और लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको अलग स्थापित कर दो। बाकी बचे द्रव्यके सात समान भाग करो। दूसरी बार संख्यातका भाग देकर जो द्रव्य अलग स्थापित किया था उसके तीन समान भाग करके सात समान भागोंमें से पहले, दूसरे और तीसरे भागमें एक एक भागको मिला दो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर जो एक भाग द्रव्यको पृथक् स्थापित किया था उसमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको छोड़कर शेष सब द्रव्यको पहले समान भागमें मिलानेसे पुरुषवेदका भाग होता है जो नोकषायोंमें सबसे अधिक भाग है। छोड़े हुए एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको छोड़कर बाकी बचे शेष द्रव्यको दूसरे पुंजमें मिला देने पर भयका भाग होता है। शेष एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग देकर एक भागको छोड़कर बाकी बचे द्रव्यको तीसरे भागमें मिलाने पर जुगुप्साका भाग होता है। इसी प्रकार आगे भी बाकी बचे एक भागमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देता जाय और बहुभागको चौथे आदि पुंजमें मिलाता जाय। ऐसा करनेसे क्रमशः नपुंसकवेद, अरति शोक और स्त्रीवेदका भाग उत्पन्न होता है। किन्तु नपुंसकवेद, अरति और शोकके सम्बन्धमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि इन तीनोंका द्रव्य लाते समय आवलीके असंख्यातवें भागको प्रतिभाग न मान कर इनके बन्धकालको प्रतिभाग मानना चाहिये और इस प्रकार जो उत्तरोत्तर संख्यात भाग द्रव्य प्राप्त हो उसे समान पुंजमें

§ ८०. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदे० । ओघेण मोह० २८ पयडीणं सव्वजहण्णदव्वं घेत्तूण बुद्धीए एगपुंजं करिय तदो एदमणंतखंडं कादूण एगखंडं पुध ट्ठविय सेसमणंताभागमेत्तदव्वं घेत्तूण तं संखे०खंडं कादूण तत्थेयखंडं पि पुध ट्ठविय सेससंखेज्जाभागमेत्तदव्वादो पुणरवि संखेज्जखंडाणि कादूणेयखंड-मवणिय सेसबहुभागदव्वमावलि० असंखे०भागेण खंडियूण तत्थेयखंडमवणिय सेसदव्वं सरिसपंचपुंजे कादूण तत्थ विदियवारमवणिदसखे०भागमेत्तदव्वं सरिसतिण्णिभागे कादूणेगेगभागं पढम-विदिय-तदियपुंजेसु पक्खिविय पुणो आवलि० असंखे०भागं विरलिय पुव्वमवणिदमसंखे०भागमेत्तदव्वं समपविभागेण दादूण तत्थ बहुभागे घेत्तूण पढमपुंजे पक्खित्ते लोभसंज०भागो होदि । पुणो सेसेगरूवधरिदं पुव्वविहाणेण दादूण तत्थेगरूवधरिदं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदाणि घेत्तूण विदियपुंजे पक्खित्ते भय-भागो होदि । पुणो वि सेसेगखंडं पुव्वविहाणेण दादूण तत्थेगरूवधरिदपरिवज्जणेण सेस-

---

मिलाकर इनका भाग प्राप्त करना चाहिये । हास्य और रतिका द्रव्य जो अलग स्थापित कर आये थे उसका बटवारा भी मूलमें बतलाई गई विधिके अनुसार कर लेना चाहिये । इस प्रकार भागाभाग करने पर नौ नोकषायोंमें किस क्रमसे भागाभाग प्राप्त होता है तथा मोहनीयकी सब प्रकृतियों में किस क्रमसे भागाभाग प्राप्त होता है इसका उल्लेख मूलमें किया ही है । इस प्रकार सामान्य नारकियोंमें प्रत्येक प्रकृतिको जिस क्रमसे द्रव्य प्राप्त होता है वह क्रम प्रथम पृथिवी आदि कुछ मार्गणाओंमें अविकल घट जाता है । दूसरीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकी आदि कुछ मार्गणाएँ हैं जिनमें यह क्रम अविकल बन जाता है पर कुछ विशेषता है जिसका उल्लेख मूलमें किया ही है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जहाँ जो प्रक्रिया सम्भव हो उसके अनुसार भागाभाग जान लेना चाहिये ।

§ ८० अब जघन्यसे प्रयोजन है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीय कर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब जघन्य द्रव्यको लेकर बुद्धिके द्वारा उस द्रव्यका एक पुज करो । पुन उसके अनन्त खण्ड करके उनमें से एक खण्डको पृथक् स्थापित करो और शष अनन्त खण्डोंके द्रव्यको लेकर उस द्रव्यके सख्यात खण्ड करो । उनमेंसे एक खण्डको पृथक् स्थापित करके बाकी बचे सख्यात खण्डोंके द्रव्यके फिर सख्यात खण्ड करो और एक खण्डको उसमेंसे घटाकर शेष बहुभाग द्रव्यमें आवलिके असख्यातवें भागसे भाग दो । लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको उसमेंसे घटाकर शेष द्रव्यके समान पाच भाग करो । दूसरी बार अलग स्थापित किये गये सख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यके तीन समान भाग करके पाच समान भागोंमें से पहले, दूसरे और तीसरे भाग में एक एक भागको मिला दो । फिर आवलिके असख्यातवें भागका विरलन करके पहले घटाकर अलग स्थापित किये हुए असख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यके समान भाग करके उस पर दे दो । उन भागोंमेंसे बहु भाग द्रव्यको लेकर पॉच भागोंमें से पहले भागमें जोड़ने पर लोभ सज्वलनका भाग होता है । शेष बचे एक भागके समान भाग करके पूर्व कहे विधानके अनुसार विरलित राशि पर एक एक भागको दो । उनमेंसे भी एक भागको छोडकर शेप सब भागोंको लेकर पॉच भागोंमेंसे दूसरे भागमें जोड़ देने पर भयका भाग होता है । बाकी बचे एक भागके समान भाग करके पूर्व विधान के अनुसार विरलित राशि पर एक एक भाग दो । उनमेंसे एक भागको छोड़कर शेप सब भागोंको एकत्र करके पाँच भागोमेंसे तीसरे

सव्वत्थ सरिसाणि सरिसंडिय तदियपुंजे पक्खित्ते दुगुंछाभागो होदि । पुणो वि सेसेगरूव-धरिदं तहेव दादूण तत्थ बहुखंडस्स चउत्थपुंजे पि पक्खेवे कदे अरदिभागो होदि । सेसेगखंडे वि पंचमपुंजे पक्खित्ते सोगभागो होदि । एत्थ दुगुंछा-भय-सोगपुव्वाणं संखेज्जभागब्भहियत्तकारणं धुवबंधी होदूणेदे हस्स-रदिबंधकाले वि अहियदव्वसंचयं लहंति त्ति वत्तव्वं । अरदि-सोगाणं पुण तण्णत्थि त्ति । पुणो पढमवारमवणिदसंखे० भागमेत्तदव्वं पलिदो० असंखे०भागमेत्तं खंडं कादूण तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय सेससव्व-खंडदव्वमावलि० असंखे०भागेण खंडिदूणेयखंडं पुध ट्ठविय सेससव्वदव्वं सरिसवेपुंजे करिय तत्थ पढमपुंजम्मि पुध ट्ठविददव्वे पक्खित्ते रदिभागो होदि । इयरो वि हस्स-भागो होइ । पुणो पुव्वमवणिदअसंखे०भागमेत्तदव्वं पलिदोवमस्स असंखे०भागेण खंडिय तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय पुणो सेसअसंखेज्जखंडाणि घेत्तूण पुणो वि पलिदो० असंखे०भागमेत्तखंडाणि करिय तत्थेगखंडं घेत्तूण सेससव्वदव्वं सरिसवेपुंजे करिय तत्थ पढमपुंजे तम्मि पक्खित्ते इत्थिवेदभागो होदि । बिदियपुंजो वि णवुंसयभागो होदि । एत्थ कारणं सुगमं । पुणो पुव्वमवणिदअसंखे०भागम्मि समयाविरोहेण भागाभागे कदे कोहसंजल०भागो थोवो ६ । माणसंजल०भागो विसे० ८ । केत्तिय

भागमें मिला देने पर जुगुप्साका भाग होता है। फिर बाकी बचे एक भागको इसी प्रकार विरलित राशि पर देकर उसके भागोंमें से बहु भागको पाँच भागोंमें से चौथे भागमें मिलाने पर अरतिका भाग होता है। बाकी बचे एक भागको पाँचवें भागमें मिलाने पर शोकका भाग होता है। यहाँ जुगुप्सा भय और शोकका द्रव्य अरति और शोकसे संख्यातवें भाग अधिक कहना चाहिये। अधिक होनेका कारण यह है कि ये प्रकृतियाँ ध्रुवबन्धी हैं अतः हास्य और रतिके बन्धकालमें भी अधिक द्रव्य संचयको प्राप्त करती हैं। किन्तु अरति और शोक ध्रुवबन्धी नहीं हैं अतः, इनका द्रव्य भयादिकसे हीन होता है। फिर पहली बार घटाकर अलग रखे हुए संख्यातवें भागमात्र द्रव्यके पल्योपमके असंख्यातवें भागमात्र खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डको पृथक् स्थापित करके शेष सब खण्डोंके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागसे भाग दो। लब्ध एक खण्डको पृथक् स्थापित करके शेष सब द्रव्यके दो समान भाग करो। उनमें से पहले भागमें पृथक् स्थापित किये गये द्रव्यको मिलाने पर रतिका भाग होता है और दूसरा भाग हास्यका होता है। फिर पहले घटाये हुए असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यको पल्यके असंख्यातवें भागसे भाजित करके उसमेंसे लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको पृथक् स्थापित करो। फिर बाकी बचे असंख्यात भागोंको लेकर फिर भी उनके पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डको लेकर शेष सब द्रव्यके दो समान भाग करो। उन भागोंमें से पहले भागमें उस एक खण्डको मिलाने पर स्त्रीवेदका भाग होता है और दूसरा भाग नपुंसकवेदका होता है। स्त्रीवेदसे नपुंसकवेदका भाग कम होनेका कारण सुगम है। फिर पहले घटाये हुए असंख्यातवें भागमें आगमके अविरुद्ध भागाभाग करने पर क्रोधसंज्वलनका भाग थोड़ा होता है और मान संज्वलनका भाग विशेष अधिक होता है। कितना अधिक होता है? तीसरे भाग मात्र अधिक होता है। जैसे यदि क्रोध संज्वलनका द्रव्य ६ है तो मान संज्वलनका भय ८ होता है। पुरुषवेदका

मेत्तेण ? तिभागमेत्तेण। पुरिसवेदभागो विसेसाहिओ १२। के०मेत्तेण ? दुभागमेत्तेण। मायासंजल०भागो विसे० पयडिविसेसमेत्तेण।

§ ८१. पुणो पुव्वमवणिदअणंतिमभागमेत्तसव्वघादिदव्वं पलिदो० असंखे०भागेण खंडेयूण तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय सेससव्वखंडाणि घेत्तूणावलि० असंखे०भागेण खंडेयूण तत्थेयखंडं पि पुध ट्ठविय सेससव्वदव्वमट्ठसरिसपुंजे कादूण पुणो आवलि० असंखे०भागमवट्ठिदविरलणं कादूण तदो आवलि० असंखे०भागपडिभागेण पुव्वमवणिदेयखंडमेदिस्से विरलणाए समपविभागेण दादूण तत्थेयखंडं मोत्तूण सेससव्वरूवधरिदखंडाणि घेत्तूण पढमपुंजम्मि पक्खित्ते पच्चक्खाणलोभभागो होदि। एवं पुणो पुणो पुव्वविहाणं जाणियूण कीरमाणे माया-कोध-माण-अपच्चक्खाणलोभ-माया-कोध-माणभागा जहाकममुप्पज्जंति।

§ ८२. पुणो पुव्वमवणिदअसंखे०भागमेत्तदव्वंप लिदोवमासंखे०भागपडिभागियं घेत्तूण तस्स पलिदो० असंखे०भागमेत्तखंडाणि कादूण तत्थेयखंडपरिहारेण सेससव्वखंडेसु गहिदेसु मिच्छत्तभागो होदि। पुणो सेसमसंखे०भागं घेत्तूण तत्थ पलिदोवमस्स असंखे०भागेण खंडेयूणेयखंडं पुध ट्ठविय सेससव्वखंडाणि घेत्तूणावलि० असंखे०

भाग विशेष अधिक है। कितना अधिक है ? दो भाग मात्र अधिक है। अर्थात् यदि मान सज्वलनका द्रव्य ८ है तो पुरुषवेदका द्रव्य १२ होता है। माया सज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है।

§ ८१ देशघाती द्रव्यका भागाभाग कहकर अब सर्वघाती द्रव्यका भागाभाग कहते हैं। पहले सब द्रव्यमें अनन्तका भाग देकर जो अनन्तवें भागप्रमाण सर्वघाती द्रव्य अलग स्थापित किया था उसको पल्यके असख्यातवें भागसे भाजित करके उसमेंसे एक भागको पृथक् स्थापित करो। शेष सब भागोंको लेकर आवलिके असख्यातवें भागसे भाजित करके उसमेंसे भी एक भागको पृथक् स्थापित करो। शेष सब द्रव्यके आठ समान भाग करो। फिर आवलिके असख्यातवें भागको अवस्थित विरलन करके पहले आवलिके असख्यातवें भागसे भाग देकर जो एक भाग घटाकर अलग स्थापित किया था उसके समान विभाग करके इस विरलित राशि पर दे दो। उन भागोंमेंसे एक भागको छोडकर शेष सब विरलितरूपों पर दिये गये भागोंको एकत्र करके आठ भागोंमेंसे प्रथम भागमें मिलाने पर प्रत्याख्यान लोभका भाग होता है। इस प्रकार पुन पुन पहले कहे गये विधानको जानकर उसके अनुसार करने पर अर्थात् बाकी बचे एक एक भागके इसी प्रकार विरलित राशिप्रमाण खण्ड कर करके और विरलित राशिपर उन्हें दे देकर तथा एक भागको छोड़ शेष सब भागोंको एकत्र कर करके बाकी बचे सात समान भागोंमें क्रम क्रमसे मिलाने पर प्रत्याख्यानावरण माया, क्रोध, मान और अप्रत्याख्यानावरण लोभ, माया, क्रोध तथा मानके भाग क्रमश उत्पन्न होते हैं।

§ ८२ पुन पहले पल्योपमके असख्यातवें भागसे भाग देकर घटाये हुए असख्यातवें भागमात्र द्रव्यको लेकर उसके पल्यके असख्यातवें भागमात्र खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डको छोड़कर शेप सब खण्डोंके मिलाने पर मिथ्यात्वका भाग होता है। पुन बाकी बचे असंख्यातवें भागको लेकर उसके पल्यके असंख्यातवें भाग खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डको पृथक् स्थापित करके शेष सब खण्डोंको लेकर उनमें आवलिके असख्यातवें भागसे भाग दो

भागेण भागलद्धं तत्तो पुध दुविय सेससव्वदव्वं चत्तारि समपुंजे काऊण तदो आवलि० असंखे०भागं विरलिय पुव्व दुविददव्वमेदिस्से विरलणाए उवरि समखंड करिय दादूण तत्थेयखंडपरिवाएण सेसचदुखंडेसु पढमपुंजे पक्खित्तेसु अणंताणु०लोभभागो होदि। एवं पुणो पुणो वि कीरमाणे माय-कोध-माणभागा जहाकमं भवंति। पुणो पुव्वमवणिदअसंखे०भागमेत्तदव्वं पलिदो० असंखे०भागमेत्तखंडाणि काऊण तत्थेय खंडमेत्तो सम्मत्तभागो होदि। सेससव्वखंडाणि घेत्तूण सम्मामि०भागो होदि।

§ ८३ संपहि एत्थालावे भण्णमाणे सम्मत्तभागो थोवो। सम्मामि०भागो असंखे०गुणो। अणंताणु०माणभागो असंखे०गुणो। कोधभागो विसेसाहिओ। मायाभागो विसे०। लोभभागो विसे०। मिच्छत्तभागो असंखे०गुणो। अपच्चक्खाणमाणभागो असंखे०गुणो। कोधभागो विसे०। मायाभागो विसे०। लोभभागो विसे०। पच्चक्खाणमाणभागो विसे०। कोधभागो विसे०। मायाभागो विसे०। लोभभागो विसे०। कोहसंजल०भागो अणंतगुणो। माणसंजल०भागो विसेसा०। पुरिस०भागा विसे०। मायासंजल०भागो विसे०। णउंस०भागो असंखे०गुणो। इत्थिवेदभागो विसे०। हस्सभागो असंखे०गुणो। रदिभागो विसेसा०। सोगभागो संखे०गुणो। अरदिभागो विसे०। दुगुंछभागो विसे०। भयभागो विसे०। लोभसंज० विसे०। एवं मणुसा।

द्रव्य एक भागको पृथक स्थापित करके शेष सब द्रव्यके चार समान भाग करो। फिर आवलिके असंख्यातवें भागका विरलन करके पृथक् स्थापित किये गये द्रव्यको समभाग करके विरलन राशि पर दो। उनमेंसे एक भागको छोड़कर शेष सब भागोंको चार समान भागोंमेंसे पहले भागमें मिला देने पर अनन्तानुबन्धी लोभका भाग होता है। इसी प्रकार पुनः पुनः करने पर माया, क्रोध और मानके भाग यथाक्रमसे होते हैं। उसके बाद पहले घटाये हुए असंख्यातवें भागमात्र द्रव्यके पल्यके असंख्यातवें भागमात्र खण्ड करके उनमेंसे एक खण्ड मात्र द्रव्य सम्यक्त्वका भाग होता है। शेष सब खण्डोंको लेकर सम्यग्मिथ्यात्वका भाग होता है।

§ ८३ अब यहां आलापको कहते हैं—सम्यक्त्वका भाग थोड़ा है। सम्यग्मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धी मानका भाग असंख्यातगुणा है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानका भाग असंख्यातगुणा है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानका भाग विशेष अधिक है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। क्रोधसंज्वलनका भाग अनन्तगुणा है। मानसंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। पुरुषवेदका भाग विशेष अधिक है। मायासंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। नपुंसकवेदका भाग असंख्यातगुणा है। स्त्रीवेदका भाग विशेष अधिक है। हास्यका भाग असंख्यातगुणा है। रतिका भाग विशेष अधिक है। शोकका भाग संख्यातगुणा है। अरतिका भाग विशेष अधिक है। जुगुप्साका भाग विशेष अधिक है। भयका भाग विशेष अधिक है

मणुसपज्जत्ता एवं चेव। णवरि णवुंस०भागस्सुवरि इत्थिवेदभागो असंखे०गुणो कायव्वो। मणुसिणीसु सम्मत्तमादिं कादूण पुव्वविहाणेण भणिदूण तदो कोहसंज०-भागस्सुवरि माणसंज०भागो विसे०। मायासंज०भागो विसे०। इत्थिवेदभागो असंखे०गुणो। णवुंस०भागो असंखे०गुणो। पुरिस०भागो असंखे०गुणो। हस्सभागो संखे०गुणो। उवरि णत्थि विसेसो।

§ ८४. आदेसेण णेरइय० मोह० २८ पयडीणं सव्वजह०पदेसपिंडं घेत्तूण एवमणंतखंडं कादूण तत्थेयखंडमेत्तसव्वघाइदव्वस्स भागाभागे कीरमाणे ओघभंगो। पुणो सेसबहुभागमेत्तदेसघादिदव्वं घेत्तूण एदं संखे०खंडं कादूण तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय पुणो संखेज्जाभागमेत्तसेसदव्वम्मि समयाविरोहेण भागाभागे कदे सोगभागो थोवो। अरदिभागो विसे० पयडिवि०। दुगुंछाभागो विसे० रदिबंधगद्धासंचिददव्वमेत्तेण। भयभागो विसे० पयडिविसे०। माणसंज०भागो विसे० चउ०भागमेत्तेण। कोहसंज०भागो विसे० पयडिविसे०। मायासंज०भागो विसे० पयडिविसे०। लोभसंज०भागो विसे० पयडिविसे०।

§ ८५. संपहि पुव्वमवणिदसंखे०भागमेत्तं पुणो वि संखे०खंडं कादूण तत्थेयखंडं पुध ट्ठविय सेससंखेज्जे भागे घेत्तूणावलि० असंखे०भागेण खंडेयूणेगखंडं घेत्तूण सेससव्व-

---

और लोभसञ्ज्वलनका भाग विशेष अधिक है। इसी प्रकार सामान्य मनुष्योंमें जानना चाहिये। मनुष्य पर्याप्तकोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इतना विशेष है कि इनमें नपुंसकवेदके आगे स्त्रीवेदका भाग असंख्यातगुणा करना चाहिये। मनुष्यिनियोंमें सम्यक्त्वसे लेकर पूर्वोक्त विधानके अनुसार कहकर उसके बाद इस प्रकार कहना चाहिये—क्रोधसञ्ज्वलनके भागसे आगे मान सञ्ज्वलनका भाग विशेष अधिक है। माया सञ्ज्वलनका भाग विशेष अधिक है। स्त्रीवेदका भाग असंख्यातगुणा है। नपुंसकवेदका भाग असंख्यातगुणा है। पुरुषवेदका भाग असंख्यातगुणा है। हास्यका भाग संख्यातगुणा है। इसके आगे कोई अन्तर नहीं है।

§ ८४ आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी २८ प्रकृतियोंके सबसे जघन्य प्रदेशसमूहको लेकर उसके अनन्त खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डप्रमाण सर्वघाती द्रव्य है। उसका भागाभाग ओघके समान जानना चाहिए। शेष बहुभागमात्र देशघाती द्रव्य है। उसे लेकर उसके संख्यात खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डको पृथक् स्थापित करके शेष बचे संख्यात खण्डप्रमाण द्रव्यमें आगमसे विरोध न आये इस तरह भागाभाग करने पर शोकका भाग थोड़ा होता है। अरतिका भाग विशेष अधिक होता है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है। जुगुप्साका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण रतिके बन्धक कालमें संचित हुआ द्रव्यमात्र है। भयका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है। मानसञ्ज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण चतुर्थभागमात्र है। क्रोधसञ्ज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है। मायासञ्ज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है। लोभ सञ्ज्वलनका भाग विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण प्रकृतिमात्र है।

§ ८५ अब पहले घटाये हुए संख्यातवें भागमात्र द्रव्यके फिर भी संख्यात खण्ड करो। उनमेंसे एक खण्डको पृथक् स्थापित करके शेष संख्यात खण्डोंको लेकर इनमें आवलीके

दव्वं सरिसवेपुंजे कादूण तत्थेगपुंजम्मि अणंतरगहिददव्वे पक्खित्ते रदिभागो होदि। इयरो वि हस्सभागो। पुणो पुव्वमवणिदसंखे०भागमेत्तदव्वमसंखे० खंडे कादूण तत्थ बहुखंडेसु गहिदेसु पुरिस०भागो होदि। पुणो सेसेगभागमेत्तदव्वं संखे०खंडं कादूण तत्थ बहुखंडा णवुंस०भागो होदि। इदरेगभागो वि इत्थिवेदस्स होदि।

§ ८६ संपहि एत्थ सव्वसमासाणमप्पणमाणे सम्मत्तभागो थोवो। सम्मामि० भागो असंखे०गुणो। अणंताणु०माणभा० असंखे०गुणो। कोहभा० विसे०। मायाभा० विसे०। लोभभा० विसे०। मिच्छत्तभा० असंखे०गुणो। अपच्चक्खाणमाणभा० असंखे०गुणो। कोधभा० विसे०। मायाभा० विसे०। लोभभा० विसे०। पच्चक्खाण माणभा विसे०। कोधभा० विसे०। मायाभा० विसे०। लोभभा० विसे०। इत्थिवेदभा० अणंतगुणो। णवुंसभा० संखे०गुणो। पुरिसभा० असंखे०गुणो। हस्सभा० संखे०गुणो। रदिभा० विसे०। सोगभा० असंखे०गुणो। अरदिभा० विसे०। दुगुंछाभा० विसे०। भयभा० विसे०। माणसंज०भागो विसे०। कोहसंज०भागो विसे०। माया-संजभागो विसे०। लोभसंज०भागो विसे०। एव पढमादि जाव सत्तमपुढवि-सव्व तिरिक्ख-मणुसअपज्ज० देवा भवणादि जाव सव्वट्ठा त्ति। एवं जाव अणाहारि त्ति।

एवमुत्तरपयडिपदेसभागाभागो समत्तो।

असंख्यातवें भागसे भाग देकर लब्ध एक भाग प्रमाण द्रव्यको लेकर शेष सब द्रव्यके दो समान पुञ्ज करो। उनमेंसे एक पुञ्जमें पहले घटाकर ग्रहण किये गये एक भागप्रमाण द्रव्यको जोड़ दो तो रतिका भाग होता है और दूसरा पुंज हास्यका भाग होता है। फिर पहले घटाये हुए संख्यातवे भागमात्र द्रव्यके असंख्यात खण्ड करो। उनमें से बहुत खण्डोंको लो। यह पुरुषवेदका भाग होता है। फिर बाकी बचे एक भागमात्र द्रव्यके संख्यात खण्ड करो। उनमें से बहुखण्डप्रमाण द्रव्य नपुंसकवेदका भाग होता है। बाकी बचा एक भागमात्र द्रव्य स्त्रीवेदका होता है।

§ ८६ अब यहां पर सबका जोड़ करके आलापको संक्षेपसे कहते हैं—सम्यक्त्वका भाग थोड़ा है। सम्यग्मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा है। अनन्तानुबन्धीमानका भाग असंख्यातगुणा है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। मिथ्यात्वका भाग असंख्यातगुणा है। अप्रत्याख्यानावरण मानका भाग असंख्यातगुणा है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। प्रत्याख्यानावरण मानका भाग विशेष अधिक है। क्रोधका भाग विशेष अधिक है। मायाका भाग विशेष अधिक है। लोभका भाग विशेष अधिक है। स्त्रीवेदका भाग अनन्तगुणा है। नपुंसकवेदका भाग संख्यातगुणा है। पुरुषवेदका भाग असंख्यातगुणा है। हास्यका भाग संख्यातगुणा है। रतिका भाग विशेष अधिक है। शोकका भाग संख्यातगुणा है। अरतिका भाग विशेष अधिक है। जुगुप्साका भाग विशेष अधिक है। भयका भाग विशेष अधिक है। मानसंज्वलनका भाग विशेष अधिक है। क्रोध संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। माया संज्वलनका भाग विशेष अधिक है और लोभ संज्वलनका भाग विशेष अधिक है। इसप्रकार पहली से लेकर सातवी पृथिवीमें सब तिर्यञ्च मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासी से लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें जानना चाहिए। इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिए।

इस प्रकार उत्तर प्रकृतिप्रदेशविभक्तिमें भागाभाग समाप्त हुआ।

§ ८७. सव्वपदेसविहत्ति-णोसव्वपदेसविहत्तियाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । तत्थ ओघेण मोह० अट्ठावीसपयडीणं सव्वपदेसग्गं[1] सव्वविहत्ती । तदूणं णोसव्वविहत्ती । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ८८. उक्कस्साणुक्कस्सपदेसवि० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वुक्कस्सपदेसग्गं उक्कस्सविहत्ती । तदूणमणुक्कस्सविहत्ती । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ८९. जहण्णाजहण्णाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मोह० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वजहण्णपदेसग्गं जहण्णविहत्ती । तदुवरि अजहण्णवि० । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ९०. सादिय-अणादिय-धुव-अद्धुवाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । मिच्छत्त-अट्ठक०-अट्ठणोक० उक्क० अणुक्क० ज० किं सादि० ४ ? सादि-अद्धुवं । अज० किं सादि० ४ ? अणादि० धुवमद्धुवं वा । पुरिस०-चदुसंज० उक्क० जह० किं० सा०[2] ४ ? सादि-अद्धुवं । अज० किं० सादि० ४ ? अणादि० धुवमद्धुवं वा । अणुक्क० किं सादि०

---

§ ८७ सर्वप्रदेशविभक्ति और नोसर्वप्रदेशविभक्ति अनुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । उनमेंसे ओघसे मोहनीयकी अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब प्रदेशसमूहक सर्वविभक्ति कहते हैं और इससे कमको नोसर्वविभक्ति कहते हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ८८ उत्कृष्टानुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति अनुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी अट्ठाईस प्रकृतियोंके सबसे उत्कृष्ट प्रदेशसमूहको उत्कृष्टविभक्ति कहते हैं और उससे कमको अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति कहते हैं । इस प्रकार अनाहारीपर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ८९. जघन्य-अजघन्य अनुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयकी अट्ठाईस प्रकृतियोंके सबसे जघन्य प्रदेशसमूहको जघन्यविभक्ति कहते हैं और उससे अधिक प्रदेशसमूहको अजघन्य प्रदेशविभक्ति कहते हैं । इस प्रकार अनाहारी पर्यन्त ले जाना चाहिये ।

§ ९० सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, आठ कषाय और आठ नोकषायोंकी उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है । अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? अनादि, ध्रुव और अध्रुव है । पुरुषवेद और चारों सज्वलन कपायोंकी उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है । अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? अनादि, ध्रुव और अध्रुव है । अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि, अनादि, ध्रुव और

---

१ आ०प्रतौ 'सव्वजहण्णपदेसग्ग' इति पाठ । २ ता०आ० प्रत्योः 'उक्क० किं० सा०' इति पाठः ।

४ ? सादि० अणादि० धुव० अद्धुवं वा । णवरि[1] लोभसंजल० अजह० अणुक्कस्सभंगो । सम्म०-सम्मामि० चत्तारि पदा किं सादि० ४ ? सादि० अद्धुवं वा । अणंताणु०४ उक्क० अणुक्क० जह० किं सादि० ४ ? सादि० अद्धुव वा । अजह० किं सादि० ४ ? सादि० अणादि० धुव० अद्धुवा० ।

§ ९१ आदेसेण णेरइय० मोह० अट्ठावीसं पय० उक्क० अणुक्क० जह० अजह० पदेसविह० किं सादि० ४ ? सादि० अद्धुवा० । एवं चदुगदीसु । एवं णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति ।

अध्रुव है । इतना विशेष है कि लोभ संज्वलनकी अजघन्य प्रदेशविभक्तिमें अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिके समान भंग होते हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिमें चारों विभक्तियाँ क्या सादि हैं, अनादि हैं, ध्रुव हैं अथवा अध्रुव हैं ? सादि और अध्रुव हैं। अनन्तानुबन्धिचतुष्कमें उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है । अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव है ।

§९१ आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयकी अट्ठाईस प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य प्रदेशविभक्ति क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है अथवा अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इस प्रकार अनाहारीपर्यन्त ले जाना चाहिए ।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व, मध्यकी आठ कषाय और पुरुष वेदके सिवा आठ नोकषाय इनका उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट सत्त्व कादाचित्क है तथा इनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म क्षपणाके अन्तिम समयमें होता है, अतः उक्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशसत्कर्म सादि और अध्रुव है । किन्तु इन प्रकृतियोंका अजघन्य प्रदेशसत्कर्म अनादि, ध्रुव और अध्रुव है । क्षपणाके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होनेके पूर्व तक अनादिसे अजघन्य प्रदेशसत्कर्म रहता है इसलिये तो अनादि है । तथा अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है । पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणी पर चढ़ा हुआ गुणितकर्मांशवाला जो जीव जब स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिको पुरुष वेदमें संक्रमित करता है तब एक समयके लिये पुरुषवेदकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है । वही जीव जब पुरुषवेद और छह नोकषायोंके द्रव्यको संज्वलन क्रोधमें संक्रमित करता है तब संज्वलन क्रोधकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है । वही जीव जब संज्वलन क्रोधके द्रव्यको संज्वलन मानमें संक्रमित करता है तब संज्वलन मानकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है । वही जीव जब संज्वलन मानके द्रव्यको संज्वलन मायामें संक्रमित करता है तब संज्वलन मायाकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है । तथा जब वही जीव संज्वलन मायाके द्रव्यको संज्वलन लोभमें संक्रमित करता है तब संज्वलन लोभकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है । तथा इन पाँचोंका जघन्य प्रदेशसत्कर्म अपनी अपनी क्षपणाके अन्तिम समयमें होता है । चूँकि ये उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशसत्कर्म एक समयके लिए होते हैं, इसलिये सादि और अध्रुव हैं । तथा इन पाँचों प्रकृतियोंकी अजघन्य प्रदेशविभक्ति अनादि ध्रुव और अध्रुव है । क्षपणाके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्मके प्राप्त होनेके पूर्व तक अनादिसे

---

1 ता० आ० प्रत्योः 'अद्धुवाणु णवरि' इति पाठः ।

९२. एवं सामित्तसुत्तेण सूचिदअणियोगद्दाराणं परूवणं काद्ण संपहि मिच्छत्तस्स सामित्तपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

❀ **मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्ती कस्स ?**

§ ९३. किं णेरइयस्स तिरिक्खस्स मणुसस्स देवस्स वा त्ति एदेण पुच्छा कदा। एवंविहस्स संदेहस्स विणासणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि—

❀ **बादरपुढविजीवेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ तदो उवट्टिदो तसकाए वेसागरोवमसहस्साणि सादिरेयाणि अच्छिदाउओ अपच्छिमाणि तेत्तीसं**

अजघन्य प्रदेशसत्कर्म रहता है इसलिये तो वह अनादि है। तथा अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है। यहाँ इतनी विशेषता है कि सज्वलनलोभका जघन्य प्रदेशसत्कर्म क्षपितकर्मांशके अध.प्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमे होता है, अत इसके अजघन्य प्रदेशसत्कर्मका उक्त तीनोंके साथ सादि विकल्प भी बन जाता है। तथा इन पाँचों प्रकृतियोंका अनुत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव चारों प्रकारका है। इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके स्वामीका उल्लेख पहले किया ही है उसके पहले अनुत्कृष्ट अनादि है और उत्कृष्टके बाद सादि है, अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव है और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता सादि और सान्त है इसलिये इनके चारों पद सादि और अध्रुव हैं। अनन्तानुबन्धीके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट कदाचित्क हैं तथा जघन्य क्षपणाके अन्तिम समयमें होता है इसलिये ये तीनों पद सादि और अध्रुव हैं। किन्तु अजघन्य पदमें सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव ये चारों विकल्प बन जाते हैं। अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना होनेके पूर्व तक अजघन्यपद अनादि है और विसयोजनाके बाद अनन्तानुबन्धीसे पुन सयुक्त होने पर सादि है। तथा अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव और भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है। यह तो ओघसे विचार हुआ। आदेशसे विचार करने पर नरकगति आदि जो मार्गणाएँ अनित्य हैं अर्थात् एक जीवके बदलती रहती हैं उन मार्गणाओंमे उत्कृष्ट आदि चारों पद सादि और अध्रुव हैं। किन्तु अचक्षुदर्शन और भव्य मार्गणामें ओघके समान व्यवस्था बन जाती है। हाँ इतनी विशेपता है कि भव्यके ध्रुवपद नहीं होता। यद्यपि अभव्यमार्गणा नित्य है किन्तु उसके आदेश उत्कृष्ट आदि पद कादाचित्क हैं, इसलिये वहाँ चारों पदोंके सादि और अध्रुव ये दो पद ही बनते हैं।

§ ९२ इस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्वका निर्देश करनेवाले चूर्णिसूत्रके द्वारा सूचित अनुयोगद्वारोंका कथन करके अब मिथ्यात्वके स्वामीको बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति किसके होती है ? क्या नारकीके होती है, तिर्यञ्चके होती है, मनुष्यके होती है अथवा देवके होती है ?

§ ९३ इस सूत्रके द्वारा प्रश्न किया गया है। इस प्रकारके सन्देहका विनाश करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ जो बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहा। उसके बाद वहांसे निकला और त्रसकायमें कुछ अधिक दो हजार सागर तक रहा। वहां अन्तिम

सागरोवमाणि। दोभवग्गहणाणि तत्थ अपच्छिमे तेत्तीसं सागरोवमिए णेरइयभवग्गहणे चरिमसमयणेरइयस्स तस्स मिच्छत्तस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं।

§ ९४. बादरपुढविजीवेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ त्ति उत्ते तसट्ठिदीए ऊणकम्मट्ठिदिमच्छिदो त्ति घेत्तव्वं। तसट्ठिदिऊणकम्मट्ठिदीए कुदो कम्मट्ठिदिववएसो? कम्मट्ठिदिणयणिबंधणउवयारादो। बादरपुढविजीवेसु चेव किमट्ठं हिंडाविदो? अइबहुअजोगेण बहुपदेसग्गहणट्ठं। सेसेइंदियाणं जोगेहिंतो बादरपुढविजीवजोगो असंखे०गुणो त्ति कुदो णव्वदे? एदम्हादो चेव सुत्तादो। तत्थ तिव्वसंकिलेसेण बहुदव्वुक्कड्डणट्ठमिदि किमट्ठं ण वुच्चदे? तदट्ठं पि होदु, विरोहाभावादो। बादरणिद्देसो सुहुमपडिसेहफलो। किमट्ठं तप्पडिसेहो कीरदे? ण, बादरजोगादो सुहुमजोगस्स असंखे०गुणहीणस्स पदेसग्गहणे संते गुणिदकम्मंसियत्ताणुववत्तीदो। किं च सेसेइंदियआउआदो बादरपुढविजीवाउ-

---

नरकसम्बन्धी तेतीस सागरकी स्थितिको लेकर दो भव ग्रहण किये। उन दो भवोंमेंसे जब यह जीव तेतीस सागरकी स्थितिवाले नरकसम्बन्धी अन्तिम भवको ग्रहण करके अन्तिम समयवर्ती नारकी होता है तब उसके मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ ९४. 'बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें कर्मस्थिति पर्यन्त रहा' ऐसा कहनेसे त्रसोंकी कायस्थितिसे हीन कर्मस्थिति काल तक रहा ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

शंका—त्रसकायकी स्थितिसे हीन कर्मस्थितिको 'कर्मस्थिति' क्यों कहा है?

समाधान—द्रव्यार्थिकनयकी अपेक्षा उपचारसे कर्मस्थिति कहा है।

शंका—बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें ही क्यों भ्रमण कराया है?

समाधान—अत्यन्त बहुत योगके द्वारा बहुत प्रदेशोंका ग्रहण करनेके लिये बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें भ्रमण कराया है।

शंका—शेष एकेन्द्रिय जीवोंके योगसे बादर पृथिवीकायिक जीवोंका योग असंख्यातगुणा होता है यह किस प्रमाणसे जाना?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना। अर्थात् यदि ऐसा न होता तो उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके ग्रहण करनेके लिये शेष एकेन्द्रियोंको छोड़कर बादर पृथिवीकायिकोंमें ही भ्रमण न कराते। इसीसे स्पष्ट है कि उनसे इनका योग असंख्यातगुणा होता है।

शंका—बादर पृथिवीकायिकोंमें तीव्र संक्लेशके द्वारा बहुत द्रव्यका उत्कर्षण करानेके लिये उनमें भ्रमण कराया है ऐसा क्यों नहीं कहते हो?

समाधान—इसके लिये भी होओ, क्योंकि इसमें कोई विरोध नहीं है।

सूक्ष्मकायका प्रतिषेध करनेके लिए बादरपदका निर्देश किया है।

शंका—सूक्ष्मका निषेध किसलिए किया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि बादरकायिक जीवोंके योगसे सूक्ष्मकायिक जीवोंका योग असंख्यातगुणा हीन होता है अतः उनके द्वारा प्रदेशोंका ग्रहण होने पर जीव गुणितकर्मांशपना नहीं हो सकता।

माउअं पाएण संखेज्जगुणमिदि वा बादरपुढविजीवेसु अपज्जत्तजोगपरिहरणटुं हिंडाविदो। पुढविकाइयजोगादो असंखे०गुणेण जोगेण तप्पज्जत्तद्धादो संखेज्जासंखेज्जगुणाए पज्जत्तद्धाए कम्मपदेससंचयटुं संकिलेसेण तदुक्कड्डिज्जमाणदव्वादो असंखेज्जगुणदव्वुक्कड्डणटुं च वेसागरोवमसहस्साणि सादिरेयाणि तसकाइएसु हिंडाविदो। जदि एवं तो तसकाइएसु चेव कम्मट्ठिदिमेत्तं कालं किण्ण भमाविदो ? ण, तसट्ठिदीए कम्मट्ठिदिमेत्ताए अभावादो। बहुवारं तसट्ठिदिं किण्ण भमाविदो ? ण, तसट्ठिदिं समाणिय एइंदियत्तं गदस्स पुणो कम्मट्ठिदिकालब्भंतरे तसट्ठिदिसमाणणं पडि संभवाभावेण पुणो एइंदिएसु पविट्ठस्स कम्मट्ठिदिअब्भंतरे णिग्गमाभावेण च बहुदव्वसंचयाभावप्पसंगादो। तेत्तीसं सागरोवमाउट्ठिदिएसु णेरइएसु णिरंतरं जदि उप्पज्जदि तो दो चेव भवग्गहणाणि उप्पज्जदि त्ति जाणावणटुं 'अपच्छिमाणि तेत्तीसं सागरोवमाणि दोभवग्गहणाणि' त्ति

दूसरे, शेष एकेन्द्रिय जीवोंकी आयुसे बादर पृथिवीकायिक जीवोंकी आयु प्राय सख्यातगुणी होती है, इसलिये भी अपर्याप्त योगका परिहार करनेके लिये बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें भ्रमण कराया है। पृथिवीकायिक जीवोंके योगसे त्रसकायिक जीवोंका योग असख्यातगुणा होता है तथा उनके पर्याप्त कालसे त्रसजीवोंका पर्याप्त काल सख्यातगुणा और असख्यातगुणा होता है। इसके सिवा बादर पृथिवीकायिक जीवोंके सक्लेश परिणामसे जितने द्रव्यका उत्कर्षण होता है, उससे असख्यातगुणे द्रव्यका उत्कर्षण त्रसकायिक जीवोंमें होता है, अत असख्यातगुणे योगके द्वारा सख्यातगुणे और असख्यातगुणे पर्याप्तकालमें कर्म-प्रदेशका सचय करानेके लिये और सक्लेश परिणामके द्वारा बादर पृथिवीकायिक जीवोंकी अपेक्षा असख्यागुणे द्रव्यका उत्कर्षण करानेके लिये सातिरेक दो हजार सागर तक त्रसकायिक जीवोंमें भ्रमण कराया है।

शंका—यदि बादर पृथिवीकायिक जीवोंकी अपेक्षा त्रसकायिक जीवोंका योग असंख्यात-गुणा होता है और पर्याप्तकाल भी संख्यातगुणा और असख्यातगुणा होता है तथा उत्कर्षण द्रव्य भी असख्यातगुणा होता है तो गुणितकर्मांशवाले जीवको त्रसकायिक जीवोंमें ही कर्मस्थितिप्रमाण काल तक क्यों नहीं भ्रमण कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि त्रसपर्यायकी कायस्थिति कर्मस्थिति प्रमाण नहीं है, इसलिए कर्मस्थिति काल तक त्रसकायिकोंमें भ्रमण नहीं कराया है।

शंका—तो त्रसोंकी कायस्थितिमें अनेक बार भ्रमण क्यों नहीं कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि कायस्थितिको समाप्त करके जो जीव एकेन्द्रियपनेको प्राप्त हुआ है वह जीव कर्मस्थितिकालके भीतर पुन त्रसकायस्थितिको समाप्त नहीं कर सकता है, अत उसे पुन' एकेन्द्रियोंमें प्रवेश करना होगा और ऐसा होनेसे कर्मस्थितिकालके अन्दर वह जीव एकेन्द्रियपर्यायसे निकल नहीं सकेगा और एकेन्द्रिय पर्यायसे न निकल सकनेसे उसके बहुत द्रव्यके सचयके अभावका प्रसङ्ग प्राप्त होगा। इसलिए त्रसोंकी कायस्थितिमें अनेक बार नहीं भ्रमण कराया है।

तेतीस सागरकी स्थितिवाले नारकियोंमें यदि यह जीव निरन्तर उत्पन्न हो तो दो बार ही उत्पन्न होता है यह बतलानेके लिये अन्तिम नरकसम्बन्धी तेतीस सागरकी

भणिदं। एवं जेणेदं देसामासियवयणं तेण तसट्ठिदिकालब्भंतरे बहुवारं तेत्तीससागरोवमिएसु णेरइएसु उप्पज्जिय तदसंभवे छट्ठीए तत्थ वि असंभवे पंचमादिसु उप्पण्णो त्ति दट्ठव्वं। णेरइएसु चेव बहुवारं किमट्ठमुप्पाइदो? तिव्वसंकिलेसेण बहुदव्वुक्कड्डणट्ठं। चरिमसमयणेरइयं मोत्तूण असंखेपद्धाए अणंतरहेट्ठिमसमए उक्कस्ससामित्तं दादव्वमुवरि आउए बज्झमाणे जहण्णाउअबंधगद्धामेत्तस्स मिच्छत्तसमयपबद्धाणं संखेज्जदिभागस्स खयप्पसंगादो त्ति? ण, आउअबंधगद्धादो संखेज्जगुणाए उवरिमविस्समणद्धाए संचिददव्वस्स बहुत्तुवलंभादो। आउअबंधगद्धादो जहण्णविस्समणद्धा संखेज्जगुणा त्ति कत्तो णव्वदे? णेरइयचरिमसमए सामित्तपरूवणण्णहाणुववत्तीदो। एत्थ उवसंहारो जहा वेयणाए परूविदो तहा परूवेयव्वो।

स्थितिको लेकर ही सब प्रश्न करता है, ऐसा कहा है। चूँकि यह वाक्य देशामर्षक है अतः उसका ऐसा अर्थ लेना चाहिए कि त्रसकायस्थितिकालके भीतर बहुत बार तेतीस सागरकी स्थितिवाले नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ उत्पन्न होना संभव न होने पर छठे नरकमें उत्पन्न हुआ। छठेमें भी उत्पन्न होना संभव न होने पर पाँचवें आदि नरकोंमें उत्पन्न हुआ।

शंका—नारकियोंमें ही बहुत बार क्यों उत्पन्न कराया है?

समाधान—तीव्र संक्लेशके द्वारा बहुत द्रव्यका उत्कर्षण करनेके लिये बहुत बार नारकियोंमें उत्पन्न कराया है।

शंका—अन्तिम समयवर्ती नारकीको छोड़कर आयुबन्धके योग्य अतिसंक्षेप कालके पूर्व अनन्तरवर्ती अन्तिम समयमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका स्वामित्व देना चाहिये, क्योंकि तदनन्तर आयुका बन्ध होने पर आयुबन्धके जघन्य कालप्रमाण मिथ्यात्वके समयप्रबद्धोंके संख्यातवें भागके क्षयका प्रसङ्ग आता है।

समाधान—नहीं, क्योंकि आयुबन्धके कालसे संख्यातगुणे उपरके विश्राम कालमें संचित होनेवाला द्रव्य नष्ट हुए द्रव्यसे संख्यातगुणा पाया जाता है।

शंका—आयुबन्धके कालसे जघन्य विश्रामकाल संख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना?

समाधान—यदि ऐसा न होता तो नारकीके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशके स्वामित्वका कथन न करते।

जैसा वेदनाखण्डमें उपसंहार कहा है वैसा ही यहाँ कहना चाहिये।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट प्रदेशसंचयके लिये छह बातें आवश्यक बतलाई हैं—भवाद्धा, आयु, योग, संक्लेश, उत्कर्षण और अपकर्षण। इन्हीं छह आवश्यक कार्योंको ध्यानमें रखकर उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके स्वामित्वका कथन किया है और बतलाया है कि क्यों बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें उत्पन्न कराकर त्रसकायमें उत्पन्न कराया है। चूँकि नरकगतिमें संक्लेश परिणाम अधिक होते हैं अतः बार बार जहाँ तक सम्भव हो वहाँ तक नरकमें उत्पन्न कराया है। सातवें नरकमें लगातार दो बार ही जीव जन्म ले सकता है अतः दूसरी बार सातवें नरकमें तेतीस सागरकी स्थिति लेकर उत्पन्न हुए उस जीवके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका

❀ एवं बारसकसाय-छण्णोकसायाणं ।

§ ९५. जहा मिच्छत्तस्स उक्कस्ससामित्तं परूविदं तहा एदेसिमट्ठारसकम्माणं परूवेदव्वं, विसेसाभावादो। एदेसिं कम्माणं मिच्छत्तस्सेव सत्तरिसागरोवमकोडाकोडि-ट्ठिदीए विणा कधं मिच्छत्तसंचयविहाणमेदेसिं जुज्जदे ? ण, कम्मट्ठिदिं मोत्तूण अण्णेहिं पयारेहिं[1] सरिसत्तं पेक्खिय एवं 'बारसकसाय-छण्णोकसायाणं' इदि णिद्दिट्ठ-त्तादो। तेण मिच्छत्तस्स गुणिदकिरियापारद्धपढमसमयादो उवरि तीसंसागरोवमकोडा-कोडीओ गंतूण बारसक०-छण्णोकसायाणं गुणिदकिरियाए[2] पारंभो होदि। जदि उक्कड्डिदूण कम्मक्खंधा धरिज्जंति, तो कम्मट्ठिदीए विणा बहुअं कालं किण्ण धरिज्जंति ?

स्वामित्व बतलाया है। किन्तु किसी किसी उच्चारणामें उक्त अन्तिम समयसे नीचे अन्तर्मुहूर्त काल उतरकर उत्कृष्ट स्वामित्व बतलाया है। उसका कहना है कि जिस कालमें आयुका बध होता है उस कालमें मोहनीयकर्मके बहुतसे निषेकोंका क्षय हो जाता है। इसीको लेकर शंकाकारने शका की है कि अन्तिम समयके बदलेमें आयुबन्ध कालके नीचेके समयमें उत्कृष्ट स्वामित्व क्यों नहीं कहा ? इस शका का समाधान यह किया गया है कि यद्यपि आयु-बन्धकालमें मोहनीयके बहुतसे समयप्रबद्धोंका नाश हो जाता है फिर भी उससे ऊपरके विश्राम कालमें उसके अधिक समयप्रबद्धोंका सचय हो जाता है, क्योंकि आयुबन्धकाल से विश्रामकाल सख्यातगुणा है, अत अन्तिम समयवर्ती नारकीके ही उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है यह उक्त कथनका अभिप्राय है।

❀ इसी प्रकार बारह कषाय और छ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका स्वामित्व होता है।

§ ९५. जिस प्रकार मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन किया है उसी प्रकार इन अठारह कर्मोंका भी कहना चाहिये, दोनोंमें कोई अन्तर नहीं है।

शंका—मिथ्यात्वकी तरह इन अठारह कर्मोंकी सत्तर कोड़ाकोड़ि सागरप्रमाण स्थिति नहीं है, अत उसके बिना मिथ्यात्वकर्मके सञ्चयका विधान इन कर्मोंको कैसे युक्त हो सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि कर्मस्थितिके सिवाय अन्य बातोंमें समानता देखकर 'बारह कषाय और छ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका स्वामित्व मिथ्यात्वकी तरह होता है' ऐसा कहा है।

अत मिथ्यात्वकी गुणितक्रियाके प्रारम्भ होनेके समयसे लेकर तीस कोड़ाकोड़ी सागर बीत जाने पर बारह कषाय और छ नोकषायोंकी गुणितक्रियाका प्रारम्भ होता है।

शंका—यदि उत्कर्षण करके कर्मस्कन्धोंको रोका जा सकता है तो कर्मस्थितिके बिना बहुत काल तक उनको क्यों नहीं रोका जा सकता है ?

---

१ ता०प्रतौ 'अण्णेसिं(हिं) पयारेहिं' आ०प्रतौ 'अण्णेसिं पयारेहिं' इति पाठ ।

२ आ०प्रतौ 'छण्णोकसायाण वे गुणिदकिरियाए' इति पाठ ।

ण, वत्तिट्ठिदीदो अहियसत्तिट्ठिदीए अभावादो। सत्ति-वत्तिट्ठिदीओ दो वि समाणाओ त्ति कुदो णव्वदे? 'बादरपुढविजीवेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदो' त्ति सुत्तादो। बारसकसायाणं छण्णोकसायाणं चालीससागरोवमकोडाकोडिसंचओ णत्थि, तेसिं उक्कस्सबंधट्ठिदीए चालीससागरोवमकोडाकोडिपमाणत्ताभावादो त्ति? ण, कसाएहिंतो णोकसाएसु संकंतकम्मक्खंधाणं चालीससागरोवमकोडाकोडिमेत्तवत्तिट्ठिदीए उक्कस्सेण सगसत्तिट्ठिदिमेत्तावट्ठाणुवलंभादो। अकम्मबंधट्ठिदिअणुसारिणी चेव सत्तिकम्मट्ठिदी, कम्मट्ठिदिबंधाणुसारिणी ण होदि त्ति ण वोत्तुं जुत्तं, वत्तिकम्मट्ठिदिं पडि दोण्हं ट्ठिदिबंधाणं भेदाभावादो। अथवा कसायकम्मट्ठिदिं मोत्तूण णोकसायकम्मट्ठिदीए एत्थ गहणं कायव्वं, अप्पप्पणो कम्मट्ठिदीए इहाहियारादो।

समाधान—नहीं, क्योंकि व्यक्तिस्थितिसे शक्तिस्थिति अधिक नहीं होती।

शंका—शक्तिस्थिति और व्यक्तिस्थिति दोनों समान होती हैं यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—'बादर पृथिवीकायिक जीवोंमें कर्मस्थिति काल तक रहा' इस सूत्रसे जाना जाता है।

शंका—बारह कषायोंकी तरह छह नोकषायोंका संचय चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण नहीं हो सकता क्योंकि उनकी उत्कृष्ट बन्धस्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण नहीं है?

समाधान—नहीं क्योंकि कषायोंसे नोकषायोंमें जिन कर्मस्कन्धोंका संक्रमण होता है उनकी व्यक्तिस्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण होती है अतः उत्कर्षणके द्वारा छह नोकषायोंमें चालीस कोड़ाकोड़ी सागर स्थितिप्रमाण काल तक उनका अवस्थान पाया जाता है।

शंका—अकर्मरूपसे स्थित कर्मपरमाणुओंका बन्ध होने पर जो स्थितिबन्ध होता है शक्तिकर्मस्थिति उसके अनुसार ही होती है, किन्तु संक्रमसे जो स्थितिबन्ध प्राप्त होता है उसके अनुसार नहीं होती?

समाधान—ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, व्यक्तिकर्मस्थितिके प्रति दोनों स्थितिबन्धोंमें कोई भेद नहीं है।

अथवा कषायोंकी कर्मस्थितिको छोड़कर नोकषायोंकी कर्मस्थितिका यहाँ ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि यहाँ अपनी अपनी कर्मस्थितिका अधिकार है।

विशेषार्थ—बारह कषाय और छह नोकषायों की उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी भी मिथ्यात्वकी तरह ही बतलाया है किन्तु मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरके समान इन कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति न हो कर चालीस कोड़ाकोड़ी सागर होती है, इसलिये इन कर्मोंका उत्कृष्ट संचय मिथ्यात्वके उत्कृष्ट संचयके समान नहीं हो सकता यह एक प्रश्न है जिसका टीकामें यह समाधान किया है कि स्थितिको छोड़कर अन्य बातमें समानता है, अतः मिथ्यात्वका उत्कृष्ट संचय जबसे प्रारम्भ होता है तबसे तीस कोड़ाकोड़ी सागर काल बिताकर कषायों और नोकषायोंके उत्कृष्ट संचयका प्रारम्भ जानना चाहिये, क्योंकि मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थितिसे इन अठारह कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति तीस कोड़ाकोड़ी सागर कम है। यहाँ यह शंका हो सकती है कि सर्वत्र

---

1 आ प्रतौ 'उक्कस्सेण सगट्ठिदि' इति पाठः।

उत्कृष्ट संचयके लिये अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति ही क्यों ली जाती है जब कि उत्कर्षणके द्वारा कर्मस्थितिके बाहर भी कर्मोंका संचय प्राप्त किया जा सकता है ? इस शंकाका वीरसेन स्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि कर्मोंमें दो प्रकारकी स्थिति होती है एक शक्तिस्थिति और दूसरी व्यक्तिस्थिति। व्यक्तिस्थिति प्रकट स्थितिका नाम है और शक्तिस्थिति अप्रकट स्थितिका नाम है। जिस कर्मकी जितनी उत्कृष्ट स्थिति है बन्ध के समय यदि वह पूरी प्राप्त हो जाय तो वह सब की सब व्यक्तिस्थिति कहलायगी और यदि कम प्राप्त हो तो जितनी स्थिति कम होगी उतनी व्यक्तिस्थिति कही जायगी। अब यदि इस कर्मका उत्कर्षण हो तो जितनी व्यक्तिस्थिति है वहीं तक उत्कर्षण हो सकता है अधिक नहीं। इससे यह फलित होता है कि शक्तिस्थिति व्यक्तिस्थितिसे अधिक नहीं होती, किन्तु दोनों समान होती हैं। इस पर यह शंका होती है कि शक्तिस्थिति और व्यक्तिस्थिति समान होती हैं यह किस प्रमाण से जाना जाता है ? वीरसेन स्वामीने इसका यह समाधान किया है कि सूत्रमें जो यह कहा है कि 'बादर पृथिवीकायिकोंमें कर्मस्थिति काल तक रहा' सो यह कहना तभी बन सकता है जब यह मान लिया जाय कि अपनी व्यक्तिस्थिति प्रमाण ही उस कर्मकी शक्तिस्थिति होती है। यदि ऐसा न माना जाय तो 'कर्मस्थिति काल तक रहा' इस पद के देनेकी कोई सार्थकता ही नहीं रहती। इससे मालूम होता है कि जिस कर्मकी बन्धसे प्राप्त होनेवाली जितनी उत्कृष्ट स्थिति होती है उतने काल तक ही उसका अवस्थान हो सकता है। उत्कर्षणसे उसकी और स्थिति नहीं बढ़ाई जा सकती। इस प्रकार इतने विवेचनसे यह तो निश्चित हो गया कि उत्कृष्ट संचय प्राप्त करनेके लिये अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति लेनी चाहिये। किन्तु तब भी यह प्रश्न खड़ा ही रहता है कि छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट बन्धस्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागर नहीं होती किन्तु अरति, शोक, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट बन्ध स्थिति बीस कोड़ाकोड़ी सागर तथा हास्य और रतिकी दस कोड़ाकोड़ी सागर उत्कृष्ट बन्धस्थिति होती है। अतः इन छह कर्मोंका उत्कृष्ट संचय काल कषायोंके समान चालीस कोड़ाकोड़ी सागर नहीं प्राप्त होता ? इस शंकाका वीरसेनस्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि एक तो जो कर्मस्कन्ध कषायोंमेंसे नोकषायोंमें संक्रमित होते हैं उनकी व्यक्तिस्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागर बन जाती है और दूसरे जिन कर्मस्कन्धोंकी स्थिति घट गई है उनका उत्कर्षण होकर व्यक्तिस्थितिके काल तक अवस्थान बन जाता है, इसलिये छह नोकषायोंका उत्कृष्ट संचयकाल चालीस कोड़ाकोड़ी सागर माननेमें कोई आपत्ति नहीं है। इसपर फिर यह शंका उठी कि शक्तिस्थिति बन्धसे प्राप्त होनेवाली स्थितिके अनुसार होती है संक्रमणसे होनेवाली स्थितिके अनुसार नहीं होती, अतः जिन कर्मोंका स्थितिबन्ध कम है उनका उत्कर्षण होकर संक्रमणसे प्राप्त होनेवाली स्थितिके काल तक अवस्थान नहीं बन सकता ? इस शंकाका वीरसेन स्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि यद्यपि बन्ध और संक्रमण इन दोनों प्रकारोंसे स्थिति प्राप्त होती है पर इससे व्यक्ति कर्मस्थितिमें कोई भेद नहीं पड़ता। अर्थात् ये दोनों ही स्थितियाँ व्यक्तिकर्म स्थिति हो सकती हैं और तब शक्तिस्थितिको इतना मान लेनेमें कोई आपत्ति नहीं आती। अर्थात् संक्रमणसे जितनी स्थिति प्राप्त होती है वहां तक कर्मों का उत्कर्षण हो सकता है। यद्यपि यह सिद्धान्तपक्ष है तब भी वीरसेन स्वामी एक दूसरा विकल्प सुझाते हुए लिखते हैं कि यहाँ अपनी अपनी कर्मस्थितिका अधिकार है, अतः यहाँ नोकषायोंकी बन्धस्थिति ही लेनी चाहिये। मालूम होता है कि इस समाधानमें वीरसेन स्वामीकी यह दृष्टि रही है कि उत्कृष्ट संचयके लिये बन्धस्थितिका काल ही प्रधान है, क्योंकि उत्कृष्ट संचय उसके भीतर ही प्राप्त हो सकता है।

§ ९९ हस्स-रइ-अरइ-सोगाण णिरंतरबंधेण विणा कधं कम्मट्ठिदिसंचओ लब्भदे? ण, पडिवक्खपयडीए बद्धदव्वस्स वि अप्पिदपयडीए बज्झमाणियाए उवरि संकंतिदंसणादो। हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं णेरइयचरिमसमए मोत्तूण आवलियअपुव्वखवगम्मि उक्कस्ससामित्तं होदि, उदए गलमाणदव्वं पेक्खिदूण वोच्छिण्णबंधमोहपयडीहिंतो गुणसंकमेण दुक्कमाणदव्वस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो त्ति। ण, सम्मत्तुप्पत्तीए संजमे अणंताणुबंधिविसंजोयणाए दंसणमोहणीयक्खवणाए गुणसेढिकमेण गलिददव्वस्स आवलियकालब्भंतरे गुणसंकमेण संकंतदव्वादो असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। तदसंखेज्जगुणत्तं कत्तो उवलब्भदे? णेरइयचरिमसमए उक्कस्ससामित्तपरूवणण्णहाणुववत्तीदो। गुणसंकमभागहारादो ओकड्डणभागहारो असंखे०गुणो। ओकड्डिददव्वस्स वि असंखे०भागो गुणसेढीए णिसिंचदि तेण गलिददव्वादो गुणसंकमेण दुक्कमाणदव्वमसंखेज्जगुणमिदि? ण, ओकड्डणभागहारादो सव्वे गुणसंकमभागहारा असंखे०गुणहीणा त्ति णियमाभावेण

---

§ ९९ शंका—हास्य, रति, अरति और शोक प्रकृतियाँ निरन्तर बन्धी नहीं हैं। अतः निरन्तर बन्धके बिना इनका कर्मस्थितिप्रमाण संचय कैसे हो सकता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रतिपक्ष प्रकृतिके बद्ध द्रव्यका भी विवक्षित प्रकृतिका बन्ध होते समय उसमें संक्रमण देखा जाता है।

शंका—हास्य, रति भय और जुगुप्साका उत्कृष्ट स्वामित्व नारकीके अन्तिम समयमें न होकर क्षपक अपूर्वकरणकी आवलिमें होता है, क्योंकि क्षपक अपूर्वकरणमें उक्त प्रकृतियोंका उदयके द्वारा जितना द्रव्य गलता है, उससे बन्धसे विच्छिन्न होनेवाली मोहकर्मकी प्रकृतियोंका गुणसंक्रमके द्वारा जो द्रव्य इन प्रकृतियोंमें आकर मिलता है, वह द्रव्य असंख्यातगुणा होता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके समय संयममें, अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनामें और दर्शनमोहकी क्षपणामें गुणश्रेणिके क्रमसे जो द्रव्य गलता है वह द्रव्य एक आवलिकालके अन्दर गुणसंक्रमके द्वारा संक्रान्त होनेवाले द्रव्यसे असंख्यातगुणा पाया जाता है। अर्थात् संक्रान्त द्रव्यसे निर्जराको प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा होता है। अतः क्षपक अपूर्वकरणमें हास्यादिकका उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकता।

शंका—संक्रान्त द्रव्यसे गलित द्रव्य असंख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे मालूम होता है?

समाधान—यदि ऐसा न होता तो नारकीके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट स्वामित्वको न बतलाते।

शंका—गुणसंक्रम भागहारसे अपकर्षण भागहार असंख्यातगुणा है, क्योंकि अपकर्षित द्रव्यके भी असंख्यातवें भागका गुणश्रेणिमें निक्षेप होता है। अतः क्षपक अपूर्वकरणमें गलनेवाले द्रव्यसे गुणसंक्रमके द्वारा प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा होता है?

समाधान—नहीं क्योंकि अपकर्षण भागहारसे सब गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणे

अपुव्वकरणद्धाए आवलियमेत्तगुणसंकमभागहाराणमोकड्डणभागहारं पेक्खिदूण असंखे०गुणत्तसिद्धीदो ।

बंधेण होदि उदओ अहिओ उदएण संकमो अहिओ ।
गुणसेढी असंखेज्जा च पदेसग्गेण बोद्धव्वा ॥ १ ॥

त्ति गाहासुत्तादो अपुव्वकरणस्स बज्झमाणसमयपबद्धो थोवो । उदओ असंखे०गुणो । संकामिज्जमाणदव्वमसंखेज्जगुणं ति णव्वदे । एसो वि उदओ हेट्ठिमासेस-उदएहिंतो असंखेज्जगुणो तेण णव्वदे जहा गलिदासेसदव्वं गुणसंकमणसंकंतदव्वस्स असंखेज्जदिभागं ति । अपुव्वस्स उदए गलमाणदव्वं हेट्ठिमासेसगलिददव्वादो असंखेज्ज-गुणं ति ण जुज्जदे, संजमगुणसेढीदो दंसणमोहणीयगुणक्खवणसेढीए असंखे०गुणसुव-लंभादो । एसा गाहा अस्सकण्णकरणद्धाए पठिदा त्ति तत्थतणबंधोदयसंकमाणमप्पाबहुअं परूवेदि ण ताए गाहाए अपुव्वकरणबंधोदयसंकमाणमप्पाबहुअं वोत्तुं जुत्तं, भिण्णजादित्तादो । तम्हा णेरइयचरिमसमए चेव उक्कस्ससामित्तं दादव्वमिदि ।

हीन होते हैं ऐसा नियम नहीं है, अतः अपूर्वकरणके कालमें अपकर्षण भागहारको देखते हुए आवलिप्रमाण गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणे हैं यह सिद्ध है ।

शंका—प्रदेशोंकी अपेक्षा बन्धसे उदय अधिक होता है और उदयसे संक्रम अधिक होता है । इनकी उत्तरोत्तर गुणश्रेणि असंख्यागुणी जाननी चाहिये ॥ १ ॥

इस गाथासूत्रसे जाना जाता है कि अपूर्वकरणमें बँधनेवाले समयप्रबद्धका प्रमाण थोड़ा है, उदयका प्रमाण उससे असंख्यातगुणा है और संक्रान्त होनेवाले द्रव्यका प्रमाण उससे भी असंख्यातगुणा है । तथा यहाँ जो उदय है वह भी नीचेके सब उदयोंसे असंख्यातगुणा है । इससे जाना जाता है कि गलित होनेवाला अशेष द्रव्य गुणसंक्रम भाग-हारके द्वारा संक्रान्त होनेवाले द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

समाधान—अपूर्वकरणमें उदयके द्वारा गलनेवाला द्रव्य नीचे गलित होनेवाले सब द्रव्यसे असंख्यातगुणा है ऐसा कहना युक्त नहीं है । क्योंकि संयम गुणश्रेणिसे दर्शनमोह-नीयकी क्षपणामें होनेवाली गुणश्रेणि असंख्यातगुणी पाई जाती है । तथा पहले जो गाथा उद्धृत की है वह गाथा अश्वकर्णकरण कालमें कही गई है, इसलिए वह अश्वकर्णकरण कालमें होनेवाले बन्ध, उदय और संक्रमके अल्पबहुत्वको बतलाती है, अतः उस गाथाके द्वारा अपूर्वकरणमें होनेवाले बन्ध, उदय और संक्रमणका अल्पबहुत्व कहना युक्त नहीं है, क्योंकि अश्वकर्णकरणकालमें होनेवाले बन्धादिकसे अपूर्वकरणमें होनेवाला बन्धादिक भिन्न-जातीय है । अतः हास्य और रति आदिका उत्कृष्ट स्वामित्व नारकीके अन्तिम समयमें ही कहना चाहिये ।

विशेषार्थ—शंकाकारका कहना है कि हास्य, रति, भय और जुगुप्साका उत्कृष्ट प्रदेश सञ्चय नरकमें अन्तिम समयमें न बतलाकर क्षपकश्रेणीके अपूर्वकरण गुणस्थानमें बतलाना चाहिये, क्योंकि यद्यपि क्षपक अपूर्वकरणमें गुणश्रेणिनिर्जरा होती है किन्तु चारित्रमोहनीय-की जिन प्रकृतियोंकी पहले बन्ध व्युच्छित्ति हो चुकी है उनमेंसे प्रति समय असंख्यातगुणे परमाणु हास्यादिकमें संक्रान्त होते हैं, अतः निर्जरित द्रव्यसे संक्रान्त होनेवाला द्रव्य असंख्यात

⊛ सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ को होदि ?

§ ९७. सुगममेदं।

⊛ गुणिदकम्मंसिओ दंसणमोहणीयक्खवओ जम्मि मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं तम्मि सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ।

§ ९८. सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ को होदि त्ति जादसंदेहसिस्साणं संदेहविणासणट्ठं 'दंसणमोहणीयक्खवओ' त्ति भणिदं होदि। खविदकम्मंसिय-

---

गुणा होनेसे उत्कृष्ट संचय बन जाता है। इसका उत्तर यह दिया गया कि सम्यक्त्व आदिमें गुणश्रेणिनिर्जरा बतलाई है और वहाँ गुणसंक्रमके द्वारा एक आवलिकालमें जितना द्रव्य अन्य प्रकृतियोंसे संक्रान्त होता है उससे यहाँ असंख्यातगुणे द्रव्यकी निर्जरा हो जाती है, अतः संक्रान्त द्रव्यसे निर्जराको प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा होता है, इसलिये क्षपक अपूर्वकरणमें उक्त प्रकृतियोंका उत्कृष्ट संचय नहीं बनता। इस पर शंकाकारने कहा कि गुणसंक्रम भागहारसे अपकर्षण भागहार बड़ा बतलाया है। अपकर्षण भागहारके द्वारा ही अपकृष्ट हुए कर्मपरमाणुओंकी गुणश्रेणिरचना की जाती है और गुणश्रेणि रचना होनेसे ही गुणश्रेणिनिर्जरा होती है, अतः अपकर्षण भागहारके असंख्यातगुणा होनेसे जो परमाणु अपकृष्ट होंगे उनका परिमाण कम होगा और गुणसंक्रम भागहारके उससे असंख्यातगुणा-हीन होनेसे उसके द्वारा जो परमाणु संक्रान्त होंगे उनका परिमाण अपकृष्ट द्रव्यसे असंख्यातगुणा होगा क्योंकि भागहारके बड़ा होनेसे भजनफल कम आता है और भागहारके छोटा होनेसे भजनफल अधिक आता है, अतः निर्जराको प्राप्त द्रव्यसे संक्रमणको प्राप्त होनेवाले द्रव्यका परिमाण अधिक होनेसे क्षपक अपूर्वकरणमें ही उत्कृष्ट स्वामित्व बतलाना चाहिये। इसका उत्तर यह दिया गया कि ऐसा कोई नियम नहीं है कि अपकर्षण भागहारसे सब गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणे हीन ही होते हैं। अपूर्वकरणमें जो अपकर्षण भागहार है उससे गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणा अधिक है, अतः वहाँ संक्रान्त द्रव्यका प्रमाण निर्जराको प्राप्त द्रव्यसे असंख्यातगुणा नहीं हो सकता। इस पर शंकाकारने कसायपाहुडकी एक गाथाका प्रमाण देकर यह सिद्ध करना चाहा कि व्ययागत द्रव्यसे संक्रान्त द्रव्य अधिक होता है। इसका यह उत्तर दिया गया कि नौवें गुणस्थानमें अपगतवेदी होकर क्रोधसंज्वलनके क्षपणका आरम्भ करता हुआ जीव 'अश्वकर्णकरण' नामके करणको करता है, उस प्रकरणमें उक्त गाथा कही गई है, अतः उस गाथाके आधारसे अपूर्वकरणमें होनेवाले बंध व्यय और संक्रमका अल्पबहुत्व नहीं कहा जा सकता। अतः उक्त नोकषायोंका भी उत्कृष्ट स्वामी चरम समयवर्ती नारकी जीव ही होता है यह सिद्ध होता है।

⊛ सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला कौन जीव होता है ?

§ ९७ यह सूत्र सुगम है।

⊛ गुणितकर्मांशवाला जो जीव दर्शनमोहनीयका क्षपण करता है वह जब मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त करता है तब सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला होता है।

§ ९८. सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिवाला कौन होता है, इस प्रकार जिस शिष्यको सन्देह हुआ है उसका सन्देह दूर करनेके लिये 'दर्शनमोहनीयका क्षपक होता

खविदगुणिदघोलमाणदंसणमोहणीयक्खवयपडिसेहट्ठं 'गुणिदकम्मंसिओ' त्ति भणिदं। दंसणमोहणीयक्खवणद्धाए अंतोमुहुत्तमेत्ताए वट्टमाणस्स सव्वत्थ उक्कस्ससामित्ते पत्ते तप्पदेसजाणावणट्ठं 'जम्मि मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं तम्मि सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ' त्ति भणिदं। मिच्छादिट्ठी सत्तमाए पुढवीए णेरइयचरिमसमए मिच्छत्तस्स कदउक्कस्सपदेससंतकम्मो तत्तो णिप्पिडिदूण तिरिक्खेसु दो-तिण्णिभवग्गहणाणि परिभमिय पुणो मणुस्सेसु उववण्णो। तदो गब्भादिअट्ठवस्साणमुवरि उवसमसम्मत्ताभिमुहो जहाकमेण अधापवत्त-अपुव्व-अणियट्टिकरणाणि करेदि। तत्थ अपुव्वकरणकालम्मि ट्ठिदिखंडय-गुणसेढीकिरियाओ करेमाणओ जहण्णपरिणामेहि चेव करावेयव्वो, अण्णहा अधट्ठिदिगलणेण वहुदव्वविणासप्पसंगादो। अणियट्टिकरणे पुण अधट्ठिदिगलणेण गलमाणदव्वं ण रक्खिदुं सक्किज्जदे, तत्थ जहण्णुक्कस्सपरिणामविसेसाभावादो।

§ ९९. संपहि अपुव्व-अणियट्टिकरणद्धासु कीरमाणकिरियाओ विसेसिदूण भणिस्सामो। तं जहा—अपुव्वकरणपढमसमए जहण्णपरिणामेण अपुव्वकरणद्धादो अणियट्टिकरणद्धादो च विसेसाहियं गुणसेढिं करेमाणो उदयावलियवाहिरट्ठिदिं पडिट्ठिदमिच्छत्तपदेसग्गं ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण समयाविरोहेण खंडिय तत्थ लद्धेगखंडं पुणो असंखेज्जलोगभागहारेण खंडेदूणेगखंडं घेत्तूण उदयावलियाए णिसिंचमाणो

है' ऐसा कहा है। क्षपित कर्मांशवाले और क्षपित गुणित घोलमान कर्मांशवाले दर्शनमोहनीय क्षपकका प्रतिषेध करनेके लिये 'गुणितकर्मांश' कहा। दर्शनमोहनीयके क्षपणका काल अन्तर्मुहूर्त मात्र है। उस कालमें वर्तमान जीवके सर्वदा उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त हुआ, अत उसका स्थान बतलानेके लिये 'जिस समय मिथ्यात्वका सम्यग्मिथ्यात्वमें निक्षेपण करता है उस समय सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिका स्वामी होता है' ऐसा कहा है। सातवें नरकमें नरकसम्बन्धी भवके अन्तिम समयमें मिथ्यात्व कर्मका उत्कृष्ट प्रदेशसचय करनेवाला मिथ्यादृष्टि जीव वहाँसे निकलकर तिर्यञ्चोंमें दो तीन भवग्रहणतक भ्रमण करके पुन मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। गर्भसे लेकर आठ वर्षके बाद उपशमसम्यक्त्वके अभिमुख होकर वह जीव क्रमसे अध प्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणको करता है। अपूर्वकरणके कालमें स्थितिकाण्डक और गुणश्रेणि क्रियाएँ करते हुए जघन्य परिणामोंसे ही करानी चाहिये, अन्यथा अध स्थिति गलनाके द्वारा बहुत द्रव्यके विनाशका प्रसग प्राप्त होता है। किन्तु अनिवृत्तिकरणमें अध स्थितिगलनाके द्वारा गलनेवाले द्रव्यकी रक्षा नहीं की जा सकती, क्योंकि वहाँ जघन्य और उत्कृष्ट परिणामोंका भेद नहीं है।

§ ९९. अब अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालमें की जानेवाली क्रियाओंको विस्तारसे कहते हैं। यथा—अपूर्वकरणके प्रथम समयमें जघन्य परिणामसे अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे कुछ अधिक गुणश्रेणिको करता है। ऐसा करते हुए उदयावलिसे बाहरकी स्थितिमें विद्यमान मिथ्यात्वके प्रदेशोंको आगमानुसार अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे भाजित करके लब्ध एक भागको फिर भी असख्यात लोकप्रमाण भागहारसे भाजित करके जो एक भाग लब्ध

उदए पदेसग्गं बहुअं देदि। तदो उवरि सव्वत्थ विसेसहीणं देदि जाव उदयावलिय चरिमसमओ त्ति। पुणो सेसअसंखेज्जे भागे उदयावलियबाहिरे णिसिंचमाणो उदयावलियबाहिराणंतरट्ठिदीए पुव्वणिसित्तादो असंखेज्जगुणं देदि। पुणो तदणंतर-उवरिमट्ठिदीए असंखे०गुणं देदि। एवमुवरिम-उवरिमट्ठिदीसु असंखेज्जगुणमसंखे०गुणं देदि जाव गुणसेढिसीसए त्ति। पुणो गुणसेढिसीसयादो उवरिमाणंतरट्ठिदीए असंखे०-गुणहीणं देदि। तत्तो उवरिमसव्वट्ठिदीसु अइच्छावणावलियवज्जासु विसेसहीणं देदि। एवं समयं पडि असंखे०गुणं दव्वमोकड्डिदूण गुणसेढिं करेमाणो अपुव्वकरणद्धं गमेदि। पुणो अणियट्टिकरणं पविट्ठस्स वि एसा चेव विही होदि जाव अणियट्टिकरणद्धाए संखेज्जा भागा गदा त्ति। पुणो तदद्धाए संखे०भागे सेसे अंतरकरणं काऊण चरिमसमए मिच्छाइट्ठी जादो। तत्थ मिच्छत्तस्स बंधोदयाणं वोच्छेदं काऊण तदणंतरउवरिमसमए अंतरं पविसिय पढमसमयउवसमसम्माइट्ठी जादो। तम्हि चेव समए विदियट्ठिदीए ट्ठिदमिच्छत्तस्स पदेसग्गं मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणमदि। पुणो अंतोमुहुत्तकालं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि गुणसंकमेण पूरेमाणो जहण्णपरिणामेहि चेव पूरेदि। तं जहा—गुणसंकमपढमसमए मिच्छत्तादो जं सम्मत्ते संकमदि पदेसग्गं तं थोवं। तम्हि चेव समए सम्मामिच्छत्ते संकंतपदेसग्गमसंखे०गुणं। पढमसमयम्मि

जाता है उसका उदयावलिमें निक्षेपण करता हुआ उदयमें बहुत प्रदेशोंका निक्षेपण करता है और उससे ऊपरके निषेकोंमें एक एक चयहीन प्रदेशोंका निक्षेपण करता है। यह निक्षेपण उदयावलिके अन्तिम समय पर्यन्त करता है। फिर शेष बचे असंख्यात बहुभाग द्रव्य का उदयावलिसे बाहरके निषेकोंमें निक्षेपण करता है। ऐसा करते हुए उदयावलिसे बाहरके अनन्तरवर्ती निषेकमें (उस निषेकमें जो उदयावलीके अन्तिम समयवर्ती निषेकसे ऊपरका निषेक है) पहले निक्षिप्त द्रव्यसे असंख्यातगुणा द्रव्य देता है। फिर उससे अनन्तरवर्ती ऊपरके निषेकमें उससे असंख्यातगुणा द्रव्य देता है। इस प्रकार ऊपर ऊपरकी स्थितियोंमें असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे द्रव्यको देता है। इस प्रकार गुणश्रेणिके शीर्ष पर्यन्त देता है। फिर गुणश्रेणिके शीर्षसे ऊपरके अनन्तरवर्ती निषेकमें असंख्यात गुणहीन द्रव्य देता है। आगे उससे ऊपरकी सब स्थितियोंमें अतिस्थापनावलीसम्बन्धी निषेकोंको छोड़कर चयहीन चयहीन द्रव्यको देता है। इस प्रकार प्रति समय असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करके गुणश्रेणिको करता हुआ अपूर्वकरणके कालको बिता देता है। फिर अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करता है। वहाँ भी अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यात बहुभाग बीतने तक यही विधि होती है। जब संख्यातवें भाग प्रमाण काल शेष रहता है तो अन्तरकरण करके अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि हो जाता है और वहाँ मिथ्यात्वके बन्ध और उदयकी व्युच्छित्ति करके उसके अनन्तरवर्ती ऊपरके समयमें अन्तरमें प्रवेश करके प्रथम समयवर्ती उपशमसम्यग्दृष्टि हो जाता है। उसी समयमें जिस समय कि वह उपशमसम्यग्दृष्टि हुआ दूसरी स्थितिमें स्थित मिथ्यात्वके प्रदेश समूहको मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व रूपसे परिणमाता है। पुन: अन्तर्मुहूर्त कालतक गुणसंक्रमके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिको पूरता हुआ जघन्य परिणामोंके द्वारा ही पूरता है। यथा—गुणसंक्रमके प्रथम समयमें मिथ्यात्वका जो प्रदेशसमूह सम्यक्त्व प्रकृतिमें संक्रमण करता है वह थोड़ा है। उसी समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त होनेवाला मिथ्यात्वका

सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणदपदेसपिंडादो विदियसमए सम्मत्तसरूवेण संकंतपदेसग्गमसंखे०गुणं। तम्मि चेव समए सम्मामिच्छत्ते संकंतपदेसग्गमसंखे०गुणं। एवं सव्विस्से गुणसंकमद्धाए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पूरणक्कमो वत्तव्वो।

प्रदेशसमूह उससे असख्यातगुणा है। प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे परिणमन करनेवाले प्रदेशसमूहसे दूसरे समयमें सम्यक्त्वरूपसे सक्रमण करनेवाला प्रदेशसमूह असख्यातगुणा है। उससे उसी दूसरे समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें सक्रान्त होनेवाला प्रदेशसमूह असख्यातगुणा है। इसी प्रकार गुणसक्रमके सब कालमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके पूरनेका क्रम कहना चाहिये।

विशेषार्थ—सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका उत्कृष्ट सचय उस जीवके वतलाया है जो मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसचय करके सातवे नरकसे निकलकर तिर्यञ्चोंके दो तीन भव धारण करके मनुष्योंमें जन्म लेकर गर्भसे लेकर आठ वर्षकी उम्रमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके फिर दर्शनमोहका क्षपण करता हुआ जव मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको सम्यग्मिथ्यात्वमें सक्रान्त करता है तव उसके सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट सचय होता है। जव जीव उपशम सम्यक्त्वके अभिमुख होता है तो उसके अध.करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण नामके तीन करण अर्थात् परिणाम विशेष होते हैं। इनमेंसे अध करणके होने पर तो जीवके प्रतिसमय अनन्तगुणी-अनन्तगुणी विशुद्धिमात्र होती है, जिससे अप्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागवन्धमें प्रतिसमय हीनता होती जाती है और प्रशस्त प्रकृतियोंके अनुभागवन्धमें प्रतिसमय वृद्धि होती जाती है। किन्तु अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें चार कार्य होते हैं—स्थितिखण्डन, अनुभागखण्डन, गुणश्रेणि और गुणसक्रम। पहले वॅधे हुए सत्तामें स्थित कर्मोंकी स्थितिके घटानेको स्थितिखण्डन कहते हैं। पहले वॅधे हुए सत्तामें स्थित अप्रशस्त कर्मोंके अनुभागके घटानेको अनुभागखण्डन कहते हैं। पहले वॅधे हुए सत्तामें स्थित कर्मोंका जो द्रव्य गुणश्रेणिके कालमें प्रतिसमय असख्यातगुणा असख्यातगुणा स्थापित किया जाता है उसे गुणश्रेणि कहते हैं। तथा प्रतिसमय उत्तरोत्तर गुणितक्रमसे विवक्षित प्रकृतिके परमाणुओंका अन्य प्रकृतिरूप होना गुणसक्रम कहाता है। गुणश्रेणिका विधान इस प्रकार जानना—विवक्षित कर्मके सर्व निषेकसम्वन्धी सब परमाणुओंमें अपकर्षण भागहारका भाग देनेसे जो परमाणु लब्धरूपसे आये उन्हें अपकृष्ट द्रव्य कहते हैं। उस अपकृष्ट द्रव्यमेंसे कुछ परमाणु तो उदयवाली प्रकृतिकी उदयावलीमें मिलाता है, कुछ परमाणु गुणश्रेणिआयाममें मिलाता है और वाकी वचे परमाणुओंको ऊपरको स्थितिमें मिलाता है। वर्तमान समयसे लेकर आवली मात्र काल सम्वन्धी निपेकोंको उदयावली कहते हैं। उस उदयावलीमें जो द्रव्य मिलाया जाता है वह उसके प्रत्येक निपेकमें एक एक चय घटता हुआ होता है। उस उदयावलीके निषेकोंसे ऊपरके अन्तर्मुहूर्त समय सम्वन्धी जो निषेक हैं उनको गुणश्रेणि आयम कहते हैं। उसमें जो द्रव्य दिया जाता है वह प्रत्येक निषेकमें उत्तरोत्तर असख्यातगुणा असख्यातगुणा दिया जाता है। गुणश्रेणिआयामसे ऊपरके सव निपेकोंको ऊपरकी स्थिति कहते हैं। उस ऊपरकी स्थितिके अन्तके जिन आवलीमात्र निषेकोमें द्रव्य नहीं मिलाया जाता उनको अतिस्थापनावली कहते हैं। वाकीके निपेकोमें जो द्रव्य मिलाया जाता है वह प्रत्येक निपेकमें उत्तरोत्तर घटता हुआ मिलाया जाता है। जैसे—विवक्षित कर्मकी स्थिति ४८ समय है। उसके निपेक भी ४८ हैं। उन निपेकोंके सव परमाणु २५ हजार हैं। उनमें अपकर्पण भागहारका कल्पित प्रमाण ५ से भाग देनेसे पॉच हजार लब्ध आया, अत २५हजारमेंसे ५ हजार परमाणु लेकर उनमेंसे

§ १०० एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि जहण्णगुणसंकमपरिणामेहि तज्जहण्णकालेण समापूरिय पुणो अंतोमुहुत्तं गंतूण उवसमसम्मत्तकालब्भंतरे चेव अणंताणुबंधिचउक्कं

---

२५ परमाणु तो उदयावलीमें दिये। ४८ निषेकोंमेंसे प्रारम्भके ४ निषेक उदयावलीके हैं। उनमें उत्तरोत्तर घटते हुए परमाणु दिये। एक हजार परमाणु गुणश्रेणि आयाममें दिये। सो पाँचसे लेकर बारह तक आठ निषेक गुणश्रेणि आयामके हैं। इनमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे परमाणु मिलाये। बाकीके १९५० परमाणु ऊपरकी स्थितिमें दिये। सो शेष ३६ निषेक रहे। उनमेंसे अन्तके ४ निषेक अतिस्थापनारूप हैं। उन्हें छोड़ बाकी १३ से लेकर ४४ पर्यन्त ३२ निषेकोंमें उत्तरोत्तर चयघाट परमाणु मिलाये। यहाँ गुणश्रेणिआयामका प्रमाण अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे कुछ अधिक होता है। इस गुणश्रेणिआयामके अन्तके निषेकोंको गुणश्रेणिशीर्ष कहते हैं, क्योंकि शीर्ष अर्थात् सिर ऊपरके अंगका नाम है। इस प्रकार प्रतिसमय मिथ्यात्वप्रकृतिके संचित द्रव्यका अपकर्षण करके गुणश्रेणि करता है। जब अनिवृत्तिकरणके कालमेंसे संख्यातवाँ भाग काल बाकी रहता है तो मिथ्यात्वका अन्तरकरण करता है। विवक्षित कर्मोकी नीचे और ऊपरकी स्थितिको छोड़कर मध्यकी अन्तर्मुहूर्तमात्र स्थितिके निषेकोंके अभाव करनेको अन्तरकरण कहते हैं। ऊपर अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे जो कुछ अधिक गुणश्रेणि आयाम कहा था सो यहाँ वह कुछ अधिक भाग ही गुणश्रेणिशीर्ष है। उस गुणश्रेणिशीर्षके सब निषेकों और उससे संख्यातगुणे गुणश्रेणिशीर्षसे ऊपरके ऊपरकी स्थितिसम्बन्धी निषेकोंको मिलानेसे अन्तरायाम अर्थात् अन्तरका काल होता है जो अन्तर्मुहूर्त मात्र है। इतने निषेकोंको बीचसे उठाकर ऊपरकी अथवा नीचेकी स्थितिमें स्थापित करके उनका अभाव कर देता है। यहाँ अन्तरकरण करनेके कालके प्रथम समयसे लेकर अनिवृत्तिकरणका जो संख्यातवाँ भाग काल शेष रहा था उसके भी संख्यातवें भाग काल पर्यन्त तो अन्तरकरण करनेका काल है और उससे ऊपर बाकी बचा हुआ बहुभागमात्र काल प्रथम स्थिति सम्बन्धी काल है और उससे ऊपर जिन निषेकोंका अभाव किया सो अन्तर्मुहूर्त मात्र अन्तरायाम अर्थात् अन्तरका काल है। प्रथम स्थितिमें आवलिमात्र काल शेष रहने पर मिथ्यात्वकी स्थिति और अनुभागका उदीरणारूपसे घात नहीं होता। किन्तु स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात प्रथम स्थितिके अन्तिम समय पर्यन्त होता है। इस प्रकार मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिका क्रमसे वेदन करता हुआ वह जीव चरमसमयवर्ती मिथ्यादृष्टि होता है। उसके अनन्तरवर्ती समयमें मिथ्यात्वकी सम्पूर्ण प्रथम स्थितिको समाप्त करके उपशमसम्यक्त्वको उत्पन्न करता है। अर्थात् अन्तरायाममें प्रवेश करनेके प्रथम समयमें ही दर्शनमोहनीयका उपशम करके उपशमसम्यग्दृष्टि हो जाता है और उसी प्रथम समयमें मिथ्यात्व सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियोंकी उत्पत्ति होती है। जैसे चाकीमें दले जानेसे धान्यके तीन रूप हो जाते हैं उसी तरह अनिवृत्तिकरण रूप परिणामोंसे एक दर्शनमोहनीय कर्म तीन रूप हो जाता है। यहाँ दर्शनमोहका सर्वोपशमन नहीं होता, अतः उपशम हो जाने पर भी संक्रमकरण और अपकर्षणकरण पाये जाते हैं। इसीलिए एक अन्तर्मुहूर्त काल तक गुणसंक्रमके द्वारा मिथ्यात्वके प्रदेशसंचयका सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमण होता है। जिसका क्रम पूर्वमें बतलाया है।

§ १०० इस प्रकार जघन्य गुणसंक्रमके कारण परिणामोंसे और उसके जघन्य कालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको पूरित करके अनन्तर अन्तर्मुहूर्तको बिताकर उपशम सम्यक्त्व कालके भीतर ही अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करता है। फिर उपशम

विसंजोइय उवसमसम्मत्तकालं समाणिय वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय तत्थ अंतोमुहुत्तमच्छिय दंसणमोहक्खवणमाढवेमाणो तिण्णि वि करणाणि करेदि। तत्थ अधापवत्तकरणं कादूण पच्छा अपुव्वकरणं करेमाणो जहण्णपरिणामेहि चेव गुणसेढिं करेदि थोवदव्वणिज्जरणट्ठं। सम्मत्तस्स उदयावलियब्भंतरे असंखेज्जलोगपडिभागियं दव्वं घेत्तूण गोवुच्छायारेण संछुहदि, सोदयत्तादो। सेसमोकड्डिददव्वमुदयावलियबाहिरे गुणसेढिआगारेण णिसिंचदि। मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पुण ओकड्डिददव्वमुदयावलियबाहिरे चेव गुण-सेढिआगारेण णिसिंचदि, तेसिमुदयाभावादो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुवरि गुणसंकमेण समयं पडि मिच्छत्तं संकामेदि। तदो अपुव्वकरणद्धं गमिय अणियट्टिकरणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु दूरावकिट्टीसण्णिदट्ठिदीए समुप्पत्ती होदि। तदोप्पहुडि दूरावकिट्टि-ट्ठिदिमसंखेज्जे खंडे कादूण तत्थ बहुखंडाणि अंतोमुहुत्तेण घादिदे जाव मिच्छत्तदुचरिम-ट्ठिदिकंडए त्ति। तदो मिच्छत्तचरिमट्ठिदिखंडयमागाएंतो उदयावलियबाहिरे आगाएदूण चरिमट्ठिदिखंडयफालीओ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सरूवेण संकामेदि। एवं संकामेमाणेण जाधे[1] मिच्छत्तचरिमखंडयस्स चरिमफाली सम्मामिच्छत्तस्सुवरि संकामिदा

सम्यक्त्वके कालको समाप्त करके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके उसमें अन्तर्मुहूर्त कालतक ठहर कर दर्शनमोहके क्षपणका प्रारम्भ करता हुआ तीनों करणोंको करता है। ऐसा करता हुआ वहाँ अधःप्रवृत्तकरणको करके पीछे अपूर्वकरणको करता हुआ जघन्य परिणामोंसे ही गुणश्रेणिको करता है जिससे थोड़े द्रव्यकी निर्जरा हो। तथा सम्यक्त्व प्रकृतिके अपकर्षित द्रव्यमें असख्यात लोकका भाग देकर लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्यको उदयावलीके अन्दर गोपुच्छके आकार रूपसे निक्षेपण करता है, क्योंकि उस प्रकृतिका उदय है। अर्थात् जैसे गौकी पूछ क्रमसे घटती हुई होती है वैसे ही एक एक चय घटता क्रमसे निषेकोंकी रचना उदयावलीमें करता है और बाकी बचे अपकृष्ट द्रव्यको उदयावलीसे बाहर गुणश्रेणिके आकार रूपसे स्थापित करता है। अर्थात् ऊपर ऊपरके निषेकोंमें असख्यातगुणे असख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेपण करता है। यह तो उदय प्राप्त सम्यक्त्व प्रकृतिकी गुणश्रेणि रचनाका क्रम हुआ। परन्तु मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अपकृष्ट द्रव्यको उदयावलीके बाहर ही गुणश्रेणिके आकार रूपसे निक्षेपण करता है, क्योंकि उनका उदय नहीं है। अर्थात् उदय प्राप्त प्रकृतिके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेपण उदयावलीमें करता है किन्तु जिसका उदय नहीं है उसके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेपण उदयावलीसे बाहर करता है तथा गुणसक्रमके द्वारा प्रति समय मिथ्यात्वको सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिमें सक्रान्त करता है। इस प्रकार अपूर्वकरणके कालको बिताकर अनिवृत्तिकरण कालके सख्यात बहुभाग बीतनेपर दूरापकृष्टि नामकी स्थितिकी उत्पत्ति होती है, इसलिए वहाँसे लेकर दूरापकृष्टि स्थितिके असख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुतसे खण्डोंको मिथ्यात्वके द्विचरम स्थितिकाण्डकके प्राप्त होनेतक अन्तर्मुहूर्तके द्वारा घातता है। उसके बाद मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकको ग्रहण करता हुआ उदयावलीके बाहर ही ग्रहण करके अन्तिम स्थितिकाण्डककी फालियोंको सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे सक्रमित करता है। इस प्रकार सक्रमण करते हुए जब मिथ्यात्वके अन्तिम काण्डककी अन्तिम फाली सम्यग्मिथ्यात्वमें सक्रान्त होती है तब

१ ता०प्रतौ 'जादे (धे)' आ०प्रतौ 'जादे' इति पाठ ।

रादो सम्मामिच्छत्तउक्कस्सपदेसविहत्ती, सगअसंखे०भागेणूणमिच्छत्तुक्कस्सदव्वस्स सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणयस्सुवलंभादो। सम्मत्तसरूवेण संकंतदव्वमोकड्डिदूण गुणसेढीए गालिददव्वं च मिच्छत्तुक्कस्सदव्वस्स असंखे०भागो त्ति कधो णव्वदे? उवरि भण्णमाणपदेसप्पाबहुगसुत्तादो। एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो

सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है क्योंकि उस समय अपना असंख्यातवाँ भाग कम मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे परिणमित हुआ पाया जाता है। अर्थात् चूंकि मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यका असंख्यातवाँ भाग तो सम्यक्त्वरूप हो जाता है और गुणश्रेणीके द्वारा निर्जीर्ण हो जाता है, शेष बहुभाग द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्व रूप हो जाता है अतः उस समय सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय होनेसे उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है।

शंका—मिथ्यात्वका जो द्रव्य सम्यक्त्व रूपसे संक्रान्त होता है तथा जो द्रव्य अपकृष्ट होकर गुणश्रेणिके द्वारा गल जाता है वह सब द्रव्य मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है।

समाधान—आगे कहे जानेवाले प्रदेशविषयक अल्पबहुत्वको बतलानेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

यह उक्त सूत्रका भावार्थ है।

विशेषार्थ—सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंचय गुणितकर्मांशवाले दर्शनमोहके क्षपकके बतलाया है। अतः गुणितकर्मांशवाले मिथ्यादृष्टिके उपशम सम्यक्त्व उत्पन्न कराकर क्षायोपशमिक सम्यक्त्व उत्पन्न कराया है और फिर दर्शनमोहका क्षपण कराया है। दर्शनमोहके क्षपणके लिये भी पूर्वोक्त तीन करण होते हैं और वहाँ भी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें गुणश्रेणि आदि कार्य होते हैं। उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके समय और वहाँ पर भी यह गुणश्रेणि जघन्य परिणामोंसे ही कराना चाहिये, क्योंकि यदि पहले उत्कृष्ट आदि परिणामोंसे गुणश्रेणि कराई जायेगी तो मिथ्यात्वका संचित बहुत द्रव्य गुणश्रेणि निर्जराके द्वारा निर्जीर्ण हो जावेगा और ऐसी स्थितिमें सम्यग्मिथ्यात्वमें अधिक द्रव्यका संक्रमण न हो सकनेसे उसका उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकेगा तथा वहाँ पर भी उत्कृष्ट परिणामोंसे गुणश्रेणि कराने पर तीनों प्रकृतियोंका बहुत द्रव्य निर्जीर्ण हो जावेगा। उपशम सम्यक्त्वकी उत्पत्ति कराते हुए यह कहा था कि मिथ्यात्वके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप उदयावलीसे अतिस्थापनावलीके पूर्व तक होता है। किन्तु यहाँ पर सम्यक्त्व प्रकृतिके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप तो उदयावलीसे ही होता है किन्तु मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप उदयावलीमें न होकर उससे बाहर गुणश्रेणि और द्वितीय स्थितिमें ही होता है। इसका कारण यह है कि जिस प्रकृतिका उदय होता है उसके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप उदयावलिसे किया जाता है और जिस प्रकृतिका उदय नहीं होता है उसके अपकृष्ट द्रव्यका निक्षेप उदयावलीमें न होकर उससे बाहर ही होता है। क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टिके केवल सम्यक्त्वप्रकृतिका ही उदय होता है सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्वका उदय नहीं होता अतः इनके अपकृष्ट द्रव्यके निक्षेपणमें अन्तर है। इस प्रकार अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें गुणश्रेणि रचनाको करके अनिवृत्तिकरणके कालमेंसे संख्यात बहुभागप्रमाण कालके बीत जाने पर दूरापकृष्टि नामकी स्थिति उत्पन्न होती है। स्थितिकाण्डकघातके द्वारा जिस स्थितिसत्कर्मका घात करते करते पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष रहता है उस सबसे अन्तिम पल्योपमके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिसत्कर्मको दूरापकृष्टि कहते हैं।

❀ सम्मत्तस्स वि तेणेव जम्मि सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते पक्खित्तं तस्स सम्मत्तस्स उक्कस्सपदेससतकम्म ।

§ १०१. तेणेवे त्ति वुत्ते सम्मामिच्छत्तुकस्सपदेससंतकम्मिएण जीवेणे त्ति वुत्तं होदि । सम्मामिच्छत्तुकस्सपदेससंतकम्मिओ सगुदयावलियबाहिरासेसपदेसग्गं ण सम्मत्ते संकामेदि, अंतोमुहुत्तेण विणा तस्संकमणाणुववत्तीदो । जम्हि उद्देसे उदयावलियबाहिरासेससम्मामिच्छत्तदव्वं सम्मत्ते संकामेदि ण तत्थ सम्मामिच्छत्तस्स पदेसग्गमुकस्सं, गालिदअंतोमुहुत्तमेत्तगुणसेढीगोवुच्छत्तादो । तम्हा तेणेवे त्ति ण घडदे ? ण एस दोसो, जीवदुवारेण दोण्हं हाणाणमेयत्तं[1] पडि विरोहाभावेण तदुववत्तीदो । सम्मामिच्छत्तुकस्सपदेससंतकम्मं काऊण पुणो अतोमुहुत्तकालं संखेज्जट्ठिदिखंडयसहस्सेहि गमिय सम्मामिच्छत्तस्स उदयावलियबाहिरासेसदव्वे सम्मत्तस्सुवरि संकामिदे सम्मत्तुकस्सदव्वं होदि त्ति भावत्थो ।

इसके बाद दूरापकृष्टि नामकी स्थितिके असख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुतसे स्थिति खण्डोंका घात अन्तर्मुहुर्तमें करता है तब तक मिथ्यात्वका द्विचरिमस्थितिकाण्डक हो जाता है । इसके बाद मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकका आगाल करते हुए अर्थात् उसके ऊपरकी स्थितिमें स्थित निषेकोंको प्रथम स्थितिमें स्थापित करते हुए उदयावलिसे बाहर ही स्थापित करता है और ऐसा करके अन्तिम स्थितिकाण्डककी फालियोंका सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व रूपसे सक्रमण करता है । ऐसा करते हुए जब मिथ्यात्वके उस अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फाली सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे हो जाती है तब सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति होती है ।

❀ वही जीव जब सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त कर देता है तो उसके सम्यक्त्वप्रकृतिका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है ।

§ १०१ 'वही जीव' ऐसा कहनेसे सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाले जीवका ग्रहण होता है ।

शंका—सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला जीव अपने उदयावली बाह्य समस्त प्रदेशसमूहको सम्यक्त्व प्रकृतिमें सक्रान्त नहीं करता, क्योंकि अन्तर्मुहूर्त कालके विना उसका सक्रमण नहीं बन सकता । और जब उदयावली बाह्य सम्यग्मिथ्यात्वके सब द्रव्यको सम्यक्त्वमें सक्रान्त करता है तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म नहीं रहता, क्योंकि उस समय अन्तर्मुहूर्त कालप्रमाण गुणश्रेणी और गोपुच्छका गलन हो जाता है, अत सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाले जीवके ही सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है यह बात घटित नहीं होती ?

समाधान—यह दोष ठीक नहीं है, क्योंकि एक जीवकी अपेक्षा दोनों स्थानोंके एक होनेमें कोई विरोध नहीं है, अत उक्त कथन बन जाता है । भावार्थ यह है कि सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मको करके फिर सख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके द्वारा अन्तर्मुहूर्त कालको विताकर जब सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिके उदयावली बाह्य समस्त द्रव्यको सम्यक्त्व प्रकृतिमें सक्रमित करता है तब सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य होता है ।

---

१. आ प्रतौ 'दोण्हमवट्ठाणमेयत्त' इति पाठ ।

§ १०२ एदं पि सम्मत्तुक्कस्सपदेसग्गं मिच्छत्तुक्कस्सपदेसग्गादो असंखेज्जदिभागहीणं, गुणसेढीए गलिदासेसदव्वस्स तदसंखे०भागत्तादो। एगसमयपबद्धं ठविय दिवड्ढगुणहाणीए गुणिदे मिच्छत्तुक्कस्सदव्वं होदि। तम्मि तप्पाओग्गोकड्डुक्कड्डणभागहारेण तप्पाओग्गासंखेज्जरूवगुणिदेण भागे हिदे सम्मत्तादो एगसमएण गुणसेढीए गलिदुक्कस्सदव्वं होदि। एदस्स असंखे०भागो हेट्ठा णट्ठासेसदव्वं, एत्थोकड्डिददव्वस्स पहाणत्तुवलंभादो। जमेदं णट्ठदव्वस्स पमाणं तेण सेसासेसमिच्छत्तदव्वं सम्मत्तसरूवेण अत्थि त्ति घेत्तव्वं। एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो। णवरि सम्मामिच्छत्तुक्कस्सदव्वादो सम्मत्तुक्कस्सदव्वं विसेसाहियं, गुणसेढीए उदएण गलिददव्वं पेक्खिदूण गुणसंकमेण सम्मत्तसरूवेण परिणदव्वस्स असंखे०गुणत्तादो। तदसंखे०गुणत्तं कत्तो णव्वदे? उवरि भण्णमाणपदेसप्पाबहुअसुत्तादो।

विशेषार्थ—सूत्रमें कहा गया है कि सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाले जीवके ही सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। इस पर शंकाकारका कहना है कि यह बात नहीं बन सकती क्योंकि जब उस जीवके सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य रहता है तब सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य नहीं प्राप्त होता। और जब सम्यग्मिथ्यात्वका उदयावलिके बिना शेष सब द्रव्य सम्यक्त्वमें संक्रान्त होता है तब वह सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला नहीं रहता, क्योंकि तब तक सम्यग्मिथ्यात्वके गुणश्रेणी और गोपुच्छाकी निर्जरा हो लेती है। इसका यह समाधान किया गया है कि उक्त कथन एक जीवकी अपेक्षासे किया है। अर्थात् जो जीव सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला होता है वही जीव सम्यक्त्वका भी उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला होता है। इसका यह मतलब नहीं है कि एक ही समयमें दोनों कर्मोंके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होते हैं किन्तु कालभेदसे सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला जीव ही सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका भी स्वामी होता है।

§ १०२. सम्यक्त्वका यह उत्कृष्ट प्रदेशसंचय भी मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंचयसे असंख्यातवें भागप्रमाण हीन होता है क्योंकि गुणश्रेणिके द्वारा जो द्रव्य निर्जीर्ण हो जाता है वह सब द्रव्य मिथ्यात्वके उत्कृष्ट संचयके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है। एक समयप्रबद्धकी स्थापना करके डेढ़ गुणहानिसे गुणा करने पर मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य होता है। उस उत्कृष्ट द्रव्यमें उसके योग्य असंख्यातगुणे तत्प्रायोग्य उत्कर्षण-अपकर्षण भागहारके द्वारा भाग देने पर जो लब्ध आवे वह सम्यक्त्व प्रकृतिका एक समयमें गुणश्रेणिके द्वारा गलनेवाला उत्कृष्ट द्रव्य होता है और उसके असंख्यातवें भागप्रमाण नीचे नष्ट हुए कुल द्रव्यका प्रमाण है, क्योंकि यहाँ अपकर्षित द्रव्यकी प्रधानता पाई जाती है। यतः नष्ट द्रव्यका प्रमाण इतना है अतः बाकीका सब मिथ्यात्वका द्रव्य सम्यक्त्वरूपसे अवस्थित रहता है ऐसा इस सूत्रका भावार्थ लेना चाहिये। किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य विशेष अधिक है, क्योंकि गुणश्रेणिके उदयसे निर्जीर्ण होनेवाले द्रव्यकी अपेक्षा गुणसंक्रमके द्वारा सम्यक्त्वरूपसे परिणत हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा होता है।

शंका—यह द्रव्य असंख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—आगे कहे जानेवाले प्रदेशविषयक अल्पबहुत्वका कथन करनेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

विशेषार्थ—क्रम यह है कि जिस समय मिथ्यात्वका पूरा सक्रमण होता है उस समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी बची हुई स्थितिके बहुभागका घात करता है और इस प्रकार सख्यात स्थितिकाण्डकोंका पतन करके जब सम्यग्मिथ्यात्वका सम्यक्त्वमें सक्रमण करता है तब सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है। इससे एक बात तो यह ज्ञात होती है कि जिस समय मिथ्यात्वका सम्यग्मिथ्यात्वमें पूरा सक्रमण होता है उससे सम्यग्मिथ्यात्वका सम्यक्त्वमें सक्रमण होनेके लिये अन्तर्मुहूर्त काल और लगता है, इसलिये सूत्रमें आये हुए 'तेणेव' पदका अर्थ 'सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवालेके ही सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है' ऐसा न करके जो यह सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला जीव है वही आगे चलकर सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मवाला होता है ऐसा करना चाहिये। अब इस योग्यतावाला आगे चलकर कब होता है इसका खुलासा मूल सूत्रमें ही किया है कि जब सम्यग्मिथ्यात्वका सम्यक्त्वमें पूरा सक्रमण करता है तब इस योग्यतावाला होता है। इतने कालके भीतर यद्यपि इस जीवके सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तर्मुहूर्त कालवाली गुणश्रेणीका और (उदयावलिप्रमाण) गोपुच्छाका गलन हो जानेसे सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेश नहीं रहते तब भी उस समय सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होनेमें कोई बाधा नहीं आती, क्योंकि उक्त गलित द्रव्यको छोड़कर सम्यग्मिथ्यात्वका शेष सब द्रव्य तब तक सम्यक्त्वको मिल जाता है, इसलिये उसका प्रदेशसत्कर्म बहुत अधिक बढ़ जाता है। यही कारण है कि गुणित कर्मांशवाले जीवके जब सम्यग्मिथ्यात्वका सम्यक्त्वमें पूरा सक्रमण होता है तब सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म कहा है। यद्यपि इस प्रकार सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म प्राप्त होता है तो भी उसका प्रमाण कितना है यह एक प्रश्न है जिसका खुलासा करते हुए वीरसेन स्वामीने दो बातें कहीं हैं। प्रथम तो यह कि सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मसे असख्यातवा भाग कम है और दूसरी यह कि सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मसे विशेष अधिक है। पहली बातके समर्थनमें वीरसेन स्वामीने यह हेतु दिया है कि गुणश्रेणीके द्वारा जितना द्रव्य गल जाता है वही अकेला मिथ्यात्वके प्रदेशसत्कर्मके असख्यातवें भाग है और अधस्तन गलनाके द्वारा जो और द्रव्य गला है वह अतिरिक्त है। इससे स्पष्ट है कि मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मसे सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म असख्यातवा भाग कम होता है। विशेष खुलासा इस प्रकार है कि मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म गुणितकर्मांशवाले जीवके सातवें नरकके अन्तिम समयमें होता है। तब इसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता नहीं पाई जाती। अब यही जीव जब वहाँसे निकलकर और तिर्यञ्चके दो तीन भव लेकर मनुष्य होता है और आठ वर्षका होकर अन्तर्मुहूर्तमें उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त करके मिथ्यात्वके तीन टुकड़े कर देता है और इस प्रकार मिथ्यात्व तीन भागोंमें बट जाता है। अनन्तर अन्तर्मुहूर्तमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करता है और तब मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें और सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें सक्रमित करता है और इस प्रकार सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त किया जाता है। अब यहाँ विचारणीय बात यह है कि एक मिथ्यात्वका द्रव्य ही जो कि सातवें नरकके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट था वही आगे चलकर तीन भागोंमें बटता है, सम्यक्त्व प्राप्तिके समय मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वकी गुणश्रेणी निर्जरा उसीमेंसे होती है और अन्तमें वही गलितसे शेष बचकर सबका सब सम्यक्त्वरूप परिणमता है तो वह मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे कम होना ही चाहिए। अब कितना कम है सो इस प्रश्नका यह खुलासा किया कि अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके द्वारा सब द्रव्यका असख्यातवा भाग ही गुणश्रेणीमें प्राप्त होता है अत इतना कम

* णवुंसयवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं कस्स ?

§ १०३ सुगमं।

* गुणिदकम्मंसिओ ईसाणं गदो तस्स चरिमसमयदेवस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं।

§ १०४ गुणिदकम्मंसिओ किमट्ठमीसाणदेवेसु उप्पाइदो ? तसबंधगद्धादो संखेज्जगुणथावरबंधगद्धाए पुरिसित्थिवेदबंधसमयविरहिदाए णवुंसयवेदस्स बहुदव्वसंचयट्ठं। ण च सत्तमपुढवीए थावरबंधगद्धा अत्थि जेण तत्थ णवुंसयवेदस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मं होज्ज। तसबंधगद्धादो थावरबंधगद्धा संखेज्जगुणा त्ति कुदो णव्वदे ? 'सव्वत्थोवा तसबंधगद्धा। थावरबंधगद्धा संखेज्जगुणा' त्ति एदम्हादो महाबंधसुत्तादो णव्वदे। सत्तमाए

है। यहाँ अधःस्थिति गलनाके द्वारा जितना द्रव्य गल गया उसकी विवक्षा नहीं की क्योंकि वह गुणश्रेणिके द्रव्यके भी असंख्यातवें भागप्रमाण है। यहाँ अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारको जो असंख्यातसे गुणित किया गया और फिर उसका जो मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यमें भाग दिया गया सो इसका कारण यह है कि अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारकी क्रिया बहुत काल तक चलती रहती है जिसका प्रमाण असंख्यात समय होता है। तथा दूसरे वाक्यके समर्थनमें यह हेतु दिया है कि सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त होने पर उसमेंसे गुणश्रेणिका जितना द्रव्य मिलता है उससे भी असंख्यातगुणा द्रव्य सम्यक्त्वको मिलता है और इस प्रकार सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मके समय उसका कुल संचित द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट संचयसे अधिक हो जाता है। तात्पर्य यह है कि सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट संचयके समय सम्यक्त्वका जितना संचय है वह गुणश्रेणिरूपसे सम्यग्मिथ्यात्वके गलनेवाले द्रव्यसे बहुत अधिक है और फिर इसमें गुणश्रेणीके द्वारा जितना द्रव्य गलता है उसके सिवा सम्यग्मिथ्यात्वका शेष सब द्रव्य आ मिलता है। अब यदि सम्यक्त्वके इन दोनों द्रव्योंको जोड़ा जाता है तो उसका सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे विशेष अधिक होना स्वाभाविक है। यही कारण है कि वीरसेन स्वामीने सम्यक्त्वके उत्कृष्ट द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे विशेष अधिक बतलाया।

* नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म किसके होता है ?

§ १०३ यह सूत्र सुगम है।

* गुणितकर्मांशवाला जो जीव ईशान स्वर्गमें उत्पन्न हुआ उसके देवपर्यायके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होता है।

§ १०४ शंका—गुणितकर्मांशवाले जीवको ईशान स्वर्गके देवोंमें क्यों उत्पन्न कराया है ?

समाधान—त्रसबन्धकके कालसे स्थावरबन्धकका काल संख्यातगुणा है और उस स्थावरबन्धक कालमें पुरुषवेद और स्त्रीवेदका बन्ध संभव नहीं है, अतः नपुंसकवेदका बहुत द्रव्य संचय करनेके लिये ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न कराया है। और सातवें नरकमें स्थावरबन्धक काल है नहीं जिससे वहाँ नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म हो।

शंका—त्रसबन्धकके कालसे स्थावरबन्धकका काल संख्यातगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—'त्रसबन्धकका काल सबसे थोड़ा है। स्थावरबन्धकका काल उससे संख्यातगुणा है' इस महाबन्धके सूत्रसे जाना।

पुढवीए तेत्तीससागरोवमाणि संखेज्जखंडाणि कादूण तत्थ बहुभागा णवुंसयवेदबंधक होदि, 'प्रक्षेपकसंक्षेपेण' एदम्हादो सुत्तादो तदुवलद्धीए। ईसाणदेवेसु पुण सगसंखे भागेणूणवेसागरोवममेत्तो चेव णवुंसयवेदसंचयकालो लब्भदि तेण सत्तमपुढ चेव उक्कस्ससामित्तं दिज्जदि त्ति ? ण, सव्वतसट्ठिदिं णेरइएसु बहुसंकिलेसेसु ग तसट्ठिदीए ईसाणदेवाउअमेत्ताए सेसाए ईसाणदेवेसुप्पण्णस्स लाहुवलंभादो। अथ एसो णवुंसयवेदगुणिदकम्मंसओ एइंदिएहिंतो णिप्पिडिदूण तसेसु हिंडमाणो बहुव मीसाणदेवेसु चेव उप्पाएदव्वो त्ति एसो सुत्ताहिप्पाओ, तसट्ठिदिं संखेज्जखंडाणि का तत्थ बहुखंडीभूदथावरबंधगद्धं तसबंधगद्धाए संखेज्जे[1] भागे च णवुंसयवेदस्सुवलंभाद ईसाणसद्दो जेण देसामासिओ तेण तसथावरबंधपाओग्गासेसतसेसु जहासंभवमुप्पाएदव त्ति भावत्थो। णेरइएसु व णत्थि उक्कड्डणा, अइतिव्वसंकिलेसाभावादो। तदो ए ण उप्पादेदव्वो त्ति ण पच्चवट्ठेयं, बंधगद्धालाहस्सेव उक्कड्डणालाहस्स पहाणत्ताभावादो।

शंका—सातवें नरककी तेतीस सागरकी स्थितिके सख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुभ नपुसकवेदके बन्धका काल होता है। यह बात "प्रक्षेपकसक्षेपेण" इस सूत्रसे उपलब्ध हो है। किन्तु ईशान स्वर्गके देवोंमें अपने संख्यातवें भाग कम दो सागरप्रमाण ही नपुसकवेद सचयकाल पाया जाता है, अत नपुसकवेदके उत्कृष्ट सचयका स्वामित्व सातवें नरकमें देना चाहिये।

समाधान—नहीं, क्योंकि त्रसपर्यायकी सब स्थितिको बहुत सक्लेशवाले नारकियों विताकर ईशान स्वर्गकी देवायुप्रमाण त्रसस्थितिके शेष रहने पर ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न हो वाले जीवके लाभ अर्थात् उत्कृष्ट सचय अधिक पाया जाता है।

अथवा नपु सकवेदका गुणितकर्मांशवाला यह जीव एकेन्द्रियोंमेंसे निकलकर ज त्रसोंमें भ्रमण करे तो उसे बहुत बार ईशानस्वर्गके देवोंमें ही उत्पन्न कराना चाहिये, ऐस उक्त चूर्णिसूत्रका अभिप्राय है, क्योंकि त्रसस्थितिके सख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुत खण्ड प्रमाण स्थावरबन्धककालमे और सख्यातवें भागप्रमाण त्रसबन्धककालमें नपुसकवेदका बन्ध पाया जाता है। यत ईशान शब्द देशामर्षक है, अत त्रस और स्थावरके बन्धयोग सब त्रसोंमें यथासभव उत्पन्न कराना चाहिये यह उस सूत्रका भावार्थ है।

शंका—ईशान स्वर्गके देवोंमें नारकियोंकी तरह उत्कर्षण नहीं होता, क्योंकि देवोंमें अति तीव्र सक्लेशका अभाव है। अत ईशानमें उत्पन्न नहीं कराना चाहिये।

समाधान—ऐसी आशका नहीं करनी चाहिये, क्योंकि बन्धककालके लाभकी तरह उत्कर्षणके लाभकी प्रधानता नहीं है। अर्थात् उत्कृष्ट सचयके लिये बन्धककाल जितना आवश्यक है उतना उत्कर्षण आवश्यक नहीं है।

विशेषार्थ—नपु सकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्त्व गुणितकर्मांशवाले ईशान स्वर्गके देवके बतलाया है। इसका कारण बतलाते हुए वीरसेन स्वामी लिखते हैं कि ईशान स्वर्गमें त्रसबन्धककाल और स्थावर बन्धककाल दोनों होते हैं। उसमे भी स्थावरबन्धककाल त्रसबन्धककालसे

---

१. आ०प्रतौ '-थावरबंधगद्धाए संखेज्जे' इति पाठः।

संख्यातगुणा है और इसमें स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध नहीं होता। इस प्रकार ईशान स्वर्गमें केवल नपुंसकवेदके बन्धकी अधिक काल तक संभावना होनेसे उसके द्रव्यका अधिक संचय हो जाता है इसलिये नपुंसकवेदके अधिक संचयके लिये गुणितकर्मांशवाले जीवको ईशान स्वर्गमें उत्पन्न कराया है। इस पर यह शङ्का हुई कि सातवें नरककी उत्कृष्ट आयु तेतीस सागर है और ईशान स्वर्गकी उत्कृष्ट आयु साधिक दो सागर है। अब यदि इन दोनों स्थलोंमें नपुंसकवेदका बन्धकाल प्राप्त किया जाता है तो वह ईशान स्वर्गसे सातवें नरकमें नियमसे अधिक प्राप्त होता है, क्योंकि ऐसा नियम है कि पुरुषवेदका बन्धकाल सबसे थोड़ा है, इससे स्त्रीवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा है और इससे नपुंसकवेदका बन्धकाल संख्यातगुणा है। इस नियमके अनुसार तेतीस सागरके संख्यात खण्ड करने पर उनमेंसे बहुभाग खण्ड नपुंसकवेदके बन्धकालके प्राप्त होते हैं। तथा ईशान स्वर्गमें नपुंसकवेदका उत्कृष्ट बन्धकाल अपना संख्यातवाँ भाग कम दो सागर प्राप्त होता है। यो भी यह इतना अधिक काल तब प्राप्त होता है जब ईशान स्वर्गमें त्रसबन्धकालसे स्थावरबन्धकाल संख्यातगुणा स्वीकार कर लिया जाता है। तो भी सातवें नरकमें नपुंसकवेदके बन्धकालसे ईशान स्वर्गमें नपुंसकवेदका बन्धकाल बहुत थोड़ा प्राप्त होता है, इसलिये नपुंसकवेदका उत्कृष्ट संचय सातवें नरकमें बतलाना चाहिये। वीरसेन स्वामीने इस शंकाका दो प्रकारसे समाधान किया है। एक तो यह कि संपूर्ण त्रसस्थितिको बहुत संक्लेशसे युक्त नारकियोंमें व्यतीत कराया जाय और जब उस स्थितिमें ईशान स्वर्गके देवकी आयु प्रमाण काल शेष रहे तब उसे ईशान स्वर्गमें उत्पन्न कराया जाय तो इससे नपुंसकवेदका अधिक संचय संभव है। यही कारण है कि अन्तमें ईशान स्वर्गमें उत्पन्न कराया है। पर मालूम होता है कि वीरसेन स्वामीको इस उत्तर पर स्वयं संतोष नहीं हुआ। उसका कारण यह है कि पूर्वमें मिलान करते हुए जो ईशान स्वर्गसे सातवें नरकमें नपुंसकवेदका अधिक बन्धकाल बतलाया है सो यह तेतीस सागरसे साधिक दो सागरका मिलान करके प्राप्त किया गया है। अब यदि दोनों स्थलों पर समान कालके भीतर नपुंसकवेदका बन्धकाल प्राप्त किया जाय तो वह सातवें नरकसे ईशान स्वर्गमें बहुत अधिक प्राप्त होता है, क्योंकि सातवें नरकमें केवल त्रसबन्धकाल है स्थावर बन्धकाल नहीं और ईशानस्वर्गमें स्थावर बन्धकाल भी है जिससे यहाँ नपुंसकवेदका बन्धकाल अधिक प्राप्त हो जाता है। वीरसेन स्वामीने पहले उत्तरमें इस दोषका अनुभव किया और तब वे अन्यथा करके दूसरा उत्तर देते हैं। उसका भाव यह है कि त्रसस्थिति साधिक दो हजार सागर कालके भीतर गुणितकर्मांशवाले इस एकेन्द्रिय जीवको त्रसोंमें उत्पन्न कराते हुए ईशान स्वर्गके देवोंमें बहुत बार उत्पन्न करावे। इससे नपुंसकवेदका बन्धकाल अधिक प्राप्त हो जानेसे उसका संचय भी अधिक प्राप्त होगा। इस पर यह शंका हो सकती है कि क्या यह संभव है कि यह जीव सदा ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न होता रहे। अतः इस शंकाको ध्यानमें रखकर वीरसेन स्वामी आगे लिखते हैं कि सूत्रमें जो ईशान शब्द आया है सो वह देशामर्षक है। उसका भाव यह है कि इस जीवको त्रस और स्थावरके बन्धयोग्य यथासंभव सब त्रसोंमें उत्पन्न कराया जाय। उसमें इतना ध्यान अवश्य रखे कि अधिकसे अधिक जितनी बार ईशान स्वर्गके देवोंमें उत्पन्न कराया जा सके कराया जाय। इसमेंसे बाद भी यह शंका की गई कि माना कि ईशान स्वर्गमें नपुंसकवेदका बन्धकाल अधिक है पर वहाँ अधिक संक्लेश परिणाम सम्भव न होनेसे नरकके समान अधिक उत्कर्षण नहीं हो सकता, अतः नपुंसकवेदके संचयके लिये नरकमें ही उत्पन्न कराना ठीक है। इस शंकाका वीर-

§ १३५. सत्तमाए पुढवीए अणंताणुबंधिलोभउक्कस्सदव्वादो आवलि० असंखे०भागपडिभागेण अब्भहियमिच्छत्तुक्कस्सदव्वपमाणत्तादो । सत्तमपुढवीदो उव्वट्टिय तसकाइएसु उप्पज्जिय तत्थ तसट्ठिदिं समाणिय पुणो एइंदिएसु दो-तिण्णि-भवग्गहणाणि गमिय मणुस्सेसुववज्जिय तत्थ अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि गमिय सम्मत्तं पडिवज्जिय मिच्छत्तदव्वे सम्मामिच्छत्तस्सुवरि पक्खित्ते सम्मामिच्छत्तपदेसग्गमुक्कस्सं होदि । ण च एदं दव्वमणंताणुबंधिलोभदव्वादो विसेसाहियं, सम्मत्तसरूवेण असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तसमयपबद्धाणं गयत्तादो[1] गुणसेढिणिज्जराए पडिसमयमसंखे०गुणं समयपबद्धाणं गलिदत्तादो च ? ण, दोहि वि पयारेहि णट्ठदव्वस्स अणंताणुबंधिलोभदव्वे आवलियाए असंखे०भागेण खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्तमिच्छत्तपयडिविसेसस्स असंखे०भागमेत्तदंसणादो । तं पि कुदो ? सम्मत्तदव्वस्स गुणसंकमभागहारेण खंडिदमिच्छत्तदव्वस्स एयखंडपमाणत्तादो । गुणसेढीए णट्ठदव्वभागहारस्स गुणसंकमभागहारं पेक्खिदूण असंखेज्जगुणत्तादो च । तम्हा अणंताणुबंधिलोभदव्वादो सम्मामिच्छत्तदव्वं विसेसाहियं ति सिद्धं ।

---

§ १३५. क्योंकि सातवीं पृथिवीमें अनन्तानुबन्धी लोभके उत्कृष्ट द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वमें अधिक पाया जाता है ।

शंका—सातवीं पृथिवीसे निकल कर और त्रसकायिकोंमे उत्पन्न होकर वहां त्रसस्थितिको समाप्त करके पुन एकेन्द्रियोंमें दो तीन भव विताकर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर वहा अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष जाने पर सम्यक्त्वको प्राप्त करके मिथ्यात्वके द्रव्यके सम्यग्मिथ्यात्वके ऊपर प्रक्षिप्त करने पर सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशाग्र होता है । परन्तु यह द्रव्य अनन्तानुबन्धी लोभके द्रव्यसे विशेष अधिक नहीं हो सकता, क्योंकि उस समय तक मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण समयप्रबद्ध सम्यक्त्वप्रकृतिरूपसे परिणत हो जाते हैं और गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणे समयप्रबद्धोंका गलन हो जाता है ।

समाधान—नहीं, क्योंकि इन दोनो प्रकारों से जो मिथ्यात्वका द्रव्य नष्ट होता है वह अनन्तानुबन्धी लोभके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण मिथ्यात्व प्रकृति विशेषके असंख्यातवें भागमात्र देखा जाता है ।

शंका—वह भी क्यों है ?

समाधान—क्योंकि गुणसंक्रमभागहारके द्वारा मिथ्यात्वके द्रव्यके भाजित करने पर जो एक भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण सम्यक्त्वका द्रव्य है और गुणश्रेणिके द्वारा नष्ट होनेवाले द्रव्यका भागहार गुणसंक्रमभागहारको देखते हुए असंख्यातगुणा है, इसलिए अनन्तानुबन्धी लोभके द्रव्यसे सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य विशेष अधिक है यह सिद्ध हुआ ।

---

१. आ० प्रतौ '-समयपबद्धाणं गयियसादो' इति पाठः ।

* कोधे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १२८ सुगमं ।

* मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १२९ सुगमं ।

* लोभस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १३० सुगमं ।

* अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १३१ सुगमं ।

* कोधे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १३२ सुगमं ।

* मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १३३ सुगमं ।

* लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १३४ सुगमं ।

* सम्मामिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

---

* उससे प्रत्याख्यान क्रोधमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १२८. यह सूत्र सुगम है ।

* उससे प्रत्याख्यान मायामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १२९. यह सूत्र सुगम है ।

* उससे प्रत्याख्यान लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १३०. यह सूत्र सुगम है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मानमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १३१. यह सूत्र सुगम है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १३२. यह सूत्र सुगम है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मायामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १३३. यह सूत्र सुगम है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १३४. यह सूत्र सुगम है ।

* उससे सम्यग्मिथ्यात्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १२५. सत्तमाए पुढवीए अणंताणुबंधिलोभउक्कस्सदव्वादो आवलि० असंखे०भागपडिभागेण अब्भहियमिच्छत्तुक्कस्सदव्वपमाणत्तादो। सत्तमपुढवीदो उव्वट्टिय तसकाइएसु उप्पज्जिय तत्थ तसट्ठिदिं समाणिय पुणो एइंदिएसु दो-तिण्णि-भवग्गहणाणि गमिय मणुस्सेसुववज्जिय तत्थ अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणि गमिय सम्मत्तं पडिवज्जिय मिच्छत्तदव्वे सम्मामिच्छत्तस्सुवरि पक्खित्ते सम्मामिच्छत्तपदेसग्गमुक्कस्सं होदि। ण च एदं दव्वमणंताणुबंधिलोभदव्वादो विसेसाहिय, सम्मत्तसरूवेण असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तसमयपबद्धाणं गयत्तादो[1] गुणसेढिणिज्जराए पडिसमयमसंखे०गुणं समयपबद्धाण गलिदत्तादो च? ण, दोहि वि पयारेहि णट्ठदव्वस्स अणंताणुबंधिलोभदव्वे आवलियाए असंखे०भागेण खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्तमिच्छत्तपयडिविसेसस्स असंखे०भागमेत्तदंसणादो। तं पि कुदो? सम्मत्तदव्वस्स गुणसंकमभागहारेण खंडिदमिच्छत्तदव्वस्स एयखंडपमाणत्तादो। गुणसेढीए णट्ठदव्वभागहारस्स गुणसंकमभागहार पेक्खिदूण असंखेज्जगुणत्तादो च। तम्हा अणंताणुबंधिलोभदव्वादो सम्मामिच्छत्तदव्वं विसेसाहियं ति सिद्धं।

---

§ १२५. क्योंकि सातवीं पृथिवीमें अनन्तानुबन्धी लोभके उत्कृष्ट द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना मिथ्यात्वका उत्कृष्ट द्रव्य सम्यग्मिथ्यात्वमे अधिक पाया जाता है।

शंका—सातवीं पृथिवीसे निकल कर और त्रसकायिकोंमें उत्पन्न होकर वहा त्रसस्थितिको समाप्त करके पुन एकेन्द्रियोंमें दो तीन भव बिताकर मनुष्योंमे उत्पन्न होकर वहा अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष जाने पर सम्यक्त्वको प्राप्त करके मिथ्यात्वके द्रव्यके सम्यग्मिथ्यात्वके ऊपर प्रक्षिप्त करने पर सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशाग्र होता है। परन्तु यह द्रव्य अनन्तानुबन्धी लोभके द्रव्यसे विशेष अधिक नहीं हो सकता, क्योंकि उस समय तक मिथ्यात्वके द्रव्यमेसे पल्यके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण समयप्रवद्ध सम्यक्त्वप्रकृतिरूपसे परिणत हो जाते है और गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा प्रत्येक समयमे असंख्यातगुणे समयप्रवद्धोंका गलन हो जाता है।

समाधान—नहीं, क्योंकि इन दोनों प्रकारो से जो मिथ्यात्वका द्रव्य नष्ट होता है वह अनन्तानुवन्धी लोभके द्रव्यमें आवलिके असख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण मिथ्यात्व प्रकृति विशेषके असंख्यातवें भागमात्र देखा जाता है।

शंका—वह भी क्यों है?

समाधान—क्योंकि गुणसंक्रमभागहारके द्वारा मिथ्यात्वके द्रव्यके भाजित करने पर जो एक भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण सम्यक्त्वका द्रव्य है और गुणश्रेणिके द्वारा नष्ट होनेवाले द्रव्यका भागहार गुणसंक्रमभागहारको देखते हुए असंख्यातगुणा है, इसलिए अनन्तानुबन्धी लोभके द्रव्यसे सम्यमिथ्यात्वका द्रव्य विशेष अधिक है यह सिद्ध हुआ।

---

1. आ० प्रतौ '-समयपबद्धाणं गणियत्तादो' इति पाठः।

* सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १२६. सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्तस्स विसेसाहियत्तं ण घडदे, गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण मणुस्सेसुववज्जिय अट्ठ वस्साणि गमिय पुणो दंसणमोहं खवेंतेण मिच्छत्तदव्वे सम्मामिच्छत्तस्सुवरि पक्खित्ते सम्मामिच्छत्तुक्कस्सं होदि । पुणो तत्तो उवरि अंतोमुहुत्तं गुणसेढिणिज्जराए सम्मामिच्छत्तदव्वस्स णिज्जरणं करिय पुणो सम्मामिच्छत्ते सगुक्कस्सदव्वादो असंखे०भागहीणे सम्मत्तस्सुवरि पक्खित्ते सम्मत्तदव्वस्सुक्कस्सत्तुवलंभादो त्ति ? ण एस दोसो, सम्मामिच्छत्ते उक्कस्से जादे संते पच्छा गुणसेढिणिज्जराए णिज्जरिदसम्मामिच्छत्तदव्वादो पुव्वं सम्मत्तसरूवेण द्विददव्वस्स असंखे० गुणत्तुवलंभादो । ण च असंखेज्जगुणत्तमसिद्धं, ओकड्डुक्कड्डणभागहारादो गुणसंकमभागहारस्स असंखे०गुणहीणत्तेण तस्सिद्धिदंसणादो ।

* मिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १२७. भवट्ठिदीए चरिमसमयट्ठिदसत्तमपुढविणेरइयमिच्छत्तुक्कस्सदव्वं पेक्खिदूण सम्मत्तुक्कस्सदव्वम्मि गुणसेढिणिज्जराए णिज्जिण्णपलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तसमयपबद्धाणमणुवलंभादो ।

* हस्से उक्कस्सपदेससंतकम्ममणंतगुणं ।

---

* उससे सम्यक्त्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १२६. शंका—सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यसे सम्यक्त्वका द्रव्य विशेष अधिक घटित नहीं होता, क्योंकि गुणितकर्मांशिक लक्षणसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर और आठ वर्ष बिताकर पुनः दर्शनमोहका क्षपण करनेवाले उसके द्वारा मिथ्यात्वके द्रव्यके सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त करने पर सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य उत्कृष्ट होता है। पुनः उसके बाद अन्तर्मुहूर्त काल तक गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यकी निर्जरा करके पुनः अपने उत्कृष्ट द्रव्यके असंख्यातवें भागहीन सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यके सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त करने पर सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य उपलब्ध होता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि यद्यपि सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट होनेके बाद गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य निर्जीर्ण होता है तो भी उस द्रव्यके निर्जीर्ण होनेके पूर्व ही उससे सम्यक्त्वरूपसे स्थित हुआ द्रव्य असंख्यातगुणा पाया जाता है। और उसका असंख्यातगुणा होना असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसे गुणसंक्रमभागहार असंख्यातगुणा हीन होता है, इससे उसके निर्जीर्ण होनेवाले द्रव्यसे असंख्यातगुणे होनेकी सिद्धि हो जाती है।

* उससे मिथ्यात्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १२७. क्योंकि भवस्थितिके अन्तिम समयमें स्थित हुए सातवीं पृथिवीके नारकीके मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यको देखते हुए सम्यक्त्वका उत्कृष्ट द्रव्य गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा निर्जीर्ण होनेसे पल्यके असंख्यातवें भागमें जितने समय हों उतने समयप्रबद्धप्रमाण कम पाया जाता है।

* उससे हास्यमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म अनन्तगुणा है ।

§ १३८. कुदो? देसघादित्तादो। पुव्वुत्तासेसपयडीओ जेण सव्वघाइलक्खणाओ तेण तासिं पदेसग्गं हस्सपदेसग्गस्स अणंतिमभागो त्ति भणिदं होदि। जदि सव्वघाइफद्दयाणं पदेसग्गमणंतिमभागो होदि तो हस्सस्स देसघादिफद्दयपदेसग्गस्स अणंतिमभागेण तस्सव्वघादिफद्दयाणं[1] पदेसग्गेण होदव्वं? होदु णाम, देसघादिफद्दएसु अणंताणमणुभागपदेसगुणहाणीणं सभवुवलंभादो।

❀ रदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १३९. केत्तियमेत्तेण? हस्ससव्वदव्वे आवलियाए असंखे०भागेण खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्तेण। दोण्हं पयडीणं बंधगद्धासु सरिसासु सतीसु कुदो रदिपदेसग्गस्स विसेसाहियत्तं? ण, ढुक्कमाणकाले एव तेण सरूवेण ढुक्कणुवलभादो।

❀ इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं।

§ १४०. इत्थिवेदबंधगद्धादो जेण हस्स-रदिबंधगद्धा संखे०गुणा तेण रदिदव्वस्स संखे०भागेण इत्थिवेददव्वेण होदव्वमिदि? सच्चं, एवं चेव जदि कुरवे मोत्तूण अण्णत्थ इत्थिवेददव्वस्स संचओ कदो। किंतु कुरवेसु हस्स-रदिबंधगद्धादो इत्थिवेद-

---

§ १३८. क्योंकि यह देशघाति प्रकृति है। यतः पूर्वोक्त अशेष प्रकृतियाँ सर्वघाति हैं, अतः उनके प्रदेश हास्यके प्रदेशोंके अनन्तवें भागप्रमाण होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यदि सर्वघाति स्पर्धकोंके प्रदेश अनन्तवें भागप्रमाण होते हैं तो हास्यके प्रदेशाग्रके अनन्तवें भागप्रमाण उसके सर्वघातिस्पर्धकोके प्रदेश होने चाहिए?

समाधान—होवें, क्योंकि देशघाति स्पर्धकोंमें अनन्त अनुभाग प्रदेश गुणहानियाँ उपलब्ध होती हैं।

❀ उससे रतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १३९. कितना अधिक है? हास्यके सब द्रव्यमे आवलिके असख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है।

शंका—दोनों प्रकृतियोंके बन्धक कालोंके समान होने पर रतिका प्रदेशाग्र विशेष अधिक कैसे हो सकता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि, बन्ध होनेके समयमें ही उस रूपसे उसका बन्ध उपलब्ध होता है।

❀ उससे स्त्रीवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है।

§ १४० **शंका**—स्त्रीवेदके बन्धक कालसे यतः हास्य और रतिका बन्धक काल संख्यातगुणा है, अतः रतिके द्रव्यके संख्यातवें भागप्रमाण स्त्रीवेदका द्रव्य होना चाहिए?

समाधान—सत्य है, यदि कुरुको छोडकर अन्यत्र स्त्रीवेदके द्रव्यका सञ्चय किया है तो इसी प्रकार ही सञ्चय होता है। किन्तु देवकुरु और उत्तरकुरुमें हास्य और रतिके बन्धक कालसे

---

1 आ०प्रतौ 'तस्स सव्वघादिफद्दयाणं' इति पाठः।

बंधगद्धा संखे०गुणा, णवुंसयवेदबंधगद्धाए बहुभागत्तादो। इत्थिवेदस्स च कुरवेसु संचओ कदो। तेण रदिदव्वादो इत्थिवेददव्वं संखेज्जगुणं ति सिद्धं।

* सोगे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १४१ कुदो ? कुरविस्थिवेदबंधगद्धादो तस्सेवणसोगबंधगद्धाए विसेसाहियत्तादो। केत्तियमेत्तो विसेसो ? इत्थिवेदबंधगद्धाए संखे०भागमेत्तो।

* अरदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १४२ केत्तियमेत्तेण ? सोगदव्वे आवलियाए असंखे० भागेण खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्तेण।

* णवुंसयवेदउक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १४३ कुदो ? ईसाणदेवअरदि-सोगबंधगद्धादो तस्सेव णवुंसयवेदबंधगद्धाए विसेसाहियत्तुवलंभादो। केत्तियमेत्तो विसेसो ? हस्स-रदिबंधगद्धं संखेज्जखंडं करिय तत्थ बहुखंडमेत्तो।

* दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १४४ ईसाणदेवेसु णवुंसयवेदबंधगद्धादो दुगुंछाबंधगद्धाए ईसाणं अदिरि-

---

स्त्रीवेदका बन्धक काल संख्यातगुणा है, क्योंकि यहाँ पर नपुंसकवेदके बन्धक कालकी अपेक्षा स्त्रीवेदका बन्धक काल बहुभागप्रमाण उपलब्ध होता है और देवकुरु तथा उत्तरकुरुमें स्त्रीवेदका सञ्चय प्राप्त किया गया है, इसलिए रतिके द्रव्यसे स्त्रीवेदका द्रव्य संख्यातगुणा है यह सिद्ध होता है।

* उससे शोकमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १४१ क्योंकि देवकुरु और उत्तरकुरुमें प्राप्त होनेवाले स्त्रीवेदके बन्धक कालसे यहाँ पर शोकका बन्धक काल विशेष अधिक है। विशेषका प्रमाण कितना है ? स्त्रीवेदके बन्धक कालके संख्यातवें भागप्रमाण है।

उससे अरतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १४२ कितना अधिक है ? शोकके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है।

* उससे नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १४३ क्योंकि ईशान कल्पके देवोंमें प्राप्त होनेवाले अरति और शोकके बन्धक कालसे यहाँ पर नपुंसकवेदका बन्धक काल विशेष अधिक उपलब्ध होता है। विशेषका प्रमाण कितना है ? हास्य और रतिके बन्धक कालके संख्यात खण्ड करने पर उनमेंसे बहुभागप्रमाण है।

* उससे जुगुप्सामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १४४ क्योंकि ईशान कल्पके देवोंमें नपुंसकवेदके बन्धक कालसे जुगुप्साका बन्धक

पुरिसवेदबंधगद्धामेत्तेण विसेसाहियत्तुवलंभादो ।

❀ भये उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहियं ।

§ १४५. केत्तियमेत्तेण ? दुगुंछादव्वे आवलियाए असंखे०भागेण खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्तेण ।

❀ पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १४६. केत्तियमेत्तेण ? भयदव्वे आवलियाए असंखे०भागेण खंडिदे तत्थ एयखंडमेत्तेण ।

❀ कोधसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं ।

§ १४७. को गुणगारो ? सादिरेयछरूवाणि । तं जहा—मोहणीयदव्वस्स अद्धं णोकसायभागो $\frac{1}{2}$ । कसायभागो वि एत्तिओ चेव । तत्थ हस्स-सोगाणमेगो, रदि-अरदीणमेगो, भयस्स अण्णेगो,[1] दुगुंछाए अवरेगो, वेदस्स अण्णेगो त्ति । एवं णोकसायदव्वे पचहि विहत्ते पुरिसवेददव्वं मोहणीयदव्वस्स दसमभागमेत्तं $\frac{1}{10}$ । कोहसंजलणदव्वं[2]

काल ईशान कल्पमें गये हुए जीवोंके स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धक कालप्रमाण होनेसे विशेष अधिक उपलब्ध होता है ।

*** उससे भयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।**

§ १४५. कितना अधिक है ? जुगुप्साके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है ।

*** उससे पुरुषवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।**

§ १४६ कितना अधिक है ? भयके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है ।

*** उससे क्रोध संज्वलनमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है ।**

§ १४७. गुणकार क्या है ? साधिक छह अंक गुणकार है । यथा—मोहनीयके द्रव्यका अर्ध भागप्रमाण नोकषायका द्रव्य है $\frac{1}{2}$ । कषायका हिस्सा भी इतना ही है । नोकषायोंके द्रव्यमेंसे हास्य और शोकका एक भाग है, रति और अरतिका एक भाग है, भयका अन्य एक भाग है, जुगुप्साका अन्य एक भाग है और वेदका अन्य एक भाग है । इस प्रकार नोकषायके द्रव्यमें पाँचका भाग देने पर पुरुषवेदका द्रव्य मोहनीयके द्रव्यके दसवें भागप्रमाण प्राप्त होता है $\frac{1}{10}$ । क्रोधसंज्वलनका द्रव्य भी मोहनीयके द्रव्यके पाँच बटे आठ भागप्रमाण प्राप्त होता है,

---

1 ता० प्रतौ 'हस्ससोगायमेगो भयस्स अयणेगो' इति पाठः ।

२. ता० प्रतौ $\frac{2}{10}$ । कोहसंजलणदव्व' इति पाठः ।

सामित्तचरिमसमए ट्ठिदजीवम्मि मिच्छत्तपदेसग्गं पलिदोवमस्स असंखे० भागमेत्तगुणसंकमभागहारेण खंडिय तत्थ एयखंडस्स सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणदस्सुवलंभादो।

❀ अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं[1]।

§ १५२. सत्तमपुढविणेरइयचरिमसमए सयलदिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धाणमुवलंभादो। को गुणगारो सव्वजहण्णगुणसंकमभागहारो।

❀ कोधे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १५३. सुगमं।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १५४. सुगमं।

❀ लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १५५. सुगममेदं, पयडिविसेसमेत्तकारणत्तादो।

❀ पच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १५६. केत्तियमेत्तेण ? अपच्चक्खाणलोभउक्कस्सपदेससंतकम्मे आवलियाए असंखेज्जदिभागेण खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तेण। कुदो ? सहावदो।

जो जीव स्वामित्वके अन्तिम समयमें स्थित है उसके मिथ्यात्वके प्रदेशोंमे पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण गुणसंक्रम भागहारका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे वह सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे परिणत हो जाता है।

❀ उससे अप्रत्याख्यान मानमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

१५२. क्योंकि सातवीं पृथिवीके नारकीके अन्तिम समयमें समस्त द्रव्य डेढ गुणहानिगुणित समयप्रबद्धप्रमाण उपलब्ध होता है। गुणकार क्या है ? सबसे जघन्य गुणसंक्रमभागहार गुणकार है।

❀ उससे अप्रत्याख्यान क्रोधमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १५३ यह सूत्र सुगम है।

❀ उससे अप्रत्याख्यान मायामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १५४ यह सूत्र सुगम है।

❀ उससे अप्रत्याख्यान लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १५५ यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इसका कारण प्रकृति विशेष है।

❀ उससे प्रत्याख्यान मानमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १५६ कितना अधिक है ? अप्रत्याख्यान लोभके उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्ममें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है, क्योंकि ऐसा स्वभाव है।

---

1 ता०प्रतौ '–संतकम्म संखेज्जगुणं' इति पाठः।

* कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १५७ सुगमं, अणंतरपरूविदकारणत्तादो ।

* मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १५८ कुदो ? सहावदो चेव, तहा भावेणावट्ठाणदंसणादो ।

* लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १५९ पडिग्गहसुत्तट्ठिदपच्चक्खाण० लोभे उक्क० पदेससंतकम्मं विसे० एवं सुत्तेसु तिसु वि संबंधणिज्जं। सेसं सुगमं ।

* अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

* कोधे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

* मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

* लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६० सुगममेदं सुत्तचउक्कं ।

* सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६१ कुदो ? गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सत्तमपुढवीदो उव्वट्टिय दो-तिण्णिभवग्गहणाणि तसपज्जत्तएसुप्पज्जिय पुणो समाणिदतसट्ठिदियादो एइंदिएसु

---

* उससे प्रत्याख्यान क्रोधमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १५७. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि अनन्तर पूर्व कारणका कथन कर आये हैं ।

* उससे प्रत्याख्यानमायामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १५८. क्योंकि स्वभावसे ही उस रूपसे अवस्थान देखा जाता है ।

* उससे प्रत्याख्यान लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १५९. पहले सूत्रमें स्थित प्रत्याख्यान पदका 'लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है' यहाँ तकके इन तीनों ही सूत्रोंमें सम्बन्ध कर लेना चाहिए । शेष कथन सुगम है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मानमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मायामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १६०. ये चारों सूत्र सुगम हैं ।

* उससे सम्यक्त्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १६१. क्योंकि जो जीव गुणितकर्मांशिकविधिसे आकर और सातवीं पृथिवीसे निकलकर त्रसपर्याप्तकोंमें दो तीन भव धारण कर अनन्तर त्रसस्थितिको समाप्त कर एकेन्द्रियोंमें

वज्जिय वद्धमणुसाउओ मणुसेसुप्पज्जिय पज्जत्तीओ समाणिय णिरयाउअबंधपुरस्सरं पढमसम्मत्तमुप्पाइय दंसणमोहणीयक्खवणं पारभिय कदकरणिज्जो होदूण अंतोमुहुत्तमेत्तसम्मत्तगुणसेढिगोवुच्छासु अणंताणुबंधिलोभमावलियाए असंखे०भागेण खंडिय तत्थेगखंडमेत्तेण तत्तो अब्भहियदिवड्डगुणहाणिपमाणं मिच्छत्तसयलदव्वं पयडिविसेसदव्वादो असंखेज्जगुणहीणगुणसेढिणिज्जराणिज्जिण्णदव्वमेत्तेणूणं धरिऊण द्विदजीवम्मि णेरइएसुप्पण्णपढमसमए वट्टमाणम्मि सम्मत्तुक्कस्सपदेससामियम्मि तहाभावुवलंभादो ।

❀ मिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६२. केत्तियमेत्तेण ? णिरयादो उव्वट्टिय सम्मत्तमुक्कस्सं करेमाणस्स अंतराले जहाणिसेयसरूवेण गुणसेढिणिज्जराए च णट्ठदव्वमेत्तेण । तं च केत्तियं ? सगदव्वे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तभागहारेण खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तं । ण च एदं मिच्छत्तुक्कस्सपदेससामियम्मि असिद्धं, चरिमसमयणेरइयम्मि गुणिदकम्मंसियलक्खणेण समाणिदकम्मट्ठिदिचरिमसमए वट्टमाणम्मि अविणट्ठसरूवेण तस्सुवलंभादो ।

❀ हस्से उक्कस्सपदेससंतकम्ममणंतगुणं ।

§ १६३. कुदो ? देसघादित्तणेण सुलहपरिणामिकारणत्तादो । ण च अणंतिम-

---

उत्पन्न हो और मनुष्यायुका बन्ध कर मनुष्योंमें उत्पन्न हो तथा पर्याप्तियोंको पूर्ण कर नरकायुके बन्धपूर्वक प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न कर तथा दर्शनमोहनीयके क्षयका प्रारम्भ कर कृतकृत्य होकर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण सम्यक्त्वकी गुणश्रेणि गोपुच्छाओंमें, अनन्तानुबन्धी लोभको आवलिके असख्यातवें भागका भाग देकर जो एक भाग लब्ध आवे उससे अधिक डेढ गुणहानिप्रमाण मिथ्यात्वके समस्त द्रव्यको प्रकृतिविशेषके द्रव्यसे असख्यातगुणे हीन गुणश्रेणि निर्जराके द्वारा निर्जीर्ण हुए द्रव्यसे हीन द्रव्यको, धारण कर स्थित है उसके नारकियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके स्वामीरूपसे विद्यमान रहते हुए उस प्रकारसे प्रदेशसत्कर्म देखा जाता है ।

❀ उससे मिथ्यात्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १६२ कितना अधिक है ? नरकसे निकलकर सम्यक्त्वको उत्कृष्ट करनेवाले जीवके अन्तराल कालमें यथानिषेक क्रमसे और गुणश्रेणिनिर्जरारूपसे जितना द्रव्य नष्ट होता है उतना अधिक है ।

शंका—वह कितना है ?

समाधान—अपने द्रव्यमें पल्यके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना है । और यह मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके स्वामित्व कालमें असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि जो गुणितकर्मांशिकविधिसे आकर कर्मस्थितिको समाप्त करनेके अन्तिम समयमें नरकपर्यायके अन्तिम समयवाला होता है उसके मिथ्यात्वका समस्त द्रव्य उक्त प्रकारसे नष्ट हुए विना पाया जाता है ।

* उससे हास्यमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म अनन्तगुणा है ।

§ १६३ क्योंकि देशघाति होनेसे इसके सञ्चयका कारण सुलभ परिणाम हैं । अनन्तवें

भागमेत्तेण त्थोवयराणं चेव सव्वघादिसरूवेण परिणमणमसिद्धं, भागाभागपरूवणाए तहा परूविदत्तादो। तदो देसघादिपाहम्मेण पुव्विल्लादो एदस्साणंतगुणत्तमिदि सिद्धं। को गुण० ? अभवसिद्धिएहि अणंतगुणो सिद्धाणमणंतभागमेत्तो।

❀ रदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १६४ सुगममेदं सुत्तं, पयडिविसेसमेत्तकारणत्तादो।

❀ इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं।

§ १६५ कुदो ? गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण असंखेज्जवस्साउएसु इत्थिवेदपदेससंतकम्मं पूरेदूण अगदिकालमविण्णाएण दसवस्ससहस्साउअदेवेसुप्पज्जिय तत्थ द्विदीए समत्ताए पंचिंदिएसु सव्वमहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय णांतरीयण्णाएण पंचिंदिएसुप्पज्जिय णिरयाउअं बंधिदूण णेरइएसुप्पण्णपढमसमए वट्टमाणम्मि इत्थिवेदुक्कस्सपदेससामियणेरइयम्मि आयपरूविदबंधगद्धामाहप्पमस्सियूण इत्थिवेदुक्कस्सपदेससंतकम्मादो किंचूणस्स पयडिइत्थिवेदुक्कस्सदव्वस्स रदीए संखेज्जगुणहीणबंधगद्धासंचिदुक्कस्ससंतकम्मादो संखेज्जगुणत्तं पडि विरोहाभावादो। ण च अण्णंतरवखे गलिददव्वं पेक्खियूण तस्स तहाभावविरोहो आसंकणिज्जो, असंखे०भागत्तेण तस्स पाहण्णिया-

---

भागरूपसे स्तोक परमाणुओंका ही सर्वघातिरूपसे परिणमन होता है यह बात असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि भागाभागप्ररूपणामें इस प्रकार कथन कर आये हैं। इसलिए देशघातिकी प्रधानता होनेसे पूर्वोक्त प्रकृतिसे यह अनन्तगुणी है यह बात सिद्ध है। गुणकार क्या है ? अभव्योंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण गुणकार है।

❀ उससे रतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १६४ यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इसका कारण प्रकृतिविशेष है।

❀ उससे स्त्रीवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है।

§ १६५ क्योंकि जो गुणितकर्मांशिकविधिसे आकर असंख्यात वर्षकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न होकर और स्त्रीवेदके प्रदेशसत्कर्मको गुणित करके अगतिकगति न्यायके अनुसार दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर तथा उस स्थितिके समाप्त होने पर पंचेन्द्रियोंमें सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर नान्तरीय न्यायके अनुसार पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर और नरकायुका बन्ध करके नारकियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म करके स्थित है उसके यद्यपि बीचमें कहे गये बन्धक कालके माहात्म्यके अनुसार देवकुरु और उत्तरकुरुमें प्राप्त हुए आय उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मसे कुछ कम द्रव्य पाया जाता है फिर भी प्रकृति स्त्रीवेदका उत्कृष्ट द्रव्यके रतिके संख्यातगुणे हीन बन्धक कालके भीतर संचित हुए उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मसे संख्यातगुणा होनेमें कोई विरोध नहीं आता। यदि कोई ऐसी आशंका करे कि जिस स्थलमें बीच उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त होता है उस स्थलसे लेकर यहाँ तकके अन्तरालमें नष्ट हुए द्रव्यको देखते हुए उसका तथाभाव होनेमें विरोध आता है सो उसकी ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि अन्तरालमें जो द्रव्य नष्ट होता है वह कुल द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए

भावादो इत्थिवेदपयडिविसेसादो वि तस्स असंखे०गुणहीणत्तादो च ।

❀ सोगे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६६. सुगममेदं सुत्तं, ओघम्मि परूविदकारणत्तादो ।

❀ अरदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६७. के०मेत्तेण ? सोगदव्वमावलियाए असंखे०भागेण खंडिदेयखंडमेत्तेण। कुदो ? पयडिविसेसादो ।

❀ णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६८. ण एत्थ किंचि वत्तव्वमत्थि, ओघम्मि परूविदवंधगद्धाविसेसमासेज्ज विसेसाहियत्तसिद्धीदो । ण च वंधगद्धाविसेससंचओ णेरइयम्मि असिद्धो, ईसाण-देवेचरणेरइयम्मि परमणिरुद्धकालेण पत्ततप्पज्जायम्मि किंचूणसगोघुक्कस्ससंचयसिद्धीए बाहाणुवलभादो ।

❀ दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६६. धुववंधित्तेण इत्थि-पुरिसवेदबंधगद्धासु वि संचयुवलभादो ।

❀ भए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

उसकी कोई प्रधानता नहीं है । तथा स्त्रीवेदरूप प्रकृतिविशेष होनेके कारण भी वह असंख्यातगुणा हीन है ।

※ उससे शोकमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १६६. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि कारणका निर्देश ओघ प्ररूपणाके समय कर आये हैं ।

※ उससे अरतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १६७. कितना अधिक है ? शोकके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है, क्योंकि इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

※ उससे नपुंसकवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १६८. यहा पर कुछ वक्तव्य नहीं है, क्योंकि ओघमें कहे गये बन्धक कालका आश्रय लेकर इसके विशेष अधिकपनेकी सिद्धि होती है । यदि कहा जाय कि बन्धक काल विशेषमें होनेवाला सञ्चय नारकियोंमें नहीं वनता सो भी वात नहीं है, क्योंकि जो ईशान कल्पका देव क्रमसे नारकियोंमें उत्पन्न होता है उसके यथासम्भव कमसे कम कालके द्वारा उस पर्यायके प्राप्त होने पर कुछ कम अपने ओघ उत्कृष्ट द्रव्यके सञ्चयकी सिद्धि होनेमें कोई बाधा नहीं आती ।

※ उससे जुगुप्सामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १६६. क्योंकि यह ध्रुवबन्धिनी प्रकृति है, इसलिए इसका स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धक कालोंमें भी सञ्चय होता रहता है ।

※ उससे भयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

---

६ आ०प्रतौ 'ईसाणदेवे च णेरइयम्मि' इति पाठः ।

§ १७०. पयडिविसेसस्स सरिसभावो ।

⊛ पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १७१. अपडिवक्खत्तणेण धुवबंधिणा भयस्स णिरंतरसंचिदुक्कस्सदव्वादो सप्पडिवक्खपुरिसवेदपदेसग्गस्स कधं विसेसाहियत्तं ? ण, एदस्स वि सोहम्म पढमा-पमाएहिदिअब्भंतरे सम्मत्तगुणपाहम्मेण असवत्तस्स धुवबंधित्तेण पूरणुवलंभादो । ण च णिरयगईए इदमसिद्धं, सव्वलहुएण कालेण अविणट्ठेणेयत्तेण संचिददव्वेण णरइए-सुप्पज्जमाणसमए तस्सिद्धीदो । एवमवि दोण्हं धुवबंधीणं पदेसग्गेण सरिसेण होदव्वमिदि ण वोत्तुं जुत्तं, पयडिविसेसेण आवलियाए असंखेज्जदिभागेण संकिलिट्ठ संकमेणेण उवसमसेढीए गुणसंकमभागहारेण पडिच्छिदणोकसायदव्वभावेण च पुरिस वेदस्स विसेसाहियत्तुवलंभादो ।

⊛ माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १७२. कुदो ? पुरिसवेदभागादो माणसंजलणस्स भागस्स चउब्भाग-

§ १७० क्योंकि प्रकृति विशेष होनेसे यह इसी प्रकारकी है ।

⊛ उससे पुरुषवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १७१. शंका—भय अप्रतिपक्ष और ध्रुवबन्धिनी प्रकृति है, अतः निरन्तर संचित हुए उसके उत्कृष्ट द्रव्यसे सप्रतिपक्षरूप पुरुषवेदका प्रदेशसमूह विशेष अधिक कैसे अधिक हो सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सौधर्म कल्पमें आयुकी एक पल्यप्रमाण स्थितिके भीतर सम्यक्त्व गुणकी प्रधानतासे प्रतिपक्ष रहित इस प्रकृतिमें भी ध्रुवबन्धीरूपसे प्रदेशोंकी पूर्ति उपलब्ध होती है । यदि कहा जाय कि नरकगतिमें यह असिद्ध है सो भी बात नहीं है, क्योंकि अतिशीघ्र कालके द्वारा इस प्रकार संचित हुए द्रव्यको नष्ट किये बिना जो नारकियोंमें उत्पन्न होता है उसके वहां उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उसकी सिद्धि होती है ।

शंका—इस प्रकार होने पर भी दोनों ही ध्रुवबन्धिनी प्रकृतियोंका प्रदेशसमूह समान होना चाहिए ?

समाधान—यह कहना उचित नहीं है, क्योंकि एक तो प्रकृतिविशेष होनेके कारण आवलिके असंख्यातवें भागसे अधिक द्रव्य संचित होकर जो एक भाग प्राप्त आवे उतना पुरुषवेदमें विशेष अधिक द्रव्य उपलब्ध होता है । दूसरे उपशमश्रेणिमें गुणसंक्रमभागहारके द्वारा नोकषायोंका द्रव्य इसमें संक्रान्त हो जाता है इसलिए भी इसका द्रव्य विशेष अधिक उपलब्ध होता है । इसलिए ध्रुवबन्धिनी होते हुए भी इन दोनों प्रकृतियोंका द्रव्य एक समान नहीं है ।

⊛ उससे मानसंज्वलनमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १७२. क्योंकि पुरुषवेदके भागसे मानसंज्वलनका भाग एक चौथाई अधिक उपलब्ध

१. आ प्रतौ 'पमाण' इति पाठः ।

ब्भहियत्तुवलंभादो। तं जहा—पुरिसवेददव्वं मोहणीयसव्वदव्वं पेक्खियूण दसमभागो होदि, मोहसव्वदव्वस्स कसाय-णोकसायाणं समपविभत्तस्स पंचमभागत्तादो कसाय-णोकसायदव्वेसु पुरिसवेदभागपमाणेण कीरमाणेसु पुध पुध पंचसलागाणमुवलंभादो च। माणसंजलणदव्वं पुण मोहणीयसव्वदव्वं पेक्खियूण अट्ठमभागो, कसायभागस्स संजलणेसु चउद्धा विहज्जिय ट्ठिदत्तादो। तदो मोहसयलदव्वदसमभागभूदपुरिसवेद-सव्वसंचयादो तदट्ठमभागमेत्तमाणसजलणपदेससंचओ चउब्भागब्भहिओ त्ति सिद्धं, तम्मि तप्पमाणेण कीरमाणे चउब्भागब्भहियसयलेगसलागुवलंभादो।

§ १७३. एत्थ अव्वुप्पण्णवुप्पायणट्ठं संदिट्ठिविहिं वत्तइस्सामो। तं जहा—मोहणीयसयलदव्वपमाणं चालीस ४०। तदद्धमेत्तो कसायभागो एसो २०। णोकसायभागो वि तत्तिओ चेव २०। पुणो णोकसायभागे पंचहि भागे हिदे भाग-लद्धमेत्तमेत्तिय पुरिसवेददव्वपमाणमेदं होदि ४। कसायभागे वि चदुहि भागे हिदे लद्धमेत्त पमाण संजलणदव्वमेत्तिय होदि ५। एदं च पुरिसवेदभागे चउहि भागे हिदे जं भागलद्धं तम्मि तत्थेव पक्खित्ते उप्पज्जदि त्ति तस्स तदो चउब्भागब्भहियत्त-

होता है। यथा—पुरुषवेदका सब द्रव्य मोहनीयके सब द्रव्यको देखते हुए दसवें भागप्रमाण है, क्योंकि एक तो मोहनीयके सब द्रव्यको कषाय और नोकषायमें समानरूपसे विभक्त कर देने पर पुरुषवेदका द्रव्य प्रत्येकके पाँचवें भागप्रमाण प्राप्त होता है। दूसरे कषाय और नोकषायके द्रव्यके पुरुषवेदका जो भाग हो तत्प्रमाणरूपसे विभक्त करने पर अलग अलग पाँच शलाकाएँ उपलब्ध होती हैं। परन्तु मानसंज्वलनका द्रव्य मोहनीयके सब द्रव्यको देखते हुए उसके आठवें भाग-प्रमाण है, क्योंकि कषायका द्रव्य सज्वलनोंमें चार भागरूप विभक्त होकर स्थित है। इसलिए मोहनीयके सब द्रव्यके दसवें भागरूप पुरुषवेदके समस्त सञ्चयसे मोहनीयके समस्त द्रव्यके आठवें भागरूप मानसज्वलनका प्रदेशसञ्चय एक चतुर्थांशप्रमाण अधिक है यह सिद्ध हुआ, क्योंकि इस द्रव्यको पुरुषवेदके द्रव्यके प्रमाणरूपसे करने पर चतुर्थ भाग अधिक एक शलाका उपलब्ध होती है।

विशेषार्थ—तात्पर्य यह है कि पहिले मोहनीयके सब द्रव्यको आधा कषायमें और आधा नोकषायमे विभक्त कर दो। उसके बाद कषायके द्रव्यका एक चौथाई मानसंज्वलनको दो और नोकषाय द्रव्यका एक पञ्चमांश पुरुषवेदको दो। इस प्रकारसे विभाग करने पर मानसंज्वलनका द्रव्य मोहनीयके समस्त द्रव्यके आठवें भागप्रमाण प्राप्त होता है और पुरुषवेदका द्रव्य मोहनीयके समस्त द्रव्यके दसवें भागप्रमाण प्राप्त होता है, इसलिए यहां पुरुषवेदके द्रव्यसे मानसंज्वलनका द्रव्य एक चौथाई अधिक कहा है।

§ १७३ अब यहाँ पर अव्युत्पन्न जीवोंकी व्युत्पत्ति बढ़ानेके लिए संदृष्टिविधि बतलाते हैं। यथा—मोहनीयके समस्त द्रव्यका प्रमाण ४० है। उसके अर्धभागप्रमाण कषायका द्रव्य यह है २०। नोकषायका भाग भी उतना ही है २०। पुनः नोकषायके भागमें पाँचका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना पुरुषवेदका द्रव्य होता है। उसका प्रमाण यह है ४। कषायके भागमे भी चारका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आता है वह मानसंज्वलनका द्रव्य होता है। उसका प्रमाण यह है ५। पुनः पुरुषवेदके भागमें चारका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उसे उसीमें मिला देने पर यह मानसज्वलनका द्रव्य उत्पन्न होता है, इसलिए यह मानसंज्वलनका

असंदिद्धं सिद्धं ।

* कोधसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १७४. सुगममेत्थ कारणं, पयडिविसेसस्स बहुसो परूविदत्तादो ।

* मायासंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १७५. पयडिविसेसस्स तहाविहत्तादो ।

* लोभसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १७६. एत्थ जइ वि संदिट्ठीए चउण्हं संजलणाणं भागा सरिसा तहा वि अत्थदो पयडिविसेसेण आवलियाए असंखे०भागपडिभागिएण विसेसाहियत्तमत्थि त्ति घेत्तव्वं । सेसं सुगमं ।

एवं णिरयगइओघुक्कस्सदंडओ समत्तो ।

* एवं सेसाणं गदीणं णादूण णेदव्वं ।

§ १७७. एदस्स अप्पणासुत्तस्स संखेवरुइसिस्साणुग्गहट्ठं दव्वट्ठियणयावलंबणेण पयट्टस्स पज्जवट्ठियपरूवणा पज्जवट्ठियजणाणुग्गहट्ठं कीरदे । तं जहा—एत्थ ताव णिरयगईए चेव पुढविभेदमासेज्ज विसेसपरूवणा कीरदे । कधं पुण एदस्स णिरयगईदो अव्वदिरित्तस्स सेसत्तं जदो इमा परूवणा सुत्तसंबद्धा हवेज्ज त्ति ? ण एस

द्रव्य पुरुषवेदके द्रव्यसे एक चौथाई अधिक है यह असंदिग्ध रूपसे सिद्ध हुआ ।

* उससे क्रोधसंज्वलनमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १७४. यहाँ पर कारणका निर्देश सुगम है, क्योंकि प्रकृतिविशेषरूप कारणका अनेक बार कथन कर आये हैं ।

* उससे मायासंज्वलनमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १७५. क्योंकि प्रकृतिविशेष इसी प्रकारकी होती है ।

* उससे लोभसंज्वलनमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १७६. यहाँ पर यद्यपि संदृष्टिमें चारों संज्वलनोंके भाग समान दिखलाये हैं तथापि वास्तवमें प्रकृतिविशेष होनेके कारण आवलिके असंख्यातवें भागरूप प्रतिभागके अनुसार माया-संज्वलनके द्रव्यसे लोभसंज्वलनका द्रव्य विशेष अधिक ही है ऐसा यहाँपर ग्रहण करना चाहिए ।

इस प्रकार नरकगतिसम्बन्धी ओघ उत्कृष्ट दण्डक समाप्त हुआ ।

* इसी प्रकार शेष गतियोंमें जानकर अल्पबहुत्व ले जाना चाहिए ।

§ १७७. संक्षेप रुचिवाले शिष्योंके अनुग्रहके लिए द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन लेकर प्रवृत्त हुए इस मुख्य सूत्रका पर्यायार्थिक शिष्योंका अनुग्रह करनेके लिए विशेष कथन करते हैं । यथा—सर्व प्रथम यहाँपर नरकगतिके ही पृथिवीभेदोंके आश्रयसे विशेष कथन करते हैं ।

शंका—यदि यह सूत्र नरकगतिसे अभिन्नभूत अर्थका कथन करता है तो फिर सूत्रमें 'शेष' पदका ग्रहण क्यों किया जिससे यह कथन सूत्रसे सम्बन्ध रखनेवाला होवे ?

दोसो, सामण्णादो विसेसाणं कथंचि भेददंसणेण सेसत्तसिद्धीदो। 'उपयुक्तादन्यः शेष' इति न्यायात्।

§ १७८. तत्थ पढमपुढवीए णिरओघभंगो। विदियादि जाव सत्तमि त्ति एवं चेव। णवरि सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं सव्वत्थोवं कादव्वं, कदकरणिज्जस्स तत्थुप्पत्तीए अभावादो। तत्तो सम्मामिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्ममसंखे०गुणं। कारणं सुगमं। एत्तिओ चेव विसेसो णत्थि अण्णत्थ कत्थ वि।

§ १७९. तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्ख-पंचिं०तिरि०पज्जत्ताणं देवगईए देवाणं च सोहम्मादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति पढमपुढविभंगो। णवरि सामित्तविसेसो जाणेयव्वो। पचिं०तिरि०जोणिणी-पंचि०तिरि०अपज्ज०-मणुसअपज्ज०-भवण०-वाण०-जोदिसियाणं विदियादिपुढविभंगो। मणुसतियस्स ओघभंगो। संपहि सेसमग्गणाणं देसामासिय-भावेण इंदियमग्गणेयदेसभूदएइंदिएसु थोवबहुत्तपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तकलावं भणदि।

*** एइंदिएसु सव्वत्थोवं सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं।**

§ १८०. एत्थ एइंदिएसु त्ति सुत्तणिद्देसो सेसिंदियपडिसेहफलो। सव्वेहिंतो उवरि वुच्चमाणसव्वपदेसेहिंतो थोव अप्पयरं सव्वत्थोव। किं तं? सम्मत्ते उक्कस-

---

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि सामान्यसे अपने अवान्तर भेदोंमें कथञ्चित् भेद देखा जाता है, इसलिए 'शेष' पद द्वारा उनके ग्रहणकी सिद्धि होती है। विवक्षित विषयसे अन्य 'शेष' कहलाता है ऐसा न्यायवचन है।

§ १७८. यहाँ प्रथम पृथिवीमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवीतक इसीप्रकार भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इन पृथिवियोंमें सम्यक्त्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म सबसे स्तोक करना चाहिए, क्योंकि वहाँपर कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होता। उससे सम्यग्मिथ्यात्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है। कारण सुगम है। इन पृथिवियोंमें इतनी ही विशेषता है, अन्यत्र कहीं भी अन्य विशेषता नहीं है।

§ १७९. तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्त, देवगतिमें सामान्य देव और सौधर्मसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देव इनमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्वामित्व जान लेना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी इनमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। अब शेष मार्गणाओंके देशामर्षकरूपसे इन्द्रियमार्गणाके एकदेशभूत एकेन्द्रियोंमें अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्रकलाप कहते हैं—

*** एकेन्द्रियोंमें सम्यक्त्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म सबसे स्तोक है।**

§ १८०. यहाँ 'एकेन्द्रियोंमें' इस प्रकार सूत्रमें निर्देशका फल शेष इन्द्रियोंका निषेध करना है। सबसे ऊपर कहे जानेवाले सब प्रदेशोंसे स्तोक अर्थात् अल्पतरको सर्वस्तोक कहते हैं।

१, आ॰प्रतौ 'सुत्तिणिद्देसो' इति पाठः।

पदेससंतकम्मं। सेसपयडिपडिसेहफलो सम्मत्तणिद्देसो। अणुक्कस्सादिवियप्पणिवारणफलो उक्कस्सपदेससंतकम्मणिद्देसो। उवरि वुच्चमाणासेसपयडिपदेसुक्कस्ससंचयादो सम्मत्तुक्कस्सपदेससंतकम्मं थोवयरं ति वुत्तं होइ।

* सम्मामिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं।

§ १८१ को गुणगारो? सम्मत्तगुणसंकमभागहारस्स असंखेज्जदिभागो। तस्स को पडिभागो? सम्मामिच्छत्तगुणसंकमभागहारपडिभागो। कुदो? गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सत्तमाए पुढवीए उप्पज्जिय सगाउट्ठिदीए अंतोमुहुत्तावसेसियाए विवरीयभावं गंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि सव्वजहण्णगुणसंकमभागहारेणापूरिय सव्वलहुं मिच्छत्तं गंतूणन्तोमुहुत्तसमाणे पच्छायद-पंचिंदियतिरिक्खभवग्गहणे एइंदिएसुप्पण्णपढमसमयवट्टमाणजीवे सम्मत्तादेसुक्कस्सदव्वादो सम्मामिच्छत्तुक्कस्सपदेससंतकम्मस्स गुणसंकमभागहारविसेसादो असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। भागहारविसेसो च कत्तो णव्वदे? गुणसंकमपढमसमए मिच्छत्तादो जं सम्मत्ते संकमदि पदेसग्गं तं थोवं। तम्मि चेव समए सम्मामिच्छत्ते संकमदि पदेसग्गमसंखेज्जगुणं। पढमसमए सम्मामिच्छत्तसरूवेण संकंतपदेसपिंडादो विदियसमए सम्मत्तसरूवेण संकमंतपदेसग्गमसंखेज्जगुणं। तम्मि चेव समए सम्मामिच्छत्ते संकंत-

---

सबसे स्तोक क्या है? सम्यक्त्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म। सूत्रमें 'सम्यक्त्व' पदके निर्देशका फल शेष प्रकृतियोंका प्रतिषेध करना है। 'उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म' पदके निर्देशका फल अनुत्कृष्ट आदि विकल्पोंका निवारण करना है। आगे कहे जानेवाले समस्त प्रकृतियोंके प्रदेशोंके उत्कृष्ट संचयसे सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म स्तोकतर है यह इस कथनका तात्पर्य है।

* उससे सम्यग्मिथ्यात्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

§ १८१ गुणकार क्या है? सम्यक्त्वके गुणसंक्रमभागहारके असंख्यातवें भागप्रमाण गुणकार है। उसका प्रतिभाग क्या है? सम्यग्मिथ्यात्वका गुणसंक्रमभागहार प्रतिभाग है, क्योंकि जो जीव गुणितकर्मांशिक विधिसे आकर और सातवीं पृथिवीमें उत्पन्न होकर अपनी आयुस्थितिमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर मिथ्यात्वसे विपरीत भावको जाकर और उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त कर सबसे जघन्य गुणसंक्रम भागहारके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वको पूरकर और अतिशीघ्र मिथ्यात्वको प्राप्त कर मर कर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हो अनन्तर मर कर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर उसके प्रथम समयमें विद्यमान है उसके सम्यक्त्वके आदेश उत्कृष्ट द्रव्यकी अपेक्षा सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म गुणसंक्रमभागहार विशेषके कारण इस प्रकारका अर्थात् सम्यक्त्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे असंख्यातगुणा अधिक पाया जाता है।

शंका—भागहारविशेष किस कारणसे जाना जाता है?

समाधान—गुणसंक्रमके प्रथम समयमें मिथ्यात्वमेंसे जो प्रदेशसमूह सम्यक्त्वमें संक्रमणको प्राप्त होता है वह स्तोक है। उसी समयमें जो प्रदेशसमूह सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमणको प्राप्त होता है वह उससे असंख्यातगुणा है। प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमणको प्राप्त हुए प्रदेशपिण्डसे दूसरे समयमें सम्यक्त्वमें संक्रमणको प्राप्त हुआ प्रदेशपिण्ड असंख्यातगुणा है।

पदेसग्गमसंखेज्जगुणं ति एदस्स[1] अत्थविसेसस्स उवरि सुत्तणिबद्धस्स दंसणादो। अंतोमुहुत्तगुणसंकमकालब्भंतरावूरिदसम्मत्तसव्वदव्वसंदोहादो गुणसंकमकालचरिमेगसमयपडिच्छिदसम्मामिच्छत्तपदेसपुंजस्स असंखेज्जगुणत्तुवलद्धीदो च तत्तो तस्स तहाभावो ण विरुज्झदे।

❀ अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं।

१८२. एत्थ कारणं वुच्चदे। तं जहा—सम्मामिच्छत्तं मिच्छत्तसयलदव्वस्स असंखे०भागो, गुणसंकमभागहारेण खंडिदेयखंडमेत्तस्सेव मिच्छत्तदव्वादो[2] सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणमणुवलंभादो। अपच्चक्खाणमाणो पुण मिच्छत्तसरिसो चेव, पयडिविसेसस्स अप्पाहण्णियादो। तदो मिच्छत्तस्स असंखे०भागमेत्तसम्मामिच्छत्तदव्वादो थोरुच्चएण मिच्छत्तसरिसअपच्चक्खाणमाणपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं ति ण एत्थ संदेहो। को गुणगारो? सव्वजहण्णगुणसंकमभागहारो।

❀ कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १८३. पयडिविसेसेण पुव्विल्लदव्वे आवलियाए असंखे०भागेण खंडिदे तत्थेयखंडपमाणेण।

तथा उसी समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमणको प्राप्त हुआ प्रदेशपिण्ड उससे असंख्यातगुणा है इस प्रकार यह अर्थविशेष आगे सूत्रमें निबद्ध हुआ देखा जाता है। तथा गुणसंक्रमके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण कालके भीतर जो द्रव्यसमूह सम्यक्त्वको मिलता है उससे गुणसंक्रम कालके अन्तिम एक समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रान्त हुआ प्रदेशपुञ्ज असंख्यातगुणा है, इसलिए संक्रम भागहारके उस प्रकारके होनेमें विरोध नहीं आता।

❀ उससे अप्रत्याख्यान मानमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

§ १८२ यहाँ पर कारणका कथन करते हैं। यथा—सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य मिथ्यात्वके समस्त द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि गुणसंक्रम भागहारका भाग देने पर लब्ध एक भागप्रमाण द्रव्य ही मिथ्यात्वके द्रव्यमें से सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे परिणमन करता हुआ उपलब्ध होता है। परन्तु अप्रत्याख्यान मानका द्रव्य मिथ्यात्वके ही समान है, क्योंकि प्रकृतिविशेषकी प्रधानता नहीं है। इसलिए मिथ्यात्वके असंख्यातवें भागप्रमाण सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यसे मोटे रूपसे मिथ्यात्वके समान अप्रत्याख्यान मानका प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है इसमें सन्देह नहीं है। गुणाकार क्या है? सबसे जघन्य गुणसंक्रम भागहार गुणाकार है।

❀ उससे अप्रत्याख्यान क्रोधमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १८३. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है। यहाँ पूर्वोक्त द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है।

---

१ ता०प्रतौ '—मसखेजगुण पदेस्स' इति पाठ। २ ता०प्रतौ '—गुणसकमतिकालब्भंतरा-

महिपदुवलंभादो । एदं कुदो णव्वदे ? परमाइरियाणमुवएसादो ।

❀ लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६३ सुगममेत्थ कारणं, अणंतरमिदिरुद्धत्तादो ।

❀ मिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६४ जदि वि दोण्हमेदासिं पयडीणमेयस्स चेव गुणिदकम्मंसियणेरइयचर पच्छायदपंचिंदियतिरिक्खमवमागयमिच्छाइट्ठिम्मि पंचिंदिएसुप्पण्णपढमसमयसंठिदे सामित्तं जादं तो वि पयडिविसेसेण विसेसाहियत्तं मिच्छत्तस्स ण विरुज्झदे, बज्झकारणादो अब्भंतरकारणस्स बलिट्ठत्तादो ।

❀ हस्से उक्कस्सपदेससंतकम्ममणंतगुणं ।

§ १६५ कुदो ? सव्वघाइत्तेण पुव्वुत्तासेसपयडीणं पदेसपिंडस्स देसघादि हस्सपदेसपुंजं पेक्खियूणाणंतिमभागत्तादो । णेदमसिद्धं, भागाभागपरूवणाए तहा साहियत्तादो ।

❀ रदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १६६ जइ वि दोण्हमेदासिं पयडीणं बंधगद्धाओ सरिसाओ तो वि पयडि

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—परम आचार्यों के उपदेशसे जाना जाता है ।

❀ उससे अनन्तानुबन्धी लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १६३. यहाँ कारणका निर्देश सुगम है, क्योंकि उसका अनन्तर निर्देश कर आये हैं ।

❀ उससे मिथ्यात्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १६४. यद्यपि अनन्तानुबन्धी लोभ और मिथ्यात्व इन दोनों प्रकृतियोंका गुणित कर्मांशिक नारकियोंमें से आकर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च मिथ्यादृष्टि होनेके बाद पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें स्थित रहते हुए एक ही स्वामीमें उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त हुआ है तो भी प्रकृतिविशेष होनेके कारण मिथ्यात्वके द्रव्यका विशेष अधिक होना विरोधको नहीं प्राप्त होता, क्योंकि बाह्य कारणकी अपेक्षा आभ्यन्तर कारण बलिष्ठ होता है ।

❀ उससे हास्यमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म अनन्तगुणा है ।

§ १६५. क्योंकि पूर्वोक्त अशेष प्रकृतियाँ सर्वघाति हैं । उनका प्रदेशपिण्ड देशघाति हास्य प्रकृतिके प्रदेशपुञ्जकी अपेक्षा अनन्तवें भागप्रमाण है । और यह असिद्ध नहीं है, क्योंकि भागाभागप्ररूपणामें इस प्रकारसे सिद्ध कर आये हैं ।

❀ उससे रतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

यद्यपि इन दोनों प्रकृतियोंका बन्धक काल समान है तो भी प्रकृतिविशेष होनेके

विसेसमासेज्ज विसेसाहियत्तं ण विरुज्झदे, ढुक्कमाणकाले चेय तहाभावेण परिणाम-दसणादो।

❀ इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं।

§ १९७. कुरवेसु हस्स-रदिबंधगद्धादो संखेज्जगुणसगबंधगद्धाए इत्थिवेदं पूरेऊण दसवस्ससहस्साउअदेवेसु थोवयरदव्वमधट्ठिदीए गालेयूण एइंदिएसुप्पण्णपढमसमय-मट्ठियहियजीवम्मि तस्स तदो संखेज्जगुणत्तुवलंभादो।

❀ सोगे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १९८. सुगममेदं, ओघपरूविदबंधगद्धाविसेसवसेण संखे० भागब्भहियत्तुव-लंभादो।

❀ अरदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ १९९. सुगमं, पयडिविसेसस्स असइं परूविदत्तादो।

❀ णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २००. कुदो ईसाणदेवाणमरदि-सोगबंधगद्धादो विसेसाहियतत्थतणतस-थावरबंधगद्धासबंधिणवुंसयवेदबंधकाले संचिदत्तादो।

कारण इसका विशेष अधिक होना विरोधको प्राप्त नहीं होता, क्योंकि इस प्रकृतिरूप बन्ध होते समय या संक्रमण होते समय ही इस प्रकारका परिणमन देखा जाता है।

❀ उससे स्त्रीवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है।

§ १९७ क्योंकि जो जीव देवकुरु और उत्तरकुरुमें हास्य और रतिके बन्धक कालसे संख्यातगुणे अपने बन्धक कालके भीतर स्त्रीवेदको पूरकर अनन्तर दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें अधःस्थितिगलनाके द्वारा अत्यन्त स्तोक द्रव्यको गला कर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें स्थित रहते हुए स्त्रीवेदमें रतिके द्रव्यसे संख्यातगुणा द्रव्य पाया जाता है।

❀ उससे शोकमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १९८. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि ओघमें कहे गये बन्धक काल विशेषके वशसे शोकमें संख्यातवाँ भाग अधिक द्रव्य उपलब्ध होता है।

❀ उससे अरतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १९९ यह सूत्र सुगम है, क्योंकि प्रकृतिविशेषरूप कारणका अनेक वार कथन कर आये हैं।

* उससे नपुंसकवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २००. क्योंकि ईशान कल्पके देवोंमें अरति और शोकके बन्धक कालसे वहाँ के त्रस और स्थावरके बन्धककालसम्बन्धी विशेष अधिक कालमें नपुंसकवेदका सञ्चय होता है।

* मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १८४. कुदो? पयडिविसेसादो। केत्तियमेत्तेण? कोधदव्वमावलियाए असंखे०भागेण खंडेदूण तत्थेयखंडमेत्तेण। एदं कुदो णव्वदे? परमगुरूवदेसादो। ण चप्पमाणा, णाणविण्णाणसंपण्णाणं तेसिं पयत्ताणं मुसावादे पओजणाभावादो।

* लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १८५. कुदो, पयडिविसेसेण, पुव्वुत्तपमाणेण पयडिविसेसादो चेव एदस्स अहियत्तुवलंभादो।

* पच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १८६. जइ वि सव्वेसिं कसायाणमोघुक्कस्सपदेससंतकम्मसामियणेरइयचरिमम्मि पच्छायदपंचिंदियतिरिक्खभवग्गहणम्मि एइंदिएसुप्पण्णपढमसमए वट्टमाणम्मि अक्कमेण सामित्तं जादं तो वि णिस्संसयं चेव पुव्विल्लादो एदस्स विसेसाहियत्तं पडिवज्जेयव्वं, जिणाणमण्णहावाइत्ताभावादो। ण हि रागादिभाववियारसंपुण्णा जिणा वितहवाइणो संति, तेसु तक्कारणाणमणुवलंभादो।

* कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

---

* उससे अप्रत्याख्यान मायामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १८४. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है। कितना अधिक है? क्रोधके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—परम गुरुके उपदेशसे जाना जाता है। परन्तु वे असत्य नहीं हो सकते, क्योंकि ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न स्वरूप उनके मृषा भाषण करनेका कोई प्रयोजन नहीं है।

* उससे अप्रत्याख्यान लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १८५. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है, अतः प्रकृतिविशेष होनेके कारण ही इसका प्रमाण पूर्वोक्त प्रकृतिके प्रमाणसे अधिक पाया जाता है।

* उससे प्रत्याख्यान मानमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १८६. यद्यपि सभी कषायोंका ओघसे उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म नारकियोंके अन्तिम समयमें प्राप्त होता है इसलिए वहाँसे पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें मर कर उत्पन्न होनेके बाद एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर उनके प्रथम समयमें विद्यमान रहते हुए सबका एक साथ उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त हुआ है तो भी निःसंशय ही पहलेकी प्रकृतिसे इसका द्रव्य विशेष अधिक जानना चाहिए, क्योंकि जिनदेव अन्यथावादी नहीं होते। खुलासा यह है कि रागादि भावविकारोंसे रहित जिनदेव असत्य उपदेश नहीं करते, क्योंकि उनमें असत्य उपदेश करनेका कारण नहीं पाया जाता।

* उससे प्रत्याख्यान क्रोधमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

---

१ ता० प्रतौ 'खंडेदूण' इति पाठः। २ ता० प्रतौ 'विसेस (स) मुप्पत्ति' आ० प्रतौ 'विसेसमुप्पत्ति' इति पाठः।

§ १८७. कुदो ? सहावविसेसादो । न हि भावस्वभावाः पर्यनुयोज्याः, अन्यत्रापि तथातिप्रसङ्गात् । विशेषप्रमाणं सुगमं, असकृद्विमृष्टत्वात् ।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १८८. सुगममेदं, पयडिविसेसवसेण तहाभावुवलंभादो ।

❀ लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १८९. एदं पि सुगमं, विस्ससापरिणामस्स तारिसत्तादो ।

❀ अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १९०. पयडिविसेसेण आवलियाए[1] असंखे०भागपडिभागिएण । कुदो ? पयडिविसेसादो ।

❀ कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १९१. सुगममेदं, पयडिविसेसेण तहावट्ठिदत्तादो ।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १९२. विस्ससादो आवलियाए असंखे०भागेण खंडिदपुव्विल्लदव्वमेत्तेण

---

§ १८७. क्योंकि ऐसा स्वभावविशेष है। और पदार्थो के स्वभाव शंका करने योग्य नहीं होते, क्योंकि अन्यत्र वैसा मानने पर अतिप्रसङ्ग दोष आता है। विशेषका प्रमाण सुगम है, क्योकि उसका अनेक बार परामर्श कर आये हैं।

* उससे प्रत्याख्यान मायामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १८८. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि प्रकृतिविशेष होनेके कारण उसरूपसे उसकी उपलब्धि होती है।

* उससे प्रत्याख्यान लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १८९. यह सूत्र भी सुगम है, क्योंकि स्वभावसे इसका इसप्रकारका परिणमन होता है।

* उससे अनन्तानुबन्धी मानमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १९०. कारण कि प्रकृतिविशेष आवलिके असंख्यातवें भागके प्रतिभागरूपसे है, क्योंकि प्रकृतिविशेष है।

* उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १९१. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि प्रकृतिविशेष होनेके कारण यह उस प्रकारसे अवस्थित है।

* उससे अनन्तानुबन्धी मायामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ १९२ क्योंकि पूर्वोक्त प्रकृतिके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो लब्ध आवें उतना इसमें स्वभावसे अधिक उपलब्ध होता है।

---

1 आ० प्रतौ 'विसेसाहिय । आवलियाए' इति पाठः ।

अहियगुणसंभवादो । एदं कुदो णव्वदे ? परमाइरियाणमुवएसादो ।

❀ लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १९३ सुगममेत्थ कारणं, अणंतरणिद्दिट्ठत्तादो ।

❀ मिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १९४ जदि वि दोण्हमेदासिं पयडीणमेयस्स चेव[1] गुणिदकम्मंसियणेरइयचरपच्छायदपंचिंदियतिरिक्खसण्णिमिच्छाइट्ठिजीवे एइंदिएसुप्पण्णपढमसमयम्मि सामित्तं जादं तो वि पयडिविसेसेण विसेसाहियत्तं मिच्छत्तस्स ण विरुज्झदे, बज्झकारणादो अब्भंतरकारणस्स बलिट्ठत्तादो ।

❀ हस्से उक्कस्सपदेससंतकम्ममणंतगुणं ।

§ १९५ कुदो ? सव्वघादित्तेण पुव्वुत्तासेसपयडीणं पदेसपिंडस्स देसघादिहस्सपदेसग्गं पेक्खियूणाणंतिमभागत्तादो । णेदमसिद्धं, भागाभागपरूवणाए तहा साहियत्तादो ।

❀ रदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १९६ जइ वि दोण्हमेदासिं पयडीणं बंधगद्धाओ सरिसाओ तो वि पयडि

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—परम आचार्यों के उपदेशसे जाना जाता है ।

❀ उससे अनन्तानुबन्धी लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १९३. यहाँ कारणका निर्देश सुगम है, क्योंकि इसका अनन्तर निर्देश कर आये हैं ।

❀ उससे मिथ्यात्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १९४ यद्यपि अनन्तानुबन्धी लोभ और मिथ्यात्व इन दोनों प्रकृतियोंका गुणितकर्मांशिक नारकियोंमें से आकर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च मिथ्यादृष्टि होनेके बाद एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें स्थित रहते हुए एक ही स्थानमें उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त हुआ है तो भी प्रकृतिविशेष होनेके कारण मिथ्यात्वके द्रव्यका विशेष अधिक होना विरोधको नहीं प्राप्त होता, क्योंकि बाह्य कारणकी अपेक्षा आभ्यन्तर कारण बलिष्ठ होता है ।

❀ उससे हास्यमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म अनन्तगुणा है ।

§ १९५. क्योंकि पूर्वोक्त अशेष प्रकृतियाँ सर्वघाति हैं । उनका प्रदेशपिण्ड देशघाति हास्य प्रकृतिके प्रदेशसमूहकी अपेक्षा अनन्तवें भागप्रमाण है । और यह असिद्ध नहीं है, क्योंकि भागाभागप्ररूपणामें इस प्रकारसे सिद्ध कर आये हैं ।

❀ उससे रतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १९६. यद्यपि इन दोनों प्रकृतियोंका बन्धक काल समान है तो भी प्रकृतिविशेष होनेके

---

१ ता॰ प्रतौ 'मेयस्स चेव' इति पाठः ।

विसेसमासेज्ज विसेसाहियत्तं ण विरुज्झदे, ढुक्कमाणकाले चेय तहाभावेण परिणाम-दंसणादो ।

❀ इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं ।

§ १९७. कुरवेसु हस्स-रदिबंधगद्धादो संखेज्जगुणसगबंधगद्धाए इत्थिवेदं पूरेऊण दसवस्ससहस्साउअदेवेसु थोवयरदव्वमधट्ठिदीए गालेयूण एइंदिएसुप्पण्णपढमसमय-मट्ठियट्ठियजीवम्मि तस्स तदो सखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

❀ सोगे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ १९८. सुगममेद, ओघपरूविदबंधगद्धाविसेसवसेण संखे०भागब्भहियत्तुव-लंभादो ।

❀ अरदीए उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहियं ।

§ १९९. सुगमं, पयडिविसेसस्स असइं परूविदत्तादो ।

❀ णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २००. कुदो ईसाणदेवाणमरदि-सोगबंधगद्धादो विसेसाहियतत्थतणतस-थावरबंधगद्धासबंधिणवुंसयवेदबंधकाले संचिदत्तादो ।

कारण इसका विशेष अधिक होना विरोधको प्राप्त नहीं होता, क्योंकि इस प्रकृतिरूप बन्ध होते समय या संक्रमण होते समय ही इस प्रकारका परिणमन देखा जाता है ।

❀ उससे स्त्रीवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म सख्यातगुणा है ।

§ १९७. क्योंकि जो जीव देवकुरु और उत्तरकुरुमें हास्य और रतिके बन्धक कालसे संख्यातगुणे अपने बन्धक कालके भीतर स्त्रीवेदको पूरकर अनन्तर दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें अधःस्थितिगलनाके द्वारा अत्यन्त स्तोक द्रव्यको गला कर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें स्थित रहते हुए स्त्रीवेदमें रतिके द्रव्यसे संख्यातगुणा द्रव्य पाया जाता है ।

❀ उससे शोकमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १९८. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि ओघमें कहे गये बन्धक काल विशेषके वशसे शोकमें सख्यातवाँ भाग अधिक द्रव्य उपलब्ध होता है ।

❀ उससे अरतिमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ १९९ यह सूत्र सुगम है, क्योंकि प्रकृतिविशेषरूप कारणका अनेक वार कथन कर आये हैं ।

* उससे नपुंसकवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २००. क्योंकि ईशान कल्पके देवोंमें अरति और शोकके बन्धक कालसे वहाँ के त्रस और स्थावरके बन्धककालसम्बन्धी विशेष अधिक कालमें नपुसकवेदका सञ्चय होता है ।

❀ दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २०१ धुवबंधित्तादो इत्थि-पुरिसवेदबंधगद्धासु वि संचयसंभवादो ।

❀ भए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २०२ कुदो ? पयडिविसेसादो ।

❀ पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २०३ केत्तियमेत्तेण ? भयदव्वमावलियाए असंखेज्जदिभाएण खंडिदूण तत्थेयखंडमेत्तेण । कुदो ? सोहम्मे सम्मत्तपहावेण धुवबंधित्ते संते पुरिसवेदस्स पयडि-विसेसादो अहियत्तुवलंभादो ।

❀ माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २०४ केत्तियमेत्तेण ? पुरिसवेददव्वचउब्भागमेत्तेण । सेसं सुगमं ।

❀ कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २०५ एत्थ पुव्विल्लसुत्तादो संजलणग्गहणमणुवट्टदे । पयडिविसेसादो च विसेसाहियत्तं । सेसं सुगमं ।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

❀ उससे जुगुप्सामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २०१ क्योंकि ध्रुवबन्धी होनेसे इसका स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धक कालोंमें भी सञ्चय उपलब्ध होता है ।

❀ उससे भयमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २०२ क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है ।

❀ उससे पुरुषवेदमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २०३ कितना अधिक है ? भयके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देनपर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है क्योंकि सौधर्म कल्पमें सम्यक्त्वके प्रभाववश पुरुषवेद ध्रुवबन्धी हो जाता है, इसलिए प्रकृतिविशेष होनेके कारण उसमें अधिक द्रव्य उपलब्ध होता है ।

❀ उससे मानसंज्वलनमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २०४ कितना अधिक है ? पुरुषवेदके द्रव्यका एक चौथाई अधिक है । शेष कथन सुगम है ।

❀ उससे क्रोधसंज्वलनमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २०५ यहाँ पर पूर्वके सूत्रमेंसे संज्वलन पदकी अनुवृत्ति होती है और प्रकृतिविशेष होनेके कारण इसका द्रव्य विशेष अधिक सिद्ध होता है । शेष कथन सुगम है ।

❀ उससे संज्वलन मायामें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

❀ लोहे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २०६. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि, पयडिविसेसमेत्तकारणत्तादो[1] । एवं जाव अणाहारए त्ति सुत्ताविरोहेण आगमणिउणेहि उक्कस्सप्पाबहुअं चिंतिय णेदव्वं । किमट्ठमेदस्स एइंदियउक्कस्सपदेसप्पाबहुअदंडयस्स देसामासियभावेण संगहियासेसमग्गणाविसेसस्स विसेसपरूवणा तुम्हेहि ण कीरदे? ण, सुगमत्थपरूवणाए फलाभावेण तदकरणादो । ण सेसमग्गणप्पाबहुअपरूवणाए सुगमत्तमसिद्धं, ओघगइमग्गणेइंदियदंडएहि चेव सेसासेसमग्गणाणं पाएण गयत्थत्तदंसणादो । संपहि उक्कस्सप्पाबहुअपरिसमत्तिसमणंतरं जहावसरपत्तजहण्णपदेसप्पाबहुअपरूवणट्ठं जइवसहभयवंतो पइज्जासुत्तमाह ।

❀ जहण्णदंडओ ओघेण सकारणो भणिहिदि ।

§ २०७. एदस्स वत्तव्वपइज्जासुत्तस्स अत्थविवरणं कस्सामो । तं जहा—अप्पाबहुअं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सयं चेदि । तदुभयविसेसयत्तेण दंडयाणं पि तव्ववएसो। तत्थ सउक्कस्सदंडयपडिसेहफलो जहण्णदंडयणिद्देसो । जइ एवं ण वत्तव्वमेदं, उक्कस्स-

---

❀ उससे संज्वलन लोभमें उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २०६ ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं, क्योंकि विशेष अधिकका कारण प्रकृति विशेषमात्र है । इस प्रकार आगममें निपुण जीवोंको सूत्रके अविरोधरूपसे अनाहारक मार्गणा तक उत्कृष्ट अल्पबहुत्वका विचार कर ले जाना चाहिए ।

शंका—देशामर्षकरूपसे जिसमें समस्त मार्गणासम्बन्धी विशेषता का संग्रह हो गया है ऐसे इस एकेन्द्रियसम्बन्धी उत्कृष्ट प्रदेश अल्पबहुत्व दण्डककी विशेष प्ररूपणा आप क्यों नहीं करते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि इसकी अर्थप्ररूपणा सुगम है, उसका कोई फल नहीं है, इस लिए अलगसे प्ररूपणा नहीं की है । यदि कहा जाय कि शेष मार्गणाओंमे अल्पबहुत्वप्ररूपणाकी सुगमता असिद्ध है सो भी बात नहीं है, क्योंकि ओघदण्डक, गतिमार्गणादण्डक और एकेन्द्रियदण्डकके कथनसे प्रायः कर समस्त मार्गणाओंका ज्ञान देखा जाता है ।

अब उत्कृष्ट अल्पबहुत्वकी समाप्तिके अनन्तर यथावसर प्राप्त जघन्य प्रदेशअल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए यतिवृषभ भगवान् प्रतिज्ञासूत्र कहते हैं—

❀ जघन्य दण्डक कारण सहित ओघसे कहेंगे ।

§ २०७ इस वक्तव्यरूप प्रतिज्ञासूत्रके अर्थका विवरण करते हैं । यथा—अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । इन दोनोंसे विशेषित होकर दण्डकोंकी भी वही संज्ञा है । उनमेंसे जघन्य दण्डकके निर्देश करनेका फल अपने उत्कृष्ट दण्डकका निषेध करना है ।

शंका—यदि ऐसा है तो 'जघन्य दण्डक' पदका निर्देश नहीं करना चाहिए, क्योंकि

---

१ ता०प्रतौ '-विसेसकारणत्तादो' इति पाठः । २. ता०प्रतौ 'स (य) उक्कस्स-' इति पाठः ।

दव्वस्स सुत्तेणेव परूविदत्तादो पारिसेसियण्णाएण एदस्स अणुत्तसिद्धीदो त्ति ? ण एस दोसो, मंदबुद्धिसिस्साणुग्गहट्ठं तहा परूवणादो । अदो चेव एदस्स वि पइण्णासुत्तस्स सव्वाणुसारिसिस्सस्स पुच्छावारणफलस्स वक्खाणासो सहलो, अण्णहा पेक्खापुव्वयारीणमणादरणीयत्तादो । एदेण सव्वसत्ताणुग्गहकारित्तं भयवंताणं सूचिदं । अहवा जहण्णसामित्तम्मि परूविदअजहण्णट्ठाणवियप्पाणमणंतभेयभिण्णाणं णिरायरणट्ठं जहण्णदव्वणिद्देसो त्ति वत्तव्वं ।

§ २०८ तस्स दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । तत्थ आदेसपुदासट्ठमोघेणे त्ति वयणं । वक्खाणकारयाणमाइरियाणं पोच्छावणफलो सकारणो भणिहिदि त्ति सुत्तावयवणिद्देसो, अण्णहा अक्खवणाभावेण बहुस्सुदाणं थोवसुदकारणावगमण-परूवणं तदणुसिस्साणमणुववत्तीदो । दिसादरिसणमेदं चेदं, सम्मत्तजहण्ण-पदेससंतकम्मादो सम्मामिच्छत्तजहण्णपदेससंतकम्मबहुत्तमेत्थ चेव उवरिमपदाणं बीज-पदभावेण सुत्ते कारणपरूवणादो । एत्थ सह कारणेण वट्टमाणो जहण्णदंडओ ओघेण भणिहिदि त्ति पदसंबंधो कायव्वो । सेसं सुगमं ।

* सव्वत्थोवं सम्मत्ते जहण्णपदेससंतकम्मं ।

इसका द्रव्यकथन पहले ही कथन कर आये हैं, इसलिए पारिशेष न्यायके अनुसार बिना कहे ही इसकी सिद्धि हो जाती है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि मन्दबुद्धि शिष्योंका अनुग्रह करनेके लिए इस प्रकारसे कथन किया है और इसीसे ही सर्वानुसारी शिष्यकी पृच्छाके फलस्वरूप इस प्रतिज्ञासूत्रका भी कथन सफल है, अन्यथा प्रेक्षापूर्वक व्यवहार करनेवालोंके लिए यह आदरणीय नहीं हो सकता । इससे भगवान् सब जीवोंका अनुग्रह करनेवाले होते हैं यह सूचित होता है । अथवा जघन्य स्वामित्वके समय कहे गये अनन्त भेदोंके लिए हुए अजघन्य स्थानोंके विकल्पोंका निराकरण करनेके लिए सूत्र में 'जघन्य द्रव्यका' पदका निर्देश करना चाहिए ।

§ २०८. उसका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । उनमेंसे आदेश निर्देशका निराकरण करनेके लिए सूत्रमें 'ओघसे' पदका निर्देश किया है । व्याख्यानकारक आचार्योंकी पृच्छाके फलस्वरूप 'सकारण कहेंगे' इस सूत्रावयवका निर्देश किया है, अन्यथा अल्पश्रुतके कारणका जो भी ज्ञान है उसका कथन बहुश्रुतोंके बिना अल्पज्ञजनोंके आगमयुक्ति पुरस्सर है यह नहीं बन सकता । यह सूत्र दिशामात्रका कथन करता है, क्योंकि सम्यक्त्वके जघन्य प्रदेशसत्कर्मसे सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म बहुत है इससे आगेके ऊपरके पद बीजपदरूपसे सूत्रमें कारणका निरूपण करते हैं । यहाँ पर कारण सहित विद्यमान जघन्य दण्डक ओघसे कहेंगे इस प्रकार पदसम्बन्ध करना चाहिए । शेष कथन सुगम है ।

* सम्यक्त्वमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म सबसे स्तोक है ।

---

१ आ० प्रतौ अक्ख बोवेण आयेण- इति पाठः ।

§ २०६. एदस्स जहण्णप्पाबहुअदंडयमूलसुत्तस्स अवयवत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—सव्वेहिंतो उवरि वुच्चमाणासेसपयडिजहण्णपदेसपडिबद्धपदेहिंतो थोवमप्पयरं सव्वथोव। किं तं? सम्मत्ते[1] जहण्णपदेससंतकम्मं। एत्थ सेस-पयडिपडिसेहफलो सम्मत्तणिद्देसो। जहण्णणिद्देसो अजहण्णादिवियप्पणिवारणफलो। ट्ठिदि-अणुभागादिवुदासट्ठो पदेसणिद्देसो। बंधादिविसेसपडिसेहट्ठं संतकम्मं ति वयण। खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण णिरदिचारेहि असिधाराचरियाए कम्मट्ठिदि-मेत्तकालं सचरिय थोवाउएसु असण्णिपचिंदिएसुववज्जिय देवाउअबंधवसेण देवेसुप्पज्जिय छप्पज्जत्तिसमाणणवावारेण अंतोमुहुत्ते गदे उक्कस्सअपुव्वकरणादिपरिणामेहि गुणसेढि-णिज्जरमुक्कस्सं काऊण उवसमसम्मत्तलंभपढमसमयप्पहुडि सव्वजहण्णगुणसंकमकालेण सव्वुक्कस्सगुणसंकमभागहारेण च थोवयरं मिच्छत्तदव्वं सम्मत्तसरूवेण परिणमाविय वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय मिच्छत्तं गंतूण दीहुव्वेल्लण-कालेणुव्वेल्लिय सम्मत्तचरिमफालिं मिच्छत्तसरूवेण परिणमाविय एगणिसेगं दुसमय-कालं धरेयूग ट्ठिदजीवस्स य सम्मत्तजहण्णपदेससंतकम्मं सेसपयडिजहण्णपदेसेहिंतो[2]

§ २०६ जघन्य अल्पबहुत्व दण्डकके मूलरूप इस सूत्रके अवयवोंके अर्थका कथन करते हैं। यथा—सबसे अर्थात् आगे कही जानेवाली सब प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशोंसे सम्बन्ध रखनेवाले प्रदेशोंसे स्तोक अर्थात् अल्पतर सर्वस्तोक कहलाता है। वह सर्वस्तोक क्या है? सम्यक्त्वमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म। यहाँ सम्यक्त्व पदके निर्देशका फल शेष प्रकृतियोंका प्रतिषेध करना है। जघन्य' पदके निर्देश करनेका फल अजघन्य आदि विकल्पोंका निवारण करना है। स्थिति और अनुभाग आदिका निवारण करनेके लिए 'प्रदेश' पदका निर्देश किया है। बन्ध आदि विशेषोंका निषेध करनेके लिए 'सत्कर्म' यह वचन दिया है। जो क्षपितकर्मांशिक विधिसे आकर निरतिचाररूपसे असिधारा चर्याके द्वारा कर्मस्थितिप्रमाण काल तक परिभ्रमण करके पुनः स्तोक आयुवाले असञ्ज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर और देवायुका बन्ध होनेसे देवोंमें उत्पन्न होकर छह पर्याप्तियोंको पूर्ण करने रूप व्यापारके द्वारा अन्तर्मुहूर्त काल जाने पर अपूर्वकरण आदि परिणामोंके द्वारा उत्कृष्ट गुणश्रेणिनिर्जरा करके उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयसे लेकर सबसे जघन्य गुणसंक्रम काल और सबसे उत्कृष्ट गुणसंक्रमभागहारके द्वारा मिथ्यात्वके स्तोकतर द्रव्यको सम्यक्त्वरूपसे परिणमा कर अनन्तर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कर उसके साथ दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करके अनन्तर मिथ्यात्वमें जाकर सबसे दीर्घ उद्वेलना कालके द्वारा अन्तमें सम्यक्त्वकी अन्तिम फालिको मिथ्यात्वरूपसे परिणमा कर दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकको धारण कर स्थित है उसके सम्यक्त्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म शेष प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशोंको देखते हुए स्तोकतर होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—इसका स्तोकपना कैसे है?

---

१ ता०प्रतौ किंतु (त) सम्मत्ते' आ०प्रतौ किंतु सम्मत्ते' इति पाठः। २ ता०प्रतौ '–जहण्ण-पदेहिंतो' इति पाठः।

बादयरं ति घुत्त होदि । कुदो एदस्स थोवत्तं ? ओकड्डुक्कड्डणभागहारगुणिदगुणसंक-मभागहारस्स भागहारपडुप्पण्णाए वेछावट्ठिसागरोवमणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थ-रासीए दीवुच्छेदणयमज्झिमरवणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा चरिम-फालिआयामेण च गुणिदाए भागहिदविदियगुणहाणिमेत्तदिवड्डसमयपबद्धपमाणत्तादो । एदं च दव्वं उवरिमपयडिपदेसेहिंतो थोवयरत्तस्स णायसिद्धत्तादो । होतं पि असंखेज्ज-समयपबद्धपमाणं ति घेत्तव्वं, हेट्ठिमासेसभागहारकलावादो समयपबद्धगुणगार-भूददिवड्डगुणहाणीए असंखेज्जगुणत्तादो । समयपबद्धगुणगारकारणो मइमंदत्तं-भणिहिदि ति पइज्जं काऊण एदस्स सुत्तपदस्स थोवत्ते कारणमभणंतस्स सुत्तयारस्स पुव्वावरविरोहदोसो ति णासंकणिज्जं, बादरादो एदम्हादो अण्णेसिं बहुत्तकारण-परूवणाए सुत्तयारेण पारद्धाए कयत्तादो । सुगमं वा एत्थ कारणमिदि तदपरूवण-माइरियभडारयस्स ।

※ सम्मामिच्छत्ते जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

§ २१ कुदो ? सम्मत्तस्स एगेगट्ठिदीहिंतो सम्मामिच्छत्तपमाणेगेग-ट्ठिदीणमसंखेज्जगुणत्तुवलंभादो । कुदो उभयत्थ भागहाराणं सरिसत्ते संते सम्मत-

समाधान—अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसे गुणसंक्रम भागहारके साथ गुणा कर जो लब्ध आवे उससे उत्पन्न हुए जो दो छयासठ सागरोंकी नानागुणहानि शलाकाओंकी अन्योन्या-भ्यस्तराशि उसे दीपशिखाके भीतर नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिसे और अन्तिम फालिके आयामसे गुणित करने पर जो लब्ध आवे उसका डेढ़ गुणहानिमात्र प्रथमस्थितिके समयप्रबद्धोंमें भाग देने पर इसका प्रमाण आता है और यह द्रव्य उपरिम प्रकृतियोंके प्रदेशोंसे स्तोकतर है यह न्यायसिद्ध है । यह सबसे स्तोक होता हुआ भी असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि नीचेके समस्त भागहारकलापसे समयप्रबद्धकी गुणकारभूत डेढ़ गुणहानि असंख्यातगुणी है ।

शंका—समयप्रबद्धके गुणकारके कारणके साथ जघन्य द्रव्यका कथन करेंगे ऐसी प्रतिज्ञा करके इस सूत्रपदके स्तोकपनेके कारणको नहीं कहनेवाले सूत्रकार पूर्वापर विरोधरूप दोषके भागी ठहरते हैं ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि सूत्रकारने स्तोकरूप सम्यक्त्वके द्रव्यसे अन्य प्रकृतियोंके द्रव्यके बहुत होनेका कारण कहेंगे ऐसी प्रतिज्ञा की है । अथवा यहाँ पर कारण सुगम है, इसलिए आचार्य भट्टारकने उसका कथन नहीं किया ।

※ उससे सम्यग्मिथ्यात्वमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

§ २१ क्योंकि सम्यक्त्वसम्बन्धी एक एक स्थितिसे सम्यग्मिथ्यात्वसम्बन्धी एक एक स्थिति असंख्यातगुणी उपलब्ध होती है ।

शंका—उभयत्र भागहारके समान होते हुए सम्यक्त्व और

१ आ प्रतौ -दिवड्डगुणहाणिमेत्ते (त) ट्ठिदिय-' इति पाठः ।

सम्मामिच्छत्तसमाणट्ठिदिट्ठिदगोवुच्छाणमेव विसरिसत्तं ? ण, मिच्छत्तादो सम्मत्त-सरूवेण परिणमंतदव्वस्स गुणसंकमभागहारादो तत्तो चेव सम्मामिच्छत्तसरूवेण संकमंतपदेसग्गगुणसंकमभागहारस्स असंखेज्जगुणहीणत्तुवलंभादो। ण चेदमसिद्धं, गुणसंकमपढमसमए मिच्छत्तादो जं सम्मत्ते संकमदि पदेसग्ग [तं] थोवं। तम्मि चेव समए सम्मामिच्छत्ते संकमदि पदेसग्गमसंखेज्जगुणं ति सुत्तादो तस्स सिद्धीए। ण च भागहारविसेसमतरेण दव्वस्स तहाभावो जुज्जदे, विरोहादो। एत्थ सम्मामि० गुणसंकमभागहारोवट्टिदसम्मत्तगुणसंकमभागहारो गुणगारो। कधं पुण विसेस-घादवसेण[1] पुव्वमेव सम्मत्तस्स जहण्णत्ते संते उवरि पलिदोवमस्स असंखे०भाग-मेत्तद्धाणं गंतूण पत्तजहण्णभावं सम्मामिच्छत्तपदेसग्गं तत्तो असंखेज्जगुणं, उवरुवरि एगेगगोवुच्छविसेसाण हाणिदंसणादो। तदो ण एदस्स असंखेज्जगुणत्तं सम्ममवगमदि त्ति संदेहेण घुलमाणहिययस्स सिस्सस्स अहिप्पायमासंकिय सुत्तयारो पुच्छा-सुत्तं भणदि—

❀ केण कारणेण ?

२११. एदस्स भावत्थो जइ उवरिमसम्मामिच्छत्तुव्वेल्लणकालब्भंतरे असंखेज्ज-

---

सम्यग्मिथ्यात्वकी समान स्थितियोंमें स्थित गोपुच्छाएँ इस प्रकार विसदृश कैसे होती हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वमेंसे सम्यक्त्वरूप परिणमन करनेवाले द्रव्यके गुणसंक्रम भागहारसे उसीमेंसे सम्यग्मिथ्यात्वरूप संक्रम करनेवाले प्रदेशसमूहका गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणा हीन उपलब्ध होता है। और यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि गुणसंक्रमके प्रथम समयमें मिथ्यात्वमेंसे जो प्रदेशसमूह सम्यक्त्वमें संक्रमणको प्राप्त होता है वह स्तोक है और उसी समयमें सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमणको प्राप्त होनेवाला प्रदेशसमूह असंख्यातगुणा है इस सूत्रसे उसकी सिद्धि होती है और भागहारविशेषके विना द्रव्यका उस प्रकारका होना बन नहीं सकता, क्योंकि विरोध आता है।

यहाँ पर सम्यक्त्वके द्रव्यसे सम्यग्मिथ्यात्वका असंख्यातगुणा द्रव्य लानेके लिए सम्यग्मिथ्यात्वके गुणसंक्रमभागहारसे भाजित सम्यक्त्वका गुणसंक्रमभागहार गुणकार है। विशेष घातके वशसे सम्यक्त्वके द्रव्यके पहले ही जघन्य हो जाने पर उससे आगे पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान जाकर जघन्यपनेको प्राप्त हुआ सम्यग्मिथ्यात्वका प्रदेशसमूह उससे असंख्यातगुणा कैसे हो सकता है, क्योंकि आगे आगे उसमें एक एक गोपुच्छ विशेषोंकी हानि देखी जाती है, इसलिए इसका असंख्यातगुणा होना समीचीन नहीं प्रतीत होता इस प्रकारके सन्देहसे जिसका हृदय घुल रहा है उस शिष्यके अभिप्रायकी आशंका कर सूत्रकार पृच्छासूत्र कहते हैं—

❀ इसका कारण क्या है ?

§ २११. इस सूत्रका भावार्थ यह है कि यदि सम्यग्मिथ्यात्वके उपरिम उद्वेलन कालके

---

१. ता०प्रतौ 'विसेस (घाद) घादवसेण' इति पाठः।

गुणहाणीओ संभवंति तो तासिमण्णोण्णब्भत्थरासी गुणसंकमभागहारेण किं सरिसो संखेज्जगुणो असंखेज्जगुणो संखेज्जगुणहीणो असंखेज्जगुणहीणो वा त्ति ण णिच्छओ काउं सक्किज्जदि। तदो ण कम्मेदस्स असंखेज्जगुणत्तं परिच्छिज्जदे? ण च तत्थ असंखेज्जाओ गुणहाणीओ णत्थि चेव त्ति वोत्तुं जुत्तं, तदभावग्गाहयपमाणाणुवलंभादो त्ति। एवं विरुद्धबुद्धीए सिस्सेण कारणविसयाए पुच्छाए कदाए कारणपरूवणादुवारेण तस्संदेहणिरायरणट्ठमुत्तरसुत्तमाइरिओ भणदि—

* सम्मत्ते उव्वेल्लिदे सम्मामिच्छत्तं जेण कालेण उव्वेल्लेदि एदम्हि काले एक्कं पि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरं णत्थि एदेण कारणेण।

§ २१२ एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणो सुगमो। एत्थ पुण पदसंबंधो एवं कायव्वो। सम्मत्ते उव्वेल्लिदे संते जेण कालेण सम्मामिच्छत्तमुव्वेल्लेदि एदम्हि काले एक्कं पि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरं जेण णत्थि एदेण कारणेण सम्मत्तादो सम्मामिच्छत्तस्स असंखेज्जगुणत्तं ण विरुज्झदे इदि। जइ वि पुव्वमेव सम्मत्तसंकमे जहण्णे जादे पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तमद्धाणमुवरि गंतूण सम्मामिच्छत्तपदेससंकमो जहण्णो जादो तो वि तदो तस्स असंखेज्जगुणत्तं जुज्जदे, तस्स कालस्स एगगुणहाणीए असंखे०भागमेत्तेण तत्तियमेत्तमद्धाणं गदस्स वि थोवयरगोवुच्छविसेसाणं

भीतर असंख्यात गुणहानियाँ सम्भव होवें तो उनकी अन्योन्याभ्यस्तराशि गुणसंक्रमभागहारके क्या समान होती है या संख्यातगुणी होती है या असंख्यातगुणी होती है या संख्यातगुणा हीन होती है या असंख्यातगुणा हीन होती है यह निश्चय करना शक्य नहीं है और ऐसी अवस्थामें इसका असंख्यातगुणा होना कैसे जाना जाता है? यहाँ असंख्यात गुणहानियाँ नहीं ही हैं ऐसा कहना युक्त नहीं है, क्योंकि उनके अभावका ज्ञापक प्रमाण नहीं उपलब्ध होता। इस प्रकार विरुद्ध बुद्धिवाले शिष्यके द्वारा कारणविषयक पृच्छा करने पर कारणकी प्ररूपणा द्वारा उसके सन्देहका निराकरण करनेके लिए आचार्य आगेका सूत्र कहते हैं—

* इसका कारण यह है कि सम्यक्त्वकी उद्वेलना होने पर जितने कालमें सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना होती है उस कालके भीतर एक भी प्रदेशगुणहानिस्थानान्तर नहीं है।

§ २१२ इस सूत्रका अर्थकथन सुगम है। यहाँ पर पदसम्बन्ध इस प्रकार करना चाहिए—सम्यक्त्वकी उद्वेलना हो जाने पर जितने काल द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करता है इस कालमें चूँकि एक भी प्रदेशगुणहानिस्थानान्तर नहीं है इस कारणसे सम्यक्त्वके द्रव्यसे सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यका असंख्यातगुणा होना विरोधको प्राप्त नहीं होता। यद्यपि सम्यक्त्वका संक्रम पहले ही जघन्य हो गया है और उससे पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान आगे जा कर सम्यग्मिथ्यात्वका प्रदेशसंक्रम जघन्य हुआ है तो भी सम्यक्त्वके द्रव्यसे सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य असंख्यातगुणा है यह बात बन जाती है, क्योंकि यह काल एक गुणहानिके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इतने स्थान जाकर भी बहुत थोड़े गोपुच्छाविशेषोंकी ही हानि देखी जाती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

चेव परिहाणिदंसणादो त्ति वुत्तं होदि। एदम्मि अद्धाणे पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरं णत्थि त्ति एदं कुदो परिच्छिज्जदे? एदम्हादो चेव जिणवयणादो। ण च पमाणं पमाणंतरमवेक्खदे, अणवत्थापसंगादो। ण च एदस्स पमाणत्तं सज्झसमं, जिणवयणत्तण्णहाणुववत्तीदो एदस्स पमाणभावसिद्धीदो। कथं सज्झ-साहणाणमेयत्तमिदि ण पच्चवट्ठेयं[1], स-परप्पयासयपदीव-पमाणादीहि परिहरिदत्तादो। तदो सुत्त पमाणत्तादो पमाणंतरणिरवेक्खमिदि सिद्धं।

❀ अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं।

§ २१३. एत्थ समणंतरादीददेसामासियसुत्तेण आदिदीवयभावेण सूचिदं कारणपरूवण भणिस्सामो। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगेइंदियसमयपबद्धे अंतोमुहुत्तोवट्टिदओकड्डुक्कड्डण-अधापवत्तभागहारेहि वेछावट्ठिअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा च चरिमफालिगुणिदेणोवट्टिदे असंखेज्जसमयपबद्धपमाणमणंताणुबंधिमाणजहण्णदव्वमागच्छदि। एद पुण पुव्विल्लजहण्णदव्वादो[2] असंखेज्जगुणं, तत्थ इह वुत्तासेसभागहारेसु संतेसु दीहुव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणि-

शंका—इस अध्वानमें प्रदेशगुणहानिस्थानान्तर नहीं है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है।

समाधान—इसी जिनवचनसे जाना जाता है। और एक प्रमाण दूसरे प्रमाणकी अपेक्षा नहीं करता, क्योंकि ऐसा होने पर अनवस्था दोष आता है। इसकी प्रमाणता साध्यसम है यह कहना भी युक्त नहीं है, क्योंकि अन्यथा वह जिनवचन नहीं बन सकता, इसलिए उसकी प्रमाणता सिद्ध है।

शंका—साध्य और साधन एक ही कैसे हो सकता है?

समाधान—ऐसी शंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि दीपक और प्रमाण आदिक स्व-पर प्रकाशक होते हैं, इनसे उस शंकाका परिहार हो जाता है। इसलिए सूत्र प्रमाण होनेसे प्रमाणान्तरकी अपेक्षा नहीं करता यह सिद्ध हुआ।

❀ उससे अनन्तानुबन्धी मानमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

§ २१३ यहाँ पर इससे अनन्तर पूर्व कहा गया देशामर्षक सूत्र आदिदीपक भावरूप है, इसलिए उस द्वारा सूचित होनेवाले कारणका कथन करते हैं। यथा—डेढ गुणहानिगुणित एकेन्द्रिय सम्बन्धी समयप्रबद्धमें अन्तमुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, अधःप्रवृत्तभागहार और अन्तिम फालिसे गुणित दो छयासठ सागरके भीतरकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि इन सबका भाग देने पर अनन्तानुबन्धी मानका असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण जघन्य द्रव्य आता है। परन्तु यह सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य द्रव्यसे असंख्यातगुणा है, क्योंकि वहाँपर यहाँ कहे गये समस्त भागहार तो हैं ही। साथ ही दीर्घ उद्वेलना

१. आ०प्रतौ 'पच्चवट्ठिय' इति पाठः। २ ता०प्रतौ 'एदेण पुव्विल्लजहण्णदव्वादो' इति पाठः।

सलागण्णमण्णाब्भत्थरासिभागहारस्स अहियत्तुवलंभादो । ण च अधापवत्तभागहारो तत्थ णत्थि त्ति तस्स तहाभावविरोहो आसंकणिज्जो, तदुद्देसे गुणसंकमभागहारस्स सव्वुक्कस्सस्सुवलंभादो । ण च अधापवत्तभागहारादो गुणसंकमभागहारस्स असंखेज्ज-गुणहीणत्तं, तहाभावपडिबंधयमधापवत्तभागहारस्स असंखे०भागादो गुणसंकमभागहारपडिभागियादो दीहुव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिस्स असंखेज्जगुणत्तादो अणंताणुबंधिविसंजोयणचरिमफालीदो उव्वेल्लणचरिमफालीए असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो च । एदं पि कुदो णव्वदे ? जहण्णहिदिसंकमप्पाबहुए णिरयगइमग्गणापडिबद्धे अणंताणुबंधीणं विसंजोयणचरिमफालीए जहण्णभावमुवगय-जहण्णहिदिसंकमादो उव्वेल्लणचरिमफालीए जहण्णभावसम्मामिच्छत्तजहण्णहिदि-संकमस्स असंखेज्जगुणत्तपदुप्पायणादो । करणपरिणामेहि पत्तघादाणंताणुबंधिचरिम-फालीदो मिच्छाइट्ठिपरिणामेहि घादिदावसेसिदसम्मामिच्छत्तचरिमफालीए असंखेज्ज-गुणत्तस्स णायसिद्धत्तादो च । तदो तेण सव्वुक्कस्सुव्वेल्लणकालण्णोण्णब्भत्थरासीदो असंखे०गुणो गुणगारो एत्थ वक्खाणाइरियेहि परूविदो ण विरुज्झदे । गुणसंकम-भागहारोवट्टिदअधापवत्तभागहारादो चरिमफालिगुणगारस्स गुरुत्तपसादेण असंखे०

कालके भीतर नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिरूप भागहार अधिक उपलब्ध होता है। यदि कोई ऐसी आशंका करे कि वहाँ पर अधःप्रवृत्तभागहार नहीं है इसलिए उसके इस प्रकारके माननेमें विरोध आता है सो ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि उक्त पूर्वोक्त स्थल पर सर्वोत्कृष्ट गुणसंक्रमभागहार उपलब्ध होता है। यदि कहा जाय कि अधःप्रवृत्तभागहारसे गुणसंक्रमभागहार असंख्यातगुणा हीन होता है सो ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि इस प्रकारका प्रतिबन्ध करनेवाला अधःप्रवृत्तभागहार असंख्यातवें भागप्रमाण है, गुणसंक्रमभागहारका प्रतिभागी होनेसे दीर्घ उद्वेलना कालके भीतर नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी है और अनन्तानुबन्धी विसंयोजनाकी अन्तिम फालिसे उद्वेलनाकी अन्तिम फालि असंख्यातगुणी उपलब्ध होती है।

शंका—यह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—नरकगतिमार्गणासे सम्बन्ध रखनेवाले जघन्य स्थितिसंक्रम अल्पबहुत्वके प्रकरणमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाकी अन्तिम फालिमेंसे जघन्यपनेको प्राप्त हुआ सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिसंक्रम असंख्यातगुणा है ऐसा कथन करनेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

तथा करण परिणामोंके द्वारा घातको प्राप्त हुई अनन्तानुबन्धीकी अन्तिम फालिसे मिथ्यादृष्टिसम्बन्धी परिणामोंके द्वारा घात होकर शेष बची सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालि असंख्यातगुणी होती है यह न्यायसिद्ध बात है और इसलिए ही यहाँ पर व्याख्यानाचार्योंके द्वारा सर्वोत्कृष्ट उद्वेलनाकालकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे असंख्यातगुणा कहा गया गुणकार विरोधको प्राप्त नहीं होता। गुणसंक्रमभागहारसे भाजित अधःप्रवृत्तभागहारसे अन्तिम फालिका गुणकार गुणके

---

१ ता० प्रतौ -संकमण [illegible]- इति पाठः ।

गुणत्तब्भुवगमादो । एसो च गुणगारो विगिदिगोवुच्छमवलंबिय परूविदो । परमत्थदो पुण तत्तो वि असंखे०गुणो पलिदो० असंखे०भागमेत्तो । एत्थ गुणगारो विगिदिगोवुच्छादो असंखेज्जगुणो, गुणसेढिगोवुच्छं मोत्तूण तिस्से एत्थ पाहण्णियाभावादो ।

❀ कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २१४. एत्थ पुव्विल्लसुत्तादो अणंताणुबंधिग्गहणमणुवट्टावेदव्वं । जइ वि अणंताणुबंधिचउक्कस्स समाणसामियत्तं तो वि पयडिविसेसवसेण विसेसाहियत्तं ण विरुज्झदे । सेसं सुगमं ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २१५. कारणमेत्थ सुगमं, अणंतरपरूविदत्तादो ।

❀ लोभे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २१६. सुगममेदं सुत्तं, पयडिविसेसमेत्तकारणत्तादो ।

❀ मिच्छत्ते जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

§ २१७. कुदो अणंताणुबंधिलोभ-मिच्छत्ताणं अणंताणुबंधीणं मिच्छत्तभंगो त्ति सामित्तसुत्तुवलंभेण समाणसामियाणमण्णोण्णं पेक्खियूण असंखेज्जगुणहीणाहिय-

---

उपदेशबलसे असंख्यातगुणा स्वीकार किया गया है । यह गुणकार विकृतिगोपुच्छाका अवलम्बन लेकर कहा गया है । परमार्थसे तो उससे भी असंख्यातगुणा है जो पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । यहाँ पर गुणकार विकृतिगोपुच्छासे असंख्यातगुणा है, क्योंकि गुणश्रेणिगोपुच्छाको छोड़कर उसकी यहाँ पर प्रधानता नहीं है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २१४ यहाँ पर पहलेके सूत्रसे अनन्तानुबन्धी पदको ग्रहण कर उसकी अनुवृत्ति करनी चाहिए । यद्यपि अनन्तानुबन्धी चतुष्कका स्वामी समान है तो भी प्रकृतिविशेष होनेसे विशेष अधिकपना विरोधको नहीं प्राप्त होता । शेष कथन सुगम है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मायामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २१५ यहाँ पर कारण सुगम है, क्योंकि उसका पहले कथन कर आये हैं ।

* उससे अनन्तानुबन्धी लोभमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ ११६ यह सूत्र सुगम है, क्योंकि विशेष अधिकका कारण प्रकृतिविशेष है ।

* उससे मिथ्यात्वमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

§ २१७ शंका—अनन्तानुबन्धियोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है इस प्रकारके स्वामित्व सूत्रके उपलब्ध होनेसे समान स्वामीवाले अनन्तानुबन्धी लोभ और मिथ्यात्वका द्रव्य एक दूसरेको देखते हुए असंख्यातगुणा हीन और असंख्यातगुणा अधिक कैसे बन सकता है ?

भावो ? ण, खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण देवेसुववज्जिय अणंताणुबंधिं विसंजोएदूण पुणो अंतोमुहुत्तसंजुत्तावत्थाए सेसकसायदव्वं दिवड्ढगुणहाणिगुणिदएइंदियसमयपबद्धादो उक्कड्ढिदमेत्तमधापवत्तभागहारेण खंडिय तत्थेयखंडपमाणं तदसंखेज्जदिभागत्तेण अप्पहाणीकयणवकबंधमणंताणुबंधिसरूवेण परिणमाविय सम्मत्तमुवगमिय वेछावट्ठीओ गालिय विसंजोयणाए दुचरिमसमयट्ठिदम्मि पत्तजहण्णभावस्स अणंताणुबंधिलोभदव्वस्स अधापवत्तभागहारेण विणा जहण्णभावमुवगयमिच्छत्तजहण्णपदेससंतकम्मादो असंखेज्जगुणहीणत्तस्स णाइयत्तादो। एत्थ गुणगारो अधापवत्तभागहारादो असंखेज्जगुणो। कथं मूलदव्वादो मूलदव्वस्स अधापवत्तभागहारे गुणगारे संते तं मोत्तूण तत्तो असंखेज्जगुणत्तं गुणगारस्स ? ण, अणंताणु०विसंजोयणाचरिमफालीदो दंसणमोहक्खवणचरिमफालीए असंखेज्जगुणहीणत्तेण तहाभावं पडि विरोहाभावादो। ण च चरिमफालीणं तहाभावो असिद्धो, जहण्णट्ठिदिसंकमप्पाबहुअसुत्तबलेण तस्सिद्धीदो। एसो विगिदिगोवुच्छागुणगारो वुत्तो। समुदायगुणगारो पुण तप्पाओग्गो पलिदो० असंख० भागमेत्तो, पुव्विल्लगुणसेढिगोवुच्छादो एत्तत्तणगुणसेढिगोवुच्छाए दंसणमोहक्खवणपरिणामपाहम्मेण असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। एसो

समाधान—नहीं, क्योंकि जिस जीवने क्षपितकर्मांशिक विधिसे आकर और देवोंमें उत्पन्न होकर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की है। पुनः जिसने अन्तर्मुहूर्त काल तक उसकी संयुक्तावस्थामें रहते हुए डेढ़ गुणहानिसे गुणित एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धमेंसे उत्कर्षको प्राप्त हुए द्रव्यमें अधःप्रवृत्तभागहारका भाग देकर जो एक भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण शेष कषायोंके द्रव्यको अनन्तानुबन्धीरूपसे परिणमाया है। यद्यपि यहाँ पर उस एक भागका असंख्यातवाँ भाग नवकबन्धका द्रव्य भी अनन्तानुबन्धीरूपसे परिणत होता है पर उसकी प्रधानता नहीं है। इसके बाद जो सम्यक्त्वको प्राप्त कर दो छयासठ सागर काल तक उस द्रव्यको गलाते हुए विसंयोजनाके द्विचरम समयमें स्थित है उसके जघन्य भावको प्राप्त हुआ अनन्तानुबन्धी लोभका द्रव्य अधःप्रवृत्तभागहारके बिना जघन्य भावको प्राप्त हुए मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसत्कर्मसे असंख्यातगुणा हीन होता है यह बात न्याय है। यहाँ पर गुणकार अधःप्रवृत्तभागहारसे असंख्यातगुणा है।

शंका—मूल द्रव्यसे मूल द्रव्यका अधःप्रवृत्तभागहार रूप गुणकार रहते हुए उसे छोड़कर गुणकार उससे असंख्यातगुणा कैसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाकी अन्तिम फालिसे दर्शनमोहक्षपणाकी अन्तिम फालि असंख्यातगुणी हीन होनेसे गुणकारके उस प्रकारके होनेमें कोई विरोध नहीं आता। और अन्तिम फालियोंका उस प्रकारका होना असिद्ध है यह बात भी नहीं है क्योंकि जघन्य स्थितिसंक्रमके अल्पबहुत्वका कथन करनेवाले सूत्रके बलसे उसकी सिद्धि होती है।

यह विकृतिगोपुच्छाका गुणकार कहा है। समुदायरूप गुणकार तो तत्प्रायोग्य पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि पहलेकी गुणश्रेणि गोपुच्छासे यहाँकी गुणश्रेणि गोपुच्छा दर्शनमोहनीयकी क्षपणा रूप परिणामोंकी प्रधानतावश असंख्यातगुणी उपलब्ध होती

च गुणगारो एत्थ पहाणो विसोहिपरिणामाइसयवसेण। गुणसेढिमाहप्पं कुदो परिच्छिज्जदे ?

सम्मत्तुप्पत्ती वि य सावयविरए अणंतकम्मंसे।
दंसणमोहक्खवए कसायउवसामए य उवसंते ॥१॥
खवए य खीणमोहे जिणे य णियमा भवे असंखेज्जा।
तव्विवरीदो कालो संखेज्जगुणा य सेढीए ॥२॥

इदि एदम्हादो गाहासुत्तादो।

❀ अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं।

§ २१८. कुदो ? खविदकम्मंसियलक्खणेण अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णसंतकम्मं काऊण पुणो तसेसु पलिदो० असंखे० भागमेत्तकालं संजमासंजम-संजम-सम्मत्त-परिणमणवारेहि बहुकम्मपुग्गलगालणं काऊण चत्तारि वारे कसाए उवसामेयूण पुणो वि एइंदिएसुववज्जिय पलिदो० असंखे० भागमेत्तकालेण कम्मं हदसमुप्पत्तियं काऊण समयाविरोहेण मणुसेसुववज्जिय देसूणपुव्वकोडिमेत्तकालं संजमगुणसेढिणिज्जरं काऊण कदासेसकरणिज्जो होदूण अंतोमुहुत्तावसेसे सिज्झिदव्वए चारित्तमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अणियट्टिअद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु अट्ठकसायचरिमफालिं परसरूवेण संछुहिय उदयावलियपविट्ठगोवुच्छाओ गालिय ट्ठिदजीवम्मि पुव्वमपरिभमिद-वेछावट्ठिसागरोवमम्मि एगणिसेगे दुसमयकालट्ठिदिगे सेसे पत्तजहण्णभावस्स

है। और विशुद्धिरूप परिणामोंके अतिशयवश यह गुणकार यहाँपर प्रधान है।

शंका—गुणश्रेणिका माहात्म्य किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—सम्यक्त्वोत्पत्ति, श्रावक, विरत, अनन्तानुवन्धी कषायकी विसंयोजना करनेवाला, दर्शनमोहका क्षपक, चारित्रमोहका उपशामक, उपशान्तकषाय, क्षपक, क्षीणमोह और जिन इन स्थानोंमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणी निर्जरा होती है। परन्तु उस निर्जरामें लगनेवाला काल उससे विपरीत अर्थात् अन्तके स्थानसे प्रथम स्थानतक प्रत्येक स्थानमें संख्यातगुणा संख्यातगुणा है ॥१-२॥ इसप्रकार इन गाथासूत्रोंसे गुणश्रेणिका माहात्म्य जाना जाता है ॥१-२॥

*** उससे अप्रत्याख्यान मानमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।**

§ २१८. क्योंकि क्षपितकर्मांशविधिसे अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्म करके पुनः त्रसोंमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक संयमासयम, संयम और सम्यक्त्वरूप परिणमण वारोंके द्वारा कर्मके वहुत पुद्गलोंको गलाकर तथा चार वार कषायोंका उपशमन करके अनन्तर पुनः एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके यथाशास्त्र मनुष्योंमें उत्पन्न होकर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण काल तक संयम गुणश्रेणि-निर्जरा करके पूरी तरह कृतकृत्य होकर सिद्ध होनेके लिए अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर चारित्र-मोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत होकर अनिवृत्तिकरणके कालमें संख्यात वहुभाग जानेपर आठ कषायोंकी अन्तिम फालिको पररूपसे संक्रमण करके तथा उदयावलिमें प्रविष्ट हुई गोपुच्छाओंको गलाकर जो जीव स्थित है वह मिथ्यात्व का जघन्य द्रव्य करनेवालेके समान दो छयासठ सागर

पदस्स पुव्विल्लभागब्भत्थादो सादिरेयछावट्ठिसागरोवममेत्तविसेसादो असंखेज्जगुणत्तस्स णायसिद्धत्तादो । गुणगारो पुण ओकड्डुक्कड्डणभागहारगुणिदबेछावट्ठिसागरोव-माणाणागुणहाणिसलागाणं अण्णोण्णब्भत्थरासीदो दंसण-चरित्तमोहक्खवयपरिणामाहि-सिसमासिदो असंखेज्जगुणा त्ति घेत्तव्वा, णिगिदिगोदुप्पत्तीए तहाभावदंसणादो। गुणसेढिगुणगारेण पुण पल्लिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्तो पहाणगुणगारो साहेयव्वो, तत्थ परिणामाणुसारिगुणगारं मोत्तूण दव्वाणुसारिगुणगारस्सुवलंभादो ।

ॐ कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २१९ कथमेदेसिं समाणसामियाणं हीणाहियभावो ? ण, ढुक्कमाणकाले चेव पयडिविसेसेण तहासरूवेण ढुक्कमाणत्तुवलंभादो । विसेसपमाणमेत्थ सुगमं ।

ॐ मायाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २२० एत्थ कारणमणंतरपरूविदत्तादो सुगमं ।

ॐ लोभे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २२१ कारणपरूवणं सुगमं ।

ॐ पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

जाता तब परिभ्रमण नहीं करता इसलिए इसके या समय अधःपक्की एक स्थितिके शेष रहने पर जो जघन्य द्रव्य होता है वह दो छयासठ सागर प्रमाण निषेकोंको गलाकर प्राप्त हुए मिथ्यात्वके जघन्य द्रव्यसे असंख्यातगुणा होता है यह न्यायसिद्ध बात है। परन्तु गुणकार अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणित दो छयासठ सागरप्रमाण नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयके क्षपकके अन्तिम फालि विषयक देखते हुए असंख्यातगुणा है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि निगोदिगोदुप्पत्तिमें इस प्रकारकी देखी जाती है। परन्तु गुणश्रेणिके गुणकारसे पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण प्रधान गुणकार साध लेना चाहिए, क्योंकि वहाँपर परिणामानुसारी गुणकारको छोड़कर द्रव्यानुसारी गुणकार उपलब्ध होता है।

ॐ उससे अप्रत्याख्यान क्रोधमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २१९ शंका—समान स्वामीवाले इन कर्मोंमें हीनाधिक भाव कैसे होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उदय होते समय ही प्रकृतिविशेष होनेके कारण इस रूपसे इसका उदय होता है। विशेष प्रमाण यहाँ पर सुगम है।

ॐ उससे अप्रत्याख्यान मायामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २२० यहाँ पर कारण सुगम है, क्योंकि इसका अनन्तर पूर्व ही कथन कर आये हैं।

ॐ उससे अप्रत्याख्यान लोभमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २२१ कारणका कथन सुगम है।

ॐ उससे प्रत्याख्यान मानमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

१ आ० प्रतौ —सायरोवम अण्णोण्ण— इति पाठः । २ आ० प्रतौ 'ढुक्कमाणत्तंभादो' इति पाठः ।

§ २२२. कुदो ? पयडिविसेसादो ।

❀ कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २२३. कुदो ? विस्ससादो[1] ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २२४. कुदो ? सहावदो[2] । सेसं सुगमं ।

❀ लोभे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २२५. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । केत्तियमेत्तेण ? आवलियाए असंखे०-भागपडिभागियपयडिविसेसमेत्तेण ।

❀ कोहसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्ममणंतगुणं ।

§ २२६. कुदो ? देसघादित्तेण सुलहपरिणामिकारणत्तादो । अदो चेव कधमसंखेज्जसमयपबद्धमेत्तपच्चक्खाणलोभगुणसेढिसरूवजहण्णदव्वादो समयपबद्धस्स असंखे०भागपमाणकोहसंजलणजहण्णदव्वमणंतगुणं ति णासंकणिज्जं, समयपबद्धगुणगारादो देसघादिपदेसगुणगारस्स अणंतगुणत्तादो। जदि वि सुहुमणिगोदजहण्णउववादजोगेण बद्धसमयपबद्धमेत्तं कोधसंजलणजहण्णदव्वं होज्ज तो वि सव्वघाइयपच्चक्खाण-

§ २२२ क्योंकि यह प्रकृति विशेष है।

* उससे प्रत्याख्यान क्रोधमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २२३. क्योंकि ऐसा स्वभाव है।

* उससे प्रत्याख्यान मायामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २२४ क्योंकि ऐसा स्वभाव है। शेष कथन सुगम है।

* उससे प्रत्याख्यान लोभमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २२५. ये सूत्र सुगम हैं। कितना अधिक है ? आवलिके असख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना प्रत्याख्यान लोभमें विशेषका प्रमाण है।

* उससे क्रोध संज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म अनन्तगुणा है।

§ २२६. क्योंकि यह देशघाति है, इसलिये इस रूप परिणमानेका कारण सुलभ है।

शंका—क्रोधमें सज्वलन देशघाति है केवल इसलिये असंख्यात समयप्रबद्ध प्रमाण प्रत्याख्यान लोभके गुणश्रेणिरूप जघन्य द्रव्यसे समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागप्रमाण क्रोध-संज्वलनका जघन्य द्रव्य अनन्तगुणा कैसे है ?

समाधान—ऐसी आशका करना ठीक नहीं है, क्योंकि समयप्रबद्धके गुणकारसे देशघाति प्रदेशोंका गुणकार अनन्तगुणा है। यद्यपि क्रोधसज्वलनका जघन्य द्रव्य सूक्ष्म निगोदियाके जघन्य उपपाद योग द्वारा बांधे गये समयप्रबद्धप्रमाण होवे तो भी वह सर्वघाति प्रत्याख्यान

1 आ०प्रतौ 'विसे० । विस्ससादो' इति पाठः । 2 आ०प्रतौ 'विसे० । सहावदो ।' इति पाठः ।

कोधजहण्णदव्वादो अणंतगुणमेव। किं पुण तत्तो असंखेज्जगुणपंचिंदियपज्जत्तजहण्ण-जोगबद्धसमयपबद्धस्स असंखेज्जभागमेत्तमब्भहियमिदि वुत्तं होदि।

❀ माणसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २२७ एत्थ कारणं वुच्चदे—कोहसंजलणजहण्णदव्वमेगसमयपबद्धमेत्तं होदूण मोहसव्वदव्वस्स चउब्भागमेत्तं, चउव्विहबंधगेण बद्धत्तादो। एदं पुण एगसमय-पबद्धमोहणीयदव्वस्स तिभागमेत्तं माण-माया-लोभेसु तिसु विहंजिय द्विदत्तादो। तदो विसेसाहियत्तं जुज्जदे तिभागब्भहियमिदि वुत्तं होदि। एत्थ संदिट्ठीए चउवीस २४ पमाणमोहणीयसव्वदव्वपरिकप्पणाए अव्वुप्पण्णसिस्साणं पबोहो कायव्वो।

❀ पुरिसवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २२८ कुदो? मोहणीयदव्वस्स दुभागपमाणत्तादो। तं पि कुदो? पंचविह-बंधयस्स मोहणीयसमयपबद्धमेत्तणोकसायभागमागमिसादो मोहणीयविभागमेत्तपच्च-संजलणदव्वादो एदस्सेव पुरिसवेददव्वं दुभागेणब्भहियं होदि त्ति भावत्थो।

क्रोधके जघन्य द्रव्यसे अनन्तगुणा ही है। किन्तु परम्परासे द्रव्य सूक्ष्म निगोदियाके जघन्य उपपादयोगसे असंख्यातगुणे पंचेन्द्रियके प्राप्तमात्र जघन्य योगद्वारा बांधे गये समय-प्रबद्धके असंख्यातवें भागप्रमाण है इसलिए इसका कहना ही क्या है यह इसका तात्पर्य है।

❀ उससे मानसंज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २२७ अब यहाँ इसका कारण कहते हैं—क्रोधसंज्वलनका जघन्य द्रव्य एक समय-प्रबद्धप्रमाण होता हुआ भी मोहके सब द्रव्यके चौथे भागप्रमाण है, क्योंकि उसका संज्वलनोंका बन्ध होते समय बन्ध हुआ है, किन्तु यह एक समयप्रबद्धप्रमाण होता हुआ भी मोहनीयके सब द्रव्यका तीसरा भाग है, क्योंकि यह मान, माया और लोभ इन तीनों भागोंमें विभक्त होकर स्थित है। इसलिए जो क्रोध संज्वलनके जघन्य द्रव्यसे मान संज्वलनका जघन्य द्रव्य विशेष अधिक कहा है वह युक्त है। क्रोधसंज्वलनके जघन्य द्रव्यसे मानसंज्वलनका जघन्य द्रव्य तीसरा भाग अधिक है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब यहाँ संदृष्टिसे मोहनीयके सब द्रव्यको २४ मानकर अव्युत्पन्न शिष्योंको ज्ञान कराना चाहिये।

उदाहरण—मोहनीयका सब द्रव्य २४, संज्वलन क्रोध ६, संज्वलन मान ६, संज्वलन माया ६, संज्वलन लोभ ६। संज्वलन क्रोधकी बन्धव्युच्छित्ति हो जाने पर संज्वलन मानका जघन्य प्रदेशसत्कर्म होता है उस समय, संज्वलनमान ८, माया ८, लोभ ८ इसप्रकार बँटवारा होता है। ८ − ६ = २ = ६/३

❀ उससे पुरुषवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २२८ क्योंकि यह सब मोहनीय द्रव्यके दूसरे भाग प्रमाण है।

शंका—यह सब मोहनीय द्रव्यके दूसरे भाग प्रमाण कैसे है?

समाधान—जो जीव पुरुषवेद और चार संज्वलन इन पाँच प्रकृतियोंका बन्ध कर रहा है उसके मोहनीयका जो समयप्रबद्ध नोकषायको प्राप्त होता है वह सब पुरुषवेदको मिल जाता है, इसलिये यह सब मोहनीय द्रव्यके दूसरे भाग प्रमाण है। इसका यह आशय है कि मोहनीयके

❀ मायासंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २२९. दोण्हं पि मोहणीयस्स अद्धपमाणत्ते संते कुदो पुव्विल्लादो एदस्स विसेसाहियत्तं ? ण, पयडिविसेसेण पुव्विल्लदव्वमावलि० असंखे०भागेण खंडिय तत्थेयखंडमेत्तेण एदस्स अहियत्तुवलंभादो ।

❀ णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

§ २३०. एत्थ कारणं वुच्चदे। तं जहा—मायासंजलणस्स चरिमसमयणवकबंधो दुसमयूणदोआवलियमेत्तद्धाणमुवरि गंतूण एगसमयपबद्धस्स असंखेज्जा भागा होदूण जहण्णपदेससंतकम्मं जादं । णवुंसयवेदस्स पुण असंखेज्जपंचिंदियसमयपबद्धसंजुत्त-गुणसेढिदव्व जहण्णं जादं । तदो किंचूणसमयपबद्धमेत्तजहण्णदव्वादो असंखेज्जसमय-पबद्धपमाणणवुंसयवेदजहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं होदि त्ति ण एत्थ संदेहो ।

❀ इत्थिवेदस्स जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहियं ।

§ २३१. कुदो सरिसपरिणामेहि कयगुणसेढीणं दोण्हं पि सरिसत्ते संते णवुंसयवेद-पयडिविगिदिगोवुच्छाहिंतो इत्थिवेदपयडिविगिदिगोवुच्छाणमसंखेज्जगुणत्तादो । तं पि

तीसरे भागप्रमाण मान संज्वलनके द्रव्यसे मोहनीयका आधा पुरुषवेदका द्रव्य दूसरा भाग अधिक होता है।

* उससे माया संज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २२९. शंका—पुरुषवेद और मायासज्वलन इन दोनोंको ही मोहनीयका आधा आधा प्रमाण प्राप्त है फिर पहलेसे यह विशेष अधिक क्यों है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रकृतिविशेषके कारण इसमे विशेष अधिक द्रव्य पाया जाता है। पुरुषवेदके द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उतना इसमें विशेष अधिक है।

* उससे नपुंसकवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

§ २३०. अब यहाँ इसका कारण कहते हैं। जो इस प्रकार है—माया संज्वलनका जो अन्तिम समयका नवक बन्ध है वह दो समय कम दो आवलिप्रमाण स्थान आगे जाकर एक समयप्रबद्धका असख्यात बहुभाग प्रमाण रह जाता है और वही जघन्य प्रदेशसत्कर्मरूप होता है। किन्तु नपुसकवेदका पञ्चेन्द्रियके असख्यात समयप्रबद्धोंसे संयुक्त गुणश्रेणीका द्रव्य जघन्य प्रदेशसत्कर्मरूप होता है, इसलिए कुछ कम समयप्रबद्धप्रमाण माया सज्वलनके जघन्य द्रव्यसे असख्यात समयप्रबद्धप्रमाण नपुसकवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है इसमें कोई सन्देह नहीं।

* उससे स्त्रीवेदका जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २३१. क्योंकि यद्यपि दोनोंकी गुणश्रेणियाँ सदृश परिणामोंसे की जाती हैं, इसलिये वे समान हैं तो भी नपुंसकवेदकी प्रकृति गोपुच्छाओंसे स्त्रीवेदकी प्रकृति और विकृति गोपुच्छाएं असंख्यातगुणी होती हैं।

कुदो ? पंचाभावे णवुंसयवेदस्सेव तिसु पलिदोवमेसु इत्थिवेदगोवुच्छाणं गलणाभावादो। कुदो णेदं ? सामित्तसुत्ते 'तिपलिदोवमिएसु णो उववण्णो' इदि वुत्त, बेछावट्ठिसागरोवमेसु च वत्तुव्वादे पओजणाभावादो। एत्थ गुणगारो तिपलिदोवमब्भंतरणाणागुण-हाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी। दोण्हं पि गुणसेडीओ सरिसीओ त्ति पुध ट्ठविय पुणो णवुंसयवेदगोवुच्छं तत्तो असंखे० गुणइत्थिवेदगोवुच्छादो अवणिय ट्ठविदे जं सेसं सगअसंखेज्जभागमेत्तमहियदव्वं तेण विसेसाहियं ति वुत्तं होदि। एवं विसेसाहियवयणं णायव्वं, जहा सव्वत्थ गुणसेडिविण्णासो परिणामाणुसारिओ चेव ण दव्वाणुसारि त्ति। अण्णहा णवकदव्वस्स पुव्विल्लदव्वादो असंखे०गुणत्तं मोत्तूण विसेसाहिय भावाणुववत्तीदो।

* हस्से जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं।

§ २१२. कुदो ? अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णसंतकम्मेण तसेसु आगंतूण बहुसो संजमासंजम-संजमपरिपालणवारेहि चदुक्खुत्तो कसायउवसामणवारेहि य बहुकम्मपदेसणिज्जरं

शंका—ऐसा क्यों होता है ?

समाधान—क्योंकि भवमें नपुंसकवेदके समान तीन पल्य कालके भीतर स्त्रीवेदकी गोपुच्छाएँ नहीं गलती हैं। अर्थात् जिसके नपुंसकवेदका जघन्य द्रव्य प्राप्त होता है वह पहले जिस प्रकार उत्तम भोगभूमिमें तीन पल्य काल तक नपुंसकवेदकी गोपुच्छाएँ गला आता है उस प्रकार स्त्रीवेदके जघन्य द्रव्यवालेको पहले यह क्रिया नहीं करनी पड़ती है, इसलिये इसके तीन पल्य कालके भीतर गलनेवाली गोपुच्छाएँ बच जाती हैं और इसीलिये स्वामित्व सूत्रमें स्त्रीवेदके जघन्य द्रव्यको प्राप्त करनेवाला 'तीन पल्यकी आयुवालोंमें नहीं उत्पन्न होता' यह कहा है क्योंकि इसे दो छयासठ सागर काल तक सम्यग्दृष्टियोंमें परिभ्रमण कराया है। अब इस कालके भीतर तीन पल्यकी आयुवालोंमें भी उत्पन्न कराया जाता है तो कोई विशेष प्रयोजन नहीं सिद्ध होता।

तीन पल्यके भीतर नानागुणहानि शलाकाओंकी जो अन्योन्याभ्यस्त राशि प्राप्त हो वह यहाँ गुणकारका प्रमाण है। दोनोंकी गुणश्रेणियाँ समान हैं, अतः उन्हें अलग स्थापित करो। अनन्तर नपुंसकवेदकी गोपुच्छाओंसे असंख्यातगुणी स्त्रीवेदकी गोपुच्छाओंमेंसे नपुंसकवेदकी गोपुच्छाओंको घटा कर स्थापित करने पर जो अपनेसे असंख्यातवाँ भाग अधिक द्रव्य शेष रहता है उतना स्त्रीवेदका जघन्य द्रव्य विशेष अधिक है यह इस कथनका तात्पर्य है। सूत्रमें जो यह 'विशेषाधिक' वचन है सो यह ज्ञापक है जिससे यह ज्ञापित होता है कि गुणश्रेणिका विन्यास सब जगह परिणामोंके अनुसार होता है द्रव्यके अनुसार नहीं होता। यदि ऐसा न माना जाय तो नवक द्रव्य पिछले द्रव्यसे असंख्यातगुणा प्राप्त होता है उसे छोड़कर विशेषाधिकपना नहीं बन सकता है।

* उससे हास्यमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

§ २१२. क्योंकि अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें आया और वहाँ अनेक बार संयमासंयम और संयमका पालन करते हुए तथा चार बार कषायोंकी उपशमना कर बहुत

१ आ० प्रतौ '-गोवुच्छाणं' इति पाठः।

काऊण फलाभावेण वेच्छावट्ठीओ अपरिब्भमिय तदो कमेण पुव्वकोडाउअमणुस्सभवे दीहद्धं संजमगुणसेढिणिज्जरं काऊण खवणाए अब्भुट्ठिदजीवेण चरिमट्ठिदिखंडए चरिमसमयअणिल्लेविदे छण्णोकसायाणं जहण्णसामित्तविहाणादो। एत्थ गुणगारो उक्कड्डणभागहारगुणिदचरिमफालिपदुप्पण्णवेछावट्ठि[1] सागरोवमणाणागुणहाणिसलागाण-मण्णोण्णब्भत्थरासी पुव्विल्लगुणसेढिगोवुच्छागमणट्ठतप्पाओग्गपलिदो० असंखे०-भागमेत्तरूवोवट्टिदो। कुदो ? वेछावट्ठिसागरोवमाणमपरिब्भमणादो। सयलसमत्थाए चरिमफालीए पत्तसामित्तभावादो च हेट्ठिल्लरासिस्स तव्विवरीयसरूवत्तादो च।

❀ रदीए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २३३. एदेसिं सरिससामियत्ते वि पयडिविसेसेण विसेसाहियत्तमेत्थ दट्ठव्वं। सुगमं।

❀ सोगे जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं।

§ २३४. कुदो ? पुव्विल्लबंधगद्धादो सपहियबंधगद्धाए संखेज्जगुणत्तादो।

❀ अरदीए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २३५. कुदो ? पयडिविसेसादो।

❀ दुगुंछाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

कर्मप्रदेशोंकी निर्जरा की। यथा विशेष लाभ न होनेसे दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण नहीं किया। तदनन्तर क्रमसे एक पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्य भवमें दीर्घ काल तक संयमको पालकर और गुणश्रेणि निर्जरा करके जब यह जीव क्षपणाके लिये उद्यत होता है तब अन्तिम स्थितिकाण्डकके पतन होनेके अन्तिम समयमें छह नोकषायोंका जघन्य स्वामित्व प्राप्त होता है। यहाँ पर गुणकारका प्रमाण उत्कर्षणभागहार गुणित अन्तिम फालि प्रत्युत्पन्न दो छयासठ सागरकी नानागुणहानियोंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिमें पहलेकी गुणश्रेणिगोपुच्छाओंको लानेके लिए स्थापित किये गये तत्प्रयोग्य पल्यके असख्यातवें भागका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना है, क्योंकि दो छयासठ सागर कालके भीतर परिभ्रमण नहीं कराया है और पूरी तरहसे समर्थ अन्तिम फालिमें स्वामित्वकी प्राप्ति हुई है। तथा पिछली राशि इससे विपरीत स्वरूपवाली है।

* उससे रतिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २३३ इन दोनोंका स्वामी समान है तो भी प्रकृतिविशेषके कारण पूर्व प्रकृतिसे इस प्रकृतिमें विशेष अधिक द्रव्य जानना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

* उससे शोकमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म सख्यातगुणा है।

§ २३४. क्योंकि पूर्व प्रकृतिके बन्धकालसे इस प्रकृतिका बन्धकाल संख्यातगुणा है।

* उससे अरतिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २३५. इसका कारण प्रकृतिविशेष है।

* उससे जुगुप्सामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

---

१ आ०प्रतौ 'पदुप्पण्ण वेछावट्ठि-' इति पाठः।

§ २३६ धुवबंधित्तादो हस्स-रदिबंधगद्धाए वि पयडिस्से बंधुवलंभादो। केत्तियमेत्तो विसेसो? हस्स-रदिबंधगद्धामेत्तसंचयमेत्तो। सेसं सुगमं।

* भए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २३७ कुदो? पयडिविसेसादो विसेसस्सागमकारणमुवलंभादो।

* कोधसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २३८ एत्थ कारणं वुच्चदे। तं जहा—भयदव्वं[1] मोहणीयसव्वदव्वस्स दसमभागो। कोधसंजलणदव्वं पुण मोहदव्वस्स अट्ठमभागो, कसायभागस्स चदुसु वि संजलणेसु विहंजिय ट्ठिदत्तादो। अण्णं च कोधसंजलणदव्वमधापवत्तकरणचरिमसमयम्मि जहण्णं जादं। भयदव्वं पुण तत्तो उवरि अंतोमुहुत्तमेत्तमुवसरिय गोवुच्छाए गलिदाए गुणसंकमदव्वे च परिहीणे अणियट्टिअद्धाए संखेज्जे भागे गंतूण पत्तजहण्णभावमेदेण कारणेण एदासिं पयडीणं पदेसस्स हीणाहियभावो ण विरुज्झदे।

एवमोघजहण्णदंडओ सकारणो समत्तो।

* णिरयगईए सव्वत्थोवं सम्मत्ते जहण्णपदेससंतकम्मं।

§ २३९ एदस्स आदेसजहण्णप्पाबहुअमूलपदसुत्तस्स अत्थपरूवणा

---

§ २३६. क्योंकि जुगुप्सा प्रकृति ध्रुवबन्धिनी है। हास्य और रतिके बन्धकालमें भी इसका बन्ध पाया जाता है। कितना अधिक है? हास्य और रतिके बन्धकालमें जितना संचय होता है उतना अधिक है। शेष कथन सुगम है।

* उससे भयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २३७. क्योंकि प्रकृति विशेष ही इस विशेषका कारण है यहाँ हम यह कहते हैं।

* उससे क्रोध संज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २३८. अब यहाँ इसका कारण कहते हैं जो इस प्रकार है—भयका द्रव्य तो मोहनीयके सब द्रव्यका दसवाँ भाग है। परन्तु क्रोधसंज्वलनका द्रव्य मोहनीयके सब द्रव्यके आठवाँ भाग है, क्योंकि कषायोंका हिस्सा चारों संज्वलनोंमें विभक्त होकर स्थित है। दूसरा कारण यह है कि क्रोध संज्वलनका द्रव्य अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जघन्य हो जाता है परन्तु भयका द्रव्य इसके आगे अन्तर्मुहूर्तमात्र गुणश्रेणि गोपुच्छाओंके गला देने पर और गुणसंक्रमके द्रव्यके घट जानेपर अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यात बहुभाग व्यतीत हो जानेपर जघन्य होता है इसलिये इन दोनों प्रकृतियोंमें हीनाधिकभाव विरोधको नहीं प्राप्त होता।

इस प्रकार कारणसहित ओघसे जघन्य दण्डकका कथन समाप्त हुआ।

* नरकगतिमें सम्यक्त्वका जघन्य प्रदेशसत्कर्म सबसे थोड़ा है।

§ २३९. आदेशसे जघन्य अल्पबहुत्वके मूलपदका कथन करनेवाले इस सूत्रका

---

1 आ॰ प्रतौ 'दुगुंछ भयदव्वं' इति पाठः।

सुगमा ।

❀ सम्मामिच्छत्ते जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

§ २४०. सुगममेदं सुत्तं, ओघादो अविसिट्ठकारणत्तादो ।

❀ अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

§ २४१. एत्थ गुणगारो तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तो । कुदो ? गुणसेढीदरगोवुच्छाकयविसेसादो चरिमफालिविसेसावलंबणादो च सेसोवट्टणादिविण्णासो अवहारिय पुव्वावराणं सिस्साणं सुगमो ।

❀ कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २४२. पयडिविसेसादो ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २४३. विस्ससादो ।

❀ लोभे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २४४. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । बज्झकारणणिरवेक्खो वत्थुपरिणामो ।

❀ मिच्छत्ते जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

अर्थ सरल है ।

* उससे सम्यग्मिथ्यात्वमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

§ २४०. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि ओघप्ररूपणाके समय जो इसका कारण कहा है उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । दोनों जगह कारण एक समान हैं ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मानमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

§ २४१. यहाँ गुणकारका प्रमाण तद्योग्य पल्यका असंख्यातवाँ भाग है, क्योंकि यहाँ गुणश्रेणि और उनसे भिन्न गोच्छाओंके कारण तथा अन्तिम फालिविशेषके कारण विशेषता आजाती है । आगे पीछेका विचार करके शेष अपवर्तन आदिका विन्यास सब शिष्योंको सुगम है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधमें प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २४२ इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मायामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २४३ क्योंकि ऐसा स्वभाव है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी लोभमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २४४. ये सूत्र सुगम हैं, क्योंकि यहाँ विशेषाधिकका बाह्य कारण नहीं है, वस्तुका परिणमन ही ऐसा है ।

* उससे मिथ्यात्वमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

§ २४५ को गुणगारो? अधापवत्तभागहारो चरिमफालीए च अण्णोण्णगुणगारो। कुदो? हेट्ठिमरासिणा तेत्तीससागरोवमणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीए ओकड्डुक्कड्डणभागहारपदुप्पण्णअधापवत्तभागहारेण चरिमफालीए च गुणिदाए आवलियदिवड्ढगुणहाणिगुणिदेगेइंदियसमयपबद्धपमाणेण उवरिमरासिम्मि अधापवत्तचरिमफालिम्मि गुणगारविरहिदउक्कड्डुणभागहारोवट्टिददिवड्ढगुणहाणिगुणिदएइंदियसमयपबद्धपमाणम्मि भागे हिदे एत्तियमेत्तगुणगारुवलंभादो। पुव्विल्लविवरिदगोवुच्छविसेसमस्सियूण एसा गुणगारपरूवणा कया। तत्थतणगुणसेढिगोवुच्छविसेसमस्सियूण भण्णमाणे पुव्विल्लगुणगारो तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जभागेण ओवट्टेयव्वो। कारणं सुगमं।

* अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंतकम्मं असंखेज्जगुणं।

§ २४६ कुदो? असण्णिपच्छायदपढमपुढविउप्पण्णपढमसमयवट्टमाणणेरइयम्मि पत्तजहण्णसामित्तेण एदिस्से वि गुणहाणीए असंभवादो। मिच्छत्तस्स पुण अंतोमुहुत्तूणतेत्तीससागरोवममेत्तकालं गालिय जहण्णसामित्तविहाणेण तत्तियमेत्तगोवुच्छाणं गलणुवलंभादो। तदो एत्थ तेत्तीससागरोवमब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी उक्कड्डणभागहारपदुप्पाइदो एत्थ गुणगारो।

---

§ २४५. गुणकार क्या है? अधःप्रवृत्तभागहार और अन्तिम फालि इनको परस्पर गुणा करनेपर जो लब्ध आवे उतना गुणकार है, क्योंकि तेतीस सागरकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार गुणित अधःप्रवृत्तभागहारसे और अन्तिम फालिसे गुणित करके जो लब्ध आवे उसका डेढ़ गुणहानिगुणित एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे तत्प्रमाण अधस्तन राशिके अधःप्रवृत्तकी अन्तिम फालिरूप गुणकारसे रहित पूर्वोक्त भागहारसे भाजित जो डेढ़ गुणहानिगुणित एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्ध तत्प्रमाण उपरिम राशिमें भाग देनेपर उक्त प्रमाण गुणकार उपलब्ध होता है। पूर्वोक्त विकृति गोपुच्छाका आश्रय लेकर यह गुणकारकी प्ररूपणा की है। वहाँकी गुणश्रेणिगोपुच्छाका आश्रय लेकर कथन करनेपर पूर्वोक्त गुणकारको तत्प्रायोग्य पल्यके असंख्यातवें भागसे भाजित करना चाहिए। कारण सुगम है।

* उससे अप्रत्याख्यान मानमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

§ २४६. क्योंकि असंज्ञियोंमेंसे आकर जो नारकी जीव प्रथम पृथिवीमें उत्पन्न होता है उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अप्रत्याख्यान मानका जघन्य स्वामित्व प्राप्त होनेसे एक भी गुणहानिका गलन नहीं हुआ है। परन्तु मिथ्यात्वका अन्तर्मुहूर्त कम तेतीस सागर काल व्यतीत कर जघन्य स्वामित्व प्राप्त होनेसे वहाँ उतनी गोपुच्छायें गल गई हैं। और इसलिए ही उत्कर्षणभागहारसे उत्पन्न भई तेतीस सागरके भीतरकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि यहाँ पर गुणकार है।

---

१ आ० प्रतौ '-गुणिदएगेइंदियसमयपबद्ध-' इति पाठः। २ ता० प्रतौ तत्थतण [गु] णसेढिगोवुच्छ- एदी इति पाठः।

❀ कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २४७. ण एत्थ किं चि वत्तव्वमत्थि, पयडिविसेसमेत्तस्स कारणत्तादो ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २४८. सुगममेदं, अणंतरपरूविदकारणत्तादो ।

❀ लोभे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २४९. एत्थ पच्चओ सुगमो ।

❀ पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २५०. सुगममत्र कारण, स्वभावमात्रानुबन्धित्वात् ।

❀ कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहिय ।

§ २५१. ण एत्थ वत्तव्वमत्थि । कुदो'[1] ? विस्ससादो । केत्तियमेत्तो विसेसो ? आवलि० असंखे०भागपडिभागियपयडिविसेसमेत्तो ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहियं ।

§ २५२. एत्थ कारणमणंतरपरूविदत्तादो सुगमं ।

---

* उससे अप्रत्याख्यात क्रोधमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २४७ यहाँपर कुछ भी वक्तव्य नहीं है, क्योंकि प्रकृतिविशेष मात्र ही विशेष अधिक होनेका कारण है ।

* उससे अप्रत्याख्यान मायामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २४८. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि कारणका अनन्तर पूर्व कथन कर आये हैं ।

* उससे अप्रत्याख्यान लोभमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २४९. यहाँ पर कारणका कथन सुगम है ।

* उससे प्रत्याख्यान मानमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २५०. यहाँ पर कारण सुगम है, क्योंकि वह स्वभावमात्रका अनुबन्धी है ।

* उससे प्रत्याख्यान क्रोधमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २५१. यहाँ पर कुछ वक्तव्य नहीं है, क्योंकि प्रत्याख्यान क्रोधमें प्रदेशसत्कर्म स्वभावसे अधिक है । विशेषका प्रमाण कितना है ? प्रत्याख्यानमानके जघन्य द्रव्यमें आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतना इस प्रकृतिमें विशेषका प्रमाण है ।

* उससे प्रत्याख्यान मायामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २५२ यहाँ पर कारण सुगम है, क्योंकि उसका अनन्तर पूर्व कथन कर आये हैं ।

---

१ आ०प्रतौ 'विसेसाहियं । कुदो' इति पाठ ।

* लोभे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २५३. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । एदम्हादो चेव रागाइअविज्जा-[1]संपुविज्झियजिणवयणादो । ण च तारिसेसु आरिसकारएसु असच्चस्स संभवो, विरोहादो ।

* इत्थिवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं अणंतगुणं ।

§ २५४. कधं सम्मत्तपाहम्मेण बंधविरहिदसरूवादो आयेण विणा तेत्तीससागरोवमेसु गलिदावसिट्ठस्सेदस्स पुव्विल्लादो तव्विवरीदसरूवादो अणंतगुणत्तमिदि णासंकणिज्जं, देसघाइत्तेण सुहपरिणामणिकारणस्सेदस्स तत्तो तप्पडिवक्खसहावादो अणंतगुणत्तस्स णाइयत्तादो ।

* णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं ।

§ २५५. दोण्हमेदासिं पयडीणं पुव्वुत्तकालब्भंतरे सरिसीसु वि गुणहाणीसु गलिदासु बंधगद्धाविसेसेण पुव्विल्लादो एदस्स संखेज्जगुणत्तं ण विरुज्झदे । सेसं सुगमं ।

* पुरिसवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं असंखेज्जगुणं ।

---

* उससे प्रत्याख्यान लोभमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २५३. ये सूत्र सुगम हैं, क्योंकि रागादि अविद्यासंस्कारसे रहित हुए जिनवरके ये वचन हैं । आर्षकर्ता जिनदेवके इस प्रकार होनेपर उनमें असत्यता सम्भव नहीं है, क्योंकि उनके ऐसा होनेमें विरोध आता है ।

* उससे स्त्रीवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म अनन्तगुणा है ।

§ २५४. शंका—एक तो सम्यक्त्वकी प्रमुखतासे बंधनेवाली प्रकृतियोंसे यह विरुद्ध स्वभाववाली है । दूसरे आयके बिना तेतीस सागर कालके भीतर गलकर यह अवशिष्ट रहती है, इसलिए भी यह पूर्वोक्त प्रकृतिकी अपेक्षा उससे विपरीत स्वभाववाली है, अतएव यह प्रत्याख्यान लोभसे अनन्तगुणी कैसे हो सकती है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि देशघाति होनेसे तथा शुभ परिणाम कारक यह प्रकृति होनेसे यह प्रत्याख्यान लोभसे प्रत्यनीक स्वभाववाली है, अतः इसके द्रव्यका अनन्तगुणा होना न्यायप्राप्त है ।

* उससे नपुंसकवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है ।

§ २५५. इन दोनों ही प्रकृतियोंकी पूर्वोक्त कालके भीतर समान गुणहानियोंका गलन होता है तो भी बन्धक कालवश पूर्वोक्त प्रकृतिके जघन्य द्रव्यसे इसका द्रव्य संख्यातगुणा होता है इसमें कोई विरोध नहीं है । शेष कथन सुगम है ।

* उससे पुरुषवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

---

१ ता० प्रतौ 'रागाइअव[वि]ज्ज-' आ० प्रतौ 'रागाइअवज्जा-' इति पाठः ।

§ २५६. एत्थ गुणगारो तेत्तीससागरोवमणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्ण-ब्भत्थरासी सखेज्जरूवोवट्टिदोकड्डुक्कड्डणभागहारगुणिदो, असण्णिपच्छायदपढमपुढवि-णेरइयम्मि वोलाविदपडिवक्खबंधगद्धम्मि पत्तजहण्णभावत्तो अगलिदअंतोमुहुत्तूण-तेत्तीससागरोवममेत्तणिसेगस्स पुव्विल्लादो तप्पडिवक्खसहावादो तावदि गुणत्ते विरोहा-णुवलंभादो ।

❀ हस्से जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं ।

§ २५७. एत्थ कारणं बंधगद्धाए सखेज्जगुणत्तं । ण च बंधगद्धाणुरूवो ण होइ, विरोहादो ।

❀ रदीए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २५८. पयडिविसेसो एत्थ पच्चओ सुगमो ।

❀ सोगे जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं ।

§ २५९. बंधगद्धावसेण ।

❀ अरदीए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २६०. पयडिविसेसवसेण ।

❀ दुगुंछाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

---

§ २५६ यहाँ पर गुणाकारका प्रमाण अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारमें सख्यातका भाग देकर जो लब्ध आवे उससे तेतीस सागरकी नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिके गुणित करने पर जो गुणनफल प्राप्त हो उतना है, क्योंकि असंज्ञियोंमेंसे आकर पहली पृथिवीके नारकीमें प्रतिपक्ष प्रकृतिके बन्धककालके व्यतीत होने पर जघन्यपनेके प्राप्त होनेसे अन्तर्मुहूर्त कम तेतीस सागरप्रमाण इस निषेकका पहलेके उसके प्रतिपक्ष स्वभाव निषेकसे उतना गुणा होनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

* उससे हास्यमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है ।

§ २५७ इसका कारण बन्धक कालका सख्यात होना है । और बन्धककालके अनुरूप सञ्चय नहीं होता है यह बात नहीं है, क्योंकि बन्धककालके अनुरूप सञ्चय नहीं होने पर विरोध आता है ।

* उससे रतिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २५८. प्रकृतिविशेष ही यहाँ पर कारण है, इसलिए वह सुगम है ।

* उससे शोकमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २५९. क्योंकि उसका कारण बन्धककाल है ।

* उससे अरतिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है

§ २६०. क्योंकि इसका कारण प्रकृतिविशेष है ।

* उससे जुगुप्सामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २६१ धुवबंधित्तेण हस्स रदिबंधगद्धाए वि पदिस्से बंधुवलंभादो।

❀ भए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २६२ दोण्हं पि मोहणीयस्स दसमभागत्ते कुदो हीणाहियभावो ? ण पयडिविसेसमस्सियूण तहाभावुवलंभादो।

❀ माणसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २६३ मोहणीयसव्वदव्वस्स अट्ठमभागत्तादो।

❀ कोहसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

❀ मायासंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

❀ लोहसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २६४ एदाणि तिण्णि वि सुत्ताणि अब्भंतरीकयपयडिविसेसकारणाणि सुगमाणि। संपहि एदेण णिरयगइसामण्णपरिबद्धजहण्णप्पाबहुअदंडएण सव्वासिं णिरयगईणमंतोभाविणिरयगइमग्गणावयवेण पुध पुध सत्तण्हं पि पुढवीणमप्पाबहुअं परूविदं चेव। णवरि सामित्तविसेसो तदणुसारेण च गुणगारविसेसो जाणियव्वो। णत्थि अण्णो विसेसो।

एवं णिरयगइजहण्णदंडओ समत्तो।

---

§ २६१ क्योंकि यह ध्रुवबन्धिनी प्रकृति होनेसे हास्य और रतिके बन्धकालमें भी इसका बन्ध पाया जाता है।

❀ उससे भयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २६२. शंका—ये दोनों प्रकृतियाँ मोहनीयके दसवें भागप्रमाण हैं, इसलिए इनके प्रदेशोंमें हीनाधिकपना कैसे बन सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रकृतिविशेषके आश्रयसे उस प्रकार हीनाधिकरूपसे प्रदेश पाये जाते हैं।

❀ उससे मानसंज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २६३. क्योंकि मोहनीयके सब द्रव्यके आठवें भागप्रमाण इसका द्रव्य है।

❀ उससे क्रोधसंज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

❀ उससे मायासंज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

❀ उससे लोभसंज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २६४ ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं, क्योंकि इन सूत्रोंमें जितना अल्पबहुत्व कहा है वे अलग अलग प्रकृतियाँ हैं। अब समस्त नरकगतिके अन्तर्गत नरकगतियाँ अन्तर्लीन हैं, इसलिए नरकगति सामान्यसे सम्बन्ध रखनेवाले इस अल्पबहुत्व दण्डकके द्वारा अलग अलग सातों ही पृथिवियोंका अल्पबहुत्व कह ही दिया है। इतनी विशेषता है कि स्वामित्वविशेष जान लेना चाहिए। यहाँ अन्य कोई विशेषता नहीं है।

❀ जहा णिरयगईए तहा सव्वासु गईसु ।

§ २६५. एदस्स अप्पणासुत्तस्स आलावसामण्णमवेक्खिय पयट्टस्स सामित्ततदणुसारिगुणगारविसेसणिरवेक्खस्स अत्थपरूवणा अवहारिय सामित्तविसेसाणं सुगमा । एदेण गइसामण्णप्पणासुत्तेण मणुसगईए वि णिरओघभंगे अइयप्पसत्ते तव्वुदासदुवारेण तत्थ अववादपरूवणट्ठमुत्तरसुत्त भणदि—

❀ णवरि मणुसगदीए ओघं ।

§ २६६. एत्थ णवरि सद्दो पुव्विल्लप्पणादो एदस्स विसेससूचओ । को सो विसेसो ? मणुसगईए ओघमिदि मणुसगइओघालावमणूणाहियं लहदि त्ति वुत्तं होइ । तदो ओघालावो अणूणाहिओ एत्थ कायव्वो, मणुसगइसामण्णप्पणाए तदविरोहादो । विसेसप्पणाए पुण अत्थि भेदो, मणुसपज्जत्तएसु सुवदो बहिब्भूदइत्थिवेदोदएसु णवुंसयवेदस्सुवरि ओघम्मि विसेसाहियभावेण पदिदइत्थिवेदस्स चरिमफालिमाहप्पेण असंखेज्जगुणत्तुवलभादो । मणुसिणीसु वि माणसंजलणस्सुवरि मायासंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं । इत्थिवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं असंखेज्जगुणं; गुणसेढीए पाहण्णियादो । णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं, वेछावट्ठीण-

---

❀ जिस प्रकार नरकगतिमें अल्पबहुत्व है उसी प्रकार सब मार्गणाओंमें जानना चाहिए ।

§ २६५ स्वामित्व और उसके अनुसार गुणकारविशेषकी अपेक्षा किये बिना आलापसामान्यकी अपेक्षा प्रवृत्त हुए इस अर्पणा सूत्रकी अर्थप्ररूपणा सुगम है । इस गतिमार्गणासम्बन्धी अर्पणासूत्रके आश्रयसे मनुष्यगतिमें भी सामन्य नारकियोंके समान भङ्गका अतिप्रसङ्ग प्राप्त होने पर उसके निराकरण द्वारा वहाँ पर अपवादका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ इतनी विशेषता है कि मनुष्यगतिमें ओघके समान भङ्ग है ।

§ २६६. यहाँ पर 'णवरि' शब्द पहलेके सूत्रसे इसमें विशेषका सूचक है ।

शंका—वह विशेष क्या है ?

समाधान—'मनुष्यगतिमें ओघके समान है' ऐसा कहनेसे मनुष्यगतिमे ओघ आलाप न्यूनाधिकतासे रहित होकर प्राप्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है, इसलिए न्यूनता और अधिकतासे रहित ओघ आलाप यहाँ करना चाहिए, क्योंकि मनुष्यगति सामान्यकी विवक्षा होने पर उसमें ओघ आलापके घटित होनेमें विरोध नहीं आता । विशेषकी विवक्षा होनेपर तो भेद है ही, क्योंकि स्त्रीवेदके उदयसे रहित मनुष्यपर्याप्तकोंमें नपुंसकवेदके ऊपर ओघमें विशेष अधिकरूपसे प्राप्त हुआ स्त्रीवेद अन्तिम फालिके माहात्म्यसे असख्यातगुणा उपलब्ध होता है । मनुष्यिनियोंमें भी मान संज्वलनके ऊपर माया संज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है । उससे स्त्रीवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असख्यातगुणा है, क्योंकि यहाँ पर गुणश्रेणिकी प्रधानता

णवुंसयवेदो अधापवत्तचरिमसमए दसूणपुव्वकोडिणिज्जरादव्वपरिहीणसमसय-दव्वेण सह जहण्णसामित्तविहाणादो। इस्से जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं, दोण्हं पि दसूणपुव्वकोडिणिज्जराए सरिसीए संतीए बंधगद्धावसेण संखेज्जगुणत्तुवलंभादो त्ति। एसो च विसेसो दव्वट्ठियणयमस्सिऊण सुत्तयारेण ण विवक्खिओ। पज्जवट्ठिय-णयावलंबणेण पुण वक्खाणाइरिएहिं वक्खाणेयव्वो, व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तिरिति न्यायात्। सुगममन्यत्। संपहि सेसमग्गणाणं देसामासियभावेण इंदियमग्गणावयव-भूदएइंदिएसु जहण्णप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तपबंधमाह—

* एइंदिएसु सव्वत्थोवं सम्मत्ते जहण्णपदेससंतकम्मं।

§ २६७ कुदो? खविदकम्मंसियस्स भमिदवेछावट्ठिसागरोवमस्स दीहुव्वेल्लण-कालदुचरिमसमए वट्टमाणस्स दुसमयकालट्ठिदियएयणिसेयट्ठिदत्थोवयरजहण्ण-दव्वग्गहणादो।

* सम्मामिच्छत्ते जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं।

§ २६८ एत्थ कारणमोघसिद्धं। गुणगारो च सुगमो।

* अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं।

है। उससे नपुंसकवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म अन्तिम फालिके कारण असंख्यातगुणा है। उससे पुरुषवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है, क्योंकि दो छयासठ सागर भ्रमण किये नहीं गलनेसे अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें कुछ कम एक पूर्वकोटि प्रमाण निर्जराको प्राप्त हुए द्रव्यसे हीन अपने समस्त द्रव्यके साथ जघन्य स्वामित्वका विधान किया गया है। उससे हास्यमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है, क्योंकि दोनों ही कर्मोंकी कुछ कम एक पूर्वकोटि काल तक होनेवाली निर्जराके समान होते हुए भी बन्धक कालके वशसे पुरुषवेदके जघन्य प्रदेशसत्कर्मसे हास्यका जघन्य प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा उपलब्ध होता है। इस प्रकारके इस विशेषकी द्रव्यार्थिकनयका आश्रय लेकर सूत्रकारने विवक्षा नहीं की है। परन्तु पर्यायार्थिकनयका अवलम्बन लेकर व्याख्यानाचार्योंको व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि व्याख्यानसे विशेष प्रतिपत्ति होती है ऐसा न्यायवचन है। शेष कथन सुगम है। अब शेष मार्गणाओंके देशामर्षकरूपसे इन्द्रियमार्गणाके अवान्तर भेद एकेन्द्रियोंमें जघन्य अल्पबहुत्वके कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* एकेन्द्रियोंमें सम्यक्त्वमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म सबसे स्तोक है।

§ २६७ क्योंकि जो क्षपितकर्मांशिक जीव दो छयासठ सागर कालतक परिभ्रमण कर चुका है उसके दीर्घ उद्वेलनकालके द्विचरम समयमें विद्यमान रहते हुए दो समय कालकी स्थितिवाले एक निषेकमें स्थित अत्यन्त स्तोकतर जघन्य द्रव्यका ग्रहण किया है।

* उससे सम्यग्मिथ्यात्वमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

§ २६८. यहाँ पर कारण ओघके समान सिद्ध है और गुणकार भी सुगम है।

* उससे अनन्तानुबन्धी मानमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

§ २६९. को गुणगारो ? वेछावट्ठिसागरोवमदीहुव्वेल्लणकालणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी गुणसंकमोक्कड्डुक्कड्डणभागहारचरिमफालीहि गुणिय अधापवत्तभागहारेणोवट्टिदो। कुदो ? खविदकम्मंसियस्स अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णसंतकम्मियस्स तसेसुप्पज्जिय विसंजोइदअणंताणुवंधिचउक्कस्स पुणो अंतोमुहुत्तसंजुत्तस्स फलाभावेण अभमादिदवेछावट्ठिसागरोवमस्स एइंदिएसुप्पण्णपढमसमए जहण्णसामित्तपरूवणादो। कुदो वेछावट्ठिसागरोवमपरिब्भमणे फलाभावो ? ण, एइंदिएसुप्पत्तिअण्णहाणुववत्तीए। पुणो वि मिच्छत्तं गच्छमाणेण अधापवत्तेण पडिच्छिज्जमाणवेछावट्ठिसागरोवमब्भंतरसचिददिवड्ढगुणहाणिगुणिदपंचिंदियसमयपवद्धमेत्तसेसकसायदव्वस्स पुव्वपरूविदसामियजहण्णदव्वादो जोअगुणगारमाहप्पेण असखेज्जगुणत्तेण फलाणुवलंभादो। णिरयगईए वि अणताणुवधिचउक्कसामियस्स अपरिब्भमिदवेछावट्ठिसागरोवमस्स एइंदियजहण्णसंतकम्मेणेव पवेसणे एदं चेव कारणं वत्तव्वं, तत्थेव इत्थिवेदजहण्णसंतकम्मादो वंधगद्धावसेण णवुंसयवेदजहण्णसंतकम्मस्स संखेज्जगुणत्ते एवं तिपलिदोवमवेछावट्ठिसागरोवमाणमपरिब्भमणं कारणत्तेणं[1] परूवेयव्व।

---

§ २६९ गुणकार क्या है ? दो छयासठ सागरोपम दीर्घ उद्वेलन कालके भीतर प्राप्त नाना गुणहानि शलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिको गुणसंक्रमभागहार, अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार और अन्तिम फालिसे गुणित करके अधःप्रवृत्तभाहारका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतना गुणकार है, क्योंकि जो क्षपितकर्मांशिक जीव अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्म करके त्रसोंमें उत्पन्न हुआ। पुनः अनन्तानुवन्धीचतुष्ककी विसयोजना करके और अन्तर्मुहूर्तमें उससे सयुक्त होकर कोई लाभ न होनेसे दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण किये बिना एकेन्द्रियोंमें उत्पन्ना हुआ है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें जघन्य स्वामित्वका कथन किया है।

शंका—दो छयासठ सागर कालके भीतर परिभ्रमण करना निष्फल क्यों है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अन्यथा उसकी एकेन्द्रियोंमें उत्पत्ति वन नहीं सकती है। फिर भी मिथ्यात्वमें जाकर अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा संक्रमणको प्राप्त हुए और दो छयासठ सागर कालके भीतर सञ्चित हुए डेढ गुणहानिगुणित पञ्चेन्द्रियके समयप्रबद्धमात्र शेष कषायोंके द्रव्यके पहले कहे गये स्वामित्वविषयक जघन्य द्रव्यसे योग गुणकारके माहात्म्य वश असंख्यातगुणे होनेके कारण कोई फल नहीं उपलब्ध होता।

नरकगतिमें भी अनन्तानुबन्धीचतुष्कका स्वामित्व कहते समय उसे दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण न करा कर एकेन्द्रियोंमें जघन्य सत्कर्मरूपसे प्रवेश कराने में यही कारण कहना चाहिए। तथा वहीं स्त्रीवेदके जघन्य सत्कर्मसे बन्धक काल वश नपुसकवेदके जघन्य सत्कर्मके संख्यातगुणे होने पर इसी प्रकार तीन पल्य और दो छयासठ सागर कालके भीतर परिभ्रमण नहीं करना कारणरूपसे कहना चाहिए।

---

१. ता०प्रतौ '-मपरिब्भमणकारणत्तेण' इति पाठः।

* कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।
* मायाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।
* लोभे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २७० एदाणि सुत्ताणि सगंतोक्खित्तपयडिविसेसपच्चयाणि सुगमाणि त्ति ण वक्खाणायरो कीरदि ।

* मिच्छत्ते जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं ।

§ २७१ एत्थ चोदओ भणइ—जहा तुम्हेहि अणंताणुबंधीणं जहण्णसामित्तं परूविदं तहा मिच्छत्तादो तेसिं जहण्णपदेससंतकम्मेणासंखेज्जगुणेण होदव्वं, मिच्छत्तस्स बेछावट्ठीओ ममादिय सम्मत्तादो परिवडिय एइंदिएसुप्पण्णपढमसमए जहण्णसामित्तदंसणादो तेसिमण्णहा सामित्तविहाणादो च । ण च मिच्छत्तजहण्णसामिणा वि बेछावट्ठिसागरोवमाणि ण हिंडिदाणि त्ति वोत्तुं जुत्तं, अण्णहा तस्स जहण्णभावाणुववत्तीदो सव्वपरिब्भमणे कारणाणुवलंभादो च । एदम्हादो उवरिमअप्पाबहुअसाहणमाणजहण्णपदेससंतकम्मस्स असंखेज्जगुणत्तण्णहाणुववत्तीए च तस्सिद्धीदो । ण च अधापवत्तभागहारादो बेछावट्ठिसागरोवमब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थ-

* इससे अनन्तानुबन्धी क्रोधमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।
* इससे अनन्तानुबन्धी मायामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।
* इससे अनन्तानुबन्धी लोभमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २७० उत्तरोत्तर विशेष अधिक होनेका कारण प्रकृतिविशेष होना यह बात इन सूत्रोंमें ही गर्भित होनेसे ये सुगम हैं, इसलिए इनका व्याख्यान नहीं करते हैं ।

* इससे मिथ्यात्वमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है ।

§ २७१ शंका—यहाँ पर प्रश्न करनेवाला कहता है कि जिस प्रकार तुमने पहले अनन्तानुबन्धियोंका जघन्य स्वामित्व कहा है उसी प्रकार मिथ्यात्वसे उनका जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा होना चाहिए, क्योंकि सम्यक्त्वके साथ दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करके और मिथ्यात्वमें गिर कर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मिथ्यात्वका जघन्य स्वामित्व देखा जाता है और अनन्तानुबन्धियोंका इससे अन्यथा प्रकारसे जघन्य स्वामित्वका विधान किया है । यदि कहा जाय मिथ्यात्वका जघन्य स्वामी भी दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण नहीं करता है सो उसका ऐसा कहना युक्त नहीं है, क्योंकि ऐसा नहीं मानने पर मिथ्यात्वका जघन्यपना नहीं बन सकता है, दूसरे दो छयासठ सागरके भीतर परिभ्रमण नहीं करनेका कारण उपलब्ध नहीं होता । इससे तथा आगे जो अल्पबहुत्व मानका जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा कहा है वह अन्यथा बन नहीं सकता इससे भी उक्त कथनकी सिद्धि होती है । और यह कि अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा उत्पन्न की गई दो छयासठ सागर कालके भीतर की नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि है वह अधःप्रवृत्तभागहारसे

१ आ० प्रतौ '-पच्चयाणि' इति पाठः ।

रासीए उक्कड्डणभागहारपदुप्पणाए असंखेज्जगुणहीणत्तावलंबणेण पयददोसपरिहारो समंजसो, तत्तो तिस्से असंखेज्जगुणत्तपदुप्पाययउवरिमप्पाबहुअदंडएण सह विरोह-प्पसंगादो। वेछावट्ठिसागरोवमणाणागुणहाणिसलागाणं पि तत्थ तत्तो असंखेज्ज-गुणत्तुवलंभादो उव्वेल्लणकालणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासीदो वि तस्सा-संखेज्जगुणहीणत्तस्साणंतरमेव परूविदत्तादो च। तम्हा सामित्ताहिप्पाएणेवंविहेण हेट्ठुवरि णिवदेयव्वमेदेणप्पाबहुएण? ण तहाब्भुवगमो जुज्जंतओ, सुत्तेणेदेण सह विरोहादो। ण चेदमण्णहा काउं सक्किज्जइ, जिणाणमणण्णहावाइत्तादो। तदो ण पुव्वुत्तमणंताणुबंधिजहण्णसामित्तगुणगारो वा घडतओ त्ति? एत्थ परिहारो वुच्चदे— सच्चमेवेदं जइ सामित्तं तहाविहमेत्थ जहण्णत्तेणावलंबियं, तत्थ समणंतरपरूविददोसस्स परिहरेउमसक्कियत्तादो। किं तु अणंताणुबंधीणं पि मिच्छत्तस्सेव वेछावट्ठीओ भमाडिय जहण्णसामित्तविहाणेण पयददोसपरिहारो दट्ठव्वो, तस्स णिरवज्जत्तादो। ण एत्थ वि[२] पुव्वपरूविददोसो आसंकणिज्जो, वयाणुसारिआयावलंबणेण तस्स परिहारादो। ण संजुत्तावत्थाए वि एस पसंगो, तदण्णत्थ एवंविहणियमब्भुवगमादो भमिदवेछावट्ठि-

असंख्यातगुणी हीन होती है, अतः इस बातका अवलम्बन लेनेसे प्रकृत दोषका परिहार बन जायगा सो उसका ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि एक तो इस कथनका उससे अर्थात् अधःप्रवृत्तभागहारसे उसे अर्थात् दो छयासठ सागर कालके भीतर प्राप्त हुई अन्योन्याभ्यस्त राशिको असंख्यातगुणा उत्पन्न करनेवाले उपरिम अल्पबहुत्वदण्डकके साथ विरोधका प्रसङ्ग आता है, दूसरे वहाँ पर दो छयासठ सागर कालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाएँ भी उससे असंख्यातगुणी, उपलब्ध होती हैं, तीसरे उद्वेलन कालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानि-शलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे भी वह अधःप्रवृत्तभागहार असंख्यातगुणा हीन होता है यह अनन्तर पूर्व ही कह आये हैं, इसलिए स्वामित्वके अभिप्रायके अनुसार इस अल्प-बहुत्वको इस प्रकार अर्थात् हमारे द्वारा बतलाई गई विधिके अनुसार आगे पीछे रखना चाहिए। परन्तु वैसा मानना युक्त नहीं है, क्योंकि इस सूत्रके साथ विरोध आता है और इस सूत्रको अन्यथा कर नहीं सकते, क्योंकि जिनेन्द्रदेव अन्यथावादी नहीं होते। इसलिए अनन्तानुबन्धीके जघन्य स्वामित्वका पूर्वोक्त गुणकार घटित नहीं होता?

समाधान—अब यहाँ पर इस शंकाका परिहार करते हैं—यह सत्य ही है यदि उस प्रकारके जघन्य स्वामित्वका यहाँ पर अवलम्बन किया जावे, क्योंकि उस प्रकारसे जघन्य स्वामित्वके अवलम्बन करने पर अनन्तर पूर्व कहे गये दोषका परिहार करना अशक्य है। किन्तु मिथ्यात्वके समान ही दो छयासठ सागर कालके भीतर परिभ्रमण कराकर अनन्तानु-बन्धियोंके जघन्य स्वामित्वका विधान करनेसे प्रकृत दोषका परिहार जान लेना चाहिए, क्योंकि यह कथन निर्दोष है। यदि कोई यहाँ पर भी पहले कहे गये दोषकी आशंका करे तो उसका ऐसा करना ठीक नहीं है, क्योंकि व्ययके अनुसार आयका अवलम्वन करनेसे उसका परिहार हो जाता है। संयुक्तावस्थामें भी यही प्रसङ्ग आता है यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि एक तो उस

१ 'ता०प्रतौ पदुप्पाइय उवरिम' इति पाठ। २ ता०प्रतौ 'ण तत्थ वि' इति पाठः।

सागरोवमपरिभमिदकम्मसियम्मि तहाविहणियमाणब्भुवगमादो च। अह एवं, णिरयगईए मिच्छत्ताणंताणुबंधीणं जहण्णपदेसो किण्ण होदि; वेछावट्ठिसागरोवमाणि भमिय परिणामपच्चएण मिच्छत्तं गंतूण णेरइएसु उप्पाइय तेत्तीससागरोवमाणि थोवूणाणि सम्मत्तमणुपालाविय जहण्णसामित्तं दायव्व-मिदि ? ण एवं पि दोसाय, विरोहाभावेण तहाब्भुवगमादो। ण च वेछावट्ठि-सागरोवमाणि परिभमिदस्स तेत्तीससागरोवमपरिब्भमणासंभवेण पच्चवट्ठेयं, वेछावट्ठि-परिब्भमिदसागरोवमपुधत्तमेत्तसम्मत्तकालपरूवयसंकमसामित्तसुत्तबलेण तदविरोहसिद्धीए ण सो पसंगो। इत्थि-णवुंसयवेदाणमादेसजहण्णसामियस्स वि तत्थुवएसंतरमस्सियूण पयारंतरेण सामित्तविहाणादो। तं जहा—एत्थ वे उवएसा एक्को ताव सव्वासिं बंधपयडीणमायाणं वयाणुसारिणा होदव्वमिदि। अण्णेगो आयाणुसारी वओ, वयाणु-सारी वा आओ। किंतु सव्वपयडीणमप्पप्पणो मूलदव्वाणुसारेण समयाविरोहेण संकमो होइ त्ति। तत्थ पढमोवएसमस्सियूण पयदेयं मिच्छत्ताणंताणुबंधीणमादेस-जहण्णसामित्तप्पाबहुगं च इत्थि-णवुंसयवेदाणमोघजहण्णसामित्तं पि तदणुसारी णेय।

अवस्थाके सिवा अन्यत्र इस प्रकारका नियम स्वीकार किया गया है। दूसरे जो क्षपितकर्मांशिक जीव दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर चुका है उसके इस प्रकारके नियमका अव-लम्बन किया गया है।

शंका—यदि ऐसा है तो दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करा कर और परिणामोंके निमित्तसे मिथ्यात्वमें ले जाकर तथा नारकियोंमें उत्पन्न कराकर कुछ कम तेतीस सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन कराकर नरकगतिमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य स्वामित्व देना चाहिए ?

समाधान—यही भी दोषावायक नहीं है, क्योंकि विरोधका अभाव होनेसे इस प्रकारसे उक्त प्रकृतियोंका जघन्य स्वामित्व स्वीकार किया है। यदि कोई कहे कि जो दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करता रहा है उसका तेतीस सागर काल तक परिभ्रमण करना असम्भव है सो ऐसा निश्चय करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि दो छयासठ सागरप्रमाण कालके बाहर सागर पृथक्त्वप्रमाण सम्यक्त्वके कालका कथन करनेवाले संक्रमस्वामित्वसूत्रके बलसे उक्त कथन अविरोधी सिद्ध होनेसे उक्त दोषका प्रसङ्ग नहीं आता है। तथा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके आदेश जघन्य स्वामित्वका भी वहाँ पर उपदेशान्तरका आश्रय लेकर प्रकारान्तरसे स्वामित्वका विधान किया है। यथा—इस विषयमें दो उपदेश हैं—प्रथम उपदेश तो यह है कि सब बन्ध प्रकृतियोंके व्ययके अनुसार आय होना चाहिए। दूसरा उपदेश यह है कि आयके अनुसार व्यय नहीं होता तथा व्ययके अनुसार आय भी नहीं होता किन्तु सब प्रकृतियोंका अपने अपने मूल द्रव्यके अनुसार आगममें प्रतिपादित विधिके अनुसार संक्रम होता है। इनमेंसे प्रथम उपदेशके अनुसार मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धियोंका आदेश जघन्य स्वामित्वविषयक अल्पबहुत्व प्राप्त हुआ

1 ता प्रतौ 'वयाणुसारी आओ' इति पाठः। 2 ता प्रतौ -जहण्णं पि सामित्तं तदणुसारी' इति पाठः।

तत्थ सोदएण सामित्तविहाणट्ठं वेछावट्ठीओ भमाडिय मिच्छत्तढोवणादो तेसिमेव जहण्ण-सामित्तमादेसपडिवद्धं विदियउवएसावलवणेण पयट्टं, तत्थ तदणुसारेणेवप्पाबहुअ-परूवणुवलंभादो। तम्हा अहिप्पायभेदमिममासेज्ज सव्वत्थ सुत्ताणमविरोहो घडावेयव्वो त्ति ण किंचि दुग्घडं पेच्छामो। तदो सिद्धमायाणुसारिवयावलंविसामित्तावलंवणे-णाणंताणुवंधिलोभादो मिच्छत्तमसंखेज्जगुणमिदि। एत्थ गुणगारो अधापवत्तभागहारो पुव्वसुत्ते वि उव्वेल्लण०णाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्ण०भत्थरासीदो असंखेज्जगुणो त्ति घेत्तव्वो, हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासिम्मि भागे हिदे तहोवलंभादो।

❀ अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंतकम्मसंखेज्जगुणं।

§ २७२. एत्थ गुणगारो वेछावट्ठिसागरोवमणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्ण-ब्भत्थरासीदो असंखे०गुणो।

❀ कोधे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

❀ मायाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

❀ लोभे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २७३. एदाणि सुत्ताणि सुट्ठु सुगमाणि।

है। तथा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका ओघ जघन्य स्वामित्व भी उसीके अनुसार प्रवृत्त हुआ है। उनमेसे स्वोदयसे स्वामित्वका कथन करनेके लिए दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कराकर मिथ्यात्वका संक्रमण हो जानेसे उन्हींका आदेशप्रतिवद्ध जघन्य स्वामित्व द्वितीय उपदेशका अवलम्वन लेकर प्रवृत्त हुआ है, क्योंकि वहा पर उसीके अनुसार ही अल्प-वहुत्वका कथन उपलब्ध होता है, इसलिए इस भिन्न अभिप्रायका आश्रय लेकर सर्वत्र सूत्रोंमें अविरोध स्थापित कर लेना चाहिए, इसलिए हम कुछ भी दुर्घट नहीं देखते हैं।

इसलिए सिद्ध हुआ कि आयके अनुसार व्ययका अवलम्वन लेनेवाले स्वामित्वका अव-लम्वन लेनेसे अनन्तानुवन्धी लोभसे मिथ्यात्वका द्रव्य असख्यातगुणा है। यहा पर गुणकार अधः-प्रवृत्तभागहार है जो पहलेके सूत्रमे भी उद्वेलन भागहारकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे असंख्यातगुणा है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि अधःस्तन राशिका उपरिम राशिमें भाग देने पर उसकी उपलब्धि होती है।

* उससे अप्रत्याख्यान मानमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म असंख्यातगुणा है।

§ २७२. यहाँ पर गुणकार दो छयासठ सागरकी नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे असंख्यातगुणा है।

* उससे अप्रत्याख्यान क्रोधमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

* उससे अप्रत्याख्यान मायामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

* उससे अप्रत्याख्यान लोभमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २७३. ये सूत्र अत्यन्त सुगम हैं।

⊛ पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

⊛ कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

⊛ मायाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

⊛ लोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २७४. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि।

⊛ पुरिसवेदे जहण्णपदेससंतकम्ममणंतगुणं ।

§ २७५. कुदो ? देसघाइत्तादो बहूणं परिणामिकारणाणमुवलंभादो ।

⊛ इत्थिवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं ।

§ २७६. कुदो ? पुरिसवेदबंधगद्धादो इत्थिवेदबंधगद्धाए संखे०गुणत्तादो। एत्थ चोदओ भणइ, कथं बेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय पंचिंदिएसुप्पण्णपढमसमए जहण्णभावमुवगयस्सेदस्स तव्विवरीदसरूवादो पुरिसवेदादो असंखेज्जगुणहीणत्तं मोत्तूण संखेज्जगुणत्तं जुज्जदे। ण च एदमविवक्खिय एइंदियजहण्णसंतकम्मस्सेव संगहो त्ति वोत्तुं जुत्तं, एदम्हादो तस्स असंखे०गुणत्तेण जहण्णभावाणुववत्तीदो तव्विवक्खाए फलाणुवलंभादो च। तदो ण एदं सुत्तं समंजसमिदि। एत्थ परिहारो वुच्चदे—ण एसो

⊛ उससे प्रत्याख्यान मानमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

⊛ उससे प्रत्याख्यान क्रोधमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

⊛ उससे प्रत्याख्यान मायामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

⊛ उससे प्रत्याख्यान लोभमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २७४. ये सूत्र सुगम हैं।

⊛ उससे पुरुषवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म अनन्तगुणा है।

§ २७५. क्योंकि देशघाति होनेसे इसके परिणमन करानेके बहुतसे कारण पाये जाते हैं।

⊛ उससे स्त्रीवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है।

§ २७६. क्योंकि पुरुषवेदके बन्धक कालसे स्त्रीवेदका बन्धक काल संख्यातगुणा है।

शंका—यहाँ पर शंकाकार कहता है कि दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करके पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें जघन्य भावको प्राप्त हुआ वेद इसके विपरीत स्वभाववाला होनेसे पुरुषवेदके द्रव्यसे असंख्यातगुणे हीनको छोड़कर संख्यातगुणा कैसे बन सकता है। यदि कहा जाय कि इसकी अविवक्षा करके एकेन्द्रियके जघन्य सत्कर्मका ही संग्रह किया है सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि इससे एकेन्द्रियका जघन्य सत्कर्म असंख्यातगुणा होनेसे जघन्यपनेकी उत्पत्ति नहीं हो सकती और उसकी विवक्षा करनेमें कोई फल नहीं उपलब्ध होता इसलिए यह सूत्र ठीक नहीं है ?

समाधान—यहाँ इस शंकाका परिहार करते हैं—इस स्त्रीवेदके जघन्य स्वामीके दो

इत्थिवेदजहण्णसामिओ[1] वेछावट्ठिसागरोवमाणि भमादेयव्वो, तब्भमणे फलाणुवलंभादो। सो[2] च कुदो ? वेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय सम्मत्तादो परिवडिय इत्थिवेदं बंधमाणस्स पुरिसवेदादो अधापवत्तभागहारेण इत्थिवेदम्मि संकममाणदव्वस्स असंखेज्ज-पचिंदियसमयपबद्धमेत्तस्स एइंदियपाओग्गजहण्णपदेससंतकम्मं पेक्खियूण असंखेज्ज-गुणत्तादो। त पि कुदो णव्वदे ? अधापवत्तभागहारादो जोगगुणगारस्स असंखेज्ज-गुणत्तपरूवयसुत्तादो। तदो एइंदियसंचयस्स पाहण्णियादो बंधगद्धावसेण संखेज्ज-गुणत्तमविरुद्धं सिद्धं।

❀ हस्से जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं।

§ २७७. कुदो ? इत्थिवेदबंधगद्धादो एइंदिएसु हस्स-रइबंधगद्धाए संखेज्ज-गुणत्तादो।

❀ रदीए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

§ २७८. पयडिविसेसेण।

❀ सोगे जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं।

छ्यासठ सागर काल तक नहीं घुमाना चाहिए, क्योंकि उस कालके भीतर घुमानेमें कोई फल नहीं पाया जाता।

शंका—यह किस कारणसे है ?

समाधान—क्योंकि दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण करके और सम्यक्त्वसे च्युत होकर स्त्रीवेदका बन्ध करनेवाले जीवके पुरुषवेदमेंसे अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा स्त्रीवेदमें संक्रमणको प्राप्त होनेवाला पञ्चेन्द्रियके असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्य एकेन्द्रियके योग्य जघन्य प्रदेशसत्कर्मको देखते हुए असंख्यातगुणा होता है।

शंका—यह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—अधःप्रवृत्त भागहारसे योगगुणकार असंख्यातगुणा होता है ऐसा कथन करनेवाले सूत्रसे जाना जाता है।

इसलिए एकेन्द्रियके सञ्चयकी प्रधानता होनेसे बन्धक कालके वशसे पुरुषवेदके द्रव्यसे स्त्रीवेदका द्रव्य अविरोधरूपसे संख्यातगुणा सिद्ध होता है।

* उससे हास्यमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है।

§ २७७. क्योंकि स्त्रीवेदके बन्धक कालसे एकेन्द्रियोंमें हास्य और रतिका बन्धक काल संख्यातगुणा है।

* उससे रतिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २७८ क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है।

* उससे शोकमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म संख्यातगुणा है।

1 ता०प्रतौ 'ण एस दोसो इत्थिवेदजहण्णसामिओ' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'फलाणुवलंभादो च। सो' इति पाठः।

§ २७९. बंधगद्धाए बहुत्तुवलंभादो ।

* अरदीए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २८०. पयडिविसेसादो ।

* णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २८१. कुदो ? पंचिंदिएसु अरदि-सोगबंधगद्धादो तत्थतणणवुंसयवेदबंधगद्धाए विसेसाहियत्तादो । केत्तियमेत्तो बंधगद्धाविसेसो ? हस्स-रदिबंधगद्धाए संखेज्जभागमेत्तो । तदणुसारेण च दव्वविसेसो परूवेयव्वो ।

* दुगुंछाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २८२. धुवबंधित्तादो ।

* भए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २८३. पयडिविसेसेण बहुत्तुवलंभादो ।

* माणसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २८४. मोहणीयदसमभागं पेक्खियूण अट्ठमभागस्स विसेसाहियत्ते संदेहाभावादो ।

* कोहसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

* मायासंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

---

§ २७९. क्योंकि बन्धक काल इस प्रकारसे अवस्थित है।

* उससे अरतिमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २८०. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है।

* उससे नपुंसकवेदमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २८१. क्योंकि पञ्चेन्द्रियोंमें अरति और शोकके बन्धक कालसे वहाँ पर नपुंसकवेदका बन्धक काल विशेष अधिक है। बन्धककाल विशेषका प्रमाण कितना है ? हास्य और रतिके बन्धककालके संख्यातवें भागप्रमाण है। और इसीके अनुसार द्रव्यविशेषका कथन करना चाहिए।

* उससे जुगुप्सामें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २८२. क्योंकि यह ध्रुवबन्धिनी प्रकृति है।

उससे भयमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २८३. क्योंकि प्रकृतिविशेष होनेसे इसका इस क्रमसे अवस्थान है।

* उससे मानसंज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

§ २८४. क्योंकि मोहनीयके दसवें भागको देखते हुए इसका आठवाँ भाग विशेष अधिक होता है इसमें सन्देह नहीं है।

* उससे क्रोध संज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

* उससे माया संज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है।

❀ लोभसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं ।

§ २८५. सुगमं ।

एदेण देसामासियदंडएण सूचिदसेसासेसमग्गणाओ अणुमग्गिदव्वाओ जाव अणाहारि त्ति ।

एवमप्पाबहुअं समत्तं ।

❀ एत्तो भुजगार पदणिक्खेव-वड्डीओ च कादव्वाओ ।

§ २८६. एत्तो उवरि भुजगार परूविय तदो पदणिक्खेव-वड्डीओ कायव्वाओ त्ति उवरिमाणंतरसुत्तावेक्खो सुत्तत्थसंबंधो कायव्वो । संपहि एदस्स अत्थसमप्पणा-सुत्तस्स सूचिदासेसपरूवणस्स दव्वट्ठियणयावलंबिसिस्साणुग्गहकारिणो भगवदीए उच्चारणाए पसाएण पज्जवट्ठियपरूवणं भणिस्सामो । तं जहा—भुजगारविहत्तीए तत्थ इमाणि तेरसाणियोगद्दाराणि - समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति । तत्थ समुक्कित्तणाणु-गमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण मिच्छत्त-बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछाणमत्थि भुज० अप्प० अवट्ठिदविहत्तिओ । सम्म०-सम्मामि० अत्थि० भुज० अप्प० अवत्तव्वमवट्ठिदं च । अणंताणुबंधिचउक्कस्स अत्थि भुज० अप्प० अवट्ठिद० अवत्तव्वं । इत्थिवेद०-णवुंसय०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमत्थि भुज० अप्प०विहत्तिओ । अवट्ठिदं च उवसमसेढीए । एवं सव्वणेरइय--सव्वतिरिक्ख-

---

❀ उससे लोभसंज्वलनमें जघन्य प्रदेशसत्कर्म विशेष अधिक है ।

§ २८५. ये सूत्र सुगम हैं। इस देशामर्षकदण्डकका अवलम्बन लेकर अनाहारक मार्गणा तक समस्त मार्गणाओंका अनुमार्गण करना चाहिए ।

इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

❀ इससे आगे भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि करनी चाहिए ।

§ २८६. इससे आगे भुजगारका कथन करके अनन्तर पदनिक्षेप और वृद्धिका कथन करना चाहिए इस प्रकार उपरिम अनन्तर सूत्रकी अपेक्षा करके इस सूत्रके अर्थका सम्बन्ध करना चाहिए। अब समस्त प्ररूपणाओंको सूचन करनेवाले और द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन करनेवाले शिष्योंका अनुग्रह करनेवाले और मुख्यरूपसे अधिकारका सूचन करनेवाले इस सूत्रकी भगवती उच्चारणाके प्रसादसे विशेष प्ररूपणा करते हैं। यथा—भुजगार विभक्तिमें ये तेरह अनुयोगद्वार होते हैं—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक। उनमेंसे समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। उनमेंसे ओघसे मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्ति है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्यविभक्ति है। स्त्रीवेद, नपुसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी भुजगार और अल्पतरविभक्ति है। तथा उपशमश्रेणिमें अवस्थितविभक्ति है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य, देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम

सव्वमणुस्स-देव-भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति । णवरि मणुसतियवदिरित्तेसु इत्थि-णवुंस०-हस्स-रदि-अरदि-सोगाणमवट्ठिदं णत्थि । अण्णं च पंचिं०तिरिक्ख-अपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछ० अत्थि भुज० अप्प० अवट्ठि० । सत्तणोकसायाणमत्थि भुज० अप्प० । सम्मत्त०-सम्मामि० अत्थि अप्पदरविहत्ती । अणुदिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धि त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणताणु०चउक्क०-इत्थि-णवुंस० अत्थि अप्पदरविहत्ती । णवरि सम्म०-सम्मामि० भुजगारो वि दीसइ उवसमसेढीए कालं काऊण तत्तुप्पण्णउवसमसम्माइट्ठिम्मि त्ति एदेसु ण विवक्खियं, तदविवक्खाए कारणं जाणिय वत्तव्वं । बारसक० पुरिस० भय दुगुंछ० अत्थि भुज० अप्प० अवट्ठि० । हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमत्थि भुज० अप्प०विहत्तिया, उवसमसेढीदो अण्णत्थ एदेसिमवट्ठिदपदाभावादो । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

समुक्कित्तणा गदा ।

§ २८७ सामित्ताणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण मिच्छ० भुज० विहत्ती कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स । अवट्ठि० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स वा सासणसम्माइट्ठिस्स वा । अप्प० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स वा मिच्छाइट्ठिस्स वा । सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवत्त० कस्स ?

ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकको छोड़कर शेषमें स्त्रीवेद नपुंसकवेद हास्य रति अरति और शोककी अवस्थितविभक्ति नहीं है। और भी—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्ति है। सात नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्ति है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्व सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अल्पतरविभक्ति है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्ति भी दिखलाई देती है जो उपशमश्रेणिमें मरकर यहाँ उत्पन्न हुए उपशमसम्यग्दृष्टिके होती है परन्तु उसकी यहाँ विवक्षा नहीं है। उसकी विवक्षा न होनेका कारण जानकर कहना चाहिए। बारह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्ति है। हास्य, रति, अरति और शोककी भुजगार और अल्पतरविभक्ति है, क्योंकि उपशमश्रेणिके सिवा अन्यत्र इनका अवस्थितपद नहीं पाया जाता। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई।

§ २८७ स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्ति किसके होती है? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। अवस्थितविभक्ति किसके होती है? अन्यतर मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टिके होती है। अल्पतरविभक्ति किसके होती है। अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होती है। सम्यक्त्व

अण्णद० सम्माइट्ठिस्स। अवट्ठि० कस्स ? अण्ण० सासणसम्माइट्ठिस्स। अप्प० कस्स ? अण्ण० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठिस्स वा। अणंताणु०चउक्कस्स मिच्छत्त-भंगो। णवरि अवट्ठि० कस्स ? अण्ण० मिच्छाइट्ठिस्स। अवत्त० कस्स ? अण्णद० विसंजोइय पुणो संजुत्तपढमसमए वट्टमाणयस्स। वारसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० कस्स ? अण्ण० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि०। इत्थि०-णवुंस० भुज०-विहत्ति० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स। अप्प० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि० वा। हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं भुज०-अप्पद० कस्स ? अण्ण० सम्मा० मिच्छाइट्ठिस्स वा। एदेसिं छण्ण पि णोकसायाण अवट्ठि० कस्स ? अण्णद० चारित्त-मोहउवसामयस्स सव्वुवसामणाए वट्टमाणयस्स। पुरिस० भुज०-अप्प० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठिस्स वा। अवट्ठि० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स। एवं सव्वणेरइय--तिरिक्ख--पंचिंदियतिरिक्खतिय--मणुसतिय--देवगइदेवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। णवरि छण्णोकसायाणमवट्ठिदविहत्ती मणुसतियवदिरित्तमग्गणासु णत्थि। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० कस्स ? अण्णद० सम्म० सम्मामि०। अप्प० कस्स० अण्णद०। सत्तणोक० भुज०-अप्प० कस्स ? अण्ण०। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-

और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्यविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती है। अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सासादनसम्यग्दृष्टिके होती है। अल्पतर-विभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होती है। अनन्तानुबन्धी-चतुष्कका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। अवक्तव्यविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर विसयोजना करनेके बाद पुनः सयुक्त होनेके प्रथम समयमें विद्यमान जीवके होती है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होती है। स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी भुजगारविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। अल्पतरविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होती है। हास्य, रति, अरति और शोककी भुजगार और अल्पतरविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होती है। इन छहों नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? सर्वोपशामनाके साथ विद्यमान चारित्रमोहनीयकी उपशामना करनेवाले अन्यतर जीवके होती है। पुरुषवेदकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होती है। अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक, देवगतिमें सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति मनुष्यत्रिकके सिवा अन्य मार्गणाओंमें नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टिके होती है। अल्पतरविभक्ति किसके होती है ? अन्यतरके होती है। सात नोकषायोंकी भुजगार और

सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क०-इत्थि०-णवुंस० अप्प० कस्स ? अण्णद० । बारसक० पुरिस०-भय-दुगुंछ० तिण्णि वि पदाणि कस्स ? अण्णद० । चदुणोक० भुज०-अप्प० कस्स ? अण्णद० । एवं जाव अणाहारए त्ति ।

सामित्तं गदं ।

§ २८८. कालाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-अणंताणु०चउक्काणं भुज० विहत्ती केवचिरं ? जहण्णेण एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अप्प०विह० जह० एगस०, उक्क० बेछावट्ठि० सागरोवमाणि सादिरेयाणि । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया । णवरि मिच्छ० सत्त आवलियाओ । अणंताणु०चउक्क० अवत्त० जहण्णुक० एगस० । सम्म०-सम्मामि० भुज० जहण्णुक० अंतोमु० । अप्प० जह० अंतोमु०, उक्क० बेछावट्ठि-सागरो० सादिरेयाणि पलिदो० असंखे०भागेण । अवत्त० जहण्णुक० एगस० । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० आवलियाओ । बारसक० पुरिस०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया अंतोमुहुत्तं वा उवसमसेढिं पडुच्च । इत्थि०-णवुंस० भुज० जह०

अल्पतरविभक्ति किसके होती है ? अन्यतरके होती है। आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अल्पतरविभक्ति किसके होती है ? अन्यतरके होती है। बारह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्सा के तीनों पद किसके होते हैं ? अन्यतरके होते हैं। चार नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति किसके होती है ? अन्यतरके होती है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ।

§ २८८. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगारविभक्तिका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल सात आवलि है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतर विभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवां भाग अधिक दो छयासठ सागर है। अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक आवलि है। बारह कषाय पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय अथवा

एगस०, उक्क० अंतोमु० । अप्प० जह० एगसमओ, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि । हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं भुज०-अप्प० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । एदेसि छण्णोक० अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० ।

अन्तर्मुहूर्त है उपशमश्रेणिकी अपेक्षा । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी भुजगारविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर है । हास्य, रति, अरति और शोककी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इन छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

विशेषार्थ—ओघसे मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगारविभक्ति मिथ्यादृष्टि जीवके होती है । मिथ्यात्वमें भुजगारका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनके इस पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है । इनकी अल्पतरविभक्ति मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दोनोके होती है, इसलिए इनके इस पदका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यका असख्यातवा भाग अधिक दो छयासठ सागर कहा है । यहाँ प्रारम्भमें उपशमसम्यक्त्वके साथ रखकर और मध्यमें सम्यग्मिथ्यात्वमें ले जाकर वेदकसम्यक्त्वके साथ उत्कृष्ट काल तक रखकर मिथ्यात्वमें भी यथासम्भव काल तक अल्पतरविभक्ति करानेसे यह काल प्राप्त होता है । इनकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल सख्यात समय है यह स्पष्ट ही है । मात्र सासादनगुणस्थानमें मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्ति उसके पूरे उत्कृष्ट काल तक बनी रहे यह सम्भव है, इसलिए यहाँ मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल छह आवलिप्रमाण कहा है । अवक्तव्यविभक्ति बन्ध या सत्त्वके प्रारम्भ होनेके प्रथम समयमें होती है, इसलिए अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्ति उपशमसम्यक्त्वके समय होती है और इसका काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए यहाँ इन दो प्रकृतियोंकी भुजगारविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । इनकी अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है यह स्पष्ट ही है । इनकी अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय अनन्तानुबन्धीके समान तथा अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल छह आवलि मिथ्यात्वके समान घटित कर लेना चाहिए । बारह कषाय आदिकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दोनोंके होती है पर इनका उत्कृष्ट काल मिथ्यादृष्टिके ही सम्भव है, क्योंकि वहीं पर इनके ये दोनो पद पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक हो सकते हैं, इसलिए इनके इन दोनों पदोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण कहा है । इनकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है यह स्पष्ट ही है । तथा उपशमश्रेणिमें अन्तर्मुहूर्त काल तक इनका अवस्थितपद सम्भव है, इसलिए इस अपेक्षासे इनके अवस्थितपदका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है । स्त्रीवेद और नपुसकवेदका भुजगारपद तो अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त काल तक ही होता है पर इनका अल्पतरपद साधिक दो छयासठ सागर काल तक भी सम्भव है, इसलिए इनके इन दोनों पदोंका जघन्य काल एक समय तक भुजगारका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त और अल्पतरका उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण कहा है । हास्यादिका बन्ध

§ २८९ आदेसेण णेरइएसु मिच्छ० भुज० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीससागरोवमाणि देसूणाणि। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया आवलिया वा। एवमणंताणु०चउक्कस्स। णवरि अवत्त० जहण्णुक्क० एगस०। अवट्ठिदस्स वि संखेज्जा णेव समया उक्कस्सकालो वत्तव्वो। सम्म०-सम्मामि० भुज० जह० उक्क० अंतोमु०। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीस सागरोवमाणि। अवत्त० जहण्णुक्क० एगसमओ। अवट्ठि० ओघभंगो। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। इत्थि०-णवुंस० भुज० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीस सागरो० देसूणाणि। हस्स-रइ-अरइ-सोग० भुज०-अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं सत्तमाए पुढवीए।

सम्यग्दृष्टिके भी उपलब्ध होता है, इसलिए इनके अल्पतर और भुजगारपदका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त मात्र होनेसे उक्त कालप्रमाण कहा है। इन दो प्रकृतियोंका अवस्थितपद उपशमश्रेणिमें भी सम्भव है, इसलिए इसका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ २८९ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है अथवा एक आवलि है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। तथा अवस्थितविभक्तिका भी उत्कृष्ट काल संख्यात समय ही कहना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी भुजगारविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। हास्य, रति, अरति और शोककी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ सब प्रकृतियोंके सम्भव पदोंका काल ओघको देखकर घटित कर लेना चाहिए। मात्र अल्पतरविभक्तिके उत्कृष्ट कालमें जहाँ विशेषता है उसे और उपशमश्रेणिके कारण अवस्थित पदके कालमें जो विशेषता आती है वह यहाँ सम्भव न होनेसे उसे अलगसे घटित कर जान लेना चाहिए।

§ २९०. पढमाए जाव छट्ठि त्ति मिच्छ० भुज० ओघं। अप्प० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी भाणिदव्वा। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठसमया छावलिया वा। सम्म०-सम्मामि० भुज० जह० उक्क० अंतोमु०। अप्प० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदीओ। अवत्त०-अवट्ठि० ओघभंगो। अणंताणु०-चउक्कस्स मिच्छत्तभंगो। णवरि अवत्त० जहण्णुक्क० एगस०। अवट्ठिद० उक्क० संखेज्जा चेव समया। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० ओघो। इत्थि-णवुंस० भुज० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अप्पद० जह० एगसमओ, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। हस्स-रइ-अरइ-सोगाण णिरओघभंगो।

§ २९१. तिरिक्खगईए तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिए मिच्छ०-अणंताणु०-चउक्काणमोघो। णवरि अप्प० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पलिदो० असंखे०भागेण सादिरेयाणि। पंचिंदियतिरिक्खतियम्मि तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणऽभहियाणि। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० ओघं। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पलिदो० असंखे०भागेण सादिरेयाणि। पंचिंदियतिरिक्खतियम्मि तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणऽभहियाणि। बारसक०-

---

§ २९० पहली पृथिवी से लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमे मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका काल ओघके समान है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण कहना चाहिए। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय अथवा छह आवलि है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। अवक्तव्य और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल सख्यात ही समय है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका भङ्ग ओघके समान है। स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी भुजगारविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग सामान्य नारकियोंके समान है।

विशेषार्थ—यहाँ जिन प्रकृतियोंके जिन पदोंका काल अपनी स्थितिप्रमाण कहा है वहा अपने अपने नरककी उत्कृष्ट स्थिति लेनी चाहिए। शेष कथन सुगम है।

§ २९१. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तिर्यञ्चोंमें पल्यका असख्यातवा भाग अधिक तीन पल्य है तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें पूर्व कोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अव्यक्तव्यविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तिर्यञ्चोंमें पल्यका असख्यातवा भाग अधिक तीन पल्य है और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें पूर्व कोटिपृथक्त्व अधिक

पुरिस०-भय-दुगुंछ० ओघो। णवरि अवट्ठि० अंतोमुहुत्तं णत्थि। इत्थि०-णवुंस० भुज० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि। जोणिणीसु देसूणाणि। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघो। णवरि अवट्ठिदं णत्थि।

§ २९२ पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। सम्म०-सम्मामि० अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सत्तणोक० भुज० अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं मणुसअपज्जत्तएसु।

§ २९३ मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि इत्थि०-णवुंस० अप्प० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडितिभागेण सादिरेयाणि। मणुसिणीसु देसूणाणि। बारसक०-णवणोक० अवट्ठि० ओघभंगो।

तीन पल्य है। बारह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्साका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्तिका अन्तर्मुहूर्त काल नहीं है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी भुजगारविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतर विभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पल्य है। मात्र योनिनी जीवोंमें यह काल कुछ कम तीन पल्य है। हास्य, रति अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनका अवस्थित पद नहीं है।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिककी कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। इसलिए इनमें जिन प्रकृतियोंके जिन पदोंका काल उत्कृष्टप्रमाण कहा है वह अपनी अपनी कायस्थितिको ध्यानमें रखकर घटित कर लेना चाहिए। मात्र तिर्यञ्चोंकी कायस्थिति अनन्त काल है पर उनमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अल्पतरविभक्ति पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तीन पल्य काल तक ही बन सकती है, इसलिए यह काल उक्त प्रमाण कहा है। इसी प्रकार शेष कालको भी विचार कर घटित कर लेना चाहिए।

§ २९२ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तक जीवोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर विभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सात नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

§ २९३. मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य है। मात्र मनुष्यिनियोंमें कुछ कम तीन पल्य है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवस्थित पदका भङ्ग ओघके समान है।

विशेषार्थ—सामान्य मनुष्य और मनुष्य पर्याप्त एक पूर्वकोटिके त्रिभाग अधिक तीन पल्य काल तक सम्यक्त्वी हो सकते हैं और इतने काल तक स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका

§ २६४. देवगईए देवेसु मिच्छत्त-अणंताणु०चउक्क० भुज०-अवट्ठि० अणंताणु० चउक्क० अवत्त० ओघो। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० ओघो। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछ०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघो। णवरि वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० अवट्ठि० उक्क० संखेज्जा[1] समया। चदुणोकसाय० अवट्ठिदं णत्थि। इत्थि०-णवुंस० भुज० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अप्प० जह० एगसमओ, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। एवं भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। णवरि जत्थ तेत्तीसं सागरोवमाणि तत्थ सगट्ठिदी भाणिदव्वा। भवण०-वाण०-जोदिसि० इत्थि०-णवुंस० सगट्ठिदो देसूणा।

§ २६५. अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थि० णवुंस० अप्पद० जहण्णुक्कस्से० जहण्णुक्कस्सट्ठिदीओ। सम्म० अप्प० जह० एगस०

अल्पतर पद बन जाता है। मात्र मनुष्यिनीमें यह काल कुछ कम तीन पल्य ही प्राप्त होता है। इसलिए इन तीन प्रकारके मनुष्योंमें उक्त दो वेदोंके अल्पतर पदका उक्त काल कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ २६४. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार और अवस्थितविभक्तिका तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य विभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। वारह कषाय, पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि वारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। तथा चार नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति नहीं है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी भुजगारविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतर-विभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसीप्रकार भवन-वासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहा पर तेतीस सागर कहे हैं वहा पर अपनी स्थिति कहनी चाहिए। तथा भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी अल्पतरविभक्तिका उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण कहना चाहिए।

विशेषार्थ—सौधर्मादिकमें सम्यग्दृष्टि जीव अपने पूरे काल तक पाये जाते हैं और भवनत्रिकमें नहीं, इसलिए यहाँ भवनत्रिकमें स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी अल्पतरविभक्तिका उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण कहा है और सौधर्मादिकमें पूरी अपनी अपनी स्थितिप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ २६५. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमे मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अल्पतरविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी जघन्य और

१. ता०प्रतौ 'अवट्ठि० सखेज्जा' इति पाठः।

उक्कस्सणिसेयं पडुच्च, उक्क० सगट्ठिदी। अणंताणु०चउक्क० अप्प० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी। बारसक०-सत्तणोक० देवोघं। एवं जाव अणाहारि त्ति।

कालाणुगमो समत्तो।

§ २६६ अंतराणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० भुज०विहत्तीए अंतर जह० एगस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। भुजगार-अप्पदरकालाणमण्णोण्णमणुसंधिय ट्ठिदाणमवट्ठिदविहत्तीए अंतरत्तेण गहणादो। एत्थ पादेक्कं पलिदो० असंखे०भागपमाणाणमण्णोण्णसंधाणेण एत्तियं? ण, बहुसो परियट्टणाणं च असंखेज्जपरियट्टणपमाणेहि तेसिं तदभावे विरोहाभावादो। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अप्प० जह० अंतोमु०, अवत्त०-अवट्ठि० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० सव्वेसिं पि उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अणंताणु०चउक्क०

उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्वकी अल्पतरविभक्तिका कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टिकी अपेक्षा जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण है। बारह कषाय और सात नोकषायोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणातक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—अनुदिशसे लेकर सब देव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, इसलिए इनमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका एक अल्पतर पद होता है, अतः इन प्रकृतियोंके इस पदका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिको ध्यानमें रख कर कहा है। शेष कथन सुगम है।

इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

§ २६६ अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। यहाँ पर भुजगार और अल्पतरविभक्तिके कालोंको परस्पर जोड़कर स्थित हुए जीवोंकी अवस्थितविभक्तिका अन्तर काल ग्रहण किया है।

शंका—भुजगार और अल्पतरविभक्तियोंमेंसे प्रत्येकका काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इन दोनोंके सम्बन्धसे इतना बड़ा काल कैसे बन सकता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि उपशम और क्षपकके समान असंख्यात बार परिवर्तनोंका अवलम्बन लेकर भुजगार और अल्पतरविभक्तिके उपलम्भके होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, अवक्तव्य और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और सबका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी

भुज० मिच्छत्तभंगो। अप्प० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। बारसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० मिच्छत्तभंगो। एवं पुरिस०। णवरि अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। इत्थि० भुज० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं णवुंस०। णवरि भुज० जह० एगसमओ, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० तीहि पलिदोवमेहि सादिरेयाणि। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं भुज०-अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। छण्णोक० अवट्ठि० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

भुजगारविभक्तिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इसीप्रकार पुरुषवेदके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। स्त्रीवेदकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार नपुंसकवेदके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। हास्य, रति, अरति और शोककी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्ति मिथ्यात्व गुणस्थानमें होती है और मिथ्यात्व गुणस्थानका उत्कृष्ट अन्तर दो छयासठ सागरप्रमाण है, इसलिए यहाँ मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर कहा है। यहाँ साधिकसे मिथ्यात्व गुणस्थानमें मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्तिका काल ले लिया है। मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए यहाँ इसकी अल्पतरविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर काल असंख्यात लोकप्रमाण है इस बातका स्पष्टीकरण मूलमें ही किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका कमसे कम काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए इनके उक्त दोनों पदोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। इनकी अवक्तव्यविभक्ति उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें ऐसे जीवके होती है जिसके इनका सत्त्व नहीं है और उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त करनेका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए तो इनकी अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा इनकी अवस्थित-

§ २९७ आदेसेण णेरइएसु मिच्छ० भुज०-अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अप्प० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० भुज० अवट्ठि०-अवत्त० ज० पलिदो० असंखे०भागो, अप्प०

विभक्ति सासादन गुणस्थानमें होती है इसलिए इनकी अवस्थितविभक्तिका भी जघन्य अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। यह सम्भव है कि अर्ध पुद्गल परिवर्तनके प्रारम्भमें और अन्तमें इन दोनों प्रकृतियोंके उक्त चार पद हों और मध्यमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना हो जानेसे न हों अतः यहाँ इनके चारों पदोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण कहा है। वेदकसम्यग्दृष्टि जीव यदि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना न करे तो दो छयासठ सागर काल तक अल्पतरविभक्ति होती है, इसलिए तो इनकी भुजगारविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिके समान उक्त कालप्रमाण कहा है और यदि विसंयोजना कर दे तथा मिथ्यात्वमें आकर संयुक्त होकर अल्पतरविभक्ति करे तो इनकी अल्पतरविभक्तिका भी उक्त कालप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होनेसे वह भी उक्त कालप्रमाण कहा है। इनकी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोक जैसे मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्तिका घटित करके सूत्रमें बतलाया है उसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। इनकी दो बार विसंयोजना होकर पुनः संयुक्त होनेमें जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त लगता है और विसंयोजना होकर संयुक्त होनेकी क्रिया अर्ध पुद्गल परिवर्तन कालके प्रारम्भमें एक बार हो तथा दूसरी बार अन्तमें हो यह भी सम्भव है, इसलिए इनके अवक्तव्य पदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण कहा है। चार कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनके इन दोनों पदोंका उत्कृष्ट अन्तर भी उक्त कालप्रमाण प्राप्त होनेसे उतना कहा है। इनकी अवस्थितविभक्तिका अन्तर काल मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्तिके समान है यह स्पष्ट ही है। पुरुषवेदके सब पदोंका भी इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र इसकी अवस्थितविभक्ति सम्यग्दृष्टिके होती है और सम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है, इसलिए इसके उक्त पदका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। स्त्रीवेदकी अल्पतरविभक्तिका उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है और भुजगार विभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए यहाँ इसकी भुजगारविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण और अल्पतरविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। नपुंसकवेदकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र भोगभूमिमें पर्याप्त होनेपर नपुंसकवेदका बन्ध नहीं होता इसलिए इसकी भुजगार विभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागर प्राप्त होनेसे उक्त काल प्रमाण कहा है। हास्यादि चार सप्रतिपक्ष प्रकृतियाँ हैं इसलिए इनकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होनेसे उक्त कालप्रमाण कहा है। यहाँ स्त्रीवेद आदि उक्त सब नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति उपशमश्रेणिमें प्राप्त होती है और उपशमश्रेणिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है, इसलिए इनके इस पदका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। यहाँ सब प्रकृतियोंके सब पदोंका जघन्य अन्तर सुगम होनेसे घटित करके नहीं बतलाया है सो जान लेना।

§ २९८. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अल्पतर विभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और

जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वेसिं पि तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अणंताणु०चउक्क० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एगस०, अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० चत्तारि वि पदाणि तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प० ओघं। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीस सागरो० देसूणाणि। इत्थि०-णवुंस० भुज० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं साग० देसूणाणि। अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघो। णवरि अवट्ठि० णत्थि। एवं पढमादि जाव सत्तमा त्ति। णवरि सगट्ठिदी देसूणा भाणियव्वा।

§ २६८ तिरिक्खगईए तिरिक्खेसु मिच्छ० भुज० जह० एगसमओ, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पलिदो० असंखे०भाएण सादिरेयाणि। अप्प०-अवट्ठि० ओघो। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० जह० पलिदो० असंखे०भागो, अप्प० जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अणताणु०चउक्क० भुज०-अप्प० जह० एगसमओ, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। अप्प० देसूणाणि। अवट्ठि०-

सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित-विभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और चारोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी भुजगार-विभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अल्पतर-विभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनका अवस्थितपद नहीं है। पहली पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

विशेषार्थ—ओघमें हम सब प्रकृतियोंके अलग-अलग पदोंका अन्तर काल घटित करके बतला आये हैं। यहाँ नरकमें अपनी-अपनी विशेषताको ध्यानमें लेकर और यहाँके उत्कृष्ट कालको जानकर वह घटित कर लेना चाहिए। मात्र नरकमें उपशमश्रेणिकी प्राप्ति सम्भव न होनेसे यहाँ स्त्रीवेद आदि छह नोकषायोंके अवस्थितपदका निषेध किया है। प्रत्येक नरकमें भी इन्हीं विशेषताओंको ध्यानमें लेकर यह अन्तर काल घटित कर लेना चाहिए।

§ २६८. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक तीन पल्य है। अल्पतर और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अल्पतर-विभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और

अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। मणुसअपज्ज० पंचि०तिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

§ ३०२. देवगदीए देवेसु मिच्छ० भुज०-अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अप्पद० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अप्प० जह० अंतोमु०, उक्क० तं चेव। अणंताणु०चउक्क० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एगस०, अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० चदुण्हं पि एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णारयभंगो। इत्थि०-णवुंस० भुज० जह० एग०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि। अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघं। णवरि अवट्ठि० णत्थि। भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति एवं चेव। णवरि सगट्ठिदी भाणियव्वा।

पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे और पूर्वकोटिपृथक्त्वके अन्तरसे उपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति सम्भव होनेसे यहाँ इन प्रकृतियोंकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहा है। तथा मनुष्यत्रिकमें उपशमसम्यक्त्व की प्राप्तिके समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगार होकर कमसे कम अन्तर्मुहूर्तके भीतर क्षायिकसम्यक्त्वकी प्राप्ति होने पर उस समय भी भुजगारपद सम्भव है या अधिकसे अधिक पूर्वकोटि पृथक्त्व कालके अन्तमें क्षायिक सम्यक्त्वकी प्राप्ति होने पर उस समय भी भुजगारपद सम्भव है इसलिए इन दोनों प्रकृतियोंकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहू० और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्वप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३०२. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर यही है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और चारों ही का उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका भङ्ग नारकियोंके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितपद नहीं है। भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

§ ३०३. अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०-चउक्क०-इत्थि-णवुंस अप्पं० णत्थि अंतरं। बारसक०-पुरिस०-भय०-दुगुंछा० भुज०-अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। हस्स-रइ अरइ-सोगाणमोघो। णवरि अवट्ठि० णत्थि। एवं जाव अणाहारि त्ति।

अंतरं गदं।

§ ३०४. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण छव्वीसं पयडीणं सव्वपदाणि णियमा अत्थि। णवरि अणंताणु०चउक्क० अवत्त० पुरिस०-इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोग० अवट्ठि० भयणिज्जं। सम्म०-सम्मामि० अप्प० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। एवं तिरिक्खेसु। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि।

§ ३०५. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-बारसक०-पुरिस०-भय०दुगुंछा० भुज०-

विशेषार्थ—देवोंमे नौवें ग्रैवेयक तक ही मिथ्यादृष्टि होते हैं, इसलिए इस बातको ध्यानमे रखकर अपने स्वामित्वके अनुसार यहाँ पर अन्तर काल घटित कर लेना चाहिए।

§ ३०३. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोमे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी अल्पतरविभक्तिका अन्तर काल नहीं है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनका अवस्थितपद नहीं है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—अनुदिशसे लेकर आगेके देवोंमें सब सम्यग्दृष्टि होते हैं, इसलिए उनमें मिथ्यात्व आदि नौ प्रकृतियोंकी एक अल्पतरविभक्ति होनेसे उसके अन्तर कालका निषेध किया है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

इस प्रकार अन्तर काल समाप्त हुआ।

§ ३०४. नाना जीवोंका अवलम्बन लेकर भङ्ग विचयानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके सब पद नियमसे हैं। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्ति, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी अवस्थितविभक्ति भजनीय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्ति नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति नहीं है।

§ ३०५ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी

१ ता०प्रतौ 'णवुंस० भुज० अप्प०' इति पाठः।

अवत्त० भागो। बारसक० पुरिस०-भय-दुगुंछा० ओघो। णवरि पुरिस० अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। इत्थि० भुज० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। णवुंस० अप्प० ओघो। भुज० जह० एगस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघो। णवरि अवट्ठि० णत्थि।

§ २६६. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ० भुज०-अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अणंताणु०चउक्क० भुज०-अवट्ठि० मिच्छत्तभंगो। अप्प० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि

उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। मात्र अल्पतरविभक्तिका कुछ कम तीन पल्य है। अवस्थित और अवक्तव्यविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। स्त्रीवेदकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदकी अल्पतरविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। हास्य रति अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनका अवस्थितपद नहीं है।

विशेषार्थ—कोई तिर्यञ्च पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्ति करता रहा। इसके बाद तीन पल्यकी आयुके साथ भोगभूमिमें उत्पन्न हो वहाँ भी आयुके अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने तक मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्ति करता रहा। इस प्रकार भुजगार विभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी भुजगारविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर काल साधिक तीन पल्य इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अल्पतरविभक्ति उत्तम भोगभूमिमें कुछ कम तीन पल्य ही बन सकती है, क्योंकि तिर्यञ्चोंमें वेदक सम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल इतना ही प्राप्त होता है, इसलिए इनकी अल्पतरविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य कहा है। पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्ति सम्यग्दृष्टिके होती है और तिर्यञ्चोंमें वेदकसम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है, इसलिए यहाँ पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। सम्यग्दृष्टिके स्त्रीवेदकी भुजगारविभक्ति नहीं होती और तिर्यञ्चोंमें वेदकसम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है, इसलिए इनमें स्त्रीवेदकी भुजगारविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य कहा है। परन्तु नपुंसकवेदकी भुजगारविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर कर्मभूमिज तिर्यञ्चोंके ही प्राप्त होता है और इनमें वेदकसम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल कुछ कम एक पूर्वकोटि है, इसलिए तिर्यञ्चोंमें नपुंसकवेदकी भुजगारविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ २६६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चअपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनन्तानु

पलिदो० देसूणाणि। अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० जह० पलिदो० असंखे०भागो, अप्प० जह० अंतोमु०, उक्क० सव्वपदाणं सगट्ठिदी देसूणा। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० भुज०-अप्पदर० ओघो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। पुरिस० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। इत्थि०-णवुंसय०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं तिरिक्खोघो।

§ ३००. पंचि०तिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह एगस०, उक्क० अंतोमु०। सत्तणोक० भुज०-अप्प० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं। सम्म०-सम्मामि० अप्प० णत्थि अंतरं।

§ ३०१. मणुस्सगईए मणुस्सतियस्स पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं। सम्म०-सम्मामि० भुज० जह०

बन्धीचतुष्ककी भुजगार और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्यप्रमाण है। अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और सब पदोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। मात्र पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। स्त्रीवेद, नपुसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिककी उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। इसे ध्यान मे रखकर यहाँ अन्तर काल घटित करके बतलाया गया है। शेष विशेषता स्वामित्वको ध्यानमें रखकर जान लेनी चाहिए।

§ ३०० पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सात नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है।

विशेषार्थ—इन तिर्यञ्चोंकी उत्कृष्ट कायस्थिति अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको छोड़कर शेष सब प्रकृतियोंके सम्भव पदोंका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका एक अल्पतरपद होता है, इसलिए उसके अन्तर कालका निषेध किया है।

§ ३०१. मनुष्यगतिमें मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर

अंतोमु०, उक्क० समट्ठिदी देसूणा। मणुसअपज्ज० पंचिं०तिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

§ १०२ देवगईए देवेसु मिच्छ० भुज०-अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अप्पद० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० जह० पलिदो० असंखे० भागो, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अप्प० जह० अंतोमु०, उक्क० तं चेव। अणंताणु०चउक्क० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० जह० एगस०, अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० चदुण्हं पि एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुं० णेरइयभंगो। इत्थि०-णवुंस० भुज० जह० एग०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि। अप्प० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघं। णवरि अवट्ठि० णत्थि। भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति एवं चेव। णवरि सगट्ठिदी भाणियव्वा।

पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे और पूर्वकोटिपृथक्त्वके अन्तरसे उपशमश्रेणिकी प्राप्ति सम्भव होनेसे यहाँ बारह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण कहा है। तथा मनुष्यत्रिकमें उपशमसम्यक्त्व की प्राप्तिके समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगार होकर कमसे कम अन्तर्मुहूर्तके भीतर क्षायिकसम्यक्त्वकी प्राप्ति होने पर उस समय भी भुजगारपद सम्भव है या अधिकसे अधिक पूर्वकोटि पृथक्त्व कालके अन्तमें क्षायिक सम्यक्त्वकी प्राप्ति होने पर उस समय भी भुजगारपद सम्भव है इसलिए इन दोनों प्रकृतियोंकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्वप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ १०२. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर वही है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और चारों ही का उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। बारह कषाय पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका भङ्ग नारकियोंके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितपद नहीं है। भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहलानी चाहिए।

§ ३०३. अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०-चउक्क०-इत्थि-णवुंस अप्पं० णत्थि अंतरं। बारसक०-पुरिस०-भय०-दुगुंछा० भुज०-अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघो। णवरि अवट्ठि० णत्थि। एवं जाव अणाहारि त्ति।

अंतरं गदं।

§ ३०४. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण छब्बीस पयडीणं सव्वपदाणि णियमा अत्थि। णवरि अणंताणु०चउक्क० अवत्त० पुरिस०-इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोग० अवट्ठि० भयणिज्जं। सम्म०-सम्मामि० अप्प० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। एवं तिरिक्खेसु। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि।

§ ३०५. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-बारसक०-पुरिस०-भय०दुगुंछा० भुज०-

विशेषार्थ—देवोंमें नौवें ग्रैवेयक तक ही मिथ्यादृष्टि होते हैं, इसलिए इस बातको ध्यानमें रखकर अपने स्वामित्वके अनुसार यहाँ पर अन्तर काल घटित कर लेना चाहिए।

§ ३०३. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोमे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी अल्पतरविभक्तिका अन्तर काल नहीं है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि इनका अवस्थितपद नहीं है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—अनुदिशसे लेकर आगेके देवोमें सब सम्यग्दृष्टि होते हैं, इसलिए उनमें मिथ्यात्व आदि नौ प्रकृतियोंकी एक अल्पतरविभक्ति होनेसे उसके अन्तर कालका निषेध किया है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

इस प्रकार अन्तर काल समाप्त हुआ।

§ ३०४. नाना जीवोका अवलम्बन लेकर भङ्ग विचयानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके सब पद नियमसे हैं। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्ति, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी अवस्थितविभक्ति भजनीय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्ति नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। इसी प्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति नहीं है।

§ ३०५ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी

१ ता०प्रतौ 'णवुंस० भुज० अप्प०' इति पाठ।

अप्प० णियमा अत्थि। अवट्ठि० भयणिज्जा। एत्थ भंगाणि तिण्णि। सम्म०-सम्मामि०-छण्णोक० ओघो। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि। अणंताणु०चउक्क०-भुज०-अप्प० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। एवं सव्वणेरइय-पंचिंदियतिरिक्खतिय-मणुसतिय-देव-भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। णवरि मणुसतिए छण्णोक० अवट्ठि० ओघं।

§ २०६. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प० णियमा अत्थि। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिओ च। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिया च। सम्म०-सम्मामि० अप्प० णियमा अत्थि। सत्तणोक० भुज०-अप्प० णियमा अत्थि। मणुसअपज्ज० सव्वपयडीणं सव्वपदाणि भयणिज्जाणि। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क०-इत्थि०-णवुंस० अप्प० णियमा अत्थि। बारसक०-पुरिस०-भय०-दुगुंछ० णेरइयभंगो। चदुणोकसायाणमोघो। णवरि अवट्ठि० णत्थि। एवं जाव अणाहारि त्ति।

णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमो समत्तो।

§ २०७. भागाभागाणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण

भुजगार और अल्पतरविभक्ति नियमसे है। अवस्थितविभक्ति भजनीय है। यहाँ पर भङ्ग तीन हैं। सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व और छह नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगार और अल्पतरविभक्ति नियमसे है। शेष पद भजनीय हैं। इसी प्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक, देवगतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है।

§ २०६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति नियमसे है। कदाचित् इन विभक्तियोंवाले नाना जीव हैं और अवस्थितविभक्तिवाला एक जीव है। कदाचित् इन विभक्तियोंवाले नाना जीव हैं और अवस्थितविभक्तिवाले नाना जीव हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्ति नियमसे है। सात नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति नियमसे है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पद भजनीय हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अल्पतरविभक्ति नियमसे है। बारह कषाय पुरुषवेद भय और जुगुप्साका भङ्ग नारकियोंके समान है। चार नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्ति नहीं है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचयानुगम समाप्त हुआ।

§ २०७. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे

मिच्छत्त०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०विहत्तिया सव्वजीवाणं केवडिओ भागो ? सखेज्जा भागा। अप्प० सव्वजी० केव० ? संखे०भागो। अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। णवरि अणताणु०चउक्क० अवत्त० सव्वजी० केव० ? अणंतिमभागो। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवत्त०-अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? असखे०भागो। अप्प० असखेज्जा भागा। इत्थि-हस्स-रइ० भुज० सव्व० केव० ? सखे०भागो। अप्प० सखेज्जा भागा। पुरिस० एवं चेव। णवरि अवट्ठि० अणंतिमभागो। णवुंस०-अरदि-सोग० भुज० सव्वजी० केव० ? सखेज्जा भागा। अप्प० सव्वजी० केव० ? संखे०-भागो। छण्णोक० अवट्ठि० सव्वजी० के० ? अणतिमभागो। एव तिरिक्खा०। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि।

§ ३०८. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्म०--सम्मामि०-बारसक०--अट्ठणो-कसायाणमोघो। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि। अणताणु०चउक्क० भुज० सव्वजी० केव० ? संखेज्जा भागा। अप्प० सव्वजी० केव० ? संखे०भागो। सेसपदट्ठिद० असखे०भागो। पुरिस० ओघो। णवरि अवट्ठि० सव्वजी० के० ? असंखे०भागो।

मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगारविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? सख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असख्यातवें भागप्रमाण हैं। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवक्तव्य और अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव असख्यात बहुभागप्रमाण हैं। स्त्रीवेद, हास्य और रतिकी भुजगारविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव सख्यात बहुभागप्रमाण हैं। पुरुषवेदका भङ्ग इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्तिवाले जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। नपुसकवेद, अरति और शोककी भुजगारविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? सख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। छह नोकषायोंके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अवस्थितविभक्ति नहीं है।

§ ३०८. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और आठ नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंकी अवस्थित-विभक्ति नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगारविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? सख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष पदविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। पुरुषवेदका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब

एवं सत्तसु पुढवीसु पंचिं०तिरिक्खतिय० मणुस्सोघो देवगइ भवणादि जाव सहस्सारे त्ति देवेसु णेदव्वं। णवरि मणुस्सेसु अणंता० अवट्ठि० असंखे०भागो।

§ २०९. पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज० सव्वजी० केव० ? संखेज्जा भागा। अप्प० सव्वजी० केव० ? संखे०भागो। अवट्ठि० असंखे०भागो। सम्म० सम्मामि० णत्थि भागाभागो। कुदो ? एयपदत्तादो। इत्थि० पुरिस० हस्स-रइ० भुज० सव्वजी० केव० ? संखे०भागा। अप्प० सव्वजी० केव० ? संखेज्जा भागा। णवुंस०-अरदि-सोग० भुज० संखेज्जा भागा। अप्प० संखे०भागो। एवं मणुसअपज्जत्ताणं।

§ २१०. मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु मिच्छत्त-बारसक०-भय-दुगुंछ० भुज० संखेज्जा भागा। अप्प०-अवट्ठि० संखे०भागो। एवमणंताणु०चउक्कस्स। णवरि अवत्त० संखे० भागो। सम्म०-सम्मामि० भुज० अवट्ठि०-अवत्त० सव्वजी० के० ? संख०भागो। अप्प० संखेज्जा भागा। इत्थि-हस्स-रइ भुज० संखे० भागो। अप्प० संखेज्जा भागा। एवं पुरिस०। णवरि अवट्ठि० संखे०भागो। णवुंस०-अरदि-सोग० भुज० संखेज्जा

जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार सातों पृथिवियोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य मनुष्य, देवगतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रारकल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्योंमें अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवस्थित-विभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।

§ २०९. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय भय और जुगुप्साकी भुजगारविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं। संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भागाभाग नहीं है, क्योंकि इनका एक पद है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद हास्य और रतिकी भुजगार विभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतर विभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। नपुंसकवेद, अरति और शोककी भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

§ २१०. मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मिथ्यात्व बारह कषाय भय और जुगुप्साकी भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसीप्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। स्त्रीवेद हास्य और रतिकी भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्ति-वाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। नपुंसकवेद अरति और

भागा। अप्प० संखे०भागो। छण्णोक० अवट्ठि० संखे०भागो।

§ ३११. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति मिच्छ०-अणंताणु०चउक्क० भुज० संखे०भागो। अप्प० सखेज्जा भागा। अवट्ठि० अणंताणु०चउक्क० अवत्त० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि०-बारसक०-भय-दुगुंछ० देवोघो। पुरिस० कसाय-भंगो। इत्थि०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघो। णवरि अवट्ठि० णत्थि। णवुंस० इत्थिवेद-भंगो। अणुद्दिसादि जाव अवराइदो त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणुचउक्क०-इत्थि०-णवुंसयवेदाणमेयपदत्तादो णत्थि भागाभागो। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० आणदभंगो। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघो। णवरि अवट्ठि० णत्थि। सव्वट्ठे एवं चेव। णवरि बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० भुज० सव्वजी० केव०? संखेज्जा भागा। अप्प०-अवट्ठि० संखे०भागो। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमोघो। णवरि अवट्ठि० णत्थि। एवं जाव अणाहारि त्ति।

भागाभागो समत्तो।

§ ३१२. परिमाणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण

शोककी भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं।

§ ३११. आनतकल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयकतकके देवोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थितविभक्तिवाले जीव और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्य-विभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। पुरुषवेदका भङ्ग कषायोंके समान है। स्त्रीवेद, हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्ति नहीं है। नपुंसकवेदका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। अनुदिशसे लेकर अपराजित विमानतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका एक पद होनेसे भागाभाग नहीं है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका भङ्ग आनतकल्पके समान है। हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्ति नहीं है। सर्वार्थसिद्धिमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगारविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके संख्यातवें भागप्रमाण हैं। हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्ति नहीं है। इसीप्रकार अनाहारकमार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार भागाभाग समाप्त हुआ।

§ ३१२. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश।

मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस० भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केत्तिया ? अणंता। अणंताणु०चउक्क० अवत्तव्व० पुरिस० अवट्ठि० केत्तिया ? असंखेज्जा। सम्म०-सम्मामि० चदुपदविहत्तिया केत्तिया ? असंखेज्जा। छण्णोक० भुज०-अप्प० केत्तिया ? अणंता। अवट्ठि० के० ? संखेज्जा। एवं तिरिक्खा०। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि।

§ ३१३ आदेसेण णेरइय० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदा केत्तिया ? असंखेज्जा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवगइदेवा भवणादि जाव अवराइद त्ति।

§ ३१४ मणुस्सेसु मिच्छ०-सोलसक० भय-दुगुंछ० तिण्णि पदा सम्म०-सम्मामि० अप्प० सत्तणोक० भुज०-अप्प० केत्ति० ? असंखेज्जा। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० अणंताणु०चउक्क० अवत्त० पुरिस०-छण्णोक० अवट्ठि० केत्तिया ? संखेज्जा। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु सव्वट्ठसिद्धीसु सव्वपयडीणं सव्वपदा केत्तिया ? संखेज्जा। एवं जाव अणाहारि त्ति।

परिमाणाणुगमो समत्तो।

ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्य और पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके चार पदोंमें स्थित जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। छह नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। अवस्थितविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति नहीं है।

§ ३१३. आदेशसे नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसीप्रकार सब नारकी सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, देवगतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ ३१४ मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके तीन पदवाले जीव, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर पदवाले जीव तथा सात नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य पदवाले जीव, अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्य पदवाले जीव तथा पुरुषवेद और छह नोकषायोंके अवस्थित पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार परिमाणानुगम समाप्त हुआ।

१ आ०प्रतौ 'सोलसक० भय' इति पाठः।

§ ३१५. खेत्ताणुगमेण दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० तिण्णिपदा केवडि खेत्ते? सव्वलोगे। अणंताणु०चउक्क० अवत्त० के० खेत्ते? लोग० असंखे०भागे। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अप्प०-अवत्त०-अवट्ठि० के० खेत्ते? लोग० असंखे०भागे। छण्णोक० भुज०-अप्प० के० खेत्ते? सव्वलोगे। अवट्ठि० लोग० असंखे०भागे। एवं पुरिस०। एवं तिरिक्खोघो। णवरि छण्णोक० अवट्ठियं णत्थि।

§ ३१६. आदेसेण णिरय० मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० अणंताणु०चउक्क० अवत्त० केव० खे०? लोगस्स असंखे०भागे। सम्म०-सम्मामि० सव्वपदा छण्णोक० भुज०-अप्प० के० खेत्ते? लोगस्स असंखे०-भागे। एवं सव्वणेरइय-पंचिंदियतिरिक्खतिय-मणुसतिय-देवगइदेवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। णवरि मणुसतिए छण्णोक० अवट्ठि० ओघं। पंचिं०तिरिक्ख-अपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछा० तिण्णि पदाणि सम्म०-सम्मामि० अप्प० सत्तणोक० भुज०-अप्प० केव०? लोग० असंखे०भागे। एवं मणुसअपज्ज०।

---

§ ३१५. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके तीन पदवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? सब लोक क्षेत्र है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्य पदवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है। लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर, अवक्तव्य और अवस्थित पदवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। छह नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर पदवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? सर्व लोकप्रमाण क्षेत्र है। अवस्थित विभक्तिवाले जीवोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा क्षेत्र जानना चाहिए। इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें छह नोकषायोंका अवस्थित पद नहीं है।

विशेषार्थ—यहाँ जिन प्रकृतियोंके जो पद एकेन्द्रिय जीवोंके होते हैं उनका क्षेत्र सर्व लोकप्रमाण कहा है और शेषका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण। इसीप्रकार आगे भी अपने अपने क्षेत्रको जानकर घटित कर लेना चाहिए।

§ ३१६. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदवाले जीवोंका तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्य पदवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदवाले जीवोंका तथा छह नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर पदवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है? लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक, देवगतिमें सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम-ग्रैवेयकतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें छह नोकषायोंके अवस्थित पदका क्षेत्र ओघके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके तीन पदवाले जीवोंका, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर पदवाले जीवोंका तथा सात नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर पदवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है?

मणुसिसप्पहुडि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० इत्थि०-णवुंस० भुज० बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं भुज०-अप्प० केव० ? लोग० असंखे०भाग। एवं जाव अणाहारि त्ति।

खेत्तं गदं।

§ ३१७ पोसणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प० अवट्ठिदविहत्तिएहि केव० पोसिदं ? सव्वलोगो। अणंताणु०चउक्क० अवत्त० लोगस्स असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवत्तव्वविहत्तिएहि लोगस्स असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। अप्प० के० ? लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० सव्वलोगो वा। अवट्ठि० केव० पो० ? लोग० असंखे०भागो अट्ठ-बारहचोद्दस०। छण्णोक० भुज०-अप्प० केव० पोसिदं ? सव्वलोगो। णेसिं चेव अवट्ठि० लोगस्स असंखे०भागो। एवं पुरिस०। णवरि अवट्ठि० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा।

लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। मनुष्यिनीसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके भुजगार पदवाले जीवोंका बारह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्साके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदवाले जीवोंका तथा हास्य, रति अरति और शोकके भुजगार और अल्पतर पदवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार क्षेत्र समाप्त हुआ।

§ ३१७. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्वलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम बारह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। छह नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। उन्हींकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा स्पर्शन जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अवस्थितविभक्तिवाले

§ ३१८. आदेसेण णेरइ० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केव० पोसिदं ? लोग० असंखे०भागो छचोद्दस०। अणंताणु०चउक्क० अवत्त० लोग० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवत्त० खेत्तभगो। अप्पदर० सत्तणोक० भुज०-अप्प० केव० फोसिद ? लोगस्स असखे०भागो छचोद्दस०। पुरिस० अवट्ठि० केव० पोसिदं ? लोग० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० अवट्ठि०

जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ वटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व आदि उन्नीस प्रकृतियोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पद एकेन्द्रियोंके भी होते हैं, इसलिए इनके उक्त पदवाले जीवोंका सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य पद ऐसे जीवोंके होता है जो इनकी विसंयोजना करके पुनः इनसे संयुक्त होते हैं। ऐसे जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवे भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन देवोंके विहार आदिकी अपेक्षा त्रसनालीके कुछ कम आठ वटे चौदह भागप्रमाण प्राप्त होनेसे तत्प्रमाण कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ वटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन इसीप्रकार घटित कर लेना चाहिए। इनकी अल्पतर विभक्तिवालोंका उक्त स्पर्शन तो बन ही जाता है। तथा यह विभक्ति एकेन्द्रियादिके भी सम्भव है, इसलिए सर्व लोक प्रमाण स्पर्शन भी बन जाता है। इन दोनों प्रकृतियोंकी अवस्थितविभक्ति सासादनसम्यग्दृष्टियोंके होती है, इसलिए इस अपेक्षासे इनके अवस्थित पदका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम बारह वटे चौदह भागप्रमाण कहा है। छह नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति एकेन्द्रियादि जीवोंके भी होती है, इसलिए इनके उक्त पदवाले जीवोंका सर्व लोकप्रमाण स्पर्शन कहा है। तथा इनकी अवस्थितविभक्ति उपशमश्रेणिमें होती है, इसलिए इनके इस पदवाले जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। पुरुषवेदके भुजगार और अल्पतर पदवाले जीवोका स्पर्शन तो छह नोकषायोंके ही समान है, इसलिए इसका भङ्ग छह नोकषायोंके समान जानने की सूचना की है। मात्र इसके अवस्थित पदके स्पर्शनमें अन्तर है। बात यह है कि पुरुषवेदका अवस्थित पद सम्यग्दृष्टि जीवोंके होता है, इसलिए इसके उक्त पदवाले जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम आठ वटे चौदह भागप्रमाण कहा है।

§ ३१८ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह वटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्य पदके बन्धक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। इनकी अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने और सात नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह वटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने

केव० फोसिदं ? लोग० असंख०भागो पंचचोद्द० । पढमपुढवीए खेत्तभंगो । बिदियादि जाव सत्तमि त्ति एवं चेव । णवरि अप्पणो रज्जूमा फासणं कायव्वं । सत्तमाए सम्म०-सम्मामि० अवट्ठि० खेत्तभंगो ।

§ ३१४. तिरिक्खगईए तिरिक्खेसु मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केव० फोसिदं ? सव्वलोगो । अणंताणु०चउक्क० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवत्त० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो । सम्म०-सम्मामि० अप्प० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो सत्त-चोद्दस० । सत्तणोक० भुज०-अप्प० केव० फोसिदं ? सव्वलोगो । णवरि पुरिस० अवट्ठि० लोगस्स असंखे०भागो ।

क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम पाँच बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । पहली पृथिवीमें क्षेत्रके समान भङ्ग है । दूसरीसे लेकर सातवीं तकके नारकियोंमें इसीप्रकार भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि अपने अपने राजुओंमें स्पर्शन करना चाहिए । तथा सातवीं पृथिवीमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है ।

विशेषार्थ—*यहाँ सामान्य नारकियोंमें जिन प्रकृतियोंके जिन पदोंका स्पर्शन अपायपद* या मारणान्तिक पदके समय सम्भव है उनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण कहा है । तथा शेष पदोंका स्पर्शन मात्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । मात्र सासादनसम्यग्दृष्टि नारकी जीव छठें नरकतकके ही मरकर अन्य गतिमें उत्पन्न होते हैं, इसलिए सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थित पदवाले जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम पाँच बटे चौदह भागप्रमाण कहा है । तथा सातवीं पृथिवीका सासादनसम्यग्दृष्टि मरकर अन्य गतिमें नहीं जाता इसलिए इसमें उक्त दोनों प्रकृतियोंके अवस्थित पदवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान जाननेकी सूचना की है । शेष कथन सुगम है ।

§ ३१४ तिर्यञ्चगतिमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इनकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम सात बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सात नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

विशेषार्थ—*सामान्य तिर्यञ्चोंके ऊपर एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते समय* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्ति सम्भव होनेसे इनके उक्त पदवाले जीवोंका

§ ३२०. पंचिंदियतिरिक्खतिए मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केव० ? लो० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । अणंताणु०चउक्क० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवत्त० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो । दोण्हमप्पद० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो सत्तचोद्दस० । इत्थि० भुज० केव० ? लो० असंखे०भागो । अप्प० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । कुदो ? णवुंसयवेदबंधेण एइंदिएसुववज्जमाणपंचिंदियतिरिक्खतियस्स अप्पदरीकयइत्थिवेदस्स सव्वलोयवावित्तदंसणादो । पुरिस० भुज० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० । अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो । कुदो छचोद्दसभागा ण फुसिज्जंति ? ण, असंखेज्जवासाउअपंचिंदियतिरिक्खतियसम्माइट्ठि मोत्तूण अण्णत्थ अवट्ठिदपदस्सासंभवादो । त पि कुदो ? पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालेण विणा अवट्ठिदपाओग्गत्ताणुवलंभादो । अप्प० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो

स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम सात बटे चौदह भागप्रमाण कहा है। शेप कथन सुगम है।

§ ३२०. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है। लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दोनोंकी अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इनकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम सात बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेदकी भुजगारविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असख्यातवे भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है, क्योंकि नपुसकवेदके बन्धके साथ एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेवाले पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकका स्त्रीवेदके अल्पतर पदके साथ समस्त लोकमें स्पर्शन देखा जाता है। पुरुषवेदकी भुजगारविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

शंका—पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन क्यों नहीं करते ?

समाधान—नहीं, असंख्यात वर्षकी आयुवाले पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक सम्यग्दृष्टि जीवको छोड़कर अन्यत्र अवस्थित पदकी प्राप्ति असम्भव है।

शंका—वह भी कैसे है ?

समाधान—क्योंकि पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण कालके विना अवस्थितपदकी योग्यता नहीं उपलब्ध होती है।

पुरुषवेदकी अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके

§ ३२४ भवण०-वाण०-जोदिसिएसु मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० लोगस्स असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठ-णवचोद्दस०। अणंताणु०चउक्क० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवत्त० इत्थिवेद० भुज० पुरिस० भुज०-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठचोद्दस०। सम्म०-सम्मामि० अप्प०-अवट्ठि० इत्थि०-पुरिस० अप्प० णवुंस०-चदुणोक० भुज०-अप्प० लो० असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठ-णवचोद्द०।

§ ३२५ सणक्कुमारादि जाव सहस्सारा त्ति मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ-पुरिस० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० अणंताणु०चउक्क० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० भुज०-अप्प०-अवत्त०-अवट्ठि० इत्थि०-णवुंस०-चदुणोक० भुज०-अप्प० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। आणदादि जाव अच्चुदा त्ति सव्वपयडीणं सव्वपदाणि छच्चो०

इन चारों प्रकृतियोंके उक्त पदवाले देवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और विहार आदिकी अपेक्षा स्पर्शन त्रस नालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३२४ भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्यविभक्तिवाले, स्त्रीवेदकी भुजगारविभक्तिवाले तथा पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन और कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अल्पतरविभक्तिवाले तथा नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—यहाँ भी अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य पद सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगार और अवक्तव्यपद स्त्रीवेदका भुजगारपद और पुरुषवेदका भुजगार और अवस्थितपद एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते समय नहीं होते, इसलिए इनकी अपेक्षा स्पर्शन करते समय त्रसनालीका कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन नहीं कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३२५. सनत्कुमार से लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पुरुषवेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले, अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अल्पतर, अवक्तव्य और अवस्थितविभक्तिवाले तथा स्त्रीवेद नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आनत कल्पसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें सब

फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो छचोद्दस०। उवरि खेत्तभंगो । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

फोसणं समत्तं ।

§ ३२६. णाणाजीवेहि कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। तत्थ ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केवचिरं ? सव्वद्धा। अणंताणु०चउक्क०-सम्म०-सम्मामि० अवत्त० पुरिस० अवट्ठि० केव० ? जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। पुरिस० अवट्ठि० अंतोमुहुत्तं वा। सम्म०-सम्मामि० भुज० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अप्प० सत्तणोक० भुज०-अप्प० सव्वद्धा। छण्णोक० अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं तिरिक्खोघो। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि। पुरिस० अवट्ठि० अंतोमुहुत्तं पि णत्थि।

प्रकृतियोंके सब पदवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। ऊपर के देवोंमें स्पर्शन का भङ्ग क्षेत्रके समान है। इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार स्पर्शन समाप्त हुआ।

§ ३२६. नाना जीवोंकी अपेक्षा कालानुगमके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिका कितना काल है ? सर्वदा काल है। अनन्तानुवन्धीचतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्यविभक्तिका तथा पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अथवा पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतरविभक्ति तथा सात नोकषायों की भुजगार और अल्पतर विभक्तिका काल सर्वदा है। छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति नहीं है तथा पुरुषवेदकी अवस्थित-विभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त भी नहीं है।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व आदि उन्नीस प्रकृतियोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित-पद एकेन्द्रिय आदि सब जीवोंके होते हैं, इसलिए नाना जीवोंकी अपेक्षा इनका सर्वदा काल बन जानेसे वह सर्वदा कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्यपद ऐसे जीवोंके होता है जो विसंयोजनाके बाद पुनः उससे संयुक्त होते हैं, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अवक्तव्यपद जो इनकी सत्ता से रहित जीव उपशमसम्यक्त्व प्राप्त करते हैं उसके प्रथम समयमें होता है और पुरुषवेदका अवस्थित पद सम्यग्दृष्टि जीवके होता है। यह सम्भव है कि एक या नाना जीव उक्त प्रकृतियोंके ये पद एक समय तक ही करें और यह भी सम्भव है कि आवलिके असंख्यातवें

सव्वलोगो वा। पंचणोक० भुज०-अप्प० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा।

§ ३२१ पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केव० फोसिदं? लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। सम्म०-सम्मामि० अप्प० केव० फोसिदं? लोग० असंखे० भागो सव्वलोगो वा। इत्थि-पुरिस० भुज० लोग० असंखे०भागो। अप्प० केव० फोसिदं? लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। णवुंस०-चदुणोक० भुज०-अप्प० केव० फोसिदं? लोग० असंखे० भागो सव्वलोगो वा। एवं मणुसअपज्जत्तएसु।

§ ३२२ मणुसतिए मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० लोग० असं०भागो, सव्वलोगो वा। अणंताणु०चउक्क० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० भुज० अवत्त० लोग० असंखे०भागो। अप्प० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा।

असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पाँच नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—यहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थित पदवालोंका लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन जिस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें घटित करके बतला आए हैं उस प्रकार घटित कर लेना चाहिए। स्त्रीवेदकी अल्पतरविभक्तिवाले उक्त जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन तथा पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिवाले उक्त जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन क्यों किया है इसका स्पष्टीकरण मूलमें ही किया है। शेष कथन सुगम है।

§ ३२१ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तक जीवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थित विभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगारविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अल्पतर विभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है? लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—जो पञ्चेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त तिर्यञ्च एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते हैं उनके स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध न होनेसे भुजगारपद सम्भव नहीं है, इसलिए इनके उक्त पदवाले जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३२२. मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दोनोंकी अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और

अवट्ठि० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो सत्तचोद्दस० । इत्थि०-पुरिस० भुज० पुरिस० अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो । दोण्हमप्प० णवुंस०-चदुणोक० भुज०-अप्प० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । छण्णोक[१]० अवट्ठि० खेत्तभंगो ।

§ ३२३. देवगईए देवेसु मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस० । अणंताणु०चउक्क० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवत्त० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० । सम्म०-सम्मामि० अप्पद०-अवट्ठि० केव० फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्दस० । इत्थि० भुज० पुरिस० भुज०-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० । दोण्हमप्प० लोग० असखें०भागो अट्ठ-णवचोद्दस० । पचणोक० भुज०-अप्प० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्द० । एव सोहम्मीसाणेसु ।

सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इनकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असख्यातवें भाग और त्रसानालीके कुछ कम सात बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी भुजगारविभक्तिवाले तथा पुरुषवेद की अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दोनोंकी अल्पतरविभक्तिवाले तथा नपुसकवेद और चार नोकपायोंकी भुजगार और अल्पतर-विभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है।

§ ३२३ देवगतिमें देवोंमे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्य-विभक्तिवाले तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है। लोकके असख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेदकी भुजगारविभक्तिवाले तथा पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनाली के कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दोनोंकी अल्पतरविभक्ति-वाले जीवोंने लोकके असख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पाँच नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति-वाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ-कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सौधर्म और ऐशान कल्पके देवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—देवोंमें स्त्रीवेदकी भुजगारविभक्ति तथा पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थित-विभक्ति ऊपर बादर एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते समय सम्भव नहीं है, इसलिए

---

१ ता०आ० प्रत्यो० 'सत्तणोक०' इति पाठः ।

§ ३२४ भवण०-वाण० जोदिसिएसु मिच्छ०-सोलसक० भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० लोगस्स असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठ-णवचोद्दस०। अणंताणु० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवत्त० इत्थिवेद० भुज० पुरिस० भुज०-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठचोद्दस०। सम्म०-सम्मामि० अप्प०-अवट्ठि० इत्थि० पुरिस० अप्प० णवुंस० चदुणोक० भुज०-अप्प० लो० असंखे०भागो अद्धुट्ठा वा अट्ठ-णवचोद्द०।

§ ३२५ सणक्कुमारादि जाव सहस्सारा त्ति मिच्छ०-सोलसक० भय-दुगुंछ०-पुरिस० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० अणंताणु०चउक्क० अवत्त० सम्म०-सम्मामि० भुज०-अप्प०-अवत्त०-अवट्ठि० इत्थि० णवुंस० चदुणोक० भुज०-अप्प० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। आणदादि जाव अच्चुदा त्ति सव्वपयडीणं सव्वपदेहि लोग०

इन दोनों प्रकृतियोंके उक्त पदवाले देवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग और विहार आदिकी अपेक्षा स्पर्शन त्रस नालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३२४ भवनवासी व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवक्तव्यविभक्तिवाले, स्त्रीवेदकी भुजगारविभक्तिवाले तथा पुरुषवेदकी भुजगार और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन और कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी अल्पतरविभक्तिवाले तथा नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—यहाँ भी अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य पद, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अवक्तव्यपद स्त्रीवेदका भुजगारपद और पुरुषवेदका भुजगार और अवस्थितपद एकेन्द्रियोंमें मारणान्तिक समुद्घात करते समय नहीं होते, इसलिए इनकी अपेक्षा स्पर्शन करते समय त्रसनालीका कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण स्पर्शन नहीं कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ३२५. सनत्कुमार से लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा और पुरुषवेदकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिवाले अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार, अल्पतर, अवक्तव्य और अवस्थितविभक्तिवाले तथा स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। आनत कल्पसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें सब

फोसिदं ? लोग० असंखे०भागो छचोद्दस०। उवरि खेत्तभंगो । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

फोसणं समत्तं ।

§ ३२६. णाणाजीवेहि कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । तत्थ ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प०-अवट्ठि० केवचिरं ? सव्वद्धा । अणंताणु०चउक्क०-सम्म०-सम्मामि० अवत्त० पुरिस० अवट्ठि० केव० ? जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । पुरिस० अवट्ठि० अंतोमुहुत्तं वा । सम्म०-सम्मामि० भुज० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असखे०भागो । अप्प० सत्तणोक० भुज०-अप्प० सव्वद्धा । छण्णोक० अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । एवं तिरिक्खोघो । णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि । पुरिस० अवट्ठि० अंतोमुहुत्तं पि णत्थि ।

प्रकृतियोंके सब पदवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । ऊपर के देवोंमें स्पर्शन का भङ्ग क्षेत्रके समान है । इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इसप्रकार स्पर्शन समाप्त हुआ ।

§ ३२६. नाना जीवोंकी अपेक्षा कालानुगमके अनुसार निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार, अल्पतर और अवस्थितविभक्तिका कितना काल है ? सर्वदा काल है । अनन्तानुबन्धीचतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्यविभक्तिका तथा पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका कितना काल है ? जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण है । अथवा पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है । अल्पतरविभक्ति तथा सात नोकषायों की भुजगार और अल्पतर विभक्तिका काल सर्वदा है । छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति नहीं है तथा पुरुषवेदकी अवस्थित-विभक्तिका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त भी नहीं है ।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व आदि उन्नीस प्रकृतियोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित-पद एकेन्द्रिय आदि सब जीवोंके होते हैं, इसलिए नाना जीवोकी अपेक्षा इनका सर्वदा काल बन जानेसे वह सर्वदा कहा है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्यपद ऐसे जीवोंके होता है जो विसंयोजनाके बाद पुनः उससे सयुक्त होते हैं, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अवक्तव्यपद जो इनकी सत्ता से रहित जीव उपशमसम्यक्त्व प्राप्त करते हैं उसके प्रथम समयमें होता है और पुरुषवेदका अवस्थित पद सम्यग्दृष्टि जीवके होता है । यह सम्भव है कि एक या नाना जीव उक्त प्रकृतियोंके ये पद एक समय तक ही करें और यह भी सम्भव है कि आवलिके असंख्यातवें

§ ३२७ आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक० पुरिस०-भय-दुगुंछ० भुज० अप्प० सव्वद्धा। अवट्ठि० अणंताणु०चउक्क अवत्त० सम्म०-सम्मामि० अवत्त० जह० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि० जह० अंतोमु० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अप्प० छण्णोक० भुज०-अप्प० सव्वद्धा। एवं सव्वसु पुढवीसु पंचिंदियतिरिक्खतिय-देवगदिदेवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति।

§ ३२८ पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छ०-सोलसक० भय-दुगुंछ० भुज० अप्प० सव्वद्धा। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि०

भागप्रमाण काल तक करते रहें। यही कारण है कि इनके उक्त पदोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तथा उपशमश्रेणिमें पुरुषवेदके अवस्थितपदका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त पड़ जानेसे विकल्परूपसे उसप्रमाण कहा है। उपशम सम्यक्त्वकी प्राप्ति होने पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगारविभक्ति अन्तर्मुहूर्त काल तक होती है, इसलिए तो इस विभक्तिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है और क्रमसे यदि नाना जीव इन प्रकृतियोंकी इस विभक्तिको करते रहें तो पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल प्राप्त होता है, इसलिए इनकी इस विभक्तिका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। नाना जीवोंकी अपेक्षा सासादनका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनके अवस्थित पदका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। इन दोनों प्रकृतियोंकी अल्पतरविभक्ति तथा सात नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति सर्वदा होती है यह स्पष्ट ही है, क्योंकि इन प्रकृतियोंकी ये विभक्तियाँ एकेन्द्रियादि जीवोंके भी पाई जाती हैं। शेष कथन सुगम है।

§ ३२७ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका काल सर्वदा है। इनकी अवस्थितविभक्तिका अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिका तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल क्रमसे अन्तर्मुहूर्त और एक समय है तथा दोनों विभक्तियोंका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इनकी अल्पतरविभक्तिका तथा छह नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका काल सर्वदा है। इसीप्रकार सातों पृथिवियोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, देवगतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—ओघसे सब प्रकृतियोंके सब पदोंका काल घटित करके बतला आये हैं। यहाँ भी स्वामित्वको ध्यानमें रखकर वह घटित कर लेना चाहिए। विशेष वक्तव्य न होनेसे उसका अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है। इसीप्रकार आगे भी जान लेना चाहिए।

§ ३२८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका काल सर्वदा है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और

अप्प० सत्तणोक० भुज०-अप्प० सव्वद्धा ।

§ ३२९. मणुसगईए मणुसाणं णेरइयभंगो। णवरि तिण्हमवत्त० पुरिस० अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। सम्म०-सम्मामि० भुज०-अवट्ठि० जह० अंतोमु० एग०, उक्क० अंतोमुं०। एव मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु। णवरि सव्वेसिं अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। उवसमसेढीए मणुसतियम्मि वारसक०-णवणोक० अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०।

§ ३३०. मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० भुज०-अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० अप्पद० सत्तणोक० भुज०-अप्पद० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो।

सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्तिका तथा सात नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका काल सर्वदा है।

§ ३२९ मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन तीनकी अवक्तव्यविभक्तिका तथा पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी भुजगार और अवस्थितविभक्तिका क्रमसे जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और एक समय है तथा दोनों विभक्तियोका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सबकी अवस्थित-विभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। उपशमश्रेणिमें मनुष्यत्रिकमे वारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—उपशमश्रेणिमे बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अवस्थितविभक्ति ऐसे जीवोके भी होती है जो इनका एक समय तक अवस्थित पद करके और दूसरे समयमे मरकर देव हो जाते हैं। तथा जो उपशमश्रेणिमें इनका अवस्थितपद करके आरोहण और अवरोहण करते हैं उनके अन्तर्मुहूर्त काल तक इनकी अवस्थितविभक्ति होती है। कुछ जीव यहाँ अवस्थित-पद करनेके बाद उसके समाप्त होनेके अनन्तर समयमें भी यदि नाना जीव अवस्थितपद करें और इसप्रकार निरन्तर क्रम चले तो भी अन्तर्मुहूर्त काल लगता है, इसलिए मनुष्यत्रिकमें उक्त प्रकृतियोंके इस पदका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ३३०. मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्तिका तथा सात नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

१ ता०प्रतौ 'अवट्ठि० उक्क० अंतोमु०' इति पाठः।

§ २२१ अणुद्दिसादि जाव अवराइदा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु० चउक्क०-इत्थिवेद०-णवुंस० अप्प० सव्वद्धा । बारसक० पुरिस०-भय-दुगुंछा० हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं देवोघो । एवं सव्वट्ठे । णवरि जम्हि आवलि० असंखे० भागो तम्हि संखेज्जा समया । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

णाणाजीवेहि कालो समत्तो ।

§ २२२ णाणाजीवेहि अंतरं दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सोलसक० भय-दुगुंछा तिण्णिपदा णत्थि अंतरं णिरंतरं । अणंताणु० चउक्क० अवत्त० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ताणि सादिरेयाणि । एवं सम्म०-सम्मामि० अवत्त० । सम्म०-सम्मामि० अप्प० णत्थि अंतरं णिरंतरं । भुज० जह० एगस०, उक्क० सत्त रादिंदियाणि । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो । छण्णोक० भुज०-अप्प० णत्थि अंतरं । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं । एवं पुरिस० । णवरि अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । उवसमसेढिविवक्खाए पुण वासपुधत्तं ।

विशेषार्थ—यह सान्तर मार्गणा है, इसलिए इसमें उक्त काल बन जाता है।

§ २२१ अनुदिशसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अल्पतरविभक्तिका काल सर्वदा है। बारह कषाय पुरुषवेद, भय, जुगुप्सा, हास्य, रति अरति और शोकका भंग सामान्य देवोंके समान है। इसीप्रकार सर्वार्थसिद्धिमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहाँ आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहा है वहाँ संख्यात समय काल कहना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा काल समाप्त हुआ।

§ २२२. नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर कालका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व सोलह कषाय भय और जुगुप्साके तीन पदोंका अन्तर काल नहीं है वे निरन्तर हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। इसीप्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्यविभक्तिका अन्तर काल जानना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतर विभक्तिका अन्तर काल नहीं है वह निरन्तर है। भुजगारविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर सात दिन-रात है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। छह नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतर विभक्तिका अन्तर काल नहीं है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। परन्तु उपशमश्रेणिकी विवक्षासे वर्षपृथक्त्वप्रमाण है।

§ ३३३. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० भुज०-अप्प० णत्थि अंतरं णिर०। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। सम्म०-सम्मामि०-छण्णोक० ओघो। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि। अणंताणु०चउक्क० अवत्त० ओघो। एवं सत्तसु पुढवीसु। पंचि०तिरिक्खतिय-मणुसतिय-देवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति एवं चेव। णवरि मणुसतियम्मि सत्तणोक० अवट्ठि० ओघं। बारसक०-भय-दुगुंछाणं पि अवट्ठि० उवसमसेढिविवक्खाए

विशेषार्थ—ओघसे मिथ्यात्व आदि उन्नीस प्रकृतियोंके तीन पदोका काल सर्वदा घटित करके बतला आये हैं, इसलिए यहा उक्त प्रकृतियोके इन पदोके अन्तरकालका निषेध किया है। यह सम्भव है कि जिन्होंने अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना की है वे जीव कमसे कम एक समयके अन्तरसे उनसे सयुक्त हो, इसलिए तो इनके अवक्तव्यपदका जघन्य अन्तर एक समय कहा है और जिन्होंने इनकी विसंयोजना की है ऐसा एक भी जीव अधिकसे अधिक साधिक चौवीस दिन रात तक इनसे संयुक्त न हो यह भी सम्भव है, इसलिए इनके अवक्तव्यपदका उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौवीस दिन-रात कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवक्तव्यपदका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौवीस दिन-रात इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाले मिथ्यादृष्टि जीव निरन्तर पाये जाते हैं और वे उनकी अल्पतरविभक्ति ही करते हैं, इसलिए इनके अल्पतर पदके अन्तरकालका निषेध किया है। इनकी भुजगार विभक्ति सम्यग्दृष्टिके होती है और उपशमसम्यक्त्वका जघन्य अन्तर एक समय तथा उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात दिन-रात है, इसलिए इनके भुजगारपदका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर साधिक सात दिन-रात कहा है। तथा इनका अवस्थितपद सासादनसम्यग्दृष्टिके होता है, इसलिए सासादनके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर-कालके समान इनके अवस्थितपदका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण कहा है। एकेन्द्रियादि जीवोंके भी छह नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति होती रहती है, इसलिए इनके उक्त दोनों पदोंके अन्तरकालका निषेध किया है। तथा इनकी अवस्थितविभक्ति उपशमश्रेणिमें होती है, इसलिए इनके इस पदका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्ष पृथक्त्वप्रमाण कहा है। पुरुषवेदका अन्य सब भङ्ग छह नोकषायोंके समान ही है। मात्र उसके अवस्थितपदका उत्कृष्ट अन्तरकाल दो प्रकारसे बतलाया है सो विचार कर घटित कर लेना चाहिए।

§ ३३३ आदेशसे नारकियोंमे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका अन्तर काल नहीं है निरन्तर है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असख्यात लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और छह नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ छह नोकषायोंका अवस्थित पद नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्य पदका भङ्ग ओघके समान है। इसीप्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक, देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें सात नोकषायोंके अवस्थितपदका भङ्ग ओघके समान है। तथा बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी भी अवस्थितविभक्तिका उत्कृष्ट अन्तर काल उपशमश्रेणिकी विवक्षासे

१. आ०प्रतौ 'णिर०। णियमा अवट्ठि०' इति पाठः।

अवत्त० संखे०गुणा। भुज० संखे०गुणा। अप्प० असंखे०गुणा। इत्थि०-हस्स-रदीणं सव्वत्थोवा अवट्ठि०। भुज० असंखे०गुणा। अप्प० संखे०गुणा। णवुंस०-अरदि-सोगाणं सव्वत्थोवा अवट्ठि०। अप्प० असंखे०गुणा। भुज० संखे०गुणा।

§ २२८ पंचि०तिरि०अपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछाणमोघो। णवरि अणंताणु०चउक्क० अवत्त० णत्थि। सम्म०-सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुअं, एगपदत्तादो। इत्थिवेद०-पुरिस-हस्स-रदीणं सव्वत्थोवा भुज०। अप्प० संखेज्जगुणा। णवुंस-अरदि-सोगाणं सव्वत्थोवा अप्प०। भुज० संखे०गुणा। एवं मणुसअपज्ज०।

§ २२९ मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुंछा० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। अप्प० संखे०गुणा। भुज० संखे०गुणा। अणंताणु०चउक्क० सव्वत्थोवा अवत्त०। अवट्ठि० संखे० गुणा। सेसं मिच्छत्तभंगो। सम्म०-सम्मामि० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। अवत्त० संखे०गुणा। भुज० संखे०गुणा। अप्प० संखे०गुणा। पुरिस० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। भुज० संखे० गुणा। अप्प० संखे०गुणा। सेसमोघो। णवरि

देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्योंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। स्त्रीवेद हास्य और रतिके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेद, अरति और शोकके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं।

§ २२८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय भय और जुगुप्साका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्यपद नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि यहाँ इनका एक पद है। स्त्रीवेद पुरुषवेद हास्य और रतिके भुजगारविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेद अरति और शोकके अल्पतरविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

§ २२९. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। शेष भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थितविभक्तिवाले जीव ... हैं। उनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले ... हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदके अवस्थित... जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे ... जीव संख्यातगुणे हैं। शेष भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है

छण्णोक० अवट्ठि० सव्वत्थोवं। उवरि संखेज्जगुणं कायव्वं।

§ ३४०. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति बारसक०-इत्थि०-हस्स-रइ-अरइ--सोग-भय--दुगुंछ--सम्मत्त--सम्मामिच्छत्ताणं देवोघो। अणंताणु०चउक्कस्स सव्वत्थोवा अवत्त०। अवट्ठि० असंखे०गुणा। भुज० असंखे०गुणा। अप्प० संखे०-गुणा। एवं मिच्छ०। णवरि अवत्त० णत्थि। पुरिस० कसायभंगो। णवुंस० इत्थिवेदभंगो। अणुदिसादि जाव अवराइद त्ति दंसणतिय-अणंताणु०चउक्क०-इत्थि०-णवुंस०वेदाणं णत्थि अप्पाबहुअं। सेसाणमुवरिमगेवज्जभंगो। सव्वट्ठे एवं चेव। णवरि बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० संखे०गुणं कायव्वं। एवं जाव अणाहारए त्ति।

एवं भुजगारविहत्ती समत्ता।

❀ पदणिक्खेव-वड्ढीओ च कायव्वाओ।

§ ३४१. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे—पदाणमुक्कस्स-जहण्ण-वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणावत्तव्वसण्णिदाणं णिक्खेवो समुक्कित्तणा-सामित्तादिविसेसेहि णिच्छयजणणं पदणिक्खेवो णाम। भुजगारविसेसो पदणिक्खेवो त्ति वुत्तं होइ। पदणिक्खेवविसेसो वड्ढी णाम। एदाओ दो वि विहत्तीओ भुजगाराणुसारेणेत्थ कायव्वाओ त्ति अत्थ-

---

कि छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। आगे संख्यातगुणा करना चाहिए।

§ ३४०. आनत कल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें बारह कषाय, स्त्रीवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार मिथ्यात्वके सम्भव पदोंका अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्यविभक्ति नहीं है। पुरुषवेदका भङ्ग कषायोंके समान है। नपुंसकवेदका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। अनुदिशसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें तीन दर्शनमोहनीय, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका अल्पबहुत्व नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग उपरिम ग्रैवेयकके समान है। सर्वार्थसिद्धिमें इसीप्रकार भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका अल्पबहुत्व कहते समय संख्यातगुणा करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार भुजगारविभक्ति समाप्त हुई।

* पदनिक्षेप और वृद्धि करनी चाहिए।

३४१ इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—उत्कृष्ट और जघन्य वृद्धि, हानि, अवस्थान और अवक्तव्य संज्ञावाले पदोंका निक्षेप अर्थात् समुत्कीर्तना और स्वामित्व आदि विशेषोंके द्वारा निश्चय उत्पन्न करना पदनिक्षेप कहलाता है। भुजगारविशेषको पदनिक्षेप कहते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। तथा पदनिक्षेपविशेषको वृद्धि कहते हैं। ये दोनों ही विभक्तियाँ भुजगारके

मासपुधत्तं ।

§ ३३४ तिरिक्खगईए तिरिक्खाणमोघो । णवरि बारसक० भयदि० णत्थि । पुरिस० भयदि० वासपुधत्तं णत्थि । पंचि०तिरि०अपज्ज० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० अप्प० पुरिस० भुज०-अप्प० णत्थि अंतरं । सेसपदाणि अणंताणु० अवत्तव्वं च णत्थि । मणुसअपज्ज० छव्वीसं पयडीणं भुज०-अप्प० सम्म०-सम्मामि० अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो । अवट्ठिद पदमत्थि तेसिं जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० अणंताणु०चउक्क० इत्थि०-णवुंस० अप्प० चदुणोक० भुज०-अप्प० णत्थि अंतरं । बारसक० पुरिस० भय दुगुंछा० णेरइयभंगो । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

णाणा० अंतरं समत्तं ।

§ ३३५ भावाणुगमेण दु० णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सव्व-पयडीणं सव्वपदा त्ति को भावो ? ओदइओ भावो । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

भावाणुगमो समत्तो ।

अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

विशेषार्थ—अपने अपने स्वामित्वको देखकर यहाँ सब प्रकृतियोंके अपने अपने पदोंका अन्तरकाल घटित कर लेना चाहिए । विशेष वक्तव्य न होनेसे हमने अलग अलग खुलासा नहीं किया है । तथा इसीप्रकार आगे भी जान लेना चाहिए ।

§ ३३४ तिर्यञ्चगतिमें सामान्य तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि बारह कषायोंका अवस्थितपद नहीं है । तथा पुरुषवेदके अवस्थित पदका वर्षपृथक्त्वप्रमाण अन्तर काल नहीं है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्ति तथा पुरुषवेदकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका अन्तर काल नहीं है । इनके शेष पद तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्यपद नहीं है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । जिनका अवस्थितपद है उनके इस पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अल्पतरविभक्ति तथा चार नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका अन्तर काल नहीं है । बारह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्साका भङ्ग नारकियोंके समान है । इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इसप्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर काल समाप्त हुआ ।

§ ३३५. भावानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंके सब पदोंका कौन भाव है ? औदयिकभाव है । इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इसप्रकार भावानुगम समाप्त हुआ ।

§ ३३६. अप्पाबहुआणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुंछाणं सव्वत्थोवा अवट्ठिदविहत्तिया। अप्पद० असंखे०-गुणा। भुज० संखे०गुणा। सम्म० सम्मामि० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। अवत्त० असंखे०गुणा। भुज० असंखे०गुणा। अप्प० असंखे०गुणा। अणंताणु०चउक्कस्स सव्वत्थोवा अवत्त०। अवट्ठि० अणंतगुणा। सेसं मिच्छत्तभंगो। इत्थि०-हस्स-रईणं सव्वत्थोवा अवट्ठि०। भुज०, अणंतगुणा। अप्प० संखे०गुणा। णवुंसय०-अरदि-सोगाणं सव्वत्थोवा अवट्ठि०। अप्प० अणंतगुणा। भुज० संखे०गुणा। पुरिसवेदस्स सव्वत्थोवा अवट्ठि०। भुज० अणंतगुणा। अप्प० संखे०गुणा। एवं तिरिक्खोघो। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि।

§ ३३७. आदेसेण णेरइय० अणंताणु०चउक्कस्स सव्वत्थोवा अवत्त०। अवट्ठि० असखे०गुणा। अप्प० असंखे०गुणा। भुज० संखे०गुणा। पुरिस० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। भुज० असंखे०गुणा। अप्प० संखे०गुणा। सेसाणमोघो। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि। एवं सव्वणेरइय-पंचिंदियतिरिक्खतिय-मणुस्सोघं देवगदीए देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति। णवरि मणुस्सेसु सम्म०-सम्मामि० सव्वत्थोवा अवट्ठि०।

---

§ ३३६ अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। शेप भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। स्त्रीवेद, हास्य और रतिके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। नपुसकवेद, अरति और शोकके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें छह नोकषायोंका अवस्थितपद नहीं है।

§ ३३७. आदेशसे नारकियोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदके अवस्थित-विभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। शेप प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि छह नोकपायोंका अवस्थितपद नहीं है। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य मनुष्य, देवगतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके

वासपुधत्तं ।

§ २२४. तिरिक्खगईए तिरिक्खाणमोघो । णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि । पुरिस० अवट्ठि० वासपुधत्तं णत्थि । पंचिं०तिरि०अपज्ज० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि सम्म०-सम्मामि० अप्प० पुरिस० भुज० अप्प० णत्थि अंतरं । सेसपदाणि अणंताणु० अवत्तव्वं च णत्थि । मणुसअपज्ज० छव्वीसं पयडीणं भुज०-अप्प० सम्म०-सम्मामि० अप्प० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठिदपदमत्थि तेसिं जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । मणुसिणीआदि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० अणंताणु० चउक्क० इत्थि०-णवुंस० अप्प० चदुणोक० भुज०-अप्प० णत्थि अंतरं । बारसक० पुरिस० भय दुगुंछा० णेरइयभंगो । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

णाणा० अंतरं समत्तं ।

§ २२५. भावाणुगमेण दु० णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण सव्व-पयडीणं सव्वपदा त्ति को भावो ? ओदइओ भावो । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

भावाणुगमो समत्तो ।

वर्षपृथक्त्वप्रमाण है ।

विशेषार्थ—अपने अपने स्वामित्वको देखकर यहाँ सब प्रकृतियोंके अपने अपने पदोंका अन्तर काल घटित कर लेना चाहिए । विशेष वक्तव्य न होनेसे हमने अलग अलग खुलासा नहीं किया है । तथा इसीप्रकार आगे भी घटित कर लेना चाहिए ।

§ २२४. तिर्यञ्चगतिमें सामान्य तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंका अवस्थितपद नहीं है । तथा पुरुषवेदके अवस्थित पदका वर्षपृथक्त्वप्रमाण अन्तर काल नहीं है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्ति तथा पुरुषवेदकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका अन्तर काल नहीं है । इनके शेष पद तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्यपद नहीं है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें छब्बीस प्रकृतियोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्ति तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अल्पतरविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । जिनका अवस्थितपद है उनके इस पदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है । मनुष्यिनीसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी अल्पतरविभक्ति तथा चार नोकषायोंकी भुजगार और अल्पतरविभक्तिका अन्तर काल नहीं है । बारह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्साका भङ्ग नारकियोंके समान है । इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इसप्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर काल समाप्त हुआ ।

§ २२५. भावानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंके सब पदोंका कौन भाव है ? औदयिक भाव है । इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इसप्रकार भावानुगम समाप्त हुआ ।

§ ३३६. अप्पाबहुआणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुंछाणं सव्वत्थोवा अवट्ठिदविहत्तिया। अप्पद० असंखे०-गुणा। भुज० संखे०गुणा। सम्म० सम्मामि० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। अवत्त० असंखे०गुणा। भुज० असंखे०गुणा। अप्प० असंखे०गुणा। अणंताणु०चउक्कस्स सव्वत्थोवा अवत्त०। अवट्ठि० अणंतगुणा। सेस मिच्छत्तभंगो। इत्थि०-हस्स-रईणं सव्वत्थोवा अवट्ठि०। भुज० अणंतगुणा। अप्प० संखे०गुणा। णवुंसय०-अरदि-सोगाणं सव्वत्थोवा अवट्ठि०। अप्प० अणंतगुणा। भुज० संखे०गुणा। पुरिसवेदस्स सव्वत्थोवा अवट्ठि०। भुज० अणंतगुणा। अप्प० संखे०गुणा। एवं तिरिक्खोघो। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि।

§ ३३७. आदेसेण णेरइय० अणंताणु०चउक्कस्स सव्वत्थोवा अवत्त०। अवट्ठि० असंखे०गुणा। अप्प० असंखे०गुणा। भुज० संखे०गुणा। पुरिस० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। भुज० असंखे०गुणा। अप्प० संखे०गुणा। सेसाणमोघो। णवरि छण्णोक० अवट्ठि० णत्थि। एवं सव्वणेरइय-पंचिंदियतिरिक्खतिय-मणुस्सोघं देवगदीए देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति। णवरि मणुस्सेसु सम्म०-सम्मामि० सव्वत्थोवा अवट्ठि०।

---

§ ३३६ अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघमे मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। शेष भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। स्त्रीवेद, हास्य और रतिके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेद, अरति और शोकके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमे जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमे छह नोकषायोंका अवस्थितपद नहीं है।

§ ३३७. आदेशसे नारकियोंमे अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि छह नोकषायोंका अवस्थितपद नहीं है। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य मनुष्य, देवगतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके

अवत्त० संखे०गुणा । भुज० संखे०गुणा । अप्प० असंखे०गुणा । इत्थि०-हस्स-रदीणं सव्वत्थोवा अवट्ठि० । भुज० असंखे०गुणा । अप्प० संखे०गुणा । णवुंस०-अरदि-सोगाणं सव्वत्थोवा अवट्ठि० । अप्प० असंखे०गुणा । भुज० संखे०गुणा ।

§ २२८. पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछाणमोघो । णवरि अणंताणु०चउक्क०अवत्त० णत्थि । सम्म०-सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुअं, एगपदत्तादो । इत्थिवेद०-पुरिस-हस्स-रदीणं सव्वत्थोवा भुज० । अप्प० संखेज्जगुणा । णवुंस-अरदि-सोगाणं सव्वत्थोवा अप्प० । भुज० संखे०गुणा । एवं मणुसअपज्ज० ।

§ २२९. मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुंछा० सव्वत्थोवा अवट्ठि० । अप्प० संखे०गुणा । भुज० संखे०गुणा । अणंताणु०चउक्क० सव्वत्थोवा अवत्त० । अवट्ठि० संखे० गुणा । सेसं मिच्छत्तभंगो । सम्म०-सम्मामि० सव्वत्थोवा अवट्ठि० । अवत्त० संखे०गुणा । भुज० संखे०गुणा । अप्प० संखे०गुणा । पुरिस० सव्वत्थोवा अवट्ठि० । भुज० संखे०गुणा । अप्प० संखे०गुणा । सेसमोघो । णवरि

देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्योंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। स्त्रीवेद, हास्य और रतिके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेद अरति और शोकके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं।

§ २२८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय भय और जुगुप्साका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्यपद नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि यहाँ इनका एक पद है। स्त्रीवेद पुरुषवेद हास्य और रतिके भुजगारविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेद अरति और शोकके अल्पतरविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

§ २२९. मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय भय और जुगुप्साके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। शेष भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदके अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। शेष भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है

छण्णोक० अवट्ठि० सव्वत्थोवं । उवरि संखेज्जगुणं कायव्वं ।

§ ३४०. आणदादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति वारसक०-इत्थि०-हस्स-रइ-अरइ--सोग-भय--दुगुंछ-सम्मत्त--सम्मामिच्छत्ताणं देवोघो । अणंताणु०चउक्कस्स सव्वत्थोवा अवत्त० । अवट्ठि० असंखे०गुणा । भुज० असंखे०गुणा । अप्प० संखे०-गुणा । एवं मिच्छ० । णवरि अवत्त० णत्थि । पुरिस० कसायभंगो । णवुंस० इत्थिवेदभंगो । अणुदिसादि जाव अवराइद त्ति दंसणतिय-अणंताणु०चउक्क०-इत्थि०-णवुंस०वेदाणं णत्थि अप्पाबहुअं। सेसाणमुवरिमगेवज्जभंगो। सव्वट्ठे एवं चेव। णवरि वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० संखे०गुणं कायव्वं । एवं जाव अणाहारए त्ति ।

एवं भुजगारविहत्ती समत्ता ।

* पदणिक्खेव-वड्ढीओ च कायव्वाओ ।

§ ३४१. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे—पदाणमुक्कस्स-जहण्ण-वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणावत्तव्वसण्णिदाणं णिक्खेवो समुक्कित्तणा-सामित्तादिविसेसेहि णिच्छयजणणं पदणिक्खेवो णाम । भुजगारविसेसो पदणिक्खेवो त्ति वुत्तं होइ । पदणिक्खेवविसेसो वड्ढी णाम । एदाओ दो वि विहत्तीओ भुजगाराणुसारेणेत्थ कायव्वाओ त्ति अत्थ-

---

कि छह नोकषायोंकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं । आगे सख्यातगुणा करना चाहिए ।

§ ३४० आनत कल्पसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें वारह कषाय, स्त्रीवेद, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरविभक्तिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार मिथ्यात्वके सम्भव पदोंका अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि इसकी अवक्तव्यविभक्ति नहीं है। पुरुषवेदका भङ्ग कषायोंके समान है। नपुसकवेदका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। अनुदिशसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें तीन दर्शनमोहनीय, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका अल्पबहुत्व नहीं है। शेष प्रकृतियोंका भङ्ग उपरिम ग्रैवेयकके समान है। सर्वार्थसिद्धिमें इसीप्रकार भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि वारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका अल्पबहुत्व कहते समय संख्यातगुणा करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार भुजगारविभक्ति समाप्त हुई।

* पदनिक्षेप और वृद्धि करनी चाहिए।

३४१ इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—उत्कृष्ट और जघन्य वृद्धि, हानि, अवस्थान और अवक्तव्य संज्ञावाले पदोंका निक्षेप अर्थात् समुत्कीर्तना और स्वामित्व आदि विशेषोंके द्वारा निश्चय उत्पन्न करना पदनिक्षेप कहलाता है। भुजगारविशेषको पदनिक्षेप कहते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। तथा पदनिक्षेपविशेषको वृद्धि कहते हैं। ये दोनों ही विभक्तियाँ भुजगारके

समप्पणा एदेण कदा होइ। संपहि एदेण सुत्तेण समप्पिदत्थविवरणमुच्चारणबलेण कस्सामो। तं जहा—उक्कस्सपदणिक्खेवे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुए त्ति।

§ १४१ तत्थ समुक्कित्तणा दुविहा—जहण्णा उक्कस्सा। उक्कस्सए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-पुरिस०-भय-दु० अत्थि उक्कस्सिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च। सम्मत्त-सम्मामि०-इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं अत्थि उक्क० वड्ढी हाणी च। णवरि एत्थावट्ठिदस्स वि संभवो अत्थि, सासणसम्माइट्ठिम्मि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं तदुवलंभादो। सेसाणं पि उवसमसेढीए सव्वोवसामणाम्मि तदुवलंभसंभवादो। तमेत्थ ण विवक्खियमिदि घेत्तव्वं। अदो चेव उवरिमा अप्पणागंथो सुसंबद्धो। एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्ख३-मणुस३-देवा जाव उवरिमगेवज्जा त्ति।

§ १४२ पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० अत्थि उक्क० वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च। सम्म०-सम्मामि० अत्थि उक्क० हाणी। सत्तणोक० अत्थि उक्क वड्ढी हाणी च। एवं मणुसअपज्ज०। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठ त्ति

अनुसार यहाँ करनी चाहिए इसप्रकार इस सूत्र द्वारा अर्थका समर्पण किया गया है। अब इस सूत्र द्वारा समर्पित किए गये अर्थका विवरण उच्चारणाके बलसे करते हैं। यथा—उत्कृष्टपदनिक्षेपका प्रकरण है। उसमें ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं—समुत्कीर्तना स्वामित्व और अल्पबहुत्व।

§ १४१. समुत्कीर्तना दो प्रकारकी है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी उत्कृष्ट वृद्धि और उत्कृष्ट हानि है। इतनी विशेषता है कि यहाँ पर अवस्थितपद भी सम्भव है, क्योंकि सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अवस्थितपद उपलब्ध होता है। तथा शेष प्रकृतियोंका भी अवस्थितपद उपशमश्रेणिमें सर्वोपशामना होने पर उपलब्ध होता है। परन्तु वह यहाँ पर विवक्षित नहीं है ऐसा जानना चाहिए और इसीलिए उपरिम अर्पणा ग्रन्थ सुसम्बद्ध है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, मनुष्यत्रिक, देव और उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ १४२ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि है। सात नोकषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि और हानि है। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

---

१ आ०प्रतौ 'उक्क हाणी।' [सत्तणोक० अत्थि उक्क० हाणी] सत्तणोक० इति पाठः।

मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४-इत्थि०-णवुंस० अत्थि उक्क० हाणी। णवरि सम्म०-सम्मामि० वड्ढीए वि संभवो दीसइ, उवसमसेढीए कालं कादूण तत्थुप्पण्ण-उवसमसम्मादिट्ठिम्मि दोण्हमेदेसिं कम्माणं वड्ढिदंसणादो। एदमेत्थ ण विवक्खिय-मिदि णेदव्वं। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमत्थि उक्क० वड्ढी हाणी च। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० ओघं। एवं जाव अणाहारि त्ति। एवं जहण्णयं पि णेदव्वं, विसेसाभावादो।

§ ३४४. सामित्तं दुविहं—जह० उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० जो हदसमुप्पत्तियकम्मंसिओ कम्मं क्खवेहदि त्ति विवरीदं गंतूण सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववण्णो सव्वलहुं सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो उक्कस्ससंकिलेसमुक्कस्सगं च जोगं गदो तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं। णवरि तप्पाओग्ग-जहण्णसतकम्मिओ खविदकम्मंसिओ आणेदव्वो, बंधाणुसारेणेदमुक्कस्सवड्ढिसामित्तं पयट्टं, अण्णहा पुण गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंदूण विवरीयभावेण सम्मत्त-सम्मा-मिच्छत्ताणि पूरेदूण तदो मिच्छत्तं गयस्स पढमसमए पयदसामित्तेण होदव्वं, तत्था-संखेज्जाणं गुणिदसमयपबद्धाणमधापवत्तेण मिच्छत्तस्सुवरि परिवड्ढिदंसणादो। उक्क०

अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी-चतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट हानि है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी वृद्धि भी सम्भव दिखलाई देती है, क्योंकि उपशमश्रेणिमें मरण करके वहाँ उत्पन्न हुए उपशमसम्यग्दृष्टि जीवमें इन दो कर्मों की वृद्धि देखी जाती है। किन्तु यह यहाँ पर विवक्षित नहीं है ऐसा जानना चाहिए। हास्य, रति, अरति और शोककी उत्कृष्ट वृद्धि और हानि है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। तथा उत्कृष्टके समान जघन्य भी जानना चाहिए, क्योंकि उत्कृष्टसे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई।

§ ३४४. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर हतसमुत्पत्तिक कर्मांशिक जीव कर्मका क्षपण करेगा किन्तु विपरीत जाकर सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हो और अति शीघ्र सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो उत्कृष्ट संक्लेश और उत्कृष्ट योगको प्राप्त हुआ उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। इतनी विशेषता है कि तत्प्रायोग्य जघन्य सत्कर्मवाले क्षपितकर्मांशिक जीवको लाना चाहिए। बन्धके अनुसार यह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामित्व प्रवृत्त हुआ है, अन्यथा गुणितकर्मांशिक लक्षणसे आकर विपरीत भावसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको पूरकर अनन्तर मिथ्यात्वको प्राप्त होने पर उसके प्रथम समयमें प्रकृत स्वामित्व होना चाहिए, क्योंकि वहा पर असंख्यात गुणित समयप्रबद्धोंकी अधःप्रवृत्तभागाहारके द्वारा मिथ्यात्वके ऊपर वृद्धि देखी जाती है।

हाणी कस्स ? अण्णद० जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो णिस्सरिदसमाणो दो-तिण्णि भवे पंचिंदिएसु बादरेइंदिएसु च गमेदूण तदो मणुस्सेसु गब्भोवक्कंतिएसु जादो सव्वलहुं जोणिणिक्खमणजम्मणेण अट्ठवस्सिओ सम्मत्तं पडिवज्जिय दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तेण मिच्छत्तं खविज्जमाणं खविदं जाधे अपच्छिम-ट्ठिदिखंडगं चरिमसमयसंछुब्भमाणगं संछुद्धं ताधे तस्स मिच्छत्तस्स उक्क० हाणी। सम्मत्त०-सम्मामि० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमीए पुढवीए णेरइओ अंतोमुहुत्तेण मिच्छत्तमुक्कस्सं काहिदि त्ति विवरीयं गंतूण सम्मत्तं पडिवण्णो। तत्थ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि गुणसंकमेण पूरिदाणि अंतोमुहुत्तमसंखेज्ज-गुणाए सेढीए सा से काले मिच्छत्तं पविसिहिदि त्ति तस्स उक्क० वड्ढी। अथवा दंसणमोहक्खवगेण गुणिदकम्मंसिएण जाधे मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं ताधे सम्मामिच्छत्तस्स उक्क० वड्ढी। तम्मेव जाधे सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते पक्खित्तं ताधे [सम्मत्तस्स उक्क० वड्ढी]। सम्म० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स अक्खीणदंसणमोहणीयस्स चरिमसमए वट्टमाणस्स। सम्मामि० उक्क० हाणी कस्स ? गुणिदकम्मंसिएण सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते जाधे संपक्खित्तं ताधे तस्स उक्क० हाणी। अणंताणु०४ उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं च मिच्छत्तभंगो। उक्क० हाणी कस्स ? अण्ण०

मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीसे निकल कर तथा दो तीन भव पञ्चेन्द्रियों और बादर एकेन्द्रियोंमें बिता कर अनन्तर गर्भज मनुष्योंमें उत्पन्न होकर अतिशीघ्र योनिसे निकलने रूप जन्मसे आठ वर्षका होकर तथा सम्यक्त्वको प्राप्त हो दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। उसने क्षपकको प्राप्त होनेवाले मिथ्यात्वका क्षय करते हुए जब अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रमण किया तब उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीमें नारकी होकर अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वको उत्कृष्ट करेगा किन्तु विपरीत जाकर और सम्यक्त्वको प्राप्त होकर वहाँ सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको गुणसंक्रमके द्वारा अन्तर्मुहूर्त काल तक असंख्यातगुणी गुणश्रेणिरूपसे पूरकर अनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होगा ऐसे उस जीवके उत्कृष्ट वृद्धि होती है। अथवा दर्शनमोहनीयका क्षपक जो गुणितकर्मांशिक जीव जब मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त करता है तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा वही जब सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त करता है तब सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो अन्यतर दर्शनमोहनीयका क्षय करनेवाला गुणितकर्मांशिक जीव अन्तिम समयमें विद्यमान है उसके सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो गुणितकर्मांशिक जीव जब सम्यग्मिथ्यात्वका सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त करता है तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो अन्यतर

१ आ० प्रतौ जादे (?) ता० प्रतौ 'जादे' इति पाठः।

गुणिदकम्मंसिओ जो सत्तमाए पुढवीए णेरइयो कम्ममंतोमुहुत्तेण गुणेहिदि त्ति सम्मत्तं पडिवण्णो अंतोमुहुत्तेण अणंताणुबंधी विसंजोजयंतेण तेण अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए संकामिदे तस्स उक्क० हाणी। अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सवड्ढी अवट्ठाणं मिच्छत्तभंगो। उक्क० हाणी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स अणियट्टिखवगस्स अट्ठण्हं कसायाणमपच्छिमे ट्ठिदिखंडए संकामिदे तस्स उक्क० हाणी। तिण्हं संजलणाणमट्ठ-कसायभंगो। लोहसंजलणस्स एवं चेव। णवरि सुहुमसांपराइयस्स चरिमसमए उक्क० हाणी। इत्थि-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमुक्क० वड्ढी मिच्छत्तभंगो। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स खवगस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए चरिमसमय-संकामिदे इत्थि-णवुंस० उक्क० हाणी। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमुक्क० हाणी गुणिद-कम्मंसियस्स खवगस्स चरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमसमयसंकामयस्स। पुरिसवेद० उक्क० वड्ढी मिच्छत्तभंगो। अवट्ठाणं कस्स? अण्णद० असंजदसम्माइट्ठिस्स अवट्ठिदपाओग्ग-संतकम्मिएण उक्कस्सवड्ढिं कादूणावट्ठिदस्स तस्स उक्क० अवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स खवगस्स चरिमट्ठिदिखंडयं विणासेमाणगस्स उक्क० हाणी। भय-दुगुंछाणं वड्ढि-अवट्ठाणमुक्कस्सं मिच्छत्तभंगो। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स खवगस्स चरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमसमए वट्टमाणगस्स।

गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीका नारकी जीव कर्मको अन्तर्मुहूर्तके द्वारा गुणित करेगा, इसलिए सम्यक्त्वको प्राप्त होकर अन्तर्मुहूर्तके द्वारा अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करते हुए जब अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रमण करता है तब उसके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट हानि होती है। आठ कषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक अनिवृत्तिक्षपक जीव आठ कषायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रमण करता है उसके इनकी उत्कृष्ट हानि होती है। तीन संज्वलनोंका भङ्ग आठ कषायोंके समान है। लोभसंज्वलनका भङ्ग इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें इसकी उत्कृष्ट हानि होती है। स्त्रीवेद, नपुसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी उत्कृष्ट वृद्धिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक क्षपक जीव अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रमण कर रहा है उसके स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी उत्कृष्ट हानि होती है। तथा जो गुणितकर्मांशिक क्षपक जीव हास्य, रति, अरति और शोकके अन्तिम स्थितिकाण्डकके द्विचरम समयमे संक्रमण कर रहा है उसके इनकी उत्कृष्ट हानि होती है। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट वृद्धिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इसका उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है? जो अन्यतर असंयतसम्यग्दृष्टि जीव अवस्थितप्रायोग्य सत्कर्मके साथ उत्कृष्ट वृद्धि करके अवस्थित है उसके इसका उत्कृष्ट अवस्थान होता है। इसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक क्षपक जीव चरम स्थितिकाण्डकका विनाश कर रहा है उसके इसकी उत्कृष्ट हानि होती है। भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक क्षपक जीव अन्तिम स्थितिकाण्डकके द्विचरम समयमे विद्यमान है उसके इनकी उत्कृष्ट हानि होती है।

§ १५५. आदेसेण णेरइय० मिच्छत्त० उक्कस्सवड्ढि-अवट्ठाणाणमोघभंगो। उक्कस्सिया हाणी कस्स ? अण्णद० जो गुणिदकम्मंसिओ अंतोमुहुत्तेण कम्मं खवेहिदि त्ति तदो सम्मत्तं पडिवण्णो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि गुणसंकमेण पूरेदूण से काले मिच्छत्तं पडिवज्जिहिदि त्ति तस्स उक्क० हाणी। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स ? अण्णदरस्स गुणिदकम्मंसियस्स जो सत्तमाए पुढवीए णेरइओ अंतोमुहुत्तेण कम्मं खवेहिदि त्ति सम्मत्तं पडिवण्णो तदो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि गुणसंकमेण पूरेदूण से काले मिच्छत्तं पडिवज्जिहिदि त्ति तस्स उक्क० वड्ढी। सम्म० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० जो गुणिदकम्मंसिओ चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीओ तस्स उक्कस्सिया हाणी। सम्मामि० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० गुणसंकमेण सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्तं पूरेदूण मिच्छत्तं पडिवण्णपढमसमए तस्स उक्क० हाणी। अणंताणु०४ उक्कस्सवड्ढी अवट्ठाणं मिच्छत्तभंगो। उक्कस्सिया हाणी कस्स ? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स सम्मत्तं पडिवज्जियूण अणंताणु०४ विसंजोए तस्स तस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए चरिमसमयपसंछोहयस्स तस्स उक्क० हाणी। बारसक० भय-दुगुंछा० उक्कस्सवड्ढी अवट्ठाणं मिच्छत्तभंगो। उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरस्स गुणिदकम्मंसियस्स णवकबंधपरिणामेण णेरइएसु उववण्णस्स जावे गुणसेढिसीसयाणि उदयमागदाणि तावे तस्स उक्कस्सिया हाणी। एवं पुरिसवेदस्स। णवरि अवट्ठाणं सम्माइट्ठिस्स।

§ १५५. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग ओघके समान है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव अन्तर्मुहूर्तके द्वारा कर्मको क्षपित करेगा किन्तु सम्यक्त्वको प्राप्त हो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको गुणसंक्रमके द्वारा पूरकर अनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होगा उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी वृद्धि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीका नारकी जीव अन्तर्मुहूर्तके द्वारा कर्मको क्षपित करेगा किन्तु सम्यक्त्वको प्राप्त होकर अनन्तर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको गुणसंक्रमके द्वारा पूरकर अनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होगा उसके इनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव अन्तिम समयमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणा कर रहा है उसके इसकी उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो अन्यतर जीव गुणसंक्रमके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वको पूरकर मिथ्यात्वको प्राप्त होता है उसके प्रथम समयमें इसकी उत्कृष्ट हानि होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव सम्यक्त्वको प्राप्त होकर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करते समय अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रमण कर रहा है उसके इनकी उत्कृष्ट हानि होती है। बारह कषाय भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव नवकबन्धपरिणामसे नारकियोंमें उत्पन्न हुआ उसके जब गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होते हैं तब उसके इनकी उत्कृष्ट हानि होती है। इसीप्रकार पुरुषवेदके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका अवस्थान

ट्ठिदस्स । इत्थि-णवुंस०-चदुणोकसाय० [उक्क०] वड्ढी मिच्छत्तभंगो। अवट्ठाणं णत्थि। हाणी भय-दुगुंछभंगो। जेसिमुदयो णत्थि तेसिं पि थिउक्कसंकमेणे पयदसिद्धी वत्तव्वा। पढमाए एवं चेव। णवरि अप्पणो पुढवीए उववज्जावेयव्वो। विदियादि जाव सत्तमा त्ति एवं चेव। णवरि अप्पप्पणो पुढवीए णामं घेत्तूण उववज्जावेयव्वो। णवरि सम्मत्तस्स उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स सम्मत्तं पडिवज्जियूण अणंताणुवंधिं विसंजोइय ट्ठिदस्स जाधे गुणसेढिसीसयाणि उदयमागयाणि ताधे तस्स उक्क० हाणी। बारसक०-णवणोक० उक्क० हाणी एवं चेव।

§ ३४६. तिरिक्खगईए तिरिक्खेसु मिच्छत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? अण्णद० खविदकम्मंसिओ विवरीदं गंतूण तिरिक्खगईए उववण्णो सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो उक्कस्सजोगमुक्कस्ससंकिलेसं च गदो तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं। उक्कस्सिया हाणी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स संजमासंजम-संजम-सम्मत्तगुण-सेढीओ कादूण मिच्छत्तं गदो तदो अविणट्ठासु गुणसेढीसु तिरिक्खेसु उववण्णस्स तस्स जाधे गुणसेढिसीसयाणि उदयमागदाणि ताधे मिच्छत्तस्स उक्क० हाणी। अथवा णेरइयभंगो। सम्मत्त०-सम्मामि० उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसिय-

सम्यग्दृष्टिके होता है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इनका अवस्थान नहीं है। इनकी उत्कृष्ट हानिका भङ्ग भय और जुगुप्साके समान है। तथा जिन प्रकृतियोंका उदय नहीं है उनकी भी स्तिवुकसंक्रमणसे प्रकृत विषयकी सिद्धि करनी चाहिए। पहली पृथिवीमें इसीप्रकार भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी पृथिवीमें उत्पन्न कराना चाहिए। दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक इसीप्रकार भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी पृथिवीका नाम लेकर उत्पन्न कराना चाहिए। इतनी और विशेषता है कि सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव सम्यक्त्वको प्राप्त होकर और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके स्थित है उसके जब गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होते हैं तब उसके सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि होती है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग इसीप्रकार है।

§ ३४६ तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर तिर्यञ्चगतिमें उत्पन्न हो और सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो उत्कृष्ट योग और उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वकी गुणश्रेणियाँ करके मिथ्यात्वको प्राप्त हो अनन्तर गुणश्रेणियोंके नष्ट हुए बिना तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ उसके जब गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त हुए तब उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि होती है। अथवा इसका भङ्ग नारकियोंके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक

१. ता०प्रतौ 'छिउक्कसंकमेण' इति पाठः। २. ता०प्रतौ 'एवं चेव। णामं घेत्तूण। विदियादि' इति पाठः।

तिरिक्खो सम्मत्तं पडिवण्णो जाधे गुणसंकमेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि पूरेदूण से काले मिच्छत्तं पडिवज्जिहिदि त्ति ताधे तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। हाणी वि सम्मामिच्छत्तस्स मिच्छत्तं पडिवण्णस्स पढमसमए कायव्वा। सम्मत्तस्स उक्कस्सिया हाणी ओघं। अणंताणु०४ वड्ढी अवट्ठाणं च मिच्छत्तभंगो। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स अणंताणुबंधी विसंजोएंतस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए संकामिदे तस्स उक्क० हाणी। बारसक० पुरिस० भय-दुगुंछा० वड्ढी अवट्ठाणं मिच्छत्तभंगो। णवरि पुरिस० अवट्ठाणं सम्माइट्ठिस्स कायव्वं। उक्कस्सिया हाणी णारयभंगो। इत्थि-णवुंस० चदुणोक० उक्क० वड्ढी मिच्छत्तभंगो। उक्कस्सिया हाणी पुरिसवेदभंगो। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि जोणिणीसु सम्म०-बारसक०-णवणोक० उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स संजम-संजमासंजम-सम्मत्तगुणसेढीओ काऊण तदो अविणट्ठासु गुणसेढीसु मिच्छत्तं गंतूण जोणिणीसु उववण्णो जाधे गुणसेढिसीसयाणि उदयमागदाणि ताधे तस्स उक्क० हाणी।

§ १४७ पंचिं०तिरिक्ख०अपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछा० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० खविदकम्मंसियस्स जो विवरीदं गंतूण पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तएसु उववण्णो अंतोमुहुत्तेण उक्कस्सजोगं गदो उक्कस्सयं च संकिलेसं परिणदो तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद०

तिर्यञ्च जीव सम्यक्त्वको प्राप्त हो जब गुणसंक्रमके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको पूरकर अनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त करेगा तब उसके इनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। हानि भी सम्यग्मिथ्यात्वकी मिथ्यात्वको प्राप्त हुए तिर्यञ्चके प्रथम समयमें कहनी चाहिए। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानिका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेवाला जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रम करता है उसके इनकी उत्कृष्ट हानि होती है। बारह कषाय पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदका अवस्थान पद सम्यग्दृष्टिके कहना चाहिए। इनकी उत्कृष्ट हानिका भङ्ग नारकियोंके समान है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। तथा इनकी उत्कृष्ट हानिका भङ्ग पुरुषवेदके समान है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि योनिनी तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव संयम संयमासंयम और सम्यक्त्वकी गुणश्रेणियाँ करके अनन्तर गुणश्रेणियोंके नष्ट हुए बिना मिथ्यात्वमें जाकर योनिनी तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ उसके जब गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त हुए तब उसके इनकी उत्कृष्ट हानि होती है।

§ १४७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हो अन्तर्मुहूर्तमें उत्कृष्ट योग और उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ उसके इनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। इनकी

गुणिदकम्मंसिओ जो सम्मत्त-संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ कादूण मिच्छत्तं गदो अविणट्ठासु गुणसेढीसु अपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स गुणसेढिसीसएसु उदयमागदेसु उक्क० हाणी। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिया हाणी तस्सेव। सत्तणोक० उक्क० वड्ढि-हाणीणं मिच्छत्तभंगो।

§ ३४८. मणुसगदीए मणुसेसु मिच्छत्तस्स उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णदरो खविदकम्मंसिओ अंतोमुहुत्तेण कम्मं खवेहिदि त्ति विवरीयं गतूण मिच्छत्तं गदो उक्कस्सजोगमुक्कस्ससंकिलेसं च पडिवण्णो तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाण। उक्कस्सिया हाणी कस्स? अण्णदरो गुणिदकम्मंसिओ दंसण-मोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदो जाधे तेण अपिच्छम ट्ठिदिखंडयं गुणसेढिसीसगस्स संखेज्जदिभागेण सह हदं ताधे तस्स उक्क० हाणी। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स सव्वलहुं मणुसेसु आगदो जोणिणिक्खमण-जम्मणेण जादो अट्ठवस्सिगो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि गुणसंकमेण असंखे०गुणाए सेढीए अंतोमुहुत्तं पूरेयूण से काले विज्झादं पडिहिदि त्ति तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। अथवा दंसणमोहक्खवगस्स कायव्वं। सम्मत्तस्स उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स। सम्मामिच्छत्तस्स एदेणेव दंसणमोहं खवेंतेण जाधे गुणसेढिसीसगेण सह सम्मामि० अपच्छिमट्ठिदिखंडयं

उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव सम्यक्त्व, संयमासयम और सयम गुणश्रेणियोंको प्राप्त होकर तथा मिथ्यात्वमें जाकर गुणश्रेणियोंके नष्ट हुए विना अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ उसके गुणश्रेणिशीर्षो के उदयको प्राप्त होने पर उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि उसीके होती है। सात नोकषायोकी उत्कृष्ट वृद्धि और हानिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है।

§ ३४८ मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव अन्तर्मुहूर्तमें कर्मो का क्षय करेगा किन्तु विपरीत जाकर मिथ्यात्वको प्राप्त हो उत्कृष्ट योग और उत्कृष्ट सक्लेशका अधिकारी हुआ उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। इसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेके लिए उद्यत हुआ। उसने जब अन्तिम स्थितिकाण्डकका गुणश्रेणिशीर्षके संख्यातवें भागके साथ हनन किया तब उसके मिथ्यात्व-की उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव अतिशीघ्र मनुष्योंमे आकर और योनिनिष्क्रमण जन्मसे आठ वर्षका होकर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको गुणसक्रमके द्वारा असख्यातगुणी श्रेणिरूपसे अन्तर्मुहूर्ततक पूरकर अनन्तर समयमें विध्यातको प्राप्त होगा उसके उक्त कर्मो की उत्कृष्ट वृद्धि होती है। अथवा इनकी उत्कृष्ट वृद्धि दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके करनी चाहिए। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके अन्तिम समयमें अवस्थित है उसके सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि होती है। तथा यही दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाला जीव जब गुणश्रेणिशीर्षके साथ सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम

चरिमसमए पक्खित्ते ताधे उक्क० हाणी। अणंताणु० उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं च मिच्छत्तभंगो। उक्कस्सिया हाणी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वलहुं जोणिणिक्खमणजम्मणेण जादो अट्ठवस्सिओ सम्मत्तं पडिवण्णो पुणो अंतोमुहुत्तेण अणंताणुबंधी विसंजोएदि ताधे तेण गुणसेढिसीसगस्स असंखेज्जदिभागेण सह अपच्छिमट्ठिदिखंडयं णिग्गालिदं ताधे अणंताणु० उक्क० हाणी। अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सवड्ढी अवट्ठाणं मिच्छत्तभंगो। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स सव्वलहुं जोणिणिक्खमणजम्मणेण जादो अट्ठवस्सिओ खवणाए अब्भुट्ठिदो ताधे अपच्छिमट्ठिदिखंडयं गुणसेढिसीसगेहि सह संकमणाए संपक्खित्तं ताधे उक्क० हाणी। कोहसंजलणस्स उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स खवगस्स जाधे पुरिसवेदो छण्णोकसाएहि सह कोधे संपक्खित्तो ताधे कोधसंज० उक्क० वड्ढी। ओघसामित्तं पि एवं चेव कायव्वं। अवट्ठाणं मिच्छत्तभंगो। उक्क० हाणी कस्स? जाधे कोधो माणे संपक्खित्तो ताधे कोधस्स उक्क० हाणी। माणस्स उक्क० वड्ढी कस्स? जस्सेव जाधे कोधो माणे संपक्खित्तो ताधे माणस्स उक्क० वड्ढी। अवट्ठाणं मिच्छत्तभंगो। हाणी कस्स? तस्स चेव जाधे माणो मायाए संपक्खित्तो ताधे उक्क० हाणी। मायाए उक्क० वड्ढी कस्स? तस्सेव माणउक्कस्सविहत्तिएण जाधे माणो मायाए संपक्खित्तो ताधे तस्स उक्क० वड्ढी। [अवट्ठाणं मिच्छत्तभंगो।] हाणी कस्स? जो मायाए उक्कस्ससंतकम्मंसिओ

स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रमण करता है तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव अतिशीघ्र योनिसे निकलने रूप जन्मके द्वारा आठ वर्षका होकर सम्यक्त्वको प्राप्त हो पुनः अन्तर्मुहूर्तमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करता है उसके जब गुणश्रेणिशीर्षके असंख्यातवें भागके साथ अन्तिम स्थितिकाण्डक गलित हुआ तब उसके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट हानि होती है। आठ कषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भंग मिथ्यात्वके समान है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव अतिशीघ्र योनिसे निकलनेरूप जन्मसे आठ वर्षका होकर क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। उसने जब अन्तिम स्थितिकाण्डकको गुणश्रेणिशीर्षोंके साथ संक्रमणमें प्रक्षिप्त किया तब उसके इनकी उत्कृष्ट हानि होती है। क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक क्षपक जीव जब छह नोकषायोंके साथ पुरुषवेदको क्रोधमें प्रक्षिप्त करता है तब उसके क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। ओघस्वामित्व भी इसी प्रकार करना चाहिए। इसके अवस्थानका भंग मिथ्यात्वके समान है। इसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जब क्रोधको मानमें प्रक्षिप्त करता है तब क्रोधकी उत्कृष्ट हानि होती है। मानकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जिसने जब क्रोधको मानमें प्रक्षिप्त किया तब मानकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। इसके अवस्थानका भंग मिथ्यात्वके समान है। इसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? वही जब मानको मायामें प्रक्षिप्त करता है तब मानकी उत्कृष्ट हानि होती है। मायाकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? मानकी उत्कृष्ट विभक्तिवाले उसी जीवने जब मानको मायामें प्रक्षिप्त किया तब उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। अवस्थानका भंग मिथ्यात्वके समान है। मायाकी उत्कृष्ट हानि किसके

मायं लोभे संपक्खिवदि तस्स उक्क० हाणी। लोभसंज० उक्क० वड्ढी कस्स ? तस्सेव कायव्वा, विसेसाभावादो। अवट्ठाणं मिच्छत्तभंगो। हाणी उक्क० कस्स ? तस्स चेव सुहुमसांपराइयस्स चरिमसमए वट्टमाणगस्स। इत्थिवेद० उक्क० वड्ढी कस्स ? जो खविदकम्मंसिओ अंतोमुहुत्तेण कम्मं खवेहिदि त्ति विवरीदं गंतूग मिच्छत्तं गदो इत्थिवेद० पबद्धो तदो उक्कस्सजोगमुक्कस्सगं च संकिलेसं गदो तस्स उक्क० वड्ढी। हाणी कस्स ? अण्णदरस्स गुणिदकम्मंसिओ खवणाए अब्भुट्ठिदो तेण जाधे अपच्छिमट्ठिदिखंडयं उदयवज्जं संछुब्भमाणगं संछुद्धं ताधे उक्क० हाणी। एवं णवुंसय०। पुरिस० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० गुणिद० णवुंसयवेदोदयक्खवगस्स जाधे इत्थि-णवुंसयवेदा पुरिसवेदम्हि संपक्खित्ता[1] ताधे उक्क वड्ढी। एवमोघसामित्तं पि णायव्वं। उक्क० अवट्ठाणं कस्स ? अण्णद० असंजदसम्मादिट्ठिस्स अवट्ठिदपाओग्गसंतकम्मियस्स उक्कस्सजोगिस्स उक्कसियाए वड्ढीए वड्ढियूणावट्ठिदस्स। उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० गुणिदकम्मंसि० पुरिसवेदचिराणसंतकम्मं जाधे कोधम्मि संपक्खित्तं ताधे तस्स उक्क० हाणी। छण्णोकसायाणमुक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स खवणाए अब्भुट्ठिदस्स अपुव्वकरणचरिमसमए उक्कस्सगुणसंकमेण सह उक्कस्सजोगं

होती है ? जो मायाका उत्कृष्ट सत्कर्मवाला जीव जब मायाको लोभमें निक्षिप्त करेगा तब उसके मायाकी उत्कृष्ट हानि होती है। लोभसज्वलनकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? उसी जीवके करनी चाहिए, क्योंकि कोई विशेषता नहीं है। इसके अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? वही सूक्ष्मसाम्पराय जीव जब अन्तिम समयमें विद्यमान होता है तब उसके लोभकी उत्कृष्ट हानि होती है। स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो क्षपितकर्मांशिक जीव अन्तर्मुहूर्तके द्वारा कर्मका क्षय करेगा किन्तु विपरीत जाकर मिथ्यात्वको प्राप्त हो स्त्रीवेदका बन्धकर अनन्तर जिसने उत्कृष्ट योग और उत्कृष्ट सक्लेशको प्राप्त किया उसके स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। इसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। उसने जब उदयको छोड़कर अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रमण करते हुए सक्रमण किया तब उसके स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट हानि होती है। इसीप्रकार नपुसकवेदका स्वामी जानना चाहिए। पुरुषवेदकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव नपुसकवेदके उदयके साथ क्षपक है वह जब स्त्रीवेद और नपुंसकवेदको पुरुषवेदमें निक्षिप्त करता है तब उसके पुरुषवेदकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। इसीप्रकार ओघ स्वामित्व भी जानना चाहिए। इसका उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है ? जो अन्यतर असंयतसम्यग्दृष्टि जीव अवस्थितप्रायोग्य सत्कर्मवाला है, उत्कृष्ट योगसे युक्त है और उत्कृष्ट वृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त हो अवस्थित है उसके इसका उत्कृष्ट अवस्थान होता है। इसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जिस अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीवने पुरुषवेदके पुराने सत्कर्मको जब क्रोधमें प्रक्षिप्त किया तब उसके इसकी उत्कृष्ट हानि होती है। छह नोकषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव क्षपणाके लिए उद्यत हो अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट

१. ता०प्रतौ 'संपक्खित्तो (त्ता)', आ०प्रतौ 'संपक्खित्तो' इति पाठः।

गदस्स तस्स उक्क० वड्ढी। णवरि अरदि-सोगाणमपुव्वचरिमसमए भय-दुगुंछोदएण विणा सोदए वट्टमाणस्स। उक्क० हाणी कस्स? अण्णद० खवगस्स गुणिदकम्मंसियस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए दुचरिमसमए वट्टमाणगस्स तस्स उक्क० हाणी। एवं मणुसपज्ज०। णवरि इत्थिवेद० हाणी छण्णोकसायाणं व भाणियव्वा। एवं चेव मणुसिणीसु वि। णवरि पुरिस०-णवुंस० छण्णोकसायाणं व भाणियव्वा। मणुस अपज्ज० पंचिं०तिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

§ ३४६. देवगदीए देवेसु मिच्छत्त०-बारसक० भय-दुगुंछा० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० खविदकम्मंसियस्स जो अंतोमुहुत्तेण कम्मं खवेहदि त्ति विवरीयभावेण मिच्छत्तं गंतूण देवेसुववण्णो सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो उक्कस्सजोगमागदो उक्कस्सयं च संकिलेसं गदो तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्समवट्ठाणं। मिच्छत्तस्स उक्कस्सहाणी णारयभंगो। सेसाणं उक्क० हाणी कस्स? जो गुणिदकम्मंसिओ सम्मत्त-संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ काऊण तदो मदो देवेसुववण्णो तस्स गुणसेढिसीसगेसु उदयमागदेसु उक्क० हाणी। सम्मत्त-सम्मामि० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स सम्मत्तं पडिवज्जमाणयस्स सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि गुणसंकमेण पूरेदूण से काले मिच्छत्तं पडिवज्जिहिदि त्ति तस्स उक्क० वड्ढी। सम्मत्त०

गुणसंक्रमके साथ उत्कृष्ट योगको प्राप्त हुआ उसके इनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। इतनी विशेषता है कि अरति और शोककी अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें भय और जुगुप्साके उदयके बिना स्वोदयसे विद्यमान रहते हुए उत्कृष्ट वृद्धि होती है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर क्षपक गुणितकर्मांशिक जीव अन्तिम स्थितिकाण्डकके द्विचरम समयमें विद्यमान है उसके इनकी उत्कृष्ट हानि होती है। इसीप्रकार मनुष्यपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट हानि छह नोकषायोंके समान कहनी चाहिए। इसीप्रकार मनुष्यिनियोंमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और नपुंसकवेदका भंग छह नोकषायोंके समान कहना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भंग है।

§ ३४६. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव अन्तर्मुहूर्तके द्वारा कर्मोंका क्षय करेगा किन्तु विपरीत भावसे मिथ्यात्वमें जाकर देवोंमें उत्पन्न हो और सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो उत्कृष्ट योगको और उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानिका भंग नारकियोंके समान है। शेष प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो गुणितकर्मांशिक जीव सम्यक्त्व, संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणियोंको करके अनन्तर मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ उसके गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयमें आनेपर शेष कर्मोंकी उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव सम्यक्त्वको प्राप्त हो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको गुणसंक्रमके द्वारा पूरकर अनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त करेगा उसके इनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो

उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरो गुणिदकम्मंसिओ दंसणमोहक्खवगो कदकरणिज्जो होदूण देवेसुववण्णो तस्स दुचरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स उक्क० हाणी। सम्मामि० उक्क० हाणी कस्स ? विज्झादपदिदस्स। अणंताणुबंधीणमुक्कस्सवड्ढि-अवट्ठाण मिच्छत्तभंगो। हाणी ओघभंगो। इत्थि०-णवुंस० उक्क० वड्ढी कस्स ? अण्णदरो खविदकम्मंसिओ मिच्छत्तं गदो तदो उक्कस्सजोगमागदो तप्पाओग्ग-संकिलिट्ठो इत्थि-णवुंसयवेदं पबद्धो तस्स उक्क० वड्ढी। हाणी भय-दुगुंछभंगो। एवं चदुणोकसायाणं। पुरिसवेद० एवं चेव। णवरि अवट्ठाणं वेदगसम्माइट्ठिस्स। एवं सोहम्मादिउवरिमगेवज्जा त्ति। भवण०-वाणवें०-जोदिसि० एवं चेव। णवरि सम्मत्त० वड्ढि-हाणी सम्मामिच्छत्तभंगो।

§ ३५०. अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति बारसक०-पुरिसवेद-भय-दुगुंछ० उक्क० वड्ढी कस्स ? खविदकम्मंसिओ उक्कस्ससंकिलिट्ठो उक्कस्सजोगमागदो सम्मत्त-संजम-संजमासंजमगुणसेढीसु पुव्वभवसंबंधिणीसु उदयमागदासु णिग्गलिदासु तदो उक्कस्सजोगमागदस्स तस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स ? तस्सेव संजमासंजम-संजमगुणसेढीसु उदयमागदासु उक्क० हाणी। मिच्छत्त-इत्थि-णवुंस० उक्क० हाणी कस्स ? अण्णद० सम्मत्त-संजम-संजमासंजम-

---

अन्यतर गुणितकर्मांशिक दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाला जीव कृतकृत्य होकर देवोंमें उत्पन्न हुआ उसके द्विचरम समयमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करते समय सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? विध्यातको प्राप्त हुए जीवके होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थानका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। तथा इनकी हानिका भङ्ग ओघके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जिस अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीवने मिथ्यात्वको प्राप्त हो अनन्तर उत्कृष्ट योग और तत्प्रायोग्य संक्लेशके साथ स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका बन्ध किया उसके इनकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। इनकी उत्कृष्ट हानिका भङ्ग भय और जुगुप्साके समान है। इसी प्रकार चार नोकषायोंका भङ्ग जानना चाहिए। पुरुषवेदका भंग इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि इसका अवस्थान वेदकसम्यग्दृष्टिके होता है। इस प्रकार सौधर्मसे लेकर उपरिमग्रैवेयक तक जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वकी वृद्धि और हानिका भंग सम्यग्मिथ्यात्वके समान है।

§ ३५०. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ? जो क्षपितकर्मांशिक उत्कृष्ट संक्लेशवाला जीव उत्कृष्ट योगको प्राप्त हो पूर्व भवसम्बन्धी सम्यक्त्व, संयम और सयमासंयम गुणश्रेणियोंके उदयमें आकर गलित हो जानेपर अनन्तर उत्कृष्ट योगको प्राप्त हुआ उसके उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। तथा उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है। उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? उसीके संयमासंयम और संयम गुणश्रेणियोंके उदयमें आ लेनेपर उत्कृष्ट हानि होती है। मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ? जिस अन्यतर जीवके

गुणसेढीसु णिज्जरिदेण उदयमागदासु तस्स उक्क० हाणी। सम्मामिच्छ० एवं चेव। सम्मत्त-अणंताणु०४ हाणी ओघं। हस्स-रइ-अरइ-सोग० उक्क० वड्ढी कस्स? अण्णद० संजमगुणसेढिसीसयाणि जाधे उदएण णिज्जिण्णाणि ताधे उक्कस्सजोग-मागदस्स संकिलेसं च तप्पाओग्गं पडिवण्णस्स तस्स उक्क० वड्ढी। हाणी कस्स? अण्णद० सम्मत्त-संजम-संजमासंजमगुणसेढीसु अविणट्ठासु देवेसुववण्णल्लयस्स जाधे गुणसेढिसीसयाणि उदयमागदाणि ताधे उक्क० हाणी। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ २५१ जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सोलसक०-पुरिसवेद भय-दुगुंछ० जह० वड्ढी कस्स? अण्णद० असंखेज्ज०भागेण वड्ढिदूण वड्ढी हाइदूण हाणी अण्णदरत्थ अवट्ठाणं। सम्मत्त-सम्मामि०-इत्थि-णवुंस० हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागेण वड्ढिदूण वड्ढी हाइदूण हाणी। एवं सव्व-णेरइय०-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस्सदेव जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। णवरि अपज्जत्तएसु सम्म०-सम्मामि० वड्ढी णत्थि। पुरिसव० सम्माइट्ठिम्मि अवट्ठिदं णादव्वं। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति बारसक०-पुरिसवेद०-भय-दुगुंछ० जहण्णवड्ढि-हाणी कस्स? अण्णद० असंखेज्ज०भागेण वड्ढिदूण वड्ढी हाइदूण हाणी।

सम्यक्त्व, संयम और संयमासंयम गुणश्रेणियोंके स्तिबुकसंक्रमणके द्वारा उदयमें आ गई हैं उसके उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट हानि होती है। सम्यग्मिथ्यात्वका भंग इसी प्रकार है। सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी उत्कृष्ट हानिका भंग ओघके समान है। हास्य, रति, अरति और शोककी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर जीव संयमगुणश्रेणिशीर्षोंको जब उदयके द्वारा गला देता है तब उत्कृष्ट योग और तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुए उस जीवके उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है। इनकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है? जो अन्यतर जीव सम्यक्त्व, संयम और संयमासंयम गुणश्रेणियोंके नाश किये बिना देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके जब गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त हुए तब उसके उक्त कर्मोंकी उत्कृष्ट हानि होती है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

§ २५१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य वृद्धि किसके होती है? अन्यतर जीवके असंख्यातवें भाग वृद्धि करनेसे वृद्धि होती है, इतनी ही हानि करनेसे हानि होती है और इनमेंसे किसी एक स्थानमें अवस्थान होता है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातवें भागप्रमाण वृद्धि होकर वृद्धि और हानि होकर हानि होती है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सामान्य देवोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी वृद्धि नहीं है। पुरुषवेदका अवस्थितपद सम्यग्दृष्टि जीवमें जानना चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य वृद्धि और हानि किसके होती है? अन्यतरके असंख्यातवें भागप्रमाण वृद्धि होकर वृद्धि

अण्णदरत्थ अवट्ठाणं। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०४-इत्थि-णवुंस० ज० हाणी कस्स ? अण्णद०। हस्स-रइ-अरइ-सोग० जहण्णवड्ढि-हाणी कस्स ? अण्णद०। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ३५२. अप्पाबहुअं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी। अवट्ठाणं तत्तियं चेव। हाणी असंखे०गुणा। सम्मत्तस्स सव्वत्थोवा उक्क० हाणी। वड्ढी असंखेज्जगुणा। सम्मामि० सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी। हाणी असंखेज्जगुणा। बारसक०-भय-दुगुंछा० सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी। अवट्ठाणं तत्तियं चेव। हाणी असंखे०गुणा। तिण्णिसंजल० सव्वत्थोवा उक्कस्सयमवट्ठाण। वड्ढी असंखे०गुणा हाणी विसेसा०। एवं पुरिस०। लोभसंजल० सव्वत्थोव० उक्कस्सयमवट्ठाणं। हाणी असंखे०गुणा। वड्ढी असंखे०गुणा। इत्थि-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं सव्वत्थो० उक्क० वड्ढी। हाणी असंखे०गुणा।

§ ३५३ आदेसेण मिच्छत्त-सोलसक०-पुरिसवेद-भय-दुगुंछ० सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं। हाणी असंखे०गुणा। सम्म०-सम्मामि० सव्वत्थोव० उक्क० वड्ढी। हाणी असंखे०गुणा। इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं सव्वत्थो० उक्क० वड्ढी । हाणी

और हानि होकर हानि होती है। तथा इनमेंसे किसी एक स्थानमें अवस्थान होता है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी जघन्य हानि किसके होती है? अन्यतरके होती है। हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य वृद्धि और हानि किसके होती है? अन्यतरके होती है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ३५२ अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है। अवस्थान उतना ही है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि असंख्यातगुणी है। सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है। अवस्थान उतना ही है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। तीन सञ्ज्वलनोंका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि असंख्यातगुणी है। उससे उत्कृष्ट हानि विशेष अधिक है। इसी प्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा अल्पबहुत्व है। लोभसञ्ज्वलनका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि असंख्यातगुणी है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है।

§ ३५३ आदेशसे मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व की उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि

१. आ० प्रतौ 'उक्क० हाणी। वड्ढी असंखे०गुणा' इति पाठः।

असंखे०गुणा। एवं सव्वणेरइय०-तिरिक्ख-पंचिं०तिरिक्खतिय-देवा जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० एवं चेव। णवरि पुरिस० इत्थिवेदभंगो। सम्मत्त-सम्मामि० णत्थि अप्पाबहुअं।

§ २५४ मणुसगदी० मणुसाणमोघं। मणुसपज्ज० एवं चेव। एवं मणुसिणीसु। णवरि पुरिस० सव्वत्थोवं उक्क० अवट्ठाणं। हाणी असंखे०गुणा। वड्ढी असंखे०गुणा। मणुसअपज्ज० पंचिंदियतिरि०अपज्जत्तभंगो। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० सव्वत्थोवा उक्क० वड्ढी अवट्ठाणं। हाणी असंखे०गुणा। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु० ४-इत्थि-णवुंस० णत्थि अप्पाबहुअं। हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं सव्वत्थो० उक्क० वड्ढी। हाणी असंखे० गुणा। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ २५५ जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-बारसक०-पुरिसवेद-भय-दुगुंछा० जहण्णवड्ढी हाणी अवट्ठाणं सरिसं। सम्म०-सम्मामि० सव्वत्थो० जह० हाणी। वड्ढी असंखे० गुणा। इत्थिवेद-णवुंस०-चदुणोक० जहण्णवड्ढी हाणी सरिसा। एवं सव्वणेर०-सव्वतिरिक्ख-सव्वमणुस-देवा जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। णवरि पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० पुरिस० इत्थिवेदेण सह भाणिदव्वा। एवं मणुस०अपज्ज०। णवरि एदेसिं पि सम्मत्त-सम्मामि० अप्पाबहुअं

असंख्यातगुणी है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक और सामान्य देवोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें इसी प्रकार भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुषवेदका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है।

§ २५४. मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें ओघके समान भङ्ग है। मनुष्य पर्याप्तकोंमें इसी प्रकार भङ्ग है। इसी प्रकार मनुष्यिनियोंमें है। इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुषवेदका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। उससे उत्कृष्ट वृद्धि असंख्यातगुणी है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भंग है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका अल्पबहुत्व नहीं है। हास्य रति, अरति और शोककी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक है। उससे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २५५. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान समान हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानि सबसे स्तोक है। उससे जघन्य वृद्धि असंख्यातगुणी है। स्त्रीवेद नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी जघन्य वृद्धि और हानि समान है। इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सामान्य देवोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें पुरुषवेदका स्त्रीवेदके साथ कथन करना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

णत्थि। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० जहण्णवड्ढि-हाणी अवट्ठाणं सरिसं। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०४-इत्थि-णवुंस० णत्थि अप्पाबहुअं। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं जहण्णवड्ढी हाणी सरिसा। एवं जाव०।

एवं पदणिक्खेवे त्ति समत्तं०।

§ ३५६. वड्ढिविहत्ति त्ति तत्थ इमाणि तेरस अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति। समुक्कित्तणाणु० दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-अट्ठक०-पुरिस० अत्थि असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठिदाणि असखे०गुण-हाणी च। सम्म० सम्मामि० अत्थि असंखे०भागवड्ढी हाणी असंखे०गुणवड्ढी हाणी अवत्त०विहत्ती। अणंताणु०४ अत्थि असखे०भागवड्ढी हाणी संखे०भागवड्ढी संखे०-गुणवड्ढी असंखे०गुणवड्ढी हाणी अवट्ठि० अवत्त०विह०। चदुसंज० अत्थि असंखे०-भागवड्ढी हाणी संखे०गुणवड्ढी असखे०गुणहाणी अवट्ठि०विह०। णवरि लोभसंजल० असंखेज्जगुणहाणी णत्थि। इत्थि-णवुंस० अत्थि असंखे०भागवड्ढी हाणी असखे०-गुणहाणिविह०। हस्स-रदि-अरदि-सोग० अत्थि असंखे०भागवड्ढी हाणी। भय-दुगुंछ० अत्थि असखे०भागवड्ढी हाणी अवट्ठि०। णवरि पुरिसवेद० सखे०गुणवड्ढि-हाणी संखे०भागवड्ढि-हाणी सम्म०-सम्मामि०-तिण्णिसंजल० संखे०गुणहाणि-संखे०भाग-

---

इतनी विशेता है कि उभयत्र अर्थात् दोनों अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पबहुत्व नहीं है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य हानि और अवस्थान समान हैं। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुसकवेदका अल्पबहुत्व नहीं है। हास्य, रति अरति और शोककी जघन्य वृद्धि और हानि समान है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार पदनिक्षेप अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

§ ३५६. वृद्धिविभक्तिका प्रकरण है। उसमें ये तेरह अनुयोगद्वार होते हैं—समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक। समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, आठ कषाय और पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि, अवस्थित और असंख्यातगुणहानि है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि, असख्यातगुणवृद्धि, असख्यातगुणहानि और अवक्तव्यवृद्धि है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि, सख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असख्यातगुणवृद्धि, असख्यातगुणहानि, अवस्थितविभक्ति और अवक्तव्यविभक्ति है। चार सज्वलनोंकी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि सख्यातगुणवृद्धि, असख्यातगुणहानि और अवस्थितविभक्ति है। इतनी विशेषता है कि लोभसज्वलनकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिविभक्ति है। हास्य, रति, अरति और शोककी असख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि है। भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्ति है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी संख्यातगुणवृद्धि, सख्यातगुणहानि, संख्यातभागवृद्धि और सख्यात-

हाणीओ च संभवंति। एदाओ सव्वाणिओगद्दारेसु जहासंभवमणुमग्गियव्वाओ। एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु। णवरि पज्जत्त० इत्थिवेद० हस्सभंगो। मणुसिणीसु पुरिस०-णवुंस० असंखेज्जगुणहाणी णत्थि।

§ २५७. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-बारसक० पुरिस० भय-दुगुंछा० अत्थि असंखे० भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०। सम्म०-सम्मामि० अत्थि असंखे०भागवड्ढि-हाणि-असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त०। अणंताणु०४ अत्थि असंखे०भागवड्ढि-हाणि-संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०-अवत्त०। इत्थि-णवुंस० हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं अत्थि असंखे० भागवड्ढि-हाणी०। एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख०। मणुसा० ओघं। देवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति णारयभंगो।

§ २५८. पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक० भय-दुगुंछ० अत्थि असंखे० भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि०। सम्म०-सम्मामि० अत्थि असंखे०भागहाणि-असंखे०गुणहाणि०। इत्थि० पुरिस०-णवुंस० हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं अत्थि असंखे० भागवड्ढि-हाणि०। एवं मणुसअपज्ज०। अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४-इत्थि-णवुंस० अत्थि असंखे०भागहाणि०। णवरि अणंताणु०४

भागहानि तथा सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व और तीन संज्वलनोंकी संख्यातगुणहानि और संख्यातभागहानि भी सम्भव हैं। इनका सब अनुयोगद्वारोंमें यथासम्भव अनुमार्गण करना चाहिए। इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदका भङ्ग हास्यके समान है। तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है।

§ २५७. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्ति है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्ति है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणहानि अवस्थित और अवक्तव्यविभक्ति है। स्त्रीवेद नपुंसकवेद हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि है। इसीप्रकार सब नारकी और सब तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। मनुष्योंमें ओघके समान भङ्ग है। सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है।

§ २५८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्ति है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानि है। स्त्रीवेद पुरुषवेद, नपुंसकवेद हास्य रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि है। इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानि है। इतनी

अत्थि असंखे०गुणहाणिवि० । बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० अत्थि असंखे०भागवड्ढि-हाणि०-अवट्ठि० । हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं अत्थि असंखे०भागवड्ढि-हाणि० । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ३५९. सामित्ताणु० दु० णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० असंखे०भागवड्ढि० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स । असंखे०भागहाणी कस्स ? सम्माइट्ठिस्स वा मिच्छाइट्ठिस्स वा । असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्णद० दंसणमोहक्खवगस्स चरिमट्ठिदिखंडए अवगदे । अवट्ठिद कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स । सम्मत्त०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी असंखे०गुणवड्ढी अवत्त० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स । असंखे०भागहाणी कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स वा मिच्छाइट्ठिस्स वा । असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्णद० दंसणमोहक्खवगस्स चरिमे ट्ठिदिखंडगे सम्मत्ते पक्खित्ते सम्मामि० असंखे०गुणहाणी उव्वेल्लणाए वा । सम्मत्तस्स असंखे०-गुणहाणी कस्स ? अण्णद० उव्वेल्लणचरिमट्ठिदिखंडगे मिच्छत्ते संपक्खित्ते ताधे । अणंताणु० असंखे०भागवड्ढी अवट्ठिदं कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स । [असंखे०-भागहाणी कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा ।] संखे०भागवड्ढी संखे०-

---

विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि भी है । बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्ति है । हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि है । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई ।

§ ३५९. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है । असंख्यातभागहानि किसके होती है ? सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है । असंख्यातगुणहानि किसके होती है ? अन्यतर दर्शनमोहनीयके क्षपकके अन्तिम स्थितिकाण्डकके अपगत होने पर होती है । अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अवक्तव्यविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती है । असंख्यातभागहानि किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है । असंख्यातगुणहानि किसके होती है ? जिस दर्शनमोहनीयके क्षपक अन्यतर जीवने चरम स्थितिकाण्डकको सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त किया है उसके सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानि होती है । अथवा उद्वेलनाके समय होती है । सम्यक्त्वकी असंख्यातगुणहानि किसके होती है ? जिस अन्यतर जीवने उद्वेलनाके समय अन्तिम स्थितिकाण्डकको मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त किया है । उसके इस समय सम्यक्त्वकी असंख्यातगुणहानि होती है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यात-भागवृद्धि और अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है । असंख्यात-भागहानि किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है । संख्यातभागवृद्धि,

गुणवड्ढी असंखे०गुणवड्ढी च कस्स ? अण्णद० अणंताणु० विसंजोएदूण मिच्छत्तं गदस्स आवलियमिच्छाइट्ठिस्स। अवत्त० कस्स ? अण्णद० पढमसमयसंजुत्तस्स। असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्णद० अणंताणु० विसंजोमयस्स परिमट्ठिदिखंडए अवणिदे। अट्ठकसाय असंखे०भागवड्ढी अवट्ठि० असंखे०भागहाणी कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स वा मिच्छाइट्ठिस्स वा। असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्णद० खवगस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए गुणसेढिसीसगेण सह आगाधिदूण णिल्लेविदे। कोहसंजल० असंखे०भागवड्ढि-हाणी अवट्ठिदं अट्ठकसायभंगो। संखेज्जगुणवड्ढी कस्स ? अण्णद० पुरिसवेदो कोधे संपक्खित्तो ताधे कोधस्स संखे०गुणवड्ढी। माणस्स असंखे०भागवड्ढी हाणी अवट्ठि० कोहभंगो। संखे गुणवड्ढी कस्स ? अण्णद० कोधस्स पुव्वसंतकम्मे माणे संपक्खित्ते ताधे तस्स संखे गुणवड्ढी। मायाए असंखे०भागवड्ढी हाणी अवट्ठिदं माणभंगो। संखे गुणवड्ढी कस्स ? अण्णद० माणसंजलणं जाधे मायाए संपक्खित्तं ताधे। लोभसंजलण० असंखे भागवड्ढी हाणी अवट्ठि० मायासंजलणभंगो। संखे० गुणवड्ढी कस्स ? अण्णद खवगस्स मायाए पोराणसंतकम्मं जाधे लोभे संपक्खित्तं ताधे। तिण्हं संजलणाणं असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्णद० खवगस्स चरिम-

---

संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धि किसके होती है ? जिस अन्यतर जीवके अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी विसंयोजना करके मिथ्यात्वमें जाकर मिथ्यादृष्टि हुए एक आवलि हुआ है उसके होती है। अवक्तव्यविभक्ति किसके होती है ? प्रथम समयमें संयुक्त हुए अन्यतर जीवके होती है। असंख्यातगुणहानि किसके होती है ? अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेवाले अन्यतर जीवके अन्तिम स्थितिकाण्डकके अपगत होने पर होती है। आठ कषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि अवस्थितविभक्ति और असंख्यातभागहानि किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। असंख्यातगुणहानि किसके होती है ? जिस अन्यतर क्षपक जीवने अन्तिम स्थिति-काण्डकमें गुणश्रेणिशीर्षके साथ मर्दनकर निर्लेपन किया है उसके होती है। क्रोधसंज्वलनकी असंख्यातभागवृद्धि असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग आठ कषायोंके समान है। संख्यातगुणवृद्धि किसके होती है ? जिस अन्यतर जीवने जब पुरुषवेदको क्रोधमें प्रक्षिप्त किया है तब उसके क्रोधसंज्वलनकी संख्यातगुणवृद्धि होती है। मानसंज्वलनकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग क्रोधसंज्वलनके समान है। संख्यातगुणवृद्धि किसके होती है ? जिस अन्यतर जीवने क्रोधसंज्वलनके पूर्वके सत्कर्मको मानसंज्वलनमें प्रक्षिप्त किया है तब उसके उसकी संख्यातगुणवृद्धि होती है। मायासंज्वलनकी असंख्यातवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग मानसंज्वलनके समान है। इसकी संख्यात-गुणवृद्धि किसके होती है ? जिस अन्यतर जीवने मानसंज्वलनको जब मायासंज्वलनमें प्रक्षिप्त किया तब उसके मायासंज्वलनकी संख्यातगुणवृद्धि होती है। लोभसंज्वलनकी असंख्यात-भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग मायासंज्वलनके समान है। इसकी संख्यातगुणवृद्धि किसके होती है ? जो अन्यतर क्षपक जीव मायासंज्वलनके प्राचीन सत्कर्मको जब लोभसंज्वलनमें प्रक्षिप्त करता है तब इसकी संख्यातगुणवृद्धि होती है। तीनों संज्वलनोंकी असंख्यातगुणहानि किसके होती है ? जो अन्यतर क्षपक चरम स्थितिकाण्डकका

ट्ठिदिखंडयं संकामेंतस्स । लोभसजलणाए असंखे०गुणहाणी णत्थि। इत्थिवेद० असंखे०भागवड्ढी कस्स ? अण्णद० मिच्छादिट्ठिस्स। असखे०भागहाणी कस्स ? अण्णद० सम्मादिट्ठिस्स वा मिच्छादिट्ठिस्स वा । असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्णद० खवगस्स चरिमट्ठिदिखंडयं संकामेंतस्स । एवं णवुंस० । पुरिसवे० असंखे०भागवड्ढि-हाणी अवट्ठिदं संजलणभंगो । णवरि अवट्ठि० सम्माइट्ठिस्स । असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्णद० खवगस्स पुव्वसतकम्म कोधे संछुभमाणगस्स। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणी कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा। भय-दुगुछा० असखे०भागवड्ढि-हाणी अवट्ठिदं कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स मिच्छाइट्ठिस्स वा ।

§ ३६०. आदेसेण मिच्छ० असखे०भागवड्ढी अवट्ठिदं कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स । असंखे०भागहाणी कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स वा मिच्छाइट्ठिस्स वा । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी कस्स ? अण्णदर० सम्माइट्ठिस्स। असंखे०-भागहाणी कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स वा मिच्छाइट्ठिस्स वा । असंखे०गुणवड्ढी कस्स ? अण्णद० उवसमसम्माइट्ठिस्स गुणसंकमेण अंतोमुहुत्तं पूरेमाणस्स जाव से काले विज्झादं पडिहदि त्ति । असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्णद० उव्वेल्लमाणगस्स

सक्रमण कर रहा है उसके होती है। लोभसज्वलनकी असख्यातगुणहानि नहीं होती। स्त्रीवेदकी असंख्यातभागवृद्धि किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। असख्यातभागहानि किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। असख्यातगुणहानि किसके होती है ? जो अन्यतर क्षपक चरम स्थितिकाण्डकका सक्रमण कर रहा है उसके होती है। इसी प्रकार नपुसकवेदकी अपेक्षासे स्वामित्व जानना चाहिए। पुरुषवेदकी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग सज्वलनके समान है। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्ति सम्यग्दृष्टिके होती है। असख्यातगुणहानि किसके होती है ? जो अन्यतर क्षपक पहलेके सत्कर्मको क्रोधमे प्रक्षिप्त कर रहा है उसके होती है। हास्य, रति, अरति और शोककी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानि किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। भय और जुगुप्साकी असख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है।

§ ३६०. आदेशसे मिथ्यात्वकी असख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्ति किसके होती है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। असख्यातभागहानि किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती है। असंख्यातभागहानि किसके होती है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। असख्यातगुणवृद्धि किसके होती है ? जो अन्यतर उपशमसम्यग्दृष्टि जीव गुणसंक्रमके द्वारा अन्तर्मुहूर्त तक पूरकर जब अनन्तर समयमें विध्यात-संक्रमको प्राप्त करेगा तब उसके असख्यातगुणवृद्धि होती है। असंख्यातगुणहानि किसके

परियट्टिदविदियसमए वट्टमाणस्स। मिच्छत्तस्स अवत्तव्वं कस्स? अण्णद० पढमसमयसम्माइट्ठिस्स। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढी अवट्ठि० कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स। असंखे०भागहाणी कस्स? अण्ण० सम्माइट्ठिस्स वा मिच्छाइट्ठिस्स वा। संखे०भागवड्ढी संखे०गुणवड्ढी असंखे०गुणवड्ढी कस्स? अण्णद० अणंताणु० विसंजोएदूण संजुत्तस्स आवलियमिच्छाइट्ठिस्स। असंखे०गुणहाणी कस्स? अण्णद० अणंताणु० विसंजोएंतस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए णिल्लेविदे। अवत्त० कस्स? अण्णद० पढमसमयसंजुत्तस्स। बारसक०-भय-दुगुंछा० [असंखे०] भागवड्ढी हाणी अवट्ठि० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स वा मिच्छाइट्ठिस्स वा। इत्थि-णवुंस० असंखे०भागवड्ढी कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठिस्स। असंखे०भागहाणी कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठिस्स वा। पुरिस० असंखे०भागवड्ढी हाणी कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठिस्स वा। अवट्ठिदं कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढी हाणी कस्स? अण्णद० सम्मा० मिच्छाइट्ठिस्स वा। एवं सव्वपुढवीसु तिरिक्खगदितिरिक्खा पंचिंदियतिरिक्ख३ देवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति।

§ २६१ पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०-

होती है? जो अन्यतर उद्वेलना करनेवाला जीव चरम स्थितिकाण्डकको बिना चुका है उसके होती है। अवक्तव्यविभक्ति किसके होती है? अन्यतर प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्ति किसके होती है? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। असंख्यातभागहानि किसके होती है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धि किसके होती है? जो अन्यतर जीव अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके अनन्तर संयुक्त होकर एक आवलि कालतक मिथ्यादृष्टि रहा है उसके होती है। असंख्यातगुणहानि किसके होती है? अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाले जिस अन्यतर जीवने अन्तिम स्थितिकाण्डकका निर्लेपन किया है उसके होती है। अवक्तव्यविभक्ति किसके होती है? अन्यतर जीवके संयुक्त होनेके प्रथम समयमें होती है। बारह कषाय भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्ति किसके होती है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धि किसके होती है? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होती है। असंख्यातभागहानि किसके होती है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि किसके होती है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। अवस्थितविभक्ति किसके होती है? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होती है। हास्य रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि किसके होती है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होती है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें तथा तिर्यंचगतिमें तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ २६१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी

भागवड्डी हाणी अवट्टि० सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणी असंखे०गुणहाणी सत्तणोक० असंखे०भागवड्डि-हाणी कस्स ? अण्णद० । णवरि सम्मत्त-सम्मामि० असखे०गुणहाणी क० ? अण्णद० अपच्छिमट्टिदिखंडयं गालेमाणस्स ।

§ ३६२. मणुसा० ओघं । एवं मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु । णवरि मणुसपज्ज० इत्थिवेद० छण्णोकसायभंगो । मणुसिणीसु पुरिस-णवुंस० छण्णोकसायभंगो । अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति दंसणतिय-अणंताणु०चउक्क०-इत्थि०-णवुंस० असंखे०-भागहाणी कस्स ? अण्णद० । अणंताणु०४ असंखे०गुणहाणी कस्स ? अण्णद० अणंताणु०-विसंजोए'तस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए गुणसेढिसीसगेण सह आगाइदूण णिल्लेविदे । वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्डी हाणी अवट्ठिदं हस्स-रइ-अरइ--सोगाणं असंखे०भागवड्डी हाणी कस्स ? अण्णदरस्स । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ३६३. कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्तस्स असंखे०भागवड्डी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । हाणी० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि । असंखे०गुणहाणी०

असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्ति, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व-की असंख्यातभागहानि और असख्यातगुणहानि तथा सात नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि किसके होती है। अन्यतरके होती है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असख्यातगुणहानि किसके होती है ? अन्तिम स्थितिकाण्डकको गलाने-वाले अन्यतरके होती है।

§ ३६२. मनुष्योंमें ओघके समान भङ्ग है। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यपर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान है। मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुसकवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें तीन दर्शनमोहनीय, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसक-वेदकी असख्यातभागहानि किसके होती है ? अन्यतरके होती है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानि किसके होती है ? अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करनेवाला जो अन्यतर जीव अन्तिम स्थितिकाण्डकको गुणश्रेणिशीर्षके साथ ग्रहण कर निर्लेपन करता है उसके होती है। वारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थित-विभक्ति तथा हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि किसके होती है ? अन्यतरके होती है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ।

§ ३६३ कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी असख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है। असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल

सादिरेयाणि । असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस० । णवुंस० असंखे०भागवड्डी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० बेछावट्ठि-सागरो० तीहि पलिदो० सादिरेयाणि । असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस० । पुरिस० असंखे०भागवड्डी० हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । असंखे०-गुणहाणी० जह० उक्क० एगस० । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया । हस्स-रइ-अरइ-सोगाण असंखे०भागवड्डी० हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । भय-दुगुछा० असंखे०भागवड्डी० हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया ।

§ ३६४. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० असंखे०भागवड्डी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया । बारसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्डी० हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्डी० जह० उक्क० अंतोमु० । हाणी० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । असंखे०गुणवड्डी०

छ्यासठ सागर है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । नपुसकवेदकी असख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पल्य अधिक दो छ्यासठ सागर है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । पुरुषवेदकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है । हास्य, रति, अरति और शोककी असख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय हे और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असख्तातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय हे और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है ।

§ ३६४. आदेशसे नारकियोमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है । असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है । बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी असख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । असख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त

जह० उक्क० एगस०। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। सम्मत्त०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० जह० उक्क० अंतोमु०। असंखे०भागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० बेछावट्ठिसाग० पलिदो० असंखे०भागेण सादिरेयाणि। असंखे०गुणवड्ढी० जह० उक्क० अंतोमु०। असंखे०गुणहाणी० अवत्त० जह० उक्क० एगस०। अणंताणु० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। हाणी जह० एगस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। संखे०भागवड्ढी० संखे०गुणवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। असंखे०गुणवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। अवत्त० असंखे० गुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस०। अट्ठकसाय० असंखे०भागवड्ढी० हाणी जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। असंखे० गुणहाणी० जह० उक्क० एगस०। कोह-माण-मायासंजल० असंखे०भागवड्ढी० हाणी० अवट्ठि० अपच्चक्खाणभंगो। संखे० गुणवड्ढी० असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस०। एवं लोभसंजल०। णवरि असंखे०गुणहाणी णत्थि। इत्थि० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो०

साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक दो छयासठ सागर है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। अवक्तव्यविभक्ति और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। आठ कषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। क्रोध मान और मायासंज्वलनकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग अप्रत्याख्यान कषायके समान है। संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसीप्रकार लोभसंज्वलनकी अपेक्षासे काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। स्त्रीवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक दो

सादिरेयाणि। असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस०। णवुंस० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठि-सागरो० तीहि पलिदो० सादिरेयाणि। असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस०। पुरिस० असंखे०भागवड्ढी० हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। असंखे०-गुणहाणी० जह० उक्क० एगस०। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढी० हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढी० हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया।

§ ३६४. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। बारसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढी० हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० जह० उक्क० अंतोमु०। हाणी० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। असंखे०गुणवड्ढी०

छयासठ सागर है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। नपुसक-वेदकी असख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागर है। असख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। पुरुषवेदकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। हास्य, रति, अरति और शोककी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। भय और जुगुप्साकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भाग-प्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है।

§ ३६४ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है। असख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवे भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। असख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त

जह० उक्क० एगस० । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया । सम्मत्त०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० जह० उक्क० अंतोमु०। असंखे०भागहाणी० जह० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसाग० पलिदो० असंखे०भागेण सादिरेयाणि । असंखे०गुणवड्ढी० जह० उक्क० अंतोमु० । असंखे०गुणहाणी० अवत्त० जह० उक्क० एगस० । अणंताणु० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । हाणी० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। संखे०भागवड्ढी० संखे०गुणवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । असंखे०गुणवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया । अवत्त० असंखे०गुणहाणी० जहण्णुक्क० एगस० । अट्ठकसाय० असंखे०भागवड्ढी० हाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया । असंखे०-गुणहाणी० जह० उक्क० एगस० । कोह-माण-मायासंजल० असंखे०भागवड्ढी० हाणी० अवट्ठि० अपच्चक्खाणभंगो। संखे०गुणवड्ढी० असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस०। एवं लोभसंजल० । णवरि असंखे०गुणहाणी णत्थि । इत्थि० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो०

साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग अधिक दो छयासठ सागर है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। अवक्तव्यविभक्ति और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। आठ कषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। क्रोध, मान और मायासंज्वलनकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग अप्रत्याख्यान कषायके समान है। संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसीप्रकार लोभसंज्वलनकी अपेक्षासे काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। स्त्रीवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक दो

सादिरेयाणि । असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस० । णवुंस० असंखे०भागवड्डी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० बेछावट्ठि सागरो० तीहि पलिदो० सादिरेयाणि । असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस० । पुरिस० असंखे०भागवड्डी० हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। असंखे० गुणहाणी० जह० उक्क० एगस० । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क सत्तट्ठ समया । हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्डी० हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्डी० हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया ।

§ २६४ आदेसेण णेरइय० मिच्छ० असंखे०भागवड्डी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया । बारसक० भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्डी० हा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्डी० जह० उक्क० अंतोमु० । हाणी ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । असंखे०गुणवड्डी०

छयासठ सागर है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागर है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। हास्य रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है।

§ २६४ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त

जह० उक्क० अंतोमु० । असंखे०गुणहाणी० अवत्त० जह० उक्क० एगस० । अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढी० अवट्ठि० मिच्छत्तभंगो । हाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीस सा० देसू० । संखे०भागवड्ढी० संखे०गुणवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०-भागो । असंखे०गुणवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखे०गुणहाणी० अवत्त० ज० उक्क० एगस० । इत्थि०-णवुंस० असंखे०भागवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । हाणी० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । पुरिस० असंखे०भागवड्ढी० हाणी० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० जह० एगसमओ, उक्क० सत्तट्ठ समया । चदुणोक० ओघं । एवं सत्तसु पुढवीसु । णवरि जम्हि तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि तम्हि सगट्ठिदी देसूणा । सत्तमपुढविवज्जासु मिच्छ०-अणंताणु० सगट्ठिदी ।

§ ३६५. तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु मिच्छ० असंखे०भागवड्ढी० अवट्ठि० ओघं । असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढी० हाणी० अवट्ठि० ओघं । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० जह० उक्क० अंतोमु० । असंखे०भागहा० ज० एगस०,

है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितिविभक्तिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात-भागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। चार नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर कुछ कम तेतीस सागर कहा है वहाँ पर कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। तथा सातवीं पृथिवीको छोड़कर शेषमे मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

§ ३६५. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थित-विभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक

उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। असंखे०गुणवड्ढी० जह० उक्क० अंतोमु०। असंखे०गुणहा० अवत्त० ज० उक्क० एगस०। अणंताणु० असंखे०भागवड्ढी० अवट्ठि० ओघं। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तिण्णिपलिदो० सादिरेयाणि। संखेज्जभागवड्ढी० संखे०गुणवड्ढी० ज० एगसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। असंखे०गुणवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० आवलिया समयूणा। असंखे०गुणहा० अवत्त० ज० उक्क० एगस०। इत्थि० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि। एवं णवुंस०। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढी० हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं पंचिंदियतिरिक्ख०३। णवरि जोणिणीसु इत्थि-णवुंस० असंखेभागहा० तिण्णि पलिदो० दसूणाणि।

§ २६६ पंचिं०तिरिक्खअपज्ज० मिच्छत्त०-सोलसक० भय दुगुंछा० असंखे० भागवड्ढि हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहा० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० पुधत्त। असंखे०गुणहा० जह० उक्क० एगस०। सत्तणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०।

तीन पल्य है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक समय कम आवलिप्रमाण है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। स्त्रीवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पल्य है। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षासे काल जानना चाहिए। हास्य, रति अरति और शोककी असंख्यात-भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनियोंमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है।

§ २६६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त पृथक्त्वप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सात नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल

उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। संखे०भागवड्ढि०-संखे०गुणवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। असंखे०गुणवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०गुणहाणि-अवत्त० ज० उक्क० एगस०। अवट्ठि० ओघं। बारसक०-पुरिसवेद०भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। इत्थि०-णवुंस० असंखे०-भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं भवणवासियादि जाव उवरिमगेवज्जा ति। णवरि जत्थ तेत्तीसं सागरो० तत्थ सगट्ठिदी भाणियव्वा।

§ ३६६. अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छत्त० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदीओ। अणंताणु०४ असंखे०भागहाणी० जह० आवलिया दुसमयूणा, उक्क० सगट्ठिदीओ। असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस०। सम्म० असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदीओ। सम्मामि० असंखे०भागहाणी० जह० जहण्णट्ठिदी, उक्क० उक्कस्सट्ठिदीओ। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० असंखे०-

और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार भवनवासी देवोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहां पर तेतीस सागर कहा है वहां पर अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

§ ३६६. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल दो समय कम एक आवलि है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यात-

भागवड्ढि० हाणी० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ओघं। इत्थि-णवुंस० असंखे०भागहाणी० जह० जहण्णट्ठिदी, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढी० हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ३७०. अंतराणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्त० असंखे०भागवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। असंखे०गुणहाणी० णत्थि अंतरं। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखे० लोगा। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। दोण्हं असंखे०गुणवड्ढी० सम्मामि० असंखे०गुणहाणी जह० अंतोमुहुत्तं। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगसमओ, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि

भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। हास्य रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार काल समाप्त हुआ।

§ ३७०. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका अन्तरकाल नहीं है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। दोनोंकी असंख्यातगुणवृद्धिका और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट

§ ३६७. मणुसगदि० मणुस० मिच्छ० असंखे०भागवड्डि-अवट्ठि० ओघं । असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । असंखे०-गुणहाणी० ज० उक्क० एगस० । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्डी० जह० उक्क० अंतोमुहुत्तं । असंखे०भागहा० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडि-पुधत्तेण०भहियाणि । असंखे०गुणवड्डी० जह० उक्क० अंतोमु० । असंखे०गुणहाणी० अवत्त० जह० उक्क० एगस० । अणंताणु०४ असंखे०भागवड्डी० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । हाणी० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । संखे०भागवड्डि-संखे०गुणवड्डी० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । असंखे०-गुणवड्डी० जह० एगस०, उक्क० आवलिया समयूणा । असंखे०गुणहाणि-अवत्त० जह० उक्क० एगस० । अट्ठक०-पुरिसवेद० असंखे०भागवड्डि हाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस० । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया । तिण्णिसंज० असंखे०भागवड्डि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । संखे०गुणवड्डि-असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगसमओ । अवट्ठि० ओघं । एवं लोहसंज० । णवरि असंखे०गुणहाणी

एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३६७. मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थित-विभक्तिका भङ्ग ओघके समान है । असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है । असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यात-गुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है । संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल एक समय कम एक आवलि है । असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । आठ कषाय और पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है । असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है । तीन सञ्ज्वलनोंकी असंख्यात-भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार लोभसंज्वलनकी अपेक्षासे काल

णत्थि। इत्थि० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे० भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस०। एवं णवुंस०। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। मणुसपज्ज० एवं चेव। णवरि इत्थिवेद० असंखे०गुणहाणी णत्थि। मणुसिणीसु एवं चेव। णवरि पुरिस०-णवुंस० असंखे०गुणहाणी णत्थि। इत्थि-णवुंस० असंखे०भागहाणी० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। मणुसअपज्ज० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

§ २६८ देवगदीए देवेसु मिच्छत्त० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। अवट्ठि० ओघं। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० जह० उक्क० अंतोमु०। असंखे०भागहा० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो०। असंखे० गुणवड्ढी० जह० उक्क० अंतोमु०। असंखे०गुणहाणि-अवत्त० ज० उक्क० एगस०। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढि-अवट्ठि० ओघं। असंखे०भागहाणी० ज० एगस०,

---

जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि नहीं है। स्त्रीवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षासे काल जानना चाहिए। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। मनुष्यपर्याप्तकोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। मनुष्यिनियोंमें इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। तथा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

§ २६८ देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है

उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। संखे०भागवड्ढि०-संखे०गुणवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। असंखे०गुणवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०गुणहाणि-अवत्त० ज० उक्क० एगस०। अवट्ठि० ओघं। बारसक०-पुरिसवेद० भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० सत्तट्ठ समया। इत्थि०-णवुंस० असंखे०-भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं भवणवासियादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। णवरि जत्थ तेत्तीसं सागरो० तत्थ सगट्ठिदी भाणियव्वा।

§ ३६९. अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छत्त० असंखेज्जभागहाणी० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदीओ। अणंताणु०४ असंखे०भागहाणी० जह० आवलिया दुसमयूणा, उक्क० सगट्ठिदीओ। असंखे०गुणहाणी० जह० उक्क० एगस०। सम्म० असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० सगट्ठिदीओ। सम्मामि० असंखे०भागहाणी० जह० जहण्णट्ठिदी, उक्क० उक्कस्सट्ठिदीओ। बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० असंखे०-

और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। संख्यातभागवृद्धि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल सात आठ समय है। स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार भवनवासी देवोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहा पर तेतीस सागर कहा है वहा पर अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

§ ३६९. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल दो समय कम एक आवलि है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। सम्यक्त्व की असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यात-

भागवड्ढि० हाणी० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ओघ। इत्थि-णवुंस० असंखे०भागहाणी० जह० जहण्णट्ठिदी, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी। हस्स-रइ अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढी० हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ २७०. अंतराणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्त० असंखे०भागवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। असंखे०गुणहाणी० णत्थि अंतरं। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखे० लोगा। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। असंखे०गुणवड्ढि हाणि-अवत्त० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। दोण्हं असंखे०गुणवड्ढी० सम्मामि० असंखे०गुणहाणी० जह० अंतोमुहुत्तं। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगसमओ, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-

---

भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका भङ्ग ओघके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। हास्य रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार काल समाप्त हुआ।

§ २७०. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका अन्तरकाल नहीं है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। दोनोंकी असंख्यातगुणवृद्धिका और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट

असंखे०गुणवड्डि--हाणि--अवत्त० जह० अंतोमु० उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । अट्ठकसा० असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०-भागो । असंखे०गुणहाणी० णत्थि अंतरं । अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । एवं चदुसंजलणाणं । णवरि असंखे०गुणहाणि-संखे०गुणवड्डी० णत्थि अंतरं । लोहसंज० असंखे०गुणहाणी णत्थि । इत्थि० असंखे०भागवड्डी० ज० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि । असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखे०गुणहाणी० णत्थि अंतरं । पुरिस० असंखे०भागवड्डि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । असंखे०गुणहाणी० णत्थि अंतरं । णवुंस० असंखे०भागवड्डी० ज० एगस०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि तीहि पलिदो० देसूणाणि । असंखे०भागहा० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । असंखे०गुणहाणी० णत्थि अंतरं । हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्डि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० । भय-दुगुंछा० असंखे०-भागवड्डि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा ।

अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है । संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । आठ कषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानि-का जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । असंख्यात-गुणहानिका अन्तरकाल नहीं है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है । इसी प्रकार चार संज्वलनोंकी अपेक्षासे अन्तरकाल जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणहानि और संख्यातगुणवृद्धिका अन्तरकाल नहीं है । लोभसंज्वलनकी असंख्यातगुणहानि नहीं है । स्त्रीवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छ्यासठ सागरप्रमाण है । असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यातगुणहानिका अन्तर-काल नहीं है । पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । असंख्यातगुणहानिका अन्तरकाल नहीं है । नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य अधिक दो छ्यासठ सागरप्रमाण है । असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । असंख्यातगुणहानिका अन्तरकाल नहीं है । हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है ।

§ २७१ आदेसेण णेरइय० मिच्छ० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवमवट्ठि०। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० ज० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढी० अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। संखे०भागवड्ढी० संखे० गुणवड्ढी० असंखे०गुणवड्ढी० हाणी० अवत्त० ज० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। बारसक० पुरिस० भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढी० हा० ज० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। इत्थि०-णवुंस० असंखे०भागवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढी० हाणी० जह० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। एवं सत्तसु पुढवीसु। णवरि जम्हि तेत्तीसं सागरोवमाणि तम्हि सगट्ठिदी देसूणा।

§ २७२ तिरिक्खगईए तिरिक्खा० मिच्छ० असंखे०भागवड्ढी० जह० एगस०,

---

§ २७१ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार अवस्थितविभक्तिका अन्तर काल है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। हास्य रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर कुछ कम तेतीस सागर कहा गया है वहाँ पर कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

§ २७२. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक

उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। असंखे०भागहा० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० जह० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। असंखे०भागहा० ज० एगस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टा। असंखे०गुणवड्ढी० हा० अवत्त० ज० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढी० हा० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। हाणीए देसूणा। संखेज्जभागवड्ढी० संखे०गुणवड्ढी० असंखे०गुणवड्ढी० हाणी० अवत्त० ज० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गल०। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। बारसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढी० हाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेजा लोगा। एवं पुरिस०। णवरि अवट्ठि० ओघं। इत्थि० असंखे०भागवड्ढि० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। णवुंस० असंखे०-भागवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा। असंखे०भागहा० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढी० हाणी० ज० एगस०,

समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यमिथ्यात्व की असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात-भागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। मात्र असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। इसी प्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षासे अन्तरकाल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्तिका अन्तरकाल ओघके समान है। स्त्रीवेदकी असंख्यात-भागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। असंख्यात-भागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक

उक्क० अंतोमु० ।

§ ३७३ पंचिंदियतिरिक्खतिय३ मिच्छ० असंखे०भागवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० तिण्णिपलिदो० सादिरेयाणि । असंखे०भागहाणी० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० असंखे०गुणवड्ढी० हाणी० अवत्त० ज० पलिदो० असंखे०भागो, उक्क० तिण्णिपलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । एवमसंखे०भागहाणी० । णवरि ज० एगस० । अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढी० हा० ज० एगस०, उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । हाणी० देसूणा । अवट्ठि० मिच्छत्तभंगो । संखे०भागवड्ढी० संखे०गुणवड्ढी० असंखे०गुणवड्ढी० हा० अवत्त० ज० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि । बारसक० पुरिस०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढी० हाणी० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा । इत्थि० असंखे०भागवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसूणाणि । असंखे०भागहाणी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । णवुंस० असंखे०भागवड्ढी० ज० एगस०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । असंखे०

समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३७३. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। इसी प्रकार असंख्यातभागहानिका अन्तर काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका जघन्य अन्तर एक समय है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तीन पल्य है। मात्र असंख्यातभागहानिका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। अवस्थितविभक्तिका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी स्थितिप्रमाण है। स्त्रीवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटि है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय

भागहा० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० । हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढी० हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ३७४. पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०-भागवड्ढी० हाणी० अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं । सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहा० जह० उक्क० एगस० । असंखे०गुणहाणी० णत्थि अंतर । सत्तणोक० असंखेज्जभागवड्ढी० हा० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु० ।

§ ३७५. मणुसगदि० मणुस० पंचिं०तिरिक्खभंगो । णवरि मिच्छ०-एक्कारस०-इत्थि०-पुरिस०-णवुंस० असंखे०गुणहाणी० चदुसंजल० असंखे०गुणवड्ढी० णत्थि अंतर । सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०गुणवड्ढी० सम्मामि० असंखे०गुणहा० जह० अंतोमु० । मणुसपज्ज० एवं चेव । णवरि इत्थि० असंखे०गुणहाणी णत्थि । मणुसिणीसु एवं चेव । णवरि पुरिस०-णवुंस० असंखे०गुणहाणी णत्थि । मणुसअपज्ज० पंचिं०तिरिक्ख०अपज्जत्तभंगो ।

§ ३७६. देवगदि० देवा० मिच्छ० असंखे०भागवड्ढी० अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि । असंखे०भागहाणी० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढी० असंखे०गुणवड्ढी०

है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३७४ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । असंख्यातगुणहानिका अन्तरकाल नहीं है । सात नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३७५. मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्व, ग्यारह कषाय, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानि और चार सञ्ज्वलनोंकी असंख्यातगुणवृद्धिका अन्तरकाल नहीं है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणवृद्धि और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । मनुष्यपर्याप्तकोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें स्त्रीवेदकी असंख्यात-गुणहानि नहीं है । मनुष्यिनियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें पुरुषवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है । मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है ।

§ ३७६ देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सम्यक्त्व

हा० अवत्त० ज० पलिदो० असंखे०, भागहा० ज० एगस०, उक्क० दो वि एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढी० हाणी० अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। संखे०भागवड्ढी० संखे०गुणवड्ढी० असंखे०गुणवड्ढी० हाणी० अवत्त० ज० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं० सागरो० देसूणाणि। बारसक० पुरिस० भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढी० हा० अव० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। इत्थि-णवुंस० असंखे०भागवड्ढी० अव० एगस०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। असंखे०भागहा० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। हस्स रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढी० हाणी० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। एवं भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। णवरि जम्हि एक्कत्तीसं जम्हि य तेत्तीसं तम्हि सगट्ठिदीओ भाणिदव्वाओ।

§ २७७ अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-इत्थि-णवुंस० असंखे०भागहाणी० णत्थि अंतरं। अणंताणु०४ असंखे०भागहा० ज० उक्क० एगसमओ, बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्ढि हा० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० सगट्ठिदी देसूणा।

और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण और एक समय है तथा उत्कृष्ट अन्तर दोनों ही कुछ कम इकतीस सागर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। बारह कषाय पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। हास्य, रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहां पर इकतीस सागर और जहां पर तेतीस सागर कहा है वहां पर अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

§ २७७. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानिका अन्तरकाल नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और

हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणी० जह० एगस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं। एव जाव अणाहारि त्ति।

§ ३७८. णाणाजीवेहि भंगविचयाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० असखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० णियमा अत्थि। सिया एदे च असखे०गुणहाणिविहत्तिओ च। सिया एदे च असखे०गुणहा०विहत्तिया च। एवमट्ठकसाय०। सम्म०-सम्मामि० असखे०भागहा० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भजियव्वाणि। अणंताणु०४ असखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भजियव्वाणि। चदुसंज० एवं चेव। इत्थि०-णवुस० असखे०भागवड्ढि-हा० णियमा अत्थि। सिया एदे च असखे०गुणहा०विहत्तिओ च। सिया एदे च असखे०-गुणहाणिविहत्तिया च। पुरिस० असखे०भागवड्ढि-हाणि० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असखे०भागवड्ढि-हाणि० णियमा अत्थि। भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णियमा अत्थि।

§ ३७९. आदेसेण णेरइय० मिच्छत्त--बारसक०--पुरिस०--भय--दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० णियमा अत्थि। । ।या एदे च अवट्ठिओ च। सिया एदे च

उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। हास्य, रति, अरति और शोककी असख्यात भागवृद्धि और असख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार अन्तरकाल समाप्त हुआ।

§ ३७८. नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्ग विचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये जीव हैं और असख्यातगुणहानिविभक्तिवाला एक जीव है। कदाचित् ये जीव हैं और असख्यातगुणहाणिविभक्तिवाले नाना जीव हैं। इसी प्रकार आठ कषायोंकी अपेक्षा भङ्ग जानना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। चार सज्वलनोंकी अपेक्षा इसी प्रकार भङ्ग है। स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी असख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये जीव हैं और असख्यातगुणहानिवाला एक जीव है। कदाचित् ये जीव हैं और असख्ततगुणहानिवाले अनेक जीव हैं। पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। भय और जुगुप्साकी असख्यातभागवृद्धि, असख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं।

§ ३७८. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये जीव हैं और

अवट्ठिदा च। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढि हाणि० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। इत्थि० -णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि० णियमा अत्थि। एवं सव्वणेरइय० पंचिंदियतिरिक्ख०३ देवगदीए देवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति।

§ २८० तिरिक्खगई० तिरिक्खा० मिच्छत्त-बारसक० भय-दुगुंछा० असंखे० भागवड्ढि हाणि-अवट्ठिदा णियमा अत्थि। सम्म० सम्मामि असंखे०भागहा० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। अणताणु०४ असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। इत्थि-णवुंस० चदुणोक० असंखे०भागवड्ढि हा० णियमा अत्थि। पुरिस० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० णियमा अत्थि। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिओ च। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिया च।

§ २८१ पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छत्त-सोलसक० भय-दुगुंछा० असंखे० भागवड्ढि हाणि० णियमा अत्थि। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिओ च। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिया च। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहा० णियमा अत्थि। सिया

अवस्थितविभक्तिवाला एक जीव है कदाचित् ये जीव हैं और अवस्थितविभक्तिवाले नाना जीव हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, देवगतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ २८० तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। स्त्रीवेद नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये जीव हैं और अवस्थितविभक्तिवाला एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और अवस्थितविभक्तिवाले नाना जीव हैं।

§ २८१ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये जीव हैं और अवस्थितविभक्तिवाला एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और अवस्थितविभक्तिवाले नाना जीव हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये

एदे च असंखे०गुणहाणिविहत्तिओ च। सिया एदे च असखे०गुणहाणिविहत्तिया च। सत्तणोक० असंखे०भागवड्डि-हाणि० णियमा अत्थि।

§ ३८२. मणुसगदी० मणुसा० मिच्छ०--सोलसक०--पुरिस०-भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्डि-हाणि० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। सम्मत्त०-सम्मामि० असंखे०भागहा० णियमा अत्थि। सेसपदा भयणिज्जा। इत्थि०--णवुंस० अत्थि असंखे०भागवड्डि हाणिविहत्तिया। सिया एदे च असंखे०गुणहाणिविहत्तिओ च। सिया एदे च असखे०गुणहाणिविहत्तिया च। हस्स-रइ--अरइ--सोगाणं असंखे०भागवड्डि-हाणि० णियमा अत्थि। मणुसपज्ज० एव चेव। णवरि इत्थिवेद० असखे०गुणहाणि० णत्थि। एव चेव मणुसिणीसु। णवरि पुरिस०-णवुंस० असखे०गुणहाणि० णत्थि। मणुसअपज्ज० अट्ठावीसं पयडीण सव्वपदा भयणिज्जा।

§ ३८३. अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० असखे०भागवड्डि-हाणि० णियमा अत्थि। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिओ च। सिया एदे च अवट्ठिदविहत्तिया च। मिच्छत्त--सम्म०--सम्मामि०--इत्थि०--णवुंस० असंखे०भागहा० णियमा अत्थि। अणताणु०४ असंखे०भागहा० णियमा अत्थि। सिया एदे च असखे०गुणहाणिविहत्तिओ च। सिया एदे च असखे०गुणहाणिविहत्तिया

जीव हैं और असख्यातगुणहानिवाला एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और असख्यातगुणहानिवाले नाना जीव हैं। सात नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं।

§ ३८२. मनुष्यगतिमे मनुष्योंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये जीव हैं और असख्यातगुणहानिविभक्तिवाला एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और असख्यातगुणहानिविभक्तिवाले नाना जीव हैं। हास्य, रति, अरति और शोककी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। मनुष्यपर्याप्तकोंमें इसी प्रकार भङ्ग है। इतनी विशेपता है कि इनमें स्त्रीवेदकी असख्यातगुणहानि नहीं है। इसीप्रकार मनुष्यिनियोंमें भङ्ग है। इतनी विशेपता है कि इनमें पुरुषवेद और नपुसकवेदकी असख्यातगुणहानि नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमे अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पद भजनीय हैं।

§ ३८३ अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमे बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये जीव हैं और अवस्थितविभक्तिवाला एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और अवस्थितविभक्तिवाले नाना जीव हैं। मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुसकवेदकी असख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिवाले जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये जीव हैं और असख्यातगुणहानिविभक्तिवाला एक जीव है, कदाचित् ये जीव हैं और असख्यातगुणहानिविभक्तिवाले नाना जीव हैं। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यात-

य। इस-रइ अरइ सोगाणं असंख०भागवड्ढि-हा०विह० णियमा अत्थि। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ३८४ भागाभागाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० असंखे०गुणहाणिविह० सव्वजी० केवडिओ भागो? अणंतभागो। अवट्ठि०विह० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। असंखे०भागहा० सव्वजी० केव० ? संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० सव्वजी० केव० ? संखेज्जा भागा। एवमट्ठकसाय०। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। असंखे०भागहा० सव्वजी० केव० ? असंखेज्जा भागा। अणंताणु०४ संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि असंखे०गुणवड्ढि हाणि-अवत्त० सव्वजी० केव० ? अणंतभागो। अवट्ठि० असंखे० भागो। असंखे०भागहा० संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० सव्वजीवा केव० ? संखेज्जा भागा। चदुसंजल० संखे०गुणवड्ढि-असंखे०गुणहा० सव्वजी० के० ? अणंतभागो। अवट्ठि० असंखे०भागो। असंखे०भागहा० केव० ? संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० के० ? संखेज्जा भागा। णवरि लोभसंज० असंखे०गुणहाणि०

भागवृद्धि और असंख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव नियमसे हैं। इसप्रकार अनाहारकमार्गणा तक ले जाना चाहिए।

इसप्रकार नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय समाप्त हुआ।

§ ३८४ भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसीप्रकार आठ कषायोंकी अपेक्षा भागाभाग जानना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणवृद्धि असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। चार संज्वलनोंकी संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इतनी विशेषता है

णत्थि। इत्थि-णवुंस० असंखे०गुणहा० सव्वजी० केव० ? अणंतभागो। असंखे०भागवड्ढि० संखे०भागो। असंखे०भागहाणि० संखेज्जा भागा। णवरि णवुंस० असंखे०भागवड्ढि-हाणीणं विवज्जासो कायव्वो। पुरिस० असंखे०गुणहा०-संखे०गुणवड्ढि-अवट्ठि० अणंतभागो। असंखे०भागवड्ढि० संखे०भागो। असंखे०भागहा० संखेज्जा भागा। हस्स-रइ अरइ-सो० असंखे०भागवड्ढि० संखे०भागो। असंखे०-भागहा० संखेज्जा भागा। अरदि-सोग० असंखे०भागहाणि० संखे०भागो। असंखे०-भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। भय-दुगुंछा० अवट्ठि० असंखे०भागो। असंखे०भागहा० संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा।

§ ३८५. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। असंखे०भागहा० के० ? संखे०भागो। असंखे०-भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। णवरि पुरिस० वड्ढि-हाणीणं विवज्जासो कायव्वो। सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहा० सव्वजी० केव० ? असंखेज्जा भागा। सेसपदा असंखे०भागो। अणंताणु०४ अवट्ठि० संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। असंखे०भागहा० संखे०भागो।

कि लोभसंज्वलनकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका विपर्यास करना चाहिए। पुरुषवेदकी असंख्यातगुणहानि, संख्यातगुणवृद्धि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अरति और शोककी असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण है। भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं।

§ ३८५ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्राण हैं ? असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी वृद्धि और हानिका विपर्यास करना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवस्थितविभक्ति, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले

असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोग० असंखे० भागवड्ढि० केव० ? संखे०भागो। असंख०भागहा० सव्वजी० संखेज्जा भागा। णवरि णवुंस अरइ-सोगाणं विवरीयं कायव्वं। एवं सव्वणेरइय० पंचिं०तिरिक्ख०३ देवगई० देवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। णवरि आणदादिसु पुरिस णवुंस०-मिच्छत्त०-अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढि हाणीणं विवज्जासो कायव्वो।

§ ३८६ तिरिक्खगई० तिरिक्खा० मिच्छ०-बारसक० भय दुगुंछ० अवट्ठि० सव्वजी० असंखे०भागा। असंखे०भागहाणि संखे०भागा। असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहा० असंखेज्जा भागा। सेसपदा असंखे०भागो। अणंताणु०४ संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि हाणि-अवत्त अणंतभागो। अवट्ठि० असंखे०भागो। असंख०भागहा० संखे० भागो। असंख०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। इत्थि-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोगा० णेरइयभंगो। पुरिस० अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? अणंतभागो। असंख०भागवड्ढि० संखे०भागो। असंखे०भागहाणि० संखेज्जा भागा।

§ ३८७ पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक० भय-दुगुंछा० अवट्ठि०

जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। स्त्रीवेद नपुंसकवेद हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव सब जीवोंके संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेद अरति और शोकका विपरीत करना चाहिए। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, देवगतिमें देव और भवनवासियों से लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि आनतादिकमें पुरुषवेद नपुंसकवेद मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका विपर्यास करना चाहिए।

§ ३८६. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष पदवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्की संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। स्त्रीवेद नपुंसकवेद हास्य रति अरति और शोकका भङ्ग नारकियोंके समान है। पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं।

§ ३८७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी

सव्वजी० असंखे०भागो। असंखे०भागहाणि० संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणहा० असंखे०भागो। असंखे०-भागहा० असंखेज्जा भागा। सत्तणोक० णेरइयभंगो। णवरि पुरिस० अवट्ठि० णत्थि। एवं मणुसअपज्ज०।

§ ३८८. मणुसगई० मणुसा० मिच्छ०-अट्ठक० असंखे०गुणहा०-अवट्ठि० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। असंखे०भागहाणि० संखे०भागो। असंखे० भागवड्ढि० संखे०भागा। सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-असंखे०भागवड्ढि-अवत्त० असंखे०भागो। असंखे०भागहा० असंखेज्जा भागा। अणंताणु०४ अवट्ठि०-संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि--असंखे०गुणवड्ढि--हाणि--अवत्त० असंखे०भागो। असंखे०भागहा० संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। तिण्हिसंज० अवट्ठि० संखे०गुणवड्ढि--असंखे०गुणहाणि० सव्वजी० केव० ? असंखे०भागो। असंखे०भागहा० संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० संखे०भागा। लोहसंजल० संखे०गुणवड्ढि०-अवट्ठि० सव्वजी० असंखे०भागो। असंखे०भागहा० संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। इत्थि णवुंस० असंखे०गुणहा० सव्वजी०

अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। सात नोकषायोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्ति नहीं है। इसीप्रकार मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए।

§ ३८८. मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें मिथ्यात्व और आठ कषायोंकी असंख्यातगुणहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि असंख्यातभागवृद्धि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानि-वाले जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवस्थितविभक्ति, संख्यातभाग-वृद्धि,संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यात-भागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। तीन सज्वलनोंकी अवस्थितविभक्ति, संख्यात-गुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिवाले जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धि-वाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। लोभसज्वलनकी संख्यातगुणवृद्धि और अवस्थितविभक्ति-वाले जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। स्त्रीवेद और नपुंसकवेद-

असंखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि हाणीणं णेरइयभंगो। पुरिसवेद० संखे०गुणवड्ढि अवट्ठि-असंखे०गुणहाणि० असंखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० संखे०भागो। असंखे०भागहा० संखेज्जा भागा। हस्स रइ अरइ-सोगा० असंखे०भागवड्ढि हाणि० ओघं। भय-दुगुंछा० अवट्ठि० असंखे०भागो। असंखे०भागहाणि० संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। मणुसपज्ज० एवं चेव। णवरि जम्हि असंखे० भागा तम्हि संखे०भागो। इत्थिवेद० हस्सभंगो। एवं मणुसिणीसु। णवरि पुरिस० णवुंस० असंखे०गुणहा० णत्थि।

§ २८९. अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म० सम्मामि० इत्थि-णवुंस० णत्थि भागाभागो। अणंताणु०४ असंखे०गुणहाणि० असंखे०भागो। असंखे०भागहाणि० असंखे०भागा। सव्वट्ठे णवरि संखे०भागो संखेज्जा भागा। बारसक०-पुरिस० भय-दुगुंछा० अवट्ठि० सव्वजी० असंखे०भागो। असंखे०भागहा० संखे०भागो। असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जा भागा। सव्वट्ठे संखेज्जं कायव्वं। हस्स रइ-अरइ-सोगाणं देवोघं। एवं जाव अणाहारि त्ति।

की असंख्यातगुणहानिवाले जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका भङ्ग नारकियोंके समान है। पुरुषवेदकी संख्यातगुणवृद्धि, अवस्थित-विभक्ति और असंख्यातगुणहानिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। हास्य, रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका भङ्ग ओघके समान है। भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यात-भागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यात बहुभाग-प्रमाण हैं। मनुष्य पर्याप्तकोंमें इसीप्रकार भागाभाग है। इतनी विशेषता है कि जहाँ असंख्यातवें भागप्रमाण है वहाँ पर संख्यातवें भागप्रमाण जानना चाहिए। तथा स्त्रीवेदका भङ्ग हास्यके समान है। इसीप्रकार मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है।

§ २८९. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भागाभाग नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानिवाले जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें क्रमसे संख्यातवें भाग और संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। बारह कषाय पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। असंख्यातभागवृद्धि वाले जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। मात्र सर्वार्थसिद्धिमें असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। हास्य रति अरति और शोकका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार भागाभाग समाप्त हुआ।

§ ३६०. परिमाणाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-बारसक०-भय-दुगुंछा० अवट्ठि० असंखे०भागवड्ढि-हाणिविह० केत्ति० ? अणंता। असंखे०गुणहाणि० चउसंज० सखे०गुणवड्ढि० सखेज्जा। णवरि लोभसंज०-भय-दुगुंछा० असखे०गुणहाणि० णत्थि। सम्म० सम्मामि० सव्वपदवि० असंखेज्जा। अणंताणु०४ अवट्ठि०-असंखे०भागवड्ढि-हाणि० के० ? अणंता। सेसपदा० असंखेज्जा। इत्थि०-पुरिस०-णवुंस० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० केत्ति० ? अणंता। पुरिस० अवट्ठि० असंखेज्जा। सव्वेसिमसंखे०गुणहाणि० पुरिस० संखे०गुणवड्ढि० संखेज्जा। हस्स-रइ-अरइ-सोगा० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० केत्ति० ? अणंता। एव तिरिक्खा०। णवरि सेढिपदाणि मोत्तूण वत्तव्वं।

§ ३६१. आदेसेण णेरइय० अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदा० केत्ति० ? असंखेज्जा। एव सव्वणेरइय० सव्वपंचिंदियतिरिक्ख० देवगई० देवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति। मणुसगदीए एवं चेव। णवरि सेढिपदा मिच्छ० असंखे०-गुणहाणि० अणंताणु० पंचपदा संखेज्जा। पचिं०तिरिक्ख०अप० २८ पयडीण सव्वपदा असंखेज्जा। मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु जाणि पदाणि अत्थि ताणि सखेज्जा। मणुसअपज्ज० २८ पय० सव्वपदा केत्तिया ? असखेज्जा। अणुद्दिसादि जाव

---

§ ३६०. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अवस्थित, असख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिविभक्तिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। असख्यातगुणहानिवाले और चार संज्वलनोंकी सख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सख्यात हैं। इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलन, भय और जुगुप्साकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सब पदविभक्तिवाले जीव असंख्यात हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवस्थितविभक्ति, असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। शेष पदवाले जीव असख्यात हैं। स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव असख्यात हैं। सबकी असख्यातगुणहानिवाले और पुरुषवेदकी सख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सख्यात हैं। हास्य, रति, अरति और शोककी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिवाले जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि श्रेणिसम्बन्धी पदोंको छोड़कर कथन करना चाहिए।

§ ३६१. आदेशसे नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसीप्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, देवगतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्यगतिमें इसीप्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें श्रेणिसम्बन्धी पदवाले, मिथ्यात्वकी असख्यातगुणहानिवाले और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके पाँच पदवाले जीव सख्यात हैं। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव असख्यात हैं। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जो पदवाले हैं वे संख्यात हैं। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव कितने

अपराइदा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-इत्थि० णवुंस० असंखे०भागहा० अणंताणु०४ असंखे०भागहा०-असंखे०गुणहा० बारसक०-पुरिस० भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्ढि हाणि-अवट्ठि० चदुणोक० असंखे०भागवड्ढि-हा० केत्तिया ? असंखेज्जा । सव्वट्ठ० सव्वपय० सव्वपदा संखेज्जा । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ २९२ खेत्ताणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० अट्ठक० भय दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० के० खेत्ते ? सव्वलोगे । भय दुगुंछावज्ज० असंखे०गुणहाणि० के० खेत्ते ? लोग० असंखे०भागे । सम्म०-सम्मामि० सव्वपदा० लोग० असंखे०भागे । अणंताणु०४ मिच्छत्तभंगो । णवरि संखे०भागवड्ढि संखे०गुणवड्ढि—असंखे०गुणवड्ढि हाणि-अवत्त० लोग० असंखे०भागे । चदुसंज० असंखे०भागवड्ढि-हाणि अवट्ठि० के० खेत्ते ? सव्वलोगे । संखे०गुणवड्ढि० लोभसंजलणं वज्ज० असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागे । इत्थि०-णवुंस० असंखे०भागवड्ढि हाणि० सव्वलोगे । असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भाग । एवं पुरिस० । णवरि अवट्ठि०-असंखे०गुणवड्ढि० लोग० असंखे०भागे । चदुणोक० असंखे०भागवड्ढि

हैं ? असंख्यात हैं । अनुदिशसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें मिथ्यात्व सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानिवाले, अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिवाले, बारह कषाय पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले तथा चार नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सर्वार्थसिद्धि में सब प्रकृतियोंके सब पदवाले जीव संख्यात हैं । इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इसीप्रकार परिमाण समाप्त हुआ ।

§ २९२. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, आठ कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सब लोक क्षेत्र है । भय और जुगुप्साको छोड़कर असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सब पदवाले जीवोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है । इतनी विशेषता है कि संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । चार संज्वलनोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका कितना क्षेत्र है ? सब लोक क्षेत्र है । संख्यातगुणवृद्धिवाले जीवोंका और लोभसंज्वलनको छोड़कर शेषकी असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंका क्षेत्र सब लोक है । असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसीप्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा क्षेत्र जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अवस्थितविभक्ति और असंख्यातगुणवृद्धिवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है । चार नोकषायोंकी

हाणि० सव्वलोगे। एवं तिरिक्खा०। णवरि सेढिपदा मिच्छ० असंखे०गुणहाणि० च णत्थि।

§ ३६३. आदेसेण णेरइय २८ पय० सव्वपदा लोग० असंखे०भागे। एवं सव्वणेरइय०। सव्वपंचिंदियतिरिक्ख-सव्वमणुस्स० सव्वपदा त्ति जासिं जाणि पदाणि संभवंति तासिं लोग० असंखे०भागे। एव जाव अणाहारि त्ति।

§ ३६४. पोसणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-अट्ठक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० केव० खेत्तं पोसिदं? सव्वलोगो। असंखे० गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०। असंखे०भागहाणि० लोग० असंखे० भागो सव्वलोगो वा। अणंताणु०४ मिच्छत्तभंगो। णवरि संखेज्जभागवड्ढि-संखे०-गुणवड्ढि–असंखे०गुणवड्ढि–हाणि–अवत्त० लोग० असंखे०भागो अट्ठचो० देसूणा। चदुसंजल० संखे०गुणवड्ढि० लोभं वज्ज असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो। सेसं मिच्छत्तभंगो। इत्थि-णवुंस० असंखे०भागवड्ढि हाणि० सव्वलोगो। असंखे०गुण-

असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें श्रेणिसम्बन्धी पद और मिथ्यात्वकी असंख्यात-गुणहानि नहीं है।

§ ३६३. आदेशसे नारकियोंमें अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदवाले जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसीप्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च और सब मनुष्योंमें सब पदोंमेंसे जिन प्रकृतियोंके जो पद सम्भव हैं उनका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार क्षेत्र समाप्त हुआ।

§ ३६४ स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और आठ कषायकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात-गुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य-विभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। चार संज्वलनकी संख्यातगुणवृद्धिवाले और लोभसंज्वलनको छोड़कर शेषकी असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धि

हाणि० लोग० असंखे०भागो। पुरिस० असंखे०भागवड्ढि-हा० सव्वलोगो। अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द०। असंखे०गुणहाणि-संख०गुणवड्ढि० लोग० असंखे० भागो। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि हाणि० सव्वलोगो। भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलोगो।

§ ३६५ आदेसेण णेरइय० मिच्छत्त-सोलसक० भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि हाणि-अवट्ठि० लोग० असंख०भागो छचोद्द०। सम्म० सम्मामि० असंखे० भागहाणि असंखे०गुणहाणि लोग० असंखे०भागो छचोद्द०। सेसपदा० खेत्त। अणंताणु०४ संखे०भागवड्ढि—संख०गुणवड्ढि—असंखे०गुणवड्ढि—असंखे गुणहाणि अवत्त० खेत्तभंगो। इत्थि०-णवुंस० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० लोग० असंखे०भागो छचोद्द०। पुरिस० असंखे०भागवड्ढि हाणि० लोग० असंखे०भागो छचोद्द०। अवट्ठि० लोग असंखे०भागो। हस्स रइ-अरइ सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि० लोग० असंख०भागो छचोद्द०। पढमाए खेत्तभंगो। विदियादि जाव सत्तमा त्ति

और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातगुणहानि और संख्यातगुणवृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। हास्य, रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ३६५. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंका भङ्ग क्षेत्रके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। हास्य, रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पहली पृथिवीमें क्षेत्रके समान भङ्ग है। दूसरीसे लेकर सातवीं तककी पृथिवियोंमें सामान्य

णिरओघं । णवरि सगपोसणं ।

§ ३९६. तिरिक्खा० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० सव्वलोगो । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि-असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । सेसपदा० लोग० असंखे०भागो । अणंताणु०४ संखे०भागवड्डि-संखे०गुणवड्डि-असंखे०गुणवड्डि-हाणि-अवत्त० लोग० असंखे०भागो । पुरिस० असंखे०भागवड्डि-हाणि० सव्वलोगो । अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो । इत्थि०-णवुंस०हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्डि-हाणि० सव्वलोगो ।

§ ३९७. पंचिंदियतिरिक्ख३ मिच्छत्त-बारसक०भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । सम्म०-सम्मामि० असंखे०-भागहा०-असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा । सेसपदवि० लोग० असंखे०भागो । अणंताणु०४ असंखे०भागवड्डि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे० भागो सव्वलोगो वा । संखे०भागवड्डि०-संखे०गुणवड्डि-असंखे०गुणवड्डि-हाणि-अवत्त० लोग० असंखे०भागो । । इत्थि० असंखे०भागवड्डि० लोग० असंखे०भागो दिवड्ड-

---

नारकियोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए ।

§ ३९६ तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी संख्यात-भागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । पुरुषवेदकी असंख्यातभाग वृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अवस्थित-विभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेद, नपुंसकवेद हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

§ ३९७ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यात-भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यात-भागहानि और असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । शेष पदविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्य-विभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । स्त्रीवेदकी असंख्यात-

चोद्दस०। असंखे०भागहा० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। पुरिस० असंखे०भागवड्ढि० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस०। असंखे०भागहाणि० लोग० असंख०भागो सव्वलोगो वा। अवट्ठि० तिरिक्खोघं। णवुंस० हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा।

§ २९८. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि-हा०-अवट्ठि० लोग० असंख०भागो सव्वलोगो वा। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि-असंखे०गुणहाणि लोग० असंख०भागो सव्वलोगो वा। इत्थि०-पुरिस० असंखे०भागवड्ढि० लोग० असंखे०भागो। दोण्हमसंखे०भागहाणि० णवुंस०-हस्स-रदि-अरदि-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि० लोग० असंख० भागो सव्वलोगो वा। मणुसगईए मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि जम्हि वज्जो तम्हि लोग० असंख०भागो। सेडिपदा० लोग० असंख०भागो। मणुसअपज्ज० पंचि०तिरि०अपज्जत्तभंगो।

§ २९९. देवगईए देवेसु मिच्छत्त-बारसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि

भागवृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंका स्पर्शन सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ २९८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेद और पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दोनोंकी असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने तथा नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्व लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्यगतिमें मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर वर्जनीय है वहाँ पर लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण स्पर्शन है। तथा श्रेणिसम्बन्धी पदवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

§ २९९. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यात-

हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोदसभागा वा देसूणा। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि-असंखे०गुणहाणि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्द०। सेसपदा० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द०। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-णवचोद्द०। संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि हाणि-अवत्त० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द०। इत्थि० असंखे०-भागवड्ढि० पुरिस० असंखेणभागवड्ढि-अवट्ठि० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा। दोण्हमसंखे०भागहा० चदुणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० लोग० असंखे०-भागो अट्ठ-णवचोद्द०। एवं सोहम्म०। भवण०-वाण०-जोदिसि० एवं चेव। णवरि सगरज्जू०। सणक्कुमारादि जाव सहस्सारे त्ति आणदादि जाव अच्चुदा त्ति सगपोसणं। उवरि खेत्तभंगो। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ४००. कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-अट्ठक० असंखे०भागवड्ढि हाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। असंखे०गुणहाणि० जह०

भागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभाहानि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। स्त्रीवेदकी असंख्यातभागवृद्धि तथा पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और अवस्थितविभक्तिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। दोनोंकी असंख्याभागहानि तथा चार नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिवाले जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसीप्रकार सौधर्म और ऐशान कल्पमें स्पर्शन है। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें स्पर्शन इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि अपने अपने राजु कहने चाहिए। सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्पतक और आनतसे लेकर अच्युत कल्पतकके देवोंमें अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। आगेके देवोंमें स्पर्शनका भङ्ग क्षेत्रके समान है। इसप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार स्पर्शन समाप्त हुआ।

§ ४०० कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और आठ कषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका

एगसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागवड्ढि-असंखे० गुणवड्ढि० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। असं०भागहाणि सव्वद्धा। असंखे०गुणहाणि-अवत्त० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। संखेज्जभागवड्ढि-संखे० गुणवड्ढि-असंखे०गुणहाणि-अवत्तव्व० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। असंखे०गुणवड्ढि० जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। चदुसंज० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० सव्वद्धा। संखे०गुणवड्ढि० लोभसंज० वज्ज असंखे०गुणहा० ज० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। इत्थि-णवुंस० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० सव्वद्धा। असंखे०गुणहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० संखे० समया। पुरिस० असं०भागवड्ढि-हा० सव्वद्धा। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असं०। असं०गुणहा०-संख०गुणवड्ढि० ज० एगस०, उक्क० संखे० समया। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि० सव्वद्धा। भय०-दु० असं० भागवड्ढि-हा० अवट्ठि० सव्वद्धा।

§ ४०१ आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-बारसक० पुरिस० भय-दुगुंछा० असंखे

काल सर्वदा है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिवाले जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका काल सर्वदा है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। चार संज्वलनकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका काल सर्वदा है। संख्यातगुणवृद्धिका तथा लोभसंज्वलनको छोड़कर असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। पुरुषवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानि और संख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका काल सर्वदा है।

§ ४०१ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्सा

भागवड्ढि-हाणि० सव्वद्धा । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० असखे०भागहा० सव्वद्धा । असंखे०गुणहाणि-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० आव० असंखे०भागो । असंखे०भागवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढि०-हाणि० सव्वद्धा । संखे०भागवड्ढि -संखे०गुणवड्ढि--असंखे०गुणहाणि--अवट्ठि०-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । असखे०गुणवड्ढि० ज० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । इत्थि०-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाण असखे०भागवड्ढि-हाणि० सव्वद्धा । एवं सत्तसु पुढवीसु ।

§ ४०२. तिरिक्खगदी० तिरिक्खा० ओघ । णवरि सेढिपदाणि मोत्तूण । पंचिंदियतिरिक्खतिए णारयभंगो । पंचिं०तिरि०अपज्ज० मिच्छत्त०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० असखे०भागवड्ढि--हाणि० सव्वद्धा । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असखे०भागो । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० सव्वद्धा । असंखे०गुणहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० आव० असं०भागो । सत्तणोक० असंखे० भागवड्ढि-हाणि० सव्वद्धा ।

असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। असख्यातगुणहानि और अवक्तव्य-विभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असख्यातभागवृद्धि और असख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। सख्यातभागवृद्धि, सख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण है। असख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है। स्त्रीवेद, नपुसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए।

§ ४०२. तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि श्रेणि-सम्बन्धी पदोंको छोडकर कहना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें नारकियोंके समान भङ्ग है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असख्यात-भागवृद्धि और असख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व की असख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। असख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण है। सात नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है।

§ ४०३ मणुसाणं पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि सम्म०-सम्मामि० असंखे० भागवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि० जहण्णुक्क० अंतोमुहुत्तं। अणंताणु०४ असंखे०गुणवड्ढि० ज० एगस०, उक्क० अंतोमु०। अवत्तव्व० अणंताणु०४ असंखे०गुणहाणि० पुरिस० अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। सेसपदाणमोघं। मणुसपज्जत्त मणुसिणीसु एवं चेव। णवरि सम्म०-सम्मामि० असंखे०गुणहाणि० धुवबंधीणमवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया। मणुसपज्ज० इत्थि० असंखे०गुणहाणि० णत्थि। मणुसिणी० पुरिस०-णवुंस० असंखे०गुणहाणि० णत्थि।

§ ४०४ मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि हाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। सत्तणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो।

§ ४०५ देवगई० देवा० भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति णारयभंगो। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-इत्थि०-णवुंस० असंखे०

§ ४०३. मनुष्योंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणवृद्धिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इनकी अवक्तव्यविभक्तिका अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानिका और पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। शेष पदोंका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें इसी प्रकार है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिका तथा ध्रुवबन्धिनी प्रकृतियोंकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। मनुष्य पर्याप्तकोंमें स्त्रीवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है।

§ ४०४. मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सात नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४०५. देवगतिमें देवोंमें तथा भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व,

देवगई० देवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति ।

§ ४०८. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि० णत्थि अंतरं । अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० असंखेज्जा लोगा । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं । असंखेज्जगुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते साधिगे । सत्तणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० णत्थि अंतरं ।

§ ४०९. मणुसगई० मणुसा० पंचिंदियतिरिक्खभंगो । णवरि सेढिपदाणमोघं । मणुसपज्जत्ता० एव चेव । णवरि इत्थिवेद० असंखे०गुणहाणि० णत्थि । मणुसिणीसु एव चेव । णवरि पुरिस०-णवुंस० असंखे०गुणहाणि० णत्थि ; णवरि जम्हि छम्मासा तम्हि वासपुधत्तं । मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि--असंखे०गुणहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । सत्तणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो ।

तिर्यञ्चत्रिक, देवगतिमें सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए ।

§ ४०८ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है । अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। सात नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तरकाल नहीं है।

§ ४०९. मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि श्रेणिसम्बन्धी पदोंका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यपर्याप्तकोंमें इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। मनुष्यिनियोंमें इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। इतनी और विशेषता है कि जहाँ पर छह महीना अन्तर काल कहा है वहाँ पर वर्षपृथक्त्व कहना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सात नोकषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४१०. मणुसिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-इत्थि०-णवुंस० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। अणंताणु०४ असंखेज्जभागहाणि० णत्थि अंतरं। असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। सव्वट्ठे पलिदो० संखे०भागो। बारसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्ढिहाणि० णत्थि अंतरं। अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढिहाणि० णत्थि अंतरं। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ४११. भावाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदा त्ति को भावो? ओदइओ भावो। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ४१२. अप्पाबहुआणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्त-अट्ठक० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। अवट्ठि० अणंतगुणा। असंखे०-भागहाणि० असंखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। सम्मत्त-सम्मामि० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। अवत्त० असंखे०गुणा। असंखेज्जगुणवड्ढि० असंखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जगुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा।

---

§ ४१०. मनुष्यिनीसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। मात्र सर्वार्थसिद्धिमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। बारह कषाय पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात-भागहानिका अन्तर काल नहीं है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। हास्य, रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार अन्तर काल समाप्त हुआ।

§ ४११. भावानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदोंका कौन भाव है? औदयिक भाव है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार भाव समाप्त हुआ।

§ ४१२. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और आठ कषायोंकी असंख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातगुणवृद्धिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव

भागहाणि० सव्वद्धा । एवमणताणु०४ । णवरि असंखे०गुणहाणि० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । वारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० सव्वद्धा । अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे०भागो । हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढि-हाणि० सव्वद्धा । णवरि सव्वट्ठे जम्हि आवलि० असंखेज्जो भागो तम्हि संखेज्जा समया । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

§ ४०६. अंतराणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-अट्ठक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । असंखे०गुणहा० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा । सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहा० णत्थि अंतरं । असंखे०भागवड्ढि--असंखे०गुणवड्ढि--हाणि--अवत्त० जह० एगस०, उक्क० चउवीस-महोरत्ते सादि० । अणंताणु०४ असंखे०भागवड्ढि--हाणि--अवट्ठि० णत्थि अंतरं । संखे०भागवड्ढि-संखे०गुणवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि-हाणि-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते साधिगे । चदुसंजल० असंखे०भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठि० णत्थि अंतरं । संखेज्जगुणवड्ढि-असंखे०गुणवड्ढि-हाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा । णवरि

सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानिवाले जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अपेक्षासे काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यात-गुणहानिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका काल सर्वदा है। इतनी विशेषता है कि जहाँ आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहा है वहाँ सर्वार्थसिद्धिमें संख्यात समय काल है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार काल समाप्त हुआ।

§ ४०६ अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और आठ कषायोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका अन्तर काल नहीं है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौवीस दिन-रात है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका अन्तरकाल नहीं है। संख्यात-भागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौवीस दिन-रात है। चार संज्वलनोंकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका अन्तर काल नहीं है। संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है

लोभसंज० असंखे०गुणहाणि० णत्थि । पुरिस० अवट्टि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । संख०गुणवड्डि-असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० छम्मासा । सेसं मिच्छत्तभंगो । इत्थि-णवुंस० असंखे०भागवड्डि-हाणि० णत्थि अंतरं । असंखे० गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं । हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्डि हाणि० णत्थि अंतरं । भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्डि हाणि-अवट्टि० णत्थि अंतरं । एवं तिरिक्खा० । णवरि वेदिपदा णत्थि दंसणमोहक्खवणा च ।

§ ४०७ आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-बारसक०-पुरिस०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्डि-हाणि० णत्थि० अंतरं । अवट्टि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । सम्मत्त-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं । असंखे०भागवड्डि० असंखे०गुणवड्डि-हाणि अवत्त० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते साधिगे । अणंताणु०४ असंखे०भागवड्डि हाणि० णत्थि अंतरं । अवट्टि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । संखे०भागवड्डि-संखेज्जगुणवड्डि-असंखे०गुणहाणि-अवत्त० जह० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते साधिगे । इत्थि-णवुंस०-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे० भागवड्डि हाणि० णत्थि अंतरं । एवं सव्वणेरइय० पंचिंदियतिरिक्खतिय०

और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलनकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। पुरुषवेदकी अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है। शेष भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। हास्य, रति, अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थितविभक्तिका अन्तर काल नहीं है। इसीप्रकार तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें वेदिसम्बन्धी पद तथा दर्शनमोहनीयकी क्षपणा नहीं है।

§ ४०७ आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व बारह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तरकाल नहीं है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व की असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात भागहानिका अन्तर काल नहीं है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। स्त्रीवेद नपुंसकवेद हास्य, रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। इसीप्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय

देवगई० देवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति ।

§ ४०८. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०-भागवड्ढि-हाणि० णत्थि अंतरं। अवट्ठि० ज० एगसमओ, उक्क० असंखेज्जा लोगा। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। असंखेज्जगुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते साधिगे। सत्तणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० णत्थि अंतरं।

§ ४०९. मणुसगई० मणुसा० पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि सेढिपदाणमोघं। मणुसपज्जत्ता० एवं चेव। णवरि इत्थिवेद० असंखे०गुणहाणि० णत्थि। मणुसिणीसु एव चेव। णवरि पुरिस०-णवुंस० असंखे०गुणहाणि० णत्थि। णवरि जम्हि छम्मासा तम्हि वासपुधत्तं। मणुसअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। सम्म०-सम्मामि० असंखे०भागहाणि--असंखे०गुणहाणि० जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सत्तणोक० असंखे०भागवड्ढि-हाणि० जह० एगस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो।

तिर्यञ्चत्रिक, देवगतिमे सामान्य देव और भवनवासियोसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमे जानना चाहिए।

§ ४०८ पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असख्यात लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। असख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है। सात नोकषायोंकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिका अन्तरकाल नहीं है।

§ ४०९ मनुष्यगतिमे मनुष्योमे पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि श्रेणिसम्बन्धी पदोका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्यपर्याप्तकोंमे इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेदकी असख्यातगुणहानि नहीं है। मनुष्यिनियोमें इसीप्रकार है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और नपुसकवेदकी असख्यातगुणहानि नहीं है। इतनी और विशेषता है कि जहाँ पर छह महीना अन्तर काल कहा है वहाँ पर वर्षपृथक्त्व कहना चाहिए। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यात-भागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असख्यात लोकप्रमाण है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातभागहानि और असख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सात नोकषायोंकी असख्यातभागवृद्धि और असख्यातभागहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ४१०. मणुसिणिआदि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-इत्थि० णवुंस० असंखे०भागहाणि० णत्थि अंतरं। अणंताणु०४ असंखेज्जभागहाणि० णत्थि अंतरं। असंखे०गुणहाणि० ज० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं। सव्वट्ठे पलिदो० संखे०भागो। बारसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुंछ० असंखे०भागवड्ढिहाणि० णत्थि अंतरं। अवट्ठि० ज० एगस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं असंखे०भागवड्ढिहाणि० णत्थि अंतरं। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ४११ भावाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अट्ठावीसं पयडीणं सव्वपदा त्ति को भावो? ओदइओ भावो। एवं जाव अणाहारि त्ति।

§ ४१२ अप्पाबहुआणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छत्त-अट्ठक० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। अवट्ठि० अणंतगुणा। असंखे० भागहाणि० असंखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। सम्मत्त-सम्मामि० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। अवत्त० असंखे०गुणा। असंखेज्जगुणवड्ढि० असंखे० गुणा। असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जगुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा।

---

§ ४१ मनुष्यिनीसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। असंख्यातगुणहानिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। मात्र सर्वार्थसिद्धिमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। बारह कषाय, पुरुषवेद भय और जुगुप्साकी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। अवस्थितविभक्तिका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। हास्य, रति अरति और शोककी असंख्यातभागवृद्धि और असंख्यातभागहानिका अन्तर काल नहीं है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार अन्तर काल समाप्त हुआ।

§ ४११ भावानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अट्ठाईस प्रकृतियोंके सब पदोंका कौन भाव है? औदयिक भाव है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इसप्रकार भाव समाप्त हुआ।

§ ४१२. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और आठ कषायोंकी असंख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातगुणवृद्धिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव

अणंताणु०४ सव्वत्थोवा अवत्त० । असंखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । संखे०-भागवड्डि० असखे०गुणा । संखे०गुणवड्डि० संखे०गुणा । असंखे०गुणवड्डि० असंखे०-गुणा । अवट्ठि० अणंतगुणा । असंखे०भागहाणि० असखे०गुणा । असंखे०भागवड्डि० संखेज्जगुणा । तिण्ह संजलणाणं सव्वत्थोवा संखेज्जगुणवड्डि० । असंखे०गुणहाणि० तत्तिया चेव । अवट्ठि० अणंतगुणा । असखे०भागहाणि० असखे०गुणा । असंखे०-भागवड्डि० सखे०गुणा । लोभसजलणाए सव्वत्थोवा सखे०गुणवड्डि० । अवट्ठि० अणंतगुणा । असखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । असंखे०भागवड्डि० सखे०गुणा । इत्थि० सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि० । असखे०भागवड्डि० अणंतगुणा । असखे०-भागहाणि० संखे०गुणा । पुरिस० सव्वत्थोवा सखेज्जगुणवड्डि० । असंखे०गुणहाणि० तत्तिया चेव । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असखे०भागवड्डि० अणंतगुणा । असंखे०-भागहाणि० संखे०गुणा । णवुस० सव्वत्थोवा असखे०गुणहाणि० । असखे०-भागहाणि० अणतगुणा । असंखे०भागवड्डि० सखे०गुणा । एवमरदि-सोगा० । णवरि असंखे०गुणहाणि० णत्थि । हस्स-रइ० सव्वत्थोवा असखे०भागवड्डि० । असंखे०-भागहाणि० सखे०गुणा । भय-दुगुंछा० सव्वत्थोवा अवट्ठि० । असंखे०भागहा०

सख्यातगुणे हैं । उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव असख्यातगुणे हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे असंख्यातगुणहानिवाले जीव असख्यातगुणे हैं । उनसे सख्यातभागवृद्धिवाले जीव असख्यातगुणे हैं । उनसे सख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सख्यातगुणे हैं । उनसे असख्यातगुणवृद्धिवाले जीव असख्यातगुणे हैं । उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं । उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। उनसे असख्यातभागवृद्धिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। तीन सज्वलनोंकी सख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। असख्यातगुणहानिवाले जीव उतने ही हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। उनसे असख्यातभागवृद्धिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। लोभसज्वलनकी सख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे असख्यात-भागहानिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। उनसे असख्यातभागवृद्धिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। स्त्रीवेदकी असख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असख्यातभागवृद्धिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। पुरुषवेदकी सख्यातगुणवृद्धि-वाले जीव सबसे स्तोक हैं। असख्यातगुणहानिवाले जीव उतने ही हैं। उनसे अवस्थितविभक्ति-वाले जीव असख्यातगुणे हैं। उनसे असख्यातभागवृद्धिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे असख्यातभाग-वृद्धिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार अरति और शोककी अपेक्षा अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि असख्यातगुणहानि नहीं है। हास्य और रतिकी असख्यातभागवृद्धिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असख्यातगुणे

असंखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा ।

§ ४१२ आदेसेण णेरइय० मिच्छत्त-बारसक० पुरिस० भय-दुगुंछा० सव्वत्थोवा अवट्ठि० । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा । णवरि पुरिस० वड्ढि-हाणीणं विवज्जासो कायव्वो । सम्मत्त-सम्मामि० सव्वत्थोवा असंख०गुणहाणि० । अवत्त० असंखे०गुणा । असंखे०गुणवड्ढि० असंखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । अणंताणु०४ सव्वत्थोवा अवत्त० । असंखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । संखे०भागवड्ढि० असंखे०गुणा । संखे०गुणवड्ढि० संखे०गुणा । असंखे०गुणवड्ढि० असंखे०गुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । असंखे०भागवड्ढि० संखेज्जगुणा । इत्थि-णवुंस०-चदुणोक० ओघं । णवरि इत्थि०-णवुंस० असंखे०गुणहाणि० णत्थि । एवं सत्तसु पुढवीसु पंचिंदियतिरिक्ख०३ देवा भवणादि जाव उवरिमगेवज्जा त्ति । णवरि आणदादिसु पुरिस० भयभंगो । णवुंसय० इत्थि०भंगो । मिच्छ०-अणंताणु०४ वड्ढि-हाणीणं विवज्जासो ण कायव्वो ।

हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ४१२. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व बारह कषाय पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदकी वृद्धि और हानिका विपर्यास करना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असंख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातगुणवृद्धिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यातगुणहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यातभागवृद्धिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे संख्यातगुणवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातगुणवृद्धिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। स्त्रीवेद नपुंसकवेद और चार नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर उपरिम ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि आनतादिकमें पुरुषवेदका भङ्ग भयके समान है। नपुंसकवेदका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। तथा मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी वृद्धि और हानिका विपर्यास करना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ सामान्य नारकी आदिमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान जाननेकी सूचना की है सो जहाँ पर ओघमें अनन्तगुणा कहा है वहाँ पर इन मार्गणाओंमें असंख्यातगुणा करना चाहिए। ये सब मार्गणायें असंख्यात संख्यावाली होनेसे मूलमें इस विशेषताका खुलासा नहीं किया है।

§ ४१४. तिरिक्खगई० तिरिक्खा० मिच्छत्त-बारसक०भय-दुगुंछा० सव्वत्थोवा अवट्ठि० । असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । असखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा । एवं पुरिस० । णवरि असखे०भागवड्ढि० अणंतगुणा । सम्मत्त-सम्मामि०-अणंताणु०४ ओघं । इत्थि०-णवुंस०-चदुणोक० णारयभंगो । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० मिच्छ०-सोलसक०-भय दुगुंछा० सव्वत्थोवा अवट्ठि० । असखे०भागहाणि० असंखे०गुणा । असखे०भागवड्ढि सखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि० सव्वत्थोवा असखे०गुणहाणि० । असंखे०भागहाणि० असखे०गुणा । सत्तणोकसाय० णारयभंगो । णवरि पुरिस० अवट्ठि० णत्थि ।

§ ४१५. मणुसगई० मणुस्सा० मिच्छ०-अट्ठक़सा० सव्वत्थोवा अ०संखे-गुणहाणि० । अवट्ठि० असखे०गुणा । असखे०भागहाणि० असखे०गुणा । असखे०-भागवड्ढि० सखे०गुणा । सम्मत्त-सम्मामि० सव्वत्थोवा अवत्त० । असखे०गुणवड्ढि० संखे०गुणा । असखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा । असंखे०गुणहाणि० असंखे०गुणा । असखे०भागहाणि० असखे०गुणा । अणताणुवधिचउक्क० सव्वत्थोवा अवत्त० । असखे०गुणहाणि० संखे०गुणा । सखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा । संखे०गुणवड्ढि० संखे०गुणा । असंखे०गुणवड्ढि० संखेज्जगुणा । अवट्ठि० असंखे०गुणा । असंखे०-

---

§ ४१४ तिर्यञ्चगतिमें तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। उनसे असख्यातभागवृद्धिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि इसकी असख्यातभागवृद्धिवाले जीव अनन्तगुणे हैं। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। स्त्रीवेद, नपुसकवेद और चार नोकषायोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी असख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। सात नोकषायोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदका अवस्थितपद नहीं है।

§ ४१५. मनुष्यगतिमें मनुष्योंमें मिथ्यात्व और आठ कषायोंकी असख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असख्यात-भागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यात गुणवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे असख्यातगुणहानिवाले जीव असख्यातगुणे हैं। उनसे असख्यातभागहानिवाले जीव असख्यात-गुणे हैं। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी अवक्तव्यविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असख्यात-गुणहानिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। उनसे सख्यातभागवृद्धिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। उनसे सख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सख्यातगुणे हैं।

भागहाणि० असंखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। तिण्हं संजलणाणं सव्वत्थोवा संखे० गुणवड्ढि०। असंखे०गुणहाणि० तत्तिया चेव। अवट्ठि० असंखे० गुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। लोभ संजल० सव्वत्थोवा संखे०गुणवड्ढि०। अवट्ठि० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। इत्थि० सव्वत्थोवा असंखे० गुणहाणि०। असंखे०भागवड्ढि० असंखेज्जगुणा। असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा। एवं णवुंस०। णवरि वड्ढि हाणीणं विवज्जासो कायव्वो। पुरिसवेद० सव्वत्थोवा संखे०गुणवड्ढि०। असंखे०गुणहाणि० तत्तिया चेव। अवट्ठि० संखे०गुणा। असंखे० भागवड्ढि० असंखे०गुणा। असंखे०भागहाणि० संखे०गुणा। चदुणोकसाय० माणं। भय-दुगुंछा० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। असंखे०-भागवड्ढि० संखेज्जगुणा। एवं मणुसपज्जत्ता०। णवरि जम्हि असंखे०गुणं तम्हि संखे०गुणं कायव्वं। इत्थि० हस्सभंगो। एवं चेव मणुसिणीसु। णवरि पुरिस० णवुंस० असंखे०गुणहाणि० णत्थि। मणुसअपज्ज० पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

§ ४१६ अणुदिसादि जाव अवराइद त्ति मिच्छत्त सम्मत्त०-सम्मामि० इत्थि०-

उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात भागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। तीनों संज्वलनोंकी संख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। असंख्यातगुणहानिवाले जीव उतने ही हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात-भागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। लोभसंज्वलनकी संख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यात-भागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। स्त्रीवेदकी असंख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार नपुंसकवेदकी अपेक्षा अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि वृद्धि और हानिका विपर्यास करना चाहिए। पुरुषवेदकी संख्यातगुणवृद्धिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। असंख्यातगुणहानिवाले जीव उतने ही हैं। उनसे अवस्थितविभक्तिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। चार नोकषायोंका भङ्ग मानके समान है। भय और जुगुप्साकी अवस्थित-विभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्तकोंमें अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि जहाँ असंख्यातगुणा है वहाँ संख्यातगुणा करना चाहिए। मात्र स्त्रीवेदका भङ्ग हास्यके समान है। इसीप्रकार मनुष्यिनियोंमें अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी असंख्यातगुणहानि नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भङ्ग है।

§ ४१६. अनुदिशसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व,

णवुंस० णत्थि अप्पाबहुअं। अणंताणु०४ सव्वत्थोवा असंखे०गुणहाणि०। असंखे०-भागहाणि० असंखे०गुणा। बारसक०-पुरुस०-भय-दुगुंछ० सव्वत्थोवा अवट्ठि०। असंखे०भागहाणि० असंखे०गुणा। असंखे०भागवड्ढि० संखे०गुणा। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं ओघं। एवं सव्वट्ठे। णवरि सव्वत्थ संखेज्जगुणं कायव्वं। एवं जाव अणाहारि त्ति णेदव्वं।

तदो अप्पाबहुए समत्ते वड्ढिविहत्ती समत्ता।

पदणिक्खेवविभागं वड्ढिविहत्तिं च किं चि सुत्तादो।
वित्थरियं वित्थरदो सुत्तत्थविसारदो समत्थे दु ॥१॥
सो जयइ जस्स परमो अप्पाबहुअं पि दव्व-पज्जायं।
जाणइ णाणपुरंतो लोयालोएक्कदप्पणओ ॥२॥

❀ जहा उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं तहा संतकम्मट्ठाणाणि।

§ ४१७. सामित्तादिअणियोगद्दारेहि जहा उक्कस्सपदेससंतकम्मं परूविदं तहा पदेससंतकम्मट्ठाणाणि वि परूवेयव्वाणि, विसेसाभावादो। णवरि एत्थ तिण्णि अणियोगद्दाराणि—परूवणा पमाणमप्पाबहुए त्ति। तत्थ परूवणा। सव्वकम्माणं जहण्ण-पदेससंतकम्मट्ठाणप्पहुडि जाव उक्कस्सपदेससंतकम्मट्ठाणं ति ताव कमेण संतवियप्पपरूवणं।

सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका अल्पबहुत्व नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी असंख्यातगुणहानिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी अवस्थितविभक्तिवाले जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे असंख्यातभागहानिवाले जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे असंख्यातभागवृद्धिवाले जीव संख्यातगुणे हैं। हास्य, रति, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान है। इसीप्रकार सर्वार्थसिद्धिमें अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि सर्वत्र संख्यातगुणा करना चाहिए। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त होनेपर वृद्धिविभक्ति समाप्त हुई।

जो सूत्रका अर्थ करनेमें विशारद और समर्थ हैं उन्होंने पदनिक्षेपविभक्ति और वृद्धि-विभक्तिका सूत्रके अनुसार विस्तारसे कुछ व्याख्यान किया है ॥ १ ॥

जिनके ज्ञानरूपी पुरके भीतर लोकालोकरूपी एक उत्कृष्ट दर्पण अल्पबहुत्वको लिए हुए समस्त द्रव्य और पर्यायोंको जानता है वे भगवान् जयवन्त हों ॥ २ ॥

❀ जिस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म है उसप्रकार सत्कर्मस्थान हैं।

§ ४१७. स्वामित्व आदि अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर जिस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका कथन किया है उसप्रकार प्रदेशसत्कर्मस्थानोंका भी कथन करना चाहिए, क्योंकि कोई विशेषता नहीं है। इतनी विशेषता है कि यहाँ पर तीन अनुयोगद्वार हैं—प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व। उनमेंसे सब कर्मोंके जघन्य प्रदेशसत्कर्मस्थानसे लेकर उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मस्थान तक क्रमसे

सा च जहण्णसामित्तविहाणेण परूविदा त्ति ण पुणो परूविज्जदे। अहवा सव्वकम्माणमत्थि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि त्ति संतपरूवणा परूवणा णाम। पमाणं सव्वेसिं कम्माणमणंताणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि त्ति। अप्पाबहुअं जहा उक्कस्सपदेससंतकम्मस्स परूविदं तहा अणूणाहियमेत्थ परूवेयव्वं। णवरि जस्स कम्मस्स पदेसग्गं विसेसाहियं तस्स पदेससंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि, संखेज्जगुणस्स संखेज्जगुणाणि, असंखेज्जगुणस्स असंखेज्जगुणाणि, अणंतगुणस्स अणंतगुणाणि त्ति आलावकओ विसेसो। सेसं सुगमं। एवमेदेसु पदणिक्खेव-वड्ढि-ट्ठाणेसु सवित्थरं परूविदेसु उत्तरपयडिपदेसविहत्ती समत्ता होदि।

एवं पदेसविहत्ती समत्ता।

झीणाझीणचूलिया

झाइय जिणिंदयंदं झाणाणलझीणघाइकम्मंसं।
झीणाझीणहियारं जहोवएसं पयासेमि ॥ १ ॥

* एत्तो झीणमझीणं ति पदस्स विहासा कायव्वा।

§ ४१८. एत्तो उवरि झीणमझीणं ति जं पदं तस्स विहासा कायव्वा त्ति

सत्कर्मके भेदोंका कथन करना प्ररूपणा है। परन्तु वह जघन्य स्वामित्वविधिके साथ कही गई है, इसलिए पुनः इसका कथन नहीं करते। अथवा सब कर्मोंके प्रदेशसत्कर्मस्थान हैं इसलिए सत्कर्मोंकी प्ररूपणा करना प्ररूपणा है। प्रमाण—सब कर्मोंके अनन्त प्रदेशसत्कर्मस्थान हैं। अल्पबहुत्व—जिसप्रकार उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्मका कथन किया है उस प्रकार न्यूनाधिकतासे रहित यहाँ पर कथन करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जिस कर्मका प्रदेशाग्र विशेष अधिक है उसके प्रदेशसत्कर्मस्थान विशेष अधिक हैं, संख्यातगुणेके संख्यातगुणे हैं, असंख्यातगुणेके असंख्यातगुणे हैं और अनन्तगुणेके अनन्तगुणे हैं इसप्रकार कथनकृत विशेषता है। शेष कथन सुगम है। इसप्रकार इन पदनिक्षेप वृद्धि और स्थानोंका विस्तारके साथ कथन करनेपर उत्तरप्रकृति-प्रदेशविभक्ति समाप्त होती है।

इसप्रकार प्रदेशविभक्ति समाप्त हुई।

झीनाझीनचूलिका

जिन जिनेन्द्र चन्द्र या चन्द्रप्रभ जिनेन्द्रने ध्यानरूपी अग्निके द्वारा घातिकर्मों को विध्वस्त कर दिया है उनका ध्यान करके मैं (टीकाकार) झीनाझीन नामक अधिकारको उपदेशानुसार प्रकाशित करता हूँ ॥ १ ॥

* इससे आगे 'झीणमझीणं' इस पदका विवरण करना चाहिये।

§ ४१८. अब तक गाथामें आये हुए 'उक्कस्समणुक्कस्सं' इस पद तकका विवरण किया। अब इससे आगे जो 'झीणमझीणं' पद आया है उसका विवरण करना चाहिए इस प्रकार सूत्रार्थका सम्बन्ध है।

सुत्तत्थसंबंधो। तत्थ का विहासा णाम? सुत्तेण सूचिदत्थस्स विसेसियूण भासा विहासा विवरणं ति वुत्तं होदि। पदेसविहत्तीए सवित्थरं परूविय समत्ताए किमट्ठमेसो अहियारो ओदिण्णो त्ति ण पच्चवट्ठेयं, तिस्से चेव चूलियाभावेणेदस्साहियारस्सब्भुवगमादो। कधमेसो पदेसविहत्तीए चूलिया त्ति वुत्ते वुच्चदे—तत्थ खलु उक्कड्डणाए उक्कस्सपदेससचओ परूविदो ओकड्डणावसेण च खविदकम्मंसियम्मि जहण्णपदेससंचओ। तत्थ य कदमाए ट्ठिदीए ट्ठिदपदेसग्गमुक्कड्डणाए ओकड्डणाए च पाओग्गमप्पाओग्ग वा त्ति ण एरिसो विसेसो सम्ममवहारिओ। तदो तस्स तहाविहसत्तिविरहाविरहलक्खणत्तेण पत्तझीणाझीणववएसस्स ट्ठिदीओ अस्सिदूण परूवणट्ठमेसो अहियारो ओदिण्णो त्ति चूलियाववएसो ण विरुज्झदे।

शंका—सूत्रमें आये हुए 'विभाषा' इस पदका क्या अर्थ है ?

समाधान—सूत्रसे जो अर्थ सूचित होता है उसका विशेष रूपसे विवरण करना विभाषा है यह इस पदका अर्थ है। विभाषाका अर्थ विवरण है यह इसका तात्पर्य है।

यदि कोई ऐसी आशंका करे कि प्रदेशविभक्तिका विस्तारसे कथन हो लिया है, अतः इस अधिकारके कथन करनेकी क्या आवश्यकता है सो उसकी ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि उसीके चूलिका रूपसे यह अधिकार स्वीकार किया गया है।

शंका—यह अधिकार प्रदेशविभक्ति अधिकारका चूलिका है सो कैसे ?

समाधान—प्रदेशविभक्तिका कथन करते समय उत्कर्षणके द्वारा उत्कृष्ट प्रदेशसचयका भी कथन किया है और अपकर्षणके वशसे क्षपित कर्मांशके जघन्य प्रदेशसञ्चयका भी कथन किया है। किन्तु वहाँ इस विशेषताका सम्यक् रीतिसे विचार नहीं किया गया है कि किस स्थितिमें स्थित कर्म उत्कर्षण और अपकर्षणके योग्य हैं तथा किस स्थितिमें स्थित कर्म उत्कर्षण और अपकर्षणके अयोग्य हैं, तथापि इसका विचार किया जाना आवश्यक है अत इसप्रकारकी शक्तिके सद्भाव और असद्भावके कारण झीनाझीन इस संज्ञाको प्राप्त हुए कर्मपरमाणुओंका स्थितियोकी अपेक्षा कथन करनेके लिए यह अधिकार आया है, इसलिए इसे चूलिका कहनेमें कोई विरोध नहीं है।

विशेषार्थ—पूर्वमें प्रदेशविक्तका विस्तारसे विवेचन किया है। तथापि उससे यह ज्ञात न हो सका कि सत्तामें स्थित कर्मपरमाणुओंमेंसे कौनसे कर्मपरमाणु उत्कर्षण, अपकर्षण, संक्रमण और उदयके योग्य हैं और कौनसे कर्मपरमाणु इनके अयोग्य हैं। इसीप्रकार इससे यह भी ज्ञात न हो सका कि इन कर्मपरमाणुओंमेंसे कौनसे कर्मपरमाणु उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त हैं, कौनसे कर्मपरमाणु निषेकस्थिति प्राप्त हैं, कौनसे कर्मपरमाणु अधःनिषेकस्थितिप्राप्त हैं और कौनसे कर्मपरमाणु उदयस्थितिप्राप्त हैं। परन्तु इन सब बातोंका ज्ञान करना आवश्यक है, इसीलिए प्रदेशविभक्तिके चूलिकारूपसे झीनाझीन और स्थितिग ये दो अधिकार आये हैं। चूलिकाका अर्थ है पूर्वमें कहे गये किसी विषयके सम्बन्धमें विशेष वक्तव्य। आशय यह है कि पूर्वमें जिस विषयका वर्णन कर चुकते हैं उसमें बहुतसी ऐसी बातें छूट जाती हैं जिनका कथन करना आवश्यक रहता है या जिनका कथन किये बिना उस विषयकी पूरी जानकारी नहीं हो पाती, इसलिये इन सब बातोंका खुलासा करनेके लिये एक या एकसे अधिक स्वतन्त्र अधिकार रचे जाते हैं जिनका पूर्व

§ ४१९ एत्थ चत्तारि अणियोगद्दाराणि सुत्तसिद्धाणि। तं जहा—समुक्कित्तणा परूवणा सामित्तमप्पाबहुअं चेदि। तत्थ समुक्कित्तणा णाम मोहणीयसव्वपयडीणमोकड्डणादीहि चदुहि झीणाझीणट्ठिदियस्स पदेसग्गस्स अत्थित्तमेत्तपरूवणा। तप्परूवणट्ठमुत्तरपुच्छासुत्तेण अवसरो कीरइ—

* तं जहा।

§ ४२० सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

* अत्थि ओकड्डणादो झीणट्ठिदियं उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं संकमणादो झीणट्ठिदियं उदयादो झीणट्ठिदियं।

§ ४२१ एत्थ ताव सुत्तसंबंधस्स पढममवयवत्थविवरणं कस्सामो। 'अत्थि'सद्दो आदिदीवयभावेण चउण्हं पि सुत्तावयवाणं पादेक्कं संबंधणिज्जो। ओकड्डणा णाम परिणामविसेसेण कम्मपदेसाणं ट्ठिदीए दहरीकरणं। तत्तो झीणा अप्पाओग्गभावेण अवट्ठिदा ट्ठिदी जस्स पदेसग्गस्स तमोकड्डणादो झीणट्ठिदियं

अधिकारसे सम्बन्ध रखता है वे सब अधिकार चूलिका कहलाते हैं। प्रकृतमें प्रदेशविभक्तिका कथन किया जा चुका है किन्तु उसमें ऐसी बहुतसी बातें रह गई हैं जिनका निर्देश करना आवश्यक था। इसकी पूर्तिके लिये झीनाझीन और स्थितिग ये दो चूलिका अधिकार आये हैं।

§ ४१९. इस झीनाझीन नामक चूलिकामें चार अनुयोगद्वार हैं जो आगे कहे जानेवाले सूत्रोंसे ही सिद्ध हैं। वे ये हैं—समुत्कीर्तना, प्ररूपणा स्वामित्व और अल्पबहुत्व। यहां समुत्कीर्तनाका अर्थ है मोहनीयकी सब प्रकृतियोंके उत्कर्षण आदि चारकी अपेक्षा झीनाझीन स्थितिवाले कर्म परमाणुओंके अस्तित्वमात्रका कथन करना। अब इसका कथन करनेके लिये आगेका पृच्छासूत्र कहते हैं—

* जैसे—

§ ४२०. यह पृच्छासूत्र सुगम है।

* अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं, उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं, संक्रमणसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं और उदयसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं। आशय यह है कि ऐसे भी कर्मपरमाणु हैं जिनका अपकर्षण नहीं हो सकता, ऐसे भी कर्मपरमाणु हैं जिनका उत्कर्षण नहीं हो सकता, ऐसे भी कर्मपरमाणु हैं जिनका संक्रमण नहीं हो सकता और ऐसे भी कर्मपरमाणु हैं जो उदयमात्र होनेसे जिनका पुनः उदय नहीं हो सकता।

§ ४२१. यहां अब सबसे पहले इस सूत्रमें जो 'अस्ति' पद आया है उसका खुलासा करते हैं। 'अस्ति' पद आदिदीपक होनेसे वह सूत्रके चारों ही अवयवोंसे सम्बन्ध रखता है, इसलिये उसे प्रत्येक अवयवके साथ जोड़ लेना चाहिये।

ओकड्डणादो झीणट्ठिदियं—परिणामविशेषके कारण कर्मपरमाणुओंकी स्थितिका कम करना अपकर्षण है। जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति अपकर्षणसे झीन अर्थात् अपकर्षणके अयोग्य रूपसे स्थित है वे अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं। यह अवस्था यथायोग्य

सव्वकम्माणमत्थि। अहवा ओकड्डणादो झीणा परिहीणा जा ट्ठिदी तं गच्छदि त्ति ओकड्डणादो झीणट्ठिदियमिदि समासो कायव्वो। एवमुवरि सव्वत्थ। दहरट्ठिदिट्ठिद-पदेसग्गाण ट्ठिदीए परिणामविसेसेण वड्ढावणमुक्कड्डणा णाम। तत्तो झीणा ट्ठिदी जस्स तं पदेसग्गं सव्वपयडीणमत्थि। संकमादो समयाविरोहेण पयपयडिट्ठिदिपदेसाण अण्ण-पयडिसरूवेण परिणमणलक्खणादो झीणा ट्ठिदी जस्स तं पि पदेसग्गमत्थि सव्वेसिं कम्माणं। उदयादो कम्माणं फलप्पदाणलक्खणादो झीणा ट्ठिदी जस्स पदेसग्गस्स तं च सव्वकम्माणमत्थि त्ति। एत्थ सुत्तसमत्तीए 'चेदि'सद्दो किमट्ठ ण पवुत्तो ? ण, सुत्तमेत्तियमेत्तं चेव ण होदि, किंतु अण्णं पि अज्झाहरिज्जमाणमत्थि। तदो तस्स समत्तीए 'चेदि'सद्दो अज्झाहारेयव्वो त्ति जाणावणट्ठं वक्कपरिसमत्तीए अकरणादो। किं तमज्झाहारिज्जमाण सुत्तसेसमिदि चे वुच्चदे—ओकड्डणादो अझीणट्ठिदियं उक्कड्डणादो अझीणट्ठिदिय संकमणादो अझीणट्ठिदिय उदयादो अझीणट्ठिदियं चेदि त्ति। कधमेदमण्णहा झीणाझीणाणं परूवयसुत्तं हवेज्ज। सुत्ते पुण एसो अज्झाहारो सामत्थियलद्धो त्ति ण णिद्दिट्ठो।

सब कर्मोंमे सम्भव है। अथवा 'झीणट्ठिदिय' का संस्कृतरूप 'झीनस्थितिग' भी होता है। इसलिये ऐसा समास करना चाहिए कि जो कर्म परमाणु अपकर्षणसे रहित स्थितिको प्राप्त हैं वे अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं। इसीप्रकार आगे सर्वत्र सब पदोंका दो प्रकारसे कथन करना चाहिये।

उक्कड्डणादो झीणट्ठिदिय—परिणाम विशेषके कारण अल्पस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंकी स्थितिका बढाना उत्कर्षणा है। सब प्रकृतियोंमे ऐसे भी कर्मपरमाणु हैं जिनकी स्थिति उत्कर्षणके अयोग्य है।

संकमणादो झीणट्ठिदिय—जैसा आगममें बतलाया है तदनुसार एक प्रकृतिके स्थितिगत कर्मपरमाणुओंका अन्य सजातीय प्रकृतिरूप परिणमना संक्रमण है। सब कर्मोंमें ऐसे भी कर्मपरमाणु हैं जिनकी स्थिति संक्रमणके अयोग्य है, इसलिये वे संक्रमणसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं।

उदयादो झीणट्ठिदिय—कर्मो का फल देना उदय है। सब कर्मों में ऐसे भी कर्मपरमाणु हैं जिनकी स्थिति उदयके अयोग्य है, इसलिये वे उदयसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं।

शंका—यहाँ सूत्रके अन्तमें 'चेदि' शब्द क्यों नहीं रखा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सूत्र केवल इतना ही नहीं है किन्तु और भी अध्याहार करने योग्य है और तब जाकर उस अध्याहृत वाक्यके अन्तमे 'चेदि' शब्दका अध्याहार करना चाहिये। इसप्रकार यह बात बतलानेके लिए सूत्रवाक्यको समाप्त न करके यों ही छोड़ दिया है।

शंका—सूत्रका वह कौनसा अंश शेष है जो अध्याहार करने योग्य है ?

समाधान—'ओकड्डणादो अझीणट्ठिदिय उक्कड्डणादो अझीणट्ठिदियं संकमणादो अझीणट्ठिदिय उदयादो अझीणट्ठिदिय चेदि' यह वाक्य है जो अध्याहार करने योग्य है।

यदि ऐसा न माना जाय तो यह सूत्र झीनाझीन दोनोंका प्ररूपक कैसे हो सकता है। तथापि इतना अध्याहार सामर्थ्यलभ्य है, इसलिये इसका सूत्रमें निर्देश नहीं किया।

§ ४२२. संपहि समुक्कित्तणाणियोगद्दारेण समुक्कित्तिदाणमेदेसिं सरूवविसयणिण्णयजणणट्ठं परूवणाणियोगद्दारं परूवेमाणो जहा उद्देसो तहा णिद्देसो त्ति णाएण पडिवण्णेव ताव ओकड्डणादो झीणट्ठिदियं सपडिवक्खमासंकामुहेण पत्थावसरं करेदि—

* ओकड्डणादो झीणट्ठिदियं णाम किं ?

§ ४२३. अत्थि ओकड्डणादो झीणट्ठिदियमिदि पुव्वं समुक्कित्तिदं। तत्थ कदममोकड्डणादो झीणट्ठिदियं ? किमविसेसेण सव्वट्ठिदिट्ठिदपदेसग्गमाहो अत्थि को वि विसेसो त्ति एसो एदस्स भावत्थो। एवमासंकिय तव्विसेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

* जं कम्ममुदयावलियब्भंतरे ट्ठियं तमोकड्डणादो झीणट्ठिदियं। जमुदयावलियबाहिरे ट्ठिदं तमोकड्डणादो अज्झीणट्ठिदियं।

विशेषार्थ—झीनाझीन अधिकारका समुत्कीर्तना, प्ररूपणा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व इन चार अनुयोगद्वारोंके द्वारा वर्णन किया गया है। इन चारोंका अर्थ स्पष्ट है। यहाँ सर्वप्रथम समुत्कीर्तनाका निर्देश करते हुए चूर्णिसूत्रकारने यह बतलाया है कि मोहनीयकी सब प्रकृतियोंमें ऐसे बहुतसे कर्मपरमाणु हैं जो यथासम्भव अपकर्षण, उत्कर्षण, संक्रमण और उदयके अयोग्य हैं। तथा बहुतसे ऐसे भी कर्मपरमाणु हैं जो यथासम्भव इनके योग्य भी हैं। यहाँ सूत्रमें यद्यपि सूत्रकारने अपकर्षण आदिके अयोग्य परमाणुओंके होनेकी सूचना की है तथापि इस अधिकारका नाम झीनाझीन होनेसे यह भी सूचित हो जाता है कि बहुतसे ऐसे भी कर्मपरमाणु हैं जो अपकर्षण आदिके योग्य भी हैं। यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४२२. अब समुत्कीर्तना अनुयोगद्वारके द्वारा कहे गये इनके स्वरूप विषयक निर्णयका ज्ञान करानेके लिए प्ररूपणा अनुयोगद्वारका कथन करते हैं। उसमें भी उद्देशके अनुसार निर्देश किया जाता है इस न्यायके अनुसार सर्वप्रथम आशंकासूत्रद्वारा अपने प्रतिपक्षभूत कर्मोंके साथ अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले कर्मोंके कथन करनेकी सूचना करते हैं—

* वे कौनसे कर्मपरमाणु हैं जो अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

§ ४२३. अपकर्षणसे झीन (रहित) स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं यह पहले कह आये हैं। अब इस विषयमें यह प्रश्न है कि वे कौनसे कर्मपरमाणु हैं जो अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं। क्या सामान्यसे सब स्थितियोंमें स्थित कर्मपरमाणु ऐसे हैं या कुछ विशेषता है यह इस सूत्रका भाव है। ऐसी आशंका कर अब उस विशेषताका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

* जो कर्मपरमाणु उदयावलिके भीतर स्थित हैं वे अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं और जो कर्मपरमाणु उदयावलिके बाहर स्थित हैं वे अपकर्षणसे अझीन स्थितिवाले हैं। अर्थात् उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण नहीं होता किन्तु उदयावलिके बाहर स्थित कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण हो सकता है।

§ ४२४. एत्थ जं कम्ममिदि वुत्ते जो कम्मपदेसो त्ति घेत्तव्वं। उदयावलिया त्ति उदयसमयप्पहुडि आवलियमेत्तट्ठिदीणमुत्तावलियायारेण ट्ठिदाणं सण्णा। कुदो? उदयसहस्स उवलक्खणभावेण ठविदत्तादो। तदब्भंतरे ट्ठिदं ज पदेसग्गं तमोकड्डणादो झीणट्ठिदिगं। ण एदस्स ट्ठिदीए ओकड्डणमत्थि त्ति भावत्थो। कुदो? सहावदो। एरिसो एदस्स सहावो त्ति कत्तो णव्वदे? एदम्हादो चेव सुत्तादो। जं पुण उदयावलियबाहिरे ट्ठिद पदेसग्गं तमोकड्डणादो अज्झीणट्ठिदिगमिदि एदेण सुत्तावयवेण उदयावलियबाहिरासेसट्ठिदिट्ठिदपदेसग्गं सव्वमोकड्डणापाओग्गमिदि वुत्तं होदि। एत्थ चोदओ भणदि—उदयावलियबाहिरे वि ओकड्डणादो ज्झीणट्ठिदियमप्पसत्थउवसामणा-णिधत्तीकरण-णिकाचणाकरणेहि अत्थि चेव जाव दसणचरित्तमोहक्खवगुवसामयअपुव्वकरणचरिमसमओ त्ति तदो किं वुच्चदे उदयावलियबाहिरट्ठिदिट्ठिदपदेसग्गमोकड्डणादो अज्झीणट्ठिदियमिदि? एत्थ परिहारो वुच्चदे—जिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गस्स ओकड्डणा अच्चतं ण संभवइ सा ट्ठिदी ओकड्डणादो झीणा वुच्चइ, तिस्से अच्चंताभावेण पडिग्गहियत्तादो। ण च णिकाचिदपरमाणूणमेवंविहो णियमो अत्थि, अपुव्वकरण-

---

§ ४२४. यहाँ सूत्रमें जो 'जं कम्म' ऐसा कहा है सो उससे 'जो कर्मपरमाणु' ऐसा अर्थ लेना चाहिये। जो उदय समयसे लेकर आवलिप्रमाण स्थितियाँ मुक्तावलिके समान स्थित हैं उनकी उदयावलि यह सज्ञा है, क्योंकि ये सब स्थितियाँ उपलक्षणरूपसे उदयप्राप्त स्थितिके साथ स्थापित हैं। इस उदयावलिके भीतर जो कर्मपरमाणु स्थित हैं वे अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं। इस उदयावलिप्रमाण स्थितियोंका अपकर्षण नहीं होता यह इस सूत्रका भाव है।

शंका—उदयावलिप्रमाण स्थितियोंका अपकर्षण क्यों नहीं होता?

समाधान—क्योंकि ऐसा स्वभाव है।

शंका—इसका ऐसा स्वभाव है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है।

किन्तु जो कर्मपरमाणु उदयावलिके बाहर स्थित हैं वे अपकर्षणसे अझीन स्थितिवाले हैं। इसप्रकार सूत्रके इस दूसरे वाक्यद्वारा यह कहा गया है कि उदयावलिके बाहर समस्त स्थितियोंमें स्थित जितने कर्मपरमाणु हैं वे सब अपकर्षणके योग्य हैं।

शंका—यहा पर शकाकार कहता है कि उदयावलिके बाहर भी अप्रशस्त उपशामना, निधत्तीकरण और निकाचनाकरणके सम्बन्धसे ऐसे कर्मपरमाणु बच रहते हैं जो अपकर्षणके अयोग्य हैं। और इनकी यह अयोग्यता दर्शनमोहनीय या चरित्रमोहनीयकी क्षपणा या उपशमना करनेवाले जीवके अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक बनी रहती है, तब फिर यह क्यों कहा जाता है कि उदयावलिके बाहरकी स्थितियोंमें स्थित कर्मपरमाणु अपकर्षणके योग्य हैं।

समाधान—जिस स्थितिके कर्मपरमाणुओंकी अपकर्षणा बिलकुल ही सम्भव नहीं, केवल वही स्थिति यहाँ अपकर्षणाके अयोग्य कही गई है, क्योंकि यहाँ ऐसे कर्मपरमाणुओंकी अपकर्षणाका निषेध किया है जो किसी भी हालतमे सम्भव नहीं है। किन्तु निकाचित आदि अवस्थाको प्राप्त हुए कर्मपरमाणुओका ऐसा नियम तो है नहीं, क्योंकि वे कर्मपरमाणु अपूर्वकरण

चरिमसमयादो उवरि तस्सिमोकड्डणादिपाओग्गभावेण पडिणियदकालपडिबद्धाए ओकड्डणादीणमपाओग्गभावपइण्णाए अणुवलंभादो। एदेण सासणसम्माइट्ठिम्मि दंसणतियस्स उक्कड्डणादीहिंतो झीणट्ठिदियत्तसंभवविप्पडिवत्ती णिराकरिया, तत्थ वि सव्व कालमणागमणपइण्णाए अभावादो। एत्थ मिच्छत्तादिपयडिविसेसणिद्देसं काऊण परूवणा किमट्ठं ण कीरदे? ण, विसेसविवक्खमकाऊण मूलुत्तरपयडीणं साहारण सरूवेण अट्ठपदस्स परूवणादो। ण च सामण्णे परूविदे विसेसा अपरूविदा णाम, तेसिं तत्तो पुधभूदाणमणुवलंभादो। तदो एत्थ पादेक्कं सव्वपयडीणमेसा अट्ठपद परूवणा वित्थररुइसिस्साणुग्गहट्ठं कायव्वा।

के अन्तिम समयके बाद अनिवृत्तिकरणमें अपकर्षण आदिके योग्य हो जाते हैं और तब फिर उनकी अपकर्षण आदिको नहीं प्राप्त होनेकी जो प्रतिनियत काल तककी प्रतिज्ञा है वह भी नहीं रहती।

इस कथनसे सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें दर्शनमोहनीयकी तीन प्रकृतियोंकी स्थितिकी उत्कर्षण आदि सम्भव नहीं होनेसे जो विप्रतिपत्ति उत्पन्न होती है उसका भी निराकरण कर दिया, क्योंकि उनमें भी उत्कर्षण आदिके नहीं होनेकी प्रतिज्ञा सदा नहीं पाई जाती।

शंका—इस सूत्रमें मिथ्यात्व आदि प्रकृतिविशेषका निर्देश करके कथन क्यों नहीं किया गया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि यहाँ विशेष कथनकी विवक्षा न करके जो मूल और उत्तर प्रकृतियोंमें साधारण है ऐसे अर्थपदका निर्देश किया है और सामान्यकी प्ररूपणामें विशेषकी प्ररूपणा अप्ररूपित नहीं रहती, क्योंकि विशेष सामान्यसे पृथक् नहीं पाये जाते। किन्तु जो शिष्य विस्तारसे समझनेकी रुचि रखते हैं उनके उपकारके लिए यही अर्थपद प्ररूपणा सब प्रकृतियोंकी पृथक् पृथक् करनी चाहिये।

विशेषार्थ—यहाँपर यह बतलाया है कि कौन कर्मपरमाणु अपकर्षणके अयोग्य हैं और कौन कर्मपरमाणु अपकर्षणके योग्य हैं। एक ऐसा नियम है कि उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणु सकल करणोंके अयोग्य होते हैं। अर्थात् उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण उत्कर्षण और संक्रमण आदि कुछ भी सम्भव नहीं है, उनका स्वमुख से या परमुखसे केवल उदय ही होता है, इसलिए इस परसे यह निष्कर्ष निकला कि उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणु अपकर्षणके अयोग्य हैं, हाँ उदयावलिके बाहर जो कर्मपरमाणु स्थित हैं उनका अपकर्षण अवश्य हो सकता है। इसीलिए चूर्णिसूत्रकारने अपकर्षणके विषयमें यह नियम बनाया है कि उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणु अपकर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं और उदयावलिके बाहर स्थित कर्मपरमाणु अपकर्षणसे अझीन स्थितिवाले हैं। तब भी यह प्रश्न तो है ही कि उदयावलिके बाहर स्थित सब कर्मपरमाणु अपकर्षणके योग्य ही होते हैं ऐसा एकान्त नियम तो किया नहीं जा सकता क्योंकि उदयावलिके बाहर स्थित जिन कर्मपरमाणुओंकी अप्रशस्त उपशम निधत्तीकरण और निकाचनाकरण ये अवस्थाएँ हैं उनका अपकर्षण नहीं होता। इसीप्रकार सासादन गुणस्थानमें भी दर्शनमोहनीयकी तीनों प्रकृतियोंका अपकर्षण नहीं होता इसलिये चूर्णिसूत्रकारने जो यह कहा है कि उदयावलिके बाहर स्थित कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण हो सकता है सो उसका ऐसा कथन

§ ४२५. संपहि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं सपडिवक्खं परूवयमाणो सुत्तयारो पुच्छासुत्तेण पत्थावमारभेइ—

⊛ उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं णाम किं ?

§ ४२६. एत्थ उक्कड्डणादो अज्झीणट्ठिदियं णाम किमिदि वक्कसेसो कायव्वो। सेसं सुगमं। एव पुच्छिदत्थविसए णिण्णयजणणट्ठमुत्तरसुत्तकलाव भणइ—

⊛ जं ताव उदयावलियपविट्ठं तं ताव उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं।

§ ४२७. कुदो एदस्स उदयावलियपविट्ठस्स उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियत्तं ? सहावदो। को एत्थ सहावो णाम ? अच्चंताभावो। एदमेवमप्पवण्णणिज्जिवादो

करना उचित नहीं है। इस प्रश्नका जो समाधान किया गया है उसका भाव यह है कि जो कर्मपरमाणु अप्रशस्त उपशामना, निधत्तीकरण या निकाचनाकरण अवस्थाको प्राप्त हैं उनकी वह अवस्था सदा नहीं बनी रहती है। किन्तु अनिवृत्तिकरणमें जाकर वह समाप्त हो जाती है और पहले जिनका अपकर्षण नहीं होता रहा अब उनका अपकर्षण होने लगता है। इसी प्रकार सासादनगुणस्थानका काल निकल जानेपर सासादनमें जिनका अपकर्षण नहीं होता रहा उनका तदनन्तर अपकर्षण होने लगता है, इसलिये उदयावलिके बाहर स्थित कर्मपरमाणुओंको निरपवादरूपसे अपकर्षणके अयोग्य कहनेमें कोई आपत्ति नहीं है। यहा पर एक शंका और उठाई गई है कि अपकर्षणके योग्य और अयोग्य कर्मपरमाणुओंका कथन करते समय कर्म विशेषका निर्देश क्यों नहीं किया। अर्थात् यह क्यों नहीं बतलाया कि इस प्रकारकी अवस्था मोहनीयके किन किन कर्मोंमें पैदा होती है। इस शंकाका वीरसेन स्वामीने जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि यहा जो सामान्य नियम बाधा गया है वह निरपवादरूपसे सब कर्मोंमें सम्भव है, इसलिये उसका प्रत्येक कर्मकी अपेक्षासे कथन नहीं किया है। तथापि जो शिष्य विस्तारसे समझना चाहते हैं उनके लिये इसी नियमका प्रत्येक कर्मकी अपेक्षासे कथन करनेमें कोई आपत्ति नहीं है।

§ ४२५ अब चूर्णिसूत्रकार अपने प्रतिपक्षभूत कर्मपरमाणुओंके साथ उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके कथन करनेकी इच्छासे पृच्छासूत्रद्वारा उसके कथन करनेका प्रस्ताव करते हैं—

* वे कौनसे कर्मपरमाणु है जो उत्कर्पणसे झीन स्थितिवाले है।

§ ४२६ इस सूत्रमें 'वे कौनसे कर्मपरमाणु हैं जो उत्कर्पणसे अझीन स्थितिवाले हैं' इतना वाक्य और जोड़ देना चाहिये। शेष कथन सुगम है। इस प्रकार पूछे गये अर्थके विषयमें निर्णय करनेके लिये आगेके सूत्रकलापको कहते हैं—

* जो कर्म उदयावलिके भीतर स्थित हैं वे उत्कर्पणसे झीन स्थितिवाले हैं।

§ ४२७. शंका—जो कर्मपरमाणु उदयावलिके भीतर स्थित हैं वे उत्कर्पणसे झीन स्थितिवाले क्यों हैं ?

समाधान—स्वभावसे।

शंका—यहाँ स्वभावसे क्या अभिप्रेत है ?

समाधान—अत्यन्ताभाव। अर्थात् उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणुओंमें उत्कर्षण

सुगमत्तादो च सिद्धसरूवं पदुप्पिय संपहि उदयावलियबाहिरे वि उक्कड्डणाए अप्पाओग्गपदेसस्स णिदरिसणं परूवेमाणो तदत्थित्ते पइण्णं करेदि—

* उदयावलियबाहिरे वि अत्थि पदेसग्गमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। तस्स णिदरिसणं। तं जहा।

§ ४२८ एदं पुच्छासुत्तं णिदंसणविसयं सुगमं। एवं पुच्छिदे णिरुद्धट्ठिदिपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

* जा समयाहियाए उदयावलियाए ट्ठिदी एदिस्से ट्ठिदीए जं पदेसग्गं तमादिट्ठं।

§ ४२९ एत्थ समयाहियाए उदयावलियाए चरिमसमए ट्ठिदा जा ट्ठिदी णाणासमयपबद्धप्पिया एदिस्से ट्ठिदीए जं पदेसग्गं तमादिट्ठं विवक्खियमिदि सुत्तत्थसंबंधो कायव्वो।

होनेकी योग्यताका अत्यन्त अभाव है।

इसप्रकार यह कथन अल्प होनेसे या सुगम होनेसे इसका सिद्ध रूप पहले बतलाकर अब उदयावलिके बाहर भी उत्कर्षणके अयोग्य कर्मपरमाणुओंको उदाहरण द्वारा दिखलाते हुए पहले उनके अस्तित्वकी प्रतिज्ञा करते हैं—

* उदयावलिके बाहर भी उत्कर्षणसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं। उनका उदाहरण। जैसे—

§ ४२८ यह उदाहरणविषयक पृच्छासूत्र है जो सुगम है। ऐसा पूछनेपर उससे निरुद्ध स्थितिका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

* एक समय अधिक उदयावलिके अन्तमें जो स्थिति स्थित है उस स्थितिके जो कर्मपरमाणु हैं वे यहाँ उदाहरणरूपसे विवक्षित हैं।

§ ४२९ एक समय अधिक उदयावलिके अन्तिम समयमें नाना समयप्रबद्धोंसे सम्बन्ध रखनेवाली जो स्थिति स्थित है और उस स्थितिमें स्थित जो कर्मपरमाणु हैं वे यहाँ आदिष्ट अर्थात् विवक्षित हैं ऐसा इस सूत्रके अर्थका सम्बन्ध करना चाहिए।

विशेषार्थ—*जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति कम है उनकी तत्काल बँधनेवाले कर्मके सम्बन्ध* से स्थितिका बढ़ाना उत्कर्षण है। यह उत्कर्षण उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणुओंका तो होता ही नहीं क्योंकि उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणुओंके स्वमुख या परमुखसे होनेवाले उदयको छोड़कर अन्य कोई अवस्था नहीं होती ऐसा नियम है। इसके साथ उदयावलिके बाहर जो कर्मपरमाणु स्थित हैं उनमें भी बहुतोंका उत्कर्षण नहीं हो सकता। प्रकृतमें यही बतलाया है कि वे कौनसे कर्मपरमाणु हैं जिनका उत्कर्षण नहीं हो सकता। इसके लिए सर्वप्रथम उदयावलिके बाहर प्रथम स्थितिमें स्थित कर्मपरमाणु यहाँ उदाहरणरूपसे लिये गये हैं। उदयावलिके बाहर प्रथम स्थितिमें स्थित उन सब कर्मपरमाणुओंमें यह विवेक करना है कि उनमें ऐसे कौनसे कर्मपरमाणु हैं जिनका उत्कर्षण नहीं हो सकता क्योंकि वे कर्मपरमाणु नाना समयप्रबद्धसम्बन्धी हैं। इसलिए उनमेंसे कुछ कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण हो सकता है और कुछका नहीं।

§ ४३०. एत्थतणपदेसग्गं कम्मट्ठिदियब्भतरे सचिदाणेगसमयपबद्धपडिबद्धमत्थि किं त सव्वमेव उक्कड्डणाए अप्पाओग्गमाहो अत्थि को इ विसेसो त्ति आसंकाणिरायरणट्ठमुत्तरसुत्तमोयरइ—

❀ तस्स पदेसग्गस्स जइ समयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता बद्धस्स तं कम्मं ण सक्का उक्कड्डिदु ।

§ ४३१. तस्स णिरुद्धट्ठिदीए पदेसग्गस्स जइ समयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता बद्धस्स बंधसमयादो पहुडि तं कम्म णो सक्का उक्कड्डिदुं, सत्तिट्ठिदीए तत्तो उवरि एगसमयमेत्तस्स वि अभावादो । ण च उदयसमए ट्ठिदो जीवो उदयावलियबाहिराणंतरट्ठिदिपदेसग्गमुव्वरिदतेत्तियमेत्तकम्मट्ठिदियमुक्कड्डिदुं समत्थो, उक्कड्डणापाओग्गभावस्स कम्मट्ठिदिपरिहाणीए विणट्ठत्तादो । तदो एदमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियमिदि एसो सुत्तस्स भावत्थो ।

§ ४३० इस पूर्वोक्त स्थितिके कर्मपरमाणु कर्मस्थितिके भीतर सञ्चित हुए अनेक समयप्रबद्धसम्बन्धी हैं सो क्या वे सबके सब उत्कर्षणके अयोग्य हैं या इनमें कोई विशेषता है ? इस प्रकार इस आशकाके निराकरण करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

* किन्तु उन कर्म परमाणुओंकी बन्ध समयसे लेकर यदि एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून सब कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है तो उन कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण नहीं हो सकता ।

§ ४३१ पहले उदाहरणरूपसे जिस स्थितिका निर्देश किया है उसके उन कर्मपरमाणुओंकी बद्धस्स अर्थात् बन्धके समयसे लेकर यदि एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून शेष सब कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है तो उन कर्म परमाणुओंका उत्कर्षण नहीं हो सकता, क्योंकि उनकी उस स्थितिसे अधिक एक समयमात्र भी शक्तिस्थिति नहीं पाई जाती। और उदय समयमें स्थित हुआ जीव उदयावलिके बाहर अनन्तर समयवर्ती स्थितिके ऐसे कर्म परमाणुओंका, जिनकी कर्मस्थिति उतनी ही अर्थात् एक समय अधिक उदयावलि प्रमाण ही शेष रही है, उत्कर्षण करनेमें समर्थ नहीं हो सकता, क्योंकि कर्मस्थितिकी हानि हो जानेसे उन कर्म परमाणुओंके उत्कर्षणकी योग्यता ही नष्ट हो गई है. इसलिये ये कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं यह इस सूत्रका भावार्थ है ।

विशेषार्थ—यह तो पहले ही बतला आये हैं कि उत्कर्षण सब कर्म परमाणुओंका न होकर कुछका होता है और कुछका नहीं होता। जिनका नहीं होता उनका सक्षेपमें ब्योरा इस प्रकार है—

१—उदयावलिके भीतर स्थित कर्म परमाणुओंका उत्कर्षण नहीं होता ।

२—उदयावलिके बाहर भी सत्तामें स्थित जिन कर्मपरमाणुओंकी कर्मस्थिति उत्कर्षणके समय बँधनेवाले कर्मों की आबाधाके बराबर या इससे कम शेष रही है उनका भी उत्कर्षण नहीं होता ।

३ – निर्व्याघात दशामें उत्कर्षणको प्राप्त होनेवाले कर्म परमाणुओंकी अतिस्थापना कमसे

§ ४३२ तिस्से चेव णिरुद्धट्ठिदीए अण्णं पि पदेसग्गमोकड्डणादो परिहीणट्ठिदियमत्थि त्ति पदुप्पायणट्ठमुवरिमसुत्तमोइण्णं—

*** तस्सेव पदेसग्गस्स जइ वि दुसमयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं।**

§ ४३३ सुगमं। किमट्ठमेदिस्से उवरिमाणंतरट्ठिदीए ण उक्कड्डिज्जइ त पदेसग्गं? ण, जहण्णाबाहादो हेट्ठा अइच्छावणाए अभावादो। ण च आबाहाए अब्भंतरे उक्कड्डणस्स संभवो, 'बंधे उक्कड्डदि' त्ति वयणादो। ण हि अहिणवबज्झमाणपरमाणू आबाहाए अब्भंतरे अत्थि, विरोहादो।

कम एक आवलिप्रमाण बच जाती है, इसलिये अतिस्थापनारूप द्रव्यमें उत्कर्षित द्रव्यका निक्षेप नहीं होता।

४—व्याघात दशामें कमसे कम आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण अतिस्थापना और इतना ही निक्षेप प्राप्त होनेपर उत्कर्षण होता है, अन्यथा नहीं होता।

जहाँ अतिस्थापना एक आवलि और निक्षेप आवलिका असंख्यातवाँ भाग आदि बन जाता है वहाँ निर्व्याघात दशा होती है और जहाँ अतिस्थापनाके एक आवलिप्रमाण होनेमें बाधा आती है वहाँ व्याघात दशा होती है। जब प्राचीन सत्तामें स्थित कर्म परमाणुओंकी स्थितिसे नूतन बन्ध अधिक हो पर इस अधिकका प्रमाण एक आवलि और एक आवलिके असंख्यातवें भागके भीतर ही प्राप्त हो तब यह व्याघात दशा होती है। इसके सिवा उत्कर्षणमें सर्वत्र निर्व्याघात दशा ही जाननी चाहिये।

प्रकृतमें जिन कर्मपरमाणुओंके उत्कर्षणका निषेध किया है उनसे सम्बन्ध रखनेवाले समयप्रबद्धकी कर्मस्थिति केवल एक समय अधिक एक आवलिमात्र ही शेष रही है, इसलिये इनका नियम नम्बर दो के अनुसार उत्कर्षण नहीं हो सकता, क्योंकि यहाँ जिन कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण विवक्षित है उनका कर्मपरमाणुओंसे सम्बन्ध रखनेवाले समयप्रबद्धकी कर्मस्थिति इतनी ही शेष रही है, इसलिये इन कर्मपरमाणुओंमें शक्तिस्थितिका सर्वथा अभाव होनेसे उनका उत्कर्षण नहीं हो सकता।

§ ४३२. इसी विवक्षित स्थितिके अन्य कर्म परमाणु भी उत्कर्षणके अयोग्य हैं, अब इस बातका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र आया है—

*** उन्हीं कर्मपरमाणुओंकी यदि दो समय अधिक एक आवलिसे न्यून शेष कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है तो वे कर्मपरमाणु भी उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।**

§ ४३३. यह सूत्र सुगम है।

शंका—अपनेसे ऊपरकी अनन्तरवर्ती एक स्थितिमें इन कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण क्यों नहीं होता?

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँ जघन्य आबाधाप्रमाण अतिस्थापना नहीं पाई जाती और आबाधाके भीतर उत्कर्षण हो नहीं सकता, क्योंकि 'बन्धके समय ही उत्कर्षण होता है' ऐसा आगमवचन है। यदि कहा जाय कि नूतन बँधनेवाले कर्म परमाणु आबाधाके भीतर पाये जाते हैं सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है।

✽ एवं गंतूण जदि वि जहण्णियाए आबाहाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं ।

§ ४३४. एवं तिसमयाहियावलियादिपरिहीणकम्मट्ठिदिं समाणिय ट्ठिदिपदेसग्गाणमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियत्तं वत्तव्वं, अइच्छावणाए पडिवुण्णत्ताभावेण णिक्खेवस्स च अच्चंताभावेण पुव्विल्लादो विसेसाभावा। 'एवं गंतूण जइ वि जहण्णियाए० झीणट्ठिदिगं' इदि एत्थ चरिमवियप्पे जइ वि अइच्छावणा संपुण्णा तो वि णिक्खेवाभावेण झीणट्ठिदियत्तं पडिवज्जेयव्वं । सेसं सुगमं ।

विशेषार्थ—पहले यह बतलाया गया है कि जिन कर्मपरमाणुओंकी कर्मस्थिति उदयावलि से केवल एक समय अधिक शेष है उनका उत्कर्षण नहीं होता । तब यह प्रश्न हुआ कि जिस समयप्रबद्धकी कर्मस्थिति दो समय अधिक एक आवलिप्रमाण शेष है उसी समयप्रबद्धके एक समय अधिक उदयावलिके अन्तिम समयमें स्थित कर्मपरमाणुओंका अनन्तरवर्ती उपरितन स्थितिमें उत्कर्षण होता है क्या ? इसी प्रश्नका उत्तर देते हुए यहां यह बतलाया गया है कि तब भी उत्कर्षण सम्भव नहीं है। इसका यहां पर जो कारण बतलाया है उसका आशय यह है कि उत्कर्षण बन्धके समय ही होता है। फिर भी उत्कर्षित द्रव्यका निक्षेप अतिस्थापना प्रमाण स्थितिको छोड़कर ऊपरकी स्थितिमें ही होता है और प्रकृतमें अतिस्थापना जघन्य आबाधासे कम तो हो ही नहीं सकती, क्योंकि आबाधाकालके भीतर नवीन बधे हुए कर्मोंकी निषेक रचना न होनेसे आबाधाकालके भीतर उत्कर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यका निक्षेप ही सम्भव नहीं है। यह माना कि आबाधाकालके भीतर सत्तामें स्थित कर्मोंकी निषेक रचना पाई जाती है, किन्तु 'बन्धके समय ही उत्कर्षण होता है' ऐसा कथन करनेसे यह निष्कर्ष निकलता है कि उत्कर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यका निक्षेप तत्काल बँधनेवाले कर्मके निषेकों में ही होता है। पर यह निषेक रचना आबाधाकालके भीतर नहीं पाई जाती, इसलिये आबाधा निक्षेपके अयोग्य है यह सिद्ध होता है। इस प्रकार उदयावलिके अनन्तर समयवर्ती कर्म परमाणुओंका उदयावलिके अनन्तर द्वितीय समयवर्ती स्थितिमें निक्षेप नहीं हो सकता यह सिद्ध होता है और यही प्रकृत सूत्रका आशय है ।

✽ इस प्रकार जाकर यद्यपि विवक्षित कर्म परमाणुओंकी जघन्य आबाधासे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है तो भी वे कर्म परमाणु उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले होते हैं ।

§ ४३४. तीन समय अधिक एक आवलिसे न्यून शेष सब कर्मस्थितिको समाप्त करके स्थित हुए कर्म परमाणु भी उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले होते हैं ऐसा यहाँ कथन करना चाहिये, क्योंकि अतिस्थापना पूरी न होनेसे और निक्षेपका अत्यन्त अभाव होनेसे पूर्व सूत्रके कथनसे इसमें कोई विशेषता नहीं है। 'इस प्रकार जाकर यद्यपि जघन्य आबाधासे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है तो भी वे कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले होते हैं' इस प्रकार इस अन्तिम विकल्पमें यद्यपि अतिस्थापना पूरी है तो भी निक्षेपका अभाव होनेसे (एक समय अधिक एक आवलिके अन्तिम समयवर्ती कर्म परमाणुओंका) उत्कर्षणसे झीन स्थितिपना जानना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

विशेषार्थ—पहले उदाहरणरूपसे जो एक समय अधिक उदयावलिके अन्तिम समयमें

§ ४३५ संपहि अज्झीणट्ठिदियस्स उक्कड्डणापाओग्गस्स तस्सेव णिरुद्धट्ठिदिपदेसग्गस्स परूवणट्ठमुवरिमसुत्तमागयं—

❀ समयुत्तराए उदयावलियाए तिस्से ट्ठिदीए जं पदेसग्गं तस्स पदेसग्गस्स जइ जहण्णियाए आबाहाए समयुत्तराए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पदेसग्गं सक्का आबाधामेत्तमुक्कड्डिदुमेक्किस्से ट्ठिदीए णिसिंचिदुं ।

§ ४३६ गयत्थमेदं, सुगमासेसावयवत्तादो । णवरि आबाधामेत्तमुक्कड्डिदुमिदि एत्थ उक्कड्डियूण त्ति घेत्तव्वं । अहवा, आबाहामेत्तमुक्कड्डिदुमेक्किस्से ट्ठिदीए णिसिंचिदुं चेदि संबंधो कायव्वो । ण सद्देण विणा वि समुच्चयट्ठावगमादो । एदस्स सुत्तस्स भावत्थो—पुव्वणिरुद्धट्ठिदीए पदेसग्गस्स बंधसमयादो पहुडि जइ जहण्णाबाहाए समयाहियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी वदिक्कंता होज्ज तो तं पदेसग्गं जहण्णाबाहामेत्तमुक्कड्डिय उवरिमाणंतराए एक्किस्से ट्ठिदीए णिसिंचिदुं सक्का, तप्पाओग्गजहण्णाइ

स्थित कर्म परमाणु बतलाये हैं सो उनका उत्कर्षण कब तक नहीं हो सकता यह इस सूत्रमें बतलाया है। यदि तीन समय अधिक उदयावलिप्रमाण स्थिति शेष हो और बाकीकी स्थिति गल गई हो तो भी एक समय अधिक उदयावलिके अन्तिम समयवर्ती उन कर्म परमाणुओंका शेष रही स्थितिमें उत्कर्षण नहीं होता क्योंकि यहाँ अतिस्थापनाका प्रमाण जो जघन्य आबाधा बतलाया है वह अभी पूरा नहीं हुआ है और निक्षेपका अभाव तो बना हुआ ही है। इसी प्रकार चार समय अधिक, पाँच समय अधिक उदयावलिप्रमाण स्थितिसे लेकर आबाधाप्रमाण प्रमाण स्थितिके शेष रहने पर भी उन कर्म परमाणुओंका उत्कर्षण नहीं होता क्योंकि यहाँ अन्तिम विकल्पके सिवा और सब विकल्पोंमें अतिस्थापना तो पूरी हुई नहीं और निक्षेपका अभाव तो सर्वत्र ही बना हुआ है।

§ ४३५ अब उसी स्थितिके जो कर्म परमाणु उत्कर्षणसे अझीन स्थितिवाले अर्थात् उत्कर्षणके योग्य हैं उनका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र आया है—

❀ एक समय अधिक उदयावलिप्रमाण उसी स्थितिके ऐसे कर्म परमाणु जो जिनकी यदि एक समय अधिक जघन्य अबाधासे न्यून शेष कर्मस्थिति गली है तो उन कर्म परमाणुओंका जघन्य आबाधाप्रमाण उत्कर्षण और आबाधासे ऊपर की एक स्थितिमें निक्षेप ये दोनों बातें शक्य हैं।

§ ४३६ इस सूत्रका अर्थ गतार्थप्राय है, क्योंकि इसके सब अवयवोंका अर्थ सुगम है। किन्तु इतनी विशेषता है कि 'आबाधामेत्तमुक्कड्डिदुं' इस वाक्यमें स्थित 'उक्कड्डिदुं' का अर्थ 'उत्कर्षण करके' करना चाहिये। अथवा 'आबाधाप्रमाण उत्कर्षण करनेके लिये और एक स्थिति में निक्षेप करनेके लिये शक्य है' ऐसा सम्बन्ध कर लेना चाहिये, क्योंकि यद्यपि वाक्य में 'च' पद नहीं दिया है तो भी समुच्चयरूप अर्थका ज्ञान हो जाता है। इस सूत्र का यह भावार्थ है कि पहले पदादरूपसे निर्दिष्ट की गई स्थितिके कर्मपरमाणुओंकी यदि बन्ध समयसे लेकर एक समय अधिक जघन्य आबाधासे न्यून शेष कर्मस्थिति व्यतीत हो गई हो तो उन कर्मपरमाणुओं का जघन्य आबाधाप्रमाण उत्कर्षण होकर उसके ऊपर अनन्तर समयवर्ती एक स्थितिमें निक्षेप

मइच्छावणाणिक्खेवाणमेत्थुवलंभादो। तदो एदमुक्कड्डणादो अज्झीणट्ठिदियमिदि उवरि सव्वत्थ उक्कड्डणापडिसेहो णत्थि त्ति जाणावणट्ठं तव्विसयमाहप्पमुत्तरसुत्तेण भणइ—

❀ जइ दुसमयाहियाए आवाहाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तिसमयाहियाए वा आवाहाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता। एवं गंतूण वासेण वा वासपुधत्तेण वा सागरोवमेण वा सागरोवमपुधत्तेण वा ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं सव्वं पदेसग्गं उक्कड्डणादो अज्झीणट्ठिदियं।

§ ४३७. एदस्स सुत्तस्स सुगमासेसावयवकलावस्स भावत्थो—पुव्वणिरुद्धाए समयाहियउदयावलियचरिमट्ठिदीए पदेसग्गस्स बंधसमयप्पहुडि वोलाविय समयाहिय-जहण्णाबाहादिउवरिमासेससुत्तुत्तवियप्पपरिहीणकम्मट्ठिदियस्स णत्थि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियत्त। सव्वमेव तमुक्कड्डणापाओग्गमिदि सव्वस्स वि एदस्स समयाविरोहेण उक्कड्डिज्जमाणयस्स आवाहमेत्ती अइच्छावणा। णिक्खेवो पुण समयुत्तरादिकमेण वड्डमाणो गच्छदि जाव उक्कस्साबाहाए समयाहियावलियाए च ऊणसत्तरिसागरोवमकोडाकोडीओ त्ति। एत्थ सागरोवमपुधत्तेण वा त्ति एदेण वा सद्देण अवुत्तसमुच्चयट्ठेण सागरोवम-दसपुधत्तेण वा सदपुधत्तेण वा सहस्सपुधत्तेण वा लक्खपुधत्तेण वा कोडिपुधत्तेण वा अंतोकोडाकोडीए वा कोडाकोडिपुधत्तेण वा त्ति एदे संभविणो वियप्पा घेत्तव्वा।

होना शक्य है, क्योंकि यहाँ तद्योग्य जघन्य अतिस्थापना और निक्षेप ये दोनो पाये जाते हैं, इसलिये ये कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे अझीन स्थितिवाले हैं। अब आगे सर्वत्र उत्कर्षणका निषेध नहीं है यह जतानेके लिये अगले सूत्रद्वारा उस विषयका माहात्म्य बतलाते हैं—

❀ तथा उसी पूर्वोक्त स्थितिकी यदि दो समय अधिक आवाधासे न्यून कर्मस्थिति गली है या तीन समय अधिक आवाधासे न्यून कर्मस्थिति गली है। इसी प्रकार आगे जाकर यदि एक वर्ष, वर्षपृथक्त्व, एक सागर या सागर पृथक्त्वसे न्यून शेष कर्मस्थिति गली है तो वे सब कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे अझीन स्थितिवाले होते हैं।

§ ४३७ इस सूत्रके सब पद यद्यपि सुगम हैं तथापि उसका भावार्थ यह है कि पूर्व निर्दिष्ट एक समय अधिक उदयावलिके अन्तिम समयमें स्थित स्थितिके कर्मपरमाणुओंकी जिसने बन्ध समयसे लेकर एक समय अधिक जघन्य आवाधा आदि आगेकी सूत्रोक्त सब स्थिति-विकल्पोंसे न्यून कर्मस्थितिको गला दिया है उसके वे कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले नहीं होते अर्थात् उसके वे कर्मपरमाणु उत्कर्षणके योग्य होते हैं, इसलिये इन सभी कर्मपरमाणुओं का यथाशास्त्र उत्कर्षण होता है। और तब अतिस्थापना आवाधाप्रमाण होती है। किन्तु निक्षेप एक समयसे लेकर उत्तरोत्तर एक एक समय बढता हुआ उत्कृष्ट आवाधा और एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरके प्राप्त होने तक बढता जाता है। इस सूत्रमें 'सागरोवमपुधत्तेण वा' यहा पर आया हुआ 'वा' शब्द अनुक्त विकल्पोंके समुच्चयके लिये है जिससे दस सागरपृथक्त्व, सौ सागर पृथक्त्व, हजार सागर पृथक्त्व, लाख सागर पृथक्त्व, कोड़ी सागर पृथक्त्व, अन्तःकोडाकोड़ी सागर और कोड़ाकोड़ी सागर पृथक्त्व ये सब सम्भव

सुगमवियप्पाणं देसामासयभावेण वा एदेसिं संगहो कायव्वो ।

विकल्प ग्रहण करने चाहिए या सूत्रोक्त विकल्प देशामर्षक होनेसे इन विकल्पोंका संग्रह करना चाहिए।

विशेषार्थ—पहले यह बतलाया जा चुका है कि एक समय अधिक उदयावलिके अन्तिम समयमें स्थित कौनसे कर्मपरमाणु उत्कर्षणके अयोग्य हैं। अब पिछले दो सूत्रोंमें यह बतलाया गया है कि कौनसे कर्मपरमाणु उत्कर्षणके योग्य हैं। इसका खुलासा करते हुए जो बतलाया गया है उसका भाव यह है कि उस एक समय अधिक उदयावलिके अन्तिम समयमें स्थित जिन कर्मपरमाणुओंसम्बन्धी समयप्रबद्धोंकी स्थिति यदि आबाधासे एक समय आदिके क्रम से अधिक शेष रहती है तो उन कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण हो सकता है और ऐसा होते हुए जितनी आबाधा होती है उतना अतिस्थापनाका प्रमाण होता है तथा आबाधासे जितनी अधिक स्थिति होती है उतना निक्षेपका प्रमाण होता है। यदि आबाधासे एक समय अधिक होती है तो निक्षेपका प्रमाण एक समय होता है। यदि दो समय अधिक होती है तो निक्षेपका प्रमाण दो समय होता है। इसी प्रकार तीन समय, चार समय, संख्यात समय असंख्यात समय, एक दिन, एक मास, एक वर्ष, वर्षपृथक्त्व एक सागर, सागर पृथक्त्व, दस सागर पृथक्त्व सौ सागर पृथक्त्व, हजार सागर पृथक्त्व, लाख सागर पृथक्त्व करोड़ सागर पृथक्त्व अन्तः कोड़ाकोड़ी सागर, कोड़ाकोड़ीसागर पृथक्त्वरूप जितनी स्थिति शेष रहती है उतना निक्षेपका प्रमाण होता है। इस प्रकार यदि उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण प्राप्त किया जाता है तो वह उत्कृष्ट आबाधा और एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण प्राप्त होता है। यह उत्कृष्ट निक्षेप एक समय अधिक बन्धावलिको गलाकर उदयावलिकी उपरितन स्थितिमें स्थित कर्म परमाणुओंका उत्कर्षण करने पर प्राप्त होता है। परन्तु उस उदयावलिकी उपरितन स्थितिमें अनेक समयप्रबद्धोंके परमाणु होते हैं, इसलिये किन परमाणुओंका उत्कर्षण करने पर यह उत्कृष्ट निक्षेप प्राप्त होता है इसका खुलासा करते हैं—

किसी एक संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीवने मोहनीय कर्मका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध किया। फिर बन्धावलिको गलाकर उसने आबाधाके बाहर स्थितिमें स्थित कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण करके उदयावलिके बाहर निक्षेप किया। यहाँ उदयावलिके बाहर द्वितीय समयवर्ती स्थितिमें अपकर्षण करके निक्षिप्त किया गया द्रव्य विवक्षित है, क्योंकि उदयावलिके बाहर प्रथम समयमें निक्षिप्त द्रव्यका तदनन्तर समय में उदयावलिके भीतर प्रवेश हो जाता है, इसलिये उसका उत्कर्षण नहीं हो सकता। अनन्तर दूसरे समयमें उत्कृष्ट संक्लेशके वशसे उत्कृष्ट स्थितिको बाँधता हुआ विवक्षित कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण करके उन्हें यह आबाधाके बाहर प्रथम निषेकस्थितिसे लेकर सब निषेक स्थितियोंमें निक्षेप करता है। केवल एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण अन्तिम स्थितियोंमें निक्षेप नहीं करता क्योंकि उनमें निक्षेप करने योग्य उन कर्म परमाणुओंकी शक्तिस्थिति नहीं पाई जाती। यहाँ उत्कृष्ट आबाधाके भीतर निक्षेप नहीं है और अन्तकी एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थितियोंमें निक्षेप नहीं है, इसलिये उत्कृष्ट स्थितिमेंसे इतना कम कर देने पर निक्षेपका प्रमाण उत्कृष्ट आबाधा और एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून उत्कृष्ट स्थिति-प्रमाण प्राप्त होता है।

अब यहाँ प्रकरणसे उत्कर्षणका काल, अतिस्थापना निक्षेप और शक्तिस्थिति इन चार बातोंका भी खुलासा किया जाता है, क्योंकि इनको जाने बिना उत्कर्षणका ठीक तरहसे ज्ञान नहीं हो सकता।

§ ४३८ संपहि उदयट्ठिदीदो हेट्ठिमासेसकम्मट्ठिदिसचिदसमयपबद्धपदेसग्गस्स अहियारट्ठिदीए अविसेसेण सभवविसयासंकाणिरायरणदुवारेण अवत्थुवियप्पाणं णवकवंधमस्सियूण परूवणट्ठमुत्तरसुत्ताणमवयारो। ण च एदेसिं परूवणा णिरत्थिया, तप्पदुप्पायणमुहेण उक्कड्डणाविसए सिस्साण णिण्णयजणणेण एदिस्से फलोवलंभादो।

---

१ उत्कर्षणका काल—उत्कर्षण बन्धके समय ही होता है। अर्थात् जब जिस कर्मका बन्ध हो रहा हो तभी उस कर्मके सत्तामें स्थित कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण हो सकता है, अन्यका नहीं। उदाहरणार्थ—यदि कोई जीव साता प्रकृतिका बन्ध कर रहा है तो उस समय सत्तामें स्थित साता प्रकृतिके कर्मपरमाणुओंका ही उत्कर्षण होगा असाताके कर्म परमाणुओं-ा नहीं।

२ अतिस्थापना—कर्म परमाणुओंका उत्कर्षण होते समय उनका अपनेसे ऊपरकी जितनी स्थितिमें निक्षेप नहीं होता वह अतिस्थापनारूप स्थिति कहलाती है। अव्याघात दशामें जघन्य अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण और उत्कृष्ट अतिस्थापना उत्कृष्ट आवाधाप्रमाण होती है। किन्तु व्याघात दशामें जघन्य अतिस्थापना आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण और उत्कृष्ट अतिस्थापना एक समय कम एक आवलिप्रमाण होती है।

३ निक्षेप—उत्कर्षण होकर कर्मपरमाणुओंका जिन स्थितिविकल्पोंमें पतन होता है उनकी निक्षेप सज्ञा है। अव्याघात दशामें जघन्य निक्षेपका प्रमाण एक समय और उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण उत्कृष्ट आवाधा और एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है। तथा व्याघात दशामें जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेपका प्रमाण आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण है।

४ शक्तिस्थिति—बन्धके समय उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होने पर अन्तिम निषेककी सबकी सब व्यक्तस्थिति होती है। आशय यह है कि अन्तिम निषेककी एक समयमात्र भी शक्ति-स्थिति नहीं पाई जाती। तथा इससे उपान्त्य निषेककी एक समयमात्र शक्तिस्थिति होती है और शेष स्थिति व्यक्त रहती है। इस प्रकार उत्तरोत्तर एक-एक निषेक नीचे जाने पर शक्तिस्थिति-का एक एक समय बढता जाता है और व्यक्तस्थितिका एक एक समय घटता जाता है। इस क्रमसे प्रथम निषेककी शक्तिस्थिति और व्यक्तस्थितिका विचार करने पर व्यक्तस्थिति एक समय अधिक उत्कृष्ट आवाधाप्रमाण प्राप्त होती है और इस व्यक्तिस्थितिको पूरी स्थितिमेंसे घटा देने पर जितनी स्थिति शेष रहे उतनी शक्तिस्थिति प्राप्त होती है। यह तो बन्धके समय जैसी निषेक रचना होती है उसके अनुसार विचार हुआ। किन्तु अपकर्षणसे इसमें कुछ विशेषता आ जाती हैं। बात यह है कि अपकर्षण द्वारा जिस निषेककी जितनी व्यक्तस्थिति घट जाती है उसकी उतनी शक्तिस्थिति बढ़ जाती है। यह उत्कृष्ट स्थितिबन्धकी अपेक्षा शक्तिस्थिति और व्यक्त-स्थितिका विचार है। उत्कृष्ट स्थितिबन्ध न होने पर जितना स्थितिबन्ध कम हो उतनी अन्तिम निषेककी शक्तिस्थिति होती है और शेष निषेकोंकी इसीके अनुसार शक्तिस्थिति बढती जाती है।

§ ४३८ अब उदयस्थितिसे नीचेकी सब कर्मस्थितियोंमें सचित हुए समयप्रबद्धों सम्बन्धी कर्म परमाणुओंके अधिकृत स्थितिमें सामान्यसे सम्भव होनेरूप आशकाके निराकरण-द्वारा नवकबन्धकी अपेक्षा अवस्तु विकल्पोंका कथन करनेके लिये आगेके सूत्र आये हैं। यदि कहा जाय कि इन विकल्पोंका कथन करना निरर्थक है सो भी बात नहीं है, क्योंकि इनके कथन करनेका यही फल है कि इससे शिष्योंको उत्कर्षणके विषयमें ठीक ठीक निर्णय करनेका अवसर मिलता है।

* समयाहियाए उदयावलियाए तिस्से चेव ट्ठिदीए पदेसग्गस्स एगो समओ पबद्धस्स अइच्छिदो त्ति अवत्थु, दो समया पबद्धस्स अइच्छिदा त्ति अवत्थु, तिण्णि समया पबद्धस्स अइच्छिदा त्ति अवत्थु, एवं णिरंतरं गंतूण आवलिया पबद्धस्स अइच्छिदा त्ति अवत्थु।

§ ४२६ जा पुव्वमाइट्ठा समयाहियाए उदयावलियाए चरिमट्ठिदी तिस्से चेव ट्ठिदीए पदेसग्गस्स पबद्धस्स पारद्धबंधस्स बंधसमयप्पहुडि एगो समओ अइच्छिदो त्ति अइक्कंतो त्ति अवत्थु। तं पदेसग्गमेदिस्से ट्ठिदीए णत्थि। कुदो? आबाहामेत्तमुवरि गंतूण तस्सावट्ठाणादो। एवं सव्वत्थ वत्तव्वं। अहवा जा समयाहियाए उदयावलियाए ट्ठिदी एदिस्से ट्ठिदीए जं पदेसग्गं अभाविदमिदि पुव्वं परूविदं। तिस्से च ट्ठिदीए उवरिमट्ठिदीदो हेट्ठिमासेससमयपबद्धाणं पदेसग्गमत्थि आहो णत्थि सव्वं वा किमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियमझीणट्ठिदियं वा उक्कड्डिज्जमाणं वा केत्तियमद्धाणं मुक्कड्डिज्जइ को वा पदेसस्स अइच्छावणा णिक्खेवो वा त्ति ण एसो विसेसो सम्ममवहारिओ तदो तप्परूवणट्ठमेदेसिं सुत्ताणमवयारो त्ति वक्खाणेयव्वं।

---

* एक समय अधिक उदयावलिकी जो अन्तिम स्थिति है उसमें वे कर्म परमाणु नहीं हैं जिन्हें बांधनेके बाद एक समय व्यतीत हुआ है, वे कर्मपरमाणु भी नहीं हैं जिन्हें बांधनेके बाद दो समय व्यतीत हुए हैं, वे कर्म परमाणु भी नहीं हैं जिन्हें बांधनेके बाद तीन समय व्यतीत हुए हैं। इस प्रकार निरन्तर जाकर ऐसे कर्मपरमाणु भी नहीं हैं जिन्हें बांधनेके बाद एक आवलि व्यतीत हुई है।

§ ४२६ जिन कर्मपरमाणुओंका बन्धके बाद अर्थात् बन्धसमयसे लेकर एक समय व्यतीत हुआ है वे कर्मपरमाणु पूर्वमें जो एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थिति कह आये हैं उसमें अवस्तु हैं। अर्थात् वे कर्मपरमाणु उस स्थितिमें नहीं पाये जाते क्योंकि आबाधाके बाद उनका सद्भाव पाया जाता है। इसी प्रकार सर्वत्र कथन करना चाहिये। अथवा यहाँ यह व्याख्यान करना चाहिये कि एक समय अधिक उदयावलिकी जो अन्तिम स्थिति है और इसके जो कर्म परमाणु हैं वे यहाँ विवक्षित हैं ऐसा जो पहले कहा है सो उस स्थितिमें उपर स्थितिसे नीचेके अर्थात् पूर्वके सब समयप्रबद्धोंके कर्मपरमाणु हैं या नहीं हैं। यदि हैं तो वे क्या उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं या अझीन स्थितिवाले हैं। यदि उत्कर्षण होता है तो कितना उत्कर्षण होता है। तथा इनका अतिस्थापना और निक्षेप कितना है। इस प्रकार यह सब विशेषता अच्छी प्रकारसे ज्ञात नहीं हुई, इसलिए इस विशेषताका कथन करनेके लिये इन सूत्रोंका अवतार हुआ है ऐसा यहाँ व्याख्यान करना चाहिए।

विशेषार्थ—प्रकृत सूत्रमें यह बतलाया है कि एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिमें किन समयप्रबद्धोंके कर्म परमाणु नहीं पाये जाते। ऐसा नियम है कि बंधे हुए कर्म अपने बन्धकालसे लेकर एक आवलिप्रमाण कालतक तदवस्थ रहते हैं। एक यह भी नियम है कि बंधने-वाले कर्मोंकी प्रथम आबाधाकालमें निषेक रचना नहीं पाई जाती। इन दो नियमोंके ध्यानमें रखने-[पर यह ज्ञात हो] जाता है कि वर्तमान समयसे एक

§ ४४० एवमेदेण सुत्तेण आवलियमेत्ते अवत्थुवियप्पे परूविय संपहि उक्कड्डणपाओग्गवत्थुवियप्पपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ तिस्से चेव ट्ठिदीए पदेसग्गस्स समयुत्तरावलिया बद्धस्स अइच्छिदा त्ति एसो आदेसो होज्ज ।

§ ४४१ एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे—तिस्से चेव पुव्वणिरुद्धसमयाहियावलियचरिमट्ठिदीए पदेसग्गस्स उक्कस्सदो दोआवलियपरिहीणकम्मट्ठिदिमेत्तसमयपवद्धपडिवद्धस्स अब्भंतरे जस्स पदेसग्गस्स बंधसमयादो पहुडि उदयट्ठिदीदो हेट्ठा समयुत्तरावलिया अधिच्छिदा सो एत्थ आदेसो होज्ज । आदिश्यत इत्यादेशो विवक्षितस्थितौ वस्तुरूपेणावस्थितः प्रदेश आदेश इति यावत् । कथमेदस्स आवाहादो उवरि णिसित्तस्स आदिट्ठट्ठिदीए संभवो ? ण, बधावलियाए वोलीणाए एगेण समएणोकड्डिय पयदट्ठिदीए णिक्खित्तस्स तत्थत्थित्त पडि विरोहाभावादो। ण एस कमो

आवलि तक पूर्वके बधे हुए समयप्रवद्धोंके कर्मपरमाणुओंका विवक्षित स्थितिमें अर्थात् एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिमें पाया जाना सम्भव नहीं है। यहा वर्तमान काल ही उदयकाल है और इससे लेकर एक आवलिकाल उदयावलि काल कहलाता है तथा इससे आगेकी स्थिति एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थिति कहलाती है। अव वर्तमान काल अर्थात् उदयकालमें विचार यह करना है कि उक्त स्थितिमें कितने समयप्रवद्धोंके कर्मपरमाणु नहीं पाये जाते। प्रकृत सूत्रमें इसी प्रश्नका उत्तर दिया गया है। उसका आशय यह है कि उदयकालसे पूर्व एक आवलि काल तकके वधे हुए समयप्रवद्ध उक्त स्थितिमें नहीं पाये जाते, क्योंकि उक्त स्थिति आवाधाकालके भीतर आ जाती है और आवाधाकालमें निषेक रचना नहीं होती यह पहले ही लिख आये हैं।

§ ४४०. इस प्रकार इस सूत्र द्वारा आवलिप्रमाण अवस्तुरूप विकल्पोंका कथन करके अव उत्कर्षण के योग्य वस्तुरूप विकल्पोका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** किन्तु उसी स्थितिमें वे कर्म परमाणु हैं जिनकी बाँधनेके बाद एक समय अधिक एक आवलि व्यतीत हुई है।**

§ ४४१ अब इस सूत्र का अर्थ कहते हैं—उसी पूर्व निर्दिष्ट एक समय अधिक एक आवलिकी अन्तिम स्थितिमें जो कर्मपरमाणु हैं वे यद्यपि उत्कृष्ट रूपसे दो आवलिकम कर्मस्थितिप्रमाण समयप्रवद्धोंके हैं तथापि इनके भीतर जिन कर्मपरमाणुओंकी वन्ध समयसे लेकर उदय स्थितिसे पहले-पहले एक समय अधिक एक आवलि व्यतीत हो गई है उनका यहाँ सद्भाव है। आदेश का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है—आदिश्यते अर्थात् विवक्षित स्थितिमें वास्तविक रूपसे अवस्थित प्रदेश।

शंका—जब कि वन्धके समय सब कर्मपरमाणु आवाधासे ऊपरकी स्थितिमें निक्षिप्त किये जाते हैं तब वे विवक्षित स्थितिमें कैसे सम्भव हो सकते हैं?

समाधान—नहीं, क्योंकि बन्धावलिके व्यतीत होनेके पश्चात् एक समय द्वारा अपकर्षण करके आवाधासे उपरितन स्थितिमें स्थित कर्मपरमाणु प्रकृत स्थितिमें निक्षिप्त कर दिये जाते हैं, इसलिये इनका वहाँ अस्तित्व माननेमें कोई विरोध नहीं आता।

पुव्वुत्तावलियमेत्तसमयपबद्धपरमाणूणमत्थि, तेसिं बंधावलियाए असमत्तीदो ओकड्डणा-पाओग्गत्ताभावादो । समाणिदबंधावलियस्स वि तत्थतणचरिमवियप्पपडिग्गहिय समयपबद्धस्स उदयसमयमहिट्ठिदजीवेणोकड्डिज्जमाणावत्थाए णिरुद्धट्ठिदिविसयमाणिदस्स संतस्स वि पयदुक्कड्डणापाओग्गभावेणावत्थुत्त परिच्छेयव्वं । तदो तेसिमेत्थ णत्थित्तमेदस्स च अत्थित्तं सिद्धं ।

§ ४४२ एवमाइट्ठस्स पदेसग्गस्स उक्कड्डणाहाणपरूवणमुत्तरसुत्तेण कुणइ—

* ण पुण पदेसग्गं कम्मट्ठिदिं णो सक्का उक्कड्डिदुं, समयाहियाए आवलियाए ऊणियं कम्मट्ठिदिं सक्का उक्कड्डिदुं ।

§ ४४३ कुदो ? एत्तियमेत्तीए चेव सत्तिट्ठिदीए अवट्ठिदत्तादो । एवं सत्तिट्ठिदिं पडुच्च वुत्तं । णिसेयट्ठिदिं पुण पडुच्च दुसमयाहियदोआवलियाहि ऊणियं कम्म

किन्तु यह क्रम पूर्वोक्त आवलिप्रमाण समयप्रबद्धोंके कर्मपरमाणुओंका नहीं बनता, क्योंकि उनकी बन्धावलि समाप्त नहीं हुई है, इसलिये उनमें अपकर्षणकी योग्यता नहीं पाई जाती है। बन्धावलिके समाप्त हो जाने पर भी जो समयप्रबद्ध यहाँ अन्तिम विकल्परूपसे स्वीकृत है उसका उदय समयमें स्थित जीवके द्वारा अपकर्षण होकर वह यद्यपि निर्दिष्ट स्थितिके विषय-भावको प्राप्त हो रहा है फिर भी प्रकृत उत्कर्षणके अयोग्य होनेसे वह अवस्तु है, इसलिये उसे छोड़ देना चाहिये। इसलिये उदय समयसे पूर्वकी एक आवलिके भीतर बंधनेवाले कर्मपरमाणु प्रकृत स्थितिमें नहीं हैं और जिन कर्मपरमाणुओंको बंधे हुए बन्ध समयसे लेकर उदय समय तक एक समय अधिक एक आवलि व्यतीत हुई है वे कर्मपरमाणु प्रकृत स्थितिमें हैं यह सिद्ध हुआ।

विशेषार्थ—पहले यह बतला आये हैं कि प्रकृत स्थितिमें कितने समयप्रबद्धोंके कर्म-परमाणु नहीं पाये जाते हैं। अब इस सूत्रद्वारा यह बतलाया गया है कि प्रकृत स्थितिमें जिन कर्म-परमाणुओंको बंधे एक समय अधिक एक आवलि व्यतीत हुआ है उनका पाया जाना सम्भव है। इसपर यह शंका हुई कि जब कि आबाधा कालके भीतर निषेक रचना नहीं होती और प्रकृत स्थिति आबाधा कालके भीतर पाई जाती है तब फिर इस स्थितिमें जिन कर्मपरमाणुओंको बंधे हुए एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण व्यतीत हुआ है उनका पाया जाना कैसे सम्भव है। इस शंकाका मूलमें जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि बन्धावलिके व्यतीत हो जाने पर बंधे हुए द्रव्यका अपकर्षण, उत्कर्षण, संक्रमण और उदीरणा हो सकती है इसलिये एक समय अधिक एक आवलि पूर्व बंधा हुआ द्रव्य विवक्षित स्थितिमें पाया जाता है ऐसा माननेमें कोई बाधा नहीं आती।

§ ४४२. अब इस प्रकार विवक्षित हुए कर्मपरमाणुओंके उत्कर्षण प्रमाणका कथन आगेके सूत्रद्वारा करते हैं—

* किन्तु उन कर्म परमाणुओंका कर्मस्थितिप्रमाण उत्कर्षण नहीं हो सकता। हाँ एक समय अधिक एक आवलि न्यून कर्मस्थितिप्रमाण उत्कर्षण हो सकता है।

§ ४४३. क्योंकि उन कर्मपरमाणुओंमें इतनीमात्र शक्तिस्थिति पाई जाती है। तथापि यह कथन शक्तिस्थितिकी अपेक्षासे किया है। निषेकस्थितिकी अपेक्षासे विचार करने पर

ट्ठिदिं सक्कमुक्कड्डिदुमिदि वत्तव्वं, उदयट्ठिदीदो समयाहियउदयावलियमेत्तमद्धाण-मुवरिं गंतूण पयदणिसेयस्स अवट्ठाणादो। एदस्स सुत्तस्स भावत्थो—उदयट्ठिदीदो हेट्ठा समयाहियावलियमेत्तमद्धाणमोयरिय बद्धसमयपवद्धप्पहुडि सेसासेसकम्मट्ठिदि-अब्भंतरसंचिदसमयपवद्धपरमाणूणमहियारट्ठिदीए अत्थित्ते विरोहो णत्थि तदो ण ते उक्कड्डणादो झीणट्ठिदिया। उक्कड्डिज्जमाणा च ते जेत्तियमद्धाणं हेट्ठदो ओयरिय बद्धा तेत्तियमेत्तेणूणिय कम्मट्ठिदिमाबाहामेत्तमविच्छाविय णवकबंधस्सुवरि णिक्खिवप्पंति, तेत्तियमेत्तीए चेव सत्तिट्ठिदीए अवसिट्ठत्तादो त्ति। णवरि कम्मट्ठिदीए आदीदो प्पहुडि जहण्णाबाहमेत्ताण समयपबद्धाणं जहासंभवमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियत्तं पुव्विल्लपरूवणादो जाणिय वत्तव्वं। ण पुव्विल्लपरूवणादो एदिस्से णवकबंध-मस्सियूण पयट्टाए अवत्थु-वत्थुपरूवणाए अविसिट्ठत्तमासंकणिज्जं, तिस्से कम्मट्ठिदीए आदीदो प्पहुडि पुव्वाणुपुव्वीए संतकम्ममस्सियूण वावदत्तादो, एदिस्से चेव णवकबंधमस्सियूण पच्छाणुपुव्वीए पयट्टत्तादो। पढमपरूवणाए संतकम्ममस्सियूण आवलियमेत्ता अवत्थुवियप्पा किण्ण परूविदा ? तं जहा—सत्तरिसागरोवम-कोडाकोडिमेत्तकम्मट्ठिदिं सव्वं गालिय पुणो से काले णिल्लेविहिदि त्ति उदयट्ठिदीए ट्ठिदपदेसग्गमेदिस्से समयाहियावलियचरिमट्ठिदीए अवत्थु। तिस्से चेव ट्ठिदीए

तो दो समय अधिक दो आवलिसे न्यून कर्मस्थितिप्रमाण ही उत्कर्षण हो सकता है ऐसा यहाँ कथन करना चाहिये, क्योंकि उदय स्थितिसे एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थान ऊपर जाकर ही प्रकृत निषेक स्थित है। इस सूत्रका यह भावार्थ है कि उदय स्थितिसे एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थान नीचे उतर कर जो समयप्रबद्ध बँधा है उससे लेकर बाकीकी सब कर्मस्थितिके भीतर संचित हुए समयप्रबद्धोंके कर्मपरमाणुओंका विवक्षित स्थितिमें अस्तित्व माननेमें कोई विरोध नहीं है, इसलिये वे उत्कर्षणसे झीनस्थितिवाले नहीं है। उत्कर्षण होते हुए भी जितना स्थान नीचे (पीछे) जाकर वे बँधे होते हैं उतने स्थानसे न्यून शेष रही कर्मस्थितिमें उनका उत्कर्षण होता है। उसमें भी आबाधाप्रमाण अतिस्थापनाको छोड़कर नवकबन्धमें इनका निक्षेप होता है। शेष रही कर्मस्थितिमें इनका उत्कर्षण इसलिए होता है कि उनकी उतनी ही शक्तिस्थिति शेष है। किन्तु इतनी विशेषता है कि कर्मस्थितिके आदिसे लेकर जो जघन्य आबाधाप्रमाण समयप्रबद्ध हैं वे यथासम्भव उत्कर्षणसे झीनस्थितिवाले हैं यह कथन पहले की गई प्ररूपणासे जानकर करना चाहिये। यदि कहा जाय कि पूर्व प्ररूपणासे नवकबन्धकी अपेक्षा अवस्तु और वस्तु विकल्पोंके कथनमें प्रवृत्त हुई इस प्ररूपणामें कोई विशेषता नहीं है सो ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि वह पूर्व प्ररूपणा कर्मस्थितिके प्रारम्भसे लेकर पूर्वानुपूर्वीसे सत्कर्मकी अपेक्षा प्रवृत्त हुई है और यह प्ररूपणा नवकबन्धकी अपेक्षा पश्चादानुपूर्वीसे प्रवृत्त हुई है, इसलिये इन दोनों प्ररूपणाओंमें अन्तर है।

शंका—प्रथम प्ररूपणामें सत्कर्मकी अपेक्षा एक आवलिप्रमाण अवस्तुरूप विकल्पोंका कथन क्यों नहीं किया है ? जिनका खुलासा इस प्रकार है—सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण सब कर्मस्थितिको गलाकर फिर तदनन्तर समयमें उस कर्मस्थितिका अभाव होगा। इस प्रकार केवल उदय स्थितिमें स्थित उस कर्मस्थितिके कर्मपरमाणु इस एक समय अधिक आवलिकी अन्तिम

जस्स पदेसग्गस्स दुसमयूणा कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि एदं पि अवत्थु । एवं णिरंतरं गंतूण जइ वि आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता होज्ज तं पि अवत्थु त्ति । एवमेदे अवत्थुवियप्पे आवलियमेत्ते अपरूविय समयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी जस्स विदिक्कंता तदो प्पहुडि वत्थुवियप्पाणं झीणाझीणट्ठिदियत्तगवेसणं कुणमाणस्स चुण्णिसुत्तयारस्स को अहिप्पाओ त्ति ? ण एस दोसो, समयाहियावलियमेत्तावसिट्ठकम्मट्ठिदियस्स समयपबद्धपदेसग्गस्स उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियस्स परूवणाए चेव तेसिमवत्थुवियप्पाणमणुत्तसिद्धीदो । ण च एदम्हादो हेट्ठिमाणमेत्तियमेत्ती ट्ठिदी अत्थि जेणेदेसिमेत्थ वत्थुत्तसंभवो होज्ज, विरोहादो । ण च संतमत्थं सुत्तं ण विसईकरइ, तस्स अव्वावयत्तावत्तीदो । तदो तप्परिहारदुवारेण अण्णपरूवणादो चेव तेसिमवत्थुत्तं सुत्तयारेण सूचिदमिदि ण किं चि विरुद्धं पेच्छामो । णवकबंधमस्सियूण पयट्टिदाणमावलियमेत्ताणमेदेसिमवत्थुवियप्पाणं देसामासयभावेण वा तेसिमेत्थ परूवणा कायव्वा ।

स्थितिमें नहीं पाये जाते। तथा जिन कर्मपरमाणुओंकी दो समय कम पूरी कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है वे कर्मपरमाणु भी इस विवक्षित स्थितिमें नहीं हैं। इसी प्रकार निरन्तर जाकर यदि एक आवलिकम कर्मस्थिति व्यतीत हो गई हो तो वे एक आवलिके कर्मपरमाणु भी इस विवक्षित स्थितिमें नहीं हैं। इस प्रकार एक आवलिप्रमाण अवस्तु विकल्पोंका कथन न करके चूर्णिसूत्रकारने जो 'एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून कर्मस्थिति जिसकी व्यतीत हो गई है' यहाँसे लेकर वस्तुविकल्पोंमें झीनाझीनस्थितिपनेका विचार किया है सो उनका इस प्रकारके कथन करनेमें क्या अभिप्राय है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है क्योंकि जब एक समय अधिक एक आवलि शेष रही कर्मस्थितिसम्बन्धी समयप्रबद्धोंके कर्मपरमाणुओंको उत्कर्षणके अयोग्य कह दिया तब इसीसे इन आवलिप्रमाण अवस्तुविकल्पोंकी बिना कहे सिद्धि हो जाती है। और एक समय अधिक एक आवलिकी अन्तिम स्थितिसे नीचेके निषेकोंकी इतनी अर्थात् एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण स्थिति तो हो नहीं सकती जिससे इन नीचेके निषेकोंका यहाँ सद्भाव माना जाय, क्योंकि ऐसा होनेमें विरोध आता है। और सूत्र जो अर्थ विद्यमान है उसे विषय नहीं करता यह बात कही नहीं जा सकती, क्योंकि ऐसा होनेपर सूत्रको अव्यापक मानना पड़ेगा। इसलिये इन आवलिप्रमाण विकल्पोंका कथन न करके सूत्रकारने अन्य प्ररूपणा द्वारा ही उनका असद्भाव सूचित कर दिया है, इसलिए इस कथनमें हम कोई विरोध नहीं देखते। अथवा इस दूसरी प्ररूपणामें जो नवकबन्धकी अपेक्षा एक आवलिप्रमाण अवस्तु विकल्प कह गये हैं उनके देशामर्षकरूपसे प्रथम प्ररूपणासम्बन्धी उन एक आवलिप्रमाण अवस्तुविकल्पोंकी यहाँ प्ररूपणा कर लेनी चाहिये।

विशेषार्थ—इस सूत्रकी व्याख्या करते हुए वीरसेन स्वामीने कई बातों पर प्रकाश डाला है। यथा—

(१) नवकबन्धके जो कर्मपरमाणु अपकर्षित होकर विवक्षित स्थिति अर्थात् एक समय अधिक एक आवलिकी अन्तिम स्थितिमें निक्षिप्त हुए हैं उनका उत्कर्षणके समय बंधमात्र

कर्मकी कितनी स्थितिमें उत्कर्षण हो सकता है ?

(२) पूर्व प्ररूपणासे इस प्ररूपणामें तात्त्विक अन्तर क्या है ?

(३) पूर्व प्ररूपणामें क्या अवस्तु विकल्प सम्भव हैं यदि हों तो उनका उस प्ररूपणाका विवेचन करते समय कथन क्यों नहीं किया ?

इनका क्रमशः खुलासा इस प्रकार है—

(१) जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है कि कर्मों में दो प्रकारकी स्थिति होती है—एक व्यक्तस्थिति और दूसरी शक्तिस्थिति। जिस कर्मकी जितनी उत्कृष्ट कर्मस्थिति होती है उस कर्मके अन्तिम निषेककी वह व्यक्तस्थिति है। उस अन्तिम निषेकमें शक्ति स्थिति नहीं पाई जाती। किन्तु शेष निषेकोंमें यथासम्भव शक्तिस्थिति और व्यक्तस्थिति दोनों पाई जाती हैं। उदाहरणार्थ एक कर्मकी ४८ समय कर्मस्थिति है। इसमेंसे प्रारम्भके १२ समय आबाधाके निकाल देने पर शेष ३६ समयोंमें निषेक रचना हुई। इस प्रकार पहले निषेककी १३ समय स्थिति पडी और दूसरे निषेककी १४ समय स्थिति पडी। इसप्रकार उत्तरोत्तर एक एक निषेक की एक एक समयप्रमाण स्थित बढ कर अन्तिम निषेककी ४८ समय स्थिति पडी। यह सबकी सब स्थिति व्यक्तस्थिति है। अब जो प्रथम निषेककी १३ समय स्थिति पड़ी है सो उसके सिवा उसकी शेष ३५ समय स्थिति शक्तिस्थिति है। दूसरे निषेककी १४ समय के सिवा शेष ३४ समय शक्तिस्थिति है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिये। इस उदाहरणसे स्पष्ट है कि उत्कृष्ट कर्मस्थितिके अन्तिम निषेकमें शक्तिस्थिति नहीं पाई जाती। किन्तु शेष निषेकोंमें शक्तिस्थिति और व्यक्तस्थिति दोनों प्रकारकी स्थितियाँ पाई जाती हैं।

अब किसी एक जीवने बन्धावलिके बाद नवकबन्धका अपकर्षण करके उसका उदयावलि के ऊपर प्रथम स्थितिमें निक्षेप किया और तदनन्तर समयमें वह उसका उत्कर्षण करना चाहता है तो यहा यह विचार करना है कि इस अपकर्षित द्रव्यका तत्काल बधनेवाले कर्म के ऊपर कितनी स्थितिमें उत्कर्षण हो कर निक्षेप होगा। यह अपकर्षण बन्धावलिके बाद हुआ है, इसलिये एक आवलि तो यह कम हो गई और एक समय अपकर्षणमें लगा, इसलिये एक समय यह कम हो गया। इस प्रकार प्रकृत कर्मस्थितिमेंसे एक समय अधिक एक आवलिके घटा देने पर जो शेष कर्मस्थिति बची है तत्काल बधनेवाले कर्मकी उतनी स्थितिमें इस अपकर्षित द्रव्यका उत्कर्षण हो सकता है। उदाहरणार्थ पहले जो ४८ समय स्थितिवाले नवकबन्धका दृष्टान्त दे आये हैं सो उसके अनुसार बन्धावलिके ३ समय बाद चौथे समयमें आबाधाके ऊपरके द्रव्यका अपकर्षण करके उसे उदयावलिके ऊपरकी स्थितिमें निक्षेप किया। यहा बन्धावलिके बाद उदयावलि ले लेना चाहिये और उदयावलिके बाद एक समय छोडकर अगली स्थितिमें अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप कराना चाहिये, क्योंकि एक समय अपकर्षणरूप क्रियामें लग कर दूसरे समयमें वह उदयावलिमें प्रविष्ट हो जाता है। इस हिसावसे अपकर्षित होकर स्थित हुए द्रव्यका आठवें समयमें उत्कर्षण होगा। पर यह उत्कर्षण की क्रिया बन्धावलिके बाद दूसरे समयमें हो रही है इसलिये सर्व स्थिति ४८ समयमेंसे बन्धावलिके ३ और अपकर्षणका १ इस प्रकार ४ समय घटा देने पर तत्काल बँधनेवाले कर्ममें आबाधाके बाद १३ समयसे लेकर ४४ वें समयतक इस द्रव्यका निक्षेप होगा। इस प्रकार इसकी स्थिति एक समय अधिक बन्धावलिसे न्यून ४४ समय प्राप्त हुई। यह यत्स्थिति है। उत्कर्षण और संक्रमणके समय जो स्थिति रहे वह यत्स्थिति है। किन्तु उत्कर्षण उदयावलिके ऊपरके निषेक में स्थित द्रव्यका हुआ है, इसलिये निषेकस्थितिमें एक समय अधिक एक आवलि और घट जाती है, इसलिये

§ ४४४ एवमेत्तिएण पबंधेण पुव्वणिद्दिट्ठाए बिदीए उवक्कमणाए झीणाझीणट्ठिदियपदेसग्गगवेसणं काऊण तस्संबंधेण च पसंगागयअत्थविसेसपरूवणं समाणिय संपहि पयदत्थमुवसंहरेमाणो इदमाह—

ॐ एदे वियप्पा जा समयाहियउदयावलिया तिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गस्स।

§ ४४५ गयत्थमेदमुवसंहारसुत्तं। एवं वित्थररुइसिस्साणुग्गहट्ठं पुव्वुत्तमट्ठं समासिय संपहि एदेसिमेव वियप्पाणमण्णमुवरि वि एदेण समाणपरूवणेसु ट्ठिदिविसेसेसु कमपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

निषेकस्थिति ४८ समय न प्राप्त होकर ४० समय प्राप्त होगी। इस प्रकार अपकर्षित द्रव्यका उत्कर्षणके समय बंधनेवाले कर्मकी कितनी स्थितिमें उत्कर्षण हो सकता है इसका विचार हुआ।

(२) प्रथम प्ररूपणामें सत्कर्मकी अपेक्षा विचार किया है उसमें बतलाया है कि जिस कर्मकी केवल एक समय अधिक उदयावलिप्रमाण कर्मस्थिति शेष रही है उसका उत्कर्षण नहीं हो सकता। जिसकी दो समय अधिक उदयावलिप्रमाण कर्मस्थिति शेष है उसका भी उत्कर्षण नहीं हो सकता। तात्पर्य यह कि उत्कर्षणके समय बँधनेवाले कर्मकी जितनी आबाधा पड़े उतनी स्थितिके शेष रहने तक सत्तामें स्थित कर्मों का उत्कर्षण नहीं हो सकता। हाँ सत्कर्मकी आबाधासे अधिक स्थितिके शेष रहने पर नूतन बन्धमें उसका उत्कर्षण हो सकता है। इस प्रकार प्रथम प्ररूपणामें सत्कर्मकी अपेक्षा पूर्वानुपूर्वीसे विचार किया है। किन्तु इस दूसरी प्ररूपणामें यह बतलाया है कि नूतन बन्ध होने पर बन्धावलि तक तो वह तदवस्थ रहता है। हाँ बन्धावलिके बाद अपकर्षण होकर उसका तत्काल बँधनेवाले कर्ममें उत्कर्षण हो सकता है। इस प्रकार दूसरी प्ररूपणामें पश्चादानुपूर्वीसे नूतन बन्धके उत्कर्षणका विचार किया है, इसलिये इन दोनों प्ररूपणाओंमें तात्त्विक भेद है।

(३) अब यह बतला दिया कि जिस कर्मकी स्थिति एक समय अधिक एक आवलि शेष है उसका उत्कर्षण नहीं हो सकता तब यह अर्थ सुतरां फलित हो जाता है कि जिस कर्मकी एक समय दो समय तीन समय इसी प्रकार उदयावलिप्रमाण स्थिति शेष है उसका न तो उत्कर्षण ही हो सकता है और न उस स्थितिके कर्म परमाणुओंका एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिमें ही पाया जाना सम्भव है। यही कारण है कि प्रथम प्ररूपणामें एक आवलिप्रमाण अपकृष्ट विकल्पोंके रहते हुए भी उनका निर्देश नहीं किया है।

§ ४४ इस प्रकार इतने प्रबन्धके द्वारा दो बातोंका विचार किया। प्रथम तो यह विचार किया कि पूर्वे निरुद्ध स्थितिमें कौनसे कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं और कौनसे कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे अझीन स्थितिवाले हैं। दूसरे इसके सम्बन्धसे प्रसंगानुसार अवान्तर विकल्पोंका कथन किया। अब प्रकृत अर्थके उपसंहार करनेकी इच्छासे आगेका सूत्र कहते हैं—

*** एक समय अधिक उदयावलिकी जो अन्तिम स्थिति है उसके कर्म परमाणुओंके इतने विकल्प होते हैं।**

§ ४४५. इस उपसंहार सूत्रका अर्थ गतार्थ है। इस प्रकार विस्ताररुचिवाले शिष्योंको पूर्वोक्त अर्थकी संभाल करा कर अब जिन स्थितियोंकी प्ररूपणा इस स्थितिके समान है उनमें इन सब विकल्पोंका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** एदे चेय वियप्पा अपरिसेसा जा दुसमयाहिया उदयावलिया तिस्से हिदीए पदेसग्गस्स।**

§ ४४६ एदस्स सुत्तस्स अत्थो उच्चदे। तं जहा—जे ते पुव्वणिरुद्धसमयाहिय-उदयावलियचरिमहिदीए दोहि वि परूवणाहि परूविदा वियप्पा एदे चेव अणूणाहिया वत्तव्वा जा दुसमयाहिया उदयावलिया तिस्से हिदीए पदेसग्गस्स णिरुंभणं काऊण। णवरि पढमपरूवणाए कीरमाणाए एदिस्से हिदीए पदेसग्गस्स जइ समयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता बद्धस्स त कम्ममुक्कड्डणाए अवत्थु, हेट्ठिमाए चेव हिदीए तस्स णिट्ठविदकम्मट्ठिदियत्तादो। तदो हेट्ठिमाणं पुण अवत्थुत्तं पुव्वं व अणुत्तसिद्धं। तस्सेव पदेसग्गस्स जइ दुसमयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं कम्ममेत्थ आदेसो होंतं पि ण सक्कमुक्कड्डिदुं; तत्तो उवरि सत्ति-हिदीए एगस्स वि समयस्स अभावादो। तस्सेव पदेसग्गस्स जइ वि तिसमयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। एत्थ कारणमणंतरपरूविदं। एत्तो उवरि पुव्व व सेसजहण्णाबाहमेत्ता झीणट्ठिदिय-वियप्पा उप्पाएयव्वा। तत्तो परमझीणट्ठिदिया, जहण्णाबाहमेत्तमविच्छाविय एक्किस्से हिदीए णिक्खेवस्स तदणंतरउवरिमवियप्पे संभवादो। एदेण कारणेण अवत्थुवियप्पा

*** दो समय अधिक उदयावलिकी जो अन्तिम स्थिति है उस स्थितिके कर्म परमाणुओंके भी ये ही सबके सब विकल्प होते हैं।**

§ ४४६ अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। वह इस प्रकार है—पूर्व निर्दिष्ट एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिके दोनों ही प्ररूपणाओंके द्वारा जितने भी विकल्प कहे हैं न्यूनाधिक किये बिना वे सबके सब विकल्प यहा भी दो समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिके कर्म परमाणुओंको विवक्षित करके कहने चाहिये। किन्तु इतनी विशेपता है कि प्रथम प्ररूपणाके करने पर यदि बन्ध होनेके बाद कर्मपरमाणुओंकी एक समय अधिक आवलिसे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई हो तो वे कर्मपरमाणु इस विवक्षित स्थितिमें नहीं होते, क्योंकि इस विवक्षित स्थितिसे नीचेकी स्थितिमे ही उन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति समाप्त हो गयी है। किन्तु इससे नीचेकी स्थितियोंके कर्मपरमाणुओंका इस विवक्षित स्थितिमें नहीं पाया जाना पहलेके समान अनुक्तसिद्ध है। उन्हीं कर्मपरमाणुओंकी यदि दो समय अधिक आवलिसे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई हो तो वे कर्मपरमाणु यद्यपि इस विवक्षित स्थितिमें पाये अवश्य जाते हैं परन्तु उनका उत्कर्पण नहीं हो सकता, क्योंकि इसके ऊपर शक्तिस्थितिका एक भी समय नहीं पाया जाता है। उन्हीं कर्मपरमाणुओंकी यदि तीन समय अधिक आवलिसे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई हो तो वे कर्मपरमाणु भी उत्कर्पणसे झीन स्थितिवाले हैं। ये कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले क्यों हैं इसका कारण पहले कह आये हैं। इसी प्रकार इसके आगे भी पहलेके समान बाकीके जघन्य आबाधाप्रमाण झीन स्थितिविकल्प उत्पन्न कर लेने चाहिये। इससे आगे अझीन स्थितिविकल्प होते हैं, क्योंकि इसके आगेके विकल्पमें जघन्य आबाधाप्रमाण स्थितिको अतिस्थापनारूपसे स्थापित करके आबाधाके ऊपरकी एक स्थितिमे निक्षेप सम्भव है। इस कारणसे यहाँ अवस्तुविकल्प एक अधिक होते हैं

समयाहिया झीणट्ठिदियवियप्पा च रूवूणा होंति। अझीणट्ठिदीए णत्थि णाणत्तं। बिदियपरूवणाए वि एदिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गस्स एगो समओ पबद्धस्स अइच्छिदो त्ति अवत्थु। दो समया पबद्धस्स अइच्छिदा त्ति अवत्थु। एवं णिरंतरं गंतूण आवलिया समयपबद्धस्स पुण्णा च अइच्छिदा त्ति अवत्थु। तिस्से चेव ट्ठिदीए पदेसग्गस्स समयुत्तरावलिया बद्धस्स अइच्छिदा त्ति एसो आदेसो होज्ज। ण पुण पदेसग्गं कम्मट्ठिदिं णो सक्कमुक्कड्डिदुं, समयाहियाए आवलियाए णिसेगं पडुच्च तिसमयाहियदोआवलियाहि वा ऊणियं कम्मट्ठिदिं सक्कमुक्कड्डिदुं, तत्तियमेत्तीए चेव सत्तिट्ठिदीए अवसेसादो त्ति। एत्तिओ चेव विसेसो णत्थि अण्णत्थ कत्थ वि। एसो चेव विसेसो सुत्तणिलीणो चेव पज्जवट्ठियणयावलंबणेण परूविदो ण सुत्तबाहिरभूदो त्ति।

और झीन स्थितिविकल्प एक कम होते हैं। हाँ अझीन स्थितियोंमें कोई भेद नहीं है। दूसरी प्ररूपणाके करने पर भी जिन कर्मपरमाणुओंको बन्ध करनेके बाद एक समय व्यतीत हुआ है वे कर्मपरमाणु इस विवक्षित स्थितिमें नहीं हैं। जिन्हें बाँधनेके बाद दो समय व्यतीत हुए हैं वे कर्मपरमाणु भी नहीं हैं। इस प्रकार निरन्तर जाकर बाँधनेके बाद जिन्हें एक आवलि व्यतीत हुई है वे कर्मपरमाणु भी नहीं हैं। मात्र जिन कर्मपरमाणुओंको बाँधनेके बाद एक समय अधिक एक आवलि व्यतीत हुई है वे कर्मपरमाणु इस विवक्षित स्थितिमें हैं। किन्तु उन कर्मपरमाणुओंका कर्मस्थितिप्रमाण उत्कर्षण नहीं हो सकता, किन्तु शक्तिस्थितिकी अपेक्षा एक समय अधिक एक आवलि कम कर्मस्थितिप्रमाण और निषेक स्थितिकी अपेक्षा तीन समय अधिक दो आवलिकम कर्मस्थितिप्रमाण उत्कर्षण हो सकता है, क्योंकि उन कर्मपरमाणुओंमें उतनी ही शक्ति स्थिति शेष है। इस प्रकार इस स्थितिकी अपेक्षा इतनी ही विशेषता है, अन्यत्र और कोई विशेषता नहीं। किन्तु यह विशेषता सूत्रमें गर्भित है जिसका पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षासे कथन किया गया है। अतः यह विशेषता सूत्रके बाहर नहीं है।

विशेषार्थ—पहले एक समय अधिक एक आवलिकी अन्तिम स्थितिकी प्रधानतासे दो प्रकारकी प्ररूपणाओं द्वारा उत्कर्षणविषयक प्ररूपणा की गई थी। अब यहाँ दो समय अधिक एक आवलिकी अन्तिम स्थितिकी प्रधानतासे उत्कर्षण विषयक प्ररूपणा की गई है। यों सामान्यसे इन दोनों स्थितियोंमें स्थित कर्मपरमाणुओंकी अपेक्षा उत्कर्षण विषयक प्ररूपणामें कोई अन्तर नहीं है। पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा जो भी थोड़ा बहुत अन्तर है उसका उल्लेख टीकामें कर ही दिया है। पहली प्ररूपणाके अनुसार तो यह अन्तर बतलाया है कि एक समय अधिक एक आवलिकी अन्तिम स्थितिमें जितने अवस्तुविकल्प और झीन स्थितिविकल्प होते हैं उनसे इस विवक्षित स्थितिमें अवस्तु विकल्प एक अधिक और झीन स्थितिविकल्प एक कम होते हैं। पूर्वमें उदयावलिके ऊपरकी प्रथम स्थितिको लेकर विचार किया गया था इसलिये अवस्तु विकल्प एक आवलिप्रमाण थे किन्तु यहाँ उदयावलिके ऊपर द्वितीय स्थितिको लेकर विचार किया जा रहा है इसलिये यहाँ अवस्तु विकल्प एक अधिक हो गया है। और यहाँ आबाधामें एक समय कम हो गया है इसलिये पहलेसे झीनस्थिति विकल्प एक कम हो गया है। तथा दूसरी प्ररूपणाके अनुसार निषेकस्थितिकी अपेक्षा उत्कर्षण एक समय घट जाता है, क्योंकि जिस स्थितिका उत्कर्षण हो रहा है उसमें एक समय बढ़ गया है इसलिये शक्तिस्थितिमें एक समय घट जाने से निषेकस्थितिकी अपेक्षा उत्कर्षण एक समय कम प्राप्त होता है।

*** एवं तिसमयाहियाए चदुसमयाहियाए जाव आबाधाए आवलियूणाए एवदिमादो त्ति ।**

§ ४४७. एत्थ उदयावलियाए इदि अणुवट्टदे । तेणेव संबंधो कायव्वो, जहा समयाहियाए दुसमयाहियाए च उदयावलियाए णिरुंभणं काऊण एदे वियप्पा परूविदा, एवं तिसमयाहियाए चउसमयाहियाए उदयावलियाए इच्चादिट्ठिदीणं पुध पुध णिरुंभणं काऊण पुव्वुत्तासेसवियप्पा वत्तव्वा जाव आबाहाए आवलियूणाए जाव चरिमट्ठिदी एवदिमादो त्ति । णवरि संतकम्ममस्सियूण अवत्थुवियप्पा ट्ठिदिं पडि रूवाहियकमेण झीणट्ठिदिवियप्पा च रूवूणकमेण णेदव्वा । णवकबंधमस्सियूण णत्थि णाणत्तं । एदासिं च ट्ठिदीणमइच्छावणा रूवूणादिकमेणाणवट्ठिदा दट्ठव्वा । आबाहाचरिमसमयादो उवरिमाणंतरट्ठिदीए सव्वासिं पि एदासिमझीणट्ठिदियस्स पदेसग्गस्स उक्कड्डणाए णिक्खेवुवलंभादो । ण एस कमो उवरिमासु ट्ठिदीसु, तत्थ आवलियमेत्तीए अइच्छावणा [ए] अवट्ठिदसरूवेणुवलंभादो । एदस्स च विसेसस्स अत्थित्तपरूवणट्ठमेत्थ आवलियूणाबाहाचरिमट्ठिदीए सुत्तयारेण णिसेयपरूवणाविसओ कओ ।

---

* इसी प्रकार तीन समय अधिक और चार समय अधिक उदयावलिसे लेकर एक आवलि कम आबाधा काल तक की पृथक् पृथक् स्थितिमें पूर्वोक्त सब विकल्प होते हैं ।

§ ४४७ इस सूत्रमें 'उदयावलियाए' इस पदकी अनुवृत्ति होती है । उससे इस सूत्रका इस प्रकार सम्बन्ध करना चाहिए कि जिस प्रकार एक समय अधिक और दो समय अधिक उदयावलिको विवक्षित करके ये विकल्प कहे हैं उसी प्रकार तीन समय अधिक और चार समय अधिक उदयावलि आदि स्थितियोंको पृथक् पृथक् विवक्षित करके पूर्वोक्त सब विकल्प कहने चाहिये। इस प्रकार यह क्रम एक आवलि कम आबाधा काल तक जाता है । यही अन्तिम स्थिति है जहाँ तक ये विकल्प प्राप्त होते हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि सत्कर्मकी अपेक्षा उत्तरोत्तर एक एक स्थितिके प्रति अवस्तु विकल्प एक एक बढ़ता जाता है और झीन स्थितिविकल्प एक एक कम होता जाता है । किन्तु नवकबन्धकी अपेक्षा कोई भेद नहीं है । फिर भी इन स्थितियोंकी अतिस्थापना उत्तरोत्तर एक एक समय कम होती जानेके कारण वह अनवस्थित जाननी चाहिये, क्योंकि आबाधाके अन्तिम समयसे आगेकी अनन्तर स्थितिमें इन सभी स्थितियोंके अझीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण होकर निक्षेप देखा जाता है । परन्तु यह क्रम एक आवलिकम आबाधाकालसे आगेकी स्थितियोंमें नहीं बनता, क्योंकि वहाँ पर अवस्थितरूपसे एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना पाई जाती है । इस विशेषके अस्तित्वका कथन करनेके लिए यहाँ पर एक आवलि कम आबाधाकी चरम स्थितिको सूत्रकारने निषेक प्ररूपणाका विषय किया है ।

विशेषार्थ—एक समय अधिक उदयावलि और दो समय अधिक उदयावलिको विवक्षित करके सामान्यसे जितने विकल्प प्राप्त हुए थे वे सबके सब विकल्प और कितनी स्थितियों-

*** आवलियाए समयूणाए ऊणियाए आबाहाए एवडिमाए ट्ठिदीए ज पदेसग्गं तस्स के वियप्पा ।**

§ ४४८ पुव्वमावलियाए ऊणिया जा आबाहा तिस्से चरिमट्ठिदीए पदेसग्गमहिं काऊण हेट्ठिमासेसट्ठिदीणं वियप्पा परूविदा । संपहि समयूणावलियपरिमाए ट्ठिदीए आवलियाए समयूणाए ऊणिया जा आबाहा एवडिमाए जं पदेसग्गं तस्स के वियप्पा होंति ? ण ताव पुव्वुत्ता चेव णिरवसेसा, तत्थ हेट्ठिमाणंतरट्ठिदीए मज्झादो भावेण परूविदत्तादो । ण च तेसिमेत्थ वि उभयत्थ परूवणं सफलं होदि, विप्पडिसेहादो । अह अण्णे, के ते ? ण तेसिं सरूवं जाणामो त्ति एसा पदस्स

को विवक्षित करनेसे प्राप्त हो सकते हैं यह बात यहाँ बतलाई गई है। बात यह है कि एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिमें *कितनी स्थितियोंके कर्मपरमाणु सम्भव हैं* और *कितनी* स्थितियोंके नहीं। तथा इस स्थितिके किन कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण हो सकता है और किनका नहीं यह जैसे पहले बतलाया है वैसे ही एक आवलिकम आबाधाके भीतर सब स्थितियोंमें सामान्यसे यही क्रम बन जाता है, इसलिये इस सब कथनको सामान्यसे एक समान कहा है। किन्तु विवक्षित स्थिति उत्तरोत्तर आगे आगेकी होती जानेके कारण अवस्तु विकल्प एक एक बढ़ता जाता है और अतीनस्थितिविकल्प एक एक कम होता जाता है। तथा अतिस्थापना भी घटती जाती है। जब समयाधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिके कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण विवक्षित था तब अतिस्थापना समयाधिक आवलिसे न्यून आबाधाकाल प्रमाण थी। जब दो समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिके कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण विवक्षित हुआ तब अतिस्थापना दो समय अधिक एक आवलिसे न्यून आबाधाकाल प्रमाण रही। इसी प्रकार आगे आगे अतिस्थापनामें एक एक समय कम होता जाता है। यहाँ इतना विशेष और जानना चाहिए कि जिस हिसाबसे अतिस्थापना कम होती जाती है उसी हिसाबसे शक्तिस्थिति भी घटती जाती है। अब देखना यह है कि यहाँ कम आवलिकम आबाधासे आगेकी स्थितियोंका क्यों नहीं बतलाया। टीकाकारने इस प्रश्नका यह उत्तर दिया है कि आवलिकम आबाधासे आगेकी स्थितियोंमें स्थित कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण होने पर अतिस्थापना निश्चितरूपसे एक आवलि प्राप्त होती है। यही कारण है कि आवलिकम आबाधासे आगेकी स्थितियोंका क्रम भिन्न प्रकारसे बतलाया है।

* एक समय कम एक आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिमें जो कर्म परमाणु पाये जाते हैं उनके कितने विकल्प होते हैं।

§ ४४८. पहले आवलिकम आबाधाकी अन्तिम स्थितिके कर्मपरमाणुओंकी मर्यादा करके पूर्वकी सब स्थितियोंके विकल्प कहे। अब यह बतलाना है कि उससे आगेकी जो एक समय कम एक आवलिसे न्यून आबाधा है और उसमें जो कर्मपरमाणु हैं उनके कितने विकल्प होते हैं? यदि कहा जाय कि पूर्वोक्त सब विकल्प होते हैं सो तो बात है नहीं, क्योंकि वे सब विकल्प इससे अनन्तरवर्ती पूर्वकी स्थिति तक ही कहे हैं। अब यदि उनको यहाँ भी सम्भव मानकर इस प्रकारके कथनको सफल कहा जाय सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऐसा कथन करना निषिद्ध है। अब यदि अन्य विकल्प होते हैं तो वे कौन हैं, क्योंकि हम उनके स्वरूपको नहीं

पुच्छासुत्तस्स भावत्थो। संपहि एदिस्से पुच्छाए उत्तरमाह—

❀ जस्स पदेसग्गस्स समयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि पदेसग्गमेदिस्से ट्ठिदीए णत्थि।

§ ४४९. एदिस्से णिरुद्धाए ट्ठिदीए त पदेसग्गं णत्थि जस्स समयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता। कुदो? एत्तो दूरयर हेट्ठदो ओसरिय तस्स अवट्ठाणादो। तत्तो पुण हेट्ठिमा आवलियमेत्ता अवत्थुवियप्पा अणुत्तसिद्धा त्ति ण परूविदा।

❀ जस्स पदेसग्गस्स दुसमयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि णत्थि।

§ ४५०. एत्थ एदिस्से ट्ठिदीए इदि अणुवट्टदे। सेस सुगम।

जानत इस प्रकार यह इस पृच्छासूत्रका भावार्थ है। अब इस पृच्छाका उत्तर कहते हैं—

❀ जिन कर्म परमाणुओंकी एक समय अधिक आवलिसे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है वे कर्मपरमाणु भी इस स्थितिमें नहीं हैं।

§ ४४९ इस विवक्षित स्थितिमें वे कर्म परमाणु नहीं हैं जिनकी एक समय अधिक एक आवलिसे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है; क्योंकि वे कर्मपरमाणु इस विवक्षित स्थितिसे बहुत दूर पीछे जाकर अवस्थित हैं। तथा इन कर्मपरमाणुओंसे पूर्वकी एक आवलिप्रमाण स्थितिमें स्थित कर्मपरमाणु भी इस विवक्षित स्थितिमें नहीं हैं यह बात अनुक्तसिद्ध है, इसलिये इसका यहाँ कथन नहीं किया।

विशेषार्थ—आबाधाकालमें से एक समय कम एक आवलिके घटा देने पर जो अन्तकी स्थिति प्राप्त हो वह यहाँ विवक्षित स्थिति है। अब यह विचार करना है कि इस स्थितिमें किन स्थितियोंके कर्मपरमाणु हैं और किनके नहीं। एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिसे यह विवक्षित स्थिति बहुत काल आगे जाकर प्राप्त होती है, इसलिये इस विवक्षित स्थितिमें एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिके कर्मपरमाणु नहीं पाये जा सकते यह इस सूत्रका तात्पर्य है। किन्तु इस विवक्षित स्थितिमें एक समय अधिक उदयावलिकी अन्तिम स्थितिसे पूर्वकी एक आवलिप्रमाण स्थितियोंके कर्मपरमाणु भी तो नहीं पाये जाते फिर यहाँ उनका निषेध क्यों नहीं किया, यह एक प्रश्न है जिसका समाधान किया जाना आवश्यक है। अतएव इसी प्रश्नका समाधान करनेके लिये टीकामें यह बतलाया है कि जब अगली स्थितिके कर्मपरमाणुओंका विवक्षित स्थितिमें निषेध कर दिया तब इससे पिछली स्थितियोंके कर्मपरमाणुओंका विवक्षित स्थितिमें निषेध विना कहे ही हो जाता है, इसलिये उनके निषेधका यहाँ अलगसे उल्लेख नहीं किया।

❀ जिन कर्मपरमाणुओंकी दो समय अधिक एक आवलिसे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है वे कर्मपरमाणु भी इस विवक्षित स्थितिमें नहीं हैं।

§ ४५०. इस सूत्रमें 'एदिस्से ट्ठिदीए' इस पदकी अनुवृत्ति होती है। शेष अर्थ सुगम है।

⊛ एवं गंतूण जदेही एसा ट्ठिदी एत्तिएण ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता जस्स पदेसग्गस्स तमेदिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गं होज्ज । तं पुण उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं ।

§ ४५१ केदेही एसा ट्ठिदी ? जदेही समयूणावलियपरिहीणाबाहा तदेही । सेसं सुगमं ।

⊛ एवं ट्ठिदिमावलिं काऊण जाव जहण्णियाए आबाहाए एत्तिएण ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता जस्स पदेसग्गस्स तं पि पदेसग्गमेदिस्से ट्ठिदीए होज्ज । तं पुण सव्वमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं ।

§ ४५२ कुदो ? अवट्ठिदाए अइच्छावणाए आवलियमेत्तीए समयूणत्तेण अज्ज वि संपुण्णत्ताभावादो । एदमेत्थतणचरिमवियप्पस्स वुत्तं, सेसासेसमज्झिमवियप्पाणं पि एवं चेव कारणं वत्तव्वं, विसेसाभावादो ।

⊛ इस प्रकार आगे जाकर जितनी यह विवक्षित स्थिति है इससे न्यून शेष कर्मस्थिति जिन कर्मपरमाणुओंकी व्यतीत हो गई है वे कर्मपरमाणु इस स्थितिमें हो सकते हैं। परन्तु वे कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

§ ४५१ शंका—इस स्थितिका कितना प्रमाण है ?

समाधान—एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधा जितनी है उतना इस स्थितिका प्रमाण है।

शेष कथन सुगम है।

विशेषार्थ—इस सूत्रमें यह बतलाया है कि इस विवक्षित स्थितिमें किस स्थितिके पूर्वके कर्मपरमाणु नहीं हैं और यह प्रारम्भकी कौनसी स्थिति है जिसके परमाणु इसमें हैं। जैसा कि पहले लिख आये हैं कि इस विवक्षित स्थितिमें जिन कर्मपरमाणुओंकी एक समय अधिक आवलिसे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है वे कर्मपरमाणु नहीं हैं। जिनकी दो समय अधिक आवलिसे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हो गई है वे कर्मपरमाणु भी नहीं हैं। इसी प्रकार उत्तरोत्तर एक एक समय बढ़ाते हुए जिनकी एक आवलि न्यून आबाधाप्रमाण कर्मस्थिति शेष रही है वे कर्मपरमाणु भी इस विवक्षित स्थितिमें नहीं हैं। मात्र जिनकी एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण कर्मस्थिति शेष है वे कर्मपरमाणु इस विवक्षित स्थितिमें अवश्य पाये जाते हैं। फिर भी इन कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण नहीं हो सकता क्योंकि इनमें एक समयमात्र भी शक्तिस्थिति नहीं पाई जाती है यह इस सूत्रका भाव है।

⊛ इस स्थितिसे लेकर जघन्य आबाधा तक जितनी स्थिति है उससे न्यून कर्मस्थिति जिन कर्मपरमाणुओंकी व्यतीत हो गई है वे कर्मपरमाणु भी इस विवक्षित स्थितिमें हैं परन्तु वे सबके सब उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

§ ४५२ क्योंकि अवस्थित अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण बतलाई है वह एक समय कम होनेसे अभी पूरी नहीं हुई है। यह यहाँ अन्तिम विकल्पका कारण कहा है। बाकीके सब मध्यम विकल्पोंका भी यही कारण कहना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

§ ४५३. संपहियणिरुद्धट्ठिदीए पुव्वमाहिट्ठहेट्ठिमट्ठिदीणं च साहारणी एसा परूवणा; तत्थ वि आवाहामेत्तावसेसकम्मट्ठिदियस्स पदेसग्गस्स झीणट्ठिदियत्तुवलभादो। संपहि एत्थतणअसामण्णवियप्पपरूवणट्ठमुत्तरो पबंधो—

*** आवाधाए समयुत्तराए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता जस्स पदेसग्गस्स तं पि एदिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गं होज्ज। तं पुण उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं।**

§ ४५४. जइ वि एत्थ अइच्छावणा आवलियमेत्ती पुण्णा तो वि णिक्खेवाभावेण उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियत्तमिदि घेत्तव्वं। कुदो णिक्खेवाभावो? आवलियमेत्तं मोत्तूण उवरि सत्तिट्ठिदीए अभावादो। एसो एत्थ णिरुद्धट्ठिदीए संतकम्ममस्सियूण

विशेषार्थ—प्रकृत सूत्रमें यह बतलाया है कि इस विवक्षित स्थितिमें स्थित किस स्थिति तकके कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण नहीं हो सकता। यह तो पहले ही बतला आये हैं कि एक समय कम एक आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिसे लेकर आगे सर्वत्र अतिस्थापना एक आवलि प्राप्त होती है। अब जब इस नियमको सामने रखकर विचार किया जाता है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि जिन कर्मपरमाणुओंकी एक समय कम एक आवलिसे न्यून आबाधा प्रमाण स्थितिसे लेकर आबाधाप्रमाण स्थिति शेष है उनका भी उत्कर्षण नहीं हो सकता, क्योंकि इसमें प्रारम्भके विकल्पमें एक समयमात्र भी शक्तिस्थिति या अतिस्थापना नहीं पाई जाती। दूसरे विकल्पमें अतिस्थापना केवल एक समयमात्र पाई जाती है। तीसरे विकल्पमें दो समय अतिस्थापना पाई जाती है इस प्रकार आगे आगे जाने पर अन्तिम विकल्पमें वह अतिस्थापना एक समय कम एक आवलि पाई जाती है। परन्तु पूरी आवलिप्रमाण अतिस्थापना किसी भी विकल्पमें नहीं पाई जाती, इसलिये इन कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण नहीं हो सकता यह इस सूत्रका भाव है।

§ ४५३ किन्तु इस समय जो स्थिति विवक्षित है और इससे पूर्वकी जो स्थितियाँ विवक्षित रहीं उन दोनोंके प्रति यह प्ररूपणा साधारण है, क्योंकि वहाँ भी जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति आबाधाप्रमाण शेष रही है उनमें झीनस्थितिपना स्वीकार किया गया है। अब इस स्थितिसम्बन्धी असाधारण विकल्पका कथन करनेके लिये आगेकी रचना है—

*** जिन कर्मपरमाणुओंकी एक समय अधिक आबाधासे न्यून कर्मस्थिति व्यतीत हुई है वे कर्मपरमाणु भी इस स्थितिमें हैं पर वे उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।**

§ ४५४ यद्यपि यहाँ एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना पूरी हो गई है तो भी निक्षेपका अभाव होनेसे वे कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे झीनस्थितिवाले हैं यह यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

शंका—निक्षेपका अभाव क्यों है?

समाधान—क्योंकि इन कर्मपरमाणुओंकी एक आवलिके सिवा और अधिक शक्तिस्थिति नहीं पाई जाती, इसलिये निक्षेपका अभाव है।

इस विवक्षित स्थितिमें सत्कर्मकी अपेक्षासे जो यह विकल्प विशेष कहा है सो यह

द्विदिम्हि द्विदीहिंतो अणुभयत्तो वियप्पविसेसो हेट्ठिमट्ठिदिपदेसग्गाणमाबाहासेसमेत्त मविच्छाविय तदणंतरोवरिमाए पडिस्से द्विदीए णिक्खेवुवलंभादो । णवकबंध मस्सियूण पुण आवलियमेत्ता चेव अवत्थुवियप्पा पुव्वं व सव्वत्थ असुण्णाहिया होंति त्ति णत्थि तत्थ णाणत्त । णवरि पुव्वपरूविदाणमावलियमेत्तणवकबंधाणं मज्झे पढमसमयपबद्धस्सावलियाविच्छिण्णबंधस्स जहा णिसेयसरूवेण वत्थुत्तमेत्थ दीसइ, हेट्ठिमसमए चेव तस्साबाहापरिच्छिण्णसरूवत्तादो । तं पि कुदो ? जहण्णाबाहाए चेव सव्वत्थ विवक्खियत्तादो । कथं पुण संपुण्णावलियमेत्तपमाणमत्थ तव्वियप्पाणमिदि णासंकणिज्जं, समयाहियणवकबंधेण सह तेसिं तदविरोहादो । एत्तिओ चेव विसेसो, णत्थि अण्णो को वि विसेसो त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं—

❀ तेण परमज्झीणट्ठिदियं ।

§ ४५५ तत्तो समयुत्तरबाहापरिहीणविदिकम्मट्ठिदियादो णिरुद्धट्ठिदि पदेसग्गादो परमण्णं पदेसग्गमज्झीणट्ठिदियमुक्कड्डणादो त्ति अहियारवसेणाहिसंबंधो । कुदो एदमज्झीणट्ठिदियं ? अइच्छावणा णिक्खेवाणमेत्थ संभवादो । केत्तियमेत्तो

विकल्प पूर्वकी स्थितियोंसे अपुनरुक्त है, क्योंकि पूर्वकी स्थितियोंके कर्मपरमाणुओंकी जो आबाधा शेष रहती है उसे अतिस्थापनारूपसे स्थापित करके उससे आगेकी एक स्थितिमें निक्षेप पाया जाता है । नवकबन्धकी अपेक्षा तो सर्वत्र न्यूनाधिकतासे रहित पहलेके समान एक आवलिप्रमाण ही अवस्तु विकल्प होते हैं, इसलिये उनके कथनमें सर्वत्र कोई भेद नहीं है । किन्तु इतनी विशेषता है कि पहले जो एक आवलिप्रमाण नवकबन्ध कहे हैं उनमेंसे जिसे बँधे एक आवलि हो गया है ऐसे प्रथम समयप्रबद्धके निषेकोंकी जैसी रचना हुई उसके अनुसार सत्त्व यहाँ विवक्षित स्थितिमें दिखाई देता है, क्योंकि इससे पूर्वके समयमें ही उस समयप्रबद्धका आबाधाका अन्त देखा जाता है ।

शंका—सो कैसे ?

समाधान—क्योंकि सर्वत्र जघन्य आबाधा ही विवक्षित है ।

यदि ऐसा है तो फिर यहाँ पर नवकबन्धसम्बन्धी अवस्तुविकल्प पूरी आवलिप्रमाण कैसे हो सकते हैं सो ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि तत्कालिक नवकबन्धके साथ उन्हें पूरी आवलिप्रमाण माननेमें कोई विरोध नहीं आता । यहाँ इतनी ही विशेषता है अन्य कोई विशेषता नहीं है इस प्रकार इस बातके ज्ञानके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ उससे आगे अझीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं ।

§ ४५५. उससे आगे अर्थात् पहले जो एक समय अधिक आबाधासे हीन कर्मस्थिति और इस स्थितिके जो कर्मपरमाणु कहे हैं उनसे आगे अन्य कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे अझीन स्थितिवाले हैं ऐसा यहाँ अधिकारके अनुसार अर्थ करना चाहिये ।

शंका—ये कर्म परमाणु अझीन स्थितिवाले क्यों हैं ?

समाधान—क्योंकि यहाँ अतिस्थापना और निक्षेप दोनों सम्भव हैं ।

एत्थतणी अधिच्छावणा ? आवलियमेत्ती अवट्ठिदा चेयमुवरि सव्वत्थ। केत्तिओ पुण एत्थ णिक्खेवो ? एओ समओ । सो च अणवट्ठिओ समउत्तरादिकमेण उवरिम-वियप्पेसु वट्टमाणो गच्छइ ।

§ ४५६. संपहि पयदट्ठिदीए वियप्पे समाणिय उवरिमासु ट्ठिदीसु वियप्पगवेसणं कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो इदमाह—

❀ समयूणाए आवलियाए ऊणिया आवाहा । एदिस्से ट्ठिदीए वियप्पा समत्ता ।

§ ४५७. सुगमं ।

❀ एदादो ट्ठिदीदो समयुत्तराए ट्ठिदीए वियप्पे भणिस्सामो ।

शंका—यहाँ अतिस्थापनाका प्रमाण कितना है ?

समाधान—एक आवली, जो कि आगे सर्वत्र अवस्थित ही जानना चाहिये ।

शंका—यहाँ निक्षेपका प्रमाण कितना है ?

समाधान—एक समय जो कि अनवस्थित है, क्योंकि वह आगेके विकल्पोंमें एक-एक समय अधिकके क्रमसे बढता जाता है ।

विशेषार्थ—पहले यह बतलाकर कि एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण कर्मस्थितिमें जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति एक समय अधिक आबाधाप्रमाण शेष हो उनका उत्कर्षण नहीं हो सकता, क्योंकि यहाँ आवलिप्रमाण अतिस्थापनाके रहने पर भी निक्षेपका सर्वथा अभाव है। अब यह बतलाया गया है कि उसी विवक्षित स्थितिमें जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति उक्त स्थितिसे अधिक शेष हो उनका उत्कर्षण हो सकता है। यहाँ सर्वत्र अतिस्थापना तो एक आवलिप्रमाण ही प्राप्त होती है न्यूनाधिक नहीं। पर निक्षेप उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। यदि पूर्वस्थितिसे एक समय अधिक स्थिति शेष हो तो निक्षेप एक समय प्राप्त होता है। यदि दो समय अधिक शेष हो तो निक्षेप दो समय प्राप्त होता है। इस प्रकार आगे आगे शेष रही स्थितिके अनुसार निक्षेप बढता जाता है।

§ ४५६ अब प्रकृत स्थितिमें विकल्पोंको समाप्त करके आगेकी स्थितियोंमें विकल्पोंका विचार करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेका सूत्र कहते हैं—

*** विवक्षित स्थितिमें एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण अवस्तु विकल्प होते हैं। इस प्रकार इस स्थितिके विकल्प समाप्त हुए ।**

४५७. यह सूत्र सरल है।

विशेषार्थ—विवक्षित स्थिति दो समय कम आवलिसे न्यून आबाधाकी अन्तिम स्थिति है, अतः इसमें, जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति उदय समयसे लेकर एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाकाल तक शेष रही है, वे कर्मपरमाणु नहीं पाये जाते। इसीसे इस विवक्षित स्थितिमें एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण अवस्तुविकल्प बतलाये हैं।

*** अब इस स्थितिसे एक समय अधिक स्थितिके विकल्प कहेंगे ।**

§ ४५८ इमादो पुव्वणिरुद्धट्ठिदीदो समयुत्तरा जा ट्ठिदी तिस्से पदेसग्गस्स अवत्थुवियप्पे झीणाझीणट्ठिदियवियप्पे च भणिस्सामो त्ति सुत्तत्थो ।

⊛ सा पुण का ट्ठिदी ।

§ ४५९ सा पुण संपहि णिरुंभिज्जमाणा का ट्ठिदी, कइत्थी सा, उदयट्ठिदीदो केत्तियमद्धाणमुवरि चडिय अवट्ठिदा, आबाहाचरिमसमयादो वा केत्तियमेत्तमोदरिय त्ति एवमासंकिय सिस्सं णिरारेगं काउमुत्तरसुत्तं भणइ—

⊛ दुसमयूणाए आवलियाए ऊणिया जा आबाहा एसा सा ट्ठिदी ।

§ ४६० केत्तिया दुसमयूणाए आवलियाए ऊणिया आबाहा एसा सा ट्ठिदी, एत्तियमेत्ता सा ट्ठिदी जा संपहि वियप्पपरूवणट्ठमाइट्ठा । उदयट्ठिदीदो दुसमयूणावलिय परिहीणाबाहामेत्तमद्धाणमुवरि चडिय आबाहाचरिमसमयादो दुसमयूणावलियमेत्तं हेट्ठदो ओसरिय पुव्वाणंतरणिरुद्धट्ठिदीए उवरि ट्ठिदा एसा ट्ठिदि त्ति वुत्तं होइ ।

⊛ इवाणिमेदिस्से ट्ठिदीए अवत्थुवियप्पा केत्तिया ।

§ ४६१ सुगमं ।

⊛ जावदिया हेट्ठिल्लियाए ट्ठिदीए अवत्थुवियप्पा तदो रूवुत्तरा ।

---

§ ४५८. इससे अर्थात् पूर्व विवक्षित स्थितिसे जो एक समय अधिक स्थिति है उस स्थितिके कर्मपरमाणुओंके अवस्तुविकल्प और झीनाझीन स्थितिविकल्प कहेंगे यह इस सूत्रका भाव है ।

⊛ वह कौनसी स्थिति है ?

§ ४५९ जो इस समय विवक्षित है वह कौनसी स्थिति है, उसका क्या प्रमाण है, उदयस्थितिसे कितना स्थान आगे जाकर वह स्थित है, या आबाधाके अन्तिम समयसे कितना स्थान पीछे जाकर वह पाई जाती है इस प्रकारकी शंका करनेवाले शिष्यको निशंक करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

⊛ दो समय कम आवलिसे न्यून जो आबाधा है यह वह स्थिति है ।

§ ४६० दो समय कम आवलिसे न्यून आबाधाका जितना प्रमाण हो इतनी वह स्थिति है जो इस समय विकल्पोंका कथन करनेके लिये विवक्षित है । उदय स्थितिसे दो समय कम आवलि हीन आबाधाप्रमाण स्थान आगे जाकर और आबाधाके अन्तिम समयसे दो समय कम आवलिप्रमाण स्थान पीछे जाकर पूर्वोक्त अनन्तरवर्ती विवक्षित स्थितिके आगे यह स्थिति है यह इस सूत्रका भाव है ।

⊛ अब इस स्थितिके अवस्तुविकल्प कितने हैं ।

§ ४६१ यह सूत्र सरल है ।

⊛ पिछली स्थितिके जितने अवस्तु विकल्प हैं उनसे एक अधिक हैं ।

एत्थतणी अधिच्छावणा ? आवलियमेत्ती अवट्ठिदा चेयमुवरि सव्वत्थ। केत्तिओ पुण एत्थ णिक्खेवो ? एओ समओ । सो च अणवट्ठिओ समउत्तरादिकमेण उवरिम-वियप्पेसु वट्टमाणो गच्छइ ।

§ ४५६. संपहि पयदट्ठिदीए वियप्पे समाणिय उवरिमासु ट्ठिदीसु वियप्पगवेसणं कुणमाणो चुण्णिसुत्तयारो इदमाह—

❀ समयूणाए आवलियाए ऊणिया आवाहा । एदिस्से ट्ठिदीए वियप्पा समत्ता ।

§ ४५७. सुगमं ।

❀ एदादो ट्ठिदीदो समयुत्तराए ट्ठिदीए वियप्पे भणिस्सामो ।

शंका—यहाँ अतिस्थापनाका प्रमाण कितना है ?

समाधान—एक आवली, जो कि आगे सर्वत्र अवस्थित ही जानना चाहिये।

शंका—यहाँ निक्षेपका प्रमाण कितना है ?

समाधान—एक समय जो कि अनवस्थित है, क्योंकि वह आगेके विकल्पोंमें एक-एक समय अधिकके क्रमसे बढता जाता है।

विशेषार्थ—पहले यह बतलाकर कि एक समय कम आवलिसे न्यून आवाधाप्रमाण कर्मस्थितिमें जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति एक समय अधिक आबाधाप्रमाण शेष हो उनका उत्कर्षण नहीं हो सकता, क्योंकि यहाँ आवलिप्रमाण अतिस्थापनाके रहने पर भी निक्षेपका सर्वथा अभाव है। अब यह बतलाया गया है कि उसी विवक्षित स्थितिमें जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति उक्त स्थितिसे अधिक शेष हो उनका उत्कर्षण हो सकता है। यहाँ सर्वत्र अतिस्थापना तो एक आवलिप्रमाण ही प्राप्त होती है न्यूनाधिक नहीं। पर निक्षेप उत्तरोत्तर बढता जाता है। यदि पूर्वस्थितिसे एक समय अधिक स्थिति शेष हो तो निक्षेप एक समय प्राप्त होता है। यदि दो समय अधिक शेष हो तो निक्षेप दो समय प्राप्त होता है। इस प्रकार आगे आगे शेष रही स्थितिके अनुसार निक्षेप बढता जाता है।

§ ४५६ अब प्रकृत स्थितिमें विकल्पोंको समाप्त करके आगेकी स्थितियोंमें विकल्पोंका विचार करते हुए चूर्णिसूत्रकार आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ विवक्षित स्थितिमें एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण अवस्तु विकल्प होते हैं। इस प्रकार इस स्थितिके विकल्प समाप्त हुए।

४५७ यह सूत्र सरल है।

विशेषार्थ—विवक्षित स्थिति दो समय कम आवलिसे न्यून आबाधाकी अन्तिम स्थिति है, अत. इसमें, जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति उदय समयसे लेकर एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाकाल तक शेष रही है, वे कर्मपरमाणु नहीं पाये जाते। इसीसे इस विवक्षित स्थितिमें एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण अवस्तुविकल्प बतलाये हैं।

❀ अब इस स्थितिसे एक समय अधिक स्थितिके विकल्प कहेंगे।

§ ४६५ एत्थ तं पि सद्दो आवित्तीए दोवारमहिसंबंधेयव्वो । तं पि पदेसग्गं एदिस्से हिदीए दीसइ । दिस्समाणं पि उक्कड्डणादो झीणहिदियमिदि ।

❀ आबाहासमयुत्तरमेत्तं हिदिसंतकम्मं कम्महिदीए सेसं जस्स पदेसग्गस्स तं पि उक्कड्डणादो झीणहिदियं ।

§ ४६६ कम्महिदीए अब्भंतरे जस्स पदेसग्गस्स समयुत्तराबाहामेत्तहिदिसंतकम्ममवसेसं तं पि एदिस्से हिदीए द्विदमुक्कड्डणादो झीणहिदियं । कुदो ? अधिच्छावणाए अज्ज वि समयूणत्तदंसणादो ।

❀ आबाधादुसमयुत्तरमेत्तहिदिसंतकम्मं कम्महिदीए सेसं जस्स पदेसग्गस्स एदिस्से हिदीए विस्सइ तं पदेसग्गमुक्कड्डणादो झीणहिदियं ।

§ ४६७ कुदो अधिच्छावणाए आवलियमेत्तीए संपुण्णाए संतीए झीणहिदियत्तमेदस्स ? ण, णिक्खेवाभावेण तदाभावाविरोहादो ।

---

§ ४६५. इस सूत्रमें 'तं पि' शब्दकी आवृत्ति करके दो बार सम्बन्ध कर लेना चाहिये। यथा—वे कर्मपरमाणु भी इस स्थितिमें पाये जाते हैं। पाये जाकर भी वे उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

❀ तथा जिन कर्मपरमाणुओंकी कर्मस्थितिमें एक समय अधिक आबाधाप्रमाण स्थिति शेष है वे कर्मपरमाणु भी उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

§ ४६६ कर्मस्थितिके भीतर जिन कर्मपरमाणुओंका एक समय अधिक आबाधाप्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष है वे कर्मपरमाणु भी यद्यपि इस स्थितिमें हैं तो भी वे उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं क्योंकि अभी भी अतिस्थापनामें एक समय कम देखा जाता है।

❀ कर्मस्थितिके भीतर जिन कर्मपरमाणुओंका दो समय अधिक आबाधाप्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष है वे कर्मपरमाणु भी इस स्थितिमें पाये जाते हैं। परन्तु वे उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

§ ४६७ शंका—जब कि अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण पूरी है तब इन कर्मपरमाणुओंमें झीनस्थितिपना कैसे है ?

समाधान—नहीं क्योंकि निक्षेपका अभाव होनेसे इन कर्मपरमाणुओंमें झीनस्थितिपनाके होनेमें कोई विरोध नहीं है।

विशेषार्थ—इन पूर्वोक्त सूत्रोंमें यह बतलाया है कि तीन समय अधिक आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिमें झीनस्थिति विकल्प कहाँसे लेकर कहाँ तक होते हैं। यह तो पहले ही बतलाया जा चुका है कि एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिसे लेकर आगे सर्वत्र अतिस्थापना एक आवलि प्राप्त होती है। विवक्षित स्थिति भी उक्त स्थितिसे दो समय आगे जाकर प्राप्त है, इसलिये इसमें भी अतिस्थापनाका प्रमाण एक आवलि प्राप्त होता है। आशय यह है कि इस स्थितिमें जो कर्मपरमाणु स्थित हैं उनमेंसे जिनकी स्थिति यही विवक्षित

§ ४६२. संतकम्ममस्सियूण जेत्तिया अणतरहेट्ठिमाए अवत्थुवियप्पा तदो रूवुत्तरा एत्थ ते वत्तव्वा, तत्तो रूवुत्तरमद्धाण चडिय एदिस्से अवट्ठाणादो। एदं रूवुत्तरवयणमंतदीवयं। तेण हेट्ठिमासेसट्ठिदीणमवत्थुवियप्पा अणंतराणंतरादो रूवुत्तरा त्ति घेत्तव्व। एद च संतकम्ममस्सियूण परूविदं, ण णवकबंधमस्सिय, तत्थावलिय-मेत्ताणमवत्थुवियप्पाणमवट्ठिदसरूवेणावट्ठाणादो। एवमवत्थुवियप्पे परूविय वत्थु-वियप्पाण झीणाझीणट्ठिदियभेदभिण्णाण परूवणट्ठमुत्तरो पबंधो—

❀ जदे ही एसा ट्ठिदी तत्तियं ट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसयं जस्स पदेसग्गस्स तं पयेसग्गमेदिस्से ट्ठिदीए होज्ज तं पुण उक्कड्डुणादो झीणट्ठिदियं।

§ ४६३. कुदो ? उवरि सत्तिट्ठिदीए एयस्स वि समयस्स अभावादो।

❀ एदादो ट्ठिदीदो समयुत्तरट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसयं जस्स पदेसग्गस्स तमुक्कड्डुणादो झीणट्ठिदियं।

§ ४६४. सुगम।

❀ एवं गंतूण आबाहामेत्तट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसं जस्स पदेसग्गस्स एदीए ट्ठिदीए दीसइ तं पि उक्कड्डुणादो झीणट्ठिदियं।

---

§ ४६२ सत्कर्मकी अपेक्षा जितने अनन्तरवर्ती पिछली स्थितिके अवस्तुविकल्प हैं उनसे एक अधिक यहाँ वे विकल्प हैं, क्योंकि पूर्वस्थितिसे एक स्थान आगे जाकर यह स्थिति अवस्थित है। इस सूत्रमें जो 'रूवुत्तरा' वचन आया है सो यह अन्तदीपक है। इससे यह मालूम होता है कि पीछे सर्वत्र पूर्व पूर्व अनन्तरवर्ती स्थितिसे आगे आगेकी स्थितिके अवस्तु विकल्प एक एक अधिक होते हैं। यह सब सत्कर्मकी अपेक्षासे कहा है, नवकबन्धकी अपेक्षासे नहीं, क्योंकि नवकबन्धकी अपेक्षासे सर्वत्र एक आवलिप्रमाण ही अवस्तुविकल्प पाये जाते हैं। इस प्रकार अवस्तुविकल्पोंका कथन करके झीनाझीनस्थितियोंकी अपेक्षासे अनेक प्रकारके वस्तुविकल्पोंका कथन करनेके लिये आगेकी रचना है –

* जितनी यह स्थिति है उतना स्थितिसत्कर्म जिन कर्मपरमाणुओंका शेष है व कर्मपरमाणु इस स्थितिमें हैं। किन्तु वे उत्कर्षणसे झीनस्थितिवाले हैं।

§ ४६३ क्योंकि ऊपर एक समयमात्र भी शक्तिस्थिति नहीं पाई जाती है।

* इस स्थितिसे जिन कर्मपरमाणुओंका कर्मस्थितिमें एक समय अधिक स्थिति-सत्कर्म शेष है वे कर्मपरमाणु भी उत्कर्षणसे झीनस्थितिवाले हैं।

§ ४६४ यह सूत्र सरल है।

* इसी प्रकार आगे जाकर कर्मस्थितिमें जिन कर्मपरमाणुओंका आबाधा-प्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष है वे कर्मपरमाणु भी इस स्थितिमें पाये जाते हैं। परन्तु वे भी उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

§ ४६५ एत्थ तं पि सद्दो आवित्तीए दोवारमहिसंबंधेयव्वो । तं पि पदेसग्गं एदिस्से ट्ठिदीए दीसइ । दिस्समाणं पि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियमिदि ।

ॐ आबाहासमयुत्तरमेत्तट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसं जस्स पदेसग्गस्स तं पि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं ।

§ ४६६ कम्मट्ठिदीए अब्भंतरे जस्स पदेसग्गस्स समयुत्तराबाहामेत्तट्ठिदिसंतकम्ममवसेसं तं पि एदिस्से ट्ठिदीए ट्ठिदमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं । कुदो ? अइच्छावणाए अज्ज वि समयूणत्तदंसणादो ।

ॐ आबाहादुसमयुत्तरमेत्तट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसं जस्स पदेसग्गस्स एदिस्से ट्ठिदीए दिस्सइ तं पदेसग्गमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं ।

§ ४६७ कुदो अइच्छावणाए आवलियमेत्तीए संपुण्णाए संतीए झीणट्ठिदियत्तमेदस्स ? ण, णिक्खेवाभावेण तब्भावाविरोहादो ।

---

§ ४६५. इस सूत्रमें 'तं पि' शब्दकी आवृत्ति करके दो बार सम्बन्ध कर लेना चाहिये । यथा—वे कर्मपरमाणु भी इस स्थितिमें पाये जाते हैं। पाये जाकर भी वे उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

* तथा जिन कर्मपरमाणुओंकी कर्मस्थितिमें एक समय अधिक आबाधा प्रमाण स्थिति शेष है वे कर्मपरमाणु भी उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

§ ४६६. कर्मस्थितिके भीतर जिन कर्मपरमाणुओंका एक समय अधिक आबाधाप्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष है वे कर्मपरमाणु भी यद्यपि इस स्थितिमें हैं तो भी वे उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं क्योंकि अभी भी अतिस्थापनामें एक समय कम देखा जाता है।

* कर्मस्थितिके भीतर जिन कर्मपरमाणुओंका दो समय अधिक आबाधा प्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष है वे कर्मपरमाणु भी इस स्थितिमें पाये जाते हैं। परन्तु वे उत्कर्षणसे झीन स्थितिवाले हैं।

§ ४६७ शंका—जब कि अतिस्थापना एक आवलिप्रमाण पूरी है तब इन कर्मपरमाणुओंमें झीनस्थितिपना कैसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि निक्षेपका अभाव होनेसे इन कर्मपरमाणुओंमें झीनस्थितिपनेके होनेमें कोई विरोध नहीं है।

विशेषार्थ—इन पूर्वोक्त सूत्रोंमें यह बतलाया है कि तीन समय अधिक आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिमें झीनस्थिति विकल्प कहाँसे लेकर कहाँ तक होते हैं। यह तो पहले ही बतलाया जा चुका है कि एक समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिसे लेकर आगे सर्वत्र अतिस्थापना एक आवलि प्राप्त होती है। विवक्षित स्थिति भी उक्त स्थितिसे दो समय आगे जाकर प्राप्त है, इसलिये इसमें भी अतिस्थापनाका प्रमाण एक आवलि प्राप्त होता है। तात्पर्य यह है कि इस स्थितिमें जो कर्मपरमाणु स्थित हैं उनमेंसे जिनकी स्थिति उसी विवक्षित

❀ तेण परमुक्कड्डणादो अभीणट्ठिदियं ।

§ ४६८. आवलियमेत्तमइच्छावि एक्किस्से अणतरोवरिमट्ठिदीए णिक्खेवुवलंभादो उवरि णिक्खेवस्स समयुत्तरकमेण वड्डिदंसणादो च ।

❀ दुसमयूणाए आवलियाए ऊणिया आबाहा एवडिमाए ट्ठिदीए वियप्पा समत्ता ।

❀ एत्तो समयुत्तराए ट्ठिदीए वियप्पे भणिस्सामो ।

§ ४६९. एत्तो समणतरविदिक्कंतणिरुद्धट्ठिदीदो जा समयुत्तरा ट्ठिदी तिस्से वियप्पे अवत्थु झीणाझीणट्ठिदियभेदभिण्णे भणिस्सामो त्ति पइज्जासुत्तमेदं ।

❀ एत्तो पुण ट्ठिदीदो समयुत्तरा ट्ठिदी कदमा ।

§ ४७०. सुगमं ।

❀ जहण्णिया आबाहा तिसमयूणाए आवलियाए ऊणिया एवडिमा ट्ठिदी ।

स्थितिप्रमाण या उससे एक समयसे लेकर एक आवलि तक अधिक है उनका उत्कर्षण नहीं हो सकता, क्योंकि यहाँ अन्तिम विकल्पमें यद्यपि अतिस्थापना पूरी हो गई है तो भी निक्षेपका सर्वत्र अभाव है ।

*** उससे आगे उत्कर्षणसे अभीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं ।**

§ ४६८ क्योंकि यहाँ एक आवलिप्रमाण स्थितियोंको अतिस्थापनारूपसे स्थापित करके अनन्तरवर्ती आगेकी एक स्थितिमें निक्षेप देखा जाता है और आगे भी एक एक समय अधिकके क्रमसे निक्षेपकी वृद्धि देखी जाती है ।

विशेषार्थ—दो समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिमें जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति तीन समय अधिक आबाधा प्रमाण या इससे भी अधिक है उन कर्मपरमाणओंका उत्कर्षण हो सकता है, क्योंकि यहाँ अतिस्थापना और निक्षेप दोनों पाये जाते हैं यह इस सूत्रका आशय है ।

*** दो समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिके विकल्प समाप्त हुए ।**

*** अब इस पूर्वोक्त स्थितिसे एक समय अधिक स्थितिके विकल्प कहेंगे ।**

§ ४६९ अब इस समनन्तर व्यतीत हुई विवक्षित स्थितिसे जो एक समय अधिक स्थिति है उसके अवस्तु और झीनाझीन स्थितियोंकी अपेक्षा नाना प्रकारके विकल्पोंको कहेंगे इस प्रकार यह प्रतिज्ञा सूत्र है ।

*** किन्तु इस स्थितिसे एक समय अधिक स्थिति कौन सी है ।**

§ ४७० यह सूत्र सुगम है ।

*** तीन समय कम आवलिसे न्यून जघन्य आबाधाका जितना प्रमाण है यह वह स्थिति है ।**

§ ४७१ तदियट्ठिदीदो तिसमयूणावलियपरिहीणजहण्णाबाहामेत्तमुवरि चडिय आबाहाचरिमसमयादो तिसमयूणावलियमेत्तमोदरिय एसा ट्ठिदी ट्ठिदा त्ति वुत्तं होदि। एदिस्से ट्ठिदीए केत्तिया वियप्पा होंति त्ति सिस्साहिप्पायमासंकिय एत्तियमेत्ता होंति त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

* एदिस्से ट्ठिदीए एत्तिया चेव वियप्पा। णवरि अवत्थुवियप्पा रूवुत्तरा।

§ ४७२ एदिस्से संपहि णिरुद्धट्ठिदीए एत्तिया चेव वियप्पा होंति जेत्तिया अणंतरहेट्ठिमाए। णवरि संतकम्ममस्सियूण अवत्थुवियप्पा रूवुत्तरा होंति, तत्तो रूवुत्तरमेत्तमद्धाणमुवरि गंतूणावट्ठाणादो।

* एस कमो जाव जहण्णिया आबाहा समयुत्तरा त्ति।

§ ४७३ एस अणंतरपरूविदो कमो जाव जहण्णिया आबाहा समयुत्तरा त्ति ताव द्विदाणं दुसमयूणावलियमेत्तियाणमुवरिमट्ठिदीण पि अणूणाहिओ जाणयव्वो, विसेसाभावादो। णवरि आबाहाचरिमसमयादो अणंतरोवरिमाए ट्ठिदीए णवकबंधमस्सियूण अवत्थुवियप्पा ण लब्भंति। आबाहाए बाहिं तक्कालियस्स वि णवकबंध

§ ४७१ तृतीय स्थितिसे तीन समय कम आवलिसे न्यून जघन्य आबाधाप्रमाण स्थान आगे जाकर और आबाधाके अन्तिम समयसे तीन समय कम एक आवलिप्रमाण स्थान पीछे आकर यह स्थिति स्थित है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस स्थितिमें कितने विकल्प होते हैं इस प्रकार शिष्यके अभिप्रायानुसार आशंका करके इतने विकल्प होते हैं यह बतलानेके लिये आगेका सूत्र आया है—

* इस स्थितिमें इतने ही विकल्प होते हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि अवस्तुविकल्प एक अधिक होते हैं।

§ ४७२. इस समय जो स्थिति विवक्षित है उसमें इतने ही विकल्प होते हैं जितने अनन्तर पूर्ववर्ती स्थितिमें बतला आये हैं। किन्तु सत्कर्मकी अपेक्षा अवस्तुविकल्प एक अधिक होते हैं क्योंकि पूर्व स्थितिसे एक स्थान आगे जाकर यह स्थिति अवस्थित है।

विशेषार्थ—पूर्व स्थितिसे इस स्थितिमें और कोई विशेषता नहीं है, इसलिये इसके और सब विकल्प तो पूर्व स्थितिके ही समान हैं। किन्तु अवस्तुविकल्पोंमें एककी वृद्धि हो जाती है, क्योंकि पूर्व स्थितिसे एक स्थान आगे जाकर यह स्थिति स्थित है यह इस सूत्रका भाव है।

* एक समय अधिक जघन्य आबाधाप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक यही क्रम जानना चाहिये।

§ ४७३. यह जो इससे पहले क्रम कहा है वह एक समय अधिक जघन्य आबाधाके प्राप्त होने तक जो दो समय कम एक आवलिप्रमाण स्थितियाँ अवस्थित हैं उन आगेकी स्थितियोंका भी न्यूनाधिकताके बिना पूर्ववत् जानना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि आबाधाके अन्तिम समयसे अनन्तर स्थित आगेकी स्थितिमें नवकबन्धकी अपेक्षा अवस्तुविकल्प नहीं पाये जाते, क्योंकि आबाधाके बाहर स्थित

❀ तेण परमुक्कड्डुणादो अभीणट्ठिदियं ।

§ ४६८. आवलियमेत्तमइच्छाविय एक्किस्से अणतरोवरिमट्ठिदीए णिक्खेवुव-लंभादो उवरि णिक्खेवस्स समयुत्तरकमेण वड्ढिदंसणादो च ।

❀ दुसमयूणाए आवलियाए ऊणिया आबाहा एवडिमाए ट्ठिदीए वियप्पा समत्ता ।

❀ एत्तो समयुत्तराए ट्ठिदीए वियप्पे भणिस्सामो ।

§ ४६९. एत्तो समणतरविदिक्कंतणिरुद्धट्ठिदीदो जा समयुत्तरा ट्ठिदी तिस्से वियप्पे अवत्थु भीणाभीणट्ठिदियभेदभिण्णे भणिस्सामो त्ति पइज्जासुत्तमेदं ।

❀ एत्तो पुण ट्ठिदीदो समयुत्तरा ट्ठिदी कदमा ।

§ ४७०. सुगमं ।

❀ जहण्णिया आबाहा तिसमयूणाए आवलियाए ऊणिया एवडिमा ट्ठिदी ।

स्थितिप्रमाण या उससे एक समयसे लेकर एक आवलि तक अधिक हैं उनका उत्कर्षण नहीं हो सकता, क्योंकि यहाँ अन्तिम विकल्पमें यद्यपि अतिस्थापना पूरी हो गई है तो भी निक्षेपका सर्वत्र अभाव है।

*** उससे आगे उत्कर्षणसे अभीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं ।**

§ ४६८ क्योंकि यहाँ एक आवलिप्रमाण स्थितियोंको अतिस्थापनारूपसे स्थापित करके अनन्तरवर्ती आगेकी एक स्थितिमें निक्षेप देखा जाता है और आगे भी एक एक समय अधिकके क्रमसे निक्षेपकी वृद्धि देखी जाती है।

विशेषार्थ—दो समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिमें जिन कर्म-परमाणुओंकी स्थिति तीन समय अधिक आबाधा प्रमाण या इससे भी अधिक है उन कर्म-परमाणुओंका उत्कर्षण हो सकता है, क्योंकि यहाँ अतिस्थापना और निक्षेप दोनों पाये जाते हैं यह इस सूत्रका आशय है।

*** दो समय कम आवलिसे न्यून आबाधाप्रमाण स्थितिके विकल्प समाप्त हुए ।**

*** अब इस पूर्वोक्त स्थितिसे एक समय अधिक स्थितिके विकल्प कहेंगे ।**

§ ४६९ अब इस समनन्तर व्यतीत हुई विवक्षित स्थितिसे जो एक समय अधिक स्थिति है उसके अवस्तु और भीनाभीन स्थितियोंकी अपेक्षा नाना प्रकारके विकल्पोंको कहेंगे इस प्रकार यह प्रतिज्ञा सूत्र है।

*** किन्तु इस स्थितिसे एक समय अधिक स्थिति कौन सी है ।**

§ ४७० यह सूत्र सुगम है।

*** तीन समय कम आवलिसे न्यून जघन्य आबाधाका जितना प्रमाण है यह वह स्थिति है ।**

कम्मट्ठिदियसमयपबद्धपडिबद्धपदेसग्गस्स ओकड्डणाए आबाहाब्भंतरे णिक्खित्तस्स पुणो वि उक्कड्डियूण आबाहादो उवरि णिक्खेवसंभवेण तत्तो झीणट्ठिदियत्ताणुव-लंभादो। ण च णिरुद्धट्ठिदीए चेव समवट्ठिदाणमुक्कड्डणा ण संभवदि त्ति तत्तो झीणट्ठिदियत्त चोदु जुत्तं, तत्थ वा तत्थ वा ट्ठिदस्स णिरुद्धट्ठिदिपदेसग्गस्स उक्कड्डणासत्तीए अच्चंताभावस्सेह विवक्खियत्तादो। एसा सव्वा वि उक्कड्डणादो झीणाझीणट्ठिदियाणमट्ठपदपरूवणा ओघेण मूलुत्तरपयडिविसेसविवक्खमकाऊण सामण्णेण परूविदा। एत्तो सव्वासु वि मग्गणासु सगसगजहण्णाबाहाओ अस्सियूण पुध पुध सव्वकम्माणमट्ठपदपरूवणा कायव्वा।

❀ एवमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियस्स अट्ठपदं समत्तं।

❀ एत्तो संकमणादो झीणट्ठिदियं।

§ ४७५ एत्तो उवरि संकमणादो झीणट्ठिदियं भणिस्सामो त्ति पइज्जासुत्तमेदं।

❀ जं उदयावलियपविट्ठं तं, णत्थि अण्णो वियप्पो।

§ ४७६ एत्थ संकमणादो झीणट्ठिदियमिदि अणुवट्टदे। तेण अणुदयावलियं पइट्ठं तं संकमणादो झीणट्ठिदियं होदि त्ति संबंधो कायव्वो। कुदो उदयावलियब्भंतरे

कर्मपरमाणुओंने यहाँ अपनी स्थिति समाप्त कर ली हो उनको अपकर्षण द्वारा आबाधाके भीतर निक्षिप्त कर देने पर उत्कर्षण होकर फिर भी उनका आबाधाके ऊपर निक्षेप सम्भव है, इसलिये उनमें उत्कर्षणसे झीनस्थितिपना नहीं पाया जाता।

यदि कहा जाय कि विवक्षित स्थितिमें ही अवस्थित रहते हुए इनका उत्कर्षण सम्भव नहीं है इसलिये इन्हें उत्कर्षणसे झीनस्थितिवाला कहना युक्त है सो भी बात नहीं है, क्योंकि विवक्षित स्थितिके कर्मपरमाणु यहाँ भी स्थित रहें किन्तु यहाँ तो उत्कर्षणशक्तिका अत्यन्त अभाव विवक्षित है। उत्कर्षणसे झीनाझीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका यह सबकी सब अर्थपदप्ररूपणा ओघसे मूल और उत्तर प्रकृतिविशेषकी विवक्षा न करके सामान्यसे यहाँ कही है। आगे सभी मार्गणाओंमें अपनी अपनी जघन्य आबाधाओंकी अपेक्षा पृथक्-पृथक् सब कर्मोंकी अर्थपदप्ररूपणा करनी चाहिये।

❀ इस प्रकार उत्कर्षणसे झीनस्थितिक प्रदेशाग्रका अर्थपद समाप्त हुआ।

❀ अब इससे आगे संक्रमणसे झीनस्थितिक अधिकारका निर्देश करते हैं।

§ ४७५ इससे आगे संक्रमणसे झीनस्थितिक अधिकारको कहेंगे इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है।

❀ जो कर्मपरमाणु उदयावलिके भीतर स्थित हैं वे संक्रमणसे झीनस्थितिवाले हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ दूसरा विकल्प नहीं है।

§ ४७६ इस सूत्रमें 'संक्रमणादो झीणट्ठिदियं' इस पदकी अनुवृत्ति होती है। इससे इस सूत्रका यह अर्थ होता है कि जो कर्म उदयावलिके भीतर स्थित हैं वह कर्म संक्रमणसे झीन

पदेसणिसेयस्स पडिसेहाभावादो।

❀ जहण्णियाए आवाहाए दुसमयुत्तराए पहुडि णत्थि उक्कडुणादो भीणहिदियं।

§ ४७४. एदस्स सुत्तस्स अवयवत्थपरूवणा सुगमा। एत्थ चोदओ भणदि—दुसमयुत्तरजहण्णाबाहाओ उवरिमहिदीसु वि उक्कडुणादो भीणहिदिय पदेसग्गमत्थि, तत्थेव णिहियकम्मद्विदियसमयपबद्धपदेसग्गप्पहुडि अइच्छावणावलियमेत्ताणमेत्थ भीणहिदियवियप्पाणमुवलंभादो। ण च णवकबंधमस्सियूण अवत्थुवियप्पा णत्थि त्ति तहा परूवण णाइय, तेसिमेत्थ पहाणत्ताभावादो। तदो आवलियमेत्तेसु भीण-हिदियवियप्पेसु आवाहादो उवरि वि हिदिं पडि लब्भमाणेसु किमेदं वुच्चदे—आबाहाए दुसमयुत्तराए पहुडि णत्थि उक्कडुणादो भीणहिदियमिदि? एत्थ परिहारो वुच्चदे—उक्कडुणादो भीणा हिदी जस्स पदेसग्गस्स तमुक्कडुणादो भीणहिदिय णाम। ण च एद दुसमयुत्तराबाहप्पहुडि उवरिमासु हिदीसु सभवइ, तत्थ समाणिद-

---

समय बन्ध होता है उस समय भी नवकबन्धके निषेकोका प्रतिषेध नहीं है।

विशेषार्थ—तीन समय कम आवलिसे न्यून जघन्य आबाधाप्रमाण स्थितिके सम्बन्धमें जो क्रम कहा है वही क्रम एक समय अधिक आबाधाप्रमाण स्थितिके प्राप्त होने तक भी प्रत्येक स्थितिका जानना चाहिये यह इस सूत्रका आशय है। किन्तु आबाधाप्रमाण स्थितिसे आगेकी स्थितिमें नवकबन्धकी अपेक्षा अवस्तुविकल्प नहीं पाये जाते, यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये। इसका कारण यह है कि आबाधाके भीतर निषेकरचना नहीं होनेके कारण सर्वत्र एक आवलि-प्रमाण अवस्तुविकल्प प्राप्त हो जाते हैं। पर आबाधाके बाहर तो प्रारम्भसे ही निषेकरचना पाई जाती है, इसलिये वहाँ नवकबन्धकी अपेक्षा अवस्तुविकल्प किसी भी हालतमें सम्भव नहीं हैं।

❀ दो समय अधिक जघन्य आबाधाप्रमाण स्थितिसे लेकर आगे उत्कर्षणसे भीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु नहीं हैं।

§ ४७४ इस सूत्रके प्रत्येक पदका व्याख्यान सुगम है।

शंका—यहाँ पर शंकाकार कहता है कि दो समय अधिक जघन्य आबाधाप्रमाण स्थितिसे लेकर आगेकी स्थितियोंमें भी उत्कर्षणसे भीन स्थितिवाले कर्मपरमाणु हैं, क्योंकि समयप्रबद्धके जिन कर्मपरमाणुओंकी कर्मस्थिति वहीं समाप्त हो गई है उन कर्मपरमाणुओंसे लेकर अतिस्थापनावलिप्रमाण भीनस्थितिविकल्प यहाँ पाये जाते हैं। यदि कहा जाय कि नवकबन्धकी अपेक्षा अवस्तुविकल्प नहीं हैं, इसलिये ऐसा कथन करना न्याय्य है सो भी बात नहीं है, क्योंकि उनकी यहाँ प्रधानता नहीं है। इसलिए जब कि आबाधासे ऊपर प्रत्येक स्थितिके प्रति एक आवलिप्रमाण भीनस्थितिविकल्प पाये जाते हैं तब फिर यह क्यों कहा जाता है कि दो समय अधिक आबाधाप्रमाण स्थितिसे आगे उत्कर्षणसे भीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु नहीं हैं?

समाधान—अब यहाँ इस शंकाका परिहार करते हैं—जिन कर्मपरमाणुओंकी स्थिति उत्कर्षणसे भीन है वे कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे भीनस्थितिवाले कहलाते हैं। किन्तु यह अर्थ दो समय अधिक आबाधासे आगेकी स्थितियोंमें सम्भव नहीं है, क्योंकि समयप्रबद्धके जिन

§ ४७९ एवं सामण्णेण चदुण्हं पि झीणट्ठिदियाणं सपडिवक्खाणमट्ठपदपरूवणं काऊण संपहि एदेसिं चेव विसेसिय परूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ एत्तो एगेगझीणट्ठिदियमुक्कस्सयमणुक्कस्सयं जहण्णयमजहण्णयं च।

§ ४८० जहासंखणाएण विणा पादेक्कमेदेसिं झीणट्ठिदियाणमुक्कस्सादिपदेहिं संबंधपरूवणफला एगेगे त्ति णिद्देसो, अण्णहा समसंखाणमेदेसिं जहासंखसंबंधप्पसंगादो। तदो तमेक्केक्कं चउव्वियप्पसंजुत्तं णिद्दिसइ—उक्कस्सयमणुक्कस्सयं जहण्णयमजहण्णयं चेदि। तत्थ बहुअयरं पदेसग्गमोकड्डणादिचउण्हं पि झीणट्ठिदियमुवलब्भइ तमुक्कस्सं णाम। एवं सेसपदाणं वत्तव्वं। एवं परूवणा गदा।

❀ सामित्तं।

विशेषार्थ—यहाँ यह बतलाया है कि कौनसे कर्मपरमाणु उदयसे झीनस्थितिवाले हैं और कौनसे कर्मपरमाणु उदयसे अझीनस्थितिवाले हैं। जिन कर्मपरमाणुओंका उदय हो रहा है उनका पुनः उदयमें आना सम्भव नहीं इसलिये एक समय तत्काल गलनेवाले कर्मपरमाणु उदयसे झीनस्थितिवाले हैं और इनके अतिरिक्त शेष सब कर्मपरमाणु उदयसे अझीनस्थितिवाले हैं यह इस सूत्रका भाव है।

§ ४७९ इस प्रकार सामान्यसे अपने प्रतिपक्षभूत कर्मपरमाणुओंके साथ चारों ही झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके अर्थपदका कथन करके अब इन्हींके विशेषताका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ इनमेंसे प्रत्येक झीनस्थितिवाले कर्म उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य हैं।

§ ४८ चार प्रकारके झीनस्थितिवाले कर्मोंका क्रमसे उत्कृष्ट आदि चार पदोंके साथ सम्बन्ध नहीं है इसलिये यथासंख्य न्यायके बिना अलग अलग इन झीनस्थितिवाले कर्मोंका उत्कृष्ट आदि पदोंके साथ सम्बन्धका प्ररूपण करनेके लिये सूत्रमें 'एगेग' पदका निर्देश किया है। नहीं तो दोनों ही समसंख्यावाले होनेसे दोनोंका यथाक्रमसे सम्बन्ध हो जाता। इसलिये यह सूत्र व एक एक उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य इस प्रकार चार चार प्रकारके हैं इस बातका निर्देश करता है। जहाँ पर सर्वाधिक कर्मपरमाणु अपकर्षण आदि चारोंसे झीनस्थितिपनेको प्राप्त होते हैं वहाँ उत्कृष्ट विकल्प होता है। इसी प्रकार शेष पदोंका कथन करना चाहिये।

विशेषार्थ—अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु, उत्कर्षणसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु संक्रमणसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु और उदयसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु ये चार हैं। ये चारों ही प्रत्येक उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य इस प्रकार चार चार प्रकारके हैं यह इस सूत्रका भाव है।

इस प्रकार प्ररूपणा समाप्त हुई।

❀ अब स्वामित्वका अधिकार है।

संकमो णत्थि ? सहावदो। एत्तिओ चेव संकमणादो झीणट्ठिदिओ पदेसविसेसो त्ति जाणावणट्ठमेदं सुत्तं। णत्थि अण्णो वियप्पो त्ति उदयावलियबाहिरट्ठिदपदेसग्गं बंधावलियवदिक्कंतं सव्वमेव संकमपाओग्गत्तेण तत्तो अझीणट्ठिदियमिदि वुत्तं होइ।

❀ उदयादो झीणट्ठिदियं।

§ ४७७. एत्तो उदयादो झीणट्ठिदियं वुच्चइ त्ति अहियारसंभालणसुत्तमेदं।

❀ जमुदिण्णं तं, णत्थि अण्णं।

§ ४७८. एत्थ जमुदिण्णं दिण्णफलं होऊण तक्कालगलमाणं तमुदयादो झीणट्ठिदियमिदि सुत्तत्थसंबंधो। णत्थि अण्ण। कुदो ? सेसासेसट्ठिदिपदेसग्गस्स कमेण उदयपाओग्गत्तदंसणादो।

स्थितिवाला है, क्योंकि उदयावलिके भीतर सक्रमण नहीं होता ऐसा स्वभाव है। इतने ही कर्मपरमाणु सक्रमणसे झीनस्थितिवाले हैं यह जतानेके लिये यह सूत्र आया है। यहाँ इसके अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है। इसका यह अभिप्राय है कि बन्धावलिके सिवा उदयावलिके बाहर जितने भी कर्मपरमाणु स्थित हैं वे सब सक्रमणके योग्य हैं, इसलिये वे सक्रमणसे अझीन-स्थितिवाले हैं।

विशेषार्थ—विवक्षित कर्मके परमाणुओंका सजातीय कर्मरूप हो जाना सक्रमण कहलाता है। यहाँ यह बतलाया है कि इस प्रकारका सक्रमण किन परमाणुओंका हो सकता है और किनका नहीं। जो कर्मपरमाणु उदयावलिके भीतर स्थित हैं वे सबके सब सक्रमणके अयोग्य हैं और उदयावलिके बाहर जो कर्मपरमाणु स्थित हैं वे सबके सब सक्रमणके योग्य हैं यह इसका भाव है। किन्तु इससे तत्काल बँधे हुए कर्मोंका भी बन्धावलिके भीतर सक्रमण प्राप्त हुआ जो कि होता नहीं, इसलिये इसका निषेध करनेके लिये टीकामें इतना विशेष और कहा है कि बन्धावलिके सिवा उदयावलिके बाहरके कर्मपरमाणुओंका संक्रमण होता है। अब यहाँ प्रश्न यह है कि ऐसे भी कर्म हैं जिनका उदयावलिके बाहर भी सक्रमण सम्भव नहीं। जैसे आयुकर्म। अतः यहाँ इनके सक्रमणका निषेध क्यों नहीं किया सो इसका यह समाधान है कि जिन कर्मोंमें सक्रमण सम्भव है उन्हींकी अपेक्षासे यहाँ विचार करके यह बतलाया है कि उनमेसे किन कर्मपरमाणुओंका सक्रमण हो सकता है और किनका नहीं। आयु कर्म ऐसा है जिसका संक्रमण ही नहीं होता, अत. उसकी यहाँ विवक्षा नहीं है।

* अब उदयसे झीनस्थितिक अधिकारका निर्देश करते हैं।

§ ४७७ सक्रमणसे झीनस्थितिक अधिकारका निर्देश करनेके बाद अब उदयसे झीन-स्थितिक अधिकारका कथन करते हैं इस प्रकार यह सूत्र स्वतन्त्र अधिकारकी संम्हाल करनेके लिये आया है।

* जो कर्म उदीर्ण हो रहा है वह उदयसे झीनस्थितिवाला है। इसके अतिरिक्त यहाँ और कोई दूसरा विकल्प नहीं है।

§ ४७८ जो कर्म उदीर्ण हो रहा है अर्थात् फल देकर तत्काल गल रहा है वह उदयसे झीनस्थितिवाला है यह यहाँ इस सूत्रका अभिप्राय है। इसके अतिरिक्त और कोई दूसरा विकल्प नहीं, क्योंकि बाकीकी सब स्थितियोंके कर्मपरमाणु क्रमसे उदयके योग्य देखे जाते हैं।

§ ४८४ संपहि दंसणमोहणीयं खवेंतस्स कम्हि पदेसे सामित्तं होदि त्ति आसंकिय तदुद्देसपदुप्पायणट्ठमाह—अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुब्भमाणयं संछुद्धमावलिया समयूणा सेसा इच्चादि। अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि बहुएसु ट्ठिदिखंडयसहस्सेसु पादेक्कमणुभागखंडयसहस्साविणाभावीसु अंतोमुहुत्तमेत्तकीरणद्धापडिबद्धेसु पदिदेसु पुणो अणियट्टिअद्धाए संखेज्जेसु भागेसु वोलीणेसु जिप्पच्छिमं ट्ठिदिखंडयं पलिदो-वमासंखेज्जभागपमाणायाममावलियवज्जं संछुब्भमाणयं सम्मामिच्छत्तस्सुवरि णिरवसेसं संछुद्धं। ताधे उदयावलिया समयूणा सेसा ताधे तस्स गुणिदकम्मंसियस्स उक्कस्सयमोकड्डणादो झीणट्ठिदियं मिच्छत्तपदेसग्गं होदि। कुदो आवलियाए समयूणत्तं? उदयाभावेण सम्मत्तस्सुवरि तदुदयणिसेयसमाणमिच्छत्तेयट्ठिदीए त्थिवुक्कसंकमेण संकंतीदो। कुदो पुण एदस्स आवलियपइट्ठपदेसग्गस्स ओकड्डणादो झीणट्ठिदियस्स उक्कस्सत्तं? ण, पडिसमयमसंखेज्जगुणाए सेढीए आपूरिदगुणसेढिगोवुच्छाणं हेट्ठिमाससत्तविंयप्पेहिंतो असंखेज्जगुणाणमुक्कस्सभावस्स णाइयत्तादो।

उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४८८ अब दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करते हुए भी किस स्थान पर उत्कृष्ट स्वामित्व होता है ऐसी आशंकाके होने पर उस स्थानका निर्देश करनेके लिये 'अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुब्भमाणयं संछुद्धमावलिया समयूणा सेसा' इत्यादि सूत्र कहा है। अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उत्कीरण कालसे सम्बन्ध रखनेवाले हजारों स्थितिकाण्डकोंका और एक एक स्थितिकाण्डकके प्रति हजारों अनुभागकाण्डकोंका पतन करनेके पश्चात् जब यह जीव अनिवृत्तिकरणमें प्रवेश करके और उसके संख्यात बहुभागोंके व्यतीत होने पर एक आवलिके सिवा पल्यके असंख्यातवें भाग आयामवाले अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन करनेका प्रारम्भ करता है और उसे सबका सब सम्यग्मिथ्यात्वमें निक्षेप करनेके बाद जब एक समयकम एक आवलिकाल शेष रहता है तब इस गुणितकर्मांशवाले जीवके मिथ्यात्वके अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु होते हैं।

शंका—यहाँ आवलिको एक समय कम क्यों बतलाया?

समाधान—क्योंकि यहाँ मिथ्यात्वका उदय न होनेसे सम्यक्त्वके उदयरूप निषेकके बराबरकी मिथ्यात्वकी एक स्थिति स्तिवुक संक्रमणके द्वारा सम्यक्त्वके रूपमें संक्रान्त हो गई है, इसलिए आवलिमें एक समय कम बतलाया है।

शंका—अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले ये कर्मपरमाणु आवलिके भीतर प्रविष्ट होनेपर ही उत्कृष्ट क्यों होते हैं?

समाधान—नहीं क्योंकि ये कर्मपरमाणु प्रति समय असंख्यातगुणी श्रेणिके द्वारा गुणश्रेणिगोपुच्छाको प्राप्त हैं और नीचेके तत्सम्बन्धी और सब विकल्पोंसे असंख्यातगुणे हैं इसलिये इन्हें उत्कृष्ट मानना न्याय्य है।

विशेषार्थ—यह तो पहले ही बतला आये हैं कि जो कर्मपरमाणु उदयावलिके भीतर स्थित हैं वे अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले हैं और जो कर्मपरमाणु उदयावलिके बाहर स्थित हैं वे अपकर्षणसे अझीन स्थितिवाले हैं। अब इन झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंमें मिथ्यात्वकी अपेक्षा उत्कृष्ट विकल्प कहाँ प्राप्त होता है यह बतलाया है। मिथ्यात्वका अन्यत्र उदयावलिमें

§ ४८१. एत्तो सामित्तं वत्तइस्सामो त्ति अहियारसंभालणसुत्तमेदं ।

❀ मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादो झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ४८२. सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स सव्वलहुं दंसणमोहणीयं खवेंतस्स अपच्छिम-ट्ठिदिखंडयं संछुभमाणयं संछुद्धमावलिया समयूणा सेसा तस्स उक्कस्सय-मोकड्डणादो झीणट्ठिदियं ।

§ ४८३. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—मिच्छत्तस्स उक्कस्सय-मोकड्डणादो झीणट्ठिदिय कस्से त्ति जादसंदेहस्स सिस्सस्स तव्विसयणिच्छयजणणट्ठं गुणिदकम्मंसियस्से त्ति वुत्तं, अण्णत्थ पदेसग्गस्स उक्कस्सभावाणुववत्तीदो । किं सव्वस्सेव गुणिदकम्मंसियस्स ? नेत्याह—सव्वलहुं दंसणमोहणीयं खवेंतस्स । गुणिदकम्मंसिय-लक्खणेणागंतूण सत्तमपुढविणेरइयचरिमसमए ओघुक्कस्समिच्छत्तदव्वं काऊण तत्तो णिप्पिडिय पंचिंदियतिरिक्खेसु एइंदिएसु च दोण्णि तिण्णि भवग्गहणाणि भमिय पुणो मणुस्सेसुप्पज्जिय अट्ठ वस्साणि वोलाविय सव्वलहुएण कालेण दंसणमोहणीय-कम्मं खवेदुमाढत्तस्से त्ति वुत्तं होइ ।

---

§ ४८१. अब इसके आगे स्वामित्वको बतलाते हैं इस प्रकार यह सूत्र अधिकारकी सम्हाल करता है ।

*** मिथ्यात्वके अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ।**

§ ४८२ यह पृच्छा सूत्र सुगम है ।

*** गुणितकर्मांशवाले जिस जीवके सबसे थोड़े कालमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ करनेके बाद अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन करके एक समय कम एक आवलि काल शेष रहा वह अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है ।**

§ ४८३ अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है—मिथ्यात्वके अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु किसके होते हैं इस प्रकार शिष्यको सन्देह हो जानेपर तद्विषयक निश्चयके पैदा करनेके लिये सूत्रमें 'गुणिदकम्मसियस्स' यह पद कहा है, क्योंकि गुणित कर्मांशवाले जीवके सिवा अन्यत्र अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु उत्कृष्ट नहीं हो सकते । क्या सभी गुणितकर्मांशवाले जीवोंके अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु उत्कृष्ट होते हैं ? नहीं, यही बतलानेके लिये सूत्रमें 'सव्वलहु दसणमोहणीय खवेंतस्स' यह पद कहा है । गुणित-कर्मांशकी जो विधि बतलाई है उस विधिसे आकर और सातवीं पृथिवीका नारकी होकर उसके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वके द्रव्यको ओघसे उत्कृष्ट करके फिर वहाँसे निकलकर तथा पंचेन्द्रिय तिर्यंच और एकेन्द्रियोंमें दो तीन भवतक भ्रमण करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और वहाँ आठ वर्ष बिताकर अति थोड़े कालके द्वारा जिसने दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका आरम्भ किया उस गुणितकर्मांशवाले जीवके अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु उत्कृष्ट होते हैं यह

§ ४८७ सुगम।

* गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजमगुणसेढी संजमगुणसेढी च एदाओ गुणसेढीओ काऊण मिच्छत्तं गदो। जावे गुणसेढिसीसयाणि पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स उदयमागयाणि ताधे तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं।

§ ४८८ एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—जो गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजमगुणसेढी संजमगुणसेढी चेदि एदाओ गुणसेढीओ सव्वुक्कस्सपरिणामेहि काऊण परिणामपच्चएण मिच्छत्तं गओ तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जावे गुणसेढिसीसयाणि दो वि एगीभूदाणि उदयमागदाणि ताधे मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं होदि त्ति पदसंबंधो। कथमेदाओ दो वि गुणसेढीओ भिण्णकालसंबंधिणीओ एयट्ठ काउं सक्किज्जंति? ण, संजमगुणसेढिणिक्खेवायामादो संजमासंजमगुणसेढिणिक्खेवदीहत्तस्स संखेज्जगुणत्तेण कमेण कीरमाणीणं तासिं तहाभावाविरोहादो। तदो गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सत्तमपुढवीदो उव्वट्टिय सव्वलहुं समयाविरोहेण

---

§ ४८७ यह सूत्र सुगम है।

* कोई एक गुणितकर्मांशवाला जीव संयमासंयमगुणश्रेणि और संयमगुणश्रेणि इन दोनों गुणश्रेणियोंको करके मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। इस प्रकार इस जीवके जब मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होते हैं तब वह उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

§ ४८८ अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं जो इस प्रकार है—जो गुणितकर्मांशवाला जीव सर्वोत्कृष्ट परिणामोंके द्वारा संयमासंयमगुणश्रेणि और संयमगुणश्रेणि इन दोनों गुणश्रेणियोंको करके अनन्तर परिणाम विशेषके कारण मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ उस मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें जब दोनों ही गुणश्रेणिशीर्ष मिलकर उदयको प्राप्त होते हैं तब मिथ्यात्वके उदयकी अपेक्षा उत्कृष्ट झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु होते हैं यह इस सूत्रका वाक्यार्थ है।

शंका—ये दोनों ही गुणश्रेणियाँ भिन्न कालसे सम्बन्ध रखती हैं इसलिये इन्हें एकत्र कैसे किया जा सकता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि संयमगुणश्रेणिके निक्षेपकी दीर्घतासे संयमासंयमगुणश्रेणिके निक्षेपकी दीर्घता संख्यातगुणी है इसलिये इन्हें क्रमसे करनेपर इनके एकत्र होनेमें कोई विरोध नहीं आता है।

किसी एक जीवने गुणित कर्मांशकी विधिसे आकर और सातवीं पृथिवीसे निकलकर अतिशीघ्र आगमोक्त विधिसे प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके उपशम सम्यक्त्वके कालको व्यतीत

---

१ 'गुणियकम्मंसियस्स दोगुणसेढीसीसयस्स' P— कम्म प्रा प १ १५।
'मिच्छत्तमीसऽणंताणुबंधिअसम्मत्तमीसयपिहीणं।
तिरिउदएगंताण य बिइया तइया य गुणसेढी॥'—कर्मप्र० उदय गा० ११।

§ ४८५. संपहि एदस्स सामित्तविसईकयदव्वस्स पमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिमेत्तुक्कस्ससमयपबद्धे ठविय पुणो समयूणावलियाए ओवट्टिद-चरिमफालीए तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तरूवभजिदाए भागे हिदे एदं दव्वमागच्छदि, अब्भंतरीकयचरिमफालिणिसेयस्स गुणसेढिगोवुच्छदव्वस्स पाहण्णियादो। अथवा दिवड्ढगुणहाणिगुणिदमुक्कस्ससमयपबद्धं ठविय ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जभागेण गुणिय किंचूणीकएण तम्मि भागे हिदे पयदसामित्त-विसईकयदव्वमागच्छदि त्ति वत्तव्वं। एवमुवरि वि सव्वत्थ वत्तव्वं। संपहि एदेण समाणसामियाणं उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियाणमेदेण चेय गयत्थाणं सामित्तपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

❀ तस्सेव उक्कस्सयमुक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं।

§ ४८६. गयत्थमेदं सुत्तं। संपहि उदयादो झीणट्ठिदियस्स उक्कस्ससामित्त-परूवणट्ठं पुच्छासुत्तेणावसरं करेइ—

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स?[1]

• जितना द्रव्य रहता है उस सबसे अधिक क्षपणाके समय अन्तिम स्थितिकाण्डकके पतनके बाद उदयावलिमें रहता है, क्योंकि यहाँ उदयावलिमें गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्य पाया जाता है जो कि उत्तरोत्तर असंख्यात गुणितक्रमसे स्थापित है, इसलिये जो जीव मिथ्यात्वकी अन्तिम स्थितिका खण्डन करके उदयावलिके भीतर प्रविष्ट है वह मिथ्यात्वके अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४८५ अब उत्कृष्ट स्वामित्वके विषयभूत द्रव्यके प्रमाणका विचार करते हैं जो इस प्रकार है—डेढ गुणहानिप्रमाण उत्कृष्ट समयप्रबद्धोंको स्थापित करके उनमें, तद्योग्य पल्यके असंख्यातवें भागसे भाजित अन्तिम फालिमें एक समय कम आवलिका भाग देनेसे जो लब्ध आवे उसका भाग देनेपर यह उत्कृष्ट द्रव्य आता है, क्योंकि यहाँ अन्तिम फालिके निषेकोंके भीतर गुणश्रेणि गोपुच्छाका द्रव्य प्रधान है। अथवा डेढगुणहानिसे गुणित उत्कृष्ट समयप्रबद्धको स्थापित करके उसमें, तत्प्रायोग्य पल्यके असंख्यातवें भागसे गुणित अपकर्षण भागहारको कुछ कम करके उसका भाग देनेपर प्रकृत स्वामित्वसे सम्बन्ध रखनेवाला द्रव्य आता है ऐसा यहाँ कथन करना चाहिये। तथा इसी प्रकार आगे भी सर्वत्र कथन करना चाहिये। अब जिनका स्वामी इसीके समान है और जिनके स्वामीका ज्ञान इसीसे हो जाता है ऐसे उत्कर्षण और संक्रमणसे झीन स्थितिवालोंके स्वामित्वका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र आया है—

❀ तथा वही उत्कर्षण और संक्रमणसे उत्कृष्ट झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओं-का स्वामी है।

§ ४८६ इस सूत्रका अर्थ अवगतप्राय है। अब उदयसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करनेके लिये पृच्छासूत्र कहते हैं—

❀ उदयसे झीन स्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है।

१ "मिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेसउदओ कस्स।"—धव० आ० प० १०६५।

§ ४८७ सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजमगुणसेढी संजमगुणसेढी च एदाओ गुणसेढीओ काऊण मिच्छत्तं गदो । जाधे गुणसेढिसीसयाणि पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स उदयमागयाणि ताधे तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

§ ४८८ एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—जो गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजमगुणसेढी संजमगुणसेढी चेदि एदाओ गुणसेढीओ सव्वुक्कस्सपरिणामेहि काऊण परिणामपच्चएण मिच्छत्तं गओ तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जाधे गुणसेढिसीसयाणि दो वि एगीभूदाणि उदयमागदाणि ताधे मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं होदि त्ति पदसंबंधो। कधमेदाओ दो वि गुणसेढीओ भिण्णकालसंबंधिणीओ एयट्ठ कादुं सक्किज्जंति ? ण, संजमगुणसेढिणिक्खेवायामादो संजमासंजमगुणसेढिणिक्खेवदीहत्तस्स संखेज्जगुणत्तेण कमेण कीरमाणीणं तासिं तहाभावाविरोहादो । तदो गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागदूण सत्तमपुढवीदो उव्वट्टिय सव्वलहुं समयाविरोहेण

§ ४८७. यह सूत्र सुगम है ।

● कोई एक गुणितकर्मांशवाला जीव संयमासंयमगुणश्रेणि और संयम-गुणश्रेणि इन दोनों गुणश्रेणियोंको करके मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार इस जीवके जब मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होते हैं तब वह उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है ।

§ ४८८ अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं जो इस प्रकार है—जो गुणितकर्मांशवाला जीव सर्वोत्कृष्ट परिणामोंके द्वारा संयमासंयमगुणश्रेणि और संयमगुणश्रेणि इन दोनों गुणश्रेणियोंको करके अनन्तर परिणाम विशेषके कारण मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ उस मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें जब दोनों ही गुणश्रेणिशीर्ष मिलकर उदयको प्राप्त होते हैं तब मिथ्यात्वके उदयकी अपेक्षा उत्कृष्ट झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु होते हैं यह इस सूत्रका वाक्यार्थ है ।

शंका—ये दोनों ही गुणश्रेणियाँ भिन्न कालसे सम्बन्ध रखती हैं इसलिये इन्हें एकत्र कैसे किया जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि संयमगुणश्रेणिके निक्षेपकी दीर्घतासे संयमासंयमगुणश्रेणिके निक्षेपकी दीर्घता संख्यातगुणी है, इसलिये इन्हें क्रमसे करनेपर इनके एकत्र होनेमें कोई विरोध नहीं आता है ।

किसी एक जीवने गुणित कर्मांशकी विधिसे आकर और सातवीं पृथिवीसे निकलकर अतिशीघ्र आगमोक्त विधिसे प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके उपशम सम्यक्त्वके कालको व्यतीत

१ 'गुणियकम्मंसियस्स दोगुणसेढीसीसगस्स ।'– कर्म. उदय. गा. ११ ।
'मिच्छत्तमीसअणंताणुबंधिअसम्मत्तथीणगिद्धीणं ।
तिरिउदएगंताण य बिइया तइया य गुणसेढी ॥'—कर्मप्र. उदय गा. ११ ।

§ ४८५. संपहि एदस्स सामित्तविसईकयदव्वस्स पमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिमेत्तुक्कस्ससमयपवद्धे ठविय पुणो समयूणावलियाए ओवट्टिद-चरिमफालीए तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तरूवभजिदाए भागे हिदे एदं दव्वमागच्छदि, अब्भंतरीकयचरिमफालिणिसेयस्स गुणसेडिगोवुच्छदव्वस्स पाहण्णियादो। अधवा दिवड्ढगुणहाणिगुणिदमुक्कस्ससमयपवद्धं ठविय ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जभागेण गुणिय किंचूणीकएण तम्मि भागे हिदे पयदसामित्त-विसईकयदव्वमागच्छदि त्ति वत्तव्वं। एवमुवरि वि सव्वत्थ वत्तव्वं। संपहि एदेण समाणसामियाणं उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियाणमेदेण चेय गयत्थाणं सामित्तपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

❀ तस्सेव उक्कस्सयमुक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं।

§ ४८६. गयत्थमेदं सुत्तं। संपहि उदयादो झीणट्ठिदियस्स उक्कस्ससामित्त-परूवणट्ठं पुच्छासुत्तेणावसरं करेइ—

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ?[1]

जितना द्रव्य रहता है उस सबसे अधिक क्षपणाके समय अन्तिम स्थितिकाण्डकके पतनके बाद उदयावलिमें रहता है, क्योंकि यहाँ उदयावलिमें गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्य पाया जाता है जो कि उत्तरोत्तर असख्यात गुणितक्रमसे स्थापित है, इसलिये जो जीव मिथ्यात्वकी अन्तिम स्थितिका खण्डन करके उदयावलिके भीतर प्रविष्ट है वह मिथ्यात्वके अपकर्षणसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ४८५ अब उत्कृष्ट स्वामित्वके विषयभूत द्रव्यके प्रमाणका विचार करते हैं जो इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिप्रमाण उत्कृष्ट समयप्रबद्धोंको स्थापित करके उनमें, तद्योग्य पल्यके असख्यातवें भागसे भाजित अन्तिम फालिमें एक समय कम आवलिका भाग देनेसे जो लब्ध आवे उसका भाग देनेपर यह उत्कृष्ट द्रव्य आता है, क्योंकि यहाँ अन्तिम फालिके निषेकोंके भीतर गुणश्रेणि गोपुच्छाका द्रव्य प्रधान है। अथवा डेढगुणहानिसे गुणित उत्कृष्ट समयप्रबद्धको स्थापित करके उसमें, तत्प्रायोग्य पल्यके असख्यातवें भागसे गुणित अपकर्षण भागहारको कुछ कम करके उसका भाग देनेपर प्रकृत स्वामित्वसे सम्बन्ध रखनेवाला द्रव्य आता है ऐसा यहाँ कथन करना चाहिये। तथा इसी प्रकार आगे भी सर्वत्र कथन करना चाहिये। अब जिनका स्वामी इसीके समान है और जिनके स्वामीका ज्ञान इसीसे हो जाता है ऐसे उत्कर्षण और सक्रमणसे झीन स्थितिवालोंके स्वामित्वका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र आया है—

* तथा वही उत्कर्षण और सक्रमणसे उत्कृष्ट झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओं-का स्वामी है।

§ ४८६ इस सूत्रका अर्थ अवगतप्राय है। अब उदयसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करनेके लिये पृच्छासूत्र कहते हैं—

* उदयसे झीन स्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है।

---

१ "मिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेसउदओ कस्स।"—धव० आ० प० १०६५।

अंतोमुहुत्तमेत्तकालं अवट्ठिदहाणिपरिणामेहि ओकड्डिज्जमाणपदेसग्गस्स चउव्विहवड्ढि-हाणिकारणभूदाहि गुणसेढीहिं करेमाणो ताव गच्छदि जाव एवं पूरिदाणि गुणसेढिसीसयाणि दो वि उवरिमसमयअपत्तउदयट्ठिदियाणि त्ति। तदो से काले मिच्छत्तं गदस्स तस्स जाधे गुणसेढिसीसयाणि एदेण पयत्तेण पूरिदाणि दो वि जुगवमुदिण्णाणि ताधे मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं होदि त्ति एसो सुत्तस्स समुदायत्थो। कुदो एदस्स उदिण्णस्स उदयादो झीणट्ठिदियत्तं? ण, पुणो तप्पाओग्गत्ताभावं पेक्खियूण तहाभुवगमादो। एत्थ जाधे दो वि गुणसेढिसीसयाणि उदयावलियं ण पविसंति ताधे चेव संजदो किमट्ठं मिच्छत्तं ण णीदो? ण, अधापवत्तसंजदगुणसेढिमाहप्पस्स अभावप्पसंगादो। जइ एवं, गुणसेढिसीसएसु उदयावलियब्भंतरं पइट्ठेसु मिच्छत्तं णेदाओ उवरि अविणट्ठसंजमेणावट्ठाणफलमणुवलंभादो त्ति? ण, मिच्छाइट्ठिउदीरणादो विसोहिवसेणासंखेज्जगुणसंजदउदीरणाए अणिट्ठसाहस्स एत्थ वि अभावावत्तीदो। ण च तत्थ मिच्छत्तस्स उदयाभावपुव्वउदीरणाभावेण पयदफलाभावो आसंकणिज्जो,

---

प्रकार इस भावको प्राप्त करके अविकृत दोनों ही गुणश्रेणिशीर्षोंके आगे अपकर्षणको प्राप्त होनेवाले कर्मपरमाणुओंके चार प्रकारकी हानि और वृद्धियोंके कारणभूत छह प्रकारकी वृद्धि और हानिरूप परिणामोंके द्वारा अन्तर्मुहूर्त कालतक गुणश्रेणिको करता हुआ तब तक जाता है जब जाकर पूर्वोक्त विधिसे पूरे गये दोनों ही गुणश्रेणिशीर्ष उदयस्थितिके उपान्त्य समयको प्राप्त होते हैं। इसके बाद तदनन्तर समयमें मिथ्यात्वको प्राप्त होने पर इसके इतने प्रयत्नसे पूरे गये दोनों ही गुणश्रेणिशीर्ष मिलकर उदयमें आते हैं तब मिथ्यात्वके उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्म-परमाणु होते हैं। इस प्रकार यह इस सूत्रका समुदायार्थ है।

शंका—जब कि ये उदयप्राप्त हैं तब ये उदयसे झीनस्थितिवाले कैसे हैं?

समाधान—नहीं, क्योंकि ये फिरसे उदययोग्य नहीं हो सकते, इसलिये इन्हें उदयसे झीनस्थितिवाला कहा है।

शंका—यहाँ दोनों ही गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयावलिमें प्रवेश करनेके पहले संयतको मिथ्यात्व गुणस्थान क्यों नहीं प्राप्त कराया गया?

समाधान—नहीं, क्योंकि ऐसा करनेसे इसके अधःप्रवृत्तसंयतके होनेवाली गुणश्रेणिके माहात्म्य अभाव प्राप्त होता।

शंका—यदि ऐसा है तो गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयावलिमें प्रवेश करनेपर मिथ्यात्व गुणस्थानमें ले जाना उचित था क्योंकि इसको आगे संयमका नाश किये बिना उसके साथ रहनेका कोई फल नहीं पाया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यादृष्टिके होनेवाली उदीरणाकी अपेक्षा विशुद्धिके कारण संयतके होनेवाली असंख्यातगुणी उदीरणासे होनेवाला लाभ ऐसी हालतमें भी नहीं बन सकेगा, इसलिये गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयावलिमें प्रवेश करते ही इसे मिथ्यात्वमें नहीं ले गये हैं।

यदि कहा जाय कि संयतके मिथ्यात्वका उदय न हो सकनेसे उदीरणा भी नहीं हो सकती, इसलिये यहाँ उदीरणासे होनेवाले फलकी प्राप्ति नहीं हो सकती सो ऐसी आशंका करना भी ठीक

पढमसम्मत्तमुप्पाइय उवसमसम्मत्तद्धं वोलाविय अधापवत्त-अपुव्वकरणाणि करिय अपुव्वकरणचरिमसमयादो से काले गहिदसंजमासंजमो एयंताणुवड्ढी[1] वड्ढिपढमसमयप्पहुडि जाव तिस्से चरिमसमओ त्ति ताव पडिसमयमणतगुणाए सजमासजमविसोहीए विसुज्झंतो अंतोमुहुत्तमेत्तकाल सव्वकम्माण समयं पडि असखेज्जगुणं दव्वमोकड्डिय उदयावलियबाहिरे अंतोमुहुत्तायाममवट्ठिदगुणसेढिणिक्खेवं काऊण पुणो अधापवत्तसंजदासजदविसोहीए वि पदिदो संतो अंतोमुहुत्तकाल चदुहि वड्ढि-हाणीहि गुणसेढिं काऊण पुणो वि ताणि चेव दो करणाणि करिय गहिदसंजमपढमसमयप्पहुडि मिच्छत्तपदेसग्गमसखेज्जगुणाए सेढीए ओकड्डिय उदयावलियबाहिरट्ठिदिमादिं कादूण अंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदीसु संजदासंजदगुणसेढिणिक्खेवादो सखेज्जगुणहीणासु अंतोमुहुत्तमेत्तकालमवट्ठिदगुणसेढिणिक्खेवमणंतगुणाए संजमविसोहीए करेमाणो संजदासंजदएयताणुवड्ढिचरिमसमयकदगुणसेढिणिक्खेवस्स सखेज्जे भागे गंतूण संखेज्जदिभागमेत्ते सेसे तदेयंताणुवड्ढिचरिमसमयकदगुणसेढिसीसएण सरिसं सगएयताणुवड्ढिचरिमसमयगुणसेढिसीसय णिक्खिविय एव दो वि गुणसेढिसीसयाणि एक्कदो काऊण पुणो अधापवत्तसंजदभावेण परिणमिय दोण्हमेदेसिमहिकयगुणसेढिसीसयाणमुवरि

किया। अनन्तर वह अधःप्रवृत्तकरण और अपूर्वकरणको करके अपूर्वकरणके अन्तिम समयसे अनन्तर समयमें सयमासयमको प्राप्त हुआ। यहाँ इसके सर्वप्रथम एकान्तानुवृद्धिका प्रारम्भ होता है, इसलिये उसने एकान्तानुवृद्धिके प्रारम्भ होनेके प्रथम समयसे लेकर उसके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक प्रत्येक समयमें अनन्तगुणी संयमासयमविशुद्धिसे विशुद्ध होकर अन्तर्मुहूर्त कालतक सब कर्मों के प्रत्येक समयमें उत्तरोत्तर असख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करके उसे उदयावलिके बाहर अन्तर्मुहूर्त आयामवाले अवस्थित गुणश्रेणिरूपसे निक्षिप्त किया। फिर अधःप्रवृत्त सयतासयत विशुद्धिसे भी गिरता हुआ अन्तर्मुहूर्त कालतक चार वृद्धि और चार हानियोंके द्वारा गुणश्रेणि की। इसके बाद फिर भी उन दो करणोंको करके सयमको प्राप्त हुआ। और इस प्रकार सयमको प्राप्त करके उसके प्रथम समयसे लेकर मिथ्यात्वके कर्मपरमाणुओंको असख्यातगुणी श्रेणिरूपसे अपकर्षित करके उदयावलिके बाहरकी स्थितिसे लेकर सयतासयतके गुणश्रेणिनिक्षेपसे संख्यातगुणी हीन अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितियोंमें अनन्तगुणी सयमसम्बन्धी विशुद्धिके द्वारा अन्तर्मुहूर्तकाल तक अवस्थित गुणश्रेणिका निक्षेप करता है। यहाँ पर सयतासयतके एकान्तानुवृद्धिरूप परिणामोंके अन्तिम समयमें किये गये गुणश्रेणिनिक्षेपके सख्यात बहुभागको बिताकर और संख्यातवें भागकालके शेष रहने पर जो सयतासयतके एकान्तानुवृद्धिरूप परिणामोंके अन्तिम समयमें गुणश्रेणिशीर्षका निक्षेप किया गया है सो उसीके समान सयत भी अपने एकान्तानुवृद्धिरूप परिणामोंके अन्तिम समयमे गुणश्रेणिशीर्षका निक्षेप करे। और इस प्रकार दोनों ही गुणश्रेणिशीर्षोंको एक करके फिर अधःप्रवृत्तसयतभावको प्राप्त हो जाय। और इस

---

१ वड्ढावड्ढी एव भणिदे तासु चेव सजमासजमसजमलद्धीसु अलद्धपुव्वासु पडिलद्धासु तल्लाभपढमसमयप्पहुडि अंतोमुहुत्तकालब्भतरे पडिसमयमणतगुणाए सेढीए परिणामवड्ढी गहेयव्वा, उवरुवरि परिणामवड्ढीए वड्ढावड्ढीववएसालवणादो।'—जयध० पु० का० ६३१६।

परमाणुओंका स्वामी बतलाते हुए जो कुछ लिखा है उसका आशय यह है कि ऐसा जीव एक तो गुणितकर्मांशवाला होना चाहिये क्योंकि अन्य जीवके कर्मपरमाणुओंका उत्कृष्ट संचय नहीं हो सकता। दूसरे गुणितकर्मांश होनेके बाद यथासम्भव अतिशीघ्र संयमासंयम और तदनन्तर संयमकी प्राप्ति कराकर इसे एकान्तानुवृद्धि परिणामों के द्वारा संयमासंयम गुणश्रेणि और संयमगुणश्रेणिकी प्राप्ति करा देनी चाहिये। किन्तु इनकी प्राप्ति इस ढंगसे करानी चाहिये जिससे इन दोनों गुणश्रेणियोंका शीर्ष एक समयवर्ती हो जाय। फिर गुणश्रेणिशीर्षों के उदयरूप समयके प्राप्त होने तक जीवको वहीं संयमभावके साथ रहने देना चाहिये। किन्तु जब तक यह जीव संयमभावके साथ रहे तब तक भी इसके गुणश्रेणिका क्रम चालू ही रखना चाहिये, क्योंकि जब तक संयमासंयम रूप या संयमरूप परिणाम बने रहते हैं तब तक गुणश्रेणिरचनाके चालू रहनेमें कोई बाधा नहीं आती। बात इतनी है कि इन दोनों भावोंकी प्राप्ति होनेके प्रथम समयसे एकान्तानुवृद्धिरूप परिणाम होते हैं, इसलिये इनके निमित्तसे गुणश्रेणिरचना होती है और बादमें अधःप्रवृत्तसंयमासंयम या अधःप्रवृत्तसंयमरूप अवस्था आ जाती है इसलिये इनके निमित्तसे गुणश्रेणि रचना होने लगती है। जिन परिणामोंकी अन्तर्मुहूर्त काल तक उत्तरोत्तर अनन्तगुणी विशुद्धि होती जाती है और जिनके होनेपर स्थितिकाण्डकघात अनुभागकाण्डकघात तथा स्थितिबन्धापसरण ये क्रियाएँ पूर्ववत् चालू रहती हैं वे एकान्तानुवृद्धिरूप परिणाम हैं। तथा जिनके होने पर स्वस्थानके योग्य संक्लेश और विशुद्धि होती रहती है वे अधःप्रवृत्त परिणाम हैं। एकान्तानुवृद्धिरूप परिणामोंके होने पर मिथ्यात्वकर्मकी अपेक्षा गुणश्रेणिरचनाका क्रम इस प्रकार है—

संयमासंयमगुणको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें उपरिम स्थितिमें स्थित द्रव्यका अपकर्षण करके उदयावलिके बाहर अन्तर्मुहूर्त प्रमाण स्थितियोंमें गुणश्रेणिशीर्षतक उत्तरोत्तर असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेप करता है। अर्थात् उदयावलिके बाहर अनन्तर स्थित स्थितिमें जितने द्रव्यका निक्षेप करता है उससे अगली स्थितिमें उससे भी असंख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेप करता है। इस प्रकार यह क्रम गुणश्रेणिशीर्ष तक जानना चाहिये। किन्तु गुणश्रेणिशीर्षसे अगली स्थितिमें असंख्यातगुणे हीन द्रव्यका निक्षेप करता है और इसके आगे विशेष हीन द्रव्यका निक्षेप करता है। दूसरे समयमें प्रथम समयकी अपेक्षा भी असंख्यातगुणे द्रव्यका पूर्वोक्त क्रमसे निक्षेप करता है। इस प्रकार एकान्तानुवृद्धिका काल समाप्त होने तक यही क्रम चालू रहता है।

किन्तु अधःप्रवृत्तरूप परिणामोंकी अपेक्षा गुणश्रेणिरचनाके क्रममें कुछ अन्तर है। बात यह है कि अधःप्रवृत्तरूप परिणाम सदा एकसे नहीं रहते किन्तु संक्लेश और विशुद्धिके अनुसार उनमें घटाबढ़ी हुआ करती है, इसलिये जब जैसे परिणाम होते हैं तब उन परिणामोंके अनुसार गुणश्रेणि रचनामें भी कर्म परमाणु न्यूनाधिक प्राप्त होते हैं। विशुद्धिकी न्यूनाधिकताके अनुसार कभी प्रति समय असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करके गुणश्रेणि रचना करता है। कभी प्रति समय संख्यातगुणे संख्यातगुणे द्रव्यका अपकर्षण करके गुणश्रेणि रचना करता है। इसी प्रकार कभी प्रति समय संख्यातवें भाग अधिक या कभी असंख्यातवें भाग अधिक द्रव्यका अपकर्षण करके गुणश्रेणि रचना करता है। और यदि संक्लेशरूप परिणाम हुए तो उनमें भी जब जैसी न्यूनाधिकता होती है उसके अनुसार कभी असंख्यातगुणे हीन कभी संख्यातगुणे हीन और कभी संख्यातवें भाग हीन और कभी असंख्यातवें भाग हीन द्रव्यका अपकर्षण करके गुणश्रेणिरचना करता है। इस प्रकार संयमासंयम और संयमके अन्त तक यह क्रम चालू रहता है।

यदि संयमासंयम या संयमसे च्युत होकर अतिशीघ्र इन भावोंको जीव पुनः

सम्मत्तथिवुक्कसंकममस्सियूण लाहदंसणादो। अण्णं च आवलियमेत्तकालावसेसे मिच्छत्तं गच्छमाणो पुव्वमेव सकिलिस्सदि त्ति विसोहिणिबंधणो गुणसेढिलाहो बहुओ ण लब्भदि। ण च सकिलेसावूरणेण विणा मिच्छत्ताहिमुहभावसंभवो, तस्स तदविणाभावित्तादो। तेण कारणेण जाव गुणसेढिसीसयाणि दुचरिमसमयअणुदिण्णाणि ताव संजदभावेणच्छाविय पुणो से काले एगताणुवड्ढिचरिमगुणसेढिसीसयाणि दो वि एक्कलग्गाणि उदयमागच्छिहिंति त्ति मिच्छत्तं गदपढमसमए उक्कस्सयउदयादो झीणट्ठिदियस्स सामित्तं दिण्णं। एत्थ पमाणाणुगमो जाणिय कायव्वो। अहवा गुणसेढिसीसयाणि त्ति वुत्ते दोण्हमोघचरिमगुणसेढिसीसयाणि सव्वुक्कस्सविसोहिणिबंधणाणि घेप्पंति ण एयंतवड्ढावड्ढिचरिमगुणसेढिसीसयाणि, तत्थतणचरिमविसोहीदो अधापवत्तसंजदसत्थाणविसोहीए अणंतगुणत्तादो। ण चेद णिण्णिबंधणं, लद्धिट्ठाणपरूवणाए परूविस्समाणप्पाबहुअणिबंधणत्तादो। तदो ओघचरिमसंजदासजदगुणसेढिसीसयस्सुवरि सव्वविसुद्धसजदणिक्खित्तगुणसेढिसीसयमेत्थ घेत्तव्वं। एवं घेतूण एदमणंतगुणविसोहीए कदगुणसेढिसीसयदव्वं संजदासजदगुणसेढिसीसएण सह जाधे पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स उदयमागय ताधे उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियमिदि सामित्त वत्तव्वं।

नहीं है, क्योंकि सम्यक्त्वसम्बन्धी स्तिवुक संक्रमणकी अपेक्षा लाभ देखा जाता है। दूसरे एक आवलिकालके शेष रहने पर यदि इस जीवको मिथ्यात्वमें ले जाते हैं तो वह पहलेसे संक्लिष्ट हो जायगा और ऐसी हालतमें विशुद्धिनिमित्तक अधिक गुणश्रेणिका लाभ नहीं हो सकेगा। यदि कहा जाय कि संक्लेशरूप परिणाम हुए विना ही मिथ्यात्वके अनुकूल भाव हो सकते हैं सो भी बात नहीं है, क्योंकि इन दोनोंका परस्परमें अविनाभाव सम्बन्ध है, इसलिये जब तक गुणश्रेणिशीर्ष उदयके उपान्त्य समयको नहीं प्राप्त होते तब तक इस जीवको संयत ही रहने दे। किन्तु तदनन्तर समयमें एकान्तानुवृद्धिके अन्तिम समयमें की गई दोनों ही गुणश्रेणियाँ उदयको प्राप्त होंगी, इसलिये मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें ही उदयसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका स्वामी बतलाया है। यहाँ इनके प्रमाणका विचार जानकर कर लेना चाहिये। अथवा गुणश्रेणिशीर्ष ऐसा कहने पर संयमासंयम और संयम इन दोनों अवस्थाओंके सबसे उत्कृष्ट विशुद्धिके निमित्तसे अन्तमें होनेवाले ओघ गुणश्रेणिशीर्ष लेने चाहिये, एकान्तवृद्धिके अन्तमें होनेवाले गुणश्रेणिशीर्ष नहीं, क्योंकि एकान्तवृद्धिके अन्तमें होनेवाली विशुद्धिसे अधःप्रवृत्तसंयतकी स्वस्थानविशुद्धि अनन्तगुणी होती है। यदि कहा जाय कि यह कथन अहेतुक है सो भी बात नहीं है, क्योंकि लब्धिस्थानोंका कथन करते समय जो अल्पबहुत्व कहा है उससे इसकी पुष्टि होती है, इसलिये ओघसे अन्तमें प्राप्त हुए संयतासंयतके गुणश्रेणिशीर्षके ऊपर सर्वविशुद्ध संयतके प्राप्त हुआ गुणश्रेणिशीर्षका यहाँ पर ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार अनन्तगुणी विशुद्धिसे निष्पन्न हुआ यह गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्य संयतासंयतसम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षके साथ जब मिथ्यात्वके प्रथम समयमें उदयको प्राप्त होता है तब उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है ऐसा यहाँ कथन करना चाहिये।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्व कर्मकी अपेक्षा उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्म-

अधट्ठिदियं गलमाणं जाधे उदयावलियं पविस्समाणं पविट्ठं ताधे उक्कस्सयमोकड्डणादो वि उक्कड्डणादो वि संकमणादो वि झीणट्ठिदियं ।

§ ४९. एदस्स तिण्हं झीणट्ठिदियाणं सामित्तपरूवणासुत्तस्स अत्थो—जो गुणिदकम्मंसिओ पुव्वविहाणेणागदो सव्वलहुं दंसणमोहणीयं कम्मं खवेदुमाढत्तो अपुव्वअणियट्टिकरणपरिणामेहि बहुएहि ट्ठिदिअणुभागखंडएहि मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते संछुहिय पुणो तं पि पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तचरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालिसरूवेण सम्मत्ते संछुहंतो सम्मत्तस्स वि तक्कालियएण ट्ठिदिखंडएण पलिदोवमासंखेज्जदिभागिएण अट्ठवस्समेत्तट्ठिदिसंतकम्मायामं घादूण तस्स संछुहिय पुणो वि संखेज्जट्ठिदिखंडयसहस्सेहि सम्मत्तट्ठिदिमइदहरीकरिय कदकरणिज्जो होदूणावट्ठिदो तस्स अधट्ठिदियं गलंतं सम्मत्तं जाधे कमेण उदयावलियं पविसमाणं सत्त णिरवसेसं पइट्ठं ताधे आवलियमेत्तगुणसेढिगोवुच्छा ओदरिय अवट्ठिदस्स ओकड्डणादो वि उक्कड्डणादो वि संकमणादो वि झीणट्ठिदियं पदेसग्गं होइ। एत्थ उदयावलियं पविसमाणं पविट्ठमिदि वयणमक्कमपवेसासंकाणिरायरणदुवारेण कम्मपदेसप्पवुप्पायणट्ठं दट्ठव्वं। सेसं सुगमं।

आरम्भ किया है उसके अधःस्थितिके द्वारा गलता हुआ सम्यक्त्व जब उदयावलिमें प्रवेश करता है तब वह अपकर्षणसे, उत्कर्षणसे और संक्रमणसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

§ ४९. अब तीन झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके स्वामित्वका कथन करनेवाले इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—पूर्वविधिसे आये हुए गुणितकर्मांशवाले जिस जीवने अतिशीघ्र दर्शनमोहनीय कर्मके क्षयका आरम्भ करके अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके निमित्तसे बहुतसे स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डकोंके द्वारा मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमित किया। फिर सम्यग्मिथ्यात्वको भी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिरूपसे सम्यक्त्वमें संक्रमित किया। फिर सम्यक्त्वका भी उसी समय होनेवाले पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकके द्वारा आठ वर्षप्रमाण स्थिति सत्कर्म शेष रखकर शेषका उसी शेष स्थितिमें निक्षेप किया। इसके बाद फिर भी संख्यात हजार स्थितिकाण्डकोंके द्वारा सम्यक्त्व की स्थितिको अत्यन्त ह्रस्व करके वह कृतकृत्य होकर स्थित हुआ उसके अधःस्थितिके द्वारा गलता हुआ सम्यक्त्व जब क्रमसे उदयावलिमें पूराका पूरा प्रवेश कर जाता है तब एक आवलिप्रमाण गोपुच्छा उतर कर स्थित हुए इस जीवके अपकर्षण उत्कर्षण और संक्रमण इन तीनोंसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु होते हैं। यहाँ सूत्रमें जो 'उदयावलियं पविसमाणं पविट्ठं' यह वचन कहा है सो यह युगपत् प्रवेशकी आशंकाके निराकरण द्वारा क्रमसे होनेवाले प्रवेशका सूचन करनेके लिये जानना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

विशेषार्थ—इस सूत्रमें अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा सम्यक्त्वके झीन स्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंके स्वामीका निर्देश किया है। यद्यपि यहाँ जो व्याख्यान किया है

❀ सम्मत्तस उक्कस्सयमोकड्डुणादो उक्कड्डणादो संकमणादो उदयादो च झीणट्ठिदियं कस्स ।

§ ४८९. सुगममेदं पुच्छासुत्तं । णवरि उदयावलियबाहिरट्ठिदिसमवट्ठिदस्स सम्मत्तपदेसाण वज्झमाणमिच्छत्तस्सुवरि समट्ठिदीए संकताणमुक्कड्डुणासंभवं पेक्खियूण सम्मत्तस्स तत्तो झीणाझीणट्ठिदियत्तमेत्थ घेत्तव्वं, अण्णहा तदणुववत्तीदो ।

❀ गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुं दंसणमोहणीयं कम्मं खवेदुमाढत्तो

प्राप्त करता है तो एकान्तवृद्धिरूप परिणाम और उनके कार्य नहीं होते । यहाँ एकान्तवृद्धिमें उत्तरोत्तर प्रति समय अनन्तगुणी परिणामोंकी विशुद्धि होती जाती है, इसलिये संयमासंयमी और संयमीके इन परिणामोंके अन्तमें जो गुणश्रेणिशीर्ष होते हैं उनकी अपेक्षा यहाँ उत्कृष्ट स्वामित्व कहा है अथवा यद्यपि अधःप्रवृत्तरूप परिणाम घटते बढते रहते हैं तथापि सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिके कारणभूत ये परिणाम अन्तिम समयमें होनेवाले एकान्तवृद्धिरूप परिणामोंसे भी अनन्तगुणे होते हैं, अतः इन परिणामोंके निमित्तसे जो गुणश्रेणिशीर्ष प्राप्त हों उनकी अपेक्षा यहाँ उत्कृष्ट स्वामित्व कहना चाहिये। इस प्रकार मिथ्यात्वकी अपेक्षा उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका उत्कृष्ट स्वामी कौन है इसका विचार किया । यहाँ उत्कृष्ट स्वामित्वका विचार करते हुए टीकामें अनेक शंका प्रतिशंकाएँ की गई हैं पर उनका विचार वहाँ किया ही है, अतः उनका यहाँ निर्देश नहीं किया ।

※ सम्यक्त्वके अपकर्षणसे, उत्कर्षणसे संक्रमणसे और उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ।

§ ४८९ यह पृच्छासूत्र सरल है । किन्तु इतनी विशेषता है कि उदयावलिके बाहरकी स्थितिमें स्थित जो सम्यक्त्वके प्रदेश बँधनेवाले मिथ्यात्वके ऊपर समान स्थितिमें संक्रान्त होते हैं उनका उत्कर्षण सम्भव है इसी अपेक्षासे ही यहाँ सम्यक्त्वके उत्कर्षणसे झीनाझीन-स्थितिपनेका ग्रहण करना चाहिये, अन्यथा सम्यक्त्वके उत्कर्षणसे झीनाझीनस्थितिपना नहीं बन सकता ।

विशेषार्थ—सम्यक्त्व यह बँधनेवाली प्रकृति नहीं है, इसलिये इसका अपने बन्धकी अपेक्षा उत्कर्षण ही सम्भव नहीं है । हाँ मिथ्यात्वके बन्धकालमें सम्यक्त्वके कर्मपरमाणुओंका मिथ्यात्वमें संक्रमण होकर उनका उत्कर्षण हो सकता है । यद्यपि यह संक्रमित द्रव्य मिथ्यात्वका एक हिस्सा हो गया है तथापि पूर्वमें ये सम्यक्त्वके परमाणु रहे उस अपेक्षासे इस उत्कर्षणको सम्यक्त्वके कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण कहनेमें भी आपत्ति नहीं । इस प्रकार इस अपेक्षासे सम्यक्त्वके परमाणुओंका उत्कर्षण मानकर फिर यह विचार किया गया है कि सम्यक्त्वके कौनसे कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे झीनस्थितिवाले हैं और कौनसे कर्मपरमाणु उत्कर्षणसे अझीन स्थितिवाले हैं । यदि ऐसा न माना जाय तो सम्यक्त्व प्रकृतिके कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण ही घटित नहीं होता है । और तब फिर सम्यक्त्वका उत्कर्षणसे झीनाझीन स्थितिपना भी कैसे बन सकता है । अर्थात् नहीं बन सकता है । इसलिये सम्यक्त्वके उत्कर्षणकी व्यवस्था उक्त प्रकारसे करके ही झीनाझीनस्थितिपनेका विचार करना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

※ जिस गुणित कर्मांशवाले जीवने अतिशीघ्र दर्शनमोहनीय कर्मके क्षय करनेका

अधट्ठिदियं गलंतं जाधे उदयावलियं पविस्समाणं पविट्ठं ताधे उक्कस्सय मोकड्डणादो वि उक्कड्डणादो वि संकमणादो वि झीणट्ठिदियं ।

§ ४४०. एदस्स सुत्तस्स झीणट्ठिदियाणं सामित्तपरूवणाछुत्तस्स अत्थो—जो गुणिदकम्मंसिओ पुव्वविहाणेणागदो सम्मत्तं दंसणमोहणीयं कम्मं खवेदुमाढत्तो अपुव्वअणियट्टिकरणपरिणामेहि बहुएहि ट्ठिदिखंडयअणुभागखंडएहि मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते संछुहिय पुणो तं पि पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तचरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालि सरूवेण सम्मत्ते संछुहंतो सम्मत्तस्स वि तक्कालिएण ट्ठिदिखंडएण पलिदोवमासंखेज्जदि भागिएण अट्ठवस्समेत्तट्ठिदिसंतकम्मावसेसं काऊण तत्थ सहुहिय पुणो वि संखेज्जट्ठिदिखंडयसहस्सेहि सम्मत्तट्ठिदिमइरहस्सीकरिय कदकरणिज्जो होदूणावट्ठिदो तस्स अधट्ठिदियं गलंतं सम्मत्तं जाधे कमेण उदयावलियं पविसमाणं संतं णिरवसेसं पइट्ठं ताधे आवलियमेत्तगुणसेढिगोपुच्छा मोदरिय अवट्ठिदस्स ओकड्डुणादो वि उक्कड्डणादो वि संकमणादो वि झीणट्ठिदियं पदेसग्गं होइ । एत्थ उदयावलियं पविसमाणं पविट्ठमिदि वयणमकमपवेसासंकाणिरायरणदुवारेण कम्मपदेस प्पवुप्पायणट्ठं दट्ठव्वं । सेसं सुगमं ।

आरम्भ किया है उसके अधःस्थितिके द्वारा गलता हुआ सम्यक्त्व जब उदयावलिमें प्रवेश करता है तब यह अपकर्षणसे, उत्कर्षणसे और संक्रमणसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है ।

§ ४४०. अब झीन झीन स्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके स्वामित्वका कथन करनेवाले इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—पूर्वविधिसे आये हुए गुणितकर्मांशवाले जिस जीवने क्षायिक दर्शन मोहनीय कर्मके क्षपणका आरम्भ करके अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके निमित्तसे बहुतसे स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डकोंके द्वारा मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमित किया । फिर सम्यग्मिथ्यात्वको भी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिरूपसे सम्यक्त्वमें संक्रमित किया । फिर सम्यक्त्वका भी उसी समय होनेवाले पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिकाण्डकके द्वारा आठ वर्षप्रमाण स्थिति सत्कर्म शेष रखकर शेषको उसी शेष स्थितिमें निक्षिप्त किया । इसके बाद फिर भी संख्यात हजार स्थिति-काण्डकोंके द्वारा सम्यक्त्व की स्थितिको अत्यन्त ह्रस्व करके जो कृतकृत्य होकर स्थित हुआ उसके अधःस्थितिके द्वारा गलता हुआ सम्यक्त्व जब क्रमसे उदयावलिमें पूराका पूरा प्रवेश कर जाता है तब एक आवलिप्रमाण गोपुच्छा उतर कर स्थित हुए इस जीवके अपकर्षण उत्कर्षण और संक्रमण इन तीनोंसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु होते हैं । यहाँ सूत्रमें जो 'उदयावलियं पविसमाणं पविट्ठं' यह वचन कहा है सो यह युगपत् प्रवेशकी आशंकाके निराकरण द्वारा क्रमसे होनेवाले प्रवेशका सूचन करनेके लिये जानना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

विशेषार्थ—इस सूत्रमें अपकर्षण उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा सम्यक्त्वके झीन स्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंके स्वामीका निर्देश किया है । यद्यपि यहाँ जो दृष्टान्त दिया है

§ ४६१. संपहि उदयादो उक्कस्सज्झीणट्ठिदियस्स सामित्तविसेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तस्सावयारो—

ॐ तस्सेव चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स सव्वमुदयंतमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

§ ४६२. तस्सेव पुव्वपरूविदजीवस्स पुणो वि गालिदसमयूणावलियमेत्तगोवुच्छस्स चरिमसमयअक्खीणदसणमोहणीयभावे वट्टमाणस्स जं सव्वमुदय त पदेसग्गं तमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियमिदि सुत्तत्थसबधो । एत्थ सव्वमुदयं तमिदि वुत्ते सर्वेषामुदयानामन्त्य निःपश्चिममुदयप्रदेशाग्रं सर्वोदयान्त्यमिति व्याख्येय । कुदो पुण एदस्स सव्वोदयतस्स सव्वुक्कस्सत्त ? ण, दंसणमोहणीयदव्वस्स सव्वस्सेव त्थोवूणस्स पुंजीभूदस्सेत्थुवलंभादो । तदो चेय पाठतरमवलबिय वक्खाणतरमेत्थ चरिमसमयअक्खीण ज दसणमोहणीय तस्स जो सव्वोदओ अविवक्खियकिंचूणभावो त घेत्तूण उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय होदि त्ति ।

वह दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समयका है और तब न तो सम्यक्त्वका संक्रमण ही होता है और न उत्कर्षण ही । तथापि उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणु इन तीनोंके अयोग्य हैं इस सामान्य कथनके अनुसार उनका उत्कृष्ट प्रमाण कहाँ प्राप्त होता है इस विवक्षासे यह स्वामित्व जानना चाहिये ।

§ ४६१ अब उदयसे उत्कृष्ट झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके स्वामित्वविशेषका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** जिसने दर्शनमोहनीयकी पूरी क्षपणा नहीं की है ऐसे उसी जीवके दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके अन्तिम समयमें जो सब कर्मपरमाणु उदयमें आते हैं वे उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु है ।**

§ ४६२ जिसने और भी एक समय कम आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको गला दिया है और दर्शनमोहनीयकी पूरी क्षपणा न होनेसे उसके अन्तिम समयमें विद्यमान है ऐसे उसी पूर्वमें कहे गये जीवके जो सम्यक्त्वके सब कर्मपरमाणु उदयमे आते हैं वे उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु हैं यह इस सूत्रका अभिप्राय है । यहाँ सूत्रमे जो सव्वमुदय त, ऐसा कहा है सो इस पदका ऐसा व्याख्यान करना चाहिये कि सब उदयोंके अन्तमें जो कर्मपरमाणु हैं वे यहाँ लिये गये हैं ।

शंका—सब उदयोंके अन्तमें स्थित ये कर्मपरमाणु सबसे उत्कृष्ट कैसे हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि दर्शनमोहनीयका कुछ कम सब द्रव्य एकत्रित होकर यहाँ पाया जाता है, इसलिये ये कर्मपरमाणु सबसे उत्कृष्ट हैं । उक्त सूत्रका यह एक व्याख्यान हुआ । अब पाठान्तरका अवलम्ब लेकर इसका दूसरा व्याख्यान करते हैं । यथा—अन्तिम समयमें जो अक्षीण दर्शनमोहनीय है उसका जो सर्वोदय है उसकी अपेक्षा उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्म परमाणु होते हैं । यहाँ किंचित् ऊनपनेकी विवक्षा न करके सर्वोदय पदका प्रयोग किया है इतना विशेष जानना चाहिए ।

* सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं कस्स ।

§ ४९२ सुगममेदं पुच्छासुत्तं । णवरि सम्मत्तस्सेव एत्थ वक्कड्डणादो झीणट्ठिदियस्स संभवो णत्थि ।

* गुणिदकम्मंसियस्स सव्वलहुं दंसणमोहणीयं खवेमाणस्स सम्मामिच्छत्तस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुभमाणयं संछुद्धमुदयावलिया उदयवज्जा

विशेषार्थ—प्रकृत सूत्रमें सम्यक्त्वकी अपेक्षा उदयसे झीन स्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है यह बतलाया है। गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर जिसने अतिशीघ्र दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ किया है वह पहले मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें और सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त करनेके बाद कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि होता है। फिर सम्यक्त्वको अधःस्थितिके द्वारा गलाता हुआ क्रमसे उदयके अन्तिम समयको प्राप्त होता है। इस प्रकार इस उपान्त्य समयमें सम्यक्त्वका जितना द्रव्य पाया जाता है उतना अन्यत्र सम्भव नहीं, इसलिये इसे उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी बतलाया है। यहाँ सूत्रमें आये हुए 'चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स सव्वमुदयं' इसके दो पाठ मानकर दो अर्थ सूचित किये गये हैं। प्रथम पाठ तो यही है और इसके अनुसार 'चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स' यह सूत्रमें आये हुए 'तस्सेव' पदका विशेषण हो जाता है और 'सव्वमुदयं' पाठ स्वतन्त्र हो जाता है। किन्तु दूसरा पाठ 'चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयसव्वोदयं' ध्वनित होता है। और इसके अनुसार 'अन्तिम समयमें अक्षीण हुआ दर्शनमोहनीय उसका जो सर्वोदय उसकी अपेक्षा' यह अर्थ प्राप्त होता है। मालूम होता है कि ये दो पाठ टीकाकारने दो भिन्न प्रतियोंके आधारसे सूचित किये हैं। फिर भी वे प्रथम पाठ को मुख्य मानते रहे, इसलिये उसे प्रथम स्थान दिया और पाठान्तररूपसे दूसरेकी सूचना की। यहाँ पाठ कोई भी विवक्षित रहे तब भी निष्कर्षमें कोई फरक नहीं पड़ता, क्योंकि यह दोनों ही पाठोंका निष्कर्ष है कि इस प्रकार सम्यक्त्वकी क्षपणाके अन्तिम समयमें जो उदयगत कर्मपरमाणु प्राप्त होते हैं वे उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु हैं।

* सम्यग्मिथ्यात्वके अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणसे झीन स्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ।

§ ४९२. यह पृच्छासूत्र सुगम है। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ पर सम्यक्त्वके समान ही उत्कर्षणसे झीनस्थितिपनेके सद्भावका कथन करना चाहिये। आशय यह है सम्यक्त्वके समान सम्यग्मिथ्यात्वका भी बन्ध नहीं होता इसलिये अपने बन्धकी अपेक्षा इसका उत्कर्षण नहीं बन सकता। अतएव जिस क्रमसे सम्यक्त्वमें उत्कर्षण घटित करके बतला आये हैं वैसे ही सम्यग्मिथ्यात्वमें घटित कर लेना चाहिये।

* अति शीघ्र दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले गुणितकर्मांशवाले जिस जीवके सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकका क्रमसे क्षेपण हो गया है और

भरिदल्लिया तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं।

§ ४६४. एदस्स सामित्तविहाययसुत्तस्सासेसावयवत्थपरूवणा सुगमा, मिच्छत्त-सामित्तसुत्तम्मि परूविदत्तादो। णवरि उदयावलिया त्ति वुत्ते उदयसमय मोत्तूण समयूणावलियमेत्तदंसणमोहणीयक्खवणगुणसेढिगोवुच्छाहि जावदि सक्कं ताव आवूरिदपदेसग्गाहि उदयावलिया सपुण्णीकया त्ति घेत्तव्व। उदयसमओ किमिदि वज्जिदो ? ण, उदयाभावेण तस्स त्थिवुक्कसंकमेण सम्मत्तुदयगोवुच्छाए उवरि संकमिय विपच्चंतस्स एत्थाणुवजोगित्तादो।

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स।

§ ४६५. सुगमं।

❀ गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ काऊण ताधे गदो सम्मामिच्छत्तं जाधे गुणसेढिसीसयाणि पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स

उदयसमयके सिवा शेष उदयावलि पूरित हो गई है वह सम्यग्मिथ्यात्वके अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणसे झीन स्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

§ ४६४. स्वामित्वका विधान करनेवाले इस सूत्रके सब अवयवोंका अर्थ सुगम है, क्योंकि मिथ्यात्वके स्वामित्वका कथन करनेवाले सूत्रमें उनका प्ररूपण कर आये हैं। किन्तु सूत्रमें जो 'उदयावलिया उदयवज्जा भरिदल्लिया' ऐसा कहा है सो इसका आशय यह है कि उदयसमय के सिवा एक समय कम उदयावलिप्रमाण जो दर्शनमोहनीयकी क्षपणासम्बन्धी गोपुच्छाएँ हैं, जो कि यथासम्भव अधिकसे अधिक कर्मपरमाणुओंसे पूरित की गई हैं, उनसे उदयावलिको परिपूर्ण करे।

शंका—यहाँ उदय समयका वर्जन क्यों किया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वका उदय न होनेसे वह उदयसम्बन्धी गोपुच्छा स्तिवुक संक्रमणके द्वारा सम्यक्त्वकी उदयसम्बन्धी गोपुच्छामें संक्रमित होकर फल देने लगती है, इसलिये वह यहाँ उपयोगी नहीं है।

विशेषार्थ—जो गुणितकर्मांशवाला जीव अतिशीघ्र आकर दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करता है उसके सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन हो जानेके बाद जो एक समय कम उदयावलि प्रमाण कर्म परमाणु शेष रहते हैं वे अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणसे झीन-स्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु हैं यह इस सूत्रका भाव है। शेष विशेषता जैसे सम्यक्त्वके उत्कृष्ट स्वामित्वका विशेष खुलासा करते समय लिख आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी जान लेनी चाहिये।

*** उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्म परमाणुओंका स्वामी कौन है।**

§ ४६५. यह सूत्र सुगम है।

*** गुणितकर्मांशवाला जो जीव संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणियोंको करके तब सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ जब सम्यग्मिथ्यात्वका प्राप्त होनेके प्रथम**

उदयमागदाणि ताधे तस्स पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं।

§ ४६६ एत्थ जो गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ काऊण ताधे सम्मामिच्छत्तं गदो जाधे पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स गुणसेढिसीसयाणि उदयमागयाणि त्ति पदसंबंधो कायव्वो। सेसपरूवणाए मिच्छत्तभंगो।

§ ४६७ एत्थ के वि आइरिया एवं भणंति—जहा सम्मामिच्छत्तस्स उदयादो झीणट्ठिदियं णाम अत्थसंबंधेण संजदासंजद-संजदगुणसेढीओ काऊण पुणो अणंताणुबंधिविसंजोयणगुणसेढीए सह जाधे एदाणि तिण्णि वि गुणसेढिसीसयाणि पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स उदयमागच्छंति ताधे तस्स उक्कस्सयं होइ, अणंताणुबंधिविसंजोयणगुणसेढीए पुव्वपरूविददोगुणसेढीहिंतो पदेसग्गं पडुच्च असंखेज्जगुणत्तादो। जइ वि संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ अणंताणुबंधिविसंजोयणाए ण लब्भंति तो वि एदीए चेव पहाणत्तं, तत्तो असंखेज्जगुणत्तादो। णवरि अणंताणुबंधिविसंजोयणगुणसेढिसीसयं गंथयारेण ण जोइदमिदि ण एदं घडदे। कुदो? अणंताणुबंधिविसंजोयणगुणसेढीए अविणट्ठसरूवाए अच्छंतीए सम्मामिच्छत्तगुणपरिणमणाभावादो। एदं कुदो णव्वदे? एदम्हादो चेव सुत्तादो। ण च संतमत्थं ण परूवेदि सुत्तं, तस्स अव्वावयत्त-

---

समयमें गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होते हैं तो प्रथम समयवर्ती वह सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

§ ४६६. यहाँपर जो गुणितकर्मांशवाला जीव संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणियोंको करके तब सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ जब सम्यग्मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होते हैं इस प्रकार पदोंका सम्बन्ध कर लेना चाहिये। शेष प्ररूपणा मिथ्यात्वके समान है।

§ ४६७. यहाँपर कितने ही आचार्य इस प्रकार कथन करते हैं कि उदयसे सम्यग्मिथ्यात्वका झीनस्थितिवाला जैसे किसी एक गुणितकर्मांशवाले जीवने संयमासंयम और संयमकी गुणश्रेणियाँ कीं। फिर उसके अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिके साथ जब ये तीनों ही गुणश्रेणियाँ सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके प्रथम समयमें उदयको प्राप्त होते हैं तब उसके उत्कृष्ट झीनस्थिति द्रव्य होता है क्योंकि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिमें पहली गई दो गुणश्रेणियोंसे कर्मपरमाणुओंकी अपेक्षा असंख्यातगुणी होती है। यद्यपि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके समय संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणियाँ नहीं प्राप्त होती हैं तो भी यही एक प्रधान है, क्योंकि यह उन दोनोंसे असंख्यातगुणी होती है। किन्तु ग्रन्थकारने अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षको नहीं जोड़ा है इसलिये यह बात नहीं बनती, क्योंकि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिके निर्जीर्ण हुए बिना रहते हुए सम्यग्मिथ्यात्वगुणकी प्राप्ति नहीं होती।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है।

१०

अभावो सिद्धो। ण च एत्थ संकिलेसो णत्थि त्ति वोत्तुं जुत्तं, संकिलेसावूरणेण विणा सम्माइट्ठिस्स सम्मामिच्छत्तगुणपरिणामासंभवादो। ण च तत्थ अप्पसत्थमरणं तं सुत्ते ण वुत्तं, संकिलेसमेत्तेण सह तासिं विरोहपदुप्पायणट्ठं तहोवएसादो। तम्हा सुत्तपरूविदाणि चेव दोगुणसेढिसीसयाणि संकिलेसकाले वि अविणस्ससरूवाणि जाधे पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स उदयमागयाणि ताधे तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियस्स मिच्छत्तस्सेव सामित्तं वत्तव्वमिदि सिद्धं।

सिद्ध हुआ। यदि कहा जाय कि यहाँ संक्लेश नहीं होता सो भी बात नहीं है, क्योंकि संक्लेश पूरा हुए बिना सम्यग्दृष्टिके सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानकी प्राप्ति सम्भव नहीं। यदि कहा जाय कि सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें अप्रशस्त मरण होता है यह बात आगममें नहीं कही है सो ऐसा कहकर भी मुख्य बात को नहीं टाला जा सकता है, क्योंकि संक्लेशमात्रके साथ उक्त गुणश्रेणियों के विरोधका कथन करनेके लिये वैसा उपदेश दिया है। इसलिये सूत्रमें कहे गये दो गुणश्रेणिशीर्ष ही नाशको प्राप्त हुए बिना जब सम्यग्मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें उदयको प्राप्त होते हैं तभी उसके उदयसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका मिथ्यात्वके समान उत्कृष्ट स्वामित्व कहना चाहिए यह सिद्ध हुआ।

विशेषार्थ—जो जीव गुणितकर्मांशकी विधिसे आया और अविरति संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणियोंको करके इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ जब सम्यग्मिथ्यात्वके प्रथम समयमें इन दोनों गुणश्रेणियोंके शीर्ष उदयको प्राप्त हुए तब इसके उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु प्राप्त होते हैं। किन्तु कुछ आचार्य इन दो गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयके साथ अनन्तानुबन्धीके विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षके उदयको मिलाकर तीन गुणश्रेणिशीर्षोंका उदय होनेपर उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करते हैं। इतना ही नहीं किन्तु वे यह भी कहते हैं कि यदि इन तीनों गुणश्रेणिशीर्षोंका उदय सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानके प्रथम समयमें सम्भव न हो तो केवल एक अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षका उदय ही पर्याप्त है, क्योंकि संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षों में जितने कर्मपरमाणु पाये जाते हैं उनसे इस गुणश्रेणिशीर्षमें असंख्यातगुणे कर्मपरमाणु पाये जाते हैं। किन्तु चूर्णिकारने उक्त आचार्योंके इस कथनको दो कारणोंसे नहीं माना है। प्रथम कारण तो यह है कि यदि सम्यग्मिथ्यात्वगुणस्थानमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणि पाई जाती होती तो चूर्णिसूत्रकार न उक्त दो गुणश्रेणियोंके साथ इसका अवश्य ही समावेश किया होता या स्वतन्त्ररूपसे इसका आश्रय लेकर ही उत्कृष्ट स्वामित्वका प्रतिपादन किया होता। किन्तु जिस कारणसे सूत्रकारने ऐसा नहीं किया इससे ज्ञात होता है कि सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणि नहीं पाई जाती। दूसरे उत्कर्ष नामक महाधिकारमें प्रदेशोदयके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करनेके लिये ग्यारह गुणश्रेणियोंका निर्देश करते हुए बतलाया है कि 'असंयतसम्यक्त्वगुणश्रेणि, संयतासंयतगुणश्रेणि और अप्रमत्तसंयत गुणश्रेणि ये तीन गुणश्रेणियाँ ही मरणके बाद परभवमें दिखाई देती हैं। इससे ज्ञात होता है कि संक्लेश परिणामों के प्राप्त होने पर केवल ये तीन गुणश्रेणियाँ ही पाई जाती हैं शेष गुणश्रेणियाँ नहीं क्योंकि उनका काल संक्लेशको पूरा करनेके कालसे थोड़ा है। यतः सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानकी प्राप्ति संक्लेशरूप परिणाम हुए बिना बन नहीं सकती अतः सिद्ध हुआ कि सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणि नहीं पाई जाती।

दोसप्पसंगादो ।

§ ४६८. अण्णं च एदस्स णिबंधणमत्थि। त जहा--संतकम्ममहाहियारे कदि-वेदणादिचउवीसमणियोगद्दारेसु पडिबद्धे उदओ णाम अत्थाहियारो ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसाणं पयडिसमण्णियाणमुक्कस्साणुक्कस्सजहण्णाजहण्णुदयपरूवणेयवावारो, तत्थुक्कस्सपदेसुदयसामित्तसाहणट्ठं सम्मत्तुप्पत्तियादिएक्कारसगुणसेढीओ परूविय पुणो जाओ गुणसेढीओ संकिलेसेण सह भवंतर संकामेंति ताओ वत्तइस्सामो। तं जहा--उवसमसम्मत्तगुणसेढी संजदासंजदगुणसेढी अधापवत्तसंजदगुणसेढी त्ति एदाओ तिण्णि गुणसेढीओ अप्पसत्थमरणेण वि मदस्स परभवे दीसति। सेसासु गुणसेढीसु भीणासु अप्पसत्थमरणं भवे इदि वुत्तं तं पि केणाहिप्पाएण वुत्तं, उक्कस्ससंकिलेसेण सह तासिं विरोहादो त्ति। त पि कुदो? संकिलेसावूरणकालादो पयदगुणसेढीणमायामस्स संखेज्जगुणहीणत्तब्भुवगमादो। तदो एदेण साहणेण एत्थ वि तासि-

यदि कहा जाय कि सूत्र विद्यमान अर्थका कथन नहीं करता है सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऐसा माननेपर सूत्रको अव्यापकत्व दोपका प्रसग प्राप्त होता है।

§ ४६८ तथा अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिके सद्भावमें जीव सम्यग्मिथ्यात्व गुणको नहीं प्राप्त होता इसका एक अन्य कारण है जो इस प्रकार है—कृति, वेदना आदि चौवीस अनुयोगद्वारोंसे सम्बन्ध रखनेवाले सत्कर्म महाधिकारमें प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशोंके उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्यरूप उदयके कथन करनेमें व्यापृत एक उदय नामका अर्थाधिकार है। वहाँ उत्कृष्ट प्रदेशोदयके स्वामित्वका साधन करनेके लिये सम्यक्त्वकी उत्पत्ति आदि ग्यारह गुणश्रेणियोंका कथन करनेके बाद फिर "जो गुणश्रेणियाँ सक्लेशरूप परिणामोंके साथ भवान्तरमें जाती हैं उन्हें बतलाते हैं। जैसे—उपशम सम्यक्त्व-गुणश्रेणि, सयतासयतगुणश्रेणि और अधःप्रवृत्तसयतगुणश्रेणि इस प्रकार ये तीन गुणश्रेणिया अप्रशस्त मरणके साथ भी मरे हुए जीवके परभवमें दिखाई देती हैं। किन्तु शेप गुणश्रेणियोंके क्षयको प्राप्त होने पर ही अप्रशस्त मरण होता है।" यह कहा है सो यह किस अभिप्रायसे कहा है? मालूम होता है कि शेष गुणश्रेणियोंका उत्कृष्ट सक्लेशके साथ विरोध है, इसलिये ऐसा कहा है।

शंका—यह भी कैसे जाना?

समाधान—सक्लेशको पूरा करनेका जो काल है उससे प्रकृत गुणश्रेणियोंका आयाम सख्यातगुणा हीन स्वीकार किया है, इससे जाना जाता है कि शेष गुणश्रेणियोंका उत्कृष्ट सक्लेशके साथ विरोध है।

इसलिये इस साधनसे यहाँ भी अर्थात् सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें भी उनका अभाव

१ ध० आ०, पत्र १०६५। "तिन्नि वि पढमिल्लाओ मिच्छत्ताए वि होज्ज अन्नभवे।"—कर्म प्र० उदय गा० १०। 'सम्मत्तुप्पादगुणसेढी देसविरदगुणसेढी अहापमत्तसजयगुणसेढी य एया तिन्नि वि पढमिल्लीओ गुणसेढीतो मिच्छत्त वि होज्ज अन्नभवे' त्ति मिच्छत्त गतूण अप्पसत्थ, मरणेण मओ गुणसेदितियदलिय परभवगतो वि किं त्रिकाल वेदिज्जा।'—चूर्णि।

मभावो सिद्धो। ण च एत्थ संकिलेसो णत्थि त्ति वोत्तुं जुत्तं, संकिलेसापूरणेण विणा सम्माइट्ठिस्स सम्मामिच्छत्तगुणपरिणामासंभवादो। ण च तत्थ अप्पसत्थमरणं संभवे ण जुत्तं, संकिलेसमेत्तेण सह तासिं विरोहपदुप्पायणट्ठं तहोवएसादो। तम्हा सुत्तपरूविदाणि जाव दोगुणसेढिसीसयाणि संकिलेसकालो त्ति अविणस्संतसरूवाणि ताधे पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स उदयमागयाणि ताधे तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियस्स मिच्छत्तस्सेव सामित्तं वत्तव्वमिदि सिद्धं।

सिद्ध हुआ। यदि कहा जाय कि यहाँ संक्लेश नहीं होता सो भी बात नहीं है, क्योंकि संक्लेश पूरा हुए बिना सम्यग्दृष्टिके सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानकी प्राप्ति सम्भव नहीं। यदि कहा जाय कि सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें अप्रशस्त मरण होता है यह बात आगममें नहीं कही है सो ऐसा कहकर भी मुख्य बात को नहीं टाला जा सकता है, क्योंकि संक्लेशमात्रके साथ उक्त गुणश्रेणियों के विरोधका कथन करनेके लिये वैसा उपदेश दिया है। इसलिये सूत्रमें कहे गये दो गुणश्रेणिशीर्ष ही नाशको प्राप्त हुए बिना जब सम्यग्मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें उदयको प्राप्त होते हैं तभी उसके उदयसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका मिथ्यात्वके समान उत्कृष्ट स्वामित्व कहना चाहिए यह सिद्ध हुआ।

विशेषार्थ—जो जीव गुणितकर्मांशकी विधिसे आया और अतिशीघ्र संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणियोंको करके इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ जब सम्यग्मिथ्यात्वके प्रथम समयमें इन दोनों गुणश्रेणियोंके शीर्ष उदयको प्राप्त हुए तब इसके उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु प्राप्त होते हैं। किन्तु कुछ आचार्य इन दो गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयके साथ अनन्तानुबन्धीके विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षके उदयको मिलाकर तीन गुणश्रेणिशीर्षोंका उदय होनेपर उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करते हैं। इतना ही नहीं किन्तु वे यह भी कहते हैं कि यदि इन तीनों गुणश्रेणिशीर्षोंका उदय सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानके प्रथम समयमें सम्भव न हो तो केवल एक अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षका उदय ही पर्याप्त है, क्योंकि संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षों में जितने कर्मपरमाणु पाये जाते हैं उनसे इस गुणश्रेणिशीर्षमें असंख्यातगुणे कर्मपरमाणु पाये जाते हैं। किन्तु टीकाकारने उक्त आचार्योंके इस कथनको दो कारणोंसे नहीं माना है। प्रथम कारण तो यह है कि यदि सम्यग्मिथ्यात्वगुणस्थानमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणि पाई जाती होती तो चूर्णिसूत्रकार ने उक्त दो गुणश्रेणियोंके साथ इसका अवश्य ही समावेश किया होता या स्वतन्त्ररूपसे इसका आलम्ब लेकर ही उत्कृष्ट स्वामित्वका प्रतिपादन किया होता। किन्तु जिस कारणसे सूत्रकारने ऐसा नहीं किया इससे ज्ञात होता है कि सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणि नहीं पाई जाती। दूसरे सत्कर्म नामक महाधिकारमें प्रदेशोदयके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करनेके लिये ग्यारह गुणश्रेणियोंका निर्देश करते हुए बतलाया है कि 'उपशमसम्यक्त्वगुणश्रेणि, संयतासंयतगुणश्रेणि और अधःप्रवृत्तसंयत गुणश्रेणि ये तीन गुणश्रेणियाँ ही मरणके बाद परभवमें दिखाई देती हैं। इससे ज्ञात होता है कि संक्लेश परिणामों के प्राप्त होने पर केवल ये तीन गुणश्रेणियाँ ही पाई जाती हैं शेष गुणश्रेणियाँ नहीं क्योंकि उनका काम संक्लेशको पूरा करनेके पहलेसे थोड़ा है। यतः सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानकी प्राप्ति संक्लेशरूप परिणाम हुए बिना बन नहीं सकती अतः सिद्ध हुआ कि सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणि नहीं पाई जाती।

❀ अणंताणुबंधीणमुक्कस्सयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ४६६. सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

❀ गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजम-संजमगुणसेढीहि अविणट्ठाहि अणंताणुबंधी विसंजोएदुमाढत्तो, तेसिमपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुभमाणयं संछुद्धं तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं ।

§ ५००. जो गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुमणंताणुबंधिकसाए विसंजोएदुमाढत्तो । किंभूदो सो संजमासजम-संजमगुणसेढीए अविणट्ठसरूवाहि उवलक्खिओ तेण जाधे तेसिमपच्छिमट्ठिदिखंडयं सेसकसायाणमुवरि संछुब्भमाणाय संछुद्ध ताधे तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादीणं तिण्हं पि सबंधि झीणट्ठिदियं होदि त्ति सुत्तत्थसंबंधो । कुदो एदस्स उक्कस्सत्तं ? ण; तिण्हं पि सग-सगुक्कस्सपरिणामेहि कयगुणसेढिगोवुच्छाणं

यहाँ एक यह तर्क किया जा सकता है कि सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें मरण नहीं होता और उपशमसम्यक्त्व गुणश्रेणि आदि तीनके सिवा शेषका निषेध मरणका आलम्बन लेकर किया है सक्लेशका आलम्बन लेकर नहीं, अत सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना-सम्बन्धी गुणश्रेणिके माननेमें कोई आपत्ति नहीं है । पर यह तर्क भी ठीक नहीं ज्ञात होता, क्योंकि संक्लेशका और मरणका परस्पर सम्बन्ध है । सक्लेशके होने पर मरण आवश्यक है यह बात नहीं पर मरणके लिये सक्लेश आवश्यक है । इसलिये यहाँ तीनके सिवा शेष गुणश्रेणियाँ सक्लेशमात्रमें सम्भव नहीं यह तात्पर्य निकलता है । यद्यपि सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें अनन्तानुबन्धीकी विसयोजनावाला जीव जाता है पर वह तभी जाता है जब गुणश्रेणिका काल समाप्त हो लेता है । अत. सयमासयम और सयम इन दो गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयकी अपेक्षा ही सम्यग्मिथ्यात्वके प्रथम समयमें उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु कहने चाहिये यह तात्पर्य निकलता है ।

❀ अनन्तानुबन्धीके अपकर्षण आदि तीनोंके झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ४६६ यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

❀ जिस गुणितकर्मांशवाले जीवने सयमासंयम और संयमकी गुणश्रेणियोंका नाश किये बिना अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाका आरम्भ किया और जिसके अनन्तानुबन्धियोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकका क्रमसे नाश हो गया वह अपकर्षण आदि तीनोंके झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है ।

§ ५०० गुणितकर्मांशवाले जिस जीवने अतिशीघ्र अनन्तानुबन्धी कषायकी विसयोजनाका प्रारम्भ किया । विसयोजनाका प्रारम्भ करनेवाला जो नाशको नहीं प्राप्त हुई सयमासयम और सयमसम्बन्धी गुणश्रेणियोंसे युक्त है । उसने जब उन अनन्तानुबन्धी कषायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकको शेष कषायोंमें क्रमसे निक्षिप्त कर दिया तब उसके अपकर्षणादि तीनों सम्बन्धी उत्कृष्ट झीनस्थिति होती है यह इस सूत्रका अभिप्राय है ।

शंका—इसीके उत्कृष्टपना कैसे होता है ?

समपुणावलिमेत्ताणमेत्थुवलंभादो । एत्थाणंताणुबंधिविसंजोयणगुणसेढी चेव पहाणा, सेसाणमेत्तो असंखेज्जगुणहीणत्तदंसणादो ।

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५०१ सुगमं ।

❀ संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ काऊण तत्थ मिच्छत्तं गदो जाधे गुणसेढिसीसयाणि पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स उदयमागयाणि ताधे तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

§ ५०२ एत्थ गुणिदकम्मंसियणिद्देसो किमट्ठं ण कदो ? ण, तस्स पुव्विल्लसामित्तसुत्तादो अणुवुत्तिदंसणादो । गुणसेढीणं परिणामपरतंतभावेण ण स णिप्फलत्तं, पयडिगोपुच्छाए लाहदंसणादो । एत्थ पदसंबंधो संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ काऊण तत्तो से मिच्छत्तं गदो जाधे गदस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स दो वि गुणसेढि

समाधान—नहीं, क्योंकि अपने-अपने उत्कृष्ट परिणामोंके द्वारा की गई तीनों ही गुणश्रेणिगोपुच्छाएँ एक समय कम एक आवलिप्रमाण यहाँ पाई जाती हैं इसलिये अपकर्षणादि की झीनस्थितियोंकी अपेक्षा इसीके उत्कृष्टपना है । तो भी यहाँ अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना-सम्बन्धी गुणश्रेणि ही प्रधान है, क्योंकि शेष दो गुणश्रेणियाँ इससे असंख्यातगुणी हीन देखी जाती हैं ।

विशेषार्थ—जो गुणितकर्मांशवाला जीव अतिशीघ्र संयमासंयम, संयम और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना इन तीनों सम्बन्धी गुणश्रेणियोंको क्रमसे करके तदनन्तर अनन्तानुबन्धीके अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन करके स्थित होता है उसके अनन्तानुबन्धीके अपकर्षण उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु पाये जाते हैं यह उक्त सूत्रका आशय है ।

❀ उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५०१ यह सूत्र सुगम है ।

❀ जो संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणियोंको करके मिथ्यात्वमें गया और वहाँ पहुँचने पर मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके प्रथम समयमें जब गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होवे हैं तब वह प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है ।

§ ५०२ शंका—इस सूत्रमें 'गुणितकर्मांशिक' पदका निर्देश क्यों नहीं किया ?

समाधान—नहीं क्योंकि इस पदकी पूर्वके स्वामित्वसूत्रसे अनुवृत्ति देखी जाती है । और गुणश्रेणियाँ परिणामोंके अधीन रहती हैं, इसलिये यह निष्फल भी नहीं है, क्योंकि इससे प्रकृतिगोपुच्छाका लाभ दिखाई देता है ।

अब इस सूत्रके पदोंका इस प्रकार सम्बन्ध करे कि संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणियोंको करके फिर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ और जब मिथ्यात्वमें जाकर प्रथम

सीसयाणि उदयमागदाणि होज्ज ताधे तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियमिदि। सम्माइट्ठिम्मि अणंताणुवंधीणमुदयाभावेण उदीरणा णत्थि त्ति गुणसेढिसीसएसु आवलियपइट्ठेसु उदीरणादव्वसंगहट्ठमेसो मिच्छत्तं णेदव्वो त्ति णासंकणिज्जं, तत्थ पुव्वमेव संकिलेसवसेण लाहादो असंखेज्जगुणसेढिदव्वस्स हाणिदसणादो। ण च विसोहिपरतंता गुणसेढिणिज्जरा उदीरणा वा संकिलेसकाले वहुगी होइ, विरोहादो।

❀ अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५०३. सुगमं।

❀ गुणिदकम्मंसिओ कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदो जाधे अट्ठण्हं

समयमें दोनों ही गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त हुए उसी समय उसके उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु होते हैं। यदि यह कहा जाय कि सम्यग्दृष्टिके अनन्तानुबन्धियोंका उदय नहीं होनेसे उदीरणा नहीं होती अतएव उदीरणाद्रव्यके सग्रह करनेके लिए जब गुणश्रेणिशीर्ष आवलिके भीतर प्रविष्ट हो जायँ तभी इसे मिथ्यात्वमें ले जाना चाहिये सो ऐसी आशका भी नहीं करनी चाहिये, क्योंकि वहाँ पहले ही सक्लेशके वशसे लाभकी अपेक्षा असख्यातगुणे श्रेणिद्रव्यकी हानि देखी जाती है। और जो गुणश्रेणिनिर्जरा विशुद्धिके निमित्तसे होती है वह सक्लेशकालमें उदीरणाके समान बहुत होगी सो भी बात नहीं है, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है।

विशेषार्थ—इस सूत्रमें अनन्तानुबन्धीकी अपेक्षा उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंके स्वामीका निर्देश किया है। जो गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर अतिशीघ्र सयमासयम और संयमकी गुणश्रेणियाँ करके मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है उसके वहाँ प्रथम समयमें ही यदि उक्त गुणश्रेणियोंके शीर्ष उदयमें आ जाते हैं तो उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होता है यह इस सूत्रका भाव है। यहाँ एक शका यह की गई है कि उदय समयमें ही इस जीवको मिथ्यात्वमें न लाकर एक आवलि पहलेसे ले आना चाहिये। इससे लाभ यह होगा कि उदीरणाका द्रव्य प्राप्त हो जानेसे गुणश्रेणिशीर्षके परमाणु और अधिक हो जायँगे। इस शंकाका जो समाधान किया गया है उसका भाव यह है कि सक्लेश परिणामोंके विना तो मिथ्यात्व गुणस्थानकी प्राप्ति होती नहीं। अब जब कि गुणश्रेणिशीर्षके आवलिके भीतर प्रवेश करते ही इसे मिथ्यात्वमें ले जाना है तो पूर्वमें ही संक्लेश परिणाम हो जानेसे उदीरणाके द्वारा होनेवाले लाभसे असख्यातगुणे द्रव्यकी हानि हो जाती है, क्योंकि इतने समय पहलेसे ही इसकी गुणश्रेणिरचनाका क्रम बन्द हो जायगा। इसलिये ऐसे समय ही इसे मिथ्यात्वमें ले जाना चाहिये जब मिथ्यात्वमें पहुँचते ही गुणश्रेणिशीर्षका उदय हो जाय।

* आठ कषायोंके अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है।

§ ५०३. यह सूत्र सुगम है।

* जिस गुणितकर्मांशवाले जीवने कषायोंकी क्षपणाका आरम्भ किया है वह

कसायाणमपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुभमाणं संछुद्धं ताधे उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं।

§ ५०४ एत्थ पदसंबंधो एवं कायव्वो—जो गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुं अट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि कदासेसकरणिज्जो होदूण कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तेण ताधे अपुव्वाणियट्टिकरणपरिणामेहि ट्ठिदिखंडयसहस्साणि घादेदूण अट्ठण्हं कसायाणमपच्छिमट्ठिदिखंडयमावलियवज्जं संकमणाएमुवरि संछुभमाणयं संछुद्धं ताधे तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादीणं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं होइ त्ति। कुदो एदमावलियपइट्ठदव्वमुक्कस्सं ? ण, समयूणावलियमेत्तखवयगुणसेढीणमेत्थुवलंभादो। हेट्ठा चेय संजमासंजम-संजम-दंसणमोहणीयक्खवणगुणसेढीओ घेत्तूण सामित्तं किमिदि ण परूविदं ? ण, तासिं सव्वासिं पि मिलिदाणं खवगगुणसेढीए असंखेज्जदिभागत्तादो।

* उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ?

जब आठ कषायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकका क्रमसे पतन कर देता है तब वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

§ ५०४ यहाँ पर पदोंका सम्बन्ध इस प्रकार करना चाहिये कि जो गुणितकर्मांशवाला जीव अतिशीघ्र आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्तके बाद करने योग्य सब कार्यों को करके कषायोंकी क्षपणाके लिये उद्यत हुआ, वह जब अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणरूप परिणामोंके द्वारा हजारों स्थितिकाण्डकोंका पतन करके आठ कषायोंके एक आवलिके सिवा अन्तिम स्थितिकाण्डकको संज्वलनोंमें क्रमसे निक्षिप्त करता है तब वह अपकर्षण आदि तीनोंके झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

शंका—आवलिके भीतर प्रविष्ट हुआ यह द्रव्य उत्कृष्ट कैसे है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि एक समय कम आवलिप्रमाण क्षपकगुणश्रेणियाँ यहाँ पाई जाती हैं इसलिये यह द्रव्य उत्कृष्ट है।

शंका—इसके पूर्वमें ही संयमासंयम संयम और दर्शनमोहनीयकी क्षपणा इन तीनों गुणश्रेणियोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन क्यों नहीं किया गया है ?

समाधान—नहीं क्योंकि वे सब मिलकर भी क्षपकगुणश्रेणिके असंख्यातवें भाग प्रमाण होती हैं।

विशेषार्थ—गुणितकर्मांशवाला जो जीव आठ कषायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन करके जब स्थित होता है तब उसके आठ कषायोंके अपकर्षण उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु पाये जाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। शेष शंका-समाधान सरल है।

* उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५०५. एत्थ अट्ठण्हं कसायाणमिदि अहियारसंबंधो। सुगममन्यत्।

❀ **गुणिदकम्मंसियस्स संजमासंजम-संजम-दंसणमोहणीयक्खवण-गुणसेढीओ एदाओ तिण्णि गुणसेढीओ काऊण असंजमं गदो तस्स पढमसमयअसंजदस्स गुणसेढिसीसयाणि उदयमागदाणि तस्स अट्ठकसायाणमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं।**

५०६. एत्थ पदसंबंधो एवं कायव्वो। तं जहा—गुणिदकम्मंसियस्स अट्ठकसायाणमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं होइ। किं सर्वस्यैव? नेत्याह—संजमासंजम-संजम-दंसणमोहणीयक्खवणगुणसेढीओ त्ति एदाओ तिण्णि गुणसेढीओ कमेण काऊण असंजमं गदो तस्स पढमसमयअसंजदस्स जाधे गुणसेढिसीसयाणि उदयमागदाणि ताधे पयदुक्कस्ससामित्तं होइ त्ति। किमट्ठमेसो पयदसामिओ असंजमं णीदो? ण, अण्णहा अट्ठकसायाणमुदयासंभवादो। एत्थाणंताणुबंधिविसंजोयणगुणसेढीए सह चत्तारि गुणसेढीओ किण्ण परूविदाओ त्ति णासंकणिज्ज, तिस्से सगअपुव्वाणियट्टिकरणद्धाहिंतो विसेसाहियगलिदसेससरूवाए एत्तियमेत्तकालमवट्ठाणासंभवादो। तम्हा

---

§ ५०५ इस सूत्रमें अधिकारके अनुसार 'आठ कषायोंके' इन पदोंका सम्बन्ध कर लेना चाहिये। शेष कथन सुगम है।

❀ **जो गुणितकर्मांशवाला जीव संयमासंयम, संयम और दर्शनमोहनीयकी क्षपणासम्बन्धी इन तीन गुणश्रेणियोंको करके असंयमको प्राप्त हुआ है उस असंयतके जब प्रथम समयमें गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होते हैं तब वह आठ कषायोंके उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।**

§ ५०६ यहाँ पदोंके सम्बन्ध करनेका क्रम इस प्रकार है—गुणितकर्मांशवाला जीव आठ कषायोंके उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

शंका—क्या सभी गुणितकर्मांशवाले जीव स्वामी होते हैं?

समाधान—नहीं, किन्तु जो संयमासंयम, संयम और दर्शनमोहनीयकी क्षपणा सम्बन्धी इन तीन गुणश्रेणियोंको क्रमसे करके असंयमको प्राप्त हुआ है प्रथम समयवर्ती उस असंयतके जब गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होते हैं तब प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होता है।

शंका—यह प्रकृत स्वामी असंयमको क्यों प्राप्त कराया गया?

समाधान—नहीं, क्योंकि अन्यथा आठ कषायोंका उदय नहीं बन सकता था। और यहाँ उनका उदय अपेक्षित था, इसलिये यह असंयमको प्राप्त कराया गया है।

शंका—यहाँ अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिके साथ चार गुणश्रेणियोंका कथन क्यों नहीं किया?

समाधान—यहाँ ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि वह अपने अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालसे कुछ ही अधिक होती है, इसलिये शेष भागके गल जानेसे इतने कालतक उसका सद्भाव मानना असंभव है।

गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण संजदासंजद-संजदगुणसेढीओ काऊण पुणो अणंताणुबंधी विसंजोइय दंसणमोहणीयं खवेमाणो वि अट्ठकसायाणं पुव्विल्लदोगुणसेढिसीसएहि सरिसमप्पणो गुणसेढिसीसयं काऊण अप्पमत्तसंजदो जादो। गुणसेढिसीसएसु उदयमागच्छमाणेसु कालं काऊण देवेसुप्पण्णपढमसमए वट्टमाणओ जो जीवो तस्स पढमसमयअसंजदस्स उदिण्णगुणसेढिसीसयस्स अट्ठकसायाणमुक्कस्समुदयादो झीणट्ठिदियं होदि त्ति सिद्धं। एत्थ सत्थाणम्मि चेव असंजमं णेदूण सामित्तं किण्ण दिण्णं? ण, सत्थाणम्मि असंजमं गच्छमाणो पुव्वमेव अंतोमुहुत्तकालं संकिलेसमावूरेदि त्ति एत्तियमेत्तकालपडिबद्धगुणसेढिलाहस्स विणासप्पसंगादो। सिस्सो[1] भणइ—एदम्हादो उवसमसेढिमस्सियूण उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं बहुअं लहिस्सामो। तं जहा—जो गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुं कसायउवसामणाए अब्भुट्ठिदो अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि गुणसेढिं करेमाणो अपुव्वकरणद्धादो अणियट्टिअद्धाओ च विसेसाहियं काऊण अणियट्टिअद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु से काले अंतरं पारभदि त्ति मदो देवो जादो तस्स अंतोमुहुत्तोववण्णल्लयस्स जाधे

इसलिये गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर और संयतासंयत तथा संयतसम्बन्धी गुणश्रेणियोंको करके फिर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करता हुआ भी आठ कषायोंकी पहलेकी दो गुणश्रेणिशीर्षोंके समान अपने गुणश्रेणिशीर्षको करके अप्रमत्तसंयत हो गया। फिर गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयमें आनेपर मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ। इस प्रकार देवोंमें उत्पन्न होकर जो प्रथम समयमें विद्यमान है उस प्रथम समयवर्ती असंयतके गुणश्रेणिशीर्षके उदय होनेपर आठ कषायोंके उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु होते हैं यह सिद्ध हुआ।

शंका—यहाँ स्वस्थानमें ही असंयम प्राप्त कराकर स्वामित्वका कथन क्यों नहीं किया?

समाधान—नहीं, क्योंकि यदि इस जीवको स्वस्थानमें ही असंयम प्राप्त कराते हैं तो अन्तर्मुहूर्त काल पहलेसे ही इसे संक्लेशकी प्राप्ति करानी होगी जिससे इतने कालसे सम्बन्ध रखनेवाली गुणश्रेणिका लाभ न मिल सकेगा, अतः स्वस्थानमें ही असंयम प्राप्त कराकर स्वामित्वका कथन न करके इसे देवोंमें उत्पन्न कराया गया है।

शंका—यहाँ शिष्यका कहना है कि पीछे जो क्रम कहा है इसके स्थानमें यदि उपशमश्रेणिकी अपेक्षा यह कथन किया जाय तो उदयसे झीनस्थितिवाले अधिक परमाणु प्राप्त हो सकते हैं और तब इन्हें उत्कृष्ट कहना ठीक होगा। खुलासा इस प्रकार है—गुणितकर्मांशवाला जो जीव अतिशीघ्र कषायोंका उपशम करनेके लिये उद्यत हुआ। फिर अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर गुणश्रेणिको करता हुआ अपूर्वकरणके कालसे अनिवृत्तिकरणके कालको विशेषाधिक करके अनिवृत्तिकरणके कालका संख्यात बहुभाग व्यतीत हो जाने पर तदनन्तर समयमें अन्तरकरणका प्रारम्भ करता किन्तु ऐसा न करके मरा और देव हो गया उसके यहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त

---

१ 'अंतरकरणं होहि त्ति जायदेवस्स तं मुहुत्तंतो। अट्ठण्हकसायाणं।'—कर्मप्र० उदय गा० १४।

गुणसेढिसीसयमुदिण्णं ताधे उक्कस्सयमुदयादो भीणट्ठिदिय। एदं च पुव्विल्लसव्व-गुणसेढिसीसयदव्वादो विसोहिपाहम्मेण असंखेज्जगुणं, तम्हा एत्थोवसामितेण होदव्व। जइ वि एसो अंतोमुहुत्तकालमुक्कड्डिय गुणसेढिदव्वमुवरि सछुहदि परपयडीसु च अधापवत्तसंकमेण संकामेदि तो वि एदं विणासिज्जमाणसव्वदव्वमप्पहाणं गुणसेढिसीसयस्स असंखेज्जभागत्तादो त्ति णेद घडदे, देवेसुववज्जिय अंतोमुहुत्तकाल-मच्छमाणस्स ओकड्डुकड्डणादीहि गुणसेढिसीसयस्स असंखेज्जाणं भागाण परिक्खय-दंसणादो। ण चेदमसिद्धं, एदम्हादो चेव सुत्तादो तहाभावसाहणादो। ण च देवेसुप्पण्णपढमसमए चेव उवसामणगुणसेढिगोवुच्छावलंवणेण पयदसामित्तसमत्थणं पि समंजसं, तत्थतणगुणसेढिगोवुच्छदव्वस्स दंसणमोहक्खवयगुणसेढिसीसयादो असंखेज्ज-गुणत्तणिण्णयादो। सुत्तयाराहिप्पाएण पुण दंसणमोहक्खवयगुणसेढिसीसयस्सेव तत्तो असखेज्जगुणत्तणिण्णयादो। अण्णहा तप्परिहारेणेत्थेव सामित्तविहाणाणुववत्तीदो। ण च दसणमोहक्खवयगुणसेढिसीसएण सह त घेत्तूण सामित्तावलवणं पि घडमाणयं गलिदसेससरूवदंसणमोहक्खवयगुणसेढिसीसयस्स तेत्तियमेत्तकालावट्ठाणस्स अच्चत-मसभवादो। तम्हा सुत्तुत्तमेव सामित्तमविरुद्ध सिद्ध। अहवा णिव्वाघादेण सत्थाणे

बाद जब गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त होता है तब उदयसे भीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु होते हैं। और यह द्रव्य विशुद्धिकी अधिकतासे सचित होता है, इसलिये पिछले सब गुणश्रेणि-शीर्षों के द्रव्यसे असख्यातगुणा है। इसलिये यहाँ अन्य कोई स्वामी न होकर उपशामक होना चाहिये। यद्यपि यह अन्तर्मुहूर्तकाल तक उत्कर्षण करके गुणश्रेणिके द्रव्यको ऊपर निक्षिप्त करता है और अध प्रवृत्त सक्रमणके द्वारा पर प्रकृतियोंमें भी सक्रमित करता है तो भी इस प्रकारसे विनाशको प्राप्त होनेवाला यह सब द्रव्य अप्रधान है, क्योंकि यह गुणश्रेणिशीर्षके असख्यातवें-भागप्रमाण है ?

समाधान—सो यह कहना घटित नहीं होता है, क्योंकि देवोंमें उत्पन्न होकर अन्त-र्मुहूर्तकालतक रहते हुए इसके अपकर्षण, उत्कर्षण आदिके द्वारा गुणश्रेणिशीर्षके असख्यात बहुभागोंका क्षय देखा जाता है और यह बात असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि इसी सूत्रसे इसकी सिद्धि होती है। यदि कहा जाय कि देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही उपशमश्रेणिसम्बन्धी गोपुच्छोंके अवलम्बनसे प्रकृत स्वामित्वका समर्थन भी उचित है, क्योंकि यह बात निर्णीत-सी है कि वहाँ प्रथम समयमें जो गुणश्रेणिगोपुच्छका द्रव्य प्राप्त होता है वह दर्शनमोहनीयके क्षपणा-सम्बन्धी शीर्षसे असख्यातगुणा होता है। सो ऐसा कहना भी उचित नहीं है, क्योंकि सूत्रकारके अभिप्रायसे तो दर्शनमोहनीयका क्षपणासम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्ष ही उससे असख्यातगुणा होता है यह बात निर्णीत है। यदि ऐसा न होता तो उपशमश्रेणिकी अपेक्षा स्वामित्वके कथनका त्याग करके सूत्रमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणाकी अपेक्षा ही स्वामित्वका विधान नहीं बन सकता था। यदि कहा जाय कि दर्शनमोहके क्षपकसम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षके साथ उपशमश्रेणिसम्बन्धी गुणश्रेणिको लेकर स्वामित्वका कथन बन जायगा सो भी बात नहीं है, क्योंकि दर्शनमोहक्षपक-सम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षका जो अंश गलकर शेष बचता है उसका चारित्रमोहनीयकी उपशामना होते हुए अन्तरकरणके कालके प्राप्त होनेके एक समय बादतक अवस्थित रहना अत्यन्त असम्भव है। इसलिये सूत्रमें जो स्वामित्व कहा है वही ठीक है यह बात सिद्ध हुई। अथवा निर्व्याघातसे

चेव सामित्तमेदस्स सुत्तयाराहिप्पेदं। ण च उवसमसेढीए तहा संभवो, विरोहादो। तदो सत्थाणे चेव असंजमं णेदूण सामित्तमेदं वत्तव्वमिदि।

यहाँ स्वस्थानमें ही स्वामित्व सूत्रकारको अभिप्रेत है। किन्तु उपशमश्रेणिमें इस प्रकारसे स्वामित्वकी प्राप्ति सम्भव नहीं है, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है, इसलिये स्वस्थानमें ही असंयमको प्राप्त कराके इस स्वामित्वका कथन करना चाहिये।

विशेषार्थ—यहाँ आठ कषायोंके उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंके स्वामीका निर्देश करते हुए सूत्रमें तो केवल इतना ही कहा है कि जो गुणितकर्मांशवाला जीव संयमासंयम, संयम और दर्शनमोहक्षपकसम्बन्धी गुणश्रेणियोंको करके जब असंयमभावको प्राप्त होता है तब उसके प्रथम समयमें इन तीनों गुणश्रेणियोंके शीर्षके उदय होने पर उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होता है। किन्तु इसका व्याख्यान करते हुए वीरसेन स्वामीने इतना विशेष बतलाया है कि ऐसे जीवको देवपर्यायमें ले जाकर वहाँ प्रथम समयमें गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयको प्राप्त होने पर उत्कृष्ट स्वामित्व कहना चाहिये। उन्होंने इस व्यवस्थासे यह लाभ बतलाया है कि ऐसा करनेसे असंयमकी प्राप्तिके लिये अन्तर्मुहूर्तप्रमाण संक्लेशापूरण काल बच जाता है। जिससे अधिक गुणश्रेणिका लाभ मिल जाता है। अब यदि इसे देवपर्यायमें न ले जाकर स्वस्थानमें ही असंयमभावकी प्राप्ति कराई जाती है तो एक अन्तर्मुहूर्त पहलेसे गुणश्रेणिका कार्य मन्द हो जायगा जिससे लाभके स्थानमें हानि होगी इसलिये असंयमभावकी प्राप्तिके समय इसे देवपर्यायमें ले जाना ही उचित है। यह वह व्याख्यान है जिसपर टीकामें अधिक जोर दिया गया है। इसके बाद एक दूसरे प्रकारसे उत्कृष्ट स्वामित्वकी उपस्थापना करके उसका खण्डन किया गया है। यह मत धवला सत्कर्ममहाधिकारके उदयप्रकरणमें और श्वेताम्बर कर्मप्रकृति व पंचसंग्रहमें पाया जाता है। इसका आशय यह है कि कोई एक गुणितकर्मांशवाला जीव उपशमश्रेणिपर चढ़ा और वहाँ अपूर्वकरण तथा अनिवृत्तिकरणमें अन्तरकरण क्रियाके पहले तक उसने गुणश्रेणि रचना की। इसके बाद मरकर वह देव हो गया। इसप्रकार इस देवके अन्तर्मुहूर्तमें जब गुणश्रेणिशीर्षका उदय होता है तब उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होता है। कारण यह है कि दर्शनमोहक्षपककी गुणश्रेणिसे उपशामककी गुणश्रेणि असंख्यातगुणी बतलाई है, इसलिये इस कथनको पूर्वोक्त कथनसे अधिक बल प्राप्त हो जाता है। तथापि टीकामें यह कहकर इस मतको अस्वीकार किया गया है कि देव होनेके बाद जीवका जो अन्तर्मुहूर्त काल है उस कालमें अपकर्षण उत्कर्षण और संक्रमण आदिके द्वारा गुणश्रेणिके बहुभाग द्रव्यका अभाव हो जाता है इसलिये इस स्थलपर उत्कृष्ट स्वामित्व न बतलाकर चूर्णिसूत्रकारके अभिप्रायानुसार ही उत्कृष्ट स्वामित्व बतलाना ठीक है। वैसे तो इन दोनों मतोंपर विचार करनेसे यह प्रतीत होता है कि ये दोनों ही मत भिन्न-भिन्न दो परम्पराओंके द्योतक हैं अतएव अपने-अपने स्थानमें इन दोनोंको ही प्रमाण मानना उचित है। यद्यपि इनमेंसे कोई एक मत सही होगा पर इस समय इसका निर्णय करना कठिन है। इसीप्रकार टीकामें यह मत भी दिया है कि उपशमश्रेणिमें पूर्वोक्त प्रकारसे मरकर जो देव होता है उसके प्रथम समयमें जो आठ कषायोंका द्रव्य उदयमें आता है वह पूर्वोक्त तीन गुणश्रेणिशीर्षोंके द्रव्यसे अधिक होता है, इसलिये उत्कृष्ट स्वामित्व तीन गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयमें न प्राप्त होकर उपशमश्रेणिमें मरकर देवपर्याय प्राप्त होनेके प्रथम समयमें प्राप्त होता पर टीकामें इस मतका भी यह कहकर निराकरण किया गया है कि सूत्रकारका यह अभिप्राय नहीं है, क्योंकि सूत्रकार तीन गुणश्रेणिशीर्षोंके द्रव्यको इससे अधिक मानते हैं। तभी तो उन्होंने तीन गुणश्रेणिशीर्षोंसे उदयमें उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान किया है। इसके साथ ही साथ प्रसंगसे इन दो

❀ कोहसंजलणस्स उक्कस्सयमोकड्डुणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५०७. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स कोधं खवेंतस्स चरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमए असंछुहमाणयस्स उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं ।

§ ५०८. एत्थ चरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमयअसंछुहमाणयस्से त्ति वुत्ते गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सव्वलहुं कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदस्स कोहपढमट्ठिदिं गुणसेढिआयारेणावट्ठिदं समयाहियोदयावलियवज्जं सव्वमधट्ठिदीए गालिय कोहवेदगचरिमसमए से काले माणवेदओ होहदि त्ति कोहचरिमट्ठिदिकंडयचरिमसमयअसंछोहयभावेणावट्ठिदस्स आवलियपइट्ठगुणसेढिगोवुच्छाओ गुणसेढिसीसएण सह

आपत्तियोंका और निराकरण करके टीकामें प्रकारान्तरसे सूत्रकारके अभिप्रायकी पुष्टि की गई है। प्रथम आपत्ति तो यह है कि पूर्वोक्त तीन गुणश्रेणिशीर्षों में अनन्तानुबन्धीविसयोजनासम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षको मिलाकर इन चारोंके उदयमें उत्कृष्ट स्वामित्व कहना अधिक उपयुक्त होता। पर यह कथन इसलिये नहीं बनता कि अनन्तानुबन्धीविसयोजनागुणश्रेणिका काल इतना बड़ा नहीं है कि उसका सद्भाव दर्शनमोहक्षपणाके बाद तक रहा आवे, इसलिये तो पहली आपत्तिका निराकरण हो जाता है। तथा दूसरी आपत्ति यह है कि दर्शनमोहक्षपणासम्बन्धी गुणश्रेणिको उपशमश्रेणिसम्बन्धीगुणश्रेणिके साथ मिलाकर उत्कृष्ट स्वामित्व क्यों नहीं कहा ? इसका भी यही कहकर निराकरण किया गया है कि दर्शनमोहक्षपणासम्बन्धी गुणश्रेणि उपशमश्रेणिसम्बन्धी गुणश्रेणिके उक्त काल तक रह नहीं सकती, अत यह कथन भी नहीं बनता। अन्तमें प्रकारान्तरसे जो सूत्रकारके अभिप्रायका समर्थन किया है उससे ऐसा ज्ञात होता है कि सूत्रकारको स्वस्थानमें ही उत्कृष्ट स्वामित्व इष्ट रहा है। यदि उन्हें देवपर्यायमें ले जाकर स्वामित्वका कथन करना इष्ट होता तो वे सूत्रमें इसका स्पष्ट उल्लेख करते।

※ क्रोधसंज्वलनके अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५०७ यह सूत्र सुगम है।

※ जो गुणित कर्मांशवाला जीव क्रोधका क्षय कर रहा है। पर ऐसा करते हुए जिसने अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें पहुचकर भी अभी उसका पतन नहीं किया है वह उक्त तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५०८ यहा 'अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें जिसने उसका पतन किया है उसके ऐसा कथन करनेसे यह अभिप्राय लेना चाहिये कि गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर जो अतिशीघ्र कषायकी क्षपणाके लिये उद्यत हुआ है और ऐसा करते हुए एक समय अधिक एक आवलिके सिवा क्रोधकी गुणश्रेणिरूपसे स्थित शेष सब प्रथम स्थितिको अध:स्थिति द्वारा गलाकर जो क्रोधवेदकके अन्तिम समयमें स्थित है उसके गुणश्रेणिशीर्षके साथ आवलिके भीतर प्रविष्ट हुई गुणश्रेणिगोपुच्छाओंके रहते हुए प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है। यह जीव अगले

वट्टमाणाओ घेत्तूण पयदुक्कस्ससामित्तं होदि त्ति घेत्तव्वं ।

§ ५०९. ण एत्थ गुणसेढिसीसयस्स परिब्भावो त्ति पढमसमयमाणवेदयम्मि समयूणुच्छिदावलियमेत्तट्ठिदीओ घेत्तूण सामित्तं दायव्वमिदि संकणिज्जं, उप्पायाणु-च्छेदमस्सिऊण गुणसेढिसीसयस्स वि एत्थंतब्भावुवलंभादो । एवमेदं चेव घेत्तव्वं, अण्णहा तस्सेव उदयस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं उक्कस्सयमग्गेणुवरिमसुत्तेण सह विरोहादो । अहवा दव्वट्ठियणयावलंबणीभूदपुव्वगइणायावलंबणेण पढमसमयमाण-वेदयस्सेव कोहचरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमयमसंछोहयत्तं परूवेदव्वं । ण च एवं संते उवरिमसुत्तस्सा दुग्घडो, अयणमाईणमम्हाणं तत्थ अणुप्पायाणुच्छेदं पज्जवट्ठियणय-णियमेण समयविरोहाभावादो । एदमत्थपदमुवरिमाणंतरसुत्तेसु वि जोजेयव्वं ।

समयमें मानवेदक होगा, इसलिये यह समय क्रोधके अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समय होनेसे अभी इसके अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन नहीं हुआ है।

§ ५०९. यदि कोई यहां ऐसी आशंका करे कि यहां गुणश्रेणिशीर्षं बहिर्भूत है, इसलिये मानवेदकके प्रथम समयमें एक समय कम उच्छिष्टावलिप्रमाण स्थितियोंकी अपेक्षा स्वामित्वका विधान करना चाहिये सो उसकी ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि उत्पादानुच्छेदकी अपेक्षा गुणश्रेणिशीर्षका भी यहां अन्तर्भाव पाया जाता है। और यह अर्थ प्रकृतमें इसी रूपसे लेना चाहिये, अन्यथा आगे जो यह सूत्र आया है कि 'इसी जीवके उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणु होते हैं' सो इसके साथ विरोध प्राप्त होता है। अथवा द्रव्यार्थिक नयका आलम्बनभूत भूतपूर्वगति न्यायका सहारा लेकर प्रथम समयवर्ती मानवेदकके ही अपने अन्तिम समयवर्ती क्रोधके अन्तिम स्थितिकाण्डकका सद्भाव कहना चाहिये। यदि कहा जाय कि ऐसा मानने पर आगेके सूत्रका अर्थ घटित करना कठिन हो जायगा सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि हम लोग तो अनेकान्तवादी हैं इसलिए पर्यायार्थिक नयके नियमानुसार अनुत्पादानुच्छेदका आलम्बन लेकर उक्त अर्थ घटित कर दिया जायगा। इस अर्थ पदको आगेके अनन्तरवर्ती सूत्रोंमें भी घटित कर लेना चाहिये।

विशेषार्थ—वस्तुस्थिति यह है कि जो गुणितकर्मांशवाला जीव क्षपणाके समय क्रोध वेदकके कालको बिताकर मानवेदक कालमें स्थित है वह क्रोधसंज्वलनके अप्रत्याख्यान आदि तीनकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है। किन्तु यहां सूत्रमें यह स्वामित्व क्रोधवेदकके अन्तिम समयमें ही बतलाया गया है जिसे घटित करनेमें कठिनाई आती है। बल्कि एक शंकाकारने तो इस सूत्र प्रतिपादित विषयका प्रकारान्तरसे खण्डन ही कर दिया है। वह कहता है कि यहां गुणश्रेणिशीर्षकी तो चर्चा ही छोड़ देनी चाहिये। उत्कृष्ट स्वामित्वका जितना भी द्रव्य है उसमें इसका सद्भाव तो कथमपि नहीं किया जा सकता। हां मानवेदकके प्रथम समयमें जो एक समय कम उच्छिष्टावलिप्रमाण द्रव्य शेष रहता है उसकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्वामित्व कहना ठीक है। पर टीकाकारने इस विरोधको दो प्रकारसे शमन किया है। (१) प्रथम तो उन्होंने उत्पादानुच्छेदकी अपेक्षासे इस विरोधको शान्त किया है। उत्पादानुच्छेद द्रव्यार्थिक नयको कहते हैं। यह सत्त्वावस्थामें ही विनाशका स्वीकार करता है। उदाहरणार्थ सूक्ष्मसाम्पराय नामक दसवें गुणस्थानके अन्तिम समयमें सूक्ष्म लोभका उदय है पर यहां उसका उदयव्युच्छित्ति बतलाई जाती है सो यह कथन उत्पादानुच्छेदकी अपेक्षासे जानना

❀ कोहसंजलणस्स उक्कस्सयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५०७. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स कोधं खवेंतस्स चरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमए असंच्छुहमाणयस्स उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं ।

§ ५०८. एत्थ चरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमयअसंछुहमाणयस्से त्ति वुत्ते गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सव्वलहु कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदस्स कोहपढमट्ठिदिगुणसेढिआयारेणावट्ठिदं समयाहियोदयावलियवज्जं सव्वमधट्ठिदीए गालिय कोहवेदगचरिमसमए से काले माणवेदओ होहदि त्ति कोहचरिमट्ठिदिकडयचरिमसमयअसंछोहयभावेणावट्ठिदस्स आवलियपइट्ठगुणसेढिगोवुच्छाओ गुणसेढिसीसएण सह

आपत्तियोंका और निराकरण करके टीकामें प्रकारान्तरसे सूत्रकारके अभिप्रायकी पुष्टि की गई है। प्रथम आपत्ति तो यह है कि पूर्वोक्त तीन गुणश्रेणिशीर्षों में अनन्तानुबन्धीविसंयोजना-सम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षको मिलाकर इन चारोंके उदयमें उत्कृष्ट स्वामित्व कहना अधिक उपयुक्त होता। पर यह कथन इसलिये नहीं बनता कि अनन्तानुबन्धीविसंयोजनागुणश्रेणिका काल इतना बड़ा नहीं है कि उसका सद्भाव दर्शनमोहक्षपणाके बाद तक रहा आवे, इसलिये तो पहली आपत्तिका निराकरण हो जाता है। तथा दूसरी आपत्ति यह है कि दर्शनमोहक्षपणा-सम्बन्धी गुणश्रेणिको उपशमश्रेणिसम्बन्धीगुणश्रेणिके साथ मिलाकर उत्कृष्ट स्वामित्व क्यों नहीं कहा? इसका भी यही कहकर निराकरण किया गया है कि दर्शनमोहक्षपणासम्बन्धी गुणश्रेणि उपशमश्रेणिसम्बन्धी गुणश्रेणिके उक्त काल तक रह नहीं सकती, अत. यह कथन भी नहीं बनता। अन्तमें प्रकारान्तरसे जो सूत्रकारके अभिप्रायका समर्थन किया है उससे ऐसा ज्ञात होता है कि सूत्रकारको स्वस्थानमें ही उत्कृष्ट स्वामित्व इष्ट रहा है। यदि उन्हें देवपर्यायमें ले जाकर स्वामित्वका कथन करना इष्ट होता तो वे सूत्रमें इसका स्पष्ट उल्लेख करते।

※ क्रोधसंज्वलनके अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५०७ यह सूत्र सुगम है।

※ जो गुणित कर्मांशवाला जीव क्रोधका क्षय कर रहा है। पर ऐसा करते हुए जिसने अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें पहुंचकर भी अभी उसका पतन नहीं किया है वह उक्त तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५०८. यहां 'अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें जिसने उसका पतन किया है उसके ऐसा कथन करनेसे यह अभिप्राय लेना चाहिये कि गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर जो अतिशीघ्र कषायकी क्षपणाके लिये उद्यत हुआ है और ऐसा करते हुए एक समय अधिक एक आवलिके सिवा क्रोधकी गुणश्रेणिरूपसे स्थित शेष सब प्रथम स्थितिको अध स्थिति द्वारा गलाकर जो क्रोधवेदकके अन्तिम समयमें स्थित है उसके गुणश्रेणिशीर्षके साथ आवलिके भीतर प्रविष्ट हुई गुणश्रेणिगोपुच्छाओंके रहते हुए प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है। यह जीव अगले

® एवं चेव मायासंजलणस्स। णवरि मायाहिदिखंडय चरिमसमय असंछुहमाणयस्स तस्स चत्तारि वि उक्कस्सयाणि झीणहिदियाणि।

§ ५१२ सुगमं।

® कोहसंजलणस्स उक्कस्सयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणहिदियं कस्स?

§ ५१३ सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

® गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंतकम्ममावलियं पविस्समाणयं पविट्ठं ताधे तस्स उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणहिदियं।

§ ५१४ एत्थ गुणिदकम्मंसियणिद्देसो तव्विवरीयकम्मंसियणिवारणफलो। तं पि कुदो? गुणिदकम्मंसियादो अण्णत्थ पदेससंचयस्स उक्कस्सभावाणुववत्तीदो।

---

* इसीप्रकार मायासंज्वलनका कथन करना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि जिसने मायास्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें उसका पतन नहीं किया है वह चारोंकी ही अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट परमाणुओंका स्वामी है।

§ ५१२. यह सूत्र सुगम है।

विशेषार्थ—पहले जैसे क्रोधसंज्वलनके अपकर्षण उत्कर्षण संक्रमण और उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंके स्वामीका कथन कर आये हैं वैसे ही मानसंज्वलन और माया संज्वलनकी अपेक्षा भी जानना चाहिये। यदि उक्त कथनसे इसमें कोई विशेषता है तो वह इतनी ही कि क्रोधसंज्वलनके वेदककालमें उस प्रकृतिकी अपेक्षासे कथन किया था किन्तु यहाँ मानसंज्वलन और मायासंज्वलनके वेदककालमें इनकी अपेक्षा कथन करना चाहिये।

* क्रोधसंज्वलनके अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है?

§ ५१३ यह पृच्छासूत्र सुगम है।

* जिस गुणितकर्मांश जीवके सब सत्कर्म जब क्रमसे एक आवलिके भीतर प्रविष्ट हो जाते हैं तब वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

§ ५१४ यहाँ सूत्रमें 'गुणितकर्मांश' पदका निर्देश इससे विपरीत कर्मांशके निवारण करनेके लिये किया है।

शंका—ऐसा करनेका क्या प्रयोजन है?

समाधान—क्योंकि गुणितकर्मांशके सिवा अन्यत्र कर्मपरमाणुओंका उत्कृष्ट संचय नहीं हो सकता। बस यही एक प्रयोजन है जिस कारणसे इस सूत्रमें 'गुणितकर्मांश' पदका निर्देश किया है।

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं पि तस्सेव।

§ ५१०. एत्थ कोहसंजलणस्से त्ति अणुवट्टदे, तेणेवमहिसंबंधो कायव्वो— तस्सेव णयद्दयविसयीकयस्स पुव्विल्लसामियस्स कोहसंजलणसंबंधि उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियमिदि। सेसं पुव्वं व। णवरि उदिण्णमेदपदेसग्गमेयट्ठिदिपडिबद्धमेत्थ सामित्तविसईकयं होइ।

❀ एवं चेव माणसंजलणस्स। णवरि ट्ठिदिकंडयं चरिमसमयअसंछुहमाणयस्स तस्स चत्तारि वि उक्कस्सयाणि झीणट्ठिदियाणि।

§ ५११. माणसंजलणस्स वि एवं चेव सामित्तं दायव्वं। णवरि माणट्ठिदिकंडयं चरिमसमयअसंछुहमाणयस्से त्ति सणामपडिबद्धो आलावभेदो चेव णत्थि अण्णो त्ति समप्पणासुत्तमेयं।

चाहिये। इसीप्रकार प्रकृतमें भी जब कि क्रोधवेदकके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट स्वामित्व स्वीकार कर लिया तब गुणश्रेणिशीर्षका उत्कृष्ट स्वामित्वविषयक द्रव्यमें अन्तर्भाव माननेमें कोई आपत्ति नहीं है। इस कथनको इसी रूपमें माननेके लिये इसलिये भी जोर दिया है कि अगले सूत्रमें जो उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका उत्कृष्ट स्वामित्व बतलाया है वह ऐसा माने बिना बन नहीं सकता। (२) दूसरे भूतपूर्व न्यायकी अपेक्षा मानवेदकके यह सब स्वीकार करके उक्त विरोधका शमन किया गया है। यद्यपि ऐसा करनेसे अगले सूत्रके साथ संगति बिठलानेमे कठिनाई जाती है पर अगले सूत्रका अर्थ अनुत्पादानुच्छेद अर्थात् पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षासे कर लेनेपर वह कठिनाई दूर हो जाती है। इसप्रकार विविध दृष्टियोंसे विचार करके जहा जो अर्थ सगत बैठे उसे घटित कर लेना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्म परमाणुओंका स्वामी भी वही है।**

§ ५१० इस सूत्रमें 'कोहसजलणस्स' इस पदकी अनुवृत्ति होती है, इसलिये इस सूत्रका ऐसा सम्बन्ध करना चाहिये कि जिसे पहले दो नयोंका विषय बतला आये हैं उसी पूर्वोक्त स्वामीके क्रोधसज्वलनकी अपेक्षा उदयसे झीन स्थितिवाले उत्कृष्ट परमाणु होते हैं। शेष कथन पहलेके समान है। किन्तु इतनी विशेषता है कि एक स्थितिगत जो कर्मपरमाणु उदयमे आ रहे हैं उनका ही यहा स्वामित्वसे सम्बन्ध है।

विशेषार्थ—क्रोधवेदकके अन्तिम समयमें क्रोधके जिन कर्मपरमाणुओंका उदय हो रहा है उसमें गुणश्रेणिशीर्षका द्रव्य सम्मिलित है, अतः यहा उत्कृष्ट स्वामित्व कहा है, क्योंकि उदयगत कर्मपरमाणुओंकी यह सख्या अन्यत्र नहीं प्राप्त होती।

*** इसी प्रकार मानसज्वलनका कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि जिसने अपने अन्तिम समयमें मानस्थितिकाण्डकका पतन नहीं किया है वह चारोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।**

§ ५११. मानसज्वलनके स्वामित्वका भी इसीप्रकार अर्थात् क्रोधसंज्वलनके समान विधान करना चाहिये। किन्तु जिसने मानस्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें उसका पतन नहीं किया है इसप्रकार यहा क्रोधके स्थानमे मानका सम्बन्ध होनेसे कथनमें इतना भेद हो जाता है, इसके सिवा अन्य कोई भेद नहीं है। इसप्रकार यह समर्पणासूत्र है।

*** गुणिदकम्मंसियस्स पुरिसवेदं खवेमाणयस्स आवलियचरिमसमयअसंछोहयस्स तस्स उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं।**

§ ५२२ एत्थ गुणिदकम्मंसियवयणेण तिण्हं वेदाणं गुणिदकम्मंसियस्स गहणं कायव्वं, अण्णहा पुरिसवेदुक्कस्ससंचयाणुववत्तीदो। सेसं सुगमं।

*** उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं चरिमसमयपुरिसवेदयस्स।**

§ ५२३ तस्सेव पुरिसवेदोदएण खवगसेढिमारूढस्स अधट्ठिदीए गालिदपढमट्ठिदियस्स चरिमसमयपुरिसवेदयस्स पयदुक्कस्ससामित्तं होइ त्ति सुत्तत्थो।

*** णवुंसयवेदयस्स उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?**

§ ५२४ सुगममेदमासंकासुत्तं।

*** गुणिदकम्मंसियस्स णवुंसयवेदेण उवट्ठिदस्स खवयस्स णवुंसयवेदआवलियचरिमसमयअसंछोहयस्स तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि उक्कस्सयाणि।**

§ ५२५ एत्थ गुणिदकम्मंसियस्स पयदुक्कस्सझीणट्ठिदियाणि होंति त्ति

---

* जो गुणितकर्मांशवाला जीव पुरुषवेदकी क्षपणा करता हुआ आवलिके चरम समयमें असंक्षोभक है वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५२२. इस सूत्रमें जो गुणितकर्मांश यह वचन आया है सो इससे तीनों वेदोंके गुणितकर्मांशवाले जीवका ग्रहण करना चाहिये। अन्यथा पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकता है। शेष कथन सुगम है।

* तथा पुरुषवेदका क्षपक जीव अपने अन्तिम समयमें उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५२३ जो पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ा है और जिसने अधःस्थितिके द्वारा प्रथम स्थितिको गला दिया है उसके पुरुषवेदके उदयके अन्तिम समयमें प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका अर्थ है।

* नपुंसकवेदके अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५२४ यह आशंका सूत्र सरल है।

* जो गुणितकर्मांशवाला जीव नपुंसकवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर आरोहण करके नपुंसकवेदका आवलिके चरम समयमें असंक्षोभक है वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५२५. यहाँ गुणितकर्मांशवाले जीवके प्रकृत उत्कृष्ट झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु होते हैं

सवेदस्सेव तद्दाभावोवयारादो । एसो अत्थो पुरिस-णवुंसयवेदसामित्तसुत्तेसु वि जोजेयव्वो, विसेसाभावादो। पुव्वविहाणेण गतूण सव्वलहु खवणाए अब्भुट्टिय सोदएण इत्थिवेदं संछुहमाणयस्स विदियट्ठिदीए चरिमट्ठिदिखंडयपमाणेणावट्ठिदाए पढमट्ठिदीए च आवलियमेत्तीए गुणसेढिसरूवेणावसिट्टाए तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि उक्कस्सयाणि होंति त्ति सुत्तत्थसंगहो।

§ ५१९. संपहि पुव्विल्लपुच्छासुत्तविसईकयमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय-सामित्तमुत्तरसुत्तेण भणइ—

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं चरिमसमयइत्थिवेदक्खवयस्स ।

§ ५२०. तस्सेव समयूणावलियमेत्तट्ठिदीओ गालिय ट्ठिदस्स जाधे पढमट्ठिदीए चरिमणिसेओ उदिण्णो ताधे तस्स चरिमसमयइत्थिवेदक्खवयस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियमिदि सुत्तत्थसंबंधो ।

❀ पुरिसवेदस्स उक्कस्सयमोकड्डुणादिचदुण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५२१. सुगमं ।

समयवर्ती सवेदीके ही स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिका अभाव उपचारसे मान लिया है। पुरुषवेद और नपुसकवेदके स्वामित्वविषयक सूत्रोंका कथन करते समय भी इसी अर्थकी योजना कर लेनी चाहिये, क्योंकि इससे उनमें कोई विशेषता नहीं है।

जो कोई एक जीव पूर्वविधिसे आकर और अतिशीघ्र क्षपणाके लिये उद्यत होकर स्वोदयसे स्त्रीवेदका पतन कर रहा है उसके द्वितीय स्थितिमें अन्तिम स्थितिकाण्डकके शेष रहनेपर तथा प्रथम स्थितिमें एक आवलिप्रमाण गुणश्रेणिके अवस्थित रहनेपर तीनों ही झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु उत्कृष्ट होते हैं यह इस सूत्रका अभिप्राय है।

§ ५१९. अब जिसका पिछले पृच्छासूत्रमें उल्लेख कर आये हैं ऐसे उदयसे झीनस्थिति-वाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंके स्वामित्वका कथन अगले सूत्रद्वारा करते हैं—

*** तथा स्त्रीवेदका क्षपक जीव अपने अन्तिम समयमें उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।**

§ ५२० एक समय कम आवलिप्रमाण स्थितियोंको गलाकर स्थित हुए उसी जीवके जब प्रथम स्थितिका अन्तिम निषेक उदयको प्राप्त होता है तब अन्तिम समयवर्ती वह स्त्रीवेदी क्षपक जीव उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है यह इस सूत्रका अभिप्राय है।

*** पुरुषवेदके अपकर्षण आदि चारोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्म-परमाणुओंका स्वामी कौन है ?**

§ ५२१ यह सूत्र सुगम है।

❀ इत्थिवेदस्स उक्कस्सयमोकड्डुणादिचउण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५१७ सुगममेदं सामित्तविसयं पुच्छासुत्तं। एवं पुच्छिदे तस्स तव्विसयं झीणट्ठिदियाणमेयसामियाणं परूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ इत्थिवेदपूरिदकम्मंसियस्स आवलियचरिमसमयअसंछोहयस्स तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि उक्कस्सयाणि।

§ ५१८ गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तसगपूरणकालब्भंतरे इत्थिवेदं पूरमाणाणमण्णविसेसविहाणे कस्स सामित्तं होइ किमविसेसेण पूरिदकम्मंसियस्स तं होइ त्ति आसंकाणिरायरणट्ठं विसेसणमाह—'आवलियचरिमसमयअसंछोहयस्स'। चरिमसमय-दुचरिमसमयअसंछोहयादिकमेण हेट्ठदो ओयरिय आवलियचरिमसमयअसंछोहयमावलियचरिमसमयअसंछोहयमावणावट्ठिदजीवस्से त्ति वुत्तं होइ। एत्थ समयूणा वलियचरिमसमयअसंछोहयस्स त्ति वत्तव्वं, सवेददुचरिमसमए इत्थिवदचरिमफालीए णिल्लेवाणुवलंभादो त्ति ? ण एस दोसो, अणुण्णायाणुच्छेदमस्सियूण चरिमसमय

यह है कि संज्वलन लोभके उदयसे झीनस्थितिवाले इतने कर्मपरमाणु अन्यत्र नहीं पाये जाते, अतः सूक्ष्म लोभके अन्तिम समयमें विद्यमान जीव ही संज्वलन लोभके उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

❀ स्त्रीवेदके अपकर्षणादि चारोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्म परमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५१७ यह स्वामित्वविषयक पृच्छासूत्र सरल है। इस प्रकार पूछने पर उनमेंसे पहले एकस्वामिक तीन झीनस्थितिवालोंका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ जिसने गुणितकर्मांशकी विधिसे स्त्रीवेदको उसके कर्मपरमाणुओंसे भर दिया है और जो एक आवलिके अन्तिम समयमें उसका अपकर्षण आदि नहीं कर रहा है वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५१८. गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अपने पूरण कालके भीतर स्त्रीवेदको पूरा करनेवाले जीवोंमें भेद किये बिना यह समझना कठिन है कि स्वामित्व किसको प्राप्त है ? क्या सामान्यसे गुणितकर्मांशवाले सभी जीवोंको यह स्वामित्व प्राप्त है ? इसप्रकार इस आशंकाके निराकरण करनेके लिये 'आवलियचरिमसमयअसंछोहयस्स' यह विशेषण कहा है। जो अन्तिम समयमें या उपान्त्य समयमें स्त्रीवेदके अपकर्षण आदिसे रहित है। तथा इसी क्रमसे पीछे जाकर जो एक आवलिके अन्तिम समयमें अपकर्षण आदि भावसे रहित है वह जीव स्वामी होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यहां 'समयूणावलियचरिमसमयअसंछोहयस्स' ऐसा कहना चाहिये, क्योंकि सवेदभागके द्विचरम समयमें स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिका अभाव नहीं पाया जाता ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि अनुत्पादानुच्छेदकी अपेक्षा अन्तिम

तस्स सव्वलहु खवणाए अब्भुट्ठिदस्स जाधे सव्वसंतकम्ममविरक्खिय थोवूणभाव-मावलियं पविस्समाणयं पविस्समाणय कमेण पविट्ठं ताधे पयदुक्कस्ससामित्तं होइ। सव्वसंतकम्मवयणेणेदेण विणट्ठासेसदव्वमेदस्स असंखेज्जदिभागत्तेण अप्पहाणमिदि सूचिदं पविस्समाणय पविट्ठमिदि एदेण अक्कमपवेसो पडिसिद्धो।

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५१५. सुगमं।

❀ चरिमसमयसकसायखवगस्स।

§ ५१६. एत्थ चरिमसमयसकसाओ जो खवगो सुहुमसांपरायसण्णिदो तस्स पयदुक्कस्ससामित्तं होइ त्ति संबंधो कायव्वो। कुदो एदमुक्कस्सय ? मोहणीय-सव्वदव्वस्स एत्थेव पुंजीभूदस्सुवलंभादो। एत्थ दव्वपमाणाणयणं जाणिय वत्तव्वं।

इस जीवके अतिशीघ्र क्षपणाके लिये उद्यत होनेपर जब सब सत्कर्म क्रमसे आवलिके भीतर प्रविष्ट हो जाता है तब प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है। यहाँ यद्यपि कुछ ऐसे कर्म बच जाते हैं जो आवलिके भीतर प्रविष्ट नहीं होते, किन्तु यहाँ उनकी विवक्षा नहीं की गई है। इस सूत्रमें जो 'सब सत्कर्म' यह वचन दिया है सो इससे यह सूचित किया है कि जो द्रव्य नष्ट हो गया है वह इसका असंख्यातवाँ भागप्रमाण होनेसे अप्रधान है। तथा सूत्रमें जो 'पविस्समाणय पविट्ठ' यह वचन दिया है सो इससे अक्रमप्रवेशका निषेध कर दिया है। आशय यह है कि सब सत्कर्म क्रमसे ही आवलिके भीतर प्रविष्ट होता है।

विशेषार्थ—गुणितकर्मांशवाला जीव अतिशीघ्र क्षपणाके लिये उद्यत होकर जब क्रमसे सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें पहुँचकर लोभके सब कर्मपरमाणुओंको आवलिके भीतर प्रवेश करा देता है तब इसके उदयावलिके भीतर प्रविष्ट हुआ द्रव्य सबसे उत्कृष्ट होता है। किन्तु यह अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणके अयोग्य होता है। इसीसे इन तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी इसे बतलाया है।

❀ उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है।

§ ५१५ यह सूत्र सरल है।

❀ जो क्षपक सकषाय अवस्थाके अन्तिम समयमें स्थित है वह उदयसे झीन-स्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५१६. यहाँ पर जो क्षपक सकषाय अवस्थाके अन्तिम समयमें स्थित है और जिसे सूक्ष्मसापरायसयत कहते हैं उसके प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है ऐसा सम्बन्ध कर लेना चाहिये।

शंका—इसे ही उत्कृष्ट स्वामी क्यों कहा ?

समाधान—क्योंकि यहाँ पर मोहनीय कर्मका सब द्रव्य एकत्रित होकर पाया जाता है।

यहाँ पर इस उत्कृष्ट द्रव्यके लानेके क्रमको जानकर उसका कथन करना चाहिये।

विशेषार्थ—सूक्ष्मसाम्पराय संयतके अन्तिम गुणश्रेणिशीर्षका सब द्रव्य इस गुणस्थानके अन्तिम समयमें उदयमें देखा जाता है। इसमें अब तक निर्जीर्ण हुए द्रव्यको छोड़कर शेष सब चारित्रमोहनीयका द्रव्य आ जाता है, इसलिये इसे उत्कृष्ट कहा है। आशय

❀ गुणिदकम्मंसियस्स पुरिसवेदं खवेमाणयस्स आवलियचरिमसमय असंकामयस्स तस्स उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणहिदियं।

§ ५२२ एत्थ गुणिदकम्मंसियवयणेण तिण्हं वेदाणं गुणिदकम्मंसियस्स गहणं कायव्वं, अण्णहा पुरिसवेदुक्कस्ससंचयाणुववत्तीदो। सेसं सुगमं।

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणहिदियं चरिमसमयपुरिसवेदयस्स।

§ ५२३ तस्सेव पुरिसवेदोदएण खवगसेढिमारूढस्स अधहिदीए गालिदपढम-हिदियस्स चरिमसमयपुरिसवेदयस्स पयदुक्कस्ससामित्तं होइ त्ति सुत्तत्थो।

❀ णवुंसयवेदयस्स उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणहिदियं कस्स ?

§ ५२४ सुगममेदमासंकासुत्तं।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स णवुंसयवेदेण उवहिदस्स खवयस्स णवुंसयवेदआवलियचरिमसमयअसंकामयस्स तिण्णि वि झीणहिदियाणि उक्कस्सयाणि।

§ ५२५ एत्थ गुणिदकम्मंसियस्स पयदुक्कस्सझीणहिदियाणि होंति त्ति

❀ जो गुणितकर्मांशवाला जीव पुरुषवेदकी क्षपणा करता हुआ आवलिके चरम समयमें असंक्रामक है वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५२२. इस सूत्रमें जो गुणितकर्मांश यह वचन आया है सो इससे तीनों वेदोंके गुणित-कर्मांशवाले जीवका ग्रहण करना चाहिये। अन्यथा पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकता है। शेष कथन सुगम है।

❀ तथा पुरुषवेदका चरम जीव अपने अन्तिम समयमें उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५२३ जो पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ा है और जिसने अधःस्थितिके द्वारा प्रथम स्थितिको गला दिया है उसके पुरुषवेदके उदयके अन्तिम समयमें प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका अर्थ है।

❀ नपुंसकवेदके अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५२४ यह आशंका सूत्र सरल है।

❀ जो गुणितकर्मांशवाला जीव नपुंसकवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर आरोहण करके नपुंसकवेदका आवलिके चरम समयमें असंक्रामक है वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५२५. यहाँ गुणितकर्मांशवाले जीवके प्रकृत उत्कृष्ट झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु होते हैं

सवेदस्सेव तहाभावोवयारादो । एसो अत्थो पुरिस-णवुंसयवेदसामित्तसुत्तेसु वि जोजेयव्वो, विसेसाभावादो । पुव्वविहाणेण गतूण सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिय सोदएण इत्थिवेदं संछुहमाणयस्स विदियट्ठिदीए चरिमट्ठिदिखंडयपमाणेणावट्ठिदाए पढमट्ठिदीए च आवलियमेत्तीए गुणसेढिसरूवेणावसिट्ठाए तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि उक्कस्सयाणि होंति त्ति सुत्तत्थसंगहो ।

§ ५१९. संपहि पुव्विल्लपुच्छासुत्तविसईकयमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय-सामित्तमुत्तरसुत्तेण भणइ—

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं चरिमसमयइत्थिवेदक्खवयस्स ।

§ ५२०. तस्सेव समयूणावलियमेत्तट्ठिदीओ गालिय ट्ठिदस्स जाधे पढमट्ठिदीए चरिमणिसेओ उदिण्णो ताधे तस्स चरिमसमयइत्थिवेदक्खवयस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियमिदि सुत्तत्थसंबंधो ।

❀ पुरिसवेदस्स उक्कस्सयमोकड्डुणादिचदुण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५२१. सुगमं ।

समयवर्ती सवेदीके ही स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिका अभाव उपचारसे मान लिया है। पुरुषवेद और नपुंसकवेदके स्वामित्वविषयक सूत्रोंका कथन करते समय भी इसी अर्थकी योजना कर लेनी चाहिये, क्योंकि इससे उनमें कोई विशेषता नहीं है ।

जो कोई एक जीव पूर्वविधिसे आकर और अतिशीघ्र क्षपणाके लिये उद्यत होकर स्वोदयसे स्त्रीवेदका पतन कर रहा है उसके द्वितीय स्थितिमें अन्तिम स्थितिकाण्डकके शेष रहनेपर तथा प्रथम स्थितिमें एक आवलिप्रमाण गुणश्रेणिके अवस्थित रहनेपर तीनो ही झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु उत्कृष्ट होते हैं यह इस सूत्रका अभिप्राय है ।

§ ५१९ अब जिसका पिछले पृच्छासूत्रमें उल्लेख कर आये हैं ऐसे उदयसे झीनस्थिति-वाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंके स्वामित्वका कथन अगले सूत्रद्वारा करते हैं—

*** तथा स्त्रीवेदका क्षपक जीव अपने अन्तिम समयमें उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है ।**

§ ५२०. एक समय कम आवलिप्रमाण स्थितियोंको गलाकर स्थित हुए उसी जीवके जब प्रथम स्थितिका अन्तिम निषेक उदयको प्राप्त होता है तब अन्तिम समयवर्ती वह स्त्रीवेदी क्षपक जीव उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है यह इस सूत्रका अभिप्राय है ।

*** पुरुषवेदके अपकर्षण आदि चारोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्म-परमाणुओंका स्वामी कौन है ?**

§ ५२१ यह सूत्र सुगम है ।

* गुणिदकम्मंसियस्स पुरिसवेदं खवेमाणयस्स आवलियचरिमसमयअसंछोहयस्स तस्स उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं।

§ ५२२ एत्थ गुणिदकम्मंसियवयणेण तिण्हं वेदाणं पूरिदकम्मंसियस्स गहणं कायव्वं, अण्णहा पुरिसवेदुक्कस्ससंचयाणुववत्तीदो। सेसं सुगमं।

* उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं चरिमसमयपुरिसवेदयस्स।

§ ५२३ तस्सेव पुरिसवेदोदएण खवगसेढिमारूढस्स अधट्ठिदीए गालिदपढमट्ठिदियस्स चरिमसमयपुरिसवेदयस्स पयदुक्कस्ससामित्तं होइ त्ति सुत्तत्थो।

* णवुंसयवेदयस्स उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स?

§ ५२४ सुगममेदमासंकासुत्तं।

* गुणिदकम्मंसियस्स णवुंसयवेदेण उवट्ठिदस्स खवयस्स णवुंसयवेदआवलियचरिमसमयअसंछोहयस्स तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि उक्कस्सयाणि।

§ ५२५ एत्थ गुणिदकम्मंसियस्स पयदुक्कस्सझीणट्ठिदियाणि होंति त्ति

---

* जो गुणितकर्मांशवाला जीव पुरुषवेदकी क्षपणा करता हुआ आवलिके चरम समयमें असंक्षोभक है वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५२२. इस सूत्रमें जो गुणितकर्मांश पद वचन आया है सो इससे तीनों वेदोंके गुणितकर्मांशवाले जीवका ग्रहण करना चाहिये। अन्यथा पुरुषवेदका उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकता है। शेष कथन सुगम है।

* तथा पुरुषवेदका क्षपक जीव अपने अन्तिम समयमें उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५२३. जो पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़ा है और जिसने अधःस्थितिके द्वारा प्रथम स्थितिको गला दिया है उसके पुरुषवेदके उदयके अन्तिम समयमें प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका अर्थ है।

* नपुंसकवेदके अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है?

§ ५२४. यह आशंका सूत्र सरल है।

* जो गुणितकर्मांशवाला जीव नपुंसकवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर आरोहण करके नपुंसकवेदका आवलिके चरम समयमें असंक्षोभक है वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५२५. यहाँ गुणितकर्मांशवाले जीवके प्रकृत उत्कृष्ट झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणु होते हैं

सवंधो कायव्वो। किमविसेसेण ? नेत्याह–णवुंसयवेदेण उवट्ठिदखवयस्स पुणो वि तिस्सेव विसेसणमावलियचरिमसमयअसंछोहयस्से त्ति। जो आवलियमेत्तकालेण चरिमसमयअसंछोहओ होहिदि तस्स आवलियमेत्तगुणसेढिगोवुच्छाओ घेत्तूण सामित्तमेदं दट्ठव्वमिदि वुत्तं होइ।

❀ उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं तस्सेव चरिमसमयणवुंसयवेदक्खवयस्स।

§ ५२६. तस्सेव चरिमसमयणवुंसयवेदक्खवयभावेणावट्ठियस्स णवुंसयवेदसंबंधिपयदुक्कस्ससामित्तं होइ। सेसं सुगमं।

❀ छण्णोकसायाणमुक्कस्सियाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि कस्स ?

§ ५२७. सुबोहमेदं पुच्छासुत्तं।

❀ गुणिदकम्मंसिएण खवएण जाधे अंतरं कीरमाणं कदं तेसिं चेव कम्मंसाणमुदयावलियाओ उदयवज्जाओ पुण्णाओ ताधे उक्कस्सयाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि।

ऐसा सम्बन्ध कर लेना चाहिये। तो क्या यह स्वामित्व सामान्यसे सभी गुणितकर्मांशवाले जीवोंके होता है ? नहीं होता, बस यही बतलानेके लिये 'जो नपुंसकवेदके उदयसे क्षपकश्रेणि पर चढा है' यह कहा है। और फिर इसका भी विशेषण 'आवलियचरिमसमयअसंछोहयस्स' दिया है। जो एक आवलिप्रमाण कालके द्वारा अन्तिम समयमें अपकर्षणादि नहीं करेगा उसके एक आवलिप्रमाण गुणश्रेणिगोपुच्छाओंकी अपेक्षा यह स्वामित्व जानना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** तथा वही अन्तिम समयवर्ती नपुंसकवेदी क्षपक जीव उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।**

§ ५२६ जो अन्तिम समयमें नपुंसकवेदकी क्षपणा करता हुआ स्थित है उसीके नपुंसकवेदसम्बन्धी प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है। शेष कथन सुगम है।

*** छह नोकषायोंके अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?**

§ ५२७. इस पृच्छासूत्रका अर्थ समझनेके लिये सरल है।

*** जो गुणितकर्मांशवाला क्षपक जीव अन्तरकरण करनेके बाद जब उन्हीं कर्मपरमाणुओंकी गुणश्रेणि द्वारा उदय समयके सिवा उदयावलिको भर देता है तब वह अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।**

§ ५२८ एत्थेवं सुत्तत्थसंबंधो कायव्वो—गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागदक्खवगेण ताधे छण्णोकसायाणमंतरं कमेण कीरमाणमंतोमुहुत्तेण कदं। तेसिं चेव कम्माणं उदयावलियाओ उदयवज्जाओ गुणसेढिगोवुच्छाहि पुण्णाओ अवसिट्ठाओ ताधे तदियमेत्तगुणसेढिगोवुच्छाओ घेत्तूण तस्स जीवस्स उक्कस्सयाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि होंति त्ति। किमट्ठमेत्थ उदयसमयवज्जिदो, ण; उदयाभावेण परपयडीसु थिवुक्केण तस्स संकंतिदंसणादो।

* तेसिं चेव उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५२९ सुगमं।

* गुणिदकम्मंसियस्स खवयस्स चरिमसमयअपुव्वकरणे वट्टमाणयस्स।

§ ५३० एत्थ गुणिदकम्मंसियणिद्देसो तव्विवरीयकम्मंसियपडिसेहफलो। खवयणिद्देसो उवसामयणिरायरणट्ठो। तं पि कुदो ? तव्विसोहीदो अणंतगुणक्खवय

---

§ ५२८. यहाँ इस सूत्रका इस प्रकार अर्थ घटित करना चाहिये कि कोई एक जीव गुणितकर्मांशकी विधिसे आकर क्षपक हुआ फिर जब वह क्रमसे अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर छह नोकषायोंका अन्तर कर देता है और जब उसके उन्हीं कर्मोंकी गुणश्रेणिगोपुच्छाओंके द्वारा परिपूर्ण हुई उदय समयके सिवा उदयावलिप्रमाण गोपुच्छाएं शेष रह जाती हैं तब वह उतनी गुणश्रेणिगोपुच्छाओंका आश्रय लेकर अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

शंका—यहाँ उदय समयका क्यों छोड़ दिया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि यहाँ छह नोकषायोंका उदय नहीं होनेसे उसका स्तिवुक संक्रमणके द्वारा पर प्रकृतियोंमें संक्रमण देखा जाता है।

विशेषार्थ—छह नोकषायोंका उदय यथासम्भव आठवें गुणस्थान तक ही होता है, अतः क्षपकके नौवें गुणस्थानमें उदय समयके सिवा उदयावलिप्रमाण गुणश्रेणिगोपुच्छाओंका आश्रय लेकर यहाँ उत्कृष्ट स्वामित्व कहा है।

* उन्हीं छह नोकषायोंके उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५२९. यह सूत्र सुगम है।

* जो गुणितकर्मांश क्षपक जीव अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान है वह छह नोकषायोंके उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५३०. इस सूत्रमें गुणितकर्मांश पदका निर्देश इससे विपरीत क्षपितकर्मांश जीवका निषेध करनेके लिये किया है। तथा क्षपक पदका निर्देश उपशामक जीवका निषेध करनेके लिये किया है।

शंका—ऐसा क्यों किया ?

विसोहीए बहुअस्स गुणसेढिदव्वस्स संगहट्ठं । दुचरिमसमयादिहेट्ठिमापुव्वकरण-णिवारणफलो चरिमसमयअपुव्वकरणणिद्देसो। तस्स पयदुक्कस्ससामित्त होइ। तत्तो उवरि बहुदव्वावूरिदगुणसेढिणिसेए उदिण्णे सामित्तं किण्ण दिण्ण ? ण, तत्थेवेदेसिमुदय-वोच्छेदेण उवरि दादुमसत्तीदो । उवसमसेढीए अणियट्टिउवसामओ से काले अंतर काहिदि त्ति मदो देवो जादो तस्स अंतोमुहुत्तुववण्णल्लयस्स जाधे अपच्छिम गुणसेढि-सीसयमुदयमागयं ताधे छण्हमेदेसिं कम्मंसाण पयदुक्कस्ससामित्त दायव्वमिदि णासंकणिज्ज, तत्थतणविसोहीदो अणतगुणउवसंतकसायुक्कस्सविसोहिं पेक्खियूण सव्व-जहण्णियाए वि अपुव्वकरणक्खवयविसोहीए अणतगुणत्तुवलभादो । एत्थेव विसेसतर-पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं—

❀ णवरि हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं जइ कीरइ भय-दुगुंछाणमवेदगो

समाधान—क्योंकि उपशामककी विशुद्धिसे क्षपककी विशुद्धि अनन्तगुणी होती है जिससे गुणश्रेणि द्रव्यका अधिक सचय होता है। यही कारण है कि यहाँ उपशामक पदका निर्देश न करके क्षपक पदका निर्देश किया है।

यहाँ अपूर्वकरणके उपान्त्य समय आदि पिछले समयोंका निषेध करनेके लिये 'चरिम-समयअपुव्वकरण' पदका निर्देश किया है, क्योंकि प्रकृत विषयका उत्कृष्ट स्वामित्व इसीके होता है।

शंका—अपूर्वकरणके अन्तिम समयसे आगे अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें जिसमें बहुत द्रव्यका सचय है ऐसे गुणश्रेणिनिषेकका उदय होता हे, अतः इस उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान वहाँ जाकर करना चाहिये था ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अपूर्वकरणके अन्तिम समयमे ही इन प्रकृतियोंकी उदय-व्युच्छित्ति हो जाती है, अत उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान आगे नहीं किया जा सकता।

शंका—उपशमश्रेणिमें अनिवृत्तिकरण उपशामक तदनन्तर समयमे अन्तर करेगा किन्तु अन्तर न करके मरा और देव हो गया। उसके वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद जब अन्तिम गुणश्रेणिशीर्ष उदयमें आता है तब इन छह कर्मोंके प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान करना चाहिये ?

समाधान—ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि उपशामक अनिवृत्तिकरणमें अन्तरकरण करनेके पूर्व जितनी विशुद्धि होती है उससे उपशान्तकषायकी उत्कृष्ट विशुद्धि अनन्तगुणी है और इससे भी क्षपक अपूर्वकरणकी सबसे जघन्य विशुद्धि अनन्तगुणी बतलाई है। इसीसे इन छह कर्मोंके प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान अन्यत्र न करके क्षपक अपूर्व-करणके अन्तिम समयमें किया है।

अब इस विषयमें जो विशेष अन्तर है उसका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ किन्तु इतनी विशेषता है कि हास्य, रति, अरति या शोकका यदि कर रहा

कायव्वो । जइ भयस्स तदो दुगुंछाए अवेदगो कायव्वो । अह दुगुंछाए तदो भयस्स अवेदगो कायव्वो ।

§ ५३१ कुदो एवं कीरदे ? ण, अविवक्खियाणं णोकसायाणमवेदगत्ते त्थिवुक्कसंकमपरिसयाणं विवक्खियपयडीणमसंखेज्जसमयपबद्धमेत्तगुणसेढिगोवुच्छदव्वस्स लाहदंसणादो ।

§ ५३२ संपहि पयदस्स उवसंहारमट्टमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

❀ उक्कस्सयं सामित्तं समत्तमोघेण ।

है तो उसे भय और जुगुप्साका अवेदक रखना चाहिये। यदि भयका कर रहा है तो उसे जुगुप्साका अवेदक रखना चाहिये और जुगुप्साका कर रहा है तो भयका अवेदक रखना चाहिये।

§ ५३१ शंका—इस व्यवस्थाके करनेका क्या कारण है ?

समाधान—नहीं क्योंकि यदि यह जीव अविवक्षित नोकषायोंका अवेदक रहता है तो इसके विवक्षित प्रकृतियोंमें स्तिबुक संक्रमणके द्वारा असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण गुणश्रेणिगोपुच्छाके द्रव्यका लाभ देखा जाता है।

विशेषार्थ—यहाँ पर गुणितकर्मांश क्षपक जीवके अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट स्वामित्व बतलाया है सो इसका कारण यह है कि यह नोकषायोंका उदयगत उत्कृष्ट द्रव्य यहीं पर प्राप्त होता है अन्यत्र नहीं। यद्यपि शंकाकार यह समझकर कि अपूर्वकरणसे अनिवृत्तिकरणमें अधिक द्रव्यका संचय होता है ऐसे जीवको अनिवृत्तिकरणमें ले गया है और वहाँ नोकषायोंका उदय न होनेसे उदयगत उत्कृष्ट द्रव्यके प्राप्त करनेके लिये उसे देवपर्यायमें उत्पन्न कराया है। किन्तु उपशामकपनेसे उपशान्तकषाय गुणस्थानमें और इससे क्षपक जीवके परिणामोंकी विशुद्धि अनन्तगुणी होती है, इसलिये गुणश्रेणिका उत्कृष्ट संचय क्षपक अपूर्वकरणमें ही होगा। यही कारण है कि उत्कृष्ट स्वामित्वका प्रतिपादन अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें किया है। तथापि ऐसा नियम है कि किसीके भय और जुगुप्सा दोनोंका उदय होता है। किसीके इनमेंसे किसी एकका उदय होता है और किसीके दोनोंका ही उदय नहीं होता। इसलिये यदि हास्य रति, अरति या शोककी अपेक्षा उत्कृष्ट स्वामित्व कहना हो तो दोनोंके उदयके अभावमें कहना चाहिये। यदि भयकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्वामित्व कहना हो तो जुगुप्साके अभावमें कहना चाहिये और जुगुप्साकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्वामित्व कहना हो तो भयके अभावमें कहना चाहिये। ऐसा करनेसे लाभ यह है कि जब जिस प्रकृतिका उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त किया जायगा तब उसे बिन प्रकृतियोंका उदय न होगा, स्तिबुक संक्रमणके द्वारा उनका द्रव्य भी मिल जायगा।

§ ५३२. अब प्रकृत विषयका उपसंहार करनेके लिये आगेका सूत्र आया है—

❀ इस प्रकार ओघसे उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ।

५३३. सुगमं । एदेण सुत्तेण सूचिदो आदेसो गदि-इंदियादिचोद्दसमग्गणासु अणुमग्गियव्वो । एत्थ अणुक्कस्ससामित्त किण्ण परूविदं इदि णासंका कायव्वा, उक्कस्सपरूवणादो चेव तस्स वि अणुत्तसिद्धीदो । उक्कस्सादो वदिरित्तमणुक्कस्समिदि ।

❀ एत्तो जहण्णयं सामित्तं वत्तइस्सामो ।

§ ५३४. एत्तो अणतर जहण्णयमोकड्ड कड्डणादिचदुण्हं झीणट्ठिदियाण सामित्तमणुवत्तइस्सामो त्ति पइज्जासुत्तमेद ।

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णयमोकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५३५. सुगममेद पुच्छासुत्त ।

❀ उवसामओ छसु आवलियासु सेसासु आसाणं गओ तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयमोकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं ।

---

§ ५३३ यह सूत्र सुगम है। इस सूत्रमे आये हुए ओघ पदसे आदेशका भी सूचन हो जाता है, इसलिये उसका गति और इन्द्रिय आदि चौदह मार्गणाओंमे विचार कर कथन करना चाहिये।

शंका—यहाँ अनुत्कृष्ट स्वामित्वका कथन क्यों नहीं किया है ?

समाधान—ऐसी आशका करना ठीक नहीं है, क्योंकि उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन कर देनेसे ही अनुत्कृष्ट स्वामित्वका कथन हो जाता है, क्योंकि उत्कृष्टके सिवा अनुत्कृष्ट होता है।

विशेषार्थ—चूर्णिसूत्रकारने केवल ओघसे अपकर्षणादि चारोंकी अपेक्षा झीनस्थितिक उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन किया है और इसीलिये प्रकरणके अन्तमें 'ओघसे उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ' यह सूत्र रचा है। निश्चयत इस सूत्रमे ओघ पद देखकर ही टीकामें यह सूचना की गई है कि इसी प्रकार विचार कर आदेशकी अपेक्षा भी गति आदि मार्गणाओंमें इस उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करना चाहिये।

*** अब इससे आगे जघन्य स्वामित्वको बतलाते है।**

§ ५३४ अब इस उत्कृष्ट स्वामित्वके बाद अपकर्षणादि चारों झीनस्थितिवालोंके जघन्य स्वामित्वको बतलाते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है।

*** मिथ्यात्वके अपकर्षण, उत्कर्षण और सक्रमणकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है।**

§ ५३५ यह पृच्छासूत्र सरल है।

*** जो उपशमसम्यग्दृष्टि छह आवलियोंके शेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ उसके मिथ्यात्वको प्राप्त होनेपर प्रथम समयमें वह अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कमपरमाणुओंका स्वामी है।**

§ ५३६ एत्थ उवसामगो त्ति वुत्ते दंसणमोहणीयउवसामगो घेत्तव्वो, मिच्छत्तेणाहियारादो। णइ एवमुवसमसम्माइट्ठि त्ति वत्तव्वं, अण्णहा उवसामणा-वावदावत्थाए चेव गहणप्पसंगादो? ण एस दोसो, 'पाचओ भुंजइ' त्ति णिव्वावारा-वत्थाए वि किरियाणिमित्तववएसुवलंभादो। छसु आवलियासु सेसासु आसाणं गओ त्ति एदेण वा उवसंतदंसणमोहणीयावत्थस्स गहणं कायव्वं। ण च तदवत्थस्स आसाणगमणे संभवो, विरोहादो। किमासाणं णाम? सम्मत्तविराहणं। तं पि किंपच्चइयं? परिणामपच्चइयमिदि भणामो। ण च सो परिणामो णिरहेउओ, अणंताणु-बंधितिव्वोदयहेउत्तादो।

§ ५३७ *सम्मद्दंसणपरम्मुहीभावेण मिच्छत्ताहिमुहीभावो अणंताणुबंधितिव्वो-दयजणियविवरीयसंकिलेसदूसिओ आसाणमिदि वुत्तं होइ।* किमट्ठमेसो छसु आवलियासु सेसासु आसाणं णीदो, ण पुणो उवसमसम्माइट्ठी चेव मिच्छत्तं णिज्जइ

---

§ ५३६. यहाँ सूत्रमें जो 'उपशामक' पद कहा है सो उससे दर्शनमोहनीयका उपशामक लेना चाहिये, क्योंकि यहाँ मिथ्यात्वका अधिकार है।

शंका—यदि ऐसा है तो सूत्रमें 'उपशमसम्यग्दृष्टि' इस पदका निर्देश करना चाहिये, अन्यथा उपशामनारूप अवस्थाके ही ग्रहणका प्रसंग प्राप्त होता है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जैसे 'पाचक भोजन करता है' यहाँ पाचन क्रियाके अभावमें भी पाचक शब्दका प्रयोग किया गया है वैसे ही व्यापार रहित अवस्थामें भी क्रियानिमित्तक संज्ञाका व्यवहार देखा जाता है, अतः उपशमसम्यग्दृष्टिको भी उपशामक कहनेमें कोई आपत्ति नहीं है।

अथवा सूत्रमें आये हुए 'छसु आवलियासु सेसासु आसाणं गओ' इस वचनसे दर्शनमोहनीय अवस्थाका उपशम करके उपशमसम्यग्दृष्टि हुए जीवका ग्रहण करना चाहिये। कारण कि उपशामकका सासादनमें जाना नहीं बन सकता, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है।

शंका—सासादनका क्या अर्थ है?

समाधान—सम्यक्त्वकी विराधना करना यही सासादनका अर्थ है।

शंका—यह सासादन किस निमित्तसे होता है?

समाधान—परिणामोंके निमित्तसे होता है ऐसा हम कहते हैं। परन्तु वह परिणाम बिना कारणके नहीं होता, क्योंकि वह अनन्तानुबन्धीके तीव्र उदयसे होता है।

§ ५३७. सम्यग्दर्शनसे विमुख होकर जो अनन्तानुबन्धीके तीव्र उदयसे उत्पन्न हुआ तीव्रतर संक्लेशरूप दूषित मिथ्यात्वके अनुकूल परिणाम होता है वह सासादन है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यह जीव छह आवलिकाल शेष रहने पर सासादन गुणस्थानमें क्यों ले जाया गया है, सीधा उपशमसम्यग्दृष्टि ही मिथ्यात्वमें क्यों नहीं ले जाया गया?

त्ति णासंकणिज्ज; तत्थतणसंकिलेसादो एत्थ संकिलेसबहुत्तुवलंभेण तहा करणादो। कुदो संकिलेसबहुत्तमिच्छिज्जदि त्ति चे ण, मिच्छत्तं गदपढमसमए ओकड्डिय उदयावलियब्भंतरे णिसिंचमाणदव्वस्स थोवयरीकरणट्ठं तहाब्भुवगमादो। ण च संकिलेसकाले बहुदव्वोकड्डणासंभवो, विरोहादो।

§ ५३८. तदो एवं सुत्तत्थसंबंधो कायव्वो—जो उवसमसम्माइट्ठी उवसमसम्मत्तद्धाए छसु आवलियासु सेसासु परिणामपच्चएण आसाणं गदो, तदो तस्स अणंताणुबंधितिव्वोदयवसेण पडिसमयमणंतगुणाए संकिलेसवुड्ढीए वोलाविय सगद्धस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयमोकड्डणादो झीणट्ठिदियमिदि। एसो पयदसामिओ खविद-गुणिदकम्मंसियाणं कदरो? अण्णदरो। कुदो? सुत्ते खविदेयरविसेसणादंसणादो। खविदकम्मंसियत्तं किण्ण इच्छिज्जदे? ण, एत्थ परिणामवसेण संकिलेसावूरणलक्खणेण उदयावलियब्भंतरे ओकड्डिय णिसिंचमाणदव्वस्स खविद-गुणिदकम्मंसिएसु समाणपरिणामेसु सरिसत्तदंसणेण खविदकम्मंसियगहणे फलविसेसाणुव-

---

समाधान—ऐसी आशंका करनी ठीक नहीं है, क्योंकि सम्यग्दृष्टिके प्राप्त होनेवाले सक्लेशसे सासादनमें बहुत अधिक सक्लेश पाया जाता है, इसलिये ऐसा किया है।

शंका—यहाँ अधिक सक्लेश किसलिये चाहा गया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें अपकर्षण होकर उदयावलिके भीतर दिये जानेवाले द्रव्यके थोडा प्राप्त करनेके लिये ऐसा स्वीकार किया है। यदि कहा जाय कि सक्लेशके समय बहुत द्रव्यका अपकर्षण हो जायगा सो बात नहीं है, क्योंकि ऐसा माननेमें विरोध आता है।

§ ५३८ इसलिये इस सूत्रका यह अर्थ समझना चाहिये कि जो उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उपशम सम्यक्त्वके कालमें छह आवलि कालके शेष रहने पर परिणामोंके निमित्तसे सासादनको प्राप्त हुआ। फिर वहाँ अनन्तानुबन्धीके तीव्रोदयसे प्रति समय अनन्तगुणी हुई सक्लेशकी वृद्धिको बिताकर जब वह मिथ्यादृष्टि होता है तब मिथ्यादृष्टि होनेके प्रथम समयमें वह अपकर्षण आदि तीनसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

शंका—यह प्रकृत स्वामी क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश इनमेंसे कौन-सा है?

सामाधान—दोनोंमेंसे कोई भी हो सकता है।

शंका—सो कैसे?

समाधान—क्योंकि सूत्रमें क्षपितकर्मांश या गुणितकर्मांश ऐसा कोई विशेषण नहीं दिखाई देता।

शंका—यहाँ क्षपितकर्मांश क्यों नहीं स्वीकार किया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि सक्लेशको पूरा करनेवाले परिणामके निमित्तसे अपकर्षण करके उदयावलिके भीतर जो द्रव्य दिया जाता है वह एक समान परिणामवाले क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश जीवोंके समान देखा जाता है, इसलिये यहाँ सूत्रमें क्षपितकर्मांश पदके ग्रहण

लब्भादो। तदो अण्णेण वा तेण वा लक्खणेणागंतूण उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय सगद्धाए छावलियावसेसियाए आसाणमासादिय संकिलेसं पूरेदूण मिच्छत्तं गदपढमसमए उदीरिदपोक्खरकम्मपदेसे घेत्तूण तस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ त्ति णिस्संसयं पडिवज्जेयव्वं।

§ ५२९ एत्थ पयदत्थविसए सिस्साणं णिण्णयजणणट्ठमंतरपूरणविहाणं वत्तइस्सामो। तत्थ ताव अंतरं सेसदीहउवसमसम्मत्तद्धादो संखेज्जगुणं होदि। कुदो एदं परिच्छिज्जदे? दंसणमोहणीयउवसामणाए पण्णविज्जमाणपणुवीसपडिअप्पाबहुअदंडयादो। तदो पुव्वविहाणेणागदपढमसमयमिच्छाइट्ठी अंतरविदियट्ठिदिपढमणिसेय-मादिं कादूण जाव मिच्छत्तस्स अंतोकोडाकोडिमेत्तट्ठिदीए चरिमणिसेओ त्ति ताव एदेसिं पदेसग्गं पलिदोवमासंखे०भागमेत्तोकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडेदूण तत्थेयखंड-मंतरापूरणट्ठमोकड्डदि। पुणो एवमोकड्डिददव्वमसंखेज्जलोगमेत्तभागहारेण खंडिय तत्थेयखंडं घेत्तूण उदए बहुअं णिसिंचदि। विदियसमए विसेसहीणं णिसेयभागहारेण। एवं विसेसहीणं विसेसहीणं जावुदयावलियचरिमसमयमेत्तद्धाणं गंतूण असंखेज्जलोग

अन्तमें विशेष लाभ नहीं है।

इसलिए क्षपितकर्मांश और गुणितकर्मांश इनमेंसे किसी भी एक विधिसे आकर और उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करके जब उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलि शेष रहें तब सासादन गुणस्थानको प्राप्त कर और संक्लेशको पूरा कर मिथ्यात्वमें जाय। इस प्रकार मिथ्यात्वको प्राप्त हुए इस जीवके उसके प्रथम समयमें उदीरणाको प्राप्त हुए पोखर कर्मपरमाणुओंकी अपेक्षा प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है इस प्रकार यह बात निःसंशयरूपसे जाननी चाहिए।

§ ५२९ अब यहाँ प्रकृत विषयके विषयमें शिष्योंका निर्णय हो जाय इसलिए अन्तरके पूरा करनेकी विधि बतलाते हैं—यहाँ उपशमसम्यक्त्वके रहते हुए जितना अन्तरकाल समाप्त हुआ है उससे जो अन्तरकाल शेष बचा रहता है वह उपशमसम्यक्त्वके कालसे संख्यातगुणा होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—दर्शनमोहनीयकी उपशमनाके सिलसिलेमें जो पच्चीस स्थानीय अल्पबहुत्व-दंडक आयगा उससे यह जाना जाता है।

अतएव पूर्व विधिसे आकर जो मिथ्यादृष्टि हो गया है वह मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें अन्तरकालके ऊपर दूसरी स्थितिमें स्थित प्रथम निषेकसे लेकर मिथ्यात्वकी अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिके अन्तिम निषेक तक जितनी स्थितियाँ हैं उन सबके कर्म-परमाणुओंमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारका भाग देकर वहाँ जो एक भाग प्राप्त होता है उसे अन्तरको पूरा करनेके लिए अपकर्षित करता है। फिर इस प्रकार अपकर्षित हुए द्रव्यमें असंख्यात लोकप्रमाण भागहारका भाग देकर जो एक भाग लब्ध हो उसमेंसे बहुभाग उदयमें देता है। दूसरे समयमें विशेष हीन देता है। यह विशेषका प्रमाण निषेक-भागहारसे ले आना चाहिए। इस प्रकार उदयावलिके अन्तिम समय तक विशेष हीन विशेष हीन द्रव्य देना चाहिए। यहाँ उदय समयसे लेकर उदयावलिके अन्तिम समय तक असंख्या-

पडिभागेण गहिददव्वं णिट्ठिदं ति। एदं च पयदसामित्तविसयीकय जहण्णदव्वं। पुणो सेसअसंखेज्जभागे घेत्तूणुवरिमाणंतरट्ठिदीए असंखेज्जगुणं णिसिंचदि। को एत्थ गुणगारो? असंखेज्जा लोगा। तत्तो णिसेयभागहारेण दोगुणहाणिपमाणेण विसेसहीणं णिक्खिवदि जावंतरचरिमट्ठिदि त्ति। पुणो अणंतरउवरिमट्ठिदीए दिस्समाणपदेसग्ग-स्सुवरिं असंखेज्जगुणहीणं संछुहदि। तत्तो प्पहुडि पुव्वविहाणेण विसेसहीणं विसेसहीणं देदि जावप्पप्पणो गहिदपदेसमइच्छावणावलियामेत्तेण अपत्तं ति।

§ ५४०. एत्थ विदियट्ठिदिपढमणिसेयम्मि दिज्जमाणदव्वस्स अंतरचरिमट्ठिदि-णिमित्तपदेसग्गादो असंखेज्जगुणहीणत्तसाहणट्ठमिमा ताव परूवणा कीरदे। तं जहा-- अंतोकोडाकोडिमेत्तविदियट्ठिदिसव्वदव्वमप्पणो पढमणिसेयपमाणेण कीरमाणं दिवड्ढ-गुणहाणिमेत्तं होइ त्ति कट्टु दिवड्ढगुणहाणी आयामं विदियट्ठिदिपढमणिसेयविक्खंभं खेत्तमुड्ढायारेण ठविय पुणो ओकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तफालीओ उड्डं फालिय तत्थेय-फालिं घेत्तूण दक्खिणपासे ठविदे पढमसमयमिच्छादिट्ठीण अंतरावूरणट्ठमोकड्डिददव्वं खेत्तायारेण पुव्वुत्तायामं पुव्विल्लविक्खंभादो असंखेज्जगुणहीणं विक्खंभं होऊण

लोकप्रतिभागसे प्राप्त हुआ एक भागप्रमाण द्रव्य समाप्त हो जाता है। यह प्रकृत स्वामित्वका विषयभूत जघन्य द्रव्य है। फिर शेष असख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्यमेंसे उपरिम अनन्तरवर्ती स्थितिमें असख्यातगुणे द्रव्यका निक्षेप करता है।

शंका—यहाँ गुणकारका प्रमाण क्या है?

समाधान— असख्यात लोक।

फिर इससे आगेकी स्थितिमें दो गुणहानिप्रमाण निषेकभागहारकी अपेक्षा विशेष हीन द्रव्यका निक्षेप करता है। इस प्रकार यह क्रम अन्तरकालके अन्तिम समय तक चालू रहता है। फिर इससे आगेकी उपरिम स्थितिमें दृश्यमान कर्मपरमाणुओंके ऊपर असख्यातगुणे हीन द्रव्यका निक्षेप करता है। फिर इससे आगे अतिस्थापनावलिके प्राप्त होनेके पूर्व तक पूर्वविधिसे विशेष हीन विशेष हीन द्रव्यका निक्षेप करता है।

§ ५४०. अब यहाँ द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमें दिया गया द्रव्य अन्तरकालकी अन्तिम स्थितिमें दिये गये द्रव्यसे जो असख्यातगुणा हीन है सो इसकी सिद्धि करनेके लिये यह आगेकी प्ररूपणा करते हैं। जो इस प्रकार है—अन्तःकोड़ाकोडीप्रमाण दूसरी स्थितिमें स्थित सब द्रव्यके अपने प्रथम निषेकके बराबर हिस्से करने पर वे डेढ गुणहानिप्रमाण प्राप्त होते हैं ऐसा समझकर डेढ गुणहानिप्रमाण लम्बे और दूसरी स्थितिके प्रथम निषेकप्रमाण चौडे क्षेत्रकी ऊर्ध्वाकाररूपसे स्थापना करो। फिर अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारप्रमाण फालियोंको ऊपरसे नीचे तक एक रेखामें फाड कर उनमेंसे एक फालिको ग्रहण करके उसे दक्षिण पार्श्वमें रखो। इस प्रकार रखी गई इस फालिका प्रमाण मिथ्यादृष्टियोंके प्रथम समयमें अन्तरको पूरा करनेके लिये जो द्रव्य अपकर्षित किया जाता है उतना होगा और क्षेत्रके आकार रूपसे देखने पर यह पहले जो क्षेत्रकी लम्बाई बतला आये हैं उतनी लम्बी तथा पहले बतलाये गये क्षेत्रकी चौड़ाईसे

णिदं। एत्थ असंखेज्जलोगपडिभागेण उदयावलियब्भंतरे णिसित्तदव्वमप्पहाणं काऊण सयलसमयपबद्धस्स एदिस्से फालीए आयामे अंतोमुहुत्तोवट्टिददिवड्ढगुणहाणीए खंडिदे अंतरदीहा अणंतरपरूविदविक्खंभा संपहियभागहारमेत्ता खंडा लब्भंति। पुणो एदेसिं मज्झे एगरूवूणोकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तखंडे घेत्तूण पुव्विल्लक्खेत्तस्स हेट्ठदो संधिय ठविदे ट्ठिदिं पडि विदियट्ठिदिपढमणिसेयदिस्समाणपदेसग्गपमाणेण अंतरं णिरंतरमावूरिदं होइ। णवरि गोवुच्छविसेसादिउत्तरअंतोमुहुत्तगच्छसंकलणासरूवमवसिट्ठरूवूणोकड्डुक्कड्डणभागहारपरिहीणपुव्वभागहारमेत्तखंडदव्वादो घेत्तूण विवज्जासं काऊण अंतरब्भंतरे ठवेयव्वं। अण्णहा गोवुच्छायाराणुप्पत्तीदो। एवमंतरट्ठिदीसु पदिददव्वपमाणपरूवणा कदा।

§ ५४१ संपहि विदियट्ठिदिपढमणिसेए पदमाणदव्वपमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—पुव्विल्लपुंजट्ठविदखंडेहिंतो परूविदायामविक्खंभपमाणेहिंतो एयं खंडं घेत्तूण उदयावलियबाहिरट्ठिदीसु सव्वासु वि विहंजिय पदइ त्ति अंतरोवट्टिददिवड्ढगुणहाणीए रूवाहियाए विक्खंभमोवट्टिय वित्थारिदे एयखंडमस्सियूण णिसेयट्ठिदीए पदिदपदेसग्गमप्पणो मूलदव्वमोकड्डुक्कड्डणभागहारेण संपहियभागहारपदुप्पण्णेण खंडिय तत्थेयखंडमेत्तं होइ। सेसखंडाणि वि अस्सियूण एत्तियमेत्तं घेप्प

असंख्यातगुणी हीन चौड़ी होकर स्थित होती है। यहाँ असंख्यात लोकप्रमाण प्रतिभागके द्वारा उदयावलिके भीतर निक्षिप्त किये गये द्रव्यकी प्रधानता न करके पूरी समयमें इस फालिके आयाममें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित डेढ़ गुणहानिका भाग देनेपर अन्तरकाल प्रमाण लम्बे और पूर्वोक्त विष्कम्भवाले साम्प्रतिक भागहारप्रमाण खण्ड प्राप्त होते हैं। फिर इन खण्डोंमेंसे एक कम अपकर्षण-उत्कर्षण-भागहारप्रमाण खण्डोंको ग्रहण कर पूर्वोक्त क्षेत्रके नीचे मिलाकर स्थापित करने पर प्रत्येक स्थितिके प्रति द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमें दृश्यमान कर्मपरमाणुओंके प्रमाणके हिसाबसे अन्तर निरन्तर क्रमसे आपूरित हो जाता है। किन्तु गोपुच्छविशेषके प्रारम्भसे लेकर अन्त तक जो अन्तर्मुहूर्तप्रमाण गच्छ है उसके संकलनरूप क्षेत्रको एक कम अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे हीन पूर्वभागहारप्रमाण खण्डभूत द्रव्यपुंजोंमेंसे ग्रहण करके और विपरीत करके अन्तरके भीतर स्थापित कर देना चाहिये। अन्यथा गोपुच्छके आकारकी उत्पत्ति नहीं हो सकती है। इस प्रकार अन्तरस्थितियोंमें जितना द्रव्य प्राप्त होता है उसके प्रमाणका कथन किया।

§ ५४१ अब द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमें जो द्रव्य प्राप्त होता है उसके प्रमाणका विचार करते हैं जो इस प्रकार है—जिसके आयाम और विष्कम्भके प्रमाणका पहले कथन कर आये हैं ऐसे पृथक् स्थापित पूर्वोक्त खण्डोंमेंसे एक खण्डको निकाल लें। फिर यह खण्ड उदयावलिके बाहरकी सभी स्थितियोंमें विभक्त होकर प्राप्त होता है, इसलिये डेढ़ गुणहानिमें अन्तरकालका भाग देने पर जो लब्ध आवे एक अधिक उसका विष्कम्भमें भाग देकर प्राप्त हुए राशिको फैलाने पर एक खण्डकी अपेक्षा विवक्षित स्थितिमें जो कर्मपरमाणु प्राप्त होते हैं उनकी संख्या आती है जो प्रथम मूल द्रव्यमें सांप्रतिक भागहारसे गुणित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग देने पर प्राप्त हुए एक खण्डप्रमाण होता है। शेष खण्डोंकी अपेक्षा भी इतना ही द्रव्य प्राप्त होता

दव्वं लहामो त्ति खंडगुणयारो पुव्वपरूविदपमाणो एदस्स गुणयारसरूवेण ठवेयव्वो। एवं कदे सव्वखंडाणि अस्सियूण अहियारट्ठिदीए पदिददव्वमागच्छदि। एत्थ जइ गुणगारभागहारा सरिसा होंति तो सयलेयखंडपडिभागिय पयदणिसेयदव्वपमाणं होज्ज ? ण च एवं, भागहारं पेक्खियूण गुणगारस्स ओकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तरूवेहि हीणत्तदंसणादो। तदो किंचूणमेयखंडपडिबद्धदव्वं पयदणिसेए दिज्जमाणं होइ। अंतरचरिमट्ठिदिणिसित्तदव्वे पुण एदेण पमाणेण कीरमाणे सादिरेयओकड्डुक्कड्डण-भागहारमेत्ताओ सलागाओ लब्भंति, पुव्विल्लदव्वस्सुवरि एत्तियमेत्तदव्वस्स सविसेसस्स पवेसुवलंभादो। खंडं पडि उव्वरिददव्वस्स अणंतरभागहारोवट्टिदसंपुण्णोकड्डुक्कड्डण-भागहारपदुप्पण्णसयलेयखंडपमाणत्तुवलंभादो च। एत्थ तेरासियं काऊण सिस्साणं सादिरेयओकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तगुणयारविसओ पबोहो कायव्वो। तम्हा अणंतर-चरिमट्ठिदिणिसित्तदव्वादो विदियट्ठिदिपढमणिसेयम्मि णिवददव्वमसंखेज्जगुणहीण-मिदि सिद्धं। दिस्समाणपदेसग्गं पुण विसेसहीणं णिसेयभागहारपडिभागेण। तदो उदयावलियबाहिरे अंतरपढमट्ठिदिमादिं कादूण एया गोवुच्छा। जेणेवमंतरम्मि उदया-वलियवज्जम्मि बहुअं दव्वं णिक्खिवदि तेणंतरस्स हेट्ठदो उदयावलियब्भंतरे असंखेज्जगुणहीणा एयगोउच्छा जादा। तदो एवंविहउदयावलियब्भंतरणिसित्त-दव्वं घेत्तूण पयदजहण्णसामित्तमिदि सुसंबद्धं।

है, इसलिये पूर्वोक्त प्रमाण खण्डगुणकारको इसके गुणकाररूपसे स्थापित करना चाहिये। इस प्रकार करने पर सब खण्डोंकी अपेक्षा विवक्षित स्थितिमें जितना द्रव्य प्राप्त होता है उसका प्रमाण आता है। यहाँ यदि गुणकार और भागहार समान होते तो पूरे एक खण्डका प्रतिभाग प्रकृत निषेकके द्रव्यप्रमाण प्राप्त होता। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि भागहारकी अपेक्षा गुणकार अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके जितने अंक हैं उतना कम देखा जाता है। इसलिये कुछ कम एक खण्डसम्बन्धी द्रव्य प्रकृत निषेकमें दीयमान द्रव्य होता है। किन्तु अन्तरकालकी अन्तिम स्थितिमें जो द्रव्य निक्षिप्त किया गया है उसे इस प्रमाणसे करने पर साधिक अपकर्षण-उत्कर्षण-भागहार शलाकाएँ प्राप्त होती हैं, क्योंकि पूर्वकालीन द्रव्यके ऊपर साधिक इतने द्रव्यका प्रवेश पाया जाता है और एक खण्डके प्रति जो द्रव्य शेष बचता है वह, अन्तरभागहारसे पूरे अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारमें भाग देकर जो प्राप्त हो उससे पूरे एक खण्डको गुणा करने पर जो प्राप्त हो, उतना होता है। यहाँ पर त्रैराशिक करके शिष्योंको साधिक अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार-प्रमाण गुणकारका ज्ञान कराना चाहिये। इसलिये अनन्तर अन्तिम स्थितिमें निक्षिप्त हुए द्रव्यसे द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकमें निक्षिप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा हीन होता है यह सिद्ध हुआ। किन्तु दृश्यमान कर्मपरमाणु निषेकभागहाररूप प्रतिभागकी अपेक्षा विशेष हीन होते हैं। इसलिये उदयावलिके बाहर अन्तरकालकी प्रथम स्थितिसे लेकर एक गोपुच्छा है। यत. इस प्रकार उदयावलिके सिवा अन्तरकालके भीतर बहुत द्रव्य निक्षिप्त होता है अतः अन्तरकालके नीचे उदयावलिके भीतर असंख्यातगुणी हीन एक गोपुच्छा प्राप्त होती है। इसलिये इस प्रकार उदयावलिके भीतर प्राप्त हुए द्रव्यकी अपेक्षा प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है यह बात सुसम्बद्ध है।

विशेषार्थ—यहाँ अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा मिथ्यात्वके झीनस्थिति-

§ ५४२ संपहि जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स त्ति आसंकाए णिरायरणट्ठमिदमाह—

❀ उदयादो जहण्णयं झीणट्ठिदियं तस्सेव आवलियमिच्छाइट्ठिस्स।

§ ५४३ तस्सेव उवसामयस्स उवसमसम्मत्तद्धाए छ आवलियाओ अत्थि त्ति आसाणं गंतूण संकिलेसेण पोसविदसगद्धस्स मिच्छत्तमुवणमिय पढमसमयमिच्छादिट्ठिमादिक्कमेण आवलियमिच्छादिट्ठिभावमवट्ठिदस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं

वाले कर्मपरमाणुओंके जघन्य स्वामित्वका विचार किया जा रहा है। उदयावलिके भीतर स्थित कर्मपरमाणु इन तीनोंके अयोग्य हैं यह तो पहले ही बतला आये हैं। अब यहाँ यह देखना है कि उदयावलिके भीतर मिथ्यात्वके कमसे कम कर्मपरमाणु कहाँ प्राप्त होते हैं। उपशमसम्यक्त्वके कालसे अन्तरकाल संख्यातगुणा बड़ा होता है ऐसा नियम है, अतः ऐसा जीव जब उपशम सम्यक्त्वसे च्युत होकर मिथ्यात्व गुणस्थानमें आता है तो उसे यहाँ मिथ्यात्वका अपकर्षण करके अन्तरकालके भीतर फिरसे निषेक रचना करनी पड़ती है, इसलिये यहाँ उदयावलिमें पूर्व संचित द्रव्य न होनेसे यह कमती प्राप्त होता है। यद्यपि ऐसे जीवके संक्लेशरूप परिणाम तो होते हैं पर यह जीव उपशमसम्यक्त्वके कालको समाप्त करके मिथ्यात्वमें गया है इसलिये इसके संक्लेशरूप परिणामोंकी उत्कृष्टता नहीं प्राप्त हो सकती है और संक्लेशरूप परिणामोंकी जितनी न्यूनता रहेगी कर्मपरमाणुओंका उतना ही अधिक अपकर्षण होगा ऐसा नियम है, अतः इस प्रकार जो जीव सीधा उपशमसम्यक्त्वसे च्युत होकर मिथ्यात्वको प्राप्त होता है उसके भी अपकर्षण आदि तीनोंके अयोग्य मिथ्यात्वका जघन्य द्रव्य नहीं पाया जाता है। इसीसे चूर्णिसूत्रकारने इसे छह आवलि काल शेष रहने पर पहले सासादन गुणस्थानमें उत्पन्न कराया है और फिर मिथ्यात्वमें ले गये हैं। ऐसे जीवके संक्लेशकी अधिकता रहनेसे मिथ्यात्वके प्रथम समयमें बहुत कम मिथ्यात्वके कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण होता है। ऐसा जीव गुणितकर्मांश भी हो सकता है और क्षपितकर्मांश भी क्योंकि एक तो अन्तरकालके भीतर द्रव्य नहीं रहता, दूसरे इन दोनोंके उपशमसम्यक्त्वसे च्युत होकर मिथ्यात्वमें पहुँचने तक समान परिणाम रहते हैं, अतः इन दोनोंके द्वितीय स्थितिमें स्थित द्रव्यमें महान् अन्तर रहते हुए भी मिथ्यात्वके प्रथम समयमें समान द्रव्यका अपकर्षण होता है। इसलिये अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका जघन्य स्वामित्व ऐसे ही प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीवके कहना चाहिये जो उपशमसम्यक्त्वसे च्युत होकर छह आवलि कालतक सासादन गुणस्थानमें रहा है और फिर वहाँसे मिथ्यात्वमें गया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ५४२. अब उदयसे झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है इस आशंकाके निराकरण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ वही मिथ्यादृष्टि जीव एक आवलि कालके अन्तमें उदयसे झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

§ ५४३ वही उपशामक उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलि कालके रहने पर सासादनमें आकर और संक्लेशके साथ सासादनके कालको बिताकर जब मिथ्यात्वको प्राप्त होकर वहाँ प्रथम समयसे लेकर एक आवलि कालतक मिथ्यात्वरूप परिणामोंके साथ अवस्थित रहता है तब वह उदयसे झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है। मिथ्यादृष्टिके

होदि । मिच्छाइट्ठिपढमसमयप्पहुडि पडिसमयमणंतगुणं संकिलेसमावूरिय समयूणावलियमेत्तकालमहियारट्ठिदीए णिसिंचमाणदव्वस्स समयूणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसेहिंतो असंखेज्जगुणहीणत्तादो पढमसमयमिच्छाइट्ठिपरिहारेणावलियमिच्छाइट्ठिम्मि सामित्तं दिण्णं, अण्णहा पढमसमयम्मि चेव सामित्तप्पसंगादो। कुदो एदं परिच्छिज्जदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो।

❀ सम्मत्तस्स जहण्णयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५४४. सुगमं।

❀ उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स पढमसमयवेदयसम्माइट्ठिस्स ओकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं।

§ ५४५. पढमसमयवेदयसम्माइट्ठिस्स पयदसामित्तं होइ त्ति सुत्तत्थसंबंधो। किमविसिट्ठस्स ? नेत्याह उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स उवशमसम्यक्त्वं पश्चात्कृत येन

प्रथम समयसे लेकर प्रत्येक समयमें अनन्तगुणे सक्लेशको प्राप्त करके एक समय कम आवलिप्रमाण कालतक अधिकृत स्थितिमें जो द्रव्य प्राप्त होता है वह एक समय कम आवलिप्रमाणगोपुच्छाविशेषोंसे असंख्यातगुणा हीन होता है, इसलिये प्रथमसमयवर्ती मिथ्यादृष्टिको छोड़कर एक आवलि कालतक रहे मिथ्यादृष्टिके जघन्य स्वामित्व कहा है। अन्यथा प्रथम समयमें ही जघन्य स्वामित्वका प्रसंग प्राप्त हो जाता।

शंका—जिसे मिथ्यात्व प्राप्त हुए एक आवलि काल हुआ है उसे जघन्य स्वामित्व प्राप्त होता है यह किस प्रमाणसे जाना ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना।

विशेषार्थ—यद्यपि जो जीव उपशमसम्यक्त्वसे च्युत होकर और छह आवलि कालतक सासादन गुणस्थानमें रहकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है उसके पहले समयमें ही मिथ्यात्वका उदय हो जाता है परन्तु इस समय जो उदयगत द्रव्य है उससे एक आवलिकालके अन्तमें उदयमें आनेवाला द्रव्य न्यून होता है। इसीसे उदयसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका जघन्य स्वामित्व मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके समयसे लेकर एक आवलिप्रमाण कालके व्यतीत होनेपर उसके अन्तिम समयमें कहा है।

※ सम्यक्त्वके अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५४४ यह सूत्र सुगम है।

※ जो उपशमसम्यक्त्वसे वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है उसके प्रथम समयमें वह अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणसे झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५४५ प्रथम समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टिके प्रकृत स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका अभिप्राय है। क्या सामान्यसे सभी प्रथम समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टियोंके जघन्य स्वामित्व होता है ? नहीं, बस इसी बातके बतलानेके लिये 'उपशमसम्मत्तपच्छायदस्स' यह पद कहा है।

स तयोच्चवे। उवसमसम्मत्तं पच्छायरिय गहिदवेदयसम्मत्तस्स पढमसमए असंखेज्ज-लोगपडिभाएण उदयावलियब्भंतरे णिसित्तदव्वं घेत्तूण सम्मत्तस्स अप्पियसामित्तमिदि वुत्तं होइ। सेसपरूवणाए मिच्छत्तभंगो।

§ ५४६ संपहि जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्से त्ति आसंकाणिवारणट्ठ-मुत्तरसुत्तमोइण्णं—

※ तस्सेव आवलियवेदयसम्माइट्ठिस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं।

§ ५४७ तस्सेव पुव्विल्लसामियस्स आवलियमेत्तकालं वेदयसम्मत्ताणुपालणेण आवलियवेदयसम्माइट्ठिववएसमुव्वहंतस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ। एत्थ पढमसमय-वेदयसम्माइट्ठिपरिहारेण उदयावलियचरिमसमए सामित्तविहाणे पुव्वं व कारणं परूवेयव्वं।

इसका अर्थ है जिसने उपशमसम्यक्त्वको पीछे कर दिया है यह जो उपशमसम्यक्त्वको त्याग कर वेदकसम्यग्दृष्टि हुआ है उसके प्रथम समयमें असंख्यात लोकप्रमाण प्रतिभागके अनुसार उदयावलिके भीतर प्राप्त हुए द्रव्यकी अपेक्षा सम्यक्त्वका विवक्षित स्वामित्व होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। शेष सब कथन मिथ्यात्वके समान है।

विशेषार्थ—जब उपशमसम्यग्दृष्टि उपशमसम्यक्त्वके कालको समाप्त करके वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त होता है तब वह अपने प्रथम समयमें ही सम्यक्त्व प्रकृतिका अपकर्षण करके उससे अन्तरकालको भर देता है। यद्यपि इस प्रकार अन्तरकालके भीतर अपकर्षित द्रव्य प्राप्त होता है तथापि यहाँ पूर्व संचित द्रव्य नहीं रहनेसे वह द्रव्य अति थोड़ा है, इसलिये ऐसे जीवको ही सम्यक्त्व प्रकृतिकी अपेक्षा अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणसे झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी कहा है। यहाँ पर यह प्रश्न किया जा सकता है कि उपशमसम्यग्दृष्टि-को मिथ्यात्वमें ले जाकर जघन्य स्वामी क्यों नहीं कहा, क्योंकि वहाँ वेदक सम्यग्दृष्टिसे कम द्रव्यका अपकर्षण होता है। पर बात यह है कि जिस प्रकृतिका उदय होता है उदय समयसे लेकर अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप उसी प्रकृतिका होता है। किन्तु मिथ्यात्व गुणस्थानमें सम्यक्त्व प्रकृतिका उदय होता नहीं, इसलिये ऐसे जीवके मिथ्यात्वमें एक आवलि कालतक उदयावलिप्रमाण निषेक ही सम्भव नहीं अतः जघन्य स्वामित्व मिथ्यात्वमें न बतला कर वेदक सम्यक्त्वके प्रथम समयमें बतलाया है।

§ ५४६. अब उदयसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है इस आशंकाके निवारण करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

※ वही वेदक सम्यग्दृष्टि जीव एक आवलि कालके अन्तमें उदयसे झीन स्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५४७ एक आवलिप्रमाण कालतक वेदकसम्यक्त्वका पालन करनेसे 'आवलिक वेदक-सम्यग्दृष्टि' इस संज्ञाको प्राप्त हुए उसी पूर्वोक्त जीवके प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है। यहाँ प्रथम समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टिका परिहार करके जो उदयावलिके अन्तिम समयमें स्वामित्वका विधान किया है सो इसका पहलेके समान कारण कहना चाहिये।

विशेषार्थ—जैसे मिथ्यात्वका उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामित्व उदयावलिके अन्तिम समयमें कहा है उसी प्रकार प्रकृतमें जानना चाहिये।

❀ **एवं सम्मामिच्छत्तस्स ।**

§ ५४८. सुगममेदमप्पणासुत्तं ।

❀ **णवरि पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स आवलियसम्मामिच्छाइट्ठिस्स चेदि ।**

§ ५४९. दोसु वि सामित्तसुत्तेसु आलावकओ विसेसो जाणियव्वो ।

❀ **अट्ठकसाय-चउसंजलण-पुरिसवेद-हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं जहण्णय-मोकड्डणादो उक्कणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं कस्स ?**

§ ५५०. सुगममेदं ।

❀ **उवसंतकसाओ मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स जहण्णय-मोकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं ।**

§ ५५१. जो उवसंतकसाओ वीदरागछदुमत्थो अण्णदरकम्मंसियलक्खणेणा-गंतूण सेढिमारूढो कालगदसमाणो मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवभावेणावट्ठियस्स

---

* **इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें जानना चाहिये ।**

§ ५४८ यह अर्पणासूत्र सुगम है ।

* **किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रथम समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टिके और उदयावलिके अन्तिम समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टिके जघन्य स्वामित्व कहना चाहिये ।**

§ ५४९ दोनों ही स्वामित्व सूत्रोंमें व्याख्यानकृत विशेषता प्रकरणसे जान लेनी चाहिये ।

विशेषार्थ—जैसे सम्यक्त्व प्रकृतिकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्वका कथन करते समय जीवको उपशमसम्यक्त्वसे वेदकसम्यक्त्वमें ले जाकर उसके प्रथम समयमे अपकर्षणादि तीनकी अपेक्षा और उदयावलिके अन्तिम समयमें उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्म-परमाणुओंका स्वामी कहा है वैसे ही उपशमसम्यक्त्वसे सम्यग्मिथ्यात्वमें ले जाकर उसके प्रथम समयमें अपकर्षणादि तीनकी अपेक्षा और उदयावलिके अन्तिम समयमें उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी कहना चाहिये यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है ।

* **आठ कषाय, चार सज्वलन, पुरुषवेद, हस्य, रति, भय और जुगुप्साके अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?**

§ ५५० यह सूत्र सुगम है ।

* **जो उपशान्तकषाय जीव मरकर देव हो गया, प्रथम समयवर्ती वह देव उक्त प्रकृतियोंके अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी है ।**

§ ५५१ क्षपितकर्मांश या गुणितकर्मांश इनमेंसे किसी भी एक विधिसे आकर जो जीव उपशमश्रेणिपर चढकर उपशान्तकषाय वीतरागछद्मस्थ हो गया और फिर मरकर देव हो गया

ओकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं होइ त्ति सुत्तत्थसंबंधो। कधं देवेसुप्पण्णपढमसमए विदियट्ठिदीए ट्ठिदपदेसग्गाणमंतरट्ठिदीसु असंखाणमेक्कसराहेण उदयावलियपवेसो? ण, सव्वेसिं कारणाणं परिणामवसेण अक्कमेणुप्पादाणुवलंभादो। तदो उवसंतकसाएण देवेसुप्पण्णपढमसमए पुव्वुत्तविहाणेणंतरं पूरेमाणेण उदयावलिय-ब्भंतरे असंखेज्जलोगपडिभागेण णिसिंचिदव्वं घेत्तूण चदुण्हं संजलणकम्माणं विवक्खिय जहण्णसामित्तं होइ त्ति घेत्तव्वं। एत्थ के वि आइरिया एवं भणंति—मा होउ णाम लोभसंजलणस्स उवसंतकसायपच्छायददेवम्मि देवपज्जायपढमसमए वट्टमाणयम्मि जहण्णसामित्तं, अण्णहाकारमसंभवादो। कुदो एवं चेव? हेट्ठा अण्णदरसंजलणपढमट्ठिदीए णिल्लेवणासंभवादो। तहा सेससंजलणाणं पि तत्थेव सामित्तं होउ णाम, अण्णहा देवेसुप्पण्णपढमसमए विवक्खियसंजलणाणमुवरि अविवक्खियसंजलणगुणसेढिदव्वस्स त्थिवुक्कसंकमणवसेण जहण्णभावाणुववत्तीदो। ण पुणो सेसकसायाणमेत्थ सामित्तमणुवलद्धं, पढमाए अणियट्टिपरदेवम्मि तस्सिमंतरं काऊण देवेसुप्पण्णपढमसमए वट्टमाणयम्मि जहण्णसामित्तं आइट्ठसणादो। तं जहा—सो देवेसुप्पण्णपढमसमए जेसिमुदओ

वह प्रथम समयवर्ती देव अपकर्षणादि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है यह इस सूत्रका तात्पर्य है।

शंका—जो कर्मपरमाणु अन्तरकालकी स्थितियोंमें न पाये जाकर द्वितीय स्थितिमें पाये जाते हैं उनका देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही एकदम उदयावलिमें कैसे प्रवेश हो जाता है?

समाधान—नहीं क्योंकि यहां परिणामोंकी परवशतासे सभी कारणोंका युगपत् उत्पादन पाया जाता है, इसलिये जो उपशान्तकषाय जीव देवोंमें उत्पन्न होता है वह वहां प्रथम समयमें ही पूर्वोक्त विधिसे अन्तरकालका कर्मनिषेकोंसे पूरा कर देता है। और इसप्रकार उदयावलिके भीतर असंख्यात लोकप्रमाण प्रतिभागके अनुसार जो द्रव्य निक्षिप्त होता है उसकी अपेक्षा सूत्रमें कहे गये सब कर्मोंका विवक्षित जघन्य स्वामित्व प्राप्त होता है, यह अर्थ यहां लेना चाहिये।

शंका—यहांपर कितने ही आचार्य इसप्रकार कथन करते हैं कि जो उपशान्तकषाय जीव मरकर देव हुआ और देव पर्यायके प्रथम समयमें विद्यमान है उसके लोभसंज्वलनका जघन्य स्वामित्व भले ही रहा आओ क्योंकि इसका अन्य प्रकारसे घटित करना शक्य नहीं है। ऐसा ही क्यों है ऐसा पूछनेपर शंकाकार कहता है कि इससे नीचे संज्वलनकी सब प्रकृतियोंकी प्रथम स्थितिका अभाव असंभव है अतः यहां जघन्य स्वामित्व नहीं दिया जा सकता है। इसीप्रकार शेष संज्वलनोंका भी स्वामित्व यहींपर रहा आवे, अन्यथा देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें विवक्षित संज्वलनोंके ऊपर अविवक्षित संज्वलनोंके गुणश्रेणिद्रव्यका स्तिबुक संक्रमण प्राप्त होनेसे जघन्यपना नहीं बन सकता है। परन्तु शेष कषायोंका स्वामित्व यहांपर नहीं होना चाहिये क्योंकि जो उपशमश्रेणिपर चढ़ते हुए अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है वह पहले अनिवृत्तिकरणमें उक्त प्रकृतियोंका अन्तर करके जब मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ तब वहां उत्पन्न होनेके प्रथम समयवर्ती उसके जघन्य स्वामित्वका कथन करनेमें लाभ देखा जाता

अत्थि तेसिमुदीरिज्जमाणदव्वमुवसंतकसायचरमदेवविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहिए पुव्विल्लसामिदव्वादो थोवयरमुदयादी सछुहदि, विसोहिपरतंताए उदीरणाए तत्तारतमाणुविहाणस्स णाइयत्तादो। ण एत्थ त्थिवुक्कसंकमस्स संभवो आसंकणिज्जो, जेसिमुदयो णत्थि तेसिमुदयावलियबाहिरे एयगोवुच्छायारेण णिसेयदंसणादो विवक्खियकसायस्स सजादियसजलणपढमट्ठिदीए सह तत्थुप्पायणादो च। तम्हा अट्ठकसायाणं मज्झे जस्स जस्स जहण्णसामित्तमिच्छिज्जदि तस्स तस्स एवं देवेसुप्पण्णपढमसमए उदयं काऊण सामित्तं दायव्वं, अण्णहा जहण्णभावाणुववत्तीदो। तहा पुरिसवेद--हस्स--रदि--भय--दुगुंछाणमप्पप्पणो ट्ठाणे ओयरमाणअणियट्टिउवसामओ ओकड्डियूण उदए दाहिदि त्ति अदाऊण कालं करिय देवेसुप्पण्णपढमसमए ओकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियजहण्णसामित्तमत्थसंबंधेण दायव्वं ? ण एत्थ वि कसायाणं त्थिवुक्कसंकमसभावो आसकियव्वो, कसायत्थिवुक्कसंकमस्स णोकसाएसु अणब्भुवगमादो। कुदो एव चे ? त्थिवुक्कसकमस्स पाएण समाणजाइयपयडीसु चेव पडिबंधब्भुवगमादो। तम्हा णिरवज्जमेदमेत्थ सामित्तमिदि। एत्थ परिहारो उच्चदे—उवसमसेढीए काल काऊण देवेसुप्पण्णपढमसमए जस्स वा तस्स वा विसोही

है। यथा—यह तो प्रसिद्ध बात है कि उपशान्तकषायचर देवसे इसकी विशुद्धि अनन्तगुणी हीन होती है, इसलिये उपशान्तकषायचर देव अपने प्रथम समयमें जिन प्रकृतियोंका उदय है उनकी उदीरणा करते हुए जितने द्रव्यको उदयादिमें निक्षिप्त करता है उससे यह जीव थोड़े द्रव्यको उदयादिमें निक्षिप्त करता है, क्योंकि उदीरणा विशुद्धिके अनुसार होती है, इसलिये यहा जो उदीरणाके होनेका इसप्रकारका विधान किया है सो वह न्याय्य है। यहा स्तिवुकसंक्रमणकी सम्भावनाविषयक आशका करना भी उचित नहीं है, क्योंकि एक तो यहा जिनका उदय नहीं होता उनके केवल उदयावलिके बाहर ही एक गोपुच्छके आकाररूपसे निषेक देखे जाते हैं और दूसरे विवक्षित कषायका सजातीय संज्वलनकी प्रथम स्थितिके साथ वहीं उत्पाद होता है, इसलिये आठ कषायोंमेसे जिस जिसका जघन्य स्वामित्व चाहा जाय उस उसका पूर्वोक्त प्रकारसे देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमे उदय कराके स्वामित्वका विधान करना चाहिये, अन्यथा जघन्यपना नहीं प्राप्त हो सकता। तथा जो उपशामक उतरकर अनिवृत्तिकरणमें आया है वह पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका अपने अपने स्थानमे अपकर्षण करके उदयमें देगा किन्तु न देकर मरा और देवोंमे उत्पन्न हो गया उसके वहा उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अपकर्षणादि तीनोंके ही झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका जघन्य स्वामित्व प्रकरणवश देना चाहिये। किन्तु यहापर भी कषायोंके स्तिवुक संक्रमणकी सम्भावनाकी आशका करना उचित नहीं है, क्योंकि कषायोंका स्तिवुक सक्रमण नोकषायोंमें नहीं स्वीकार किया है। यदि कहा जाय कि ऐसा क्यों है सो इसका उत्तर यह है कि स्तिवुकसक्रमणका सम्बन्ध प्राय. समान जातीय प्रकृतियोंमें ही स्वीकार किया है, इसलिये यहापर जो उक्त प्रकारसे स्वामित्व बतलाया है वह निर्दोष है ?

समाधान—अब यहा इसका परिहार करते हैं—जो भी कोई उपशमश्रेणिमें मरकर देवोंमे उत्पन्न हुआ है उसके वहा उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें विशुद्धि समान ही होती है इस

सरिसी चेव सेढीए अणंतगुणहीणाहियभावणिरवेक्खा होइ त्ति एदेणाहिप्पाएण पयट्टमेदं सुत्तं। जइ एवं, जत्थ वा तत्थ वा सामित्तमदाऊण केणाहिप्पाएण उवसंतकसायचरो चेव देवो अवलंबिओ? ण, अण्णत्थ सुत्तुत्तासेसपयडीणं सामित्तस्स दाउमसक्कियत्तेणेत्थेव सामित्तविहाणादो। एत्थ जस्स जस्स जहण्णसामित्तमिच्छिज्जइ तस्स तस्स उवसंतकसायपच्छायददेवपढमसमए उदयं काऊण गहेयव्वं, अण्णहा अणुदयक्कमेण उदयावलियब्भंतरे णिक्खेवासंभवादो। एत्थ चोदओ भणइ—ण एदं घडदे, देवेसुप्पण्णपढमसमए लोभं मोत्तूण सेसकसायाणमुदयासंभवादो। कुदो एस विसेसो लब्भए चे? परमगुरूवएसादो। तदो लोभकसायवदिरित्तकसायाणमेत्थ सामित्तेण ण होदव्वं, तत्थ तेसिमुदयाभावादो त्ति। एत्थ परिहारो वुच्चदे—सच्चमेवदमेत्थ वि जइ तहाविहो अहिप्पाओ अवलंबिओ होज्ज, किंतु ण देवेसुप्पण्णपढमसमए एवंविहो णियमो अत्थि, अविसेसेण सव्वकसायाणमुदओ तत्थ ण विरुज्झइ त्ति एसो चुण्णिसुत्तयाराहिप्पाओ, अण्णहा एत्थ सामित्तविहाणाणुववत्तीए। तदो देवेसुप्पण्णपढमसमए सव्वकसायाणमुदओ संभवइ त्ति तस्स जहण्णसामित्तविहाणमविरुद्धं सिद्धं।

अभिप्रायसे यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है। किन्तु इतनी विशेषता है कि उपशमश्रेणिमें जो विशुद्धिका अनन्तगुणा हीनाधिकभाव देखा जाता है उसकी यहां अपेक्षा नहीं की गई है।

शंका—यदि ऐसा है तो जहां कहीं भी स्वामित्वका विधान न करके उपशान्तकषायचर देवकी अपेक्षा ही स्वामित्वका विधान किस अभिप्रायसे किया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि अन्यत्र सूत्रमें कही गई सब प्रकृतियोंके स्वामित्वका विधान करना सम्भव नहीं था, इसलिये यहां ही स्वामित्वका विधान किया है। यहांपर जिस जिस प्रकृतिका जघन्य स्वामित्व लाना इष्ट हो उस उसका उपशान्तकषायसे मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उदय कराकर स्वामित्वका ग्रहण करना चाहिये अन्यथा उदय न होनेके कारण उदयावलिके भीतर अनुदयवाली प्रकृतियोंके निषेकोंका निक्षेप होना सम्भव नहीं है।

शंका—यहांपर शंकाकारका कहना है कि उक्त कथन नहीं बन सकता है, क्योंकि देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें लोभको छोड़कर शेष कषायोंका उदय नहीं पाया जाता है। यदि कहा जाय कि यह विशेषता कहांसे प्राप्त हुई तो इसका उत्तर यह है कि परम गुरुके उपदेशसे यह विशेषता प्राप्त हुई है, इसलिये लोभकषायके सिवा शेष कषायोंका स्वामित्व यहां देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें नहीं होना चाहिये, क्योंकि यहां उनका उदय नहीं पाया जाता?

समाधान—अब यहां इस शंकाका परिहार करते हैं—यह कहना तब सही होता जब यहां भी ऐसा ही अभिप्राय विवक्षित होता। किन्तु प्रकृतमें चूर्णिसूत्रकारका यह अभिप्राय है कि देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें इसप्रकारका नियम नहीं पाया जाता और सामान्यसे सब कषायोंका उदय वहां विरोधको नहीं प्राप्त होता। यदि ऐसा न होता तो यहां स्वामित्वका विधान ही नहीं किया जा सकता था, अतः देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें सब कषायोंका उदय सम्भव है इसलिये यहां जो जघन्य स्वामित्वका विधान किया है सो वह बिना विरोधके सिद्ध है।

विशेषार्थ—यहां पर आठ कषाय, चार सञ्ज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इन प्रकृतियोंके अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंके जघन्य स्वामित्वका विधान करते हुए यह बतलाया है कि जो उपशान्तकषाय छद्मस्थ जीव मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है उसके प्रथम समयमें यह जघन्य स्वामित्व प्राप्त होता है। यहांपर शंकाकारने मुख्यतया तीन शंकाएं उठाई हैं जिनमेंसे पहली शंकाका भाव यह है कि उपशान्तकषायमें बारह कषायों और नोकषायोंकी प्रथम स्थिति तो पाई नहीं जाती, क्योंकि वहां अन्तरकालकी स्थितियोंमें निषेकोंका अभाव रहता है। अब जब यह जीव मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है तब वहां इनकी प्रथम स्थिति एकसाथ कैसे उत्पन्न हो सकती है। इस शंकाका जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि उपशान्तकषाय गुणस्थानमें जो करण उपशान्त रहते हैं वे देवके प्रथम समयमें अपना काम करने लगते हैं, इसलिये वहां द्वितीय स्थितिमें स्थित उन कर्मोंके कर्मपरमाणु अपकर्षित होकर प्रथम स्थितिमें आ जाते हैं। उसमें भी जिन प्रकृतियोंका प्रथम समयसे ही उदय होता है उनके कर्मपरमाणु उदय समयसे निक्षिप्त होते हैं और जिनका उदय प्रथम समयसे नहीं होता उनके कर्मपरमाणु उदयावलिके बाहरकी स्थितिमें निक्षिप्त होते हैं, इसलिये वहां प्रथम स्थितिमें विवक्षित प्रकृतियोंके कर्मपरमाणु सम्भव हो जानेसे जघन्य स्वामित्व भी प्राप्त किया जा सकता है। दूसरी शंका यह है कि यतः सञ्ज्वलन लोभका उपशम दसवें गुणस्थानके अन्तमें होता है अतः इसकी अपेक्षा जो उपशान्तकषाय छद्मस्थ जीव मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है उसके प्रथम समयमें जघन्य स्वामित्व भले ही प्राप्त हो जाओ, क्योंकि इसके पूर्व मरकर जो जीव देवोंमें उत्पन्न होता है उसके सञ्ज्वलन लोभकी उदय समयसे लेकर अन्तरकालके पूर्व तककी या अन्तरकालके विना ही प्रथम स्थिति पूर्ववत् बनी रहती है अतः ऐसे जीवको देवोंमें उत्पन्न करानेपर सञ्ज्वलन लोभकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्व नहीं प्राप्त किया जा सकता। तथा शेष तीन सञ्ज्वलनोंकी अपेक्षा भी जघन्य स्वामित्व पूर्वोक्त प्रकारसे भले ही प्राप्त हो जाओ, क्योंकि इनकी अपेक्षा भी जघन्य स्वामित्व अन्य प्रकारसे नहीं बन सकता है। उदाहरणार्थ एक सूक्ष्मसाम्पराय संयत जीव मरकर देव हुआ और उसके देव होनेके प्रथम समयमें मायासञ्ज्वलनका उदय है तो इसमें लोभसञ्ज्वलनके निषेक स्तिवुकसंक्रमण द्वारा संक्रमित होंगे जिससे मायासंज्वलनकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्व नहीं बन सकेगा। इसीप्रकार मान और क्रोधसञ्ज्वलनके सम्बन्धमें जानना चाहिये। इसलिये यद्यपि सञ्ज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रकारसे जघन्य स्वामित्व बन जाता है पर शेष कषायोंकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रकारसे जघन्य स्वामित्व नहीं बनता, क्योंकि यदि अनिवृत्तिकरण गुणस्थानका जीव उनका अन्तर करके मरता और देवोंमें उत्पन्न होता है तो उसके उपशान्तकषायचर देवकी अपेक्षा उदयावलिमें कम परमाणु पाये जाते हैं, इसलिये सूत्रमें उपशान्तकषायचर देवकी अपेक्षा आठ कषायोंका जघन्य स्वामित्व कहना ठीक नहीं। इसप्रकार पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इन नोकषायोंका जघन्य स्वामित्व भी उपशान्तकषायचर देवकी अपेक्षा नहीं कहना चाहिये, क्योंकि जो जीव उपशमश्रेणिसे उतरकर और अनिवृत्तिकरणमें पहुँचकर इनका अपकर्षण करनेके एक समय पहले मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें इनका अपकर्षण करता है उसके उपशान्तकषायचर देवकी अपेक्षा उदयावलिमें कम परमाणु प्राप्त होते हैं, इसलिये इनका जघन्य स्वामित्व भी अनिवृत्तिचर देवके ही होता है उपशान्तकषायचर देवके नहीं। उपशान्तकषायचर देवकी अपेक्षा अनिवृत्तिचर देवके प्रथम समयमें अपकर्षणसे उदयावलिमें कम परमाणु संक्लेशकी अधिकतासे प्राप्त होते हैं, क्योंकि ऐसा नियम है कि जिसके संक्लेशकी अधिकता होती है उसके अपकर्षण कम परमाणुओं का होता है और जिसके विशुद्धिकी अधिकता होती है उसके अपकर्षण अधिक परमाणुओंका

✻ तस्सेव आवलियउववण्णस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

§ ५५२ तस्सेव उवसंतकसायचरदेवस्स उप्पत्तिपढमसमयप्पहुडि आवलिय मेत्तकालं गोलिय समवट्ठियस्स जहण्णयमुदयादो होइ । कुदो पढमसमयउववण्ण परिहरिय एत्थ पयदजहण्णसामित्त विहाणं ति णासंकणिज्जं, तत्थतणपढमणिसेयादो एदस्स विवक्खियणिसेयस्स समऊणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसेहि हीणत्तदंसणादो । ण च एत्थ वि समऊणावलियमेत्तकालम्मि असंखेज्जलोयपडिभागेणोदीरिददव्वं तत्थासंतमत्थि

होता है। यतः उपशान्तकषायचर देवके विशुद्धिकी अधिकता होती है अतः इसके अधिक परमाणुओंका अपकर्षण होगा। तथा अनिवृत्तिचर देवके संक्लेशकी अधिकता होती है अतः इसके कम परमाणुओंका अपकर्षण होगा, इसलिये आठ कषाय आदि उक्त प्रकृतियोंका स्वामित्व उपशान्तकषायचर देवको न देकर अनिवृत्तिचर देवको देना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है। टीकामें इस शंकाका समाधान करते हुए जो यह बतलाया गया है कि उपशामश्रेणिमें कहींसे भी मर कर जो देव होता है उसके एकसे परिणाम होते हैं इस विवक्षासे यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है और यहाँ पर उपशामश्रेणिमें स्थान भेदसे जो हीनाधिक परिणाम पाये जाते हैं उनकी विवक्षा नहीं की गई है सो इस समाधानका आशय यह है कि चूर्णिसूत्रकारने यद्यपि उपशान्तचर देवके उक्त प्रकृतियोंका जघन्य स्वामित्व बतलाया है पर वह अनिवृत्तिचर देवके भी सम्यक् प्रकारसे बन जाता है फिर भी चूर्णिसूत्रकारने एक साथ सब प्रकृतियोंके स्वामित्वके प्रतिपादनके लिहाजसे वैसा किया है।

एक मत यह पाया जाता है कि नरकगतिमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें क्रोधका तिर्यंचगतिमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मायाका मनुष्यगतिमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मानका और देवगतिमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें लोभका उदय रहता है। इस नियमके आधारसे शंकाकारका कहना है कि इस हिसाबसे देवगतिके प्रथम समयमें केवल लोभका जघन्य स्वामित्व प्राप्त हो सकता है अन्यका नहीं क्योंकि जिस जीवने उपशामश्रेणिमें बारह कषायोंका अन्तर कर दिया है उसके देवोंमें उत्पन्न होनेपर प्रथम समयमें अपकर्षण होकर लोभका ही उदय समयसे निक्षेप होगा अन्यका नहीं। अतः अब यहाँ अन्य प्रकृतियोंका उदयावलिमें निक्षेप ही सम्भव नहीं तब उनका जघन्य स्वामित्व कैसे प्राप्त किया जा सकता है? इस शंकाका जो समाधान किया गया है उसका आशय यह है कि देव पर्यायके प्रथम समयमें केवल लोभके उदयका ही नियम नहीं है अतः यहाँ उक्त सभी कषायोंका जघन्य स्वामित्व बन जाता है।

✻ उसी देवको जब उत्पन्न हुए एक आवलि काल हो जाता है तब वह उदयसे झीनस्थितिवाले कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५५२. वही उपशान्तकषायचर देव जब उत्पत्तिकालसे लेकर एक आवलिकाल बिताकर स्थित होता है तब वह उदयसे झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है। यदि ऐसी आशंका की जाय कि प्रथम समयमें उत्पन्न हुए देवको छोड़कर यहाँ उत्पन्न होनेसे एक आवलि कालके अन्तमें प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विधान क्यों किया जा रहा है सो ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि प्रथम समयवर्ती जीवके जो निषेक होता है उससे यह विवक्षित निषेक एक समयकम आवलिप्रमाण गोपुच्छविशेषोंसे हीन देखा जाता है। यदि कहा जाय कि एक समय कम आवलिप्रमाण काल तक असंख्यात लोकप्रमाण प्रतिभागके अनुसार उदीरणाको प्राप्त हुआ द्रव्य जो कि प्रथम समयमें नहीं है यहाँ पर पाया जाता है सो ऐसा

त्ति पच्चवट्ठेयं, एदम्हादो चेव सुत्तादो तत्तो एदस्स थोवभावसिद्धीदो।

❀ अणंताणुबंधीणं जहण्णयमोकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५५३. सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

❀ सुहुमणिगोएसु कम्मट्ठिदिमणुपालियूण संजमासंजमं संजमं च बहुसो लभिदाउओ चत्तारि वारे कसाए उवसामेयूण तदो अणंताणुबंधी विसंजोएऊण संजोइदो तदो वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालेयूण तदो मिच्छत्तं गदो तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं।

§ ५५४. खविदकम्मंसियपच्छायदभमिदवेछावट्ठिसागरोवमपढमसमयमिच्छा-

निश्चय करना ठीक नहीं है, क्यों इसी सूत्रसे प्रथम समयवर्ती द्रव्यकी अपेक्षा यह विवक्षित द्रव्य कम सिद्ध होता है।

विशेषार्थ—यहाँ पर उपशान्तकषायचर देवके उत्पन्न होनेके समयसे लेकर एक आवलिकालके अन्तमें जघन्य स्वामित्व बतलाया है, देवपर्यायमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें क्यों नहीं बतलाया इसका उत्तर यह है कि उदय समयसे लेकर एक आवलिकाल तक निषेकोंकी जो रचना होती है वह उत्तरोत्तर चयहीन क्रमसे होती है अतः प्रथम समयमें जो द्रव्य प्राप्त होता है उससे आवलिके अन्तिम समयमें प्राप्त होनेवाला द्रव्य एक समय कम एक आवलि-प्रमाण चयोंसे हीन होता है यही कारण है कि विवक्षित जघन्य स्वामित्व देव पर्यायमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें न देकर प्रथम समयसे लेकर एक आवलिप्रमाण कालके अन्तिम समयमें दिया है। यद्यपि यह आवलिप्रमाण कालका अन्तिम समय जब तक उदय समयको प्राप्त होता है तब तक इसमें प्रति समय उदीरणाको प्राप्त होनेवाले द्रव्यका सचय होता रहता है तो भी वह सब मिलकर उक्त सूत्रके अभिप्रायानुसार प्रथम समयवर्ती द्रव्यसे न्यून होता है, इसलिये विवक्षित जघन्य स्वामित्व प्रथम समयमें नहीं दिया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

❀ अनन्तानुबन्धियोंके अपकर्षण, उत्कर्षण और सक्रमणसे झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५५३. यह पृच्छासूत्र सुगम है।

❀ कोई एक जीव है जो सूक्ष्मनिगोदियोंमें कर्मस्थितिप्रमाणकाल तक रहा तदनन्तर अनेक बार सयमासयम और सयमको प्राप्त करके चार बार कषायोंका उपशम किया। फिर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके उससे सयुक्त हुआ। फिर दो छयासठ सागरप्रमाण कालतक सम्यक्त्वका पालन करके मिथ्यात्वमें गया। वह प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि अपकर्षण आदि तीनकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी है।

§ ५५४. जो क्षपित कर्मांशविधिसे आकर और दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण

ट्ठिदस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ त्ति सुत्तत्थसंगहो। किमट्ठमेसो सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिं हिंडाविदो? ण, कम्मट्ठिदिमेत्तकालं तत्थावट्ठाणेण विणा जहण्णसंचयाणुववत्तीदो। अदो चेय संपुण्णा एसा सुहुमणिगोदेसु समाणेयव्वा। सुत्ते पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणूणियं कम्मट्ठिदिमच्छिदो त्ति अपरूवणादो। तत्थ य संसरमाणस्स वावारविसेसो आवासयपडिबद्धो पुव्वं परूविदो त्ति ण पुणो परूविज्जदि गंथगउरवभएण। तदो कम्मट्ठिदिबाहिरपलिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तकालब्भंतरे संजमासंजमं संजमं च बहुसो लभिदाउगो। एत्थतण 'च' सद्देण अवुत्तसमुच्चयट्ठेण सम्मत्ताणंताणुबंधिविसंजोयणकंडयाणमंतब्भावो वत्तव्वो। बहुसो बहुवारं लभिदाउगो लद्धवंतओ। संजमासंजमादीणमसइं लंभो ण णिप्पओजणो, गुणसेढिणिज्जराए बहुदव्वगालणफलत्तादो। एत्थेव अवांतरवावारविसेसपरूवणट्ठमेदं सुत्तं। चत्तारि वारे कसाए उवसामिदूण तदो अणंताणुबंधी विसंजोएदूण संजोइदो त्ति। बहुआ कसायउवसामणवारा किण्ण होंति? ण, एयजीवस्स चत्तारि वारे मोत्तूण उवसमसेढिमारोहणासंभवादो। कसायुवसामणवाराणं व संजमासंजम संजम-सम्मत्त-अणंताणुबंधिविसंजोयण-

---

करके मिथ्यादृष्टि हुआ है उस मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें जघन्य स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका सार है।

शंका—इसे कर्मस्थितिप्रमाण काल तक सूक्ष्मनिगोदियोंमें क्यों भ्रमाया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि कर्मस्थितिप्रमाण कालतक वहां रहे बिना जघन्य संचय नहीं बन सकता है। और इसीलिये पूरी कर्मस्थितिप्रमाण कालको सूक्ष्मनिगोदियोंमें बिताना चाहिये, क्योंकि सूत्रमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालसे न्यून कर्मस्थितिप्रमाण कालतक रहा ऐसा सूचित भी नहीं किया है।

कर्मस्थितिप्रमाण कालके भीतर परिभ्रमण करते हुए जो छह आवश्यकसम्बन्धी व्यापार विशेष होता है उसका पहले कथन कर आये हैं इसलिये ग्रन्थके बढ़ जानेके भयसे उसका यहाँ पुनः कथन नहीं किया जाता है। तदनन्तर कर्मस्थितिके बाहर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके भीतर बहुत बार संयमासंयम और संयमको प्राप्त किया। यहाँ सूत्रमें जो 'च' शब्द है वह अनुक्त विषयका समुच्चय करनेके लिये आया है जिससे सम्यक्त्वके काण्डकोंके अन्तर्भावका और विसंयोजनासम्बन्धी काण्डकोंके अन्तर्भावका कथन कर लेना चाहिये। इस प्रकार इन सबको बहुत बार प्राप्त करता हुआ। इन सबका अनेक बार प्राप्त करना निष्प्रयोजन नहीं है, क्योंकि इसका फल गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा बहुत द्रव्यका गला देना है। या यहीं पर अवान्तर व्यापारविशेषका कथन करनेके लिये यह कहा है। फिर चार बार कषायोंका उपशम करके फिर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके उससे संयुक्त हुआ।

शंका—कषायोंके उपशामनके बार चारसे अधिक बहुत क्यों नहीं होते हैं?

समाधान—नहीं, क्योंकि एक जीव चार बार ही उपशमश्रेणि पर आरोहण कर सकता है, इससे और अधिक बार उपशमश्रेणि पर आरोहण करना सम्भव नहीं है।

शंका—जैसे कषायोंके उपशामनके बारोंका स्पष्ट निर्देश किया है वैसे ही संयमासंयम

परियट्टणवाराणं एत्तियमेत्ता त्ति पमाणपरूवणा किण्ण कया ? ण, सव्वुक्कस्सा ण एत्थ होंति, किंतु तप्पाओग्गा चेव त्ति जाणावणट्ठमेत्तियमेत्ता त्ति अपरूवणादो। कुदो सव्वुक्कस्सवाराणमसंभवो ? ण, तहा संते णिव्वाणगमणं मोत्तूण वेछावट्ठिसागरोवम-मेत्तकाल संसारे परिब्भमणाभावादो। ण चेसा सव्वा खविदकिरिया विसंजोइज्ज-माणाणमणंताणुबंधीणं णिरत्थिया, सेसकसायदव्वस्स थोवयरीकरणेण फलोवलंभादो। णेदं पयदाणुवजोगी, अणंताणुबंधी विसंजोएऊण पुणो वि अंतोमुहुत्तेण संजुज्जतस्स अधापवत्तसंकमेण पडिच्छिज्जमाणसेसकसायदव्वाणमप्पदरीभूदाणमुवजोगित्तदंसणादो। एवमणंताणुबंधी विसंजोइय अंतोमुहुत्तसंजुत्तो अधापवत्तसंकमेण पडिच्छिज्जमाणसेस-कसायदव्वाणमप्पदरीभूदाणमुवजोगित्तदंसणादो। एवमणंताणुबंधी विसंजोइय अंतोमुहुत्तसंजुत्तो अधापवत्तभागहारोवट्टिददिवड्ढगुणहाणिमेत्तेइंदियसमयपबद्धदव्वं सेसकसाएहिंतो पडिच्छिद संगंतोभाविदअंतोमुहुत्तमेत्तणवकबंधं घेत्तूण तदो वेछावट्ठि-सागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालियूण मिच्छत्तं गओ। किमट्ठमेत्तो सम्मत्तलंभेण वेछावट्ठि-

---

संयम, सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना इनके परिवर्तनवार इतने होते हैं इस प्रकार इनके प्रमाणका कथन क्यों नहीं किया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि यहाँ पर उन संयमासंयमादिके सर्वोत्कृष्ट वार नहीं होते, किन्तु तत्प्रायोग्य होते हैं इस प्रकार इस बातके जतानेके लिये इतने होते हैं यह कथन नहीं किया।

शंका—यहाँ सर्वोत्कृष्ट वार क्यों सम्भव नहीं हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि यहाँ पर सर्वोत्कृष्ट वारोंके मान लेनेपर निर्वाण गमनके सिवा दो छयासठ सागर कालतक संसारमें परिभ्रमण करना नहीं बन सकता है, इसलिये यहाँ पर सर्वोत्कृष्ट वार सम्भव नहीं है।

यदि कहा जाय कि विसंयोजनाको प्राप्त होनेवाली अनन्तानुबन्धियोंकी यह सब क्षपणा सम्बन्धी क्रिया निरर्थक है सो भी बात नहीं है, क्योंकि शेष कषायोंके द्रव्यका परिमाण अल्प कर देना यही इसका फल है। यदि कहा जाय कि शेष कषायोंका द्रव्य अल्प होता है तो होओ पर इसका प्रकृतमें क्या उपयोग है सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके अन्तर्मुहूर्तमें पुनः इससे संयुक्त होने पर अधःप्रवृत्तसंक्रमणके द्वारा शेष कषायोंका अल्प द्रव्य विच्छिन्न होकर इसमें प्राप्त होता है, इसलिये शेष कषायोंके द्रव्यके अल्प होनेकी उपयोगिता है। इस प्रकार अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके और अन्तर्मुहूर्तमें उससे संयुक्त होकर अल्प हुए शेष कषायोंके द्रव्यके अधःप्रवृत्तसंक्रमणके द्वारा उनसे विच्छिन्न होकर इसमें प्राप्त होने पर शेष कषायोंके द्रव्यके अल्प होनेकी उपयोगिता देखी जाती है। इस प्रकार अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना करके जब पुनः अन्तर्मुहूर्तमें इससे संयुक्त होता है तब अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित डेढ़ गुणहानि प्रमाण एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्ध द्रव्य शेष कषायोंसे विभक्त होकर इसमें प्राप्त होता है तथा अन्तर्मुहूर्त काल तक मिथ्यात्वमें रहनेके कारण अन्तर्मुहूर्त प्रमाण नवकसमयप्रबद्ध प्राप्त होते हैं। इस प्रकार अनन्ताबन्धीके इतने द्रव्यको प्राप्त करके और तदनन्तर दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन करके यह जीव मिथ्यात्वमें जाता है।

सागरोवमाणि भमादिदो ? ण, सम्मत्तमाहप्पेण बंधविरहियाणमणंताणुबंधीणमायपण विणा बयमुवगच्छंताणमइजहण्णगोवुच्छविहाणट्ठं तहा भमावणादो। पुणो मिच्छत्तं किं णीदो ? ण, अण्णहा पत्थुदुसे दंसणमोहक्खवणमाढवेंतस्स पयदजहण्णसामित्त विघादप्पसंगादो। तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयं तिण्णं पि ओकड्डणादो झीणट्ठिदिय होइ। एत्थ सिस्सो भणइ—मिच्छाइट्ठिपढमसमए अणंताणुबंधीणं सोदएण आवलियमेत्तट्ठिदीओ सामित्तविसईकयाओ होंति। सम्माइट्ठिचरिमसमए पुण तसिमुदयाभावेण त्थिवुक्कसंकमणादो समयूणावलियमेत्तट्ठिदीओ लब्भंति, तदो तत्थेव जहण्णसामित्तं दाहामो लाहदंसणादो त्ति ? ण एस दोसो, एत्थ वि अणंताणुबंधिकोहादीणमण्णदरस्स उदयाभावे इच्छिज्जमाणे तस्साणुदयं काऊण परोदएणेव सामित्तविहाणे समयूणावलियमेत्ताणं चेव गोवुच्छाणमुवलंभादो। तदो तप्परिहारेणेत्थेव सामित्तं दिण्णं, गोवुच्छविसेसं पडुच्च विसेसोवलंभादो। भइ एवमुदयावलियमावाई वा आवलियूणं वोलाविय उवरि जहण्णसामित्तं दाहामो ?

शंका—आगे सम्यक्त्व प्राप्त कराकर दो छयासठ सागरप्रमाण काल तक क्यों भ्रमण कराया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यक्त्वके माहात्म्यसे बन्ध न होनेके कारण आयके बिना क्षयको प्राप्त होनेवाली अनन्तानुबन्धियोंकी गोपुच्छाओंको अत्यन्त जघन्य करनेके लिए इस प्रकार भ्रमण कराया गया है।

शंका—इस जीवको पुनः मिथ्यात्वमें क्यों ले जाया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि यदि इसे पुनः मिथ्यात्वमें नहीं ले जाया गया होता तो यह दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ कर देता जिससे इसके प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विघात प्राप्त हो जाता।

शंका—प्रथम समयवर्ती वह मिथ्यादृष्टि अपकर्षणादि तीनोंकी अपेक्षा झीन स्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है इस प्रकार यह जो कहा है सो इस विषयमें शिष्यका कहना है कि मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें अनन्तानुबन्धियोंका उदय होनेके कारण एक आवलिप्रमाण स्थितियाँ स्वामित्वके विषयरूपसे प्राप्त होती हैं। किन्तु सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयमें तो अनन्तानुबन्धियोंका उदय नहीं होनेके कारण और उदय स्थितिका स्तिवुक संक्रमणद्वारा संक्रमण हो जानेसे एक समय कम एक आवलिप्रमाण स्थितियाँ प्राप्त होती हैं, इसलिये सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयमें ही प्रकृत स्वामित्वके देनेमें अधिक लाभ है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि यहाँ मिथ्यात्व गुणस्थानके प्रथम समयमें भी अनन्तानुबन्धिसम्बन्धी क्रोधादिकमेंसे किसका जघन्य स्वामित्व इच्छित हो उसका अनुदय कराके परोदयसे ही स्वामित्वका कथन करने पर एक समय कम एक आवलिप्रमाण ही गोपुच्छाएँ पाई जाती हैं इसलिये सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयको छोड़कर मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें ही स्वामित्वका विधान किया है, क्योंकि गोपुच्छविशेषकी अपेक्षा विशेषकी उपलब्धि होती है।

शंका—यदि ऐसा है तो उदयावलिको बिताकर या एक आवलि कम आबाधा कालको

तत्थतणगोवुच्छाणमेत्तो चडिदद्धाणमेत्तविसेसेहि हीणत्तेण लाहदंसणादो। ण एत्थ णवकबंधासंका कायव्वा, आबाहादो उवरि तस्सावट्ठाणादो त्ति ? णेदं घडदे, कुदो ? उदयावलियबाहिरे मिच्छाइट्ठिपढमसमयप्पहुडि बज्झमाणाणमणंताणुबंधीणमुवरि समट्ठिदीए सेसकसायदव्वस्स अधापवत्तेण संकमोवलंभादो बंधावलियमेत्तकालं वोलाविय सगणवकबंधस्स चिराणमंतेण सह ओकड्डिय समयाविरोहेणाबाहाब्भंतरे णिक्खित्तस्सोवलंभादो च। तम्हा अधापवत्तसंकमेण पडिच्छिददव्वे उदयावलिय-बाहिरट्ठिदे संते जहण्णसामित्तं दिज्जइ त्ति समंजसमेदं सुत्तं।

§ ५५५. तदो सुत्तस्स समुदायत्थो एवं वत्तव्वो—खविदकम्मंसियलक्खणेण कम्मट्ठिदिं समयाविरोहेण परिभमिय पुणो तसभावेण संजमासंजम-संजम-सम्मत्ताणं-ताणुबंधिविसंजोयणकंडयाणि तप्पाओग्गपमाणाणि बहूणि लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामिय पुणो वि एइंदिएसु पलिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तकालब्भंतरे उवसामय-समयपबद्धे णिग्गालिय तत्तो णिप्पिडिय असण्णिपंचिंदिएसु अंतोमुहुत्तं वोलाविय आउअबंधवसेण देवेसुप्पज्जिय अंतोमुहुत्तेण छप्पज्जत्तीओ समाणिय उवसमसम्मत्त

बिताकर ऊपरकी स्थितियोंमें जघन्य स्वामित्वका विधान करना चाहिये, क्योंकि वहाँ की गोपुच्छाएँ यहाँसे जितना स्थान ऊपर जाकर वे प्राप्त हुई हैं उतने विशेषोंसे हीन हैं, अत वहाँ जघन्य स्वामित्वका विधान करनेमें लाभ दिखाई देता है। और यहाँ नवकबन्धके प्राप्त होनेकी भी आशका नहीं है, क्योंकि नवकबन्धका अवस्थान आबाधाके ऊपर पाया जाता है ?

समाधान—परन्तु यह कहना घटित नहीं होता, क्योंकि एक तो उदयावलिके बाहर मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयसे लेकर बँधनेवाले अनन्तानुबन्धियोंके ऊपर समान स्थितिमें शेष कषायोंके द्रव्यका अधःप्रवृत्तसंक्रमणके द्वारा सक्रमण पाया जाता है और दूसरे बन्धावलिप्रमाण कालको बिताकर अपने नवकबन्धका प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मके साथ अपकर्षण होकर आगममें बतलाई गई विधिके अनुसार आबाधाके भीतर निक्षेप देखा जाता है, इसलिये उदयावलिको बिताकर या एक आवलि कम आबाधाकालको बिताकर ऊपरकी स्थितियोंमें प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विधान करना उचित नहीं है।

इसलिये अध.प्रवृत्त सक्रमणके द्वारा विच्छिन्न हुए द्रव्यके उदयावलिके बाहर स्थित रहते हुए जघन्य स्वामित्वका विधान किया गया है इसलिये यह सूत्र ठीक है।

§ ५५५. इतने निष्कर्षके बाद इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ इस प्रकार कहना चाहिये—जैसी आगममें विधि बतलाई है तदनुसार कोई एक जीव क्षपितकर्मांशकी विधिसे कर्मस्थिति-प्रमाण काल तक परिभ्रमण करता रहा। फिर त्रस होकर तत्प्रायोग्य बहुत बार सयमासयम, सयम, सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धियोंकी विसयोजनासम्बन्धी काण्डकोंको करके चार बार कषायोंका उपशम किया। फिर दूसरी बार भी एकेन्द्रियोंमें जाकर पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण कालके भीतर उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंको गलाकर और वहाँसे निकलकर असज्ञी पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ और वहाँ अन्तर्मुहूर्त रहकर आयुबन्ध हो जानेसे देवोंमें उत्पन्न हुआ। फिर अन्तर्मुहूर्तमें छह पर्याप्तियोंको पूरा करके उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर उपशम-

परिवड्ढिय उवसमसम्मत्तकालब्भंतरे चेय अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय पुणो वि परिणामवसेण अंतोमुहुत्तेण संजोइय पुव्वमुक्कड्डिदसेसकसायदव्वमधापवत्तसंकमेण पडिच्छिय अधट्ठिदिगलणेण विज्झादसंकमेण च गालणट्ठं बेछावट्ठीओ सम्मत्तमणुपालिय मिच्छत्तं गदपढमसमए वट्टमाणो जो जीवो तस्स तेसिमपच्चक्खाणादितिण्हं पि जहण्णयं झीणट्ठिदियं होइ त्ति।

* तस्सेव आवलियसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं।

§ ५५६ तस्सेव खविदकम्मंसियपच्छायदमिदबेछावट्ठिसागरोवममिच्छाइट्ठिस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिभावादिक्कमेण आवलियसमयमिच्छाइट्ठिभावेणावट्ठियस्स अहियकम्माण जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं होइ त्ति सुत्तत्थो। एत्थ पढमसमयमिच्छाइट्ठिपरिहारेणावलियचरिमसमए जहण्णसामित्तविहाणे कारणं पुव्वं परूविदं। उदयावलियबाहिरे जहण्णसामित्तं किण्ण दिण्णमिदि चे? ण, समट्ठिदिसंकमपडिच्छिददव्वस्स उदयं पइ समाणस्स तत्थ बहुत्तुवलंभादो।

सम्यक्त्वके कालके भीतर ही अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके फिर भी परिणामोंकी परवशताके कारण अन्तर्मुहूर्तमें उससे संयुक्त हुआ। फिर पहले उत्कर्षणको प्राप्त हुए शेष कषायोंके द्रव्यको अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा प्राप्त करके उसे अधःस्थितिगलनाके द्वारा और विध्यात संक्रमके द्वारा गलानेके लिये दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन किया। फिर मिथ्यात्वमें जाकर जब यह जीव उसके प्रथम समयमें विद्यमान होता है तब वह अनन्तानुबन्धियोंके अप्रत्याख्यानादि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है।

* एक आवलि काल तक मिथ्यात्वके साथ रहा हुआ वही जीव उदयसे झीनस्थितिवाले जघन्य कर्म परमाणुओंका स्वामी है।

§ ५५६. जो क्षपित कर्मांशकी विधिसे आकर दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करके मिथ्यादृष्टि हुआ है और जिसे मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयसे लेकर मिथ्यात्वके साथ रहते हुए एक आवलिप्रमाण हुआ है ऐसा वही मिथ्यादृष्टि जीव अधिकृत कर्मोंके उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्म परमाणुओंका स्वामी होता है यह इस सूत्रका अर्थ है। यहाँ पर प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिको छोड़कर एक आवलिके अन्तिम समयमें जघन्य स्वामित्वके कथन करनेका कारण पहले कह आये हैं।

शंका—उदयावलिके बाहर जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं दिया?

समाधान—नहीं, क्योंकि उदयावलिके बाहर समान स्थितिमें स्थित द्रव्यका संक्रमण हो जानेसे उसकी अपेक्षा उदयमें अधिक द्रव्यकी प्राप्ति हो जाती है इसलिये उदयावलिके बाहर जघन्य स्वामित्व नहीं दिया।

विशेषार्थ—यहाँ उदयकी अपेक्षा अनन्तानुबन्धियोंके झीनस्थितिवाले जघन्य कर्म परमाणुओंका स्वामी बतलाया है। यद्यपि इसका स्वामी भी वही होता है जो क्षपितकर्मांशकी

❀ णवुंसयवेदस्स जहण्णयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५५७. सुगमं ।

❀ अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण तिपलिदोवमिएसु उववण्णो । तदो अंतोमुहुत्तसेसे सम्मत्तं लद्धं, वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालिदं, संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता अपच्छिमे भवे पुव्वकोडिआउओ मणुस्सो जादो । तदो देसूण-पुव्वकोडिसंजममणुपालियूण अंतोमुहुत्तसेसे परिणामपच्चएण असंजमं गदो। ताव असंजदो जाव गुणसेढी णिग्गलिदा त्ति। तदो संजमं पडिवज्जियूण अंतोमुहुत्तेण कम्मक्खयं काहिदि त्ति तस्स पढमसमयसंजमं पडिवण्णस्स जहण्णयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं ।

§ ५५८. एदस्स सामित्तसुत्तस्स अत्थविवरणं कस्सामो । त जहा—जो जीवो

विधिसे आकर और दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ रहकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है पर यह स्वामित्व मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें न देकर एक आवलिके अन्तिम समयमें देना चाहिये, क्योंकि तब उदयमें अनन्तानुबन्धीके सबसे कम कर्मपरमाणु पाये जाते हैं। इस पर किसी शकाकारका कहना है कि स्थितिके अनुसार उत्तरोत्तर एक एक चयकी हानि होती जाती है, अत उदयावलिके बाहरके निषेकके उदयमें प्राप्त होने पर और भी कम द्रव्य प्राप्त होगा, इसलिये यह जघन्य स्वामित्व उदयावलिकी अन्तिम स्थितिमें न देकर उदयावलिके बाहरकी स्थितिमें देना चाहिये । पर यह शका ठीक नहीं है, क्योंकि मिथ्यात्वमें अनन्तानुबन्धीका बन्ध होता है, इसलिये इसमें अन्य सजातीय प्रकृतियोंका सक्रमण होकर उदयावलिके बाहरका द्रव्य बढ जाता है, इसलिये वहाँ जघन्य स्वामित्व नहीं दिया जा सकता है ।

* नपुंसकवेदके अपकर्पणादि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य कर्म-परमाणुओंका स्वामी कौन है ?

§ ५५७ यह सूत्र सुगम है ।

* कोई एक जीव अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ तीन पल्योपमकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ । फिर अन्तर्मुहूर्त शेष रह जाने पर सम्यक्त्वको प्राप्त करके दो छयासठ सागर कालतक सम्यक्त्वका पालन किया । फिर बहुत बार सयमासयम और सयमको प्राप्त हुआ । फिर चार बार कषायोंका उपशम करके अन्तिम भवमें एक पूर्व कोटिकी आयुवाला मनुष्य हुआ । फिर कुछ कम एक पूर्व कोटि काल तक संयमका पालन करके जब अन्तर्मुहूर्त शेष रहा तब परिणामवश असयमको प्राप्त हुआ और गुणश्रेणिके गलने तक असयमके साथ रहा । फिर सयमको प्राप्त होकर जो अन्तर्मुहूर्तमें कर्मक्षय करेगा वह प्रथम समयवर्ती सयमी जीव तीनोंकी अपेक्षा झीन स्थितिवाले जघन्य कर्म परमाणुओंका स्वामी है ।

§ ५५८ अब इस स्वामित्व सूत्रके अर्थका खुलासा करते हैं । वह इस प्रकार है—जो जीव

अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण सह गदो तिपलिदोवमिएसु उववण्णो त्ति एत्थ पदसंबंधो। किमट्ठमेसो तिपलिदोवमिएसुप्पाइदो चे? ण, णवुंसयवेदबंधविरहिएसु सुहविसेसिएसु पज्जत्तकाले तब्बंधवोच्छेदं कादूणाएण विणा अधट्ठिदीए परपयडिसंकमेण च थोवयरगोवुच्छाओ गालिय अइजहण्णीकयणिसेगगोवुच्छागालणट्ठमुप्पाइयत्तादो। तदो चेव तेण गालिदतिपलिदोवममेत्तणवुंसयवेदणिसेएण सगाउए अंतोमुहुत्तसेसे सम्मत्तं घेत्तूण बेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालिदमिदि सुत्तावयवाणं संबंधो। सम्मत्तमाहप्पेण बंधविरहियस्स णवुंसयवेदस्स तत्थ बेछावट्ठिसागरोवम-पमाणसुहुमगोवुच्छाओ गालिय अइसण्हगोवुच्छाहिं जहण्णसामित्तविहाणट्ठं तहा भमाडणस्स सहलत्तदंसणादो। एत्थेव विसेसंतरपरूवणट्ठं संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो त्ति सुत्तावयवस्स अवयारो। ण बहुवारं संजमासंजमादिगमणो णिरत्थओ, गुणसेढिणिज्जराए णवुंसयवेदपयदणिसेयाणं णिज्जरणेण तस्स सहलत्तदंसणादो। किमेसो बेछावट्ठिसागरोवमाणमब्भंतरे चेव असइं संजमासंजम अणंताणुबंधिविसंजोयण-परियट्टणवारे करेइ आहो तत्तो पुव्वमेवे त्ति पुच्छिदे तत्तो पुव्वमेव अभवसिद्धिय

अभव्योंके योग्य जघन्य कर्मके साथ गया और तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ इस प्रकार यहाँ पदोंका सम्बन्ध कर लेना चाहिये।

शंका—इस जीवको तीन पल्यकी आयुवालोंमें क्यों उत्पन्न कराया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि एक तो वहाँ नपुंसकवेदका बन्ध नहीं होता दूसरे शुभ तीन लेश्याएँ पाई जाती हैं इसलिये वहाँ पर्याप्त कालमें नपुंसकवेदकी बन्धव्युच्छित्ति कराकर आयके बिना अधःस्थितिके द्वारा और परप्रकृति संक्रमणके द्वारा स्तोकतर गोपुच्छाओंको गलाकर विवक्षित कर्मके अति जघन्य गोपुच्छा प्राप्त करनेके लिये इस जीवको तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न कराया है।

तदनन्तर तीन पल्य प्रमाण नपुंसकवेदके निषेकोंको गलाकर जब आयुमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहा है तब सम्यक्त्वको ग्रहण कर उसने दो छयासठ सागर काल तक उसका पालन किया। इस प्रकार सूत्रके पद सुसंबद्ध हैं। फिर सम्यक्त्वके प्रभावसे वहाँ बन्धरहित नपुंसकवेदके दो छयासठ सागरप्रमाण सूक्ष्म गोपुच्छाओंको गलाकर अतिसूक्ष्म गोपुच्छाओंके द्वारा जघन्य स्वामित्वको प्राप्त करनेके लिये इस प्रकारके परिभ्रमण कथनमें लाभ देखा जाता है। तथा इसीमें विशेष अन्तरका कथन करनेके लिये 'संयमासंयम और संयमको बहुत बार प्राप्त हुआ' सूत्रके इस हिस्सेकी रचना हुई है। संयमासंयम आदिका बहुत बार प्राप्त करना निरर्थक भी नहीं है, क्योंकि गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा नपुंसकवेदके प्रकृत निषेकोंकी निर्जरा हो जानेसे उसकी सफलता देखी जाती है।

शंका—क्या यह दो छयासठ सागर कालके भीतर ही अनेक बार संयमासंयम और अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके परिवर्तन वारोंको करता है या इससे पहले ही ?

समाधान—दो छयासठ सागर कालको प्राप्त होनेके पूर्व ही जब यह जीव अभव्योंके

पाओग्गजहण्णसंतकम्मेणागंतूण तसेसुप्पज्जिय तिपलिदोवमिएसुप्पज्जमाणो तम्मि संधीए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तगुणसेढिणिज्जराकालब्भंतरे सेसकम्माण व संजमासजमादिकंडयाणि थोवूणाणि कादूण पुणो तत्थ जाणि परिसेसिदाणि ताणि वेछावट्ठिसागरोवमब्भंतरे कत्थ वि कत्थ वि विक्खित्तसरूवेण करेदि त्ति एसो एत्थ परिणिच्छओ, सुत्तस्सेदस्स अंतदीवयत्तादो।

§ ५५६. अत्रैवावान्तरव्यापारविशेषप्रतिपादनार्थमुत्तरसूत्रावयवः—चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता अपच्छिमे भवे पुव्वकोडिआउओ मणुस्सो जादो इदि। पलिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तसंजमासजमादिकडयाणमट्ठसंजमकडयाण च अंतरालेसु समयाविरोहेण चत्तारि कसाउवसामणवारे गुणसेढिणिज्जराविणाभावित्तेण पयदोवजोगी अणुपालिय चरिमदेहहरो दीहाउओ मणुसो जादो त्ति वुत्तं होइ। ण पुव्वकोडाउए उप्पादो णिरत्थओ, गुणसेढिणिज्जराविणाभाविदीहसंजमद्धाए पयदोवजोगित्तादो त्ति तस्स सहलत्तपदसणट्ठमुवरिमो सुत्तावयवो—तदो देसूणपुव्वकोडिसजममणुपालियूणे त्ति। एत्थ देसूणपमाणमट्ठवस्साणि अतोमुहुत्तब्भहियाणि। एवं देसूणपुव्वकोडिसजमगुणसेढिणिज्जरं काऊणावट्ठिदस्स आसण्णे सामित्तसमए वावारविसेसपदुप्पायणट्ठमतोमुहुत्तसेसे परिणामपच्चएण असंजम गदो त्ति उत्त।

§ ५६०. एत्थुद्देसे असजमगमणे फलं परूवेइ—ताव असंजदो जाव गुणसेढी

योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ आकर और त्रसोंमें उत्पन्न होकर तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न होनेकी स्थितिमें होता है तब इस मध्यकालमें पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण गुणश्रेणिनिर्जरा कालके भीतर शेष कर्मोके समान कुछ कम सयमासयमादि काण्डकोंको करके फिर वहाँ जो कर्म शेष बचते हैं उन्हें दो छयासठ सागर कालके भीतर कहीं कहीं त्रुटित (विक्षिप्त) रूपसे करता है इस प्रकार यहाँ यह निश्चय करना चाहिये, क्योंकि यह सूत्र अन्तदीपक है।

§ ५५९. अब यहीं पर अवान्तर व्यापारविशेषका कथन करनेके लिये सूत्रका अगला हिस्सा आया है कि चार बार कषायोंका उपशम करके अन्तिम भवमें पूर्वकोटिकी आयुवाला मनुष्य हुआ। इसका आशय यह है कि पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण संयमासंयम आदि काण्डकोंके और आठ सयम काण्डकोंके अन्तरालमें आगममें जो विधि बतलाई है उस विधिसे गुणश्रेणिनिर्जराका अविनाभावी होनेसे प्रकृतमें उपयोगी चार कषायोंके उपशामन वारोंको करके बड़ी आयुवाला चरमशरीरी मनुष्य हुआ। यदि कहा जाय कि एक पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्यमें उत्पन्न कराना व्यर्थ है सो भी बात नहीं है, क्योंकि सयमकालका बड़ापन गुणश्रेणि निर्जराका अविनाभावी होनेसे प्रकृतमें उसका उपयोग है, इसलिये इसकी सफलता दिखलानेके लिये सूत्रके आगेका 'तदो देसूणपुव्वकोडिसंजममणुपालियूण' यह हिस्सा रचा गया है। यहाँपर देशोनका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष है। इस प्रकार कुछ कम पूर्वकोटि कालतक सयमगुणश्रेणिनिर्जराको करके स्थित हुए जीवके विवक्षित स्वामित्व समयके समीपमें आ जानेपर व्यापारविशेषको बतलानेके लिये 'जो अन्तर्मुहूर्त कालके शेष रहनेपर परिणामोंकी परवशताके कारण असयमको प्राप्त हुआ' यह कहा है।

§ ५६० अब यहाँ असयमको प्राप्त होनेका प्रयोजन कहते हैं—यह जीव तबतक असयत

णिग्गलिदा त्ति । जाव संजदेण कदा गुणसेढी णिरवसेसं गलिदा ताव असंजदो होऊणच्छिदो त्ति वुत्तं होइ । ण चेदं णिरत्थयं, गुणसेढिगोवुच्छाओ असंखेज्ज पंचिंदियसमयपबद्धपमाणाओ गालिय जहण्णगोवुच्छाणं सामित्तविसईकरणेण फलोवलंभादो । एवमसंजदभावेण गुणसेढिं णिग्गालिय पुणो केत्तिएण कालेण जहण्ण-सामित्तं पडिवज्जइ त्ति । एत्थुत्तरमाह—तदो संजमं पडिवज्जिऊण इच्चाइणा । तदो असंजमादो संजमं पडिवज्जिय सव्वणिरुद्धेणंतोमुहुत्तेण कम्मक्खयं कादिदि त्ति भणिदस्स तस्स पढमसमयसंजमं पडिवण्णस्स जहण्णयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं होइ त्ति सुत्तत्थसंबंधो । संजदविदियादिसमएसु किमट्ठं सामित्तं ण दिज्जदे ? ण, संजमगुणपारम्भेण पुणो वि उदयावलियबाहिरे णिक्खित्ताए गुणसेढीए उदयावलियब्भंतरप्पवेसे जहण्णभावाणुववत्तीदो । तम्हा एत्तिएण पयत्तेण सण्हीकय-समयूणावलियमेत्तगोवुच्छाओ घेत्तूण संजदपढमसमए पयदजहण्णसामित्तं होइ त्ति सुत्तत्थसमुच्चओ । एत्थ सिस्सो भणदि—एदम्हादो समयूणावलियमेत्तगोवुच्छदव्वादो जहण्णयमण्णमोकड्डणादिझीणट्ठिदियं पेच्छामो । तं कधमिदि भणिदे एसो चेव

जाता है जब तक गुणश्रेणि निर्जीर्ण होती है। जब तक संयतके द्वारा की गई गुणश्रेणि पूरी गलती है तब तक यह जीव असंयत होकर रहता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यदि कहा जाय कि यह सब कथन करना निरर्थक है सो भी बात नहीं है, क्योंकि पञ्चेन्द्रियोंके असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण गुणश्रेणिगोपुच्छाओंको गलाकर प्रकृत स्वामित्वकी विषयभूत अतिसूक्ष्म गोपुच्छाओंके करने रूपसे इसका फल पाया जाता है। इस प्रकार असंयतरूप भावके द्वारा गुणश्रेणिको गला कर फिर कितनी प्रवृत्ति करके जघन्य स्वामित्वको प्राप्त होता है ? आगे यही बतलानेके लिये 'तदो संजमं पडिवज्जिऊण' इत्यादि कहा है। आशय यह है कि फिर असंयमसे संयमको प्राप्त हुआ। इस बार संयमको तब प्राप्त कराना चाहिए जब और सब विधिके साथ कर्मक्षयको अन्तर्मु०में करनेकी स्थितिमें आ जाय। इस प्रकार संयमको प्राप्त होकर जो उसके प्रथम समयमें स्थित है वह अपकर्षणादि तीनोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य नपुंसकवेद सम्बन्धी कर्मपरमाणुओंका स्वामी होता है यह इस सूत्रका आशय है।

शंका—संयत होनेसे लेकर दूसरे आदि समयोंमें यह जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं दिया गया है ?

समाधान—नहीं क्योंकि संयमगुणकी प्रधानतासे फिर भी उदयावलिके बाहर जो गुणश्रेणिकी रचना हुई है उसके उदयावलिके भीतर प्रवेश करने पर जघन्यपना नहीं बन सकता है।

इसलिये इतने प्रयत्नसे सूक्ष्म की गई एक समय कम एक आवलिप्रमाण गोपुच्छाओंको लेकर संयतके प्रथम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका समुच्चयरूप अर्थ है।

शंका—यहाँ कोई शिष्य कहता है कि यह जो एक समय कम एक आवलिप्रमाण गोपुच्छा द्रव्य है इससे हम अपकर्षणादि तीनकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला अन्य जघन्य द्रव्य देखते हैं यह कैसे ऐसा पूछने पर वह बोलता है कि क्षपितकर्मांशकी विधिसे भ्रमण करके

खविदकम्मंसियलक्खणेण भमिदजीवो पुव्वकोडिसंजमगुणसेढिणिज्जरं करिय अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए त्ति उवसमसेढिमारूढो अंतरकिरियापरिसमत्तीए गालिदसमयूणावलिओ कालगदो वेमाणिओ देवो जादो। सो च देवेसुप्पण्णपढम-समयम्मि पुरिसवेदमोकड्डियूणुदयादिणिक्खेवं करेइ, उदयाभावेण ओकड्डिज्जमाण-णवुंसयवेदादिपयडीणमुदयावलियबाहिरे णिक्खेवं करेइ। एवमुदयावलियबाहिरे गोवुच्छायारेण णिसित्तणवुंसयवेदस्स जाधे विदियसमयदेवस्स एयगोवुच्छमेत्तमुदया-वलियब्भंतरं पविसइ ताधे तत्थ णवुंसयवेदस्स ओकड्डणादितिण्हं पि जहण्णझीण-ट्ठिदियं होइ। पुव्विल्लजहण्णसामित्तविसईकयसमयूणावलियमेत्तणिसेएहिंतो एदस्स एयणिसेयमेत्तस्स थोवयरत्तदंसणादो त्ति ? णेदं घडदे, पुव्विल्लजहण्णदव्वादो एदस्स असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो। तं जहा—इमस्स देवस्स संखेज्जसागरोवमपमाणाउ-ट्ठिदिमेत्तो सम्मत्तकालो अज्ज वि अत्थि। सपहि एत्तियमेत्तणिसेए गालिय अपच्छिमे मणुस्सभवे अवट्ठिदो पुव्विल्लजहण्णदव्वसामिओ। एदस्स पुण असंखेज्जगुणहाणि-मेत्तगोवुच्छाओ णाज्ज वि गलंति, तेण समयूणावलियमेत्तणिसेयदव्वादो एदमेयट्ठिदि-दव्वमसंखेज्जगुणं होइ, संखेज्जसागरोवमब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्ण-ब्भत्थरासीए समयूणावलिओवट्टिदाए गुणगारसरूवेण दंसणादो। तम्हा सुत्तुत्तमेव

आया हुआ यही जीव एक पूर्वकोटि काल तक संयमसम्बन्धी गुणश्रेणिकी निर्जरा करके जब जीवनमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहा तब उपशमश्रेणि पर चढ़ा और अन्तर क्रियाको समाप्त करके तथा नपुंसकवेदकी एक समय कम एक आवलिप्रमाण प्रथम स्थितिको गलाकर मरा और वैमानिक देव हो गया। और वह देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें पुरुषवेदका अपकर्षण करके उसका उदय समयसे लेकर निक्षेप करता है तथा उदय न होनेसे अपकर्षणको प्राप्त हुई नपुंसकवेद आदि प्रकृतियोंका उदयावलिके बाहर निक्षेप करता है। इस प्रकार उदयावलिके बाहर गोपुच्छाके आकाररूपसे जो नपुंसकवेदका द्रव्य निक्षिप्त होता है उसमेंसे जब द्वितीय समयवर्ती देवके एक गोपुच्छाप्रमाण द्रव्य उदयावलिके भीतर प्रवेश करता है तब वहाँ अपकर्षणादि तीनोंकी अपेक्षा नपुंसकवेदका जघन्य झीनस्थितिक द्रव्य प्राप्त होता है। इस प्रकार पूर्वोक्त जघन्य स्वामित्वके विषयभूत एक समय कम एक आवलिप्रमाण निषेकोंसे यह एक निषेकप्रमाण द्रव्य अल्प देखा जाता है ?

समाधान—यह कहना घटित नहीं होता, क्योंकि पूर्वोक्त जघन्य द्रव्यसे यह द्रव्य असंख्यातगुणा पाया जाता है। खुलासा इस प्रकार है—इस देवके संख्यात सागर आयुप्रमाण सम्यक्त्व काल अभी भी शेष है। अब इतने निषेकोंको गलाकर अन्तिम मनुष्यभवमें उत्पन्न होने पर पूर्वोक्त जघन्य द्रव्यका स्वामी होता है। परन्तु इस द्रव्यकी असंख्यात गुणहानिप्रमाण गोपुच्छाएँ अभी भी गली नहीं हैं, इसलिये एक समय कम एक आवलिप्रमाण निषेकोंके द्रव्यसे यह एक स्थितिगत द्रव्य असंख्यातगुणा होता है, क्योंकि यहाँ संख्यात सागरके भीतर नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिको एक समय कम एक आवलिसे भाजित करने पर जो लब्ध आता है उतना गुणकार देखा जाता है। इसलिये सूत्रमें कहा हुआ ही स्वामित्व

सामित्तं णिरवसेसमिदि सिद्धं ।

*** इत्थिवेदस्स वि जहण्णयाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि एदस्स चेव तिपलिदोवमिएसु णो उववण्णयस्स कायव्वाणि ।**

निर्दोष है यह बात सिद्ध हुई ।

विशेषार्थ—यहाँ अपकर्षणादि तीनकी अपेक्षा नपुंसकवेदके झीनस्थितिवाले जघन्य कर्मपरमाणुओंका स्वामी बतलाया है । इसके लिये सूत्रमें जो विधि बतलाई है वह सब क्षपितकर्मांशकी विधि है, इसलिये इसका यहाँ विशेष खुलासा नहीं किया जाता है । टीकामें इसका खुलासा किया ही है । किन्तु कुछ बातें यहाँ ज्ञातव्य हैं, इसलिये उन पर प्रकाश डाला जाता है । प्रथम बात तो यह है कि सूत्रमें पहले दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ परिभ्रमण कराके फिर संयमासंयम आदि काण्डकोंके करनेका निर्देश किया है, इसलिये यह प्रश्न हुआ कि ये संयमासंयमादि काण्डकोंमें परिभ्रमण करनेके बाद दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करनेके पहले होते हैं या बादमें होते हैं ? इस शंकाका जो समाधान किया है उसका आशय यह है कि ये दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ परिभ्रमण करनेके पहले ही हो जाते हैं क्योंकि जिस समय ये होते हैं वह काल इसके पहले ही प्राप्त होता है । पहले जघन्य प्रदेशसत्कर्मका निर्देश करते हुए भी संयमासंयमादिकके काण्डकोंको कराके ही दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ भ्रमण कराया गया है । इससे भी उक्त बातकी ही पुष्टि होती है, इसलिये यहाँ सूत्रमें जो व्यतिक्रमसे निर्देश किया है वह कोई खास अर्थ नहीं रखता ऐसा यहाँ समझना चाहिये । दूसरी बात यह है कि सूत्रमें जो यह निर्देश किया है कि ऐसा जीव पूर्वोक्त विधिसे आकर जब अन्तमें संयमी होता है तब संयमको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विधान करना चाहिये । इस पर शंकाकारका यह कहना है कि यदि प्रथम समयमें जघन्य स्वामित्व न देकर द्वितीयादि समयोंमें जघन्य स्वामित्व दिया जाता है तो इससे विशेष लाभ है । वह यह कि प्रथम समयमें एक समय कम एक आवलिप्रमाण निषेकोंमें जितना द्रव्य होता है द्वितीयादि समयोंमें वह और कम हो जायगा क्योंकि आगे आगेके निषेकोंमें एक एक चयहीन द्रव्य देखा जाता है । इस शंकाका जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि संयमको प्राप्त होते ही प्रथम समयसे यह जीव गुणश्रेणिकी रचना करने लगता है । अतः नपुंसकवेद अनुदयरूप प्रकृति है अतः इसकी गुणश्रेणि रचना उदयावलिके बाहरके निषेकोंमें होगी । अब जब यह जीव दूसरे समयमें जाता है तब इसके उदयावलिके भीतरका प्रथम निषेक स्तिबुक संक्रमणके द्वारा अन्य प्रकृतिरूप परिणम जानेसे उदयावलिके बाहरका एक निषेक उदयावलिमें प्रविष्ट हो जाता है । अतः उदयावलिमें प्रविष्ट हुए इस निषेकमें प्रथम समयमें अपकर्षित हुआ गुणश्रेणि द्रव्य भी आ मिला है अतः दूसरे समयमें एक समय कम एक आवलिप्रमाण निषेकोंका जो द्रव्य है वह प्रथम समयमें प्राप्त हुए एक समय कम एक आवलिप्रमाण निषेकोंके द्रव्यसे अधिक हो जाता है, अतः द्वितीयादि समयोंमें जघन्य स्वामित्वका विधान न करके प्रथम समयमें ही किया है ।

* अपकर्षणादि तीनोंकी अपेक्षा स्त्रीवेदके झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका भी स्वामी यही जीव है । किन्तु इसे तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न नहीं कराना चाहिये ।

§ ५६१. एदस्स चेवाणंतरपरूविदसामियस्स इत्थिवेदसंबंधीणि तिण्णि वि पयदजहण्णझीणट्ठिदियाणि वत्तव्वाणि। णवरि तिपलिदोवमिएसु अणुववण्णस्स कायव्वाणि। कुदो? तत्थ णवुंसयवेदस्सेव इत्थिवेदस्स बंधवोच्छेदाभावेण तत्थुप्पायणे फलाणुवलंभादो।

❀ णवुंसयवेदस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५६२. सुगमं।

❀ सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमणुपालियूण तसेसु आगदो। संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो गओ। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता तदो एइंदिए गदो। पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमच्छिदो ताव जाव उवसामयसमयपबद्धा णिग्गलिदा त्ति। तदो पुणो मणुस्सेसु आगदो। पुव्वकोडी देसूणं संजममणुपालियूण अंतोमुहुत्तसेसे मिच्छत्तं गदो। दसवस्ससहस्सिएसु देवेसु उववण्णो। अंतोमुहुत्तमुववण्णेण सम्मत्तं लद्धमंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए त्ति मिच्छत्तं गदो। तदो विकड्ढिदाओ ट्ठिदीओ तप्पाओग्गसव्वरहस्साए मिच्छत्तद्धाए एइंदिएसुववण्णो। तत्थ वि

---

§ ५६१ यह जो अनन्तर जघन्य स्वामी कह आये हैं उसके ही स्त्रीवेदसम्बन्धी तीनों प्रकृत जघन्य झीनस्थितिक द्रव्य कहना चाहिये। किन्तु तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न नहीं हुए जीवके यह सब विधि बतलानी चाहिये, क्योंकि तीन पल्यकी आयुवालोंमें जैसे नपुंसकवेदकी बन्धव्युच्छित्ति पाई जाती है वैसे स्त्रीवेदकी बन्धव्युच्छित्ति नहीं पाई जाती, इसलिये वहाँ उत्पन्न करानेमें कोई लाभ नहीं है।

* नपुंसकवेदके उदयसे झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका स्वामी कौन है ?

§ ५६२ यह सूत्र सुगम है।

* जो जीव सूक्ष्म निगोदियोंमें कर्मस्थिति प्रमाणकाल तक रहकर त्रसोंमें आया है। फिर जिसने अनेक बार संयमासंयम, संयम और सम्यक्त्वको करके चार बार कषायोंका उपशम किया है। फिर एकेन्द्रियोंमें जाकर उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंके गलनेमें लगनेवाले पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक वहाँ रहा। फिर मनुष्योंमें आकर और कुछ कम एक पूर्वकोटि काल तक संयमका पालन करते हुए जब अन्तर्मुहूर्त काल शेष बचा तब मिथ्यात्वमें गया। फिर दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ और उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद सम्यक्त्वको प्राप्त किया तथा जब आयुमें अन्तर्मुहूर्त बाकी बचा तब मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। और वहाँ सम्यक्त्वकी अपेक्षा स्थितियोंको बढ़ाकर तत्प्रायोग्य सबसे जघन्य मिथ्यात्वका काल शेष रहनेपर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ। फिर वहाँ तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ वह

तप्पाओग्गउक्कस्सयं संकिलेसं गदो तस्स पढमसमयएइंदियस्स उदयादो झीणट्ठिदियं ।

§ ५६३ एत्थ सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमणुपालियूणे त्ति वुत्ते सुहुमवणप्फदिकाइएसु जो जीवो सव्वावासयविसुद्धो संतो कम्मट्ठिदिमणुपालियूणागदो त्ति घेत्तव्वं, अण्णहा खविदकम्मंसियत्तविरोहादो । एवमभवसिद्धियपाओग्गजहण्णसंतकम्मं काऊण तसेसु आगदो । ण च तसपज्जायपरिणामो सुहुमणिगोदजोगादो असंखेज्जगुणजोगो त्ति तत्तो णिप्फलो त्ति णासंकणिज्जं संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो गदो इच्चादी भणिदं । संजमासंजमादिगुणसेढिणिज्जराए पडिसमयमसंखेज्जपंचिंदियसमयपबद्धपरिसदणाए एइंदियसंचयस्स गालणेण फलोवलंभादो । ण च एत्थतणसंचयस्स जोगबहुत्तमासंकणिज्जं, तस्स भावे पडि संकिलेसावूरियमेत्तयादो असंखेज्जगुणहीणत्तेण पाहण्णियाभावादो पुणो वि तस्स एइंदिएसु पलिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तकालेण गालणादो च । तदवहु—तदो एइंदिए गदो इच्चादी । एत्थ जदि वि उवसामओ णवुंसयवेदं ण बंधइ, तो वि पुरिसवेदादीणं तत्थ बंधसंभवादो तेसिं णवकबंधस्स गालणट्ठमेसो एइंदिए पवेसिदो । ण तेसिं कम्मसाणमुवसामयसमय-

---

प्रथम समयवर्ती एकेन्द्रिय जीव उदयसे झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका स्वामी है ।

§ ५६३ यहाँ सूत्रमें जो 'सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमणुपालियूण' कहा है सो इसका आशय यह है कि सब आवश्यकोंसे विशुद्ध होता हुआ जो जीव सूक्ष्म वनस्पतिकायिकोंमें कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रह कर बाहर आया है। अन्यथा उसे क्षपितकर्मांश माननेमें विरोध आता है। इस प्रकार यह अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्म करके त्रसोंमें उत्पन्न हुआ। यदि कहा जाय कि सूक्ष्म निगोदियोंके योगसे त्रसपर्यायमें प्राप्त होनेवाला योग असंख्यातगुणा होता है, इसलिये त्रसपर्यायका प्राप्त कराना निष्फल है सो यह बात भी नहीं है। अब इसी बातका ज्ञान करानेके लिये सूत्रमें 'संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो गदो' इत्यादि सूत्र वचन कहा है। प्रत्येक समयमें पंचेन्द्रियोंके असंख्यात समयप्रबद्धोंसे सम्बन्ध रखनेवाली संयमासंयम आदि सम्बन्धी गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा एकेन्द्रिय पर्यायमें हुए संचयको गला देता है। इस प्रकार त्रसपर्यायमें उत्पन्न होनेकी यह सफलता है। यदि कहा जाय कि इस त्रस पर्यायमें संचय होता है वह योगकी बहुलताके कारण बहुत होता है सो ऐसी आशंका करनी भी ठीक नहीं है, क्योंकि यहाँ पर जो प्रत्येक बार संख्यात आवलिप्रमाण समयप्रबद्धोंका उदय होता है उससे यह असंख्यातगुणा हीन होता है, इसलिये प्रकृतमें उसकी प्रधानता नहीं है। दूसरे फिरसे एकेन्द्रियोंमें जाकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा उसे गला देता है। इसप्रकार इसी बातके बतलानेके लिये सूत्रमें 'तदो एइंदिए गदो' इत्यादि वाक्य कहा है। यहाँ पर यद्यपि उपशामक जीव नपुंसकवेदका बन्ध नहीं करता है तो भी पुरुषवेदादिकका यहाँ बन्ध सम्भव होनेसे इनके नवकबन्धके गालन करनेके लिये इसे एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न कराया है। यदि कहा जाय कि न कर्मपरमाणु उप

पवद्धेसु गलिदेसु णवुंसयवेदस्स फलाभावो[1] त्ति आसंकणिज्जं, तेसिमगालणे वज्झमाणवेदिज्जमाणणवुंसयवेदपयडीए उवरि परपयडिसंकमत्थिवुक्कसंकमदव्वस्स बहुत्तप्पसंगादो। तदो तप्परिहरणट्ठमट्ठवस्सब्भंतरणवुंसयवेदसंचयगालणट्ठं च तत्थ पवेसो पयदोवजोगि त्ति सिद्धं।

§ ५६४. अंतदीवयं चेवेदमुवसामयसमयपवद्धणिग्गालणवयणं, तेण संजदासंजदादिसमयपवद्धणिग्गालणट्ठमेसो बहुसो गुणसेढिणिज्जिराकालब्भतरे सुहुमेइंदिएसु पवेसणिज्जो। एत्थ पुण सुत्तावयवे णिरवयवपरूविदावयवभावत्थे एव पदसबंधो कायव्वो—तदो पच्छा एइंदिए गदो सतो ताव अच्छिदो जाव उवसामयसमयपवद्धा गालिदा त्ति। केत्तियकाल ? पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागं, अण्णहा उवसामयसमयपवद्धाणं णिग्गलणाणुववत्तीदो।

§ ५६५. एवं कम्मं हदसमुप्पत्तियं काऊण तत्थतणसंचयगालणट्ठं तदो पुणो मणुस्सेसु आगदो त्ति वुत्तं। तत्थागदस्स वावारविसेसपदुप्पायणट्ठमाह—पुव्वकोडी देसूण सजममणुपालियूण अंतोमुहुत्तसेसे मिच्छत्त गदो। संजमगुणसेढिणिज्जराए तं मणुसभव सहल काऊण सव्वजहण्णंतोमुहुत्तसेसे आउए देवगदिपाओग्गे मिच्छत्तं गदो

शामकके समयप्रवद्धोंके साथ ही गल जाते है, इसलिये इससे नपुसकवेदको कोई लाभ नहीं है सो ऐसी आशका करना भी ठीक नहीं है, क्योकि उन कर्मपरमाणुओंके नहीं गलने पर वधनेवाली नपुसकवेद प्रकृतिमें परप्रकृतिसक्रमणके द्वारा और उदयको प्राप्त हुई नपुंसकवेद प्रकृतिमे स्तिवुक सक्रमणके द्वारा वहुत द्रव्यका प्रसग प्राप्त होता है। इसलिये दोपका परिहार करनेके लिये और आठ वर्षके भीतर नपुसकवेदका जो संचय हुआ है उसे गलानेके लिये एकेन्द्रियोमे प्रवेश कराना प्रकृतमे उपयोगी है यह सिद्ध हुआ।

§ ५६४ सूत्रमें 'उवसामयसमयपवद्धा णिग्गलिदा' यह जो वचन दिया है वह अन्तदीपक है, इसलिये इससे यह ज्ञात होता है कि सयतासयत आदिके समयप्रवद्धोंको गलानेके लिये भी इस जीवको वहुत बार गुणश्रेणिनिर्जरा कालके भीतर सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें प्रवेश कराना चाहिये। किन्तु यहाँ पर सूत्रके इस हिस्सेके सव अवयवोंका भावार्थ कहने पर पदोंका सम्वन्ध इस प्रकार करना चाहिये—इसके वाद उपशामकके समयप्रवद्ध गलने तक यह जीव एकेन्द्रियोंमें रहा। वहाँ कितने काललक रहा यह वतलानेके लिए 'पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण कालतक रहा' यह कहा है। अन्यथा उपशामकके समयप्रवद्ध नहीं गल सकते हैं।

§ ५६५ इस प्रकार कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके एकेन्द्रियोंमें हुए सचयको गलानेके लिये 'तदो पुणो मणुस्सेसु आगदो' यह सूत्रवचन कहा है। फिर मनुष्योंमें आकर जो व्यापार विशेप होता है उसका कथन करनेके लिये 'पुव्वकोडी देसूण सजममणुपालियूण अतोमुहुत्तसेसे मिच्छत्तं गदो' सूत्र वचन कहा है। सयमगुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा उस मनुष्य भवको सफल करके जब सवसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहता है तब देवगतिके योग्य आयुका वन्ध करके मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

१ ता०प्रतौ 'फलाभावादो' इति पाठ ।

वि जत्त होइ। आमरणंतं गुणसेढिणिज्जरमकराविय किमट्ठमेसो मिच्छत्तं णीदो? ण, अण्णहा दसवस्ससहस्सिएसु देवेसु उववज्जावेदुमसक्कियत्तादो। तत्थुप्पायणं च सण्हमइ एइंदिएसुप्पाइय सामित्तविहाणट्ठमणुगंतव्वं। जइ एवं संजदो चेव अंतोमुहुत्तसेसाउओ मिच्छत्तं णेदूण एइंदिएसुप्पाएयव्वो। दसवस्ससहस्सियदेवेसुप्पायण-मणत्थयं, दसवस्ससहस्सब्भंतरसंचयस्स तत्थ संभवेण फलाणुवलंभादो। ण अंतोमुहुत्तमुववण्णेण सम्मत्तं लद्धमिच्चदेण सुत्तावयवेण तस्स परिहारो, त्थिवुक्कसंकमवसेण णवुंसयवेदसंचयस्स दुप्पडिसेहादो त्ति? एत्थ परिहारो वुच्चदे—ण ताव एसो संजदो मिच्छत्तं णेदूण एइंदिएसुप्पाएदुं सक्किज्जइ, तत्थुप्पज्जमाणस्स तस्स तिव्वसंकिलेसेण पुव्वगुणसेढिणिज्जराए थोवयरत्तप्पसंगादो। ण एत्थ वि तहा पसंगो, एयंतपाओग्गमिच्छत्तद्धादो एइंदियपाओग्गमिच्छत्तद्धाए संकिलेसापूरणकालस्स च संखेज्जगुणत्तेण एत्थतणहाणीदो बहुदरहाणीए तत्थुवलंभादो। ण एत्थ देवेसु संचओ

शंका—मरणपर्यन्त गुणश्रेणिनिर्जरा न कराके इसे मिथ्यात्वमें क्यों ले गये हैं?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वमें ले जाये बिना दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न कराना अशक्य होता इसलिये अन्तमें इसे मिथ्यात्वमें ले गये हैं। अतिशीघ्र एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न कराके प्रकृत स्वामित्वका विधान करनेके लिये ही दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न कराया गया है यहाँ ऐसा जानना चाहिये।

शंका—यदि ऐसा है तो संयतको ही अन्तर्मुहूर्त आयुके शेष रहने पर मिथ्यात्वमें ले जाकर और उसके बाद एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न कराना चाहिये। दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न कराना अनर्थक है, क्योंकि देवोंमें उत्पन्न करानेसे दस हजार वर्षके भीतर जो संचय प्राप्त होता है वह उसके बाद एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न कराने पर वहाँ पाया जाता है, इसलिये देवोंमें उत्पन्न करानेसे कोई लाभ नहीं है। यदि कहा जाय कि इससे आगे सूत्रमें जो 'अंतोमुहुत्तमुववण्णो सम्मत्तंलद्ध' इत्यादि कहा है सो इस वचनसे उक्त शंकाका परिहार हो जाता है सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि देवपर्यायमें जो पुरुषवेदका संचय होता है एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर वह संचय स्तिवुकसंक्रमणके द्वारा नपुंसकवेदमें प्राप्त होने लगनेके कारण उसका निषेध करना कठिन है?

समाधान—अब उक्त शंकाका परिहार करते हैं—इस संयतको मिथ्यात्वमें ले जाकर एकेन्द्रियोंमें तो उत्पन्न कराना शक्य नहीं है, क्योंकि जो संयत मिथ्यात्वमें जाकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेवाला है उसके तीव्र संक्लेश पाया जानेके कारण पूर्व गुणश्रेणिनिर्जरा बहुत ही कम प्राप्त होती है।

यदि कहा जाय कि जो संयत मिथ्यात्वमें जाकर देव होनेवाला है उसके भी तीव्र संक्लेशके कारण पूर्व गुणश्रेणिनिर्जरा अति स्वल्प प्राप्त होती है सो यह बात नहीं है, क्योंकि देवगतिके योग्य मिथ्यात्वके कालसे एकेन्द्रियके योग्य जो मिथ्यात्वका काल है वह संख्यातगुणा है और उसके योग्य संक्लेशको प्राप्त करनेमें भी जो काल लगता है वह भी संख्यातगुणा है इसलिये एकेन्द्रियोंके मिथ्यात्वमें गुणश्रेणिनिर्जराकी जितनी हानि होती है उससे देवगतिके मिथ्यात्वमें बहुत हानि पाई जाती है। यदि कहा जाय कि यहाँ देवोंमें अधिक संचय होता है, इसलिये उक्त दोष तो

अहिओ त्ति उत्तदोसो वि, तस्स संखेज्जावलियमेत्तसमयपबद्धपमाणस्स एयसमयगुणसेढिणिज्जराए असंखेज्जदिभागत्तेण पाहण्णियाभावादो। एदेणेव सेसगईसु वि उप्पायणासंका पडिसिद्धा, तत्थुप्पत्तिपाओग्गमिच्छत्तद्धाए बहुत्तदंसणादो। किमट्ठमेसो दसवस्ससहस्सिएसु सम्मत्तं गेण्हाविओ? ण, ओकड्डणाबहुत्तेण अहियारट्ठिदीए सण्हीकरणट्ठं तहाकरणादो। मिच्छाइट्ठिम्मि वि एत्थासती ओकड्डणा बहुई अत्थि, तदो उहयत्थ वि सरिसमेदं फलमिदि णासंकणिज्जं, तत्थ ओकड्डणादो सम्माइट्ठिओकड्डणाए विसोहिपरतताए बहुवयरत्तदंसणादो। तम्हा सुहासियमेदमंतोमुहुत्तमुववण्णेण तेण सम्मत्तं लद्धमिदि। एवमधट्ठिदीए णिज्जरं काऊण अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए त्ति मिच्छत्तं गदो, एइंदिएसुप्पत्तीए अण्णहाणुववत्तीदो मिच्छत्तमेसो णीदो। तत्थ उप्पादो किमट्ठमिच्छिज्जदे चे? ण, एइंदियोववादिणो देवस्स तप्पच्छायदपढमसमए एइंदियस्स च संकिलेसवसेण उक्कड्डणाबहुत्तमोकड्डणोदीरणाणं च थोवत्तमिच्छिय तहाब्भुवगमादो।

बना ही रहता है अर्थात् मिथ्यात्वमें ले जाकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न करानेसे जो दोष प्राप्त होता है वह दोष यहाँ भी बना रहता है सो यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि एक देवके जो संख्यात आवलिप्रमाण समयप्रबद्धोंका संचय होता है वह एक समयमें होनेवाली गुणश्रेणि निर्जराके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे उसकी यहाँ प्रधानता नहीं है। इसीसे शेष गतियोंमें भी उत्पन्न करानेकी आशंकाका निषेध हो जाता है, क्योंकि वहाँ उत्पन्न करानेके योग्य मिथ्यात्वका काल बहुत देखा जाता है।

शंका—इसे दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें ले जाकर सम्यक्त्व किसलिये ग्रहण कराया गया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि अधिक अपकर्षणाके द्वारा अधिकृत स्थितिके सूक्ष्म करनेके लिये वैसा कराया गया है।

शंका—जो अपकर्षण यहाँ सम्यग्दृष्टिके नहीं होता वह मिथ्यादृष्टिके भी बहुत देखा जाता है इसलिये विवक्षित लाभ तो दोनों जगह ही समान है, फिर इसे सम्यग्दृष्टि करानेसे क्या लाभ है?

समाधान—ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि सम्यग्दृष्टिके जो अपकर्षण होता है वह विशुद्धिके निमित्तसे होता है इसलिये वह मिथ्यादृष्टिके होनेवाले अपकर्षणसे बहुत देखा जाता है।

इसलिये सूत्रमें जो 'अंतोमुहुत्तमुववण्णेण तेण सम्मत्तं लद्धं' यह कहा है सो उचित ही कहा है। इस प्रकार उक्त जीव अधःस्थितिकी निर्जरा करता हुआ जब जीवनमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रह जाय तब मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ, क्योंकि अन्यथा एकेन्द्रियोंमें उत्पत्ति नहीं बन सकनेके कारण इसे मिथ्यात्वमें ले गये हैं।

शंका—ऐसे जीवका अन्तमें एकेन्द्रियोंमें उत्पाद किसलिये स्वीकार किया गया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि जो देव एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है उसके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें और जो एकेन्द्रिय एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है उसके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें संक्लेशके कारण उत्कर्षण बहुत होता है और अपकर्षण तथा उदीरणा

एदस्स चेव जाणावणट्ठमिदमाह—तदो विकड्डिदाओ ट्ठिदीओ त्ति । सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदीओ मिच्छत्तसहगदतिव्वयरसंकिलेसवसेण सम्माइट्ठिबंधादो वियड्डिदाओ त्ति दूरमुक्खिविय पबद्धाओ संतट्ठिदीओ च विवक्खियट्ठिदीए सह बज्झमाणाओ दूरयरमुक्कड्डिय णिक्खित्ताओ त्ति वुत्तं होइ । तप्पाओग्गसव्वरहस्साए मिच्छत्तद्धाए एत्थ सव्वरहस्सगहणेण ओघजहण्णमिच्छत्तकालस्स गहणं पसज्जइ त्ति तप्पडिसेहट्ठं तप्पाओग्गविसेसणं कदं । एइंदियुप्पत्तिपाओग्गसव्वजहण्णमिच्छत्तकालेणे त्ति भणिदं होइ । एवमेत्तिएण कालेण सञ्जमाए उक्कस्सट्ठिदिबंधाविणाभाविणीए वावदो पयदगोवुच्छं थूलीकरिय एइंदिएसु उववण्णो, अण्णहा अइजहण्णणवुंसयवेदोदयासंभवादो । एत्थुद्देसे वि पयदोवजोगिपयत्तविसेसपदुप्पायणट्ठमाह—तस्स वि तप्पाओग्गउक्कस्सयं संकिलेसं गदो त्ति । तस्स वि उक्कस्सयसंकिलेसं किमिदि णीदो ? उदीरणाबहुत्तणिरायरणट्ठं ।

§ ५६६ एवमेत्तिएण उवक्कमेणोवलक्खियस्स तस्स पढमसमयएइंदियस्स णवुंसयवेदसंबंधी जहण्णपदेसुदयादो झीणट्ठिदियं होइ । एत्थ विदियसमयप्पहुडि उवरि गोवुच्छविसेसहाणिवसेण जहण्णसामित्तं गेण्हामो त्ति भणिदे ण, तहा घेप्पइ,

---

कम होती है इसलिये ऐसा स्वीकार किया गया है ।

इस प्रकार इसी बातके बतानेके लिये 'तदो विकड्डिदाओ ट्ठिदीओ' यह सूत्रवचन कहा है । मिथ्यात्वके साथ प्राप्त हुए अति तीव्र संक्लेशरूप परिणामोंके कारण सब कर्मोंकी स्थितियोंको सम्यग्दृष्टिके बन्धसे बढ़ाकर अर्थात् बहुत दूर निक्षेप करके बाँधा और विवक्षित स्थितिके साथ जो सत्कर्मकी स्थितियाँ विद्यमान हैं उन्हें बहुत दूर उत्कर्षित करके निक्षिप्त किया यह उक्त सूत्रवचनका तात्पर्य है । 'तप्पाओग्गसव्वरहस्साए मिच्छत्तद्धाए' इस सूत्र वचनमें जो 'सव्वरहस्स' पदका ग्रहण किया है सो इससे ओघ जघन्य मिथ्यात्वके कालका ग्रहण प्राप्त होता है, इसलिए उसका निषेध करनेके लिये 'तप्पाओग्ग' विशेषण दिया । इससे यहाँ एकेन्द्रियोंमें उत्पत्तिके योग्य सबसे जघन्य काल विवक्षित है यह तात्पर्य निकलता है । इस प्रकार इतने कालके द्वारा उत्कृष्ट स्थितिबन्धके अविनाभावी संक्लेशमें लगा हुआ वह जीव प्रकृत गोपुच्छाको स्थूल करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ अन्यथा अत्यन्त जघन्य नपुंसकवेदका उदय नहीं बन सकता है । इस प्रकार एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर भी वह जीव प्रकृतमें उपयोगी पड़नेवाले जिस प्रयत्नविशेषको करता है उसका कथन करनेके लिये 'तस्स वि तप्पाओग्गउक्कस्सयं संकिलेसं गदो' यह सूत्रवचन कहा है ।

शंका—एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर भी इस जीवको उत्कृष्ट संक्लेश क्यों प्राप्त कराया गया ?

समाधान—जिससे इसके बहुत उदीरणा न हो सके, इसलिये इसे उत्कृष्ट संक्लेश प्राप्त कराया गया है ।

§ ५६६. इस प्रकार इतने साधनोंसे उपलक्षित प्रथम समयवर्ती वह एकेन्द्रिय जीव नपुंसकवेदके उदयसे झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका स्वामी होता है । यहाँ पर कितने ही लोग दूसरे समयसे लेकर ऊपर गोपुच्छाविशेषकी हानि होनेके कारण जघन्य स्वामित्वको प्राप्त

विदियादिसमएसु संकिलेससव्वहाणिदंसणादो। तम्हा एत्थेव सामित्तं णिरवज्जमिदि सिद्धं।

❀ इत्थिवेदस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं ?

§ ५६७. कस्से त्ति अहियारे संबंधो कायव्वो, अण्णहा सुत्तत्थस्स असंपुण्णत्तप्पसंगादो। सेसं सुगमं।

❀ एसो चेव णवुंसयवेदस्स पुव्वं परूविदो जाधे अपच्छिममणुस्सभवग्गहणं पुव्वकोडी देसूणं संजममणुपालियूण अंतोमुहुत्तसेसे मिच्छत्तं गओ। तदो वेमाणियदेवीसु उववण्णो अंतोमुहुत्तद्धमुववण्णो उक्कस्ससंकिलेसं गदो। तदो विकड्डिदाओ[1] ट्ठिदीओ उक्कड्डिदा कम्मंसा जाधे तदो अंतोमुहुत्तद्धमुक्कस्सइत्थिवेदस्स ट्ठिदिं बंधियूण पडिभग्गो जादो। आवलियपडिभग्गाए तिस्से देवीए इत्थिवेदस्स उदयादो जहण्णयं झीणट्ठिदियं।

करनेके लिये कहते हैं परन्तु तत्त्वतः वैसा ग्रहण करना शक्य नहीं है, क्योंकि दूसरे आदि समयोंमें पूरा सक्लेश न रहकर उसकी हानि देखी जाती है, इसलिये निर्दोष रीतिसे जघन्य स्वामित्व प्रथम समयमें ही प्राप्त होता है यह बात सिद्ध होती है।

विशेषार्थ—यहाँ पर उदयकी अपेक्षा नपुसकवेदके झीनस्थितिवाले द्रव्यका जघन्य स्वामित्व किस प्रकारके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें होता है इसका विशेष खुलासा टीकामें किया ही है। उसका आशय इतना ही है कि उक्त क्रमसे जो जीव आकर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होता है उसके नपुंसकवेदका द्रव्य उत्तरोत्तर घटता चला जाता है और इस प्रकार अन्तमें एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने पर प्रथम समयमें नपुसकवेदका उदयगत सबसे जघन्य द्रव्य प्राप्त हो जाता है।

❀ उदयकी अपेक्षा स्त्रीवेदके झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका स्वामी कौन है।

§ ५६७ इस सूत्रमें 'कस्स' इस पदका अधिकार होनेसे सम्बन्ध कर लेना चाहिये, अन्यथा सूत्रका अर्थ असपूर्ण रहेगा। शेष कथन सुगम है।

❀ नपुंसकवेदकी अपेक्षा पहले जो जीव विवक्षित था वही जब अन्तिम मनुष्य भवको ग्रहण करके और कुछ कम एक पूर्वकोटि काल तक सयमका पालन करके अन्तर्मुहूर्त कालके शेष रहने पर मिथ्यात्वमें गया। फिर वैमानिक देवियोंमें उत्पन्न हुआ। फिर वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त काल बाद उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ जिससे उसने वहाँ सम्भव उत्कृष्ट स्थितिबन्ध किया। और जब यह क्रिया की तभी प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मोंका उत्कर्षण किया। फिर उस समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करके उत्कृष्ट संक्लेशसे निवृत्त हुआ। इस प्रकार निवृत्त हुए उस देवीको जब एक आवलि काल हो गया तब वह उदयकी अपेक्षा स्त्रीवेदके झीनस्थितिवाले द्रव्यका जघन्य स्वामी है।

१ विकड्डण ति उक्कड्डणं कर्म प्र० उदय गा० २२।

§ ५६८ एदस्स सामित्तसुत्तस्स अत्थविवरणं कस्सामो—एसो चेव जीवो णवुंसयवेदस्स सामित्तेण पुव्वपरूविदो समणंतरपरूविदासेसलक्खणोवलक्खिओ जाधे सामित्तकालं पेक्खियूण अपच्छिमं मणुस्सभवग्गहणं देसूणपुव्वकोडिपमाणं पुव्वविहाणेण गुणसेढिणिज्जराविणाभाविसंजममणुपालियूण अंतोमुहुत्तसेसे सगाउए मिच्छत्तं गदो। एत्थ सव्वस्स वि पुव्वपरूवणादो णत्थि णाणत्तं। णवरि किमट्ठमेसो मिच्छत्तं णीदो त्ति पुच्छिदे इत्थिवेदएसुप्पायणट्ठमिदि वत्तव्वं, अण्णहा तत्थुप्पत्तीए असंभवादो। ण तत्थुप्पादो णिरत्थओ, पयदसामित्तस्स सोदएण विणा विहाणाणुववत्तीदो। तमेवाह— तदो वेमाणियदेवीसु उववण्णो त्ति। सेसगइपरिहारेण देवगदीए चेव उप्पायणं गुणसेढिणिज्जरणट्ठं अण्णगइपाओग्गमिच्छत्तद्धाए बहुत्तेण तस्स विणासप्पसंगादो। अपज्जत्तद्धाए च थोवीकरणट्ठं, अण्णहा तत्थ बहुदव्वसंचयाणुववत्तीदो। भवणादिदेवीसु उप्पाइय गेण्हामो, विसेसाभावादो त्ति णासंकणिज्जं, तत्थुप्पज्जमाणजीवस्स पुव्वमेव एत्तो तिव्वसंकिलेसाऊरणेण गुणसेढिणिज्जराअबहुत्तभावावत्तीदो। तम्हा तत्थोववण्णस्स

---

§ ५६८ अब इस स्वामित्वविषयक सूत्रके अर्थका खुलासा करते हैं—जिस जीवका पहले नपुंसकवेदके स्वामित्वरूपसे कथन कर आये हैं तदनन्तर पूर्वमें कहे गये सब लक्षणोंसे युक्त वही जीव जब स्वामित्वकालकी अपेक्षा अन्तिम मनुष्यभवको ग्रहण करके और पूर्व विधिके अनुसार गुणश्रेणिनिर्जराके अविनाभावी संयमका कुछ कम एक पूर्वकोटि काल तक पालन करके अपनी आयुमें अन्तर्मुहूर्त बाकी रहने पर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। यहाँ सभी जगह नपुंसकवेद सम्बन्धी पूर्व प्ररूपणासे कोई भेद नहीं है।

शंका—इस जीवको मिथ्यात्वमें किसलिये ले गये हैं ?

समाधान—स्त्रीवेदियोंमें उत्पन्न करानेके लिये इसे मिथ्यात्वमें ले गये हैं अन्यथा इसकी उत्पत्ति स्त्रियोंमें नहीं हो सकती।

यदि कहा जाय कि इस जीवको मिथ्यात्वमें उत्पन्न कराना निरर्थक है सो यह बात भी नहीं है, क्योंकि स्वोदयके बिना प्रकृत स्वामित्वका विधान करना नहीं बनता है और स्त्रीवेदका उदय तब हो सकता है जब इसे मिथ्यात्वमें ले जाया जाय इसलिये इसे मिथ्यात्वमें उत्पन्न कराया है। इसी बातको बतलानेके लिये 'तदो वेमाणियदेवीसु उववण्णो' पद कहा है। इसे देवगतिमें ही क्यों उत्पन्न कराया है इस प्रश्नका उत्तर देने के लिए आचार्य कहते हैं कि गुणश्रेणिजन्य लाभकी रक्षा करनेके लिये शेष गतियोंको छोड़कर देवगतिमें ही उत्पन्न कराया है, क्योंकि अन्य गतिके योग्य मिथ्यात्वका काल बहुत होनेसे वहाँ गुणश्रेणिजन्य लाभका विनाश प्राप्त होता है। दूसरे अपर्याप्त कालको कम करनेके लिये भी देवोंमें उत्पन्न कराया है, अन्यथा वहाँ बहुत द्रव्यका संचय प्राप्त होता है। यदि कहा जाय कि भवनवासिनी आदि देवियोंमें उत्पन्न कराके जघन्य स्वामित्व प्राप्त कर लेंगे क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है सो ऐसी आशंका करनी भी ठीक नहीं है, क्योंकि वहाँ उत्पन्न होनेवाले ऐसे जीवके पहलेसे ही तीव्र संक्लेश पाया जाता है, इसलिये इसके गुणश्रेणिजन्य बहुत लाभ नहीं बन सकता है। अतः भवनवासिनी देवियोंमें उत्पन्न न कराके वैमानिक देवियोंमें उत्पन्न कराया

तस्य व्यापारविशेषप्रतिपादनार्थमाह—अतोमुहुत्तद्धमुववण्णो इत्यादि । अत्रान्तर्मुहूर्त्तमपर्याप्तकाले संक्लेशोत्कर्षस्यासम्भवात्पर्याप्तकालविषयः सक्लेशोत्कर्षः प्ररूपितः । तथा परिणतः किंप्रयोजनमित्याशङ्क्याह—तदो इत्यादि । तदो तम्हा सकिलेसादो हेउभूदादो वियड्डिदाओ सव्वेसिं कम्माणं ट्ठिदीओ अंतोकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिवधादो वि दूरमुकड्डिय दीहावाहाए पवद्धाओ त्ति भणिद होइ । जाधे एवमुक्कस्सओ संकिलेसो आवूरिदो ताधे चेव उक्कड्डणाकमेण चिराणसतकम्मपदेसा वज्झमाणणवकवंधुक्कस्सट्ठिदीए उवरि उक्कड्डिय णिक्खित्ता, ट्ठिदिवंधस्सेव उक्कड्डणाए वि तदण्णयवदिरेयाणुविहाणत्तादो । ण च उक्कड्डणावहुत्ताविणाभावी उक्कस्सावाहापडिवद्धो उक्कस्सओ ट्ठिदिवंधो णिरत्थओ, णिरुद्धट्ठिदिपदेसाणमुक्कड्डणाए विणा सण्हीभावाणुप्पत्तीदो । एसो सव्वो वि वावारविसेसो अहियारट्ठिदिमावाहाब्भतरे पवेसिय सकिलेसपरिणदपढमसमए परूविदो । तदो प्पहुडि अंतोमुहुत्तद्धमुक्कस्समित्थिवेदस्स ट्ठिदिं वंधियूण पडिभग्गा जादा त्ति ।

§ ५६९. एत्थतणउक्कस्ससद्दो अतोमुहुत्तद्धाए ट्ठिदीए च विसेसणभावेण संबधेयव्वो । तेण सव्वुक्कस्समंतोमुहुत्तकाल संकिलेसमावूरिय पण्णारससागरोवमकोडाकोडिमेत्तमित्थिवेदस्सुक्कस्सट्ठिदिं वंधिदूण एत्तिय कालमुक्कड्डणाए पयदणिसेय जहण्णी-

है । इस प्रकार जो जीव वैमानिक देवियोंमें उत्पन्न हुआ है उसके व्यापारविशेषका कथन करनेके लिये 'अतोमुहुत्तद्धमुववण्णो' इत्यादि कहा है । यहाँ अपर्याप्त कालके भीतर अन्तर्मुहूर्त तक सक्लेशका उत्कर्ष नहीं हो सकता, इसलिये पर्याप्त कालविषयक सक्लेशका उत्कर्ष कहा है । इस प्रकार सक्लेशरूपसे परिणत करानेका क्या प्रयोजन है ऐसी आशका होने पर 'तदो' इत्यादि कहा है । आशय यह है कि इस सक्लेशके कारण सब कर्मो की स्थितियोको वढ़ाया अर्थात् जिन कर्मोंका स्थितिबन्ध अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण हो रहा था उनका वड़े आवाधाके साथ बहुत अधिक स्थितिको बढ़ाकर बन्ध किया । और जब इस प्रकारका उत्कृष्ट सक्लेश हुआ तब उत्कर्षणके क्रमानुसार प्राचीन सत्तामें स्थित कर्मपरमाणुओंको बँधनेवाले नवकबन्धकी उत्कृष्ट स्थितिके ऊपर उत्कर्षित करके निक्षिप्त किया, क्योंकि स्थितिबन्धके समान उत्कर्षणका भी सक्लेशके साथ अन्वय-व्यतिरेकसम्बन्ध पाया जाता है । यदि कहा जाय कि प्रकृतमें बहुत उत्कर्षणका अविनाभावी और उत्कृष्ट आबाधासे सम्बन्ध रखनेवाला उत्कृष्ट स्थितिबन्ध निरर्थक है सो यह बात भी नहीं है, क्योंकि विवक्षित स्थितिके कर्मपरमाणु उत्कर्षणके विना सूक्ष्म नहीं हो सकते, इसलिये बहुत उत्कर्षण और उत्कृष्ट स्थितिबन्ध दोनों सार्थक हैं । अधिकृत स्थितिको आबाधाके भीतर प्रवेश कराके सक्लेशसे परिणत हानेके प्रथम समयमें इस सब व्यापारविशेषका कथन किया है । फिर यहाँसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक स्त्रीवेदकी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कराके फिर उसे उत्कृष्ट सक्लेशसे निवृत्त कराया है ।

§ ५६९ यहाँ सूत्रमें जो उत्कृष्ट शब्द आया है सो उसका अन्तर्मुहूर्त काल और स्थिति इन दोनोंके साथ विशेषणरूपसे सम्बन्ध करना चाहिये । इससे यह अर्थ लेना चाहिये कि सर्वोत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त काल तक सक्लेशको बढाकर उसके द्वारा पन्द्रह कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण स्त्रीवेदका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करके और इतने ही काल तक उत्कर्षण द्वारा प्रकृत निषेकको जघन्य

करिय संकिलेसादो पडिभग्गो जादो त्ति घेत्तव्वं, अंतोमुहुत्तादो, उवरि उक्कस्सट्ठिदिबंधपाओग्गुक्कस्ससंकिलेसेणावट्ठाणाभावादो । किमेत्थेव पडिभग्गपढमसमए जहण्णसामित्तं दिज्जइ ? न, इत्याह—आवलियपडिभग्गाए तिस्से देवीए इच्चादि । उदिण्णणिसेयस्स पयत्तेण जहण्णीकयत्तादो एत्तो तस्स समयूणावलियमेत्तगोवुच्छविसेसाणं हाणिदंसणादो च । जइ वि एत्थ ओकड्डणाए संभवो तो वि उदयावलिय बाहिरे चेव ओकड्डिदपदेसग्गस्स णिक्खेवो त्ति भावत्थो । असंखेज्जलोगपडिभागियं दव्वमासंकणिज्जं, तस्स दोगुणहाणिपडिभागियगोवुच्छविसेसादो असंखेज्जगुणहीणस्स पाहण्णियाभावादो ।

करके संक्लेशसे निवृत्त हुआ क्योंकि उत्कृष्ट संक्लेशका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। इसके बाद फिर उत्कृष्ट स्थितिबन्धके योग्य उत्कृष्ट संक्लेशके साथ रहना नहीं बन सकता है। क्या यहीं प्रतिभग्न होने के प्रथम समयमें जघन्य स्वामित्व दिया गया है। नहीं, इस प्रकार इसी बातके बतलानेके लिये 'आवलियपडिभग्गाए तिस्से देवीए' इत्यादि कहा है। प्रतिभग्न होनेके समयसे लेकर एक आवलिप्रमाण कालके अन्तमें जघन्य स्वामित्व देनेका कारण यह है कि वहाँका निषेक प्रयत्नसे जघन्य किया गया है। दूसरे प्रतिभग्न होनेके समयके निषेकसे उसमें एक समय कम एक आवलिप्रमाण गोपुच्छाविशेषोंकी हानि देखी जाती है। यद्यपि यहाँ अपकर्षणकी सम्भावना है तो भी अपकर्षणको प्राप्त हुए कर्मपरमाणुओंका निक्षेप अधिकतर उदयावलिके बाहर ही होता है यह इसका भावार्थ है। यदि कहा जाय कि प्रकृतमें स्त्रीवेद उदयवाली प्रकृति होनेसे अपकर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यमें असंख्यात लोकका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतना द्रव्य तो इस प्रकृतिके उदयावलिके भीतर ही प्राप्त होता है सो ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है क्योंकि दो गुणहानि अर्थात् निषेकहारका भाग देनेसे जो गोपुच्छविशेष प्राप्त होता है उससे उक्त अपकर्षित द्रव्य असंख्यातगुणा हीन होता है, इसलिये उसकी प्रकृतमें प्रधानता नहीं है।

विशेषार्थ—यहाँ पर उदयकी अपेक्षा स्त्रीवेदके झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका स्वामी बतलाया है सो और सब विधि तो नपुंसकवेदके स्वामित्वके समान है किन्तु अन्तमें मनुष्यभवके बाद प्रक्रिया बदल जाती है। नपुंसकवेदके प्रकरणमें जैसे इस जीवको मनुष्यमें पैदा करानेके बाद फिर दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें ले गये और फिर वहाँसे एकेन्द्रियोंमें ले गये वैसा यहाँ न करके इस जीवको मनुष्य भवके बाद देवियोंमें उत्पन्न कराना चाहिये। फिर अन्तर्मुहूर्तके बाद जीवका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध और संक्लेश कराना चाहिये। फिर अन्तर्मुहूर्तमें उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे निवृत्त होने पर एक आवलि कालके अन्तमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व कहना चाहिये। इस प्रकरणके अन्तमें टीकामें एक शंका उठाई गई है जिसका भाव यह है कि उत्कृष्ट संक्लेशसे निवृत्त होनेके प्रथम समयमें प्रस्तुत जघन्य स्वामित्व न कहकर जो उस समयसे लेकर एक आवलिके अन्तमें जघन्य स्वामित्व कहा है सो ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि प्रति समय जो उपरितन स्थितिमें स्थित द्रव्यका अपकर्षण होता है उसके कारण एक आवलिके अन्तिम समयमें स्थित द्रव्यका प्रमाण प्रथम समयमें स्थित द्रव्यके प्रमाणसे अधिक हो जाता है ? इस शंकाका समाधान दो प्रकारसे किया गया है। समाधानमें पहली बात तो यह बतलाई गई है कि अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप उदयावलिमें न होकर उदयावलिके बाहर होता है इसलिए उदयावलिके अन्तिम समयमें स्थित द्रव्यका प्रमाण प्रथम समयमें स्थित द्रव्यके प्रमाणसे

❀ अरदि सोगाणमोकड्डणादितिगझीणट्ठिदियं जहण्णयं कस्स ?

§ ५७०. सुगम ।

❀ एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो । संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण तिण्णि वारे कसाए उवसामेयूण एइंदिए गदो । तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमच्छियूण जाव उवसामयसमयबद्धा गलंति तदो मणुस्सेसु आगदो । तत्थ पुव्वकोडी देसूणं संजममणुपालियूण कसाए उवसामेयूण उवसंतकसाओ कालगदो देवो तेत्तीससागरोवमिओ जादो । जाधे चेय हस्स रईओ ओकड्डिदाओ उदयादिणिक्खित्ताओ अरदि-सोगा ओकड्डित्ता

अधिक नहीं हो सकता । पर इस उत्तर पर यह शंका होती है कि यह नियम तो अनुदयवाली प्रकृतियोंके सम्बन्धमें है उदयवाली प्रकृतियोंके सम्बन्धमें नहीं, क्योंकि उदयवाली प्रकृतियोंमें अपकर्षित द्रव्यका निक्षेप उदय समयसे प्राप्त होता है, इसलिये पूर्वोक्त शंकासे मूल शंकाका निराकरण न होकर वह पूर्ववत् खडी रहती है, इसलिये इस अन्तर्वर्ती शंकाको ध्यानमें रखकर समाधानमें दूसरी बात यह कही गई है कि इस प्रकार अपकर्षण होकर जिस द्रव्यका उदयावलिमें निक्षेप होता है वह द्रव्य एक गोपुच्छविशेषके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होता है, इसलिये उसकी यहाँ प्रधानता नहीं है । असंख्यात लोकका भाग देनेपर जो एक भागप्रमाण द्रव्य प्राप्त होता है उतने अपकर्षित द्रव्यका उदयावलिके अन्दर निक्षेप होता है । यह तो अपकर्षित द्रव्यका प्रमाण है । तथा दो गुणहानि आयामका भाग देनेपर गोपुच्छविशेष अर्थात् चयका प्रमाण प्राप्त होता है । सर्वत्र एक गुणहानिका काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इससे स्पष्ट है कि एक गोपुच्छविशेषसे उदयावलिमें प्राप्त होनेवाले अपकर्षित द्रव्यका प्रमाण असंख्यातगुणा हीन होता है, इसलिये वह यहाँ प्रधान नहीं है । यही कारण है कि उत्कृष्ट संक्लेशसे निवृत्त होनेके प्रथम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व न कहकर एक आवलिकालके अन्तिम समयमें कहा है ।

❀ अपकर्षण आदि तीनकी अपेक्षा अरति और शोकके झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका स्वामी कौन है ।

§ ५७० यह सूत्र सुगम है ।

❀ जो जीव एकेन्द्रियोंके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें उत्पन्न हुआ । फिर संयमासंयम और संयमको अनेक बार प्राप्त करके और तीन बार कषायोंका उपशम करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । वहाँ उपशामकके समयप्रबद्धोंके गलनेमें लगनेवाले पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक रहा । फिर आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहाँ कुछ कम एक पूर्वकोटि कालतक संयमका पालन करके और कषायोंको उपशमा कर उपशान्तकषाय गुणस्थानको प्राप्त हुआ । फिर मरकर तेतीस सागरकी आयुवाला देव हुआ । और जब देव हुआ तब हास्य और रतिका अपकर्षण करके उनका उदय समयसे निक्षेप किया तथा अरति और शोकका अपकर्षण करके उनका

उदयावलियबाहिरे णिक्खित्ता। से काले दुसमयदेवस्स एया ट्ठिदी अरइ-सोगाणमुदयावलियं पविट्ठा ताधे अरदि-सोगाणं ओकड्डणादि तिण्हं पि झीणट्ठिदियं।

§ ५७१ एत्थ पंचिंदियकम्मेण जहण्णएणे त्ति उत्ते अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णसंतकम्मस्स गहणं कायव्वं, दोण्हमेदेसिं भेदाभावादो। सेसावयवा बहुसो परूविदत्थादो सुगमा। णवरि तिण्णिवारे कसाए उवसामेयूणे त्ति वयणं चउत्थकसायउवसामणवारस्स विसेसियपरूवणट्ठं। चउत्थवारे कसाए उवसामेयूण उवसंतकसाओ कालगदो देवो तेत्तीससागरोवमिओ जादो त्ति भणंतस्साहिप्पाओ उवसमसेढीए कालगदो अहमिंददेवेसु च उप्पज्जइ, अण्णत्थुक्कस्ससुक्कलेस्साए असंभवादो त्ति। जदि जाए लेस्साए परिणदो कालं करेइ तिस्से अत्थ संभवो, तत्थेव णियमेणुप्पज्जइ, ण लेस्संतरविसईकए विसए त्ति। कुदो एस णियमो? सहावदो। ताधे चेव तदुप्पण्णपढमसमए हस्स-रदीओ ओकड्डिदाओ उदयादि णिक्खित्ताओ त्ति एदेण देवेसुप्पण्णपढमसमयप्पहुडि अंतोमुहुत्तकालं हस्स-रदीणं

उदयावलिके बाहर निक्षेप किया। तदनन्तर इस देवके दूसरे समयमें स्थित होनेपर अरति और शोककी एक स्थिति जब उदयावलिमें प्रवेश करती है तब यह जीव अपकर्षण आदि तीनकी अपेक्षा अरति और शोकके झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका स्वामी है।

§ ५७१ यहां सूत्रमें 'जो पंचिंदियकम्मेण जहण्णएण' कहा है सो इससे अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्मका ग्रहण करना चाहिये क्योंकि एकेन्द्रियोंके योग्य जघन्य सत्कर्म और अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्म इन दोनोंमें कोई भेद नहीं है, दोनोंका एक ही अर्थ है। सूत्रके शेष अवयवोंका अनेक बार व्याख्यान किया है इसलिये वे सुगम हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि चौथी बार कषायके उपशामनाके सम्बन्धमें विशेष वक्तव्य होनेसे सूत्रमें 'तिण्णिवारे कसाए उवसामेयूण' यह वचन कहा है। फिर कुछ आगे चलकर सूत्रमें 'चउत्थवारे कसाए उवसामेयूण उवसंतकसाओ कालगदो देवो तेत्तीससागरोवमिओ जादो' जो यह कहा है सो ऐसा कहनेका यह अभिप्राय है कि उपशमश्रेणिमें मरकर यह अहमिन्द्र देवोंमें उत्पन्न होता है, क्योंकि अन्यत्र उत्कृष्ट शुक्ललेश्याकी प्राप्ति असम्भव है। यह निश्चित है कि मरते समय पाई जानेवाली लेश्या जहां सम्भव होती है मरकर जीव नियमसे वहीं उत्पन्न होता है। किन्तु दूसरी लेश्याके विषयभूत स्थानमें नहीं उत्पन्न होता।

शंका—यह नियम किस कारणसे है ?

समाधान—स्वभावसे।

फिर इसके आगे सूत्रमें जो 'ताधे चेव तदुप्पण्णपढमसमए हस्सरदीओ ओकड्डिदाओ उदयादिणिक्खित्ताओ' यह कहा है सो इससे यह ज्ञापित किया है कि देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त कालतक नियमसे हास्य और रतिका ही उदय होता है। तथा फिर

चेव णियमेणुदयो त्ति जाणाविदं। अरदि-सोगा ओकड्डित्ता उदयावलियबाहिरे णिक्खित्ता त्ति एदेण वि दोण्हमेदेसिमुदयस्स तत्थच्चंताभावो सूचिदो, अण्णहा उदयावलियबाहिरे णिक्खेवणियमाभावेण असंखेज्जलोगपडिभागेणुदयावलियब्भंतरे णिसित्तदव्वं घेत्तूण हस्स-रईणं व जहण्णसामित्तं होज्ज।

§ ५७२. एवमुदयाभावेणुदयावलियबाहिरे ओकड्डिय एयगोवुच्छायारेण णिक्खित्ताणमरइ-सोगाण से काले दुसमयदेवस्स एया ट्ठिदी उदयावलिय पविट्ठा, हेट्ठा एगसमयस्स गलणादो। ताधे तेसिं जहण्णयमोकड्डुणादितिण्हं पि झीणट्ठिदिय होइ, आवलियपविट्ठेयणिसेयस्स तत्तो झीणट्ठिदियत्तेण गहणादो। एत्थुवरि सामित्ता-संकाए णत्थि संभवो, तत्थ समयं पडि णिसेयवुड्ढिं मोत्तूण जहण्णभावाणुववत्तीदो। एत्थ के वि आइरिया अत्थसबंधमवलंबमाणा भणंति—जहा अंतरकदपढमसमयप्पहुडि समयूणावलियमेत्तद्धाण गंतूण रइ-सोयाणं पढमट्ठिदिं गालिय काल करिय देवेसु-

---

सूत्रमें 'ओकड्डित्ता उदयावलियबाहिरे णिक्खित्ता' जो यह कहा है सो इस वचनके द्वारा यह सूचित किया है कि इन दोनोंका उदय वहा अत्यन्त असम्भव है। यदि ऐसा न माना जाय तो उदयावलिके बाहर ही इनके द्रव्यके निक्षेपका नियम न रहनेसे असख्यात लोकप्रमाण प्रतिभागके अनुसार उदयावलिके भीतर निक्षिप्त हुए द्रव्यकी अपेक्षा हास्य और रतिके समान इनका भी जघन्य स्वामित्व हो जाता। यत हास्य और रतिके समान इनका जघन्य स्वामित्व नहीं बतलाया, इससे ज्ञात होता है कि देवोंमें उत्पन्न होनेपर अन्तर्मुहूर्त कालतक अरति और शोकका उदय न होकर नियमसे हास्य और रतिका ही उदय होता है।

§ ५७२ इस प्रकार उदय न होनेसे अपकर्षित करके एक गोपुच्छाके आकाररूपसे उदयावलिके बाहर निक्षिप्त हुए अरति और शोककी एक स्थिति तदनन्तर द्वितीय समयवर्ती देवके उदयावलिमें प्रविष्ट होती है, क्योंकि देवके प्रथम समयसे द्वितीय समयवर्ती हो जानेके कारण उदयावलिमें नीचे एक समय गल गया है। तब अपकर्षणादि तीनोंकी अपेक्षा अरति और शोकके झीनस्थितिवाले द्रव्यका जघन्य स्वामी होता है, क्योंकि यहा पर उदयावलिके भीतर प्रविष्ट हुआ एक निषेक अपकर्षणादिकी अपेक्षा झीनस्थितिरूपसे ग्रहण किया गया है। यदि कहा जाय कि प्रकृतमें ऊपर अर्थात् देवपर्यायके तृतीय आदि समयोंमें प्रकृत स्वामित्व सम्भव है सो ऐसी आशका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि वहाँ प्रत्येक समयमें एक एक निषेककी वृद्धि होती रहती है, इसलिये जघन्यपना नहीं बन सकता है। आशय यह है कि जैसे प्रकृत अहमिन्द्रके द्वितीय समयमें अरति और शोकका उदयावलिके भीतर एक निषेक था वह स्थिति अगले समयोंमें नहीं रहती है। किन्तु तीसरे समयमें उदयावलिमें दो निषेक हो जाते हैं, चौथे समयमें तीन निषेक हो जाते हैं। इस प्रकार उदयावलिमें उत्तरोत्तर निषेकोंकी वृद्धि होनेसे दूसरे समयके सिवा अन्यत्र प्रकृत जघन्य स्वामित्व नहीं प्राप्त होता।

शका—प्रकरणवश कितने ही आचार्य यहाँ पर इस प्रकार कथन करते हैं कि जैसे अन्तर करनेके बाद प्रथम समयसे लेकर एक समय कम एक आवलिप्रमाण स्थान जाने पर रति और शोककी प्रथम स्थितिको गलानेके बाद मरकर देवोंमें उत्पन्न कराने पर लाभ दिखाई

पज्जवट्ठिदे जादो दीसइ। तं कधं? एत्थेव कालं काऊण देवेसुप्पण्णपढमसमए अंतरदीहपमाणं बहुअं होइ दीहमंतरं च पूरेमाणेण गोवुच्छाओ सण्हीकरिय संछुब्भंति, अंतरट्ठिदीसु विहज्जिय तदावूरणट्ठमोकड्डिददव्वस्स पदणादो। तम्हा एवं णिसिंचिय णट्ठिदविदियसमए देवस्स उदयावलियब्भंतरपविट्ठेयणिसेयदव्वमोकड्डणादितिण्हं पि जहण्णझीणट्ठिदियं होइ। उवसंतकसाओ पुण कालं काऊण जइ तत्थुप्पज्जइ तो अंतरदीहपमाणं थोवं होइ, हेट्ठदो चेव बहुअस्स कालस्स गालणादो। तदो थोवंतरे पूरिज्जमाणे अंतरणिसेगा थोवा होऊण चिट्ठंति, पुव्वुत्तदव्वस्स एत्थेव संकुडिय पदणादो त्ति। एदमसंबद्धं, कुदो? अंतरायामाणुसारेणोकड्डिददव्वादो तप्पूरणट्ठं पदेसग्गस्सोवलंभादो। तं जहा—दीहयरमंतरं पूरेमाणेणंतरब्भंतरणिसिंचमाणदव्वादो संखेज्जभागहीणदव्वं घेत्तूण थोवयरंतरपूरओ तत्थ णिसेयविरयणं करेइ। कुदो एवं णव्वदे? बिदियट्ठिदिपढमणिसेएण सह एयगोवुच्छण्णहाणुववत्तीदो।

देता है वैसे ही प्रकृतमें करना चाहिये। उक्त प्रकारसे मरकर देवोंमें उत्पन्न करानेसे क्या लाभ है ऐसी आशंका होने पर शंकाकार कहता है कि जो जीव इसी स्थान पर मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अन्तरका प्रमाण बहुत अधिक पाया जाता है। और इस दीर्घ अन्तरमें द्रव्यका निक्षेप करते हुए गोपुच्छाओंको सूक्ष्म करके उनका निक्षेप किया जाता है, क्योंकि अन्तरको पूरा करनेके लिये जो अपकर्षित द्रव्य प्राप्त होता है उसका अन्तरकी स्थितियोंमें विभाग होकर पतन होता है। यतः यहाँ पर अन्तरकाल बड़ा है अतः प्रत्येक निषेकमें कम द्रव्य प्राप्त हुआ। इसलिये इस प्रकारसे निक्षेप करके जो देव दूसरे समयमें स्थित है उसके उदयावलिके भीतर प्रविष्ट हुआ एक निषेक द्रव्य अपकर्षण आदि तीनोंकी अपेक्षा जघन्य झीनस्थितिरूप होता है। किन्तु उपशान्तकषाय जीव मरकर यदि वहाँ उत्पन्न होता है तो इसके अन्तरकालका प्रमाण कम प्राप्त होता है, क्योंकि इसके वहाँ उत्पन्न होनेसे पूर्व ही अन्तरका बहुतसा काल व्यतीत हो चुका है। अतः इस देवको थोड़े ही अन्तरको पूरा करना है इसलिये इसके अन्तरसम्बन्धी निषेक थोड़े होनेसे स्थूल प्राप्त होते हैं, क्योंकि जो द्रव्य पहले बड़े अन्तरके भीतर विभक्त होकर प्राप्त हुआ था वह सबका सब यहाँ इस थोड़ेसे ही अन्तरमें संकुचित होकर पतनको प्राप्त हुआ है?

समाधान—यह सब कथन ठीक नहीं है, क्योंकि ऐसा उपदेश पाया जाता है कि जैसा अन्तरायाम होता है उसीके अनुसार उसको पूरा करनेके लिये अपकर्षित द्रव्यके कर्मपरमाणु होते हैं। खुलासा इस प्रकार है—बड़े अन्तरको पूरा करनेवाला जीव अन्तरायाममें जितने द्रव्यका निक्षेप करता है थोड़े अन्तरको पूरा करनेवाला जीव उसके संख्यातवें भाग द्रव्यको लेकर वहाँ निषेकरचना करता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—अन्यथा द्वितीय स्थितिके प्रथम निषेकके साथ एक गोपुच्छा नहीं बन सकती इससे ज्ञात होता है कि अन्तरायामके अनुसार ही उसको भरनेके लिये अपकर्षित द्रव्य प्राप्त होता है।

विशेषार्थ—ऐसा सामान्य नियम है कि देवगतिमें उत्पन्न होने पर प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त तक अरति और शोकका उदय नहीं होता इसलिये अपकर्षण आदि तीनोंकी

❀ अरइ-सोगाणं जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ?

§ ५७३. सुगम ।

❀ एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो। तत्थ संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो। चत्तारि वारे कसायमुवसामिदा। तदो एइंदिए गदो। तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमच्छिदो जाव उवसामयसमयपबद्धा णिग्गलिदा त्ति। तदो मणुस्सेसु आगदो। तत्थ पुव्वकोडी देसूणं संजममणुपालियूण अपडिवदिदेण सम्मत्तेण वेमाणिएसु देवेसु उववण्णो। अंतोमुहुत्तमुववण्णो उक्कस्ससंकिलेसं गदो। अंतोमुहुत्तमुक्कस्सट्ठिदिं बंधियूण पडिभग्गो जादो तस्स आवलियपडिभग्गस्स भय-दुगुंछाणं वेदयमाणस्स

अपेक्षा इन दो प्रकृतियोंके झीनस्थितिवाले द्रव्यका जघन्य स्वामित्व जो क्षपितकर्मांश विधिसे आकर देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके कहा है। उसमें भी प्रकृत जघन्य स्वामित्वके लिये ऐसा स्थल चुना गया है जहाँ इन दोनों प्रकृतियोंका केवल एक एक निषेक ही उदयावलिके भीतर प्राप्त हो। यह तभी हो सकता है जब उपशमश्रेणिमें अन्तरकरण करनेके बाद अन्तरकालमें स्थित इस जीवको देवोंमें उत्पन्न कराया जाय। यद्यपि यह अवस्था अन्तरकरणके बादसे लेकर नौवें, दसवें या ग्यारहवें किसी भी गुणस्थानसे मरकर देवोंमें उत्पन्न हुए जीवके हो सकती है पर यहाँ उपशान्तमोह गुणस्थानसे मरकर जो जीव देवोंमें उत्पन्न होता है उसके बतलाई है, क्योंकि तब अरति और शोकका केवल एक निषेक ही उदयावलिमें पाया जाता है। कुछ आचार्य अन्तरकरणके बाद प्रथम स्थितिके समाप्त हो जाने पर जो जीव मरकर देवोंमें उत्पन्न होता है उसके दूसरे समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व बतलाते हैं पर वैसा कथन करनेमें कोई विशेष लाभ नहीं है, अतः उक्त स्वामित्व ही ठीक है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। शेष कथन सुगम होनेसे यहाँ उसका निर्देश नहीं किया है।

❀ उदयकी अपेक्षा अरति और शोकके झीनस्थितिवाले द्रव्यका जघन्य स्वामी कौन है ?

§ ५७३. यह सूत्र सुगम है।

❀ कोई एक जीव एकेन्द्रियोंके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ बहुतबार संयमासयम और संयमको प्राप्त करके और चार बार कषायोंका उपशम करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ उपशामकके समयप्रबद्धोंके गलनेवाले पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण काल तक रहा। फिर आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ कुछ कम एक पूर्वकोटि कालतक संयमका पालन कर उससे च्युत हुए बिना सम्यक्त्वके साथ वैमानिक देवोंमें उत्पन्न हुआ। फिर उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ। फिर अन्तर्मुहूर्त कालतक उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करके उससे निवृत्त हुआ। इस प्रकार निवृत्त हुए इसको जब एक आवलि काल हो जाता है तब भय और जुगुप्साका भी वेदन करता

अरदि-सोगाण उदयणयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

§ ५७४ एदस्स सुत्तस्स अवयवत्थपरूवणा सुगमा । णवरि अपडिवदिदेण सम्मत्तेण• एवं भणिदे तस्स पुव्वकोडिं संजमगुणसेढिमणुपालिय तदवसाणे मिच्छत्तमगंतूण सो संवदा अपडिवदिदेण चेव सम्मत्तेण कप्पवासियदेवेसुववण्णो त्ति भणिदं होइ । किमट्ठमेसो णवुंसय-इत्थिवेदसामिओ व्व मिच्छत्तं ण णीदो त्ति ? ण, तत्थ मिच्छत्तं गच्छमाणस्स गुणसेढिणिज्जराहाणीए असंपुण्णत्तप्पसंगादो गुणसेढिणिज्जराए संपुण्णत्तविहाणट्ठं दंसणमोहणीयं खविय तस्सुप्पाइज्जमाणत्तादो च ण मिच्छत्तमेसा णेदुं सक्किज्जदे । अंतोमुहुत्तउववण्णो उक्कस्ससंकिलेसं गदो त्ति भणिदे एदि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो होऊणुक्कस्ससंकिलेसेण आवूरिदो त्ति वुत्तं होइ। संकिलेसा- पूरणे पयोजणमाह—अंतोमुहुत्तमुक्कस्सट्ठिदिं बंधियूणे त्ति । उक्कस्ससंकिलेसाणुक्कस्स- ट्ठिदिमरदि-सोगाणं बंधमाणो णिसेगट्ठिदिमाबाहापविट्ठत्तादो आवलियपमाणेणुक्कड्डणाए सण्णीकरिय पुणो उक्कस्ससंकिलेसक्खएण पडिभग्गो जादो त्ति संबंधो कायव्वो । पत्थावलियपडिभग्गस्स सामित्तविहाणे पुव्वपरूविदं कारणं, तस्सेव विसेसणंतर- माह—भय-दुगुंछाणं वेदयमाणस्से त्ति, अण्णहा पयदणिसेयस्सुवरि भय-दुगुंछाणुच्छाणं

हुआ वह जीव उदयकी अपेक्षा अरति और शोकके झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका स्वामी है ।

§ ५७४ इस सूत्रके सब पदोंका कथन सुगम है। किन्तु सूत्रमें जो 'अपडिवदिदेण सम्मत्तेण' इत्यादि कहा है सो इसका यह अभिप्राय है कि मनुष्य पर्यायमें कुछ कम एक पूर्व- कोटि काल तक संयमसम्बन्धी गुणश्रेणिका पालन करके उसके अन्तमें मिथ्यात्वमें न जाकर वह संवत संयमसे च्युत हुए बिना ही सम्यक्त्वके साथ कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न हुआ।

शंका—जैसे नपुंसकवेद और स्त्रीवेदके स्वामीको मिथ्यात्वमें ले गये हैं वैसे ही इसे मिथ्यात्वमें क्यों नहीं ले गये हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वमें ले जाने पर गुणश्रेणिनिर्जराका पूरा लाभ नहीं प्राप्त होता है। दूसरे पूरी गुणश्रेणिनिर्जराके प्राप्त करनेके लिये दर्शनमोहनीयकी क्षपणा कराके इसे यहाँ उत्पन्न कराया है, इसलिये इसे मिथ्यात्वमें ले जाना शक्य नहीं है।

सूत्रमें जो 'अंतोमुहुत्तउववण्णो उक्कस्ससंकिलेसं गदो' यह कहा है सो इसका यह अभिप्राय है कि वह पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ । उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होनेका प्रयोजन बतलानेके लिये सूत्रमें 'अंतोमुहुत्तमुक्कस्सट्ठिदिं बंधियूण' यह कहा है। इसका प्रकृतमें ऐसा सम्बन्ध करना चाहिये कि उत्कृष्ट संक्लेशसे अरति और शोककी उत्कृष्ट स्थितिका बाँधनेवाला यह जीव आबाधाके भीतर प्रविष्ट होनेके कारण आवलि रहित विवक्षित स्थितिको उत्कर्षणके द्वारा सूक्ष्म करके फिर उत्कृष्ट संक्लेशका क्षय हो जानेसे उससे निवृत्त हुआ । यहाँ निवृत्त होने पर एक आवलिके अन्तमें जो स्वामित्वका विधान किया है सो इसका कारण तो पहले कह आये हैं किन्तु यहाँ पर उसका दूसरा विशेषण बतलानेके लिये सूत्रमें 'भयदुगुंछाणं वेदयमाणस्स' यह कहा है। यदि यहाँ इन दो प्रकृतियोंका उदय नहीं बतलाया

त्थिवुक्कसंकमेण जहण्णत्ताणुववत्तीदो ।

❀ एवमोघेण सव्वमोहणीयपयडीणं जहण्णमोकड्डणादिझीणदिय-सामित्तं परूविदं ।

§ ५७५. एत्तो एदेण सूचिदासेसपरूवणा चोद्दसमग्गणापडिबद्धा अजहण्ण-सामित्तपरूवणाए समयाविरोहेणाणुमग्गियव्वा ।

तदो सामित्ताणियोगद्दारं समत्तं ।

❀ अप्पाबहुअं ।

§ ५७६. अहियारसंभालणसुत्तमेदं ।

❀ सव्वत्थोवं मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

§ ५७७. कुदो ? एदस्स चेव उदयणिसेयस्स एक्कलग्गीभूदसंजदासंजद-संजद-गुणसेढिसीसयस्स गुणिदकम्मंसियपयडिगोवुच्छसहगदस्स गहणादो ।

❀ उक्कस्सयाणि ओकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीण-

जाता तो प्रकृत निषेकके ऊपर भय और जुगुप्साके गोपुच्छोंका स्तिवुक संक्रमण होते रहनेसे जघन्य स्वामित्व नहीं प्राप्त हो सकता था ।

विशेषार्थ—उक्त कथनका सार यह है कि जो क्षपितकर्मांशवाला जीव पूर्वकोटिकी आयुवाला मनुष्य होकर संयमका पालन करे और अन्तमें देव होकर पर्याप्त हो जानेपर उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हो । फिर अन्तर्मुहूर्त तक अरति और शोककी उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करता हुआ विवक्षित निषेकको सूक्ष्म करनेके लिये उत्कर्षण करे । फिर जब वह उत्कृष्ट संक्लेशसे च्युत होकर तबसे एक आवलि कालके अन्तमें स्थित होता है और भय तथा जुगुप्साके उदयसे भी युक्त रहता है तब उसके प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है ।

*** इस प्रकार ओघसे अपकर्षणादि चारोंकी अपेक्षा मोहनीयकी सब प्रकृतियोंके झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका स्वामी कहा ।**

§ ५७५. आगे इससे सूचित होनेवाली चौदह मार्गणासम्बन्धी समस्त प्ररूपणा अजघन्य स्वामित्वसम्बन्धी प्ररूपणाके साथ आगमके अनुसार जान लेनी चाहिए ।

इस प्रकार स्वामित्व अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

*** अब अल्पबहुत्वका अधिकार है ।**

§ ५७६. अधिकारकी सम्हाल करनेके लिये यह सूत्र आया है ।

*** मिथ्यात्वका उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला उत्कृष्ट द्रव्य सबसे थोड़ा है ।**

§ ५७७. क्योंकि यहाँ मिथ्यात्वका ऐसा उदय निषेक लिया गया है जो गुणितकर्मांशकी प्रकृतिगोपुच्छाके साथ संयतासंयत और संयतके युगपत् प्राप्त हुए गुणश्रेणिशीर्षरूप है ।

*** मिथ्यात्वके अपकर्षण, उत्कर्षण और संक्रमणकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले**

ट्ठिदियाणि तिण्णि वि तुल्लाणि असंखेज्जगुणाणि ।

§ ५७८ किं कारणं ? समयूणावलियमेत्तदंसणमोहक्खवणगुणसेडिगोवुच्छ-पमाणत्तादो । एत्थ गुणगारपमाणं तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तं । कुदो ? संजमासंजम संजमगुणसेडीहिंतो दंसणमोहक्खवणगुणसेडीए असंखेज्जगुणत्तदंसणादो ।

❀ एवं सम्मामिच्छत्त-पण्णारसकसाय-छण्णोकसायाणं ।

§ ५७९. जहा मिच्छत्तस्स चउण्हं पदाणं थोवबहुत्तगवेसणा कया एवमेदेसिं पि कम्माणमुक्कस्सप्पाबहुअपरिक्खा कायव्वा, विसेसाभावादो ।

❀ सम्मत्तस्स सव्वत्थोवमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

§ ५८० चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयसव्वपच्छिमगुणसेडिसीसयस्स गहणादो ।

❀ सेसाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि उक्कस्सयाणि तुल्लाणि विसेसाहियाणि ।

§ ५८१ कुदो तत्तो एदेसिं विसेसाहियत्तं ? ण, समयूणावलियमेत्तदुचरिमादि गुणसेडिदव्वस्स तदसंखेज्जदिभागस्स तत्थ पवेसुवलंभादो ।

उत्कृष्ट द्रव्य ये तीनों परस्पर तुल्य होते हुए भी उससे असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५७८. इसका क्या कारण है ? क्योंकि यह एक समय कम एक आवलिप्रमाण दर्शनमोह की क्षपणासम्बन्धी गुणश्रेणिगोपुच्छाप्रमाण है। यहाँ गुणकारका प्रमाण तत्प्रायोग्य पल्यका असंख्यातवाँ भाग लेना चाहिये क्योंकि संयमासंयम और संयमकी गुणश्रेणियोंसे दर्शनमोहकी क्षपणासम्बन्धी गुणश्रेणि असंख्यातगुणी देखी जाती है।

❀ इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्व, पन्द्रह कषाय और छह नोकषायोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व है।

§ ५७९. जैसे मिथ्यात्वके चार पदोंके अल्पबहुत्वका विचार किया वैसे ही उक्त कर्मोंके भी उत्कृष्ट अल्पबहुत्वका विचार करना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

❀ सम्यक्त्वका उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला उत्कृष्ट द्रव्य सबसे थोड़ा है।

§ ५८० क्योंकि जिसने दर्शनमोहनीयकी पूरी क्षपणा नहीं की है उसके अन्तिम समयमें जो सबसे अन्तिम गुणश्रेणिशीर्षक द्रव्य विद्यमान रहता है उसका यहाँ ग्रहण किया गया है।

❀ सम्यक्त्वके शेष तीनों ही झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट द्रव्य परस्पर तुल्य होते हुए भी उससे विशेष अधिक हैं।

§ ५८१ शंका—उससे ये विशेष अधिक क्यों हैं ?

समाधान—नहीं क्योंकि द्विचरम समयसे लेकर एक समय कम एक आवलिप्रमाण द्रव्यका यहाँ प्रवेश पाया जाता है जो कि पूर्वोक्त द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिये इसे विशेष अधिक कहा है।

❀ एवं लोभसंजलण-तिण्णिवेदाणं ।

§ ५८२. जहा सम्मत्तस्स अप्पाबहुअं परूविदमेवं लोभकसाय-संजलण-तिवेदाणमणूणाहिय परूवेयव्व, विसेसाभावादो। एवमुक्कस्सप्पाबहुअमोघेण समत्त। एत्थादेसपरूवणा च जाणिय कायव्वा। तदो उक्कस्सयं समत्त।

❀ एत्तो जहण्णयं झीणद्विदियं ।

§ ५८३. एत्तो उवरि जहण्णझीणट्ठिदियस्स अप्पाबहुअं भणिस्सामो त्ति पइज्जासुत्तमेदं ।

❀ मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवं जहण्णयमुदयादो झीणद्विदियं ।

§ ५८४. कुदो ? सासणपच्छायदपढमसमयमिच्छादिट्ठिणो ओदारियावलिय-मेत्तसण्हयाण गोवुच्छाण चरिमणिसेयस्स पयदजहण्णसामित्तविसईकयस्स गहणादो।

❀ सेसाणि तिण्णि वि झीणद्विदियाणि तुल्लाणि असंखेज्जगुणाणि ।

§ ५८५. कुदो ? सपुण्णावलियमेत्ताणमुदीरणागोवुच्छाणमिह ग्गहणादो। को गुणगारो ? आवलिया सादिरेया। सेस सुगम। एदेणेव गयत्थाणमप्पण करेइ—

---

* इसी प्रकार लोभसज्वलन और तीन वेदोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व है ।

§ ५८२ जिस प्रकार सम्यक्त्वका अल्पबहुत्व कहा है उसी प्रकार लोभसज्वलन और तीन वेदोंका न्यूनाधिकताके विना अल्पबहुत्व कहना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। इस प्रकार ओघसे उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ। यहाँ आदेश प्ररूपणाको जानकर उसका कथन करना चाहिये। तब जाकर उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त होता है।

* इससे आगे जघन्य झीनस्थितिके द्रव्यका अल्पबहुत्व बतलाते हैं ।

§ ५८३ अब इस उत्कृष्ट अल्पबहुत्वके बाद झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यका अल्पबहुत्व कहते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञा सूत्र है।

* मिथ्यात्वका उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला उत्कृष्ट द्रव्य सबसे थोड़ा है।

§ ५८४ क्योंकि सासादन गुणस्थानसे पीछे लौटकर प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके जो उदयावलि सज्ञावाला गोपुच्छाएँ हैं उनमेसे यहाँ पर प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विषयभूत अन्तिम निषेक लिया गया है।

* मिथ्यात्वके शेष तीनों ही झीनस्थितिवाले द्रव्य परस्परमें तुल्य होते हुए भी उससे असख्यातगुणे हैं ।

§ ५८५ क्योंकि यहाँ पर सम्पूर्ण आवलिप्रमाण उदीरणा गोपुच्छाओंका ग्रहण किया गया है।

शका—गुणकारका क्या प्रमाण है ?

समाधान—साधिक एक आवलि गुणकारका प्रमाण है।

शेष कथन सुगम है। अब इसीसे जिन प्रकृतियोंका अल्पबहुत्व ज्ञात हो जाता है उसका प्रमुखतासे निर्देश करते हैं—

❀ जहा मिच्छत्तस्स जहण्णयमप्पाबहुअं तहा जेसिं कम्मंसाणमुदीरणोदओ अत्थि तेसिं पि जहण्णयमप्पाबहुअं।

§ ५८६ जहा मिच्छत्तस्स चत्तारि पदाणि अस्सियूण जहण्णप्पाबहुअं परूविदं तहा सेसाणं पि उदीरणोदइल्लाणं कम्माणं णेदव्वमिदि सुत्तत्थसंगहो।

❀ अणंताणुबंधि-इत्थि-णवुंसयवेद-अरइ-सोगा त्ति एदे अट्ठ कम्मंसे मोत्तूण सेसा उदीरणोदया।

§ ५८७ एत्थ उदीरणाए चेव उदओ उदीरणोदओ त्ति सावहारणो सुत्तावयवो, अण्णहा अणंताणुबंधिआदीणं परिवज्जणाणुववत्तीदो। जेसिं कम्मंसाणमुदयावलियब्भंतरे अंतरकरणेण अच्चंतमसंताणं कम्मपरमाणूणं परिणामविसेसेणासंखेज्जलोगपडिभागेणोदीरिदाणमणुहवो तेसिमुदीरणोदओ त्ति एसो एत्थ भावत्थो। ण चाणंताणुबंधिआदीणमेवंविहो उदीरणोदओ संभवइ, तत्थ तदणुवलंभादो। तदो सुत्तुत्तपयडीओ अट्ठ मोत्तूण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसाय-पुरिसवेद-हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणमुदीरणाए चेव सुद्धाए पत्तजहण्णसामित्ताणं मिच्छत्तस्सेव अप्पाबहुअमणूणाहियं वत्तव्वमिदि सिद्धं।

❀ जेसिं ण उदीरणोदओ तेसिं पि सो चेव आलावो अप्पाबहुअस्स जहण्णयस्स।

---

* जैसे मिथ्यात्वका जघन्य अल्पबहुत्व है वैसे ही जिन कर्मोंका उदीरणोदय होता है उनका भी जघन्य अल्पबहुत्व जानना चाहिये।

§ ५८६ जैसे मिथ्यात्वका चार पदोंकी अपेक्षा जघन्य अल्पबहुत्व कहा है वैसे उदीरणोदयवाले शेष कर्मोंका भी जघन्य अल्पबहुत्व जानना चाहिये यह इस सूत्रका समुदायार्थ है।

* अनन्तानुबन्धी, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति और शोक इन आठ कर्मोंको छोड़कर शेष कर्म उदीरणोदयरूप हैं।

§ ५८७. यहाँ पर उदीरणा ही उदयरूपसे विवक्षित है इसलिये उदीरणोदय पद सूत्रवचन अवधारण सहित है। अन्यथा अनन्तानुबन्धी आदिका निषेध नहीं किया जा सकता है। अन्तर करनेके कारण उदयावलिके भीतर जिन कर्मोंके कर्मपरमाणु बिलकुल नहीं पाये जाते हैं, परिणामविशेषके कारण असंख्यात लोकप्रमाण प्रतिभागके अनुसार उदीरणाको प्राप्त हुए उनका अनुभव करना उदीरणोदय है यह इसका अभिप्राय है। अनन्तानुबन्धी आदिका इस प्रकार उदीरणोदय सम्भव नहीं है, क्योंकि इन प्रकृतियोंका उदीरणोदय नहीं पाया जाता है। इसलिये सूत्रोक्त आठ प्रकृतियोंके सिवा जो सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व बारह कषाय पुरुषवेद हास्य, रति, भय और जुगुप्सा प्रकृतियाँ हैं इनकी शुद्ध उदीरणा होने पर ही जघन्य स्वामित्व प्राप्त होता है इसलिये इनका अल्पबहुत्व न्यूनाधिकताके बिना मिथ्यात्वके समान कहना चाहिये यह बात सिद्ध हुई।

* तथा जिनका उदीरणोदय नहीं होता उनका भी जघन्य अल्पबहुत्वविषयक आलाप इसी प्रकार है।

§ ५८८. पुव्वुत्तासेसपयडीणमुदीरणोदइल्लाणं जो जहण्णप्पाबहुआलावो सो चेव उदीरणोदयविरहिदपयडीणं पि कायव्वो, विसेसाभावादो। होउ णामाणंताणुबंधीणमेसो अप्पाबहुआलावो, सामित्ताणुसारित्तादो। ण वुण इत्थि-णवुंसयवेदाणं, तत्थ सामित्ताणुसरणे तिण्हं पि जहण्णझीणट्ठिदियादो उदयादो जहण्णझीणट्ठिदियस्स असंखेज्जगुणत्तदंसणादो। ण एस दोसो, तहाणब्भुवगमादो। तहा चेव उवरि पक्खतरस्स परूविस्समाणादो। किंतु त्थिउक्कसंकममविवक्खिय समूहेणेव उदयादो वि जहण्णझीणट्ठिदियस्स वेछावट्ठिसागरोवमाणि भमाडिय सामित्तं दायव्वमिदि एदेणाहिप्पाएण पयट्टमेदं। एदम्मि णए अवलंबिज्जमाणे उदयादो जहण्णझीणट्ठिदियं पेक्खियूण सेसाणं समयूणावलियगुणयारदंसणादो।

---

§ ५८८ उदीरणोदयवाली पूर्वोक्त सब प्रकृतियोंका जो जघन्य अल्पबहुत्व कहा है, उदीरणोदयसे रहित प्रकृतियोंका भी उसी प्रकार अलपबहुत्व समझना चाहिये, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

शंका—अपने स्वामित्वके अनुसार होनेसे अनन्तानुबन्धियोंका यह अल्पबहुत्वालाप रहा आवे, परन्तु स्त्रीवेद और नपुसकवेदका यह अल्पबहुत्व नहीं प्राप्त होता, क्योंकि वहाँ पर स्वामित्वका अनुसरण करने पर जो अपकर्षण आदि तीनकी अपेक्षा झीनस्थितिक जघन्य द्रव्य है उससे उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिक जघन्य द्रव्य असख्यातगुणा देखा जाता है।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्यो वैसा स्वीकार नहीं किया है। पक्षान्तर रूपसे आगे इसी बातका कथन भी करेंगे। किन्तु स्तिवुक सक्रमणकी विवक्षा न करके समूहरूपसे ही उदयकी अपेक्षा भी जघन्य झीनस्थितिवाले द्रव्यका स्वामित्व दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कराके देना चाहिये इस प्रकार इस अभिप्रायसे यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है। इस नयका अवलम्बन करने पर उदयकी अपेक्षा जघन्य झीनस्थितिवाले द्रव्यको देखते हुए शेष झीनस्थितिवाले द्रव्योंका गुणकार एक समय कम एक आवलिप्रमाण देखा जाता है।

विशेषार्थ—जो उपशमसम्यग्दृष्टि छह आवलि कालके शेष रहने पर सासादनमें जाता है और फिर वहाँसे मिथ्यात्वमें जाता है उसके प्रथम समयमें अपकर्षणादि तीनकी अपेक्षा और एक आवलि कालके अन्तमें उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य होता है। यत. अपर्षणादि तीनकी अपेक्षा जो झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य प्राप्त होता है वह उदयावलिके निषेक प्रमाण होता है और उदयकी अपेक्षा जो झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य प्राप्त होता है वह उदयावलिके अन्तिम निषेक प्रमाण होता है, इसलिये यहाँ उदयकी अपेक्षा झीनरितिथवाले जघन्य द्रव्यसे अपकर्षण आदि तीनकी अपेक्षा प्राप्त हुआ झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य असंख्यातगुणा बतलाया है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इन प्रकृतियोंका चारोंकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य भी इसी प्रकार उदीरणोदयके होने पर ही प्राप्त होता है, इसलिये इनका अल्पबहुत्व भी पूर्वोक्त प्रकारसे प्राप्त हो जाता है। अब रहीं शेष आठ प्रकृतियाँ सो इनमेंसे चार अनन्तानुबन्धी प्रकृतियाँ तो ऐसी हैं जिनका उक्त चारोंकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्व अपने उदयकालमें ही प्राप्त होता है, इसलिये उनका भी अल्पबहुत्व उक्त प्रकारसे बन जाता है। शेष चारमें भी अरति और शोक ऐसी

§ ५८९ संपहि एदम्मि सुत्तेणारइ-सोयाणं पि उदीरणोदएण विणा पत्तजहण्ण-सामित्ताणमप्पाबहुअप्पसत्ताए तत्थ विसेसपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

* णवरि अरइ-सोगाणं उदयपत्तयमुदयादो झीणट्ठिदियं थोवं।

§ ५९० कुदो ? एयणिसेयपमाणत्तादो।

* सेसाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि तुल्लाणि विसेसाहियाणि।

§ ५९१ जइ वि तिण्हमेदासिं पि झीणट्ठिदियस्स खवियकम्मंसियपच्छायदोव-संतकसायचरिमदेवचिरियसमए उदयावलियपविट्ठेयणिसेयं चेव घेत्तूण जहण्णसामित्तं जादं तो वि अंतोमुहुत्तमुवरि गंतूण जादजहण्णभावादो पुव्विल्लेयणिसेयदव्वादो विसेसाहियत्तं ण विरुज्झदे, ओकड्डणट्ठाणमेत्तगोवुच्छविसेसाणमहियत्तदंसणादो। एवमणिप्पायंतरसवेक्खमिय अप्पाबहुअमेदेसिं परूविय संपहि सामित्ताणुसारेण चिरुक्कस्सं पढाणिक्कादुजप्पाबहुअपरूवणट्ठमिदमाह—

प्रकृतियाँ हैं जिनके विषयमें उक्त नियम लागू नहीं होता यह बात अगले सूत्र द्वारा स्वयं चूर्णि-सूत्रकार स्पष्ट करनेवाले हैं। किन्तु स्त्रीवेद और नपुंसकवेद ये दो प्रकृतियाँ ऐसी हैं जिनमें उक्त प्रकारसे अल्पबहुत्व घटित नहीं होता है।

§ ५८९ अब इस सूत्र द्वारा उदीरणोदयके बिना अरति और शोक इन प्रकृतियोंमें भी जघन्य स्वामित्वका अतिप्रसंग प्राप्त हुआ, इसलिये इस विषयमें विशेष कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

* किन्तु इतनी विशेषता है कि अरति और शोकका उदयकी अपेक्षा झीन स्थितिवाला जघन्य द्रव्य थोड़ा है।

§ ५९० क्योंकि इसका प्रमाण एक निषेक है।

* शेष तीनों झीनस्थितिवाले द्रव्य तुल्य होते हुए भी उससे विशेष अधिक हैं।

§ ५९१ यद्यपि क्षपितकर्मांशकी विधिसे आकर जो उपशान्तकषायपर देव हुआ है उसके दूसरे समयमें उदयावलिके भीतर प्रविष्ट हुए एक निषेककी अपेक्षा अपकर्षणादि तीनोंसे ही झीनस्थितिवाले द्रव्यका जघन्य स्वामित्व होता है तथापि अन्तर्मुहूर्त ऊपर जाकर उसकी अपेक्षा जघन्यभावको प्राप्त हुए पूर्वोक्त एक निषेकके द्रव्यसे इसे विशेष अधिक माननेमें कोई विरोध नहीं आता है, क्योंकि जितने स्थान नीचे उतरकर अपकर्षणादिकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्व प्राप्त है वहाँ उतने गोपुच्छविशेषोंकी अधिकता देखी जाती है।

विशेषार्थ—उक्त कथनका यह आशय है कि अपकर्षणादि तीनकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्व उपशान्तकषायपर देवके दूसरे समयमें प्राप्त हो जाता है और उदयकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्व अन्तर्मुहूर्त बाद प्राप्त होता है। अब यहाँ जितना काल आगे जाकर उदयकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्व प्राप्त होता है उतने गोपुच्छविशेषोंकी अर्थात् चयोंकी हानि हो जाती है, अतः अपकर्षणादि तीनकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला जो जघन्य द्रव्य होता है वह उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यसे साधिक होता है यह सिद्ध हुआ।

जहण्णपदेसुदीरणा थोवा, उदयो असंखेज्जगुणो, बंधो असंखेज्जगुणो, संकमो असंखेज्जगुणो, संतकम्मं असखेज्जगुणमिदि। एत्थ जहण्णबंधो त्ति उत्ते एगेइंदियसमयपबद्धमेत्तं गहिदं। जहण्णसंकमो त्ति उत्ते एगमेइंदियसमयपबद्धं ठविय पुणो घोलमाणजहण्णजोगेण बद्धपंचिंदियसमयपबद्धमिच्छामो त्ति जोगगुणगारमेदस्स गुणगारत्तेण ठविय पुणो वि एदस्स हेट्ठा अधापवत्तभागहारं ठविय ओवट्टिदे जहण्णसंकमदव्वमागच्छइ। जइ एत्थ जोगगुणगारो थोवो होज्ज तो जहण्णसंकमदव्वस्सुवरि जहण्णबंधो असंखेज्जगुणो जाएज्ज। ण च एवं, बंधस्सुवरि संकमो असंखेज्जगुणो त्ति पढिदत्तादो। तम्हा जोगगुणगारो अधापवत्तभागहारादो असंखेज्जगुणो त्ति सिद्धं? कम्मट्ठिदिणाणागुणहाणिसलागाओ असखेज्जगुणाओ। कुदो? किंचूणपलिदोवमद्धछेदणयपमाणत्तादो। एदस्स कारणस्स णिरुत्तीकरणमिद। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिं ठविय जोगगुणगारेण गुणिदे पलिदो० असखे०भागमेत्तो चेव रासी उप्पज्जइ। पुणो एत्थ जोगगुणगारमवणिय तं चेव गुणिज्जमाणं दिवड्ढगुणहाणिपमाणं ठविय जइ णाणागुणहाणिसलागाहि गुणिज्जइ तो दिवड्ढकम्मट्ठिदिमेत्तो रासी उप्पज्जदि त्ति। एदेण जाणिज्जदे जहा जोगगुणगारादो कम्मट्ठिदिणाणागुणहाणिसलागाओ असखेज्जगुणाओ त्ति। पलिदोवमस्स छेदणया विसेसा। केत्तियमेत्तो विसेसो? पलिदोवमवग्गसलागछेदणयमेत्तो। कुदो एदं परिच्छिज्जदे? परमगुरूवएसादो।

दीरणा थोड़ी है। उससे उदय असख्यातगुणा है। उससे वन्ध असख्यातगुणा है। उससे सक्रम असख्यातगुणा है और उससे सत्कर्म असख्यातगुणा है।' यहाँ जघन्य वन्ध ऐसा कहनेपर उससे एकेन्द्रियके समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्यका ग्रहण किया है। जघन्य संक्रम ऐसा कहनेपर इस प्रकारसे प्राप्त हुए सक्रम द्रव्यका ग्रहण किया है। यथा—एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको स्थापित करो। फिर घोलमान जघन्य योगके द्वारा बाँधे गये पञ्चेन्द्रिय समयप्रबद्धको लाना चाहते हैं, इसलिये इसके गुणकाररूपसे योग गुणकारको स्थापित करो। फिर इसके नीचे अधःप्रवृत्तभागहारको स्थापित करके भाग देनेपर जघन्य सक्रमद्रव्य आता है। यदि यहाँ योगगुणकार अध प्रवृत्तभागहारसे अल्प होता तो जघन्य सक्रमद्रव्यसे जघन्य बन्ध असख्यातगुणा हो जाता। पर ऐसा है नहीं, क्योंकि सूत्रमें बन्धसे सक्रम असख्यातगुणा बतलाया है, इसलिये अधःप्रवृत्तभागहारसे योगगुणकार असख्यागुणा है यह सिद्ध हुआ। योगगुणकारसे कर्मस्थितिके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानिशलाकाएँ असख्यातगुणी हैं, क्योंकि वे कुछ कम पल्यके अर्धच्छेदप्रमाण हैं। इस कारणका खुलासा इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिको रखकर योगगुणकारसे गुणित करनेपर पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण ही लब्ध राशि आती है। फिर यहाँ योगगुणकारको अलग करके और गुण्यमान उसी डेढ गुणहानिप्रमाण राशिको स्थापित करके यदि नानागुणहानिशलाकाओंसे गुणा किया जाता है तो डेढ़गुणी कर्मस्थितिप्रमाण राशि उत्पन्न होती है। इससे ज्ञात होता है कि योगगुणकारसे कर्मस्थितिके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानिशलाकाएँ असंख्यागुणी हैं। कर्मस्थितिके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानिशलाकाओंसे पल्यके अर्धच्छेद विशेष अधिक हैं।

शका—कितने अधिक हैं?

समाधान—पल्यकी वर्गशलाकाओंके जितने अर्धच्छेद हों उतने अधिक हैं।

पलिदोवमपढमवग्गमूलं असंखेज्जगुणं। सुगममेत्थ कारणं। एगपदेसगुणहाणिट्ठाणंतर मसंखेज्जगुणं। कारणं णाणागुणहाणिसलागाहि कम्मट्ठिदीए ओवट्टिदाए असंखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि भागच्छंति त्ति। दिवड्ढगुणहाणिट्ठाणंतरं विसेसाहियं। के० विसेसो ? दुभागमेत्तेण। णिसेयभागहारो विसेसो। के०मेत्तेण ? तिभागमेत्तेण। अण्णोण्णब्भत्थरासी असंखे०गुणा। एत्थ कारणं सुगमं। पलिदोवममसंखेज्जगुणं। सुगमं। विज्झादसंकमभागहारो असंखेज्जगुणो। किं कारणं ? अंगुलस्स असंख० भागपमाणत्तादो। उव्वेल्लणभागहारो असंखेज्जगुणो। थोवबहुत्तमेदसिमणुवलब्भमाणस्सासंख० भागपमाणत्ताविसेसे वि पदेससंकमप्पाबहुअसुत्तादो एदस्सासंखेज्जगुणमवगम्मद। अणुभागवग्गणाणं णाणापदेसगुणहाणिसलागाओ अणंतगुणाओ। किं कारणं ? अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणं सिद्धाणमणंतभागपमाणत्तादो। एगपदेसगुणहाणि

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—परम गुरुओंके उपदेशसे जाना जाता है।

पल्यके अधच्छेदोंसे पल्यका प्रथम वर्गमूल असंख्यातगुणा है। इसका कारण सुगम है। इससे एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तर असंख्यातगुणा है, क्योंकि कर्मस्थितिमें नानागुणहानिशलाकाओंका भाग देनेपर पल्यके असंख्यात प्रथमवर्गमूल प्राप्त होते हैं। एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरसे डेढ़गुणहानिस्थानान्तर विशेष अधिक है।

शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—दूसरा भाग अधिक है।

डेढ़गुणहानिस्थानान्तरसे निषेकभागहार विशेष अधिक है।

शंका—कितना अधिक है ?

समाधान—तीसरा भाग अधिक है।

निषेकभागहारसे अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी है। इसका कारण सुगम है। इससे पल्य असंख्यातगुणा है। इसका भी कारण सुगम है। इससे विध्यातसंक्रमभागहार असंख्यातगुणा है।

शंका—इसके असंख्यातगुणे होनेका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि विध्यातसंक्रमभागहार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इसे पल्यसे असंख्यातगुणा बतलाया है।

विध्यातसंक्रमभागहारसे उद्वेलनभागहार असंख्यातगुणा है। यद्यपि ये दोनों ही भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं तो भी प्रदेशसंक्रमअल्पबहुत्वविषयक सूत्रसे ज्ञात होता है कि विध्यातसंक्रमभागहारसे उद्वेलनभागहार असंख्यातगुणा है। उद्वेलनभागहारसे अनुभाग वर्गणाओंकी नानाप्रदेशगुणहानिशलाकायें अनन्तगुणी हैं क्योंकि ये अभव्योंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण हैं। इससे एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तर अनन्तगुणा है।

❀ अहवा इत्थिवेद-णवुंसयवेदाणं जहण्णयाणि ओकड्डणादीणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि तुल्लाणि थोवाणि ।

§ ५६२. जहाकमेण वेछावट्ठिसागरोवम-तिपलिदोवमब्भहियवेछावट्ठिसागरोवमाणि भमाडिय सामित्तविहाणादो ।

❀ उदयादो जहण्णयं झीणट्ठिदियमसंखेज्जगुणं ।

§५६३. पुव्वुत्तकालमगालिय सामित्तविहाणादो । तं पि कुदो ? त्थिवुक्कसंकमबहुत्तभयादो ।

❀ अरइ-सोगाणं जहण्णयाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि तुल्लाणि थोवाणि ।

§ ५६४. उवसंतकसायचरविदियसमयदेवस्स उदयावलियपविट्ठएयणिसेयस्स सव्वपयत्तेण जहण्णीकयस्स गहणादो ।

❀ जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं विसेसाहियं ।

इस प्रकार इन सब प्रकृतियोंका अभिप्रायान्तरकी अपेक्षा अल्पबहुत्वका कथन करके अब स्वामित्वके अनुसार स्तिबुकसंक्रमणको प्रधान करके अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** अथवा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अपकर्षण आदि तीनकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्य परस्पर तुल्य होते हुए भी थोड़े हैं ।**

§ ५६२ क्योंकि क्रमसे स्त्रीवेदकी अपेक्षा दो छ्यासठ सागर काल तक और नपुंसकवेदकी अपेक्षा तीन पल्य अधिक दो छ्यासठ सागर काल तक भ्रमण कराके इन दोनों वेदोंके स्वामित्वका विधान किया गया है ।

*** उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य उससे असंख्यातगुणा है ।**

§ ५६३ क्योंकि पूर्वोक्त कालको न गलाकर स्वामित्वका विधान किया गया है ।

शंका—ऐसा क्यों किया गया ।

समाधान—स्तिवुकसंक्रमणके बहुत द्रव्यके प्राप्त होनेके भयसे ऐसा किया गया है ।

विशेषार्थ—स्त्रीवेद और नपुसकवेदके उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य क्रमसे दो छ्यासठ सागर पूर्व और तीन पल्य अधिक दो छ्यासठ सागर पूर्व प्राप्त होता है और अपकर्षण आदि तीनकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य उक्त काल बाद प्राप्त होता है, इसलिये अपकर्षण आदिकी अपेक्षा प्राप्त हुए झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्यसे उदयकी अपेक्षा प्राप्त हुआ झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य असंख्यातगुणा बतलाया है ।

*** अरति और शोकके अपकर्षण आदि तीनकी अपेक्षा झीनस्थितिवाले जघन्य द्रव्य परस्पर तुल्य होते हुए भी थोड़े हैं ।**

§ ५६४. क्योंकि जो उपशान्तकषायचर देव दूसरे समयमें स्थित है उसके उदयावलिमें प्रविष्ट हुए और सब प्रयत्नसे जघन्य किये गये एक निषेकका यहाँ पर ग्रहण किया गया है ।

*** उदयकी अपेक्षा झीनस्थितिवाला जघन्य द्रव्य उससे विशेष अधिक है ।**

§ ५९५ कुदो? हस्स-रदिथिउक्कसंकमेण सह पत्तोदयएयणिसेयग्गहणादो। केत्तियमेत्तो विसेसो? अंतोमुहुत्तमेत्तगोवुच्छविसेसेहिं ऊणहस्स-रदिथिउक्कसंकममेत्तो।

§ ५९६ संपहि एत्थुद्देसे सव्वेसिमत्थाहियाराणं साहारणभूदमप्पाबहुअदंडयं मज्झदीवयभावेण परूवइस्सामो। तं जहा—सव्वत्थोवो सव्वसंकमभागहारो। किं कारणं? एगरूवपमाणत्तादो। गुणसंकमभागहारो असंखेज्जगुणो। किं कारणं? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागपमाणत्तादो। ओकड्डुक्कड्डणभागहारो असंखेज्जगुणो। एसो वि पलिदो० असंखेज्जदिभागो चेव, किंतु पुव्विल्लादो एसो असंखेज्जगुणो त्ति घेत्तव्वो। अधापवत्तभागहारो असंखेज्जगुणो। एदस्स कारणं सुत्तणिबद्धमेव। तं कधं? ट्ठिदियंतिए मिच्छत्तस्स उक्कस्सअधाणिसेयट्ठिदिपत्तयसंबंधेण ओकड्डुक्कड्डणाए कम्मस्स अवहारकालो थोवो। अधापवत्तसंकमेण कम्मस्स अवहारो असंखेज्जगुणो त्ति भणिहिदि। तदो सिद्धमेदस्सासंखेज्जगुणत्तं। जोगगुणगारो असंखेज्जगुणो। एदस्स कारणं वुच्चदे। तं जहा—वेदगे त्ति अणियोगद्दारे कोहसंजलणपदेसग्गस्स जहण्णबंध-संकम-उदय-उदीरण-संतकम्माणि अस्सियूणप्पाबहुअं भणिहिदि। तं कधं? कोहसंजलण-

---

§ ५९५. क्योंकि हास्य और रतिका स्तिबुकसंक्रमणसे जो द्रव्य प्राप्त होता है उसके साथ अरति और शोकके उदयको प्राप्त हुए एक निषेकका यहाँ पर ग्रहण किया गया है।

शंका—कितना विशेष अधिक है?

समाधान—हास्य और रतिका स्तिबुकसंक्रमणसे जो द्रव्य प्राप्त होता है उसमेंसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण गोपुच्छविशेषोंके कम कर देनेपर जो शेष रहे उतना विशेष अधिक है।

§ ५९६. अब इस स्थान पर जो सभी अर्थाधिकारोंमें साधारण है ऐसे अल्पबहुत्वदण्डकको मध्यदीपकन्यायसे दिखलाते हैं। यथा—सर्वसंक्रमभागहार सबसे थोड़ा है, क्योंकि उसका प्रमाण एक है। इससे गुणसंक्रमभागहार असंख्यातगुणा है, क्योंकि यह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इससे अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार असंख्यातगुणा है। यद्यपि यह भी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है तो भी पूर्वोक्त भागहारसे यह असंख्यातगुणा है ऐसा ग्रहण करना है। इससे अधःप्रवृत्तसंक्रमभागहार असंख्यातगुणा है। इसके असंख्यातगुणे होनेके कारणका निर्देश सूत्रमें ही किया है।

शंका—सो कैसे?

समाधान—आगे स्थित्यन्तिक अधिकारमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यके सम्बन्धसे अपकर्षण-उत्कर्षणसे प्राप्त हुए कर्मका अवहारकाल थोड़ा और अधःप्रवृत्त संक्रमसे प्राप्त हुए कर्मका अवहारकाल असंख्यातगुणा है ऐसा कहेंगे, इसलिए अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे अधःप्रवृत्तभागहार असंख्यातगुणा है यह सिद्ध होता है। अधःप्रवृत्तसंक्रमभागहारके प्रमाणसे योगगुणकार असंख्यातगुणा है। अब इसका कारण कहते हैं। यथा—वेदक नामक अनुयोगद्वारमें क्रोध संज्वलनकर्मका जघन्य बन्ध जघन्य संक्रम, जघन्य उदय, जघन्य उदीरणा और जघन्य सत्कर्म इनकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहेंगे। यथा—क्रोधसंज्वलनकी जघन्य प्रदेशो-

जहण्णपदेसुदीरणा थोवा, उदयो असंखेज्जगुणो, बंधो असंखेज्जगुणो, संकमो असंखेज्जगुणो, संतकम्मं असंखेज्जगुणमिदि। एत्थ जहण्णबंधो त्ति उत्ते एगेइंदियसमयपबद्धमेत्त गहिदं। जहण्णसंकमो त्ति उत्ते एगमेइंदियसमयपबद्धं ठविय पुणो घोलमाणजहण्णजोगेण बद्धपंचिंदियसमयपबद्धमिच्छामो त्ति जोगगुणगारमेदस्स गुणगारत्तेण ठविय पुणो वि एदस्स हेट्ठा अधापवत्तभागहारं ठविय ओवट्टिदे जहण्णसंकमदव्वमागच्छइ। जइ एत्थ जोगगुणगारो थोवो होज्ज तो जहण्णसंकमदव्वस्सुवरि जहण्णबंधो असंखेज्जगुणो जाएज्ज। ण च एवं, बंधस्सुवरि संकमो असंखेज्जगुणो त्ति पढिदत्तादो। तम्हा जोगगुणगारो अधापवत्तभागहारादो असंखेज्जगुणो त्ति सिद्धं? कम्मट्ठिदिणाणागुणहाणिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ। कुदो? किंचूणपलिदोवमद्धछेदणयपमाणत्तादो। एदस्स कारणस्स णिरुत्तीकरणमिदं। तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिं ठविय जोगगुणगारेण गुणिदे पलिदो० असंखे०भागमेत्तो चेव रासी उप्पज्जइ। पुणो एत्थ जोगगुणगारमवणिय तं चेव गुणिज्जमाणं दिवड्ढगुणहाणिपमाणं ठविय जइ णाणागुणहाणिसलागाहि गुणिज्जइ तो दिवड्ढकम्मट्ठिदिमेत्तो रासी उप्पज्जदि त्ति। एदेण जाणिज्जदे जहा जोगगुणगारादो कम्मट्ठिदिणाणागुणहाणिसलागाओ असंखेज्जगुणाओ त्ति। पलिदोवमस्स छेदणया विसेसा। केत्तियमेत्तो विसेसो? पलिदोवमवग्गसलागछेदणयमेत्तो। कुदो एदं परिच्छिज्जदे? परमगुरूवएसादो।

दीरणा थोड़ी है। उससे उदय असंख्यातगुणा है। उससे बन्ध असंख्यातगुणा है। उससे संक्रम असंख्यातगुणा है और उससे सत्कर्म असंख्यातगुणा है।' यहाँ जघन्य बन्ध ऐसा कहनेपर उससे एकेन्द्रियके समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्यका ग्रहण किया है। जघन्य संक्रम ऐसा कहनेपर इस प्रकारसे प्राप्त हुए संक्रम द्रव्यका ग्रहण किया है। यथा—एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको स्थापित करो। फिर घोलमान जघन्य योगके द्वारा बाँधे गये पञ्चेन्द्रिय समयप्रबद्धको लाना चाहते हैं, इसलिये इसके गुणकाररूपसे योग गुणकारको स्थापित करो। फिर इसके नीचे अधःप्रवृत्तभागहारको स्थापित करके भाग देनेपर जघन्य संक्रमद्रव्य आता है। यदि यहाँ योगगुणकार अधःप्रवृत्तभागहारसे अल्प होता तो जघन्य संक्रमद्रव्यसे जघन्य बन्ध असंख्यातगुणा हो जाता। पर ऐसा है नहीं, क्योंकि सूत्रमें बन्धसे संक्रम असंख्यातगुणा बतलाया है, इसलिये अधःप्रवृत्तभागहारसे योगगुणकार असंख्यातगुणा है यह सिद्ध हुआ। योगगुणकारसे कर्मस्थितिके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानिशलाकाएँ असंख्यातगुणी हैं, क्योंकि वे कुछ कम पल्यके अर्धच्छेदप्रमाण हैं। इस कारणका खुलासा इस प्रकार है—डेढ़ गुणहानिको रखकर योगगुणकारसे गुणित करनेपर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण ही लब्ध राशि आती है। फिर यहाँ योगगुणकारको अलग करके और गुण्यमान उसी डेढ़ गुणहानिप्रमाण राशिको स्थापित करके यदि नानागुणहानिशलाकाओंसे गुणा किया जाता है तो डेढ़गुणी कर्मस्थितिप्रमाण राशि उत्पन्न होती है। इससे ज्ञात होता है कि योगगुणकारसे कर्मस्थितिके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानिशलाकाएँ असंख्यातगुणी हैं। कर्मस्थितिके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानिशलाकाओंसे पल्यके अर्धच्छेद विशेष अधिक हैं।

शंका—कितने अधिक हैं?

समाधान—पल्यकी वर्गशलाकाओंके जितने अर्धच्छेद हों उतने अधिक हैं।

पलिदोवमपढमवग्गमूलं असंखेज्जगुणं। सुगममेत्थ कारणं। एगपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरमसंखेज्जगुणं। कारणं णाणागुणहाणिसलागाहि कम्मट्ठिदीए ओवट्टिदाए असंखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि आगच्छंति त्ति। दिवड्ढगुणहाणिट्ठाणंतरं विसेसाहियं। के० विसेसो? दुभागमेत्तेण। णिसेयभागहारो विसेसो। के०मेत्तेण? तिभागमेत्तेण। अण्णोण्णब्भत्थरासी असंखे०गुणो। एत्थ कारणं सुगमं। पलिदोवममसंखेज्जगुणं। सुगमं। विज्झादसंकमभागहारो असंखेज्जगुणो। किं कारणं? अंगुलस्स असंखे०भागपमाणत्तादो। उव्वेल्लणभागहारो असंखेज्जगुणो। दोण्हमेदेसिमंगुलस्सासंखे०भागपमाणत्ताविसेसे वि पदेससंकमप्पाबहुअसुत्तादो एदस्सासंखेज्जगुणत्तमवगम्मदे। अणुभागवग्गणाणं णाणापदेसगुणहाणिसलागाओ अणंतगुणाओ। किं कारणं? अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणं सिद्धाणमणंतभागपमाणत्तादो। एगपदेसगुणहाणि

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—परम गुरुओंके उपदेशसे जाना जाता है।

पल्यके अर्धच्छेदोंसे पल्यका प्रथम वर्गमूल असंख्यातगुणा है। इसका कारण सुगम है। इससे एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तर असंख्यातगुणा है, क्योंकि कर्मस्थितिमें नानागुणहानि-शलाकाओंका भाग देनेपर पल्यके असंख्यात प्रथमवर्गमूल प्राप्त होते हैं। एकप्रदेशगुणहानि-स्थानान्तरसे डेढ़गुणहानिस्थानान्तर विशेष अधिक है।

शंका—कितना अधिक है?

समाधान—दूसरा भाग अधिक है।

डेढ़गुणहानिस्थानान्तरसे निषेकभागहार विशेष अधिक है।

शंका—कितना अधिक है?

समाधान—तीसरा भाग अधिक है।

निषेकभागहारसे अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी है। इसका कारण सुगम है। इससे पल्य असंख्यातगुणा है। इसका भी कारण सुगम है। इससे विध्यातसंक्रमभागहार असंख्यातगुणा है।

शंका—इसके असंख्यातगुणे होनेका क्या कारण है?

समाधान—क्योंकि विध्यातसंक्रमभागहार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिये इसे पल्यसे असंख्यातगुणा बतलाया है।

विध्यातसंक्रमभागहारसे उद्वेलनभागहार असंख्यातगुणा है। यद्यपि ये दोनों ही भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं तो भी प्रदेशसंक्रमअल्पबहुत्वविषयक सूत्रसे ज्ञात होता है कि विध्यातसंक्रमभागहारसे उद्वेलनभागहार असंख्यातगुणा है। उद्वेलनभागहारसे अनुभाग वर्गणाओंकी नानाप्रदेशगुणहानिशलाकायें अनन्तगुणी हैं क्योंकि ये अभव्योंसे अनन्तगुणी और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण हैं। इससे एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तर अनन्तगुणा है।

ट्ठाणंतरमणंतगुणं । दिवड्ढगुणहाणिट्ठाणंतरं विसेसाहियं । णिसेयभागहारो विसेसो । अण्णोण्णब्भत्थरासी अणंतगुणो त्ति ।

एवमप्पाबहुए समत्ते झीणमझीणं ति पदं समत्तं होदि ।

ट्ठिदियं ति चूलिया

भद्दं सम्मद्दंसणणाणचरित्ताणममलसाराणं ।
जिणवरवयणमहोवहिगब्भसमब्भूयरयणाण ॥
सुहुमयतिहुवणसिहरट्ठिदियतियसिद्धवदिय वीर ।
इणमो पणमिय सिरसा वोच्छं ठिदिय ति अहियारं ॥१॥

* ठिदियं ति जं पदं तस्स विहासा ।

§ ५९७. एत्तो उवरि ठिदिय ति ज पद मूलगाहाए चरिमावयवभूदं वा सद्देण सूचिदासेसविसेसपरूवण तस्स विहासा अहिकीरदि त्ति सुत्तत्थसबंधो । तत्थ किं ठिदिय णाम ? ट्ठिदीओ गच्छइ त्ति ट्ठिदिय पदेसग्ग ट्ठिदिपत्तयमिदि उत्त होदि ।

इससे द्व्यर्धगुणहानिस्थानान्तर विशेप अधिक है। इससे निपेकभागहार विशेप अधिक है। इससे अन्योन्याभ्यस्तराशि अनन्तगुणी है।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त हो जानेपर गाथामें आये हुए
'झीणमझीण' इस पदकी व्याख्या समाप्त होती है।

स्थितिग चूलिका

जैसे महोदधिके गर्भसे उत्तमोत्तम रत्न निकलते हैं उसी प्रकार जो जिनेन्द्रदेवके वचनरूपी महोदधिसे निकले हैं और जो ससारके सब निर्मल पदार्थोंमें सारभूत हैं ऐसे सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्ररूप तीनो रत्नोकी सदा जय हो ॥ १ ॥

सुखमय और तीन लोकके अग्र भागमें स्थित सिद्धरूपसे वन्दनीय ऐसे इन वीर जिनको मस्तकसे प्रणाम करके स्थितिग नामक अधिकारका कथन करता हूँ ॥ २ ॥

* गाथामें जो 'ट्ठिदिय' पद है उसका विशेप व्याख्यान करते है।

§ ५९७ इसके आगे अर्थात् मूल गाथामें आये हुए 'झीणमझीण' पदकी व्याख्याके बाद मूल गाथाके अन्तिम चरणमें जो 'ट्ठिदिय' पद है और जिसके अन्तमें आये हुए 'वा' पदसे सागोपाग सब प्ररूपणाका सूचन होता है, अब उसके विशेष व्याख्यानका अधिकार है यह इस सूत्रका तात्पर्यार्थ है।

शंका—'ट्ठिदिय' इस पदका क्या अर्थ है ?

समाधान—'ट्ठिदिय' का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ स्थितिग अर्थात् स्थितिको प्राप्त हुए कर्मपरमाणु होता है।

ण्णो उक्कस्सट्ठिदिपत्तयादीणं सरूवविसेसजाणावणट्ठं पदेसविहत्तीए चूलियासरूवेण एसो अहियारो समोइण्णो त्ति भावत्थो। संपहि एत्थ संभवंताणमणियोगद्दाराणं परूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ तत्थ तिण्णि अणियोगद्दाराणि। तं जहा—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअं च।

§ ५९८ तत्थ ट्ठिदियं त्ति एदस्स बीजपदस्स अत्थविहासाए कीरमाणाए तिण्णि अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति। काणि ताणि त्ति सिस्साहिप्पायं तं जहा त्ति आसंकिय तेसिं णामणिद्देसो कीरदे समुक्कित्तणा इच्चाइणा। तत्थ समुक्कित्तणा णाम उक्कस्सट्ठिदिपत्तयादीणमत्थित्तमेत्तपरूवणा। तत्थ समुक्कित्तिदाणं, सरूवविसेस परिक्खा सामित्तं णाम। तेसिं चेव थोवबहुत्तपरिक्खा अप्पाबहुअमिदि भण्णदे। एवमेत्थ तिण्णि अणियोगद्दाराणि होंति त्ति परूविय संपहि तेहि पयदत्थाणुगमं कुणमाणो जहा उद्देसो तहा णिद्देसो त्ति णायादो समुक्कित्तणाणुगममेव ताव विहासिदुकामो इदमाह—

❀ समुक्कित्तणाए अत्थि उक्कस्सट्ठिदिपत्तयं णिसेयट्ठिदिपत्तयं अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं उदयट्ठिदिपत्तयं च।

§ ५९९ सव्वेसिं कम्माणमेदाणि चत्तारि वि ट्ठिदिपत्तयाणि अत्थि त्ति

इसलिये उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त आदिकके विशेष स्वरूपका ज्ञान करानेके लिये प्रदेशविभक्तिके चूलिकारूपसे यह अधिकार आया है यह तात्पर्य यहाँ लेना चाहिये। अब यहाँ पर जो अधिकार सम्भव हैं उनका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

* इस प्रकरणमें तीन अनुयोगद्वार हैं। यथा—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व।

§ ५९८. यहाँ पर अर्थात् 'ठिदियं' इस बीजपदके अर्थका विवरण करते समय तीन अनुयोगद्वार जानने हैं। वे तीन अनुयोगद्वार कौन कौन हैं इस प्रकार शिष्यके अभिप्रायको 'तं जहा' पदद्वारा प्रकट करके समुत्कीर्तना इत्यादि पदोंद्वारा उनका नामनिर्देश किया है। इनमेंसे उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त आदि कर्मपरमाणुओंके अस्तित्वमात्रका कथन करना समुत्कीर्तना है। समुत्कीर्तना अनुयोगद्वारमें जिनका निर्देश किया है उनके स्वरूपविशेषकी परीक्षा करना स्वामित्व है और उन्हींके अल्पबहुत्वकी परीक्षा करना अल्पबहुत्व कहलाता है। इस प्रकार इस प्रकरणमें तीन अनुयोगद्वार होते हैं इसका कथन करके अब उनके द्वारा प्रकृत विषयका अनुशीलन करते हुए 'उद्देश्यके अनुसार निर्देश किया जाता है' इस न्यायके अनुसार समुत्कीर्तना अनुयोगद्वारका ही विवरण करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

* समुत्कीर्तनाकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त, निषेकस्थितिप्राप्त, यथानिषेक स्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त कर्मपरमाणु हैं।

§ ५९९. सब कर्मोंके ये चार स्थितिप्राप्त होते हैं यह इसका तात्पर्य है। इस प्रकार इस

समुक्कित्तिदं होइ। एवमेदेसिमुक्कस्सादिट्ठिदिपत्तयाणमत्थित्तमेत्तमेदेण सुत्तेण समुक्कित्तिय संपहि तेसिं चेव सरूवविसए णिण्णयजणणट्ठमट्ठपदं परूवेमाणो उक्कस्सट्ठिदिपत्तयमेव ताव पुच्छासुत्तेण पत्तावसरं करेइ—

❀ उक्कस्सयट्ठिदिपत्तयं णाम किं।

§ ६००. उक्कस्सट्ठिदिपत्तयसरूवविसेसावहारणपरमेदं पुच्छासुत्तं। संपहि एदिस्से पुच्छाए उत्तरमाह—

❀ **जं कम्मं बंधसमयादो कम्मट्ठिदीए उदए दीसइ तमुक्कस्सट्ठिदिपत्तयं।**

§ ६०१. एतदुक्तं भवति—जं कम्मपदेसग्गं बंधसमयादो प्पहुडि कम्मट्ठिदिमेत्तकालमच्छियूण सगकम्मट्ठिदिचरिमसमए उदए दीसइ तमुक्कस्सट्ठिदिपत्तयमिदि भण्णदे, अग्गट्ठिदीए वट्टमाणत्तादो त्ति। णाणासमयपबद्धे अस्सियूण किण्ण घेप्पदे? ण, तेसिमक्कमेण अग्गट्ठिदिपत्तयत्तासंभवादो। बंधसमए चेव किण्ण घेप्पदे? ण, चउण्हं पि ट्ठिदिपत्तयाणमुदयं पेक्खियूण गहणादो। तत्थ वि ण चरिमणिसेयपरमाणूणं चेव सुद्धाणमुक्कस्सट्ठिदिपत्तयसण्णा, किंतु पढमणिसेयादिपदेसाणं पि तत्थुक्कड्डिदाण-

सूत्र द्वारा इन उत्कृष्ट आदि स्थितिप्राप्त कर्मपरमाणुओंका अस्तित्वमात्र बतलाकर अब उनके स्वरूपके विषयमें विशेष निर्णय करनेके लिये अर्थपदका कथन करते हुए पृच्छासूत्र द्वारा सर्वप्रथम उत्कृष्ट स्थितिप्राप्तके निर्देशकी ही सूचना करते हैं—

* उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त किसे कहते हैं।

§ ६०० उत्कृष्ट स्थितिप्राप्तके स्वरूप विशेषका निश्चय करानेवाला यह पृच्छासूत्र है। अब इस पृच्छाका उत्तर कहते हैं—

* **जो कर्म बन्धसमयसे लेकर कर्मस्थितिके अन्तमें उदयमें दिखाई देता है वह उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त है।**

§ ६०१. इस सूत्रका यह अभिप्राय है कि जो कर्मपरमाणु बन्ध समयसे लेकर कर्मस्थितिप्रमाण कालतक रहकर अपनी कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें उदयमे दिखाई देता है वह उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त कर्म कहलाता है, क्योंकि वह अग्रस्थितिमें विद्यमान रहता है।

शंका—यह उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त कर्म नाना समयप्रबद्धोंकी अपेक्षा क्यों नहीं लिया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि नाना समयप्रबद्धोंका एक साथ अग्रस्थितिको प्राप्त होना सम्भव नहीं है।

शंका—उत्कृष्ट स्थितिप्राप्तका बन्ध समयमें ही क्यों नहीं ग्रहण किया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि चारों ही स्थिति प्राप्त कर्मोंका उदयकी अपेक्षा ग्रहण किया है।

उसमे भी केवल अन्तिम निषेकके परमाणुओंकी यह उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त संज्ञा नहीं है

एसा सण्णा त्ति घेत्तव्वं, अण्णहा उक्कस्सयसमयपबद्धस्स अग्गट्ठिदीए जत्तियं णिसित्तं तत्तियमुक्कस्सेण त्ति भणिस्समाणपरूवणाए सह विरोहप्पसंगादो। ण च चरिमणिसेयस्सेव अप्पणाहियस्स जहाणिसित्तसरूवेणोदयसंभवो, ओकड्डिय विणासियत्तादो। तम्हा एयसमयपबद्धणाणाणिसेयावलंबणेण पयदट्ठिदिपत्तयमवट्ठिदमिदि सिद्धं।

किन्तु प्रथम निषेक आदिके जिन परमाणुओंका उत्कर्षण होकर यहाँ निक्षेप हो गया है उनकी भी यही संज्ञा है ऐसा अर्थ यहाँपर लेना चाहिये। यदि यह अर्थ न लिया जाय तो 'एक समयप्रबद्ध की अग्रस्थितिमें जितना द्रव्य निषिक्त होता है उतना द्रव्य उत्कृष्ट रूपसे अग्रस्थितिप्राप्त है' यह जो सूत्र आगे कहा जायगा उसके साथ विरोध प्राप्त होता है। यदि कहा जाय कि न्यून-अधिकपनेके बिना अन्तिम निषेकका ही बन्धके समय जैसा उसमें कर्मपरमाणुओंका निक्षेप हुआ है उसी रूपसे उदय होना सम्भव है सो यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि अपकर्षण होकर उसका विनाश देखा जाता है। इस लिये एक समयप्रबद्धके नाना निषेकोंके अवलम्बनसे ही प्रकृत स्थितिप्राप्त अवस्थित है यह बात सिद्ध होती है।

विशेषार्थ—प्रदेशसत्कर्मका विचार करते हुए उत्कृष्टादिकके भेदसे उनका बहुत्वकी विचार किया। उसके बाद यह भी बतलाया कि सत्तामें स्थित इन कर्मोंमेंसे कौन कर्मपरमाणु अपकर्षण, उत्कर्षण संक्रमण और उदयके योग्य है और कौन कर्मपरमाणु इनके अयोग्य हैं। किन्तु अब तक यह नहीं बतलाया था कि इन सत्तामें स्थित कर्मपरमाणुओंके उदयकी अपेक्षा कितने भेद हो सकते हैं? क्या जिन कर्मोंका जिस रूपमें बन्ध होता है उसी रूपमें वे उदयमें आते हैं या उनमें हेर फेर भी सम्भव है। यदि हेर फेर सम्भव है तो उदयकी अपेक्षा उसके कितने प्रकार हो सकते हैं? प्रस्तुत प्रकरणमें इसी बातका विस्तारसे विचार किया गया है। यहाँ ऐसे प्रकार चार बतलाये हैं—उत्कृष्टस्थितिप्राप्त, निषेकस्थितिप्राप्त, यथानिषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त। इनमेंसे प्रत्येकका खुलासा चूर्णिसूत्रकारने स्वयं किया है इसलिये यहाँ हम सबके विषयमें निर्देश नहीं कर रहे हैं। प्रकृतमें उत्कृष्टस्थितिप्राप्त विचारणीय है। चूर्णिसूत्रमें इस सम्बन्धमें इतना ही कहा है कि बन्धसमयसे लेकर कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें जो उदयमें दिखाई देता है वह उत्कृष्टस्थितिप्राप्त कर्म है। इस परसे अनेक शंकायें पैदा होती हैं? कि क्या इस अग्रस्थितिमें नाना समयप्रबद्धोंके कर्मपरमाणु लिये जा सकते हैं यह पहली शंका है। इसका समाधान नकारात्मक ही होगा, क्योंकि नाना समयप्रबद्धोंकी अग्रस्थिति एक समयमें नहीं प्राप्त हो सकती।। दूसरी शंका यह पैदा होती है कि बन्धके समय ही उत्कृष्टस्थितिप्राप्त यह संज्ञा न देकर जब वह अग्रस्थिति उदयगत होती है तभी उत्कृष्टस्थितिप्राप्त यह संज्ञा क्यों दी गई है? इसका समाधान यह है कि ये संज्ञाएँ उदयकी अपेक्षासे ही व्यवहृत हुई हैं, इसलिये जब अग्रस्थिति उदयगत होती है तभी उत्कृष्टस्थितिप्राप्त इस संज्ञाका व्यवहार होता है। तीसरी शंका यह है कि बन्धके समय जिन कर्मपरमाणुओंमें उत्कृष्ट स्थिति पड़ती है वे ही केवल उत्कृष्ट स्थितिके उदयगत होनेपर उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त कहलाते हैं या उत्कर्षण द्वारा उसी समयप्रबद्धकी अन्य स्थितियोंमें स्थित कर्मपरमाणुओंके भी उत्कृष्ट स्थितिको प्राप्त करके उत्कृष्ट स्थितिके उदयगत होनेपर वे कर्मपरमाणु भी उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त कहलाते हैं? इसका समाधान यह है कि अग्रस्थितिमें बन्धके समय जितने भी कर्मपरमाणु प्राप्त होते हैं अपनी स्थितिके अन्त समय तक वे वैसे ही नहीं बने रहते हैं। यदि स्थितिकाण्डकघात और संक्रमणकी चर्चाको छोड़ दिया जाय, क्योंकि यह चर्चा इस प्रकरणमें उपयोगी नहीं है तो भी बहुतसे कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण

❀ णिसेयट्ठिदिपत्तयं णाम किं ?

§ ६०२. सव्वं पि पदेसग्गं णिसेयट्ठिदिपत्तयमेव, णिसेयट्ठिदिमपत्तयस्स कम्मसाणुववत्तीदो। तदो किण्णाम तं णिसेयट्ठिदिपत्तयं जं विसेसेणापुव्वं परूविज्जदि त्ति ? एवविहासंकासूचयमेदं पुच्छावक्कं। संपहि एदिस्से आसकाए णिरायरणट्ठं तस्स सरूवमुत्तरसुत्तेण परूवेइ—

❀ जं कम्मं जिस्से ट्ठिदीए णिसित्तं ओकड्डिदं वा उक्कड्डिदं वा तिस्से चेव ट्ठिदीए उदए दिस्सइ तं णिसेयट्ठिदिपत्तयं।

§ ६०३. एवमुक्तं भवति—जं कम्मं बंधसमए जिस्से ट्ठिदीए णिसित्तमोकड्डिदं वा उक्कड्डिदं वा संतं पुणो वि तिस्से चेव ट्ठिदीए होऊण उदयकाले दीसइ तं णिसेयट्ठिदिपत्तयमिदि। एदं च णाणासमयपबद्धप्पयमेयणिसेयमवलंबिय पयट्टमिदि घेत्तव्वं। कथमेत्थमोकड्डिदमुक्कड्डिदं वा पदेसग्गमुदयसमए तिस्से चेव ट्ठिदीए दिस्सइ त्ति

हो जाता है और नीचेकी स्थितिमें स्थित बहुतसे कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण होकर वे अग्रस्थितिमें भी पहुँच जाते हैं। तात्पर्य यह है कि बन्धके समय निषेककी जैसी रचना हुई रहती है उसके अपने उदयको प्राप्त होने तक उसमें बहुत हेरफेर हो जाता है। इससे ज्ञात होता है कि एक समयप्रबद्धके नानानिषेकसम्बन्धी जितने कर्मपरमाणु अग्रस्थितिमें प्राप्त रहते हैं उनका उदय होने पर वे सब उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त कहलाते हैं। चूर्णिसूत्रमें आगे जो उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त कर्मके स्वामित्वका निर्देश करनेवाला सूत्र है उससे भी इसी बातकी पुष्टि होती है। इस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त कर्म किसे कहते हैं इसका विचार किया।

* निषेकस्थितिप्राप्त किसे कहते हैं ?

§ ६०२ जितना भी कर्म है वह सबका सब निषेकस्थितिप्राप्त ही होता है, क्योंकि जो निषेक स्थितिको प्राप्त नहीं होता वह कर्म ही नहीं हो सकता, इसलिये वह निषेकस्थितिप्राप्त कौनसा कर्म है जिसका विशेष रूपसे यहाँ नये सिरेसे वर्णन किया जा रहा है। इस तरह इस प्रकारकी आशंकाको सूचित करनेवाला यह पृच्छासूत्र है। अब इस आशंकाका निराकरण करनेके लिये उसका स्वरूप अगले सूत्र द्वारा कहते हैं—

* जो कर्म जिस स्थितिमें निक्षिप्त हुआ है अपकर्षित होकर या उत्कर्षित होकर उदयके समय यदि वह उसी स्थितिमें दिखाई देता है तो वह निषेकस्थितिप्राप्त कहलाता है।

§ ६०३ इस सूत्रका यह आशय है कि बन्धके समय जो कर्म जिस स्थितिमें निक्षिप्त हुआ है अपकर्षित होकर या उत्कर्षित होकर फिर भी उदयके समय यदि वह उसी स्थितिमें दिखाई देता है तो वह कर्म निषेकस्थितिप्राप्त कहलाता है। यह सूत्र नाना समयप्रबद्धोंसे सम्बन्ध रखनेवाले एक निषेककी अपेक्षा प्रवृत्त हुआ है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

शंका—प्रकृतमें जिन कर्मोंका अपकर्षण और उत्कर्षण हुआ है वे कर्म उदय समयमें उसी स्थितिमें कैसे दिखलाई देते हैं ?

मासंकणिज्जं, पुणो वि तक्कड्डुणोकड्डणाहि तत्थाभावाविरोहादो। ण सव्वेसिं णिसेय ट्ठिदिपत्तयत्तादो एदस्स विसेसियपरूवणा णिरत्थिया त्ति पुव्विल्लासंका वि, तेसिमेसो विसेसणत्तो।

⊛ अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं णाम किं ?

§ ६०४ किमेदमुक्कस्सट्ठिदिपत्तयं व एयसमयपबद्धपडिबद्धमाहो णाणासमय पबद्धणिबंधणणिसेयट्ठिदिपत्तयं व, को वा तत्तो एदस्स लक्खणविसेसो त्ति ? एवं विहाहिप्पाएण पयट्टमेदं पुच्छासुत्तं।

⊛ जं कम्मं जिस्से ट्ठिदीए णिसित्तं अणोकड्डिदं अणुक्कड्डिदं तिस्से चेव ट्ठिदीए उदए दिस्सइ तमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं।

§ ६०५ एतदुक्तं भवति—जइ वि एदं णाणासमयपबद्धाणमेवि तो वि

समाधान—ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि पहले जिन कर्मोंका अपकर्षण हुआ था उनका उत्कर्षण होकर और जिन कर्मोंका उत्कर्षण हुआ था उनका अपकर्षण होकर उदय समयमें फिरसे उसी स्थितिमें दिखाई देना विरोधको प्राप्त नहीं होता है।

यदि कहा जाय कि सभी कर्म निषेकस्थितिप्राप्त होते हैं, इसलिये इसका विशेष रूपसे कथन करना निरर्थक है सो ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि इससे इनमें विशेषता आ जाती है।

विशेषार्थ—यहाँ पर निषेकस्थितिप्राप्त कर्मसे क्या अभिप्राय है इसका खुलासा किया गया है। यद्यपि निषेकरूपवाले बाहर कोई भी कर्म नहीं होता है पर प्रकृतमें यह अर्थ इष्ट है कि बन्धके समय जो कर्म जिस निषेकमें प्राप्त हुआ हो उदयके समय भी वह कर्म यदि उसी निषेकमें दिखाई देता है तो वह निषेकस्थितिप्राप्त है। जैसे उत्कृष्ट स्थितिप्राप्तमें अग्रस्थितिकी मुख्यता थी निषेककी नहीं वैसे ही यहाँ किसी भी स्थितिकी मुख्यता न होकर निषेककी मुख्यता है। यही कारण है कि प्रकृतमें नाना समयप्रबद्धसम्बन्धी एक निषेकका ग्रहण किया है। इस एक निषेकमें विविध समयप्रबद्धोंके विविध स्थितिवाले कर्मपरमाणु पाये जाते हैं यह इसका तात्पर्य है। यहाँ इतना और विशेष जानना चाहिए कि अपकर्षण और उत्कर्षण होकर जो कर्म विवक्षित निषेकसे नीचकी और ऊपरकी स्थितिमें निक्षिप्त हो गये हैं, पुनः उत्कर्षण और अपकर्षण होकर यदि वे उसी विवक्षित निषेकमें आकर उदय समयमें उसी निषेकमें दिखाई देते हैं तो उनका भी यहाँ ग्रहण हो जाता है।

⊛ यथानिषेकस्थितिप्राप्त किसे कहते हैं।

§ ६०४ क्या यह उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त कर्मके समान एक समयप्रबद्धसम्बन्धी है या निषेकस्थितिप्राप्तके समान नाना समयप्रबद्धसम्बन्धी है ? तथा इसके लक्षणमें क्या विशेषता है इस तरह इस प्रकारके अभिप्रायसे यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है।

⊛ जो कर्म जिस स्थितिमें निक्षिप्त हुआ है अपकर्षण और उत्कर्षणके बिना यदि वह कर्म उदयके समय उसी स्थितिमें दिखाई देता है तो वह यथानिषेकस्थितिप्राप्त कहलाता है।

§ ६०५ इस सूत्रका यह अभिप्राय है—यद्यपि इसका नाना समयप्रबद्धोंसे सम्बन्ध है

पुव्विल्लादो एदस्स महंतो विसेसो। कुदो? जं कम्मं जिस्से ट्ठिदीए बंधसमए णिसित्तमणोकड्डिदमुक्कड्डिद जहा णिसित्त तहावट्ठिद संत तिस्से चेव ट्ठिदीए कम्मोदएण विपच्चिहिदि तमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमिदि गहणादो। पुव्विल्लं पुण ओकड्डुक्कड्डणवसेण जत्थ तत्थ वावविखत्तसरूवेणावट्ठिदं संगलिदसरूवेण तम्मि चेव ट्ठिदीए उदयमागच्छंत गहिदमिदि। कथं जहाणिसेयस्स अधाणिसेयववएसो त्ति ण पच्चवट्ठेयं, 'क्चतिकगतदयवा लोव अत्थं वहति तत्थ सरा' इदि यकारस्स लोवं काऊण णिद्देसादो। जहाणिसेयसरूवेणावट्ठिदस्स ट्ठिदिक्खएणोदयमागच्छंतस्स णाणासमयपबद्धसंबंधपदेसपुंजस्स अत्थाणुगओ पयदववएसो त्ति भणिदं होइ।

❀ उदयट्ठिदिपत्तयं णाम किं?

§ ६०६. पुव्विल्लाणि सव्वाणि चेव उदयं पेक्खियूण भणिदाणि तम्हा ण तत्तो एदस्स भेदो त्ति एवंविहासंकाए पयट्टमेदं पुच्छासुत्तं। संपहि एदिस्से आसंकाए णिरायरणट्ठमिदमाह—

तो भी निषेकस्थितिप्राप्तसे इसमें बड़ा अन्तर है, क्योंकि बन्धके समय जो कर्म जिस स्थितिमें निक्षिप्त हुआ है, अपकर्षण और उत्कर्षणके बिना जिस प्रकार निक्षिप्त हुआ है उसी प्रकार रहते हुए यदि कर्मोदयके समय उसी स्थितिमें वह फल देता है तो वह यथानिषेकस्थितिप्राप्त कर्म है ऐसा यहाँ ग्रहण किया है। परन्तु पहला जो निषेकस्थितिप्राप्त कर्म है सो वहाँ अपकर्षण और उत्कर्षणके वशसे यत्र तत्र कहीं भी निक्षिप्त होकर कर्म अवस्थित रहता है परन्तु गलते समय उसी स्थितिमें वह कर्म उदयको प्राप्त होता है, यह अर्थ लिया गया है।

शंका—यथानिषिक्त कर्मकी यथानिषेक यह संज्ञा कैसे हो सकती है?

समाधान—ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि—'क, ग, त, द, य और व इनका लोप होने पर स्वर उनके अर्थकी पूर्ति करते हैं।' व्याकरणके इस नियमके अनुसार 'य' का लोप करके उक्त प्रकारसे निर्देश किया है। नाना समयप्रबद्धसम्बन्धी जो प्रदेशपुंज बन्धके समय जिस प्रकारसे निक्षिप्त हुआ है उसी प्रकारसे अवस्थित रहकर स्थितिका क्षय होने पर उदयमें आता है उसकी यह सार्थक संज्ञा है, यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—निषेकस्थितिप्राप्तसे इसमें इतना ही अन्तर है कि वहाँ तो जिनका अपकर्षण उत्कर्षण होकर अन्यत्र निक्षेप हुआ है, अपकर्षण उत्कर्षण होकर वे परमाणु यदि पुनः उसी स्थितिमें प्राप्त होकर उदयमें आते हैं तो उनका ग्रहण होता है परन्तु यथानिषेकस्थितिप्राप्तमें उन्हीं परमाणुओंका ग्रहण होता है जो तदवस्थ रहकर अन्तमें उदयमें आते हैं। इसके सिवा इन दोनोंमें और कोई अन्तर नहीं है।

❀ उदयस्थितिप्राप्त किसे कहते हैं?

§ ६०६ पूर्वोक्त सभी स्थितिप्राप्त कर्म उदयकी अपेक्षा ही कहे हैं, इसलिये उनसे इसमें कोई भेद नहीं रहता इस प्रकारकी आशंकाके होने पर यह पृच्छासूत्र प्रवृत्त हुआ है। अब इस आशंकाके निराकरण करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ जं कम्ममुदए जत्थ वा तत्थ वा दिस्सइ तमुदयट्ठिदिपत्तयं।

§ ६०७ एदस्स भावत्थो—ण ताव अग्गट्ठिदिपत्तयम्मि एदस्स अंतब्भावो, ट्ठिदिविसेसमेयसमयपबद्धं च पेक्खियूण तस्स परूविदत्तादो। एत्थ तहाविहणियमाभावादो। ण णिसेय अधाणिसेयट्ठिदिपत्तएसु वि, तेसिं पि बंधसमयणिसेयपडिबद्धत्तादो। तदो जं कम्मं जत्थ वा तत्थ वा ट्ठिदीए होदूण अविसेसेण उदयमागच्छदि तमुदयट्ठिदिपत्तयमिदि घेत्तव्वं।

❀ एवमट्ठपदं।

§ ६०८ उक्कस्सट्ठिदिपत्तयादीणं चउण्हं पि अत्थविसयणिण्णयणिबंधणमेदमट्ठपदं सव्वेसिं कम्माणं साहारणभावेण परूविदमवहारेयव्वं। पुणो वि विसेसिय चउण्हमेदेसिं परूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ एत्तो एक्केक्कट्ठिदिपत्तय चउव्विहमुक्कस्समणुक्कस्सं जहण्णमजहण्णं च।

§ ६०९ एत्तो अट्ठपदपरूवणाणंतरमेक्केक्कट्ठिदिपत्तयं चउव्विहं होइ उक्कस्सादिभेएण। एत्थ एक्केक्कट्ठिदिपत्तयमाहणं पादेक्कं चउण्हं पदाणं अहिसंबंधणट्ठमेक्केक्कस्स वा मिच्छत्तादिपयडिविसेसस्स चउव्विहं पि ट्ठिदिपत्तयं पादेक्कमुक्कस्सादिभेएण

✽ जो कर्म उदयके समय जब तब कहीं भी दिखाई देता है वह उदयस्थितिप्राप्त कहलाता है।

§ ६०७ इस सूत्रका भावार्थ यह है कि अग्रस्थितिप्राप्तमें तो इसका अन्तर्भाव होता नहीं क्योंकि वह स्थितिविशेष और एक समयप्रबद्धकी अपेक्षा प्रवृत्त हुआ है। किन्तु इसमें उस प्रकारका कोई नियम नहीं पाया जाता। निषेकस्थितिप्राप्त और यथानिषेकस्थितिप्राप्त कर्मोंमें भी इसका अन्तर्भाव नहीं हो सकता क्योंकि वे भी बन्ध समयके निषेकोंसे प्रतिबद्ध हैं, इसलिये जो कर्म जहाँ कहीं भी स्थितिमें रहकर अन्य किसी प्रकारकी विशेषताके बिना उदयको प्राप्त होता है वह उदयस्थितिप्राप्त कर्म है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

✽ यह अर्थपद है।

§ ६०८ उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त आदि चारोंका भी अर्थविषयक निर्णय करनेके सम्बन्धसे यह अर्थपद आया है जो सामान्यरूपसे सब कर्मोंका कहा गया जानना चाहिये। अब फिर भी इन चारोंके विषयमें विशेष बातके कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

✽ एक एक स्थितिप्राप्तके चार चार भेद हैं—उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य।

§ ६०९ अब इस अर्थपदके कथन करनेके बाद उत्कृष्ट आदिके भेदसे एक एक स्थितिप्राप्त चार-चार प्रकारका है यह बतलाते हैं। यहाँ सूत्रमें प्रत्येक स्थितिप्राप्तका चार चारसे सम्बन्ध बतलानेके लिये 'एक्केक्कट्ठिदिपत्तयं' पदका ग्रहण किया है। अथवा मिथ्यात्व आदिके एक एक

चउव्विह होइ त्ति घेत्तव्व । तदो सव्वेसिं कम्माणं पुध पुध णिरुंभणं काऊण चउण्हं ट्ठिदिपत्तयाणमुक्कस्सादिपदविसेसिदाणमोघादेसेहि परूवणा कायव्वा । एवं कदे समुक्कित्तणाणियोगद्दारं समत्तं ।

❀ सामित्तं ।

§ ६१०. सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं ।

❀ मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ६११. सुगममेद पुच्छावक्कं । एव सामित्तविसयाए पुच्छाए तस्सेव परिकरभावेण अग्गट्ठिदिपत्तयवियप्पपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ अग्गट्ठिदिपत्तयमेक्को वा दो वा पदेसा एवमेगादि-एगुत्तरियाए वड्ढीए जाव ताव उक्कस्सयं समयपबद्धस्स अग्गट्ठिदीए जत्तियं णिसित्तं तत्तियमुक्कस्सेण अग्गट्ठिदिपत्तयं ।

§ ६१२. अग्गट्ठिदिपत्तयस्स उक्कस्ससामित्ते पुच्छिदे तमपरूविय तव्वियप्पपरूवणा किमट्ठं कीरदे ? ण, उक्कस्सदव्वपमाणे अणवगए तव्विसयसामित्तस्स सुहेणावगंतुमसक्कियत्तादो । अहवा उक्कस्ससामित्तपरूवणाए अणुक्कस्ससामित्तं पि

प्रकृतिविशेषके चारों ही स्थितिप्राप्त प्रत्येक उत्कृष्ट आदिके भेदसे चार चार प्रकारके होते हैं यह अर्थ यहाँ पर लेना चाहिये । इसलिये सभी कर्मों को अलग अलग विवक्षित करके उत्कृष्ट आदि पदोंसे युक्त चारों ही स्थितिप्राप्तोंका ओघ और आदेशकी अपेक्षा कथन करना चाहिये । इस प्रकार करने पर समुत्कीर्तना अनुयोगद्वार समाप्त होता है ।

※ अब स्वामित्वका अधिकार है ।

§ ६१० अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है ।

※ मिथ्यात्व कर्मकी अपेक्षा उत्कृष्ट अग्रस्थितिप्राप्त कर्मका स्वामी कौन है ?

§ ६११. यह पृच्छावाक्य सरल है । इस प्रकार स्वामित्वविषयक पृच्छाके होने पर उसीके परिकररूपसे अग्रस्थितिप्राप्तके भेदोंका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

※ एक कर्मपरमाणु अग्रस्थितिप्राप्त होता है, दो कर्मपरमाणु अग्रस्थितिप्राप्त होते हैं । इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एक कर्मपरमाणुके बढ़ाने पर एक समयप्रबद्धकी अग्रस्थितिमें जितना उत्कृष्ट द्रव्य निक्षिप्त होता है उत्कृष्ट रूपसे उतना द्रव्य अग्रस्थितिप्राप्त होता है ।

§ ६१२ **शंका**—पृछा तो अग्रस्थितिप्राप्त कर्मके उत्कृष्ट स्वामित्वके विषयमें गया था पर उसका कथन न करके यहाँ उसके भेदोंका कथन किसलिये किया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उत्कृष्ट द्रव्यके प्रमाणके अनवगत रहने पर तद्विषयक स्वामित्वका सुखपूर्वक ज्ञान नहीं हो सकता, इसलिये यहाँ उसके भेदोंका कथन किया गया है । अथवा उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करते समय अनुत्कृष्ट स्वामित्वका भी कथन करना

पत्तेयव्वं, अण्णहा एक्केक्कं ट्ठिदिपत्तयं पडिच्छिदमिदि परूवणाए विहलत्तप्पसंगादो। तं च उक्कस्सादो परमाणुत्तरादिकमेणावट्ठिदं णिरंतरसरूवेण जाव एगो परमाणु त्ति एदस्स भावावगमट्ठमेसा परूवणा त्ति सुसंबद्धमेदं ।

§ ६१३ संपहि एवं परूविदसंबंधस्सेदस्स सुत्तस्सत्थविवरणं कस्सामो। तं जहा—कम्मट्ठिदिपढमसमए जं बद्धं मिच्छत्तपदेसग्गं तं सत्तरिसागरोवमकोडाकोडिमेत्तकम्मट्ठिदीए असंखेज्जे भागे अच्छिय पुणो पलिदोवमासंखेज्जदिभागपमाणुक्कस्स णिल्लेवणकालम्मि त्ति सुद्धं होऊण गच्छइ। तदो उवरिमाणंतरसमए वि सुद्धं होऊण गच्छइ। एवं णिरंतरं गंतूण जाव कम्मट्ठिदिचरिमसमए वि सुद्धं होदूण तस्स गमणं संभवइ। पुणो तमेवं णिल्लेविज्जमाणं कम्मट्ठिदीए पुण्णाए एगो वि परमाणू सेसूणावट्ठाणं लहइ। किं कारणमिदि भणिदे विवक्खियसमयपबद्धस्स एगेण वि परमाणुणा विणा जइ कम्मट्ठिदिचरिमसमओ सुण्णो होऊण लब्भइ तो गलिदसेसेग-परमाणुणा सहियत्तं सुट्ठु लब्भदि त्ति णत्थि एत्थ संदेहो। एवं दो वि परमाणू लब्भंति। एदेण कारणेण अग्गट्ठिदिपत्तयमेक्को वा दो वा पदेसा त्ति सुत्ते वुत्तं। एवमेगादि-एगुत्तरियाए वड्ढीए ताव एवं णेदव्वं जाव समयपबद्धस्स अग्गट्ठिदीए पत्तियमुक्कस्सयं पदेसग्गं तं णिसित्तं ति।

§ ६१४ एत्थ समयपबद्धस्से त्ति भणिदे सण्णिपंचिंदियपज्जत्तएण पबद्धस्स

चाहिये, अन्यथा एक एक स्थिति प्राप्तको जो बार बार प्ररूपणा बतलायी है सो उस कथनको निष्फलताका प्रसंग प्राप्त होता है। और वह अनुत्कृष्ट उत्कर्षमेंसे निरन्तर एक एक परमाणुके घटने पर एक परमाणुके प्राप्त होने तक होता है इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिये यह प्ररूपणा की है, इसलिये यह कथन सुसम्बद्ध है।

§ ६१३ इस प्रकार इस सूत्रके सम्बन्धका कथन करके अब उसके अर्थका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है—कर्मस्थितिके प्रथम समयमें मिथ्यात्वका जो द्रव्य बँधा है वह सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण कर्मस्थितिके असंख्यात बहुभाग तक रहता है फिर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण उत्कृष्ट निर्लेपन कालके भीतर उसका अभाव हो जाता है। या इससे एक समय और जाने पर उसका अभाव होता है। इस प्रकार निरन्तर एक एक समयके जाने पर कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें भी अभाव होकर उसका गमन सम्भव है। यद्यपि वह इस प्रकार अभावको प्राप्त होता है तो भी कभी कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें एक परमाणु भी शेष रहता है। कारण यह है कि विवक्षित समयप्रबद्धके एक परमाणुके बिना भी यदि कर्मस्थितिका अन्तिम समय शून्यरूपसे प्राप्त हो सकता है तो इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि अन्य सब परमाणुओंको गलाकर शेष बचे एक परमाणुके साथ भी कर्मस्थितिका यह अन्तिम समय प्राप्त किया जा सकता है। इसी प्रकार कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें दो परमाणु भी प्राप्त होते हैं। इसी कारणसे सूत्रमें 'अग्गट्ठिदिपत्तयं एक्को वा दो वा पदेसा' यह वचन कहा है। इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एक परमाणुका बढ़ाते हुए कर्मस्थितिमें जितना उत्कृष्ट द्रव्य निक्षिप्त होता है उसके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये।

§ ६१४ यहाँ सूत्रमें जो 'समयपबद्धस्स' यह पद दिया है सो उससे संज्ञी पञ्चेन्द्रिय

जोगिणा बद्धेयसमयपबद्धस्स गहणं कायव्वं, अण्णहा अग्गट्ठिदीए उक्कस्सणिसेयाणुववत्तीदो। तत्तियमुक्कस्सेण अग्गट्ठिदिपत्तय जत्तिय तमणंतरपरूविदं। चरिमणिसेयउक्कस्सपदेसग्गमेयसमयपबद्धणिबद्ध तत्तियमेत्तमुक्कस्सग्गेण अग्गिट्ठिदिपत्तयं होइ त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। ण चेदमेत्तियं जहाणिसेयसरूवेण लब्भइ, ओकड्डिय कम्मट्ठिदिअब्भंतरे विणासियत्तादो। किं तु उक्कड्डणाए कम्मट्ठिदिचरिमसमए धरिदपदेसग्गमेत्तिय होइ त्ति गहेयव्वं। तम्हा एयसमयपबद्धणाणाणिसेए उक्कड्डिय धरिदपदेसग्गमेत्तियमुदयगयमुक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं होइ त्ति सिद्धं।

§ ६१५. एवं णिहालिदपमाणस्सेदस्स अणुक्कस्सवियप्पेहि सह सामित्तविहाणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** तं पुण अण्णदरस्स होज्ज।**

पर्याप्तके द्वारा उत्कृष्ट योगसे बाँधे गये एक समयप्रबद्धका ग्रहण करना चाहिये, अन्यथा अग्रस्थितिमें उत्कृष्ट निषेक नहीं प्राप्त हो सकते हैं। उत्कृष्टरूपसे अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्य उतना ही होता है जितनेका अनन्तर कथन कर आये हैं। एक समयप्रबद्धके अन्तिम निषेकमें जितना उत्कृष्ट द्रव्य होता है उतना उत्कृष्टरूपसे अग्रस्थितिप्राप्त होता है यह यहाँ इस सूत्रका समुदायरूप अर्थ है। जिस रूपसे इसका अग्रस्थितिमें निक्षेप होता है उसी रूपसे वह उतना पाया जाता है यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि अपकर्षण होकर कर्मस्थितिके भीतर ही उसका विनाश देखा जाता है। किन्तु उत्कर्षणके द्वारा कर्मस्थितिके अन्तिम समयमें उतना द्रव्य पाया जा सकता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, इसलिये यह बात सिद्ध हुई कि एक समयप्रबद्धके नानानिषेकोंका उत्कर्षण होकर उदयगत उतना द्रव्य हो जाता है जो अग्रस्थितिप्राप्त उत्कृष्ट द्रव्यके बराबर होता है।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त द्रव्यके उत्कृष्ट स्वामित्वका विचार करते समय यह बतलाया गया है कि उदयके समय अग्रस्थितिमें कमसे कम कितना और अधिकसे अधिक कितना द्रव्य प्राप्त होता है। स्थितिकाण्डकघात आदिके द्वारा अग्रस्थितिका सर्वथा अभाव हो जाय यह दूसरी बात है पर यदि उसका अभाव नहीं होता तो यह सम्भव है कि एक परमाणुको छोड़कर उसके और सब द्रव्यका अपकर्षण होकर विनाश हो जाय। यह भी सम्भव है कि दो परमाणुओंके सिवा और सब द्रव्यका अपकर्षण होकर विनाश हो जाय। इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एक परमाणुको बढ़ाते हुए अग्रस्थितिमें एक समयप्रबद्धका जितना द्रव्य प्राप्त होता है उतना प्राप्त होने तक यह द्रव्य पाया जा सकता है। पर सबका सब बन्धके समय अग्रस्थितिमें जैसा प्राप्त हुआ था वैसा ही अपने उदय कालके प्राप्त होनेतक नहीं बना रहता है, किन्तु इसमेंसे बहुतसे द्रव्यका अपकर्षण आदि भी हो जाता है, इसलिये यह घट तो जाता है तो भी उन्हींका पुनः या अन्य निषेकोंके द्रव्यका उत्कर्षण करके वह उतना अवश्य किया जा सकता है यह इसका भाव है।

§ ६१५ इस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिप्राप्तके प्रमाणका विचार करके अब अनुत्कृष्ट विकल्पोंके साथ इसके स्वामित्वका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** उस उत्कृष्ट अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी कोई भी जीव होता है।**

§ ६१६ तं पुण पुव्वं परूविदविसईकयमणुक्कस्सट्ठिदिपत्तयं सव्वेसिमादा णवाणुक्कस्सवियप्पगब्भस्स जीवस्स संबंधी होइ, विरोहाभावादो। णवरि खविद कम्मंसियं मोत्तूण उक्कस्ससामित्तं वत्तव्वं, तत्थुक्कस्साभावादो।

❀ अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयं कस्स ?

§ ६१७ एत्थ मिच्छत्तग्गहणमणुवट्टदे। सेसं सुगमं।

❀ तस्स ताव संदरिसणा।

§ ६१८ तस्स अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयस्स सामित्तपरूवणट्ठं ताव उवसंदरिसणा पत्थुवजोगी संबंधपरूवणा कीरइ त्ति पइज्जासुत्तमेदं।

❀ उदयादो जहण्णयमाबाहामेत्तमोसक्किदूण जो समयपबद्धो तस्स णत्थि अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं।

§ ६१९ अधाणिसेयसामित्तसमयादो जहण्णाबाहामेत्तं हेट्ठदो ओसक्किदूण बद्धो जो समयपबद्धो तस्स णिरुद्धट्ठिदीए णत्थि अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं पदेसग्गमिदि वुत्तं होइ। कुदो तस्स तत्थ णत्थित्तं ? तत्तो अणंतरोवरिमट्ठिदिमादिं कादूणुवरि

§ ६१६. जिसका विषय पहले बतला आये हैं और जिसमें अनन्त अनुत्कृष्ट विकल्प गर्भित हैं उस उत्कृष्ट स्थितिप्राप्तका कोई भी जीव स्वामी हो सकता है, क्योंकि ऐसा माननेमें कोई विरोध नहीं आता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि क्षपितकर्मांश जीवको छोड़कर अन्यके उत्कृष्ट स्वामित्व कहना चाहिये, क्यों कि जो क्षपितकर्मांश जीव है उसके उत्कृष्ट विकल्प सम्भव नहीं है।

विशेषार्थ—एक क्षपितकर्मांश जीवको छोड़कर अन्य सब जीवोंके बन्धके समयमें अग्रस्थितिमें जितना द्रव्य प्राप्त हुआ था उदयके समय उत्कर्षणके सम्बन्धसे उतना द्रव्य पाया जा सकता है, इसलिये उत्कृष्ट अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी किसी भी जीवको बतलाया है।

❀ उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्तका स्वामी कौन है ?

§ ६१७ इस सूत्रमें 'मिथ्यात्व' पदकी अनुवृत्ति होती है। शेष कथन सुगम है।

❀ अब उसका स्पष्टीकरण करते हैं।

§ ६१८. अब उस यथानिषेकस्थितिप्राप्तके स्वामित्वका कथन करनेके लिए उपसंदर्शना अर्थात् प्रकृतमें उपयोगी सम्बन्धित अर्थोंकी प्ररूपणा करते हैं। इस प्रकार यह प्रतिज्ञा सूत्र है।

❀ उदय समयसे जघन्य आबाधाप्रमाण स्थान नीचे जाकर जो समयप्रबद्ध बंधता है उसका विवक्षित स्थितिमें यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य नहीं है।

§ ६१९. यथानिषेकके स्वामित्वसमयसे जघन्य आबाधाप्रमाण स्थान नीचे (पीछे) जाकर जो समयप्रबद्ध बंधा है उसका विवक्षित स्थितिमें यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य नहीं है यह इस सूत्रका तात्पर्य है।

शंका—उसका यहाँ अस्तित्व क्यों नहीं है ?

समाधान—क्योंकि प्रकृत स्वामित्वके समयसे जो अनन्तरवर्ती उपरिम स्थिति है

पयदसमयपवद्धस्स णिसेयदंसणादो । एदं च अवत्थुवियप्पाणमंतदीवयभावेण परूविदं, तेण जहण्णावाहामेत्ता चेव जहाणिसेयस्स अवत्थुवियप्पा परूवेयव्वा ।

❀ समयुत्तराए आवाहाए एवदिमचरिमसमयपवद्धस्स अधाणिसेओ अत्थि ।

§ ६२०. कुदो? आवाहामेत्तमइच्छाविय पयदसमयपवद्धस्स णिरुद्धट्ठिदीए णिसेयदसणादो । एत्थ जहण्णग्गहणेणाणुवट्टमाणेण आवाहा विसेसियव्वा ।

❀ तत्तो पाए जाव असंखेज्जाणि पलिदोवमवग्गमूलाणि तावदिम-समयपवद्धस्स अधाणिसेओ णियमा अत्थि ।

§ ६२१. तत्तो समयुत्तरजहण्णावाहमेत्तमोसक्किदूण बद्धसमयपवद्धादो प्पहुडि हेट्ठिमसेसासेससमयपवद्धाणं जहाणिसेओ णिरुद्धट्ठिदीए णियमा अत्थि जाव असंखेज्जाणि पलिदोवमपढमवग्गमूलाणि हेट्ठदो ओसरियूण वद्धसमयपवद्धस्स जहाणिसेओ

उससे लेकर ऊपरकी स्थितियोंमें प्रकृत समयप्रवद्धके निषेक देखे जाते हैं। अवस्तुविकल्पोंके अन्तदीपकरूपसे इस विकल्पका कथन किया है। इसलिये यथानिषेकस्थितिप्राप्तके जघन्य आवाधाप्रमाण अवस्तुविकल्पोंका कथन करना चाहिये।

विशेषार्थ—आबाधा कालके भीतर निषेकरचना नहीं होती है ऐसा नियम है और यहाँ पर यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यको उदय समयमें प्राप्त करना है। किन्तु यह तभी हो सकता है जब जघन्य आबाधाके सब समय गल जावें। इसलिए यहाँ पर जघन्य आवाधाके भीतर किसी भी समयमें बँधे हुए यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यके अस्तित्वका विवक्षित स्वामित्व समयमें निषेध किया है। सूत्रमें अन्तदीपक रूपसे मात्र अन्तिम विकल्पका निर्देश किया है, इसलिए उससे आबाधा कालके भीतर बन्धको प्राप्त होनेवाले उन सब यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्योंका ग्रहण कर लेना चाहिए, क्योंकि उनका विवक्षित स्वामित्व समयमें प्राप्त होना सम्भव नहीं है।

*** आवाधाके एक समय अधिक होने पर उस अन्तिम समयप्रबद्धका यथानिषेक विवक्षित स्थितिमें है।**

§ ६२० क्योंकि आवाधाप्रमाण कालको अतिस्थापनारूपसे स्थापित करके प्रकृत समयप्रवद्धका निषेक विवक्षित स्थितिमें देखा जाता है। इस सूत्रमें जघन्य पदके ग्रहण द्वारा उसकी अनुवृत्ति करके उससे आबाधाको विशेषित करना चाहिये।

*** फिर वहाँसे लेकर पल्यके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण पीछेके कालके भीतर जितने समयप्रवद्ध बँधते हैं उनका यथानिषेक विवक्षित स्थितिमें नियमसे है।**

§ ६२१ उससे अर्थात् एक समय अधिक जघन्य अवाधाप्रमाण स्थान पीछे जाकर जो समयप्रवद्ध बँधता है उससे लेकर पल्यके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण स्थान नीचे जाकर बँधे हुए समयप्रबद्धके यथानिषेक तकके पीछेके बाकी सब समयप्रवद्धोका यथानिषेक विवक्षित स्थितिमें नियमसे है।

त्ति । इगिमासेसकम्मट्ठिदिअब्भंतरसंचिदसव्वदव्वस्स जहाणिसेओ अहियारट्ठिदीए णिम्म लब्भइ त्ति भणिदु ण, ओकड्डुक्कड्डणाहि तस्स णिल्लेवणसंभवेण णिरंतरत्थित्त णियमाभावादो । तं जहा—एयसमयम्मि बद्धकम्मपोग्गलदव्वं णिच्छएणासंखेज्ज पलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तणिसेएसु णिरंतरमवट्ठाणं लहइ । पुणो तदुवरिमगोवुच्छ-प्पहुडि ओकड्डुक्कड्डणवसेण एयपरमाणुणा विणा सुद्धा होऊण गच्छइ । एवं णिल्लेविदे अहियारगोवुच्छाए उवरि तदित्थसमयपबद्धणिसेओ जहाणिसेयणियम सरूवेण ण लब्भइ, तेण असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तणिसेयकालस्सेव गहणं कयं । अदो चेय णियमा अत्थि त्ति परूविदं, अणियमेण इदिमाणं पि संतरसरूवेण संभवविरोहाभावादो । किमेसो अधाणिसेयसंचयकालो बहुओ आहो एयगुणहाणि ट्ठाणंतरमिदि ? एसो कालो असंखेज्जगुणो, पल्लासंखेज्जगुणहाणीणमुवलंभादो । तम्हा एत्तियमेत्तकालब्भंतरसंचओ अप्पहाणीकयइगिसमयपबद्धो णिरुद्धट्ठिदीए जहाणिसेयसरूवेण णियमा अत्थि त्ति सिद्धं ।

शंका—पीछेके सब कर्मस्थितियोंके भीतर संचित हुए द्रव्यका यथानिषेक अधिकृत स्थितिमें क्यों नहीं प्राप्त होता है ?

समाधान—नहीं क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा उक्त द्रव्यका अभाव सम्भव है, इसलिये उसका निरन्तर अस्तित्व पाये जानेका कोई नियम नहीं है। खुलासा इस प्रकार है—एक समयमें जो पुद्गल द्रव्य बँधता है उसका नियमसे पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण निषेकोंमें निरन्तर अवस्थान पाया जाता है। फिर इसके उपरिम गोपुच्छासे लेकर एक परमाणुके बिना उस सब द्रव्यका अपकर्षण उत्कर्षणके कारण अभाव हो जाता है। इस प्रकार उसका अभाव हो जाने पर अधिकृत गोपुच्छामें पहलेके समयप्रबद्धका निषेक यथानिषेकरूपसे नहीं पाया जाता है इसलिये यहाँ पर पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण कालका ही ग्रहण किया है। और इसीलिये सूत्रमें 'णियमा अत्थि' यह कहा है क्योंकि अनियमसे बाकीके समयप्रबद्धोंके कर्मपरमाणुओंके भी यहाँ सान्तररूपसे सद्भाव माननेमें कोई विरोध नहीं आता।

शंका—क्या यह यथानिषेकका संचयकाल बहुत है या एक गुणहानिस्थानान्तर प्रमाण है ?

समाधान—यह काल एक गुणहानिस्थानान्तरसे असंख्यातगुणा है क्योंकि यहाँ असंख्यात गुणहानियाँ पाई जाती हैं।

इसलिये इतने कालके भीतर जो संचय होता है वह विवक्षित स्थितिमें यथानिषेकरूपसे नियमसे है यह बात सिद्ध हुई। किन्तु यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये कि इसमें इस कालके भीतरके एक समयप्रबद्धके द्रव्यको गौण कर दिया है। अर्थात् उस द्रव्यका यहाँ पाया जाना यद्यपि सम्भव तो है पर नियम नहीं, इसलिये उसकी विवक्षा नहीं की है।

विशेषार्थ—जो कर्म बन्धके बाद बराबर उसी [illegible] नियमसे पाया जाता है। [illegible] पर इसके पाये जानेका कोई नियम नहीं है। परन्तु पल्यके असंख्यातवें [illegible] होता

§ ६२२. एवमेदं परूविय संपहि एदस्सेव उक्कस्सअधाणिसेयसंचयस्स पमाणगवेसणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

*** एक्कस्स समयपबद्धस्स एक्किस्से ट्ठिदीए जो उक्कस्सओ अधाणिसेओ तत्तो केवडिगुणं उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं।**

§ ६२३. णिरुद्धट्ठिदीदो समयुत्तरजहण्णाबाहमेत्तमोसक्किय्र्ण अवट्ठिदो जो समयपबद्धो उक्कस्सजोगेण बद्धो तस्स एयस्स समयपबद्धस्स एक्किस्से जहण्णाबाहाबाहिरट्ठिदीए जो उक्कस्सओ अधाणिसेओ तत्तो केवडिगुणं पलिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तसगुक्कस्ससंचयकालब्भंतरगलिदावसिट्ठणाणासमयपबद्धप्पयमुक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं ? किं संखेज्जगुणमाहो असंखेज्जगुणमिदि पुच्छिदं होइ। एवं पुच्छिदे एवदिगुणमिदि परूविसममाणो तस्सेव ताव गुणयारस्स पमाणपरूवणट्ठमवहारकालप्पाबहुअं णिदरिसणसरूवेण भणदि—

*** तस्स णिदरिसणं।**

§ ६२४. तस्स गुणयारस्स सरूवपदंसणट्ठं णिदरिसणं भणिस्सामो त्ति वुत्तं होइ।

*** जहा।**

है जिसे पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण बतलाया है। इसीलिये यहाँ पर विवक्षित स्थितिमें वेदककालके भीतरके यथानिषेकोंका सद्भाव नियमसे बतलाया है।

§ ६२२ इस प्रकार इसका कथन करके यथानिषेकके इसी उत्कृष्ट प्रमाणका विचार करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** एक समयप्रबद्धकी एक स्थितिमें जो उत्कृष्ट यथानिषेक है उससे यह उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य कितना गुणा है ?**

§ ६२३ विवक्षित स्थितिसे एक समय अधिक जघन्य आबाधाप्रमाण स्थान पीछे जाकर उत्कृष्ट योगसे बाँधा गया जो समयप्रबद्ध अवस्थित है उस एक समयप्रबद्धकी जघन्य आबाधाके बाहरकी एक स्थितिमें जो उत्कृष्ट यथानिषेक प्राप्त होता है उससे पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अपने उत्कृष्ट सचयकालके भीतर गलाकर शेष बचा हुआ नाना समयप्रबद्धसम्बन्धी उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य कितना गुणा होता है ? क्या संख्यातगुणा होता है या असंख्यातगुणा होता है, इस प्रकार इस सूत्र द्वारा यह बात पूछी गई है। इस प्रकार पूछने पर इतना गुणा होता है यह बतलानेकी इच्छासे सर्व प्रथम उसी गुणकारके प्रमाणका कथन करनेके लिये पहले उदाहरणरूपमें अवहारकालका अल्पबहुत्व कहते हैं—

*** उसका उदाहरण देते हैं।**

§ ६२४. अब उसके अर्थात् गुणकारके स्वरूपको दिखलानेके लिए उदाहरण कहेंगे यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** यथा—**

§ ६२५. तं जहा त्ति आसंकावयणमेदं।

*** ओकड्डुक्कड्डणाए कम्मस्स अवहारकालो थोवो।**

§ ६२६. एयसमयम्मि जं पदेसग्गमोकड्डिज्जदि उक्कड्डिज्जदि वा तस्स पदेसग्गस्स भागहारभूदो जो अवहारकालो सो थोवयरो त्ति भणिदं होदि।

*** अधापवत्तसंकमेण कम्मस्स अवहारकालो असंखेज्जगुणो।**

§ ६२७. जइ वि एत्थ मिच्छत्तस्स अधापवत्तसंकमो णत्थि तो वि ओकड्डुक्कड्डणभागहारस्स पमाणपरिच्छेदकरणट्ठमेदस्स तत्तो असंखेज्जगुणत्तं परूविदं। एदम्हादो भागपरीभूदो ओकड्डुक्कड्डणभागहारो एत्थ गुणगारो होदि त्ति। अथवा सोलसकसाय-णवणोकसायाणमेयसमयम्मि पबद्धमेयट्ठिदिणिसित्तपदेसग्गमावलियमेत्तकालेण पुणो उवरिमसमयप्पहुडि ओकड्डुक्कड्डणाए विणासं गच्छइ। परपयडिसंकमेण वि तत्थोकड्डुक्कड्डणाए विणासिज्जमाणदव्वं पहाणं, परपयडिसंकमेण विणासिज्जमाणदव्वमप्पहाणमिदि जाणावणट्ठमेदमवहारकालप्पाबहुअं भणिदं, अण्णहा तदवगमोवायाभावादो।

*** ओकड्डुक्कड्डणाए कम्मस्स जो अवहारकालो सो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।**

---

§ ६२५. यह 'तथा' इस प्रकार आशंकावचन है।

*** अपकर्षण-उत्कर्षण द्वारा कर्मका जो अवहारकाल होता है वह सबसे थोड़ा है।**

§ ६२६. एक समयमें जो कर्म अपकर्षित होता है या उत्कर्षित होता है उस कर्मको प्राप्त करनेके लिए जो अवहारकाल है वह सबसे थोड़ा है यह इस सूत्रका तात्पर्य है।

*** इससे अधःप्रवृत्तसंक्रमणद्वारा कर्मका जो अवहारकाल होता है वह असंख्यातगुणा है।**

§ ६२७. यद्यपि यहाँ मिथ्यात्वका अधःप्रवृत्तसंक्रम नहीं होता है तो भी अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारके प्रमाणका निर्णय करनेके लिये इसे उससे असंख्यातगुणा बतलाया है। इस भागहारसे भागरूप जो अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार है वह यहाँ गुणकार होता है। अथवा सोलह कषाय और नौ नोकषायोंमेंसे एक समयमें बँधा हुआ जो द्रव्य एक स्थितिमें निक्षिप्त हुआ है वह एक आवलि कालके व्यतीत होने पर उपरिम समयसे लेकर अपकर्षण-उत्कर्षण द्वारा विनाशको प्राप्त होता है। यहाँ परप्रकृतिसंक्रमणकी अपेक्षा अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाला द्रव्य ही प्रधान है किन्तु परप्रकृतिसंक्रमणके द्वारा विनाशको प्राप्त होनेवाला द्रव्य प्रधान नहीं है इस प्रकार इस बातका बतानेके लिये यह अवहारकालविषयक अल्पबहुत्व कहा है, अन्यथा उसका ज्ञान नहीं हो सकता है।

*** अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा कर्मका जो अवहारकाल होता है वह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।**

§ ६२८. जो पुव्वं थोवभावेण परूविदो ओकड्डुक्कड्डणाए कम्मस्स अवहारकालो सो पमाणेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो होइ। कधमेदं परिच्छिज्जदे? एदम्हादो चेव सुत्तादो। संपहि एवमवहारिदपमाणस्स ओकड्डुक्कड्डणभागहारस्स पयदगुणगारत्त-विहाणट्ठमुत्तरसुत्त—

*** एवदिगुणमेक्कस्स समयपबद्धस्स एक्किस्से ट्ठिदीए उक्कस्सयादो जहाणिसेयादो उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं।**

§ ६२९. जावदिओ एसो ओकड्डुक्कड्डणाए कम्मस्स अवहारकालो एवदिगुणं णिरुद्धट्ठिदीदो समयुत्तरजहण्णाबाहमेत्तमोसक्कियूण बद्धसमयपबद्धपढमणिसेय-पडिबद्धादो उक्कस्सयादो अधाणिसेयादो ओघुक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तय सगसंचय-कालब्भतरसंचयं होइ त्ति भणिदं होदि।

§ ६३०. संपहि एदेण सुत्तेण परूविदोकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तगुणगारसाहणट्ठ-मिमा ताव परूवणा कीरदे। तं जहा—उक्कस्सयसामित्तसमयादो हेट्ठदो समयुत्तर-

---

§ ६२८. जो पहले अल्परूपसे कर्मका अपकर्षण-उत्कर्षणअवहारकाल कहा है वह पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है।

इस प्रकार अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारके प्रमाणका निश्चय करके अब उसका प्रकृत गुणकाररूपसे विधान करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** एक समयप्रबद्धकी एक स्थितिमें प्राप्त उत्कृष्ट यथानिषेकसे उत्कृष्ट यथा-निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य इतना गुणा है।**

§ ६२९ अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा कर्मका यह अवहारकाल जितना है, विवक्षित स्थितिसे एक समय अधिक जघन्य आबाधाप्रमाण स्थान पीछे जाकर जो समयप्रबद्ध बँधा है उसके प्रथम निषेकसम्बन्धी उत्कृष्ट यथानिषेकसे ओघ उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य अपने संचयकालके भीतर संचय रूप होता हुआ उतना गुणा है यह इस सूत्रका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—यहाँ विवक्षित स्थितिमें यथानिषेकस्थितिप्राप्त उत्कृष्ट द्रव्य कितना होता है इसका प्रमाण बतलाया है। यह तो पहले ही बतला आये हैं कि इसमें कितने कालके भीतर संचित हुए यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका ग्रहण किया गया है। अब उस संचयको प्राप्त करनेके लिये यह करना चाहिये कि विवक्षित स्थितिसे एक समय अधिक जघन्य आबाधाप्रमाण स्थान पीछे जाकर जो समयप्रबद्ध बँधा हो उसके प्रथम निषेकमें जितना उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य हो उसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणा कर देना चाहिये। सो ऐसा करनेसे विवक्षित स्थितिमें उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका प्रमाण आ जाता है। यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यहाँ प्रकरणसे कुछ अवहार कालोंका अल्पबहुत्व भी बतलाया है सो वह अपकर्षण-उत्कर्षण अवहारकालका प्रमाण प्राप्त करनेके लिये ही बतलाया है ऐसा समझना चाहिये।

§ ६३० इस सूत्र द्वारा जो अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारप्रमाण गुणकार कहा है सो उसकी सिद्धिके लिये अब यह प्ररूपणा करते है। वह इस प्रकार है—उत्कृष्ट स्वामित्वके समयसे नीचे

मयण्णाबाहाए ठाइदूण जं बद्धकम्मं तं दिवड्ढगुणहाणीए संखेज्जेयसंडमहियारगोवुच्छाए उवरि संछुहदि। संपहि एदं बंधावलियादिक्कंतमोकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडिय तत्थेयखंडं हेट्ठा उवरिं च संछुहिय णासेइ। पुणो बिदियसमयम्मि सेसदव्वं मोकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडेयूणेयखंडमेत्तं विणासेइ। णवरि पढमसमयम्मि विणासिददव्वादो बिदियसमयविणासिददव्वं विसेसहीणं होइ। केत्तियमेत्तेण? पढमसमयम्मि विणासिददव्वं ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडिदेयखंडमेत्तेण। एवं तदियसमए वि विणासेदि। एत्थ वि अणंतरविणासिददव्वादो विसेसहीणपमाणं पुव्वं व वत्तव्वं। एवं चेव चउत्थसमयप्पहुडि गच्छइ जाव समयूणदोआवलियूणजहण्णाबाहामेत्तकालो त्ति। किं कारणं समयूणदोआवलियाओ ण लब्भंति त्ति भणिदे समयुत्तरजहण्णाबाहाए ठाइदूण बद्धं जं कम्मं तमाबाहापढमसमयप्पहुडि समयूणावलियमेत्तकालं बोलाविय ओकड्डुक्कड्डणसरूवेण णासेदुं पारभदि। पुणो ताव ओकड्डुक्कड्डणाए वावारो जाव अहियारट्ठिदी उदयावलियं पविसमाणपढमसमयं पविट्ठा त्ति। उदयावलियब्भंतरपविट्ठाए पुण णत्थि ओकड्डणा उक्कड्डणा वा। तेण कारणेणेदं सयलमुदयावलियं पुव्विल्ल-

---

एक समय अधिक जघन्य आबाधाको स्थापित करके वहाँ जो कर्म बँधा हो उसमें डेढ़ गुणहानिका भाग देने पर जो एक भागप्रमाण द्रव्य प्राप्त हो वह अधिकारप्राप्त गोपुच्छामें निक्षिप्त होता है। फिर बंधावलिके बाद इस द्रव्यका अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे भाजित करके जो एक भाग प्राप्त होता है उसका नीचे-ऊपर निक्षेप करके नाश कर देता है। फिर शेष द्रव्यमें अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग देकर जो एक भाग प्राप्त होता है उसका दूसरे समयमें नाश करता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रथम समयमें द्रव्यके जितने हिस्सेका नाश होता है उससे दूसरे समयमें नाशको प्राप्त होनेवाला द्रव्य विशेषहीन होता है।

शंका—कितना कम होता है?

समाधान—प्रथम समयमें विनाशको प्राप्त होनेवाले द्रव्यमें अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उतना कम होता है।

इसी प्रकार तीसरे समयमें भी द्रव्यका नाश करता है। यहाँ पर भी पूर्व समयमें विनाशको प्राप्त हुए द्रव्यसे विशेष हीनका प्रमाण पहलेके समान जानना चाहिये। इसी प्रकार चौथे समयसे लेकर एक समय कम दो आवलियोंसे न्यून जघन्य आबाधाप्रमाण कालके प्राप्त होने तक यह जीव उत्तरोत्तर प्रत्येक समयमें द्रव्यका नाश करता जाता है।

शंका—यहाँ एक समय कम दो आवलियाँ क्यों नहीं प्राप्त होती हैं?

समाधान—एक समय अधिक जघन्य आबाधा कालको स्थापित करके उस समय जो कर्म बँधता है उसे आबाधाके प्रथम समयसे लेकर एक समय कम एक आवलि कालके बाद अपकर्षण-उत्कर्षणरूपसे नष्ट करता है। फिर यह अपकर्षण उत्कर्षणरूप व्यापार तब तक चालू रहता है जब तक अधिकृत स्थिति उदयावलिके अन्तिम समयमें प्रवेश नहीं करती। उदयावलिके भीतर प्रवेश करने पर तो अपकर्षण और उत्कर्षण ये दोनों ही नहीं होते। इस कारणसे इस पूरी

समयूणबंधावलियं च एक्कदो मेलाविय एदाहि समयूणदोआवलियाहि परिहीणजहण्णा-बाहामेत्तो तदित्थणिसेयस्स ओकड्डुक्कड्डुणकालो होइ त्ति भणिदं।

§ ६३१. संपहि एदमेत्तियकालणट्ठदव्वमिच्छिय सयलेयसमयपबद्धं ठविय एदस्स हेट्ठा दिवड्ढगुणहाणिपदुप्पण्णमोकड्डुक्कड्डुणभागहारं समयूणदोआवलियूण-जहण्णाबाहाए ओवट्टिय विसेसाहियं काऊण भागहारभावेण ठविदे णट्ठासेसदव्व-मागच्छइ। पुणो णट्ठसेसमधाणिसेयदव्वमिच्छामो त्ति एयसमयपबद्धं ठवेयूण सादिरेय-दिवड्ढगुणहाणिमेत्तभागहारे ठविदे णासिदसेसदव्वमागच्छइ। एदं च पढमणिसेओ त्ति मणेण संकप्पिय पुध ठवेयव्वं। एगसमयुत्तरजहण्णाबाहाए ठाइदूण बद्धसमयपबद्धस्स जहाणिसेयपमाणपरूवणा गदा।

§ ६३२. दुसमयुत्तरजहण्णाबाहाए ठाइदूण बद्धसमयपबद्धस्स वि एवं चेव परूवणा कायव्वा। णवरि पढमणिसेयमोकड्डुक्कड्डुणभागहारेण खंडिय तत्थेयखंडेण विदियणिसेओ हीणो होइ, एयवारमोकड्डुक्कड्डुणाए पत्ताहियघादत्तादो। एदं च विसेसहीणदव्वं पुव्विल्लदव्वस्स पासे विदियणिसेओ त्ति पुध ठवेयव्वं। एव तिसमयुत्तराबाहाबद्धसमयपबद्धप्पहुडि हेट्ठा ओदारिदूण एगेगणिसेयं पुव्वभागहारेण विसेसहीणं काऊण णेदव्वं जाव ओकड्डुक्कड्डुणभागहारमेत्तद्धाणे त्ति। एदं चेव

उदयावलिको और पूर्वोक्त एक समय कम बन्धवलिको एकत्रित करने पर इन एक समय कम दो आवलियोंसे न्यून जघन्य आबाधाप्रमाण वहाँके निषेकका अपकर्षण-उत्कर्षणकाल होता है यह कहा है।

§ ६३१ अब इतने कालके भीतर नष्ट हुए इस द्रव्यके लानेकी इच्छासे पूरे एक समय-प्रबद्धको स्थापित करके इसके नीचे डेढ गुणहानिसे गुणित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारमें एक समय कम दो आवलियोंसे न्यून जघन्य आबाधाका भाग देने पर जो लब्ध आवे उसे विशेषा-धिक करके भागहाररूपसे स्थापित करने पर नष्ट हुए पूरे द्रव्यका प्रमाण आता है। फिर नष्ट होनेसे जो यथानिषेक द्रव्य बाकी बचा है उसे लानेकी इच्छासे एक समयप्रबद्धको स्थापित करके और उसके नीचे साधिक डेढ़ गुणहानिप्रमाण भागहारके स्थापित करने पर नाश होनेसे बाकी बचे हुए द्रव्यका प्रमाण आता है। यहाँ यह जो बाकी बचे हुए द्रव्यका प्रमाण आया है इसे मनसे प्रथम निषेक मानकर अलगसे स्थापित करे। इस प्रकार एक समय अधिक जघन्य आबाधाको स्थापित करके बधे हुए समयप्रबद्धमें जो यथानिषेकका प्रमाण प्राप्त होता है उसका कथन समाप्त हुआ।

§ ६३२ दो समय अधिक जघन्य आबाधाको स्थापित करके बधे हुए समयप्रबद्धका भी इसी प्रकार कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रथम निषेकमें अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारका भाग देनेसे वहाँ जो एक भाग प्राप्त हो दूसरा निषेक उतना हीन होता है, क्योंकि यहाँ अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारका एकबार अधिक भाग दिया गया है। इस विशेष हीन द्रव्यको पूर्वोक्त द्रव्यके पासमें दूसरा निषेक मानकर पृथक् स्थापित करना चाहिये। इसी प्रकार तीन समय अधिक आबाधाको स्थापित कर बद्धसमयप्रबद्धसे लेकर पीछे जाकर एक-एक निषेकको पूर्वोक्त भागहार द्वारा एक-एक भाग कम करके अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारप्रमाण स्थानके

एयगुणहाणिमद्धाणपमाणमिदि थूलसरूवेण गहेयव्वं ।

§ ६३३ पुणो विदियगुणहाणिप्पहुडि हेट्ठदो बहुगं झीयमाणं गच्छइ जाव अधाणिसेयकालपढमसमओ त्ति । एत्थ सव्वत्थ वि गुणहाणिअद्धाणमणंतरपरूविद मवहिदसरूवेण घेत्तव्वं । णिसेयभागहारो पुण दुगुणोकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तो । एत्थ पुण एरिसीओ असंखेज्जाओ गुणहाणीओ अत्थि, अधाणिसेयसंचयकालस्स असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलपमाणत्तादो । तदो अधाणिसेयकालपढमसमयम्मि बद्धसमयपबद्धदव्वमेत्थ चरिमणिसेओ त्ति घेत्तव्वं ।

§ ६३४ संपहि एदमसंखेज्जगुणहाणिदव्वं सव्वं समयुत्तराबाहाए ठाइदूण बद्धसमयपबद्धुक्कस्सपढमणिसेयपमाणेण समकरणं कादूण ओइदे दिवड्ढोकड्डुक्कड्डण भागहारमेत्तो गुणगारो उप्पज्जइ। सो च एसो $\begin{vmatrix} १ \\ १ \\ २ \end{vmatrix}$ । एसो च[१] दुगुणगुणयारादो

मदहिओ जादो त्ति एदं मोत्तूण पयारंतरेण गुणगारपरूवणमणुवत्तइस्सामो । तं जहा—समयुत्तरजहण्णाबाहाए ठाइदूण बद्धसमयपबद्धसव्वुक्कस्सगुणहाणिसयप्पहुडि एत्तो विसेसहीण विसेसहीणं होऊण गच्छमाणमोकड्डुक्कड्डणभागहारदुभागमेत्तद्धाणं

प्रमाण होने तक ले जाना चाहिये और यही एक गुणहानिस्थानका प्रमाण है ऐसा स्थूलरूपसे ग्रहण करना चाहिये।

§ ६३३. फिर दूसरी गुणहानिसे लेकर यथानिषेकके कालके प्रथम समयके प्राप्त होने तक नीचे बहुतसा द्रव्य क्रमसे प्राप्त हो जाता है। यहाँ सर्वत्र गुणहानिस्थानको पूर्वमें कहे गये गुणहानिस्थानके समान अवस्थितरूपसे ग्रहण करना चाहिये। निषेकभागहार तो अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसे दूना है। परन्तु यहाँ पर ऐसी असंख्यात गुणहानियाँ होती हैं क्योंकि यथानिषेकका संचयकाल पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है, इसलिये यथानिषेकके कालके प्रथम समयमें जो समयप्रबद्धका द्रव्य बँधता है उसे यहाँ अन्तिम निषेकरूपसे ग्रहण करना चाहिये।

§ ६३४ अब इस असंख्यात गुणहानिप्रमाण समस्त द्रव्यको एक समय अधिक आबाधाको स्थापित करके उस समय बँधे हुए समयप्रबद्धके उत्कृष्ट प्रथम निषेकके प्रमाणरूपसे समीकरण करके लाने पर अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे डेढ़ गुणा गुणकार उत्पन्न होता है। यह यह १२ है। और यह सूत्रोक्त गुणकारसे अर्धभागप्रमाण अधिक हो गया है, इसलिए इसे छोड़कर प्रकारान्तरसे गुणकारका कथन करते हैं। वह इस प्रकार है—एक समय अधिक जघन्य आबाधाको स्थापित करके जो समयप्रबद्ध बँधता है उसके सबसे उत्कृष्ट यथानिषेकसे लेकर पीछेके निषेक एक एक चय कम होते जाते हैं। और इस प्रकार अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका

१ ता० प्रतौ 'एसो $\begin{vmatrix} १ \\ २ \\ १ \end{vmatrix}$ । एसो च' इति पाठः ।

गंतूणेगसमयपबद्धपडिवद्धुक्कस्सजहाणिसेयद्धपमाणं चेट्ठदि। एदं चेव एयगुणहाणिपमाणमिदि घेत्तव्वं। एवमुवरि वि सव्वत्थोकड्डुक्कड्डुणभागहारं णिसेयभागहारं काऊण णेदव्वं जाव जहाणिसेयकालपढमसमओ त्ति। पुणो पुव्वं व सव्वदव्वे पढमणिसेयपमाणेण कदे ओकड्डुक्कड्डुणभागहारस्स तिण्णिचउब्भागमेत्ता पढमणिसेया होंति। एत्थ वि गुणगारो सुत्तुत्तपमाणे ण जादो तम्हा सुत्तुत्तगुणगारुप्पायणट्ठमेत्थोकड्डुक्कड्डुणभागहारस्स वेतिभागमेत्तं गुणहाणिअद्धाणमिदि घेत्तव्वं।

§ ६३५. संपहि एदस्स गुणहाणिअद्धाणस्स साहणट्ठमिमा परूवणा कीरदे। तं जहा—जहाणिसेयपढमगुणहाणिपढमणिसेयप्पहुडि हेट्ठा जहाकमं जहाणिसेयगोपुच्छपंती रचेयव्वा जाव ओकड्डुक्कड्डुणभागहारवेतिभागमेत्तद्धाणमोयरिय ट्ठिदगोवुच्छा त्ति। एदं चेव एयगुणहाणिट्ठाणंतरं। एवं विरचिदपढमगुणहाणिदव्वे णिसेयं पडि चरिमगोवुच्छपमाणं मोत्तूण सेसमहियदव्वं घेत्तूण पुध ट्ठवेयव्वं। एवं ठविदअहियदव्वपमाणगवेसणं कस्सामो। तत्थ ताव चरिमणिसेयादो अणंतरोवरिमगोवुच्छा एयपक्खेवमेत्तेण अहिया होइ। तस्स पमाणं केत्तियं? जहण्णणिसेयस्स संखेज्जदिभागमेत्तं। तस्स को पडिभागो? रूवूणोकड्डुक्कड्डुणभागहारो? तं पि कुदो? एकवार-

---

जितना प्रमाण है उससे अर्धभागप्रमाण स्थान जाकर एक समयप्रबद्धसे प्रतिबद्ध उत्कृष्ट यथानिषेकका प्रमाण आधा प्राप्त होता है। और यही एक गुणहानिका प्रमाण है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार आगे भी सर्वत्र अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारको निषेकभागहार करके यथानिषेक कालके प्रथम समयके प्राप्त होनेतक ले जाना चाहिये। फिर पहलेके समान सब द्रव्यको प्रथम निषेकके प्रमाणरूपसे करनेपर अपकर्षण उत्कर्षणभागहारके तीन बटे चार भागप्रमाण प्रथम निषेक प्राप्त होते हैं। यहाँ पर भी गुणकार सूत्रमें कहे गये गुणकारके बराबर नहीं हुआ है, इसलिये सूत्रमें कहे गये गुणकारको उत्पन्न करनेके लिये यहाँ पर अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके दो बटे तीन भागप्रमाण गुणहानिअध्वान है ऐसा ग्रहण करना चाहिये।

§ ६३५. अब इस गुणहानिअध्वानकी सिद्धिके लिये यह प्ररूपणा करते हैं। वह इस प्रकार है—यथानिषेककी प्रथम गुणहानिके प्रथम समयसे लेकर नीचे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके दो बटे तीन भागप्रमाण स्थान जाकर जो गोपुच्छा स्थित है उसके प्राप्त होने तक क्रमसे यथानिषेक गोपुच्छाओंकी पंक्तिकी रचना करना चाहिये और यही एक गुणहानिस्थानान्तरका प्रमाण है। इस प्रकार प्रथम गुणहानिके द्रव्यको स्थापित करके उसके प्रत्येक निषेकमेंसे अन्तिम गोपुच्छाके प्रमाणके सिवा शेष अधिक द्रव्यको एकत्रित करके अलग रख दे। इस प्रकार अलग रखे गये अधिक द्रव्यके प्रमाणका विचार करते हैं। यहाँ पर अन्तिम निषेकका जितना प्रमाण है उससे अनन्तर उपरिम गोपुच्छाका प्रमाण एक प्रक्षेपमात्र अधिक है।

शंका—उसका प्रमाण कितना है?

समाधान—जघन्य निषेकके संख्यातवें भागप्रमाण है।

शंका—उसका प्रतिभाग क्या है?

पयारेणुप्पादयव्वो। रूवूणचयमेत्तद्धाणमस्सिदूण संपुण्णोकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तो पक्खेव-पडिभागो घेत्तव्वो। एवं चरिमणिसेयादो दुचरिमणिसेयस्स विसेसो परूविदो।

§ ६३६. संपहि दुचरिमादो तिचरिमस्स अहियदव्वपमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—दुचरिमणिसेयं दोपडिरासीओ काऊण तत्थेयमोकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडिय पडिरासीकयरासीए उवरि पक्खित्ते तिचरिमणिसेओ उप्पज्जइ त्ति एत्थ चरिमणिसेयादो अहियदव्वपमाणं दो पक्खेवा एगो च पक्खेवपक्खेवो होइ। एदं पि पुव्वं व पडिरासिय तत्थेयमोकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडिय तत्थेयखंडे तत्थेव पक्खित्ते चउचरिमणिसेओ उप्पज्जइ त्ति तत्थ वि अणंतरदव्वादो अहियपमाणं तिण्णि पक्खेवा तिण्णि चेव पक्खेवपक्खेवा अण्णेगो च तप्पक्खेवो लब्भइ। तहा पंचचरिमे वि पुव्वविहाणेण चत्तारि पक्खेवा छ पक्खेवपक्खेवा चत्तारि च तप्पक्खेवा अण्णेगा च चुण्णी होइ। पुणो तत्तो उवरिमे वि पंच पक्खेवा दस पक्खेवपक्खेवा तत्तियमेत्ता चेव तप्पक्खेवा पंच चुण्णीओ अवरेगा च चुण्णाचुण्णी अहियसरूवेण लब्भंति। एवं णेयव्वमद्धाणमुवरि चडिय विसेसगवेसणा कीरइ चरिमणिसेयादो तत्थ तत्थ रूवूणचडिदद्धाणमेत्ता पक्खेवा दुरूवूणचडिदद्धाणसंकलणमेत्ता च पक्खेवपक्खेवा

समाधान—एक कम अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार है।

शंका—ऐसा क्यों है?

समाधान—क्योंकि यह एक बार अधिक भावसे प्राप्त हुआ है।

यद्यपि ऐसा है तो भी एक कमकी विवक्षा न करके यहाँ पर प्रक्षेपका प्रतिभाग सम्पूर्ण अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण लेना चाहिये। इस प्रकार चरम निषेकसे द्विचरम निषेकके विशेषका कथन किया।

§ ६३६. अब द्विचरम निषेकसे त्रिचरम निषेकमें जो अधिक द्रव्य है उसके प्रमाणका विचार करते हैं। यह इस प्रकार है—द्विचरम निषेककी दो प्रति राशियाँ स्थापित करो। फिर उनमेंसे एकमें अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग दो। भाग देने पर जो लब्ध आवे उसे अलग स्थापित की गई दूसरी राशिमें मिला देने पर त्रिचरम निषेक उत्पन्न होता है, अतः उस त्रिचरम निषेकमें चरम निषेकसे अधिक द्रव्यका प्रमाण दो प्रक्षेप और एक प्रक्षेपप्रक्षेप है। अब इस त्रिचरम निषेककी भी पूर्ववत् प्रतिराशि करो। फिर उनमेंसे एकमें अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग दो। भाग देनेसे जो एक भाग लब्ध आवे उसे अलग स्थापित की गई उसी राशिमें मिला देनेपर चतुश्चरम निषेक उत्पन्न होता है, अतः उस निषेकमें भी अनन्तर द्रव्यसे जो अधिक द्रव्य है उसका प्रमाण तीन प्रक्षेप तीन प्रक्षेप-प्रक्षेप और एक तत्प्रक्षेप प्राप्त होता है। इसी प्रकार पाँचवें चरम-निषेकमें भी पूर्व विधिसे अधिक द्रव्यका प्रमाण चार प्रक्षेप छह प्रक्षेप-प्रक्षेप, चार तत्प्रक्षेप और एक चूर्णि होता है। फिर इससे ऊपरके निषेकमें भी पाँच प्रक्षेप दस प्रक्षेप-प्रक्षेप उतने ही अर्थात् दस ही तत्प्रक्षेप पाँच चूर्णि और एक चूर्णिचूर्णि अधिक द्रव्य रूपसे उपलब्ध होते हैं। इस प्रकार जितना अध्वान ऊपर जाकर अधिक द्रव्यका विचार करते हैं अन्तिम निषेकसे वहाँ एक कम ऊपर गये हुए अध्वान प्रमाण प्रक्षेप दो कम ऊपर गये हुए अध्वानके संकलनप्रमाण

तिरूवूणचढिदद्धाणसंकलणासंकलणामेत्ता च तप्पक्खेवा उप्पाएयव्वा, तेसिं चेव पहाणत्तादो।

§ ६३७. संपहि पढमणिसेयमस्सियूण चरिमणिसेयादो विसेसपमाणपरिक्खा कीरदे। तत्थ ताव रूवूणोकड्डुक्कड्डुणभागहारवेतिभागमेत्ता पक्खेवा लब्भंति। ते च एदे $\left|\begin{matrix}६ & २\\ ६ & ३\end{matrix}\right|$। संपहि एत्थ जइ ओकड्डुक्कड्डुणभागहारतिभागमेत्ता पक्खेवा अत्थि तो एद चरिमणिसेयपमाणं पावइ। तदो तेसिमुप्पायणविहिं वत्तइस्सामो। चडिदद्धाणसंकलण-मेत्ता पक्खेवपक्खेवा वि एत्थत्थि त्ति $\left|\begin{matrix}०\,६ & २ & ६ & २\\ ६\,६ & ३ & ३ & २\end{matrix}\right|$ एवमेदे आणिय पक्खेवपमाणेण कदे ओकड्डुक्कड्डुणभागहारवेणवभागमेत्ता पक्खेवा होंति $\left|\begin{matrix}० & ६ & २\\ & ६ & ६\end{matrix}\right|$। एत्थ जइ ओकड्डुक्कड्डुणभागहारस्स णवभागमेत्ता पक्खेवा होंति तो एदे तस्स तिभागमेत्ता पक्खेवा जायंति। ते पुण तिरूवूणोकड्डुक्कड्डुणभागहारवेतिभागसंकलणासंकलणमेत्ततप्पक्खेवे आदिं कादूण सेसखंडे अवलंबिय आणेयव्वा। पुणो ते आणिय पुव्विल्लोकड्डुक्कड्डुण-भागहारवेणवभागमेत्तपक्खेवाणमुवरि पक्खिविय लद्धकिंचूणतत्तिभागमेत्ते पक्खेवे घेत्तूण पुव्वपरूविदोकड्डुक्कड्डुणभागहारवेतिभागमेत्तपक्खेवाणमुवरि पक्खित्ते जहण्ण-णिसेयपमाण पढमणिसेयमस्सियूण अहियदव्व होइ। एदं च मूलदव्वेण सह

प्रक्षेपप्रक्षेप, तीन कम ऊपर गये हुए अध्वानके सकलनासकलनप्रमाण तत्प्रक्षेप उत्पन्न करने चाहिये, क्योंकि यहाँ उनकी ही प्रधानता है।

§ ६३७ अब प्रथम निषेकमे अन्तिम निषेकसे जितना अधिक द्रव्य है उसके प्रमाणका विचार करते हैं। वहाँ एक अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके दो बटे तीन भागप्रमाण प्रक्षेप प्राप्त होते हैं। वे ये हैं— $\begin{matrix}६ & २\\ ६ & ३\end{matrix}$। अब यहाँ पर यदि अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके तीसरे भागप्रमाण प्रक्षेप प्राप्त होते हैं तो यह अन्तिम निषेकके प्रमाणको प्राप्त होता है, इसलिये उनके उत्पन्न करनेकी विधि बतलाते हैं—जितना अध्वान आगे गये हैं उनके सकलनमात्र प्रक्षेपप्रक्षेप भी यहाँ पर हैं इसलिए $\begin{matrix}० & ६ & २ & ६ & २\\ ६ & ६ & ३ & ३ & २\end{matrix}$ इस प्रकार इन्हें लाकर प्रक्षेपके प्रमाणसे करने पर अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके दो बटे नौ भागप्रमाण प्रक्षेप होते हैं $\begin{matrix}० & ६ & २\\ & ६ & ६\end{matrix}$। यहाँ पर यद्यपि अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके नौ भागप्रमाण प्रक्षेप होते हैं तो ये उसके त्रिभागमात्र प्रक्षेप हो जाते हैं। परन्तु वे तीन रूप कम अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारके दो बटे तीन भागके सकलनासंकलनप्रमाण तत्प्रक्षेपोंसे लेकर शेष खण्डोंका अवलम्बन करके ले आने चाहिए। पुनः उन्हें लाकर पूर्वोक्त अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारके दो बटे नौ भागप्रमाण प्रक्षेपोंके ऊपर प्रक्षिप्त करके लब्ध हुए उसके कुछ कम त्रिभागमात्र प्रक्षेपोंको ग्रहण करके पहले कहे गये अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके दो बटे तीन भागप्रमाण प्रक्षेपोंके ऊपर प्रक्षिप्त करनेपर प्रथम निषेकके आश्रयसे जघन्य निषेकप्रमाण अधिक

महियपणिसेयादो दुगुणमेत्त मादमिदि सिद्धं ओकड्डुक्कड्डणभागहारवेतिभागाणं गुणहाणिद्धाणंतरत्तं । एत्तियमेत्ते गुणहाणिअद्धाणे संते सिद्धो सुत्तपरूविदो गुणगारो, सव्वदव्वे पढमणिसेयपमाणेण समकरणे कदे समुप्पण्णदिवड्डुगुणहाणिगुणयारस्स संपुण्णोकड्डुक्कड्डणभागहारपमाणत्तदंसणादो ।

§ ६३८ एवमेत्तिएण पबंधेण उक्कस्सअधाणिसेयद्विदिपत्तयस्स पमाणं जाणाविय संपहि तदुक्कस्ससामित्तपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तपबंधो—

※ इयाणिमुक्कस्सयमधाणिसेयद्विदिपत्तयं कस्स ?

§ ६३९ एवं णिद्दरिसणपरूवणाए सव्वमवहारिदसरूवमुक्कस्सयमधा णिसेयद्विदिपत्तयं कस्से त्ति पुव्वपुच्छाए अणुसंधाणमुहमेदं ।

※ सत्तमाए पुढवीए णेरइयस्स जत्तियमधाणिसेयद्विदिपत्तयमुक्कस्सयं तत्तो विसेसुत्तरकालमुववण्णो जो णेरइओ तस्स अइच्छणेण उक्कस्सय मधाणिसेयद्विदिपत्तयं ।

§ ६४० एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे—तमुक्कस्सयमधाणिसेयद्विदिपत्तयं सत्तमाए पुढवीए णेरइयस्स होइ त्ति पदसंबंधो । सेसगइजीवपरिहारेण सत्तमपुढविणेरइयस्सेव सामित्तं किमट्ठ कीरदे ? ण, सेसगईसु संकिलेसविसाहीहि णिब्भरावट्ठाण पेक्खिय

प्राप्त होता है । किन्तु वह मूल द्रव्यके साथ अधिकृत निषेकसे दूना हो गया है, इसलिए अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके दो बटे तीन भागोंका गुणहानिस्थानान्तर सिद्ध हुआ । इतने मात्र गुणहानिमध्यानके रहते हुए सूत्रमें कहा गया गुणकार सिद्ध हुआ क्योंकि सब द्रव्यके प्रथम निषेकके प्रमाणसे समीकरण करने पर उत्पन्न हुआ डेढ़ गुणहानिप्रमाण गुणकार सम्पूर्ण अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारके प्रमाणरूपसे देखा जाता है ।

§ ६३८. इस प्रकार इतने कथनके द्वारा उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्तका प्रमाण बतलाकर अब उसके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रोंकी रचना बतलाते हैं—

※ अब उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्तका स्वामी कौन है ?

§ ६३९. इस प्रकार उदाहरणके कथन द्वारा जिसके पूरे स्वरूपका निश्चय कर लिया है और जिसके उत्कृष्ट स्वामित्वके विषयमें पहले पृच्छा कर आये हैं अब उसी उत्कृष्ट यथानिषेक-स्थितिप्राप्तके स्वामित्वका अनुसन्धान करनेके लिये यह सूत्र आया है—

※ सातवीं पृथिवीके नारकीके उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्तका जितना काल है उससे विशेष अधिक कालके साथ जो नारकी उत्पन्न हुआ है वह उस यथानिषेकके जघन्य कालके अन्तमें उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्तका स्वामी है ।

§ ६४० अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—वह उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य सातवीं पृथिवीके नारकीके होता है ऐसा यहाँ पदोंका सम्बन्ध कर लेना चाहिये ।

शंका—शेष गतिके जीवोंको छोड़कर सातवीं पृथिवीके नारकीको ही स्वामी क्यों बतलाया है ?

तहाविहाणादो। तं जहा—सेसगदीसु विसोहिकाले बहुअमोकड्डिय हेट्ठा संछुहइ। संकिलेसेण वि बहुअमुक्कड्डियूणुवरि संछुहइ त्ति दोहि वि पयारेहिं अहियारगोवुच्छाए बहुदव्ववओ होइ। सत्तमपुढविणेरइयम्मि पुण एयंतेण संकिलेसो चेव तेणेयपयारेणेव तत्थ णिज्जरा होइ त्ति सेसपरिहारेण तस्सेव गहणं कदं। अथवा सत्तमपुढविणेरइयस्स संकिलेसबहुलस्स णिकाचणादिकरणेहि बहुअं दव्वमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयसरूवेण लब्भइ, ण सेसगईसु त्ति एदेणाहिप्पाएण तत्थेव सामित्तं दिण्णं।

§ ६४१. संपहि तस्सेव विसेसलक्खणपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तावयवकलावो—एत्थ जत्तियमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयमिदि उत्ते पुव्वं परूविदासंखेज्जपलिदोवमपढम-वग्गमूलपमाणुक्कस्सजहाणिसेयसंचयकालमेत्तमिदि घेत्तव्वं। तं कुदो परिच्छिज्जदे? तत्तो विसेसुत्तरकालमुववण्णो जो णेरइओ त्ति सुत्तावयवादो। एत्थ विसेसुत्तरपमाण-मपज्जत्तकालेण सह गदजहण्णाबाहमेत्तमिदि गहेयव्वं, आबाहाब्भंतरे जहाणिसेयसंभवा-भावादो अपज्जत्तकाले वि जोगबहुत्ताभावेण सव्वुक्कस्सपदेससंचयाणुववत्तीदो। तस्स जहण्णेण इदि वुत्ते तस्स तारिसस्स णेरइयस्स जहण्णेण अंतोमुहुत्तेणब्भहिय-

---

समाधान—नहीं, क्योंकि शेष गतियोंमें सक्लेश और विशुद्धिके कारण बहुत निर्जरा होती है, इसलिये उसे देखते हुए ऐसा विधान किया है। खुलासा इस प्रकार है—शेष गतियोंमें विशुद्धिके समय बहुत द्रव्यका अपकर्षण होकर उसका नीचेकी स्थितियोंमें निक्षेप होता है और सक्लेशके कारण बहुत द्रव्यका उत्कर्षण होकर उसका ऊपरकी स्थितियोंमें निक्षेप होता है इस प्रकार वहाँ दोनों ही प्रकारोंसे अधिकृत गोपुच्छाके बहुत द्रव्यका व्यय हो जाता है। किन्तु सातवीं पृथिवीके नारकीके तो एकान्तरूपसे सक्लेश ही पाया जाता है, इसलिये वहाँ एक प्रकारसे ही निर्जरा होती है, इसलिये शेष गतियोंका निराकरण करके केवल उसी गतिका ही ग्रहण किया है। अथवा सातवीं पृथिवीका नारकी सक्लेशबहुल होता है, इसलिये उसके निकाचना आदि करणोंके द्वारा यथानिषेकस्थितिप्राप्त रूपसे बहुत द्रव्य पाया जाता है, शेष गतियोंमें नहीं, इस प्रकार इस अभिप्रायसे भी वहीं पर स्वामित्व दिया है।

§ ६४१ अब उसीका विशेष लक्षण बतलानेके लिये सूत्रका शेष भाग आया है—यहाँ सूत्रमें जा 'जत्तियमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सय' यह कहा है सो उससे पहले कहे गये पल्यके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण उत्कृष्ट यथानिषेक सचयकालका ग्रहण करना चाहिये।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—इसी सूत्रमे जो 'तत्तो विसेसुत्तरकालमुववण्णो जो णेरइओ' यह वचन कहा है उससे जाना जाता है।

यहाँ पर विशेषोत्तर कालका प्रमाण अपर्याप्त कालके साथ व्यतीत हुआ जघन्य आबाधा-प्रमाण काल ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि एक तो आबाधाकालके भीतर यथानिषेकोंकी सम्भावना नहीं है और दूसरे अपर्याप्त कालमें भी बहुत योग न होनेके कारण सर्वोत्कृष्ट प्रदेश सचय नहीं बन सकता है। तथा सूत्रमें जो 'तस्स जहण्णेण' यह कहा है सो इसका यह आशय है कि जो

उक्कस्सयमधाणिसेयकालं भवट्ठिदीए आदिम्मि काऊणुप्पज्जिय सव्वलहुं सव्वाओ पज्जत्तीओ समाणिय उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयस्सादिं कादूण पुरदो भण्णमाण-सयविसुद्धीए सम्ममणुपालिदतक्कालस्स तक्कालचरिमसमयम्मि वट्टमाणयस्स उक्कस्सय यधाणिसयट्ठिदिपत्तयं होइ त्ति घेत्तव्वं। अहवा जत्तिएण कालेण उक्कस्सयमधा-णिसेयट्ठिदिपत्तयं होइ तस्स कालस्स संगहो कायव्वो। केत्तिएण च कालेण तस्स संचओ? जहण्णएण अधाणिसेयकालेण। एतदुक्तं भवति—अधाणिसेयकालो जहण्णओ वि अत्थि उक्कस्सओ वि। तत्थुक्कस्सकालब्भंतरे ओकड्डुक्कड्डणाए बहुदव्वविणासेण अलाहसणादो जहण्णकालस्सेव संगहो कायव्वो त्ति। तदो तिरिक्खो वा मणुस्सो वा सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववज्जमाणो जहण्णाबाहाजहण्णा पज्जत्तद्धासमासमेत्तंतोमुहुत्तब्भहियं जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयसंचयकालमवट्ठिदीए आदिम्मि काऊणुप्पज्जिय पज्जत्तीओ समाणिय उक्कस्सअधाणिसेयट्ठिदिपत्तयसंचय मादविय समयाविरोहेण समाणिदतक्कालो जो णेरइओ तस्सुक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं होइ त्ति सुत्तत्थसंगहो। अत्थ वा तत्थ वा णिरयाउअब्भंतरे संचयकालमपरूविय अंतोमुहुत्तुववण्णणेरइयप्पहुडि संचयं कराविय सगसंचयकालचरिमसमए सामित्त

नारकी जघन्य अन्तर्मुहूर्त अधिक उत्कृष्ट यथानिषेक कालको भवके प्रथम समयमें करके उत्पन्न हुआ है और जिसने अतिशीघ्र सब पर्याप्तियोंको समाप्त करके उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्तसे लेकर आगे कही जानेवाली अपनी विशुद्धिके द्वारा उस कालका भले प्रकारसे रक्षण किया है उस नारकीके उस कालके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य होता है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिये। अथवा जितने कालके द्वारा उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य प्राप्त होता है उस कालका यहाँ संग्रह करना चाहिये।

शंका—कितने कालके द्वारा उसका संचय होता है?

समाधान—यथानिषेकके जघन्य काल द्वारा उसका संचय होता है। आशय यह है कि यथानिषेकका जघन्य काल भी है और उत्कृष्ट काल भी है। उसमेंसे उत्कृष्ट कालके भीतर अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा बहुत द्रव्यका विनाश हो जानेके कारण लाभ दिखाई नहीं देता है, इसलिए यहाँ जघन्य कालका ही संग्रह करना चाहिये।

इसलिये जो तिर्यंच या मनुष्य सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हो रहा है वह जघन्य आबाधा और जघन्य अपर्याप्त कालके जोड़रूप अन्तर्मुहूर्त कालसे अधिक यथानिषेकस्थिति-प्राप्तके जघन्य संचयकालको भवस्थितिके प्रथम समयमें प्राप्त करके उत्पन्न हुआ फिर वह पर्याप्तियोंको समाप्त करके और यथानिषेकस्थितिप्राप्तके उत्कृष्ट संचयका आरम्भ करके जब आगममें बतलाई हुई विधिके अनुसार उस कालको समाप्त कर लेता है उस नारकीके उत्कृष्ट यथानिषेकस्थिति प्राप्त द्रव्य होता है यह इस सूत्रका समुदायार्थ है।

शंका—नरकायुके भीतर जहाँ कहीं भी संचय कालका कथन न करके नारकीके उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त कालसे लेकर संचयका प्रारम्भ कराकर फिर अपने संचय कालके अन्तिम समयमें सूत्रकारने जो स्वामित्वका कथन किया है सो उनके ऐसा कहनेका क्या अभिप्राय है।

भणंतस्स सुत्तयारस्स को अहिप्पाओ ? ण, उवरि संकिलेसविसोहीणं परावत्तणुवलंभादो ।

§ ६४२. पुणो वि पयदसामियस्स संचयकालब्भंतरे आवासयविसेसपरूवणट्ठमुत्तरो सुत्तकलावो—

❀ एदम्हि पुण काले सो णेरइओ तप्पाओग्गउक्कस्सयाणि जोगट्ठाणाणि अभिक्खं गदो ।

समाधान—नहीं, क्योंकि इस कालके सिवा अन्यत्र सक्लेश और विशुद्धिका परावर्तन नहीं बन सकता है, इसलिये और आगे जाकर ऐसा नहीं कहा है ।

विशेषार्थ—एक तो शेष गतियोंमें कभी सक्लेशकी और कभी विशुद्धताकी बहुलता रहती है, इसलिये वहाँ उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्तका सचय नहीं हो सकता और दूसरे यथानिषेकके उत्कृष्ट सचयके लिये निकाचितकरणकी प्राप्ति आवश्यक है। जिसमें विवक्षित कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण, अपकर्षण, संक्रमण और उदीरणा ये कुछ भी सम्भव नहीं हैं वह निकाचितकरण माना गया है। इस करणकी प्राप्तिके लिए बहुलतासे सक्लेशरूप परिणामोंकी प्राप्ति आवश्यक है। यतः बहुतायतसे ये परिणाम अन्य गतियोंमें नहीं पाये जाते, इसलिये भी वहाँ उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्तका सचय नहीं हो सकता। यही कारण है कि इसका उत्कृष्ट स्वामित्व नरकगतिमें बतलाया है। उसमें भी सातवें नरकके नारकीके जितना अधिक सक्लेश सम्भव है उतना अन्यत्र सम्भव नहीं है, इसलिये यह उत्कृष्ट स्वामित्व सातवें नरकके नारकीको दिया गया है। अब यह देखना है कि सातवें नरकमें भी यह उत्कृष्ट स्वामित्व कब प्राप्त होता है। इस विषयमें चूर्णिसूत्रकारका कहना है कि कोई मनुष्य या तिर्यंच ऐसे समयमें नरकमें उत्पन्न हुआ जब उत्पन्न होनेके कुछ ही काल बाद यथानिषेकस्थितिप्राप्तके उत्कृष्ट सचयका प्रारम्भ होनेवाला है उसके उस कालके समाप्त होनेके अन्तिम समयमें यह उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होता है। यहाँ जो कुछ अधिक काल बतलाया है सो उससे नारकीके योग्य जघन्य अपर्याप्तकाल और जघन्य आबाधाकाल लेना चाहिये। सातवें नरकमें उत्पन्न होनेके इतने काल बाद यथानिषेकस्थितिप्राप्तका संचयकाल प्रारम्भ होता है और जब यह काल समाप्त होता है तब अन्तमें उत्कृष्ट स्वामित्व होता है। यह सचय काल पल्यके असख्यात प्रथम वर्गमूल प्रमाण है यह तो पहले ही बतलाया जा चुका है। यद्यपि यह संचयकाल जघन्य और उत्कृष्टके भेदसे अनेक प्रकारका है फिर भी यहाँ उत्कृष्ट कालका ग्रहण न करके जघन्य कालका ग्रहण किया है, क्योंकि उत्कृष्ट कालके भीतर अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा बहुत अधिक द्रव्यके विनाश होनेका भय है। सूत्रमें आये हुए 'जहण्णेण' पदसे भी इसी बातका सूचन होता है। यद्यपि इस पदका जघन्य आबाधा अर्थ करके भी काम चलाया जा सकता है, क्योंकि तब जघन्य आबाधासे अधिक उत्कृष्ट सचय कालके अन्तमें उत्कृष्ट स्वामित्व होता है यह अर्थ फलित किया जा सकता है। किन्तु इससे पूर्वोक्त अर्थ मुख्य प्रतीत होता है और यही कारण है कि इस पदके दो अर्थ करके भी टीकामें पूर्वोक्त अर्थ पर जोर दिया है।

§ ६४२ अब प्रकृत स्वामीके सचय कालके भीतर आवश्यक विशेषका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ परन्तु इस संचय कालके भीतर वह नारकी तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगस्थानोंको निरन्तर प्राप्त हुआ ।

§ ६४३ एदम्मि पुण जहाणिसेयसंचयकालब्भंतरे सो णेरइओ बहुसो बहुसो तप्पाओग्गुक्कस्सयाणि जोगट्ठाणाणि परिणदो, तेहि विणा पयदुक्कस्ससंचयाणुप्पत्तीदो त्ति एदेण जोगावासयं परूविदं। एत्थ तप्पाओग्गविसेसणं समयाविरोहेण तहा परिणदो त्ति जाणावणट्ठं। जाव संभवो ताव सव्वुक्कस्सजोगेणेव परिणमिय तस्सासंभवे तप्पाओग्गुक्कस्सयाणि जोगट्ठाणाणि बहुसो गदो त्ति भणिदं होइ।

* तप्पाओग्गउक्कस्सियाहि वड्ढीहि वड्ढिदो।

§ ६४४ संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढिसण्णिदाहि जोगवड्ढीहि पदेसबंधवड्ढिअविणाभावीहि समयाविरोहेण वड्ढिदो। तासिमसंभवे पुण असंखेज्जभागवड्ढीए वि वड्ढिदो त्ति वुत्तं होइ। णेदं पुव्वुत्तत्थपरूवणादो पुणरुत्तं, तस्सेव विसेसियूण परूवणादो। तम्हा एदेण वि जोगावासयं चेव विसेसिदमिदि घेत्तव्वं।

* तिस्से ट्ठिदीए णिसेयस्स उक्कस्सपदं।

§ ६४५ जहाणिसेयकालब्भंतरे सव्वत्थोवजहण्णाबाहाए उक्कस्सजोगेण च जहण्णट्ठिदिं बंधमाणो सामित्तट्ठिदीए उक्कस्सपदं काऊण णिसिंचइ त्ति भणिदं होइ, णिसेयाणमण्णहा थोवभावाणुववत्तीदो। संपहि एदेण विहाणेणाणुसारिदजोगेण-

---

§ ६४३. परन्तु इस यथानिषेकके संचय कालके भीतर वह नारकी अनेक बार तद्योग्य उत्कृष्ट योगस्थानोंको प्राप्त हुआ क्योंकि उत्कृष्ट योगस्थानोंको प्राप्त हुए बिना प्रकृत उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकता है इस प्रकार इस सूत्रके द्वारा योगावश्यकका कथन किया गया है। यहाँ सूत्रमें तद्योग्य यह विशेषण आगमानुसार उस प्रकारसे परिणत हुआ यह बतलानेके लिये दिया है। जब तक सम्भव हो तब तक सर्वोत्कृष्ट योगसे ही परिणत रहे और जब सर्वोत्कृष्ट योग सम्भव न हो तब बहुत बार तद्योग्य उत्कृष्ट योगस्थानोंको प्राप्त होवे यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* तद्योग्य उत्कृष्ट वृद्धियोंसे वृद्धिको प्राप्त हुआ।

§ ६४४ प्रदेशबन्धवृद्धिकी अविनाभावी संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और संख्यातभागवृद्धि इन तीन वृद्धियोंके द्वारा जो आगममें बतलाई गई विधिके अनुसार वृद्धिको प्राप्त हुआ है। परन्तु जब ये तीन वृद्धियाँ असम्भव हों तब वह असंख्यातभागवृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त होवे यह उक्त कथनका सार है। यदि कहा जाय कि पुनरुक्त अर्थका कथन करनेवाला होनेसे यह सूत्र पुनरुक्त है सो भी बात नहीं है, क्योंकि उसी पूर्वोक्त सूत्रके विशेषणरूपसे इस सूत्रका कथन किया है। इसलिये इस सूत्र द्वारा भी योगावश्यककी विशेषता बतलाई गई है यह अर्थ यहाँ पर लेना चाहिये।

* उस स्थितिके निषेकके उत्कृष्ट पदको प्राप्त हुआ।

§ ६४५. यथानिषेक कालके भीतर सबसे कम जघन्य आबाधा और उत्कृष्ट योगके द्वारा जघन्य स्थितिको बाँधनेवाला वह जीव स्वामित्वविषयक स्थितिमें उत्कृष्टरूपसे कर्मपरमाणुओंको करके उनका निक्षेप करता है यह इस सूत्रका तात्पर्य है, अन्यथा बहुत निषेक नहीं प्राप्त हो

जहण्णिसेयसंचयकालस्स पयदणेरइयस्स पच्चासण्णसामित्तुद्देसे जोगावासयपडिबद्ध-वावारविसेसपरूवणट्ठमुत्तरो पबंधो—

❀ जा जहण्णिया आबाहा अंतोमुहुत्तुत्तरा एवदिसमयअणुदिण्णा सा ट्ठिदी । तदो जोगट्ठाणाणमुवरिल्लमद्धं गदो ।

§ ६४६. अंतोमुहुत्तुत्तरा जा जहण्णाबाहा एवदिमसमयअणुदिण्णा सा ट्ठिदी जा पुव्वणिरुद्धा सामित्तट्ठिदी । एत्थंतोमुहुत्तपमाणं जोगजवमज्झादो उवरि अच्छण-कालमेत्तं । तदो जोगट्ठाणाणमुवरिल्लमद्धं गओ जोगट्ठाणाणमुवरिल्लभागं गंतूणंतोमुहुत्तमेत्त-कालमच्छिदो त्ति भणिद होइ । किमट्ठमेसो जोगट्ठाणाणमुवरिल्लमद्ध णीदो ? जोगबहुत्तेण बहुदव्वसचयकरणट्ठं । जइ एवं, अतोमुहुत्तं मोत्तूण सव्वकाल तत्थेव किण्ण अच्छाविदो ? ण, तत्तो अहियं काल तत्थावट्ठाणासंभवादो । जेणेदमंतदीवयं तेण पुव्वं पि जाव संभवो ताव तत्थच्छिदो त्ति घेत्तव्वं । एत्थेव णिलीणो चरिमजीवगुण-हाणिट्ठाणंतरे आवलियाए असखेज्जदिभागमच्छिदो त्ति अवंतरवावारविसेसो परूवेयव्वो ।

सकते । अब इस विधिसे कुछ कम यथानिषेक सचयकालका अनुसरण करनेवाले प्रकृत नारकीके स्वामित्वविषयक स्थानके समीपवर्ती होनेपर योगावश्यकसे सम्बन्ध रखनेवाला जो व्यापारविशेष होता है उसका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** अन्तर्मुहूर्त अधिक जो जघन्य आबाधा है इतने काल तक वह स्थिति अनुदीर्ण रही । अनन्तर जो योगस्थानोंके उपरिम अर्द्धभागको प्राप्त हुआ ।**

§ ६४६ अन्तर्मुहूर्त अधिक जो जघन्य आबाधा है इतने काल तक वह स्वामित्वस्थिति अनुदीर्ण रहती है जिसका कथन पहले कर आये हैं । यहाँ अन्तर्मुहूर्तसे योगयवमध्यसे ऊपर रहनेका जितना काल है वह काल लिया है । फिर सूत्रमें जो यह कहा है कि 'तदो जोगट्ठाणाण-मुवरिल्लमद्ध गओ' सो इसका यह आशय है कि इसके बाद योगस्थानोंके उपरिम भागको प्राप्त होकर जो अन्तर्मुहूर्त काल तक रहा है ।

शंका—यह जीव योगस्थानोंके उपरिम भागको क्यों प्राप्त कराया गया है ?

समाधान—बहुत योगके द्वारा अधिक द्रव्यका सचय करनेके लिये यह जीव योग-स्थानोंके उपरिम भागको प्राप्त कराया गया है ।

शंका—यदि ऐसा है तो अन्तर्मुहूर्त न रखकर पूरे काल तक वहीं इस जीवको क्यों नहीं रखा गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि इससे अधिक काल तक वहाँ रहना सम्भव नहीं है ।

यत यह कथन अन्तदीपक है अत इससे यह अर्थ भी लेना चाहिये कि पूर्वमें भी जब तक सम्भव हो तब तक यह जीव वहाँ रहे । यहाँ जीवकी अन्तिम गुणहानिस्थानान्तरमें आवलिके असख्यातवें भागप्रमाण काल तक रहनेरूप जो अवान्तर व्यापारविशेष इसीमे गर्भित है उसका कथन करना चाहिये ।

* दुसमयाहियआवाहाचरिमसमयअणुदिण्णाए एयसमयाहियआवाहाचरिमसमयअणुदिण्णाए च उक्कस्सय जोगमुवगयस्स ।

§ ६४७ एत्थ तिस्से ट्ठिदीए इदि अणुवट्टदे । तेणेवमहिसंबंधो कायव्वो—तिस्से सामित्तट्ठिदीए दुसमयाहियजहण्णाबाहाचरिमसमयमणुदिण्णाए समयाहियजहण्णाबाहचरिमसमयमणुदिण्णाए च उक्कस्सजोगट्ठाणं पडिवण्णो त्ति । चरिम दुचरिम-तिचरिमसमयमणुदिण्णादिकमेणोयरिय दुसमयाहिय-एयसमयाहियआबाहा-चरिमसमयमणुदिण्णाए णिरुद्धट्ठिदीए सो णेरइओ उक्कस्सजोगट्ठाणेण परिणदो त्ति भणिदं होइ । बे समए मोत्तूण बहुअं कालमुक्कस्सजोगेणेव किण्ण अच्छाविदो ? ण, तेसमयपाओग्गस्स तस्स बहुकालमवठ्ठाणाभावादो ।

* तस्स उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं ।

§ ६४८ तस्स तारिसस्स णेरइयस्स जाधे सा ट्ठिदी उदयमागदा ताधे उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं होइ त्ति एवं होइ ।

§ ६४९ संपहि एत्थ उवसंहारे भण्णमाणे तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि । तं जहा—संचयाणुगमो भागहारपमाणाणुगमो लद्धपमाणाणुगमो चेदि ।

---

* उस स्थितिके दो समय अधिक आबाधाके अन्तिम समयमें अनुदीर्ण होने पर और एक समय अधिक आबाधाके अन्तिम समयमें अनुदीर्ण होने पर उत्कृष्ट योगको प्राप्त हुआ ।

§ ६४७ इस सूत्रमें 'तिस्से ट्ठिदीए' इस पदकी अनुवृत्ति होती है। इससे ऐसा सम्बन्ध करना चाहिये कि उस स्वामित्वस्थितिके दो समय अधिक जघन्य आबाधाके अन्तिम समयमें अनुदीर्ण रहने पर और एक समय अधिक जघन्य आबाधाके अन्तिम समयमें अनुदीर्ण रहने पर वह उत्कृष्ट योगस्थानको प्राप्त हुआ है। चरम समय द्विचरम समय और त्रिचरम समयमें अनुदीर्ण रहने आदिके क्रमसे उतरकर दो समय अधिक और एक समय अधिक आबाधाके चरम समयमें विवक्षित स्थितिके अनुदीर्ण रहने पर वह नारकी उत्कृष्ट योगस्थानसे परिणत हुआ यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—दो समयको छोड़कर बहुत काल तक उत्कृष्ट योगके साथ ही क्यों नहीं रखा गया है ?

समाधान—नहीं क्योंकि जो योग दो समयके योग्य है उसका और अधिक काल तक रहना सम्भव नहीं है।

* वह नारकी उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी है ।

§ ६४८ इन पूर्वोक्त विशेषणोंसे युक्त जो नारकी है उसके जब वह स्थिति उदयको प्राप्त होती है तब वह उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी है यह इस सूत्रका आशय है।

§ ६४९. अब यहाँ पर उपसंहारका कथन करते हैं। उसमें ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं। यथा—संचयानुगम भागहारप्रमाणानुगम और लब्धप्रमाणानुगम । उनमेंसे सर्व प्रथम

तत्थ संचयाणुगमेण जहाणिसेयकालपढमसमयसंचिददव्वमहियारट्ठिदीए जहाणिसेयसरूवेणत्थि। एवं णेदव्वं जाव चरिमसमयसंचओ त्ति। संचयाणुगमो गदो।

§ ६५०. एत्तो भागहारपमाणाणुगमं वत्तइस्सामो। तं जहा—असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तं हेट्ठदो ओसरिय ट्ठिदपढमसमयपबद्धसंचयस्स भागहारे उप्पाइज्जमाणे समयपबद्धमेगं ठविय जहाणिसेयसंचयकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाओ पलिदोवमपढमवग्गमूलद्धच्छेदणाहिंतो असंखेज्जगुणहीणाओ विरलिय दुगुणिय अण्णोण्णब्भासणिप्पण्णरासिसादिरेओ भागहारो ठवेयव्वो। एवं ठविदे एत्तियमेत्तगुणहाणीओ गालिय परिसेसिदमहियारगोवुच्छादो प्पहुडि अतोकोडाकोडिदव्वमागच्छइ। संपहि इमं सव्वदव्वमहियारगोवुच्छपमाणेण कीरमाणं दिवड्ढगुणहाणिमेत्तं होइ त्ति दिवड्ढगुणहाणीओ वि भागहारत्तेण ठवेयव्वाओ। तदो अहियारगोवुच्छदव्वं णिसेयसरूवेणागच्छइ। पुणो जहाणिसेयट्ठिदिपत्तयमिच्छामो त्ति असंखेज्जा लोगा वि भागहारसरूवेणेदस्स ठवेयव्वा। तं जहा—पयदगोवुच्छदव्वं जहाणिसेयकालपढमसमयप्पहुडि बंधावलियमेत्तकाले वोलीणे ओकड्डुक्कड्डुणभागहारेण खंडिदेयखंडमेत्तं हेट्ठोवरि परसरूवेण गच्छइ। विदियसमए वि ओकड्डुक्कड्डुणभागहारपडिभागेण परसरूवेण

संचयानुगमकी अपेक्षा विचार करते हैं—यथानिषेक कालके प्रथम समयमें जो द्रव्य संचित होता है वह यथानिषेकरूपसे अधिकृत स्थितिमें है। इस प्रकार संचयकालके अन्तिम समय तक जानना चाहिये। आशय यह है कि संचय कालके प्रथम समयसे लेकर अन्तिम समय तक प्रत्येक समयमें यथानिषेकरूपसे संचित होनेवाला द्रव्य विवक्षित स्थितिमें पाया जाता है। इस प्रकार संचयानुगम समाप्त हुआ।

§ ६५० अब इससे आगे भागहारप्रमाणानुगमको बतलाते हैं। यथा—पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण स्थान पीछे जाकर प्रथम समयमें प्राप्त हुए संचयका भागहार उत्पन्न करनेकी इच्छासे एक समयप्रबद्धको स्थापित करे। फिर उसका पल्यके प्रथम वर्गमूलके अर्धच्छेदोंसे असंख्यातगुणी हीन यथानिषेक संचयकालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंका विरलन कर और दूनाकर परस्परमें गुणा करके उत्पन्न हुई राशिसे कुछ अधिक भागहार स्थापित करे। इस प्रकार स्थापित करने पर इतनी गुणहानियोंको गलानेके बाद अधिकृत गोपुच्छासे लेकर अन्त कोड़ाकोड़ीप्रमाण शेष द्रव्य प्राप्त होता है। अब इस पूरे द्रव्यको अधिकृत गोपुच्छाके बराबर हिस्सा करके विभाजित करने पर वह डेढ गुणहानिप्रमाण प्राप्त होता है, इसलिये डेढ़ गुणहानिको भी भागहाररूपसे स्थापित करे। तब जाकर अधिकृत गोपुच्छाका द्रव्य निषेकरूपसे प्राप्त होता है। अब यहाँ यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य लाना है इसलिये इसका असंख्यात लोकप्रमाण भागहार और भी स्थापित करे। खुलासा इस प्रकार है—यथानिषेककालके प्रथम समयसे लेकर बन्धावलिप्रमाण कालके व्यतीत होने पर प्रकृत गोपुच्छाके द्रव्यमे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग देने पर जो एक भागप्रमाण द्रव्य प्राप्त हो उतना द्रव्य नीचे ऊपर अन्य गोपुच्छारूप हो जाता है। दूसरे समयमे भी अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त हो उतना द्रव्य अन्य गोपुच्छारूप हो जाता है। इस

गच्छइ। एवमेगेगसंडे गच्छमाणे पुव्वभागहारवेतिभागमेत्तद्धाणं गंतूण पयदणिसेयस्स अद्धमेत्तं चेट्ठइ। पुणो वि एत्तियमद्धाणं गंतूण चउब्भागो चेट्ठइ। एवमुवरि वि णेयव्वं जाव अहियारट्ठिदी उदयावलियब्भंतरे पविट्ठा त्ति। एवं होइ त्ति काऊणेत्थतण णाणागुणहाणिसलागाणं पमाणाणुगमं कस्सामो। तं कधं? ओकड्डुक्कड्डणभागहार वेतिभागमेत्तद्धाणं गंतूण जइ एया गुणहाणिसलागा लब्भइ तो असंखेज्जपलिदोवम पढमवग्गमूलपमाणं महाणिसेयकालम्मि केत्तियाओ णाणागुणहाणिसलागाओ लहामो त्ति तेरासियं काऊण जोइदे असंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्ताओ लब्भंति। पुणो इमाओ विरलिय विगं करिय अण्णोण्णब्भासे कदे असंखेज्जा लोगा उप्पज्जंति। तदो एत्तियं पि भागहारत्तेण समयपबद्धस्स हेट्ठदो ठवेयव्वमिदि भणिय। पुणो एदे तिण्णि वि भागहारे अण्णोण्णपदुप्पण्णे करिय समयपबद्धम्मि भागे हिदे आदिसमयपबद्धमस्सियूण अहियारट्ठिदीए महाणिसेयसरूवेणावट्ठिदपदेसग्गमागच्छइ। तम्हा असंखेज्जलोगमेत्तो आदिसमयपबद्धस्स संचयस्स अवहारो त्ति घेत्तव्वं। संपहि विदियसमयपबद्धसंचयस्स वि भागहारो एवं चेव वत्तव्वो। णवरि पढमसमयसंचय भागहारादो सो किंचूणो होइ। केत्तियमेत्तेण्णा त्ति भणिदे ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडिय तत्थेयखंडमेत्तेण। एवं भागहारो थोवूणकमेण तदियसमयपबद्धसंचयप्पहुडि

प्रकार एक एक खण्डके प्रमाण गुणहानिरूप होते हुए पूर्व भागहारके दो बटे तीन भागप्रमाण स्थानोंके जाने पर प्रकृत निषेक अर्धभागप्रमाण शेष रहता है। फिर भी इतने ही स्थान जाने पर प्रकृत निषेक चतुर्थ भागप्रमाण शेष रहता है। इस प्रकार आगे भी अधिकृत स्थितिके उदयावलिमें प्रवेश होने तक जानना चाहिये। ऐसा होता है यह समझकर यहाँकी नाना गुणहानिशलाकाओंके प्रमाणका विचार करते हैं। यथा—अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारके दो बटे तीन भाग प्रमाण स्थान जाने पर एक गुणहानिशलाका प्राप्त होती है तो पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण महानिषेक कालमें कितनी नाना गुणहानिशलाकायें प्राप्त होंगी इस प्रकार त्रैराशिक करने पर वे नाना गुणहानिशलाकाएं पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण ही प्राप्त होती हैं। फिर इनका विरलन कर और दूना कर परस्परमें गुणा करने पर असंख्यात लोकप्रमाण राशि उत्पन्न होती है। इसीसे इसे भी भागहाररूपसे समयप्रबद्धके नीचे स्थापित करे यह कहा है। फिर इन तीनों ही भागहारोंका परस्परमें गुणा करके जो प्राप्त हो उसका समयप्रबद्धमें भाग देने पर प्रथम समयप्रबद्धकी अपेक्षा अधिकृत स्थितिमें यथानिषेकरूपसे जो द्रव्य अवस्थित है उसका प्रमाण आता है, इसलिये प्रथम समयप्रबद्धके संचयका भागहार असंख्यात लोकप्रमाण ग्रहण करना चाहिये। दूसरे समयप्रबद्धके संचयका भी भागहार इसी प्रकार कहना चाहिये। किन्तु प्रथम समयसम्बन्धी संचयके भागहारसे यह कुछ कम होता है।

शंका—कितना कम होता है?

समाधान—अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग देने पर जो एक भाग प्राप्त होता है उतना कम होता है।

इस प्रकार भागहार उत्तरोत्तर कम होता हुआ तीसरे समयप्रबद्धके संचयसे लेकर

गंतूणोकड्डुक्कड्डुणभागहारवेतिभागमेत्तद्धाणे पुव्वभागहारस्स अद्धमेत्तो होइ । एवं जाणियूण णेदव्वं जाव जहाणिसेयकालचरिमसमओ त्ति । णवरि चरिमसमयपबद्ध-संचयस्स भागहारो सादिरेयदिवड्ढगुणहाणिमेत्तो होइ ।

§ ६५१. संपहि लद्धपमाणाणुगमं कस्सामो । तं जहा—चरिमसमयम्मि बंधियूण णिसित्तपमाणेण जहाणिसेयट्ठिदिपत्तयसव्वदव्वं कीरमाणमोकड्डुक्कड्डुण-भागहारमेत्तं होइ । तं कथं ? चरिमसमयप्पहुडि ओकड्डुक्कड्डुणभागहारवेतिभाग-मेत्तद्धाणं हेट्ठदो ओदरिय बद्धसमयपबद्धदव्वपढमणिसेयस्स अद्धपमाण चेट्ठइ त्ति । तं चेव गुणहाणिट्ठाणंतर होइ । तेण पढमगुणहाणिदव्वं सव्वं चरिमसमयम्मि बंधियूण णिसित्तपढमणिसेयपमाणेण कीरमाणमोकड्डुक्कड्डुणभागहारवेतिभागाणं तिण्णि-चउब्भागमेत्तपढमणिसेयपमाण होइ । तं च सदिट्ठीए एद |० ६ / १ २| । पुणो विदियादि-सेसगुणहाणिदव्वं पि तप्पमाणेण कीरमाणं तेत्तियं चेव होइ |० ६ / १ २| । संपहि दोण्हमेदेसिं एकदो मेलणे कदे ओकड्डुक्कड्डुणभागहारो चेव दिवड्ढगुणहाणिपमाणं होइ । पुणो एदेण दिवड्ढगुणहाणिमोकड्डिय समयपबद्धे भागे हिदे जं लद्धं तत्तियमेत्तमुक्कस्स-सामित्तविसईकय जहाणिसेयट्ठिदिपत्तयं होइ ।

अपकर्षण उत्कर्षणभागहारके दो बटे तीन भागप्रमाण स्थान जाने पर वह पूर्व भागहारसे आधा रह जाता है । यथानिषेक कालके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक इसी प्रकार जानकर उसका कथन करना चाहिये । किन्तु इतनी विशेषता है कि अन्तिम समयप्रबद्धके सचयका भागहार साधिक डेढ गुणहानिप्रमाण है ।

§ ६५१ अब लब्धप्रमाणका विचार करते हैं । यथा—अन्तिम समयमें बाधकर यथानिषेकस्थितिप्राप्त सब द्रव्यके निक्षिप्त हुए द्रव्यके बराबर खण्ड करनेपर वे, अपकर्षण-उत्कर्षण-भागहारका जितना प्रमाण है, उतने प्राप्त होते हैं ।

शंका—सो कैसे ?

समाधान—अन्तिम समयसे लेकर अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारके दो बटे तीन भाग प्रमाण स्थान पीछे जाकर वधे हुए समयप्रबद्धके द्रव्यका प्रथम निषेक आधा रह जाता है, इसलिये वही एक गुणहानिस्थानान्तर होता है, अत प्रथम गुणहानिके सब द्रव्यको अन्तिम समयमें बाध कर निक्षिप्त हुए प्रथम निषेकके बराबर बराबर खण्ड करनेपर अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारके दो बटे तीन भागका तीन बटे चार भागप्रमाण प्रथम निषेकोंका प्रमाण होता है । सदृष्टिकी अपेक्षा उसका प्रमाण $\frac{2}{3}$ का $\frac{3}{4}$ = $\frac{6}{12}$ होता है । फिर दूसरी आदि शेष गुणहानियोंका द्रव्य भी तत्प्रमाण खण्ड करने पर उतना $\frac{2}{3}$ का $\frac{3}{4}$ = $\frac{6}{12}$ ही होता है । अब इन दोनोंको एकत्रित करने पर अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार ही डेढ गुणहानिप्रमाण होता है । फिर इससे डेढ़ गुणहानिको अपवर्तित करके समयप्रबद्धमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना उत्कृष्ट स्वामित्वका विषयभूत यथानिषेकस्थिति-प्राप्त द्रव्य होता है ।

§ ६५२. एवमेत्तिएण पबंधेण उक्कस्सअहाणिसेयट्ठिदिपत्तयस्स सामित्तं परूविय संपहि एदेणेव गयत्थस्स णिसेयट्ठिदिपत्तयस्स वि सामित्तसमुप्पण्णट्ठमुत्तरं सुत्तं भणइ—

⊛ णिसेयट्ठिदिपत्तयं पि उक्कस्सयं तस्सेव ।

§ ६५३ गयत्थमेदं सुत्तं, पुव्विल्लादो अविसिट्ठपरूवणादो । अदो चेव कमउल्लंघिय तस्सेव पुव्वं सामित्तविहाणं कयं, अण्णहा एदस्स जाणावणोवाया भावादो। एत्थ पुण विसेसो—पमाणाणुगमे कीरमाणे पुव्विल्लदव्वादो ओकड्डुक्कड्डणाए गंतूण पुणो वि तत्थेव पदिददव्वमेत्तेणेदं विसेसाहियं होइ त्ति वत्तव्वं ।

§ ६५४ संपहि जहावसरपत्तमुक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयस्स सामित्तं परूवेमाणो पुच्छासुत्तमाह—

⊛ उदयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयं कस्स ?

§ ६५५ एत्थ मिच्छत्तस्से त्ति अहियारसंबंधो । सेसं सुगमं ।

⊛ गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजमगुणसेढिं संजमगुणसेढिं च काऊण

---

§ ६५२. इस प्रकार इतने प्रबन्धके द्वारा उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्तके स्वामित्वका कथन करके अब यद्यपि निषेकस्थितिप्राप्त इसी प्रबन्धके द्वारा गतार्थ है तथापि उसके स्वामित्वके बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

* उत्कृष्ट निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी भी वही है ।

§ ६५३ यह सूत्र गतार्थ है, क्योंकि पिछले सूत्रसे इसके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। और इसीलिये क्रमका उल्लंघन करके पहले उसीके स्वामित्वका कथन किया है, अन्यथा इसके ज्ञान करानेका दूसरा कोई उपाय नहीं था । किन्तु प्रमाणानुगमके कथनमें यहां इतना विशेष और कहना चाहिये कि अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा जो द्रव्य अन्यत्र प्राप्त होता है वह फिरसे वहीं आ जाता है, इसलिए यथानिषेकस्थितिप्राप्तके द्रव्यसे इसका द्रव्य इतना विशेष अधिक होता है ।

विशेषार्थ—यथानिषेकस्थितिप्राप्तका जो संचयकाल और स्वामी पहले बतला आये हैं वही निषेकस्थितिप्राप्तका भी प्राप्त होता है, क्योंकि उत्कृष्ट संचय सातवें नरकमें उक्त प्रकारसे ही बन सकता है। तथापि यथानिषेकस्थितिप्राप्तसे इसका उत्कृष्ट द्रव्य विशेष अधिक हो जाता है। कारण यह है कि यथानिषेकस्थितिप्राप्तमें अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा जितना द्रव्य कम हो जाता है वह यहां पुनः बढ़ जाता है ।

§ ६५४. अब यथावसर प्राप्त उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्तके स्वामित्वका कथन करनेकी इच्छासे पृच्छा सूत्र कहते हैं—

* उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी कौन है ।

§ ६५५. इस सूत्रमें मिथ्यात्वप्रकृतिका अधिकार होनेसे 'मिच्छत्तस्स' इस पदका सम्बन्ध कर लेना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

* जो गुणितकर्मांशवाला जीव संयमासंयमगुणश्रेणि और संयमगुणश्रेणिको

मिच्छत्तं गदो जाधे गुणसेढिसीसयाणि उदिण्णाणि ताधे मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं।

§ ६५६. एदस्स सुत्तस्सत्थपरूवणा उदयादो उक्कस्सझीणट्ठिदियसामित्त-सुत्तभंगो। एव मिच्छत्तस्स चउण्ह पि ट्ठिदिपत्तयाणमुक्कस्ससामित्त परूविय संपहि एदेण समाणसामियाणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पणं करेइ—

*** एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पि।**

§ ६५७. जहा मिच्छत्तस्स चउण्हमग्गट्ठिदिपत्तयादीण सामित्तविहाणं कदमेवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पि, विसेसाभावादो। णवरि सम्मत्तस्स जहाणिसेय-णिसेय-ट्ठिदिपत्तयाणमुक्कस्ससामित्त भण्णमाणे उव्वेल्लणकालादो जइ जहाणिसेयकालो बहुओ होइ तो पुव्वमेव जहाणिसेयस्सादिं करिय पुणो संचय करेमाणो चेव उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय अंतोमुहुत्तमच्छिय मिच्छत्त गंतूण संचयं काऊण पुणो अविणट्ठवेदय-पाओग्गकालम्मि वेदयसम्मत्तग्गहणपढमसमए वट्टमाणो जो जीवो तस्स पढमसमय-वेदयसम्मादिट्ठिस्स तिसु वि जहाणिसेयगोवुच्छासु उदयं पविस्समाणासु उक्कस्स-सामित्त वत्तव्वं। अध अधाणिसेयसंचयकालादो उव्वेल्लणकालो बहुओ होज्ज तो पुव्वमेव पडिवण्णसम्मत्तो मिच्छत्तं गतूण पुणो जहाणिसेयट्ठिदिपत्तयस्सादिं काऊण

करके मिथ्यात्वमें गया है उसके जब गुणश्रेणिशीर्ष उदयको प्राप्त हुए हैं तब वह मिथ्यात्वके उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी है।

§ ६५६ पहले उदयसे झीनस्थितिवाले उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामित्वका कथन करनेवाले सूत्रका जैसा विवेचन किया है उसीप्रकार इस सूत्रका भी विवेचन कर लेना चाहिये। इसप्रकार मिथ्यात्वके चारों ही स्थितिप्राप्तोंके स्वामित्वका कथन करके अब इससे जिनके स्वामी समान हैं ऐसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे कथन करते हैं—

*** इसीप्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके स्वामित्वका भी विधान करना चाहिये।**

§ ६५७ जिस प्रकार मिथ्यात्वके चारो अग्रस्थितिप्राप्त आदिके स्वामित्वका कथन किया है उसीप्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भी करना चाहिये क्योंकि इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वके यथानिषेक और निषेकस्थितिप्राप्तके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करने पर उद्वेलनकालसे यदि यथानिषेकका काल बहुत होवे तो पहलेसे ही यथानिषेकका प्रारम्भ करके फिर सचय करता हुआ ही उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होकर और अन्तर्मुहूर्त काल तक उसके साथ रहकर मिथ्यात्वमें जावे। और वहा सचय करके वेदक योग्य कालके नाश होनेके पहले ही वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण करके उसके प्रथम समयमें जो जीव स्थित है उस प्रथम समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टिके तीनों ही यथानिषेक गोपुच्छाओंके उदयमें प्रवेश करने पर उत्कृष्ट स्वामित्व कहना चाहिये। और यदि यथानिषेकके संचयकालमे उद्वेलनाका काल बहुत होवे तो पहले से ही सम्यक्त्वको प्राप्त करके मिथ्यात्वमें जावे। फिर यथानिषेकस्थितिप्राप्तका

संचयं करिय णहिदवेदगसम्मत्तपढमसमए तिण्हं पि गोपुच्छाणं पदेसग्गमेक्कदो गीयूद मुवगदं घेत्तूण द्विदो जीवो पयदुक्कस्ससामिओ होइ त्ति वत्तव्वं। एत्थ पुण विसिट्ठोव एसमस्सियूण अण्णदरपक्खपरिग्गहो कायव्वो; संपहियकाले तहाविहोवएसाभावादो। संवरि इममधाणिसेयगोपुच्छमुदयावलियं पवेसिय पढमसमए चेव सम्मत्तं गेण्हावेमो जहण्णाबाहमेत्तं वा सामित्तसमयादो हेट्ठदो ओसारिय, णवरि संचयाभावादो त्ति भणिदे ण, सम्मत्तं पडिवज्जाविय पुणो उदयावलियं जहण्णाबाहमेत्तकालं वा वोलाविय सामित्ते दिज्जमाणे महाणिसेयट्ठिदिदव्वस्स बहुअस्स ओकड्डणाए विणासप्पसंगादो। किं कारणमुदयावलियबाहिराबट्ठिदावत्थाए ताव ओकड्डणाए बहुदव्वविणासो सम्मत्ताहिमुहस्स होइ त्ति ण एत्थ संचओ। उदयावलियपविट्ठपढमसमए वि सम्मत्तं गेण्हमाणो पुव्वमेवंतोमुहुत्तमस्थि त्ति तदहिमुहावत्थाए चेव विसुज्झंतो बहुअं दव्वमोकड्डणाए णासेइ त्ति ण तत्थ सम्मत्तं पडिवज्जाविदो। एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि सामित्तं वत्तव्वं। णवरि पुव्वविहाणेण संचयं करिय सम्मामिच्छत्तं पडिवण्णपढम समयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स महाणिसेयट्ठिदिपत्तयं णिसेयट्ठिदिपत्तयं च कायव्वं।

आरम्भ करके संचय करे और इसप्रकार जब वह संचयकालके अन्तमें वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके उसके प्रथम समयमें विद्यमान रहे तब उसके तीनों ही गोपुच्छाओंका द्रव्य एकत्रित होकर अपको प्राप्त होने पर प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है ऐसा कथन करना चाहिये। परन्तु यहाँ विशिष्ट उपदेशको प्राप्त करके किसी एक पक्षको स्वीकार करना चाहिये क्योंकि वर्तमान कालमें ऐसा उपदेश नहीं पाया जाता जिससे समुचित निर्णय किया जा सके।

शंका—अब इस यथानिषेकगोपुच्छाको उदयावलिमें प्रवेश कराके उसके प्रथम समयमें ही सम्यक्त्वको ग्रहण करावे या स्वामित्व समयसे जघन्य अबाधाकालका जितना प्रमाण है उतना पीछे जाकर सम्यक्त्वको ग्रहण करावे क्योंकि इसके ऊपर उत्कृष्ट संचयका अभाव है ?

समाधान—नहीं क्योंकि यदि सम्यक्त्वको प्राप्त कराके फिर उदयावलि या जघन्य अबाधाप्रमाण कालको बिताकर उत्कृष्ट स्वामित्व दिया जाता है तो अपकर्षणके द्वारा यथानिषेक-स्थितिप्राप्तके बहुत द्रव्यका अपकर्षणके द्वारा विनाश प्राप्त होता है, क्योंकि उदयावलिके बाहर अवस्थित रहते हुए सम्यक्त्वके अभिमुख होनेके कारण इसके अपकर्षणके द्वारा बहुत द्रव्यका विनाश देखा जाता है इसलिये यहाँ उत्कृष्ट संचय नहीं हो सकता। इसीप्रकार जो उदयावलिमें प्रवेश करनेके प्रथम समयमें भी सम्यक्त्वको ग्रहण करता है वह अन्तर्मुहूर्त काल पहले ही सम्यक्त्वके सन्मुखरूप अवस्थाके होनेपर विशुद्धिको प्राप्त होता हुआ अपकर्षणद्वारा बहुत द्रव्यका नाश कर देता है, इसलिये वहाँ स्वामित्व नहीं प्राप्त कराया है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वका भी स्वामित्व कहना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि पूर्वविधिसे संचय करके जो सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है प्रथम समयवर्ती उस सम्यग्मिथ्यादृष्टिके यथानिषेकस्थितिप्राप्त और निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य कहना चाहिये।

विशेषार्थ—मालूम होता है कि यथानिषेककाल और उद्वेलनाकाल इनमेंसे कौन छोटा है और कौन बड़ा इस विषयमें मतभेद रहा है। एक परम्पराके मतानुसार उद्वेलनाकालसे यथानिषेककाल बड़ा है और दूसरी परम्पराके मतानुसार यथानिषेककालसे उद्वेलनाकाल बड़ा है।

५१

§ ६५८. संपहि उदयट्ठिदिपत्तयस्स सामित्तविसेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ णवरि उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय-भंगो।

§ ६५९. सम्मत्तस्स चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स सव्वोदयं तं घेत्तूण सम्मामिच्छत्तस्स वि उदिण्णसंजमासंजम-संजमगुणसेढिगोवुच्छसीसयाणि घेत्तूण पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिम्मि गुणिदकिरियपच्छायदम्मि सामित्तविहाण पडि तत्तो विसेसाभावादो।

§ ६६०. एवमेद परूविय संपहि मिच्छत्तसमाणसामियाण सेसाणं पि

टीकामें बतलाया है कि इस समय ऐसा विशिष्ट उपदेश प्राप्त नहीं जिसके आधारसे यह निर्णय किया जा सके कि अमुक मत सही है, अत विशिष्ट उपदेश मिलने पर ही इस विषयका निर्णय करना चाहये। तथापि यदि यथानिषेककाल बडा होवे तो उद्वेलनाका प्रारम्भ पीछेसे कराके उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त करना चाहिये और यदि उद्वेलनाकाल बड़ा हो तो उद्वेलनाका प्रारम्भ होनेके बादसे यथानिषेकके सचयका प्रारम्भ कराके उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त करना चाहिये, क्योंकि ऐसा किये बिना उत्कृष्ट स्वामित्व नहीं प्राप्त किया जा सकता है। यहा पर टीकामें एक विवाद यह भी उठाया गया है कि सम्यक्त्व प्राप्त करानेके कितने काल बाद उत्कृष्ट स्वामित्व दिया जाय? सिद्धान्त पक्ष सम्यक्त्व प्राप्त कराके उसके प्रथम समयमें ही उत्कृष्ट स्वामित्व दिलानेका है पर शकाकार यह स्वामित्व सम्यक्त्व प्राप्त करनेके बाद एक आवलिकाल या जघन्य आबाधाप्रमाण काल होने पर दिलाना चाहता है किन्तु विचार करने पर सिद्धान्त पक्ष ही समीचीन प्रतीत होता है जिसका विशेष खुलासा टीका में किया ही है। इसप्रकार सम्यक्त्वके यथानिषेक और निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यके उत्कृष्ट स्वामित्वका विचार किया। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षासे भी विचार कर लेना चाहिए। किन्तु इसकी अपेक्षा उत्कृष्ट स्वामित्व सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानके प्रथम समयमें प्राप्त होता है, क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वका उदय वहीं पर पाया जाता है।

§ ६५८. अब उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यके स्वामित्वविशेषका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ किन्तु इतनी विशेषता है कि उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका भंग उदयसे उत्कृष्ट झीनस्थितिप्राप्त द्रव्यके समान है।

§ ६५९ जिसने दर्शनमोहनीयका पूरा क्षय नहीं किया है उसके दर्शनमोहनीयका क्षय करनेके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वका जो सर्वोदय होता है उसकी अपेक्षा गुणितक्रियावाले जीवके उदयस्थितिप्राप्तके उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान किया गया है। इसीप्रकार उदयको प्राप्त हुए संयमासंयम और संयमसम्बन्धी गुणश्रेणिगोपुच्छशीर्षों की अपेक्षा सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानके प्रथम समयमें गुणितक्रियावाले जीवके सम्यग्मिथ्यात्वके उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यके उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान किया है इसलिये इन दोनों प्रकृतियोंकी अपेक्षा उदयसे झीनस्थितिवाले द्रव्यके उत्कृष्ट स्वामित्वसे इसमें कोई भेद नहीं है।

विशेषार्थ—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उदयसे झीनस्थितिवाले द्रव्यका उत्कृष्ट स्वामित्व पहले बतला आये हैं उसीप्रकार प्रकृतमें जानना चाहिये।

§ ६६० इसप्रकार उक्त स्वामित्वका कथन करके मिथ्यात्वके समान स्वामीवाले शेष

समप्पणट्ठमुत्तरो पबंधो—

❀ अणंताणुबंधि-अट्ठकसाय-छण्णोकसायाणं मिच्छत्तभंगो ।

§ ६६१ जहा मिच्छत्तस्स सव्वासिमुक्कस्सट्ठिदियपत्तयादीणं सामित्तपरूवणा कया तहा एदेसिं पि कम्माणं कायव्वा, विसेसाभावादो । संपहि एत्थ संभवविसेस-पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ णवरि अट्ठकसायाणमुक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ६६२ सुगमं ।

❀ संजमासंजम-संजम-दंसणमोहणीयक्खवयगुणसेडिसीसयाणि त्ति एदाओ तिण्णि वि गुणसेढीओ गुणिदकम्मंसिएण कयाओ । एदाओ काऊण अविणट्ठेसु असंजमं गओ । पत्तेसु उदयगुणसेडिसीसएसु उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं ।

§ ६६३ अणंताणुबंधीणमणूणाहियो मिच्छत्तभंगो त्ति ते मोत्तूण पच्चक्खाणा-पच्चक्खाणकसायमुक्कस्ससामित्तविहाणट्ठमुत्तस्सेदस्स उदयादो उक्कस्सझीणट्ठिदिय सामित्तसुत्तेण अवयवसमुदायत्थपरूवणा कायव्वा । एयंताणुवड्ढिचरिमसमयसंजदा संजद-संजदपरिणामेहि कदगुणसेडिसीसयाणि दोण्णि वि एक्कदो काऊण पुणो वि

कर्मों का भी मुख्यरूपसे कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ अनन्तानुबन्धीचतुष्क, आठ कषाय और छह नोकषायोंका भंग मिथ्यात्वके समान है ।

§ ६६१ जिसप्रकार मिथ्यात्वके सभी उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त आदिकके स्वामित्वका कथन किया है उसी प्रकार इन कर्मों का भी करना चाहिये क्योंकि इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। अब यहाँ जो विशेषता सम्भव है उसका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ किन्तु आठ कषायोंके उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी कौन है ?

§ ६६२. यह सूत्र सुगम है।

❀ जो गुणितकर्मांशिक जीव संयमासंयम, संयम और दर्शनमोहनीयकी क्षपणा सम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्ष इन तीनों ही गुणश्रेणियोंको करके और इनका नाश किये बिना असंयमको प्राप्त हुआ है वह गुणश्रेणिशीर्षोंके उदयमें आनेपर उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी है ।

§ ६६३ अनन्तानुबन्धियोंका भंग न्यूनाधिकताके बिना मिथ्यात्वके समान है, अतः उन्हें छोड़कर प्रत्याख्यानावरण और अप्रत्याख्यानावरण कषायोंके उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान करनेवाले इस सूत्रके अवयवार्थ और समुदायार्थकी प्ररूपणा उदयसे झीनस्थितिवाले द्रव्यके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करनेवाले सूत्रके समान करना चाहिये। एकान्तानुवृद्धिके अन्तिम समयमें संयतासंयत और संयतरूप परिणामोंके द्वारा किये गये दोनों ही गुणश्रेणिशीर्षों को मिलाकर

ताणमुवरि दंसणमोहक्खवयगुणसेढिसीसयं पविखविय कदकरणिज्जभावेणासंजद-भावेणंतोमुहुत्त गुणसेढीओ थामूरिय से काले तिण्हं पि गुणसेढिसीसयाणमुदओ होहदि त्ति काल करिय देवेसुप्पण्णपढमसमयअसंजदम्मि सत्थाणम्मि चेव वा परिणाम-पच्चएणासंजमं गदपढमसमयम्मि सामित्तविहाणं पडि दोण्हं विसेसाणुवलंभादो।

§ ६६४. एवमट्ठकसायाणमुदयट्ठिदिपत्तयस्स उक्कस्ससामित्तविसेसं सूचिय संपहि छण्णोकसायाण पयदुक्कस्ससामित्तविसेसपरूवणट्ठमुत्तरो पबंधो—

❀ छण्णोकसायाणमुक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ६६५. सुगममेदमासंकासुत्तं।

❀ चरिमसमयअपुव्वकरणे वट्टमाणयस्स।

§ ६६६. एत्थ गुणिदकम्मंसियस्स खवयस्से त्ति वक्कसेसो, अण्णहा उक्कस्स-भावाणुववत्तीदो। सेसं सुगमं। एत्थेवावांतरविसेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्ताणमवयारो—

❀ हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं जइ कीरइ भय-दुगुंछाणमवेदओ कायव्वो।

फिर भी उनके ऊपर दर्शनमोहनीयकी क्षपणासम्बन्धी गुणश्रेणिशीर्षको प्रक्षिप्त करके फिर कृतकृत्य और अधःप्रवृत्तसंयमरूप भावके द्वारा अन्तर्मुहूर्त कालतक गुणश्रेणियोंको पूरा करके तदनन्तर समयमें तीनों ही गुणश्रेणिशीर्षोंका उदय होगा पर ऐसा न होकर पूर्व समयमें ही मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ उस असंयत देवके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उत्कृष्ट स्वामित्व होता है। या स्वस्थानमें ही परिणामोंके निमित्तसे असंयमको प्राप्त होने पर उसके प्रथम समयमें ही उत्कृष्ट स्वामित्व होता है। इस प्रकार स्वामित्वकी अपेक्षा इन दोनोंमें कोई भेद नहीं है।

विशेषार्थ—अप्रत्याख्यानावरण और प्रत्याख्यानावरण इन आठ कषायोंके उदयस्थिति-प्राप्त उत्कृष्ट द्रव्यका स्वामी कौन है इसका प्रकृतमें विचार किया है सो यह पूरा वर्णन इन्हीं आठ कषायोंके उदयसे झीनस्थितिप्राप्त द्रव्यके उत्कृष्ट स्वामित्वसे मिलता जुलता है, इसलिये उसके समान इसका विस्तार समझ लेना चाहिये।

§ ६६४ इसप्रकार आठ कषायोंके उदयस्थितिप्राप्तके उत्कृष्ट स्वामित्वविशेषको सूचित करके अब छह नोकषायोंके प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वविशेषका कथन करनेके लिये आगेके सूत्र कहते हैं—

* छह नोकषायोंके उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी कौन है ?

§ ६६५ यह आशंका सूत्र सुगम है।

* जो अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान है वह छह नोकषायोंके उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी है।

§ ६६६ यहाँ अपूर्वकरण गुणस्थानवाला जीव गुणितकर्मांश क्षपक होता है अतः सूत्रमें 'गुणिदकम्मसियस्स खवयस्स' इतना वाक्य शेष है जो जोड़ लेना चाहिये, अन्यथा उत्कृष्ट भावकी उत्पत्ति नहीं हो सकती। शेष कथन सुगम है। अब इस विषयमें अवान्तर विशेषका कथन करनेके लिये आगेके सूत्र आये हैं—

* हास्य, रति, अरति और शोकका यदि उत्कृष्ट स्वामित्व करता है तो उसे भय और जुगुप्साका अवेदक करना चाहिए।

§ ६६७ सुगमं ।

※ अह भयस्स तदो दुगुंछाए अवेदओ कायव्वो । अध दुगुंछाए तदो भयस्स अवेदओ कायव्वो ।

§ ६६८ सुगममेदं पि सुत्तं । एवं पुव्विल्लप्पणाए विसेसपरूवणं समाणिय सेसकम्माणमुक्कस्ससामित्तविहाणट्ठमुवरो पबंधो—

※ कोहसंजलणस्स उक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ६६९ सुगमं ।

※ उक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं जहा पुरिमाणं कायव्वं ।

§ ६७० जहा पुरिमाणं मिच्छत्तादिकम्माणमग्गट्ठिदिपत्तयस्स उक्कस्ससामित्तं परूविदं तहा कोहसंजलणस्स वि परूवेयव्वं, विसेसाभावादो । एवमेदस्स समप्पणं कादूण संपहि सेसाणं ट्ठिदिपत्तयाणमुक्कस्ससामित्तविहाणट्ठमुवरिमगंथमवयारो—

※ उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ६७१ सुगमं ।

※ कसाए उवसामित्ता पडिवदिदूण पुणो अंतोमुहुत्तेण कसाया

---

§ ६६७ यह सूत्र सुगम है ।

※ यदि भयका उत्कृष्ट स्वामित्व करता है तो उसे जुगुप्साका अवेदक करना चाहिये । यदि जुगुप्साका उत्कृष्ट स्वामित्व करता है तो उसे भयका अवेदक करना चाहिये ।

§ ६६८. यह सूत्र भी सुगम है । इस प्रकार पहले जिनके विशेष व्याख्यानकी सूचना की थी उनका विरोष कथन समाप्त करके अब शेष कर्मोंके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

※ क्रोध संज्वलनके उत्कृष्ट अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी कौन है ।

§ ६६९. यह सूत्र सुगम है ।

※ मिथ्यात्व आदिके समान क्रोधसंज्वलनके उत्कृष्ट अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी करना चाहिए ।

§ ६७० जिस प्रकार मिथ्यात्व आदि कर्मोंके अग्रस्थितिप्राप्तके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन किया है उसी प्रकार क्रोधसंज्वलनका भी कथन करना चाहिये क्योंकि इसके कथनमें कोई विशेषता नहीं है । इस प्रकार इसकी मुख्यतासे कथन करके अब शेष स्थितिप्राप्तोंके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करनेके लिये आगेका ग्रन्थ आया है—

※ उत्कृष्ट यथानिषेक स्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी कौन है ?

§ ६७१ यह सूत्र सुगम है ।

※ जो जीव कषायोंका उपशम करके उससे च्युत हुआ । फिर दूसरी बार

उवसामिदा विदियाए उवसामणाए आवाहा जम्हि पुण्णा सा द्विदी आदिट्ठा, तम्हि उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं ।

§ ६७२. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—एक्केण जीवेण कसाए उवसामित्ता पडिवदिदूण पुणो अंतोमुहुत्तेण कसाया उवसामिदा । सो च जीवो संखेज्जतोमुहुत्तब्भहियसोलसवस्सूणमधाणिसेयकालं पुव्वविहाणेण णेरएसु संचयं कादूण तदो उव्वट्टिदो । दो-तिण्णिभवग्गहणाणि तिरिक्खेसु गमिय मणुस्सेसु आगदो त्ति घेत्तव्वं, अण्णहा उक्कस्ससंचयाणुप्पत्तीदो । विदियाए उवसामणाए आवाहा जम्हि पुण्णा सा द्विदी आदिट्ठा एव भणिदे जम्मि उद्देसे सामित्तभवसंबंधिविदियवारकसायउवसामणाए वावदस्स तप्पाओग्गजहण्णिया आवाहा पुण्णा सा द्विदी पुव्वमेव आदिट्ठा विवक्खिया त्ति वुत्तं होइ ।

§ ६७३. एत्थ णेरइएसु चेव मिच्छत्तादिकम्माणं व पयदुक्कस्ससामित्तमदादूण उवसमसेढिं चढाविय सामित्तविहाणे लाहपदसणट्ठमिमा ताव परूवणा कीरदे । तं जहा—संखेज्जतोमुहुत्तब्भहियसोलसवस्सेहि परिहीणं जहाणिसेयकालं पुव्वविहाणेण सत्तमपुढविणेरइएसु तदाउअचरिमभागे अधाणिसेयकालब्भंतरे संचयं करिय कालं काऊण दो-तिण्णिभवग्गहणाणि तिरिक्खेसु गमिय मणुस्सेसुववज्जिय गब्भादिअट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि संजमेण सह पढमसम्मत्तमुप्पाइय पुणो वेदयसम्मा-

---

अन्तर्मुहूर्तकालके द्वारा कषायका उपशम किया । इस प्रकार इस दूसरी उपशामनाके होनेपर अबाधा जहाँ पूर्ण होती है प्रकृतमें वह स्थिति विवक्षित है । उसके उदयको प्राप्त होनेपर उससे युक्त जीव उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी है ।

§ ६७२ अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है—एक जीव है जो कषायका उपशम करके उससे च्युत हुआ । फिर भी उसने अन्तर्मुहूर्त कालमें कषायका उपशम किया । वह जीव पहले संख्यात अन्तर्मुहूर्त अधिक सोलह वर्ष कम यथानिषेकके कालतक पूर्वविधिसे नारकियोंमें सञ्चय करके वहाँसे निकला और दो तीन भव तिर्यञ्चोंके लेकर मनुष्योंमें आया ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए, अन्यथा उत्कृष्ट संचय नहीं बन सकता है । 'विदियाए उवसामणाए आवाहा जम्हि पुण्णा सा ट्ठिदी आदिट्ठा' सूत्रमें जो यह कहा है सो इसका यह आशय है कि स्वामित्वसम्बन्धी भवमें दूसरी बार कषायकी उपशामनाके जिस स्थानमें रहते हुये तत्प्रायोग्य जघन्य आबाधा पूर्ण होती है वह स्थिति पूर्वमें ही विवक्षित थी ।

§ ६७३ अब प्रकृतमें नारकियोंमें ही मिथ्यात्व आदि कर्मोंके समान प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व न देकर जो उपशमश्रेणिपर चढाकर स्वामित्वका विधान किया है सो इसमें लाभ है यह दिखलानेके लिये यह आगेकी प्ररूपणा करते हैं । यथा—कोई एक जीव है जिसने संख्यात अन्तर्मुहूर्त अधिक सोलह वर्षसे हीन यथानिषेकका जितना काल है उतने काल तक सातवीं पृथिवीका नारकी रहते हुए अपनी आयुके अन्तिम भागमें यथानिषेकके कालके भीतर पूर्वविधिसे यथानिषेकका संचय किया फिर मरा और तिर्यंचोंके दो तीन भव लेकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । फिर गर्भसे लेकर आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्त हो जानेपर संयमके साथ प्रथमोपशम

ट्ठिदिभागेणंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो वि सेढिसमारोहणट्ठं दंसणमोहणीयमणंताणुबंधि-विसंजोयणपुरस्सरमुवसामिय कसायाणमुवसामणट्ठमधापवत्तकरणं पविट्ठपढमसमए वट्टमाणम्मि अहियारट्ठिदीए अहाणिसेयचिराणसंचयदव्वमेगसमयपबद्धस्स असंखेज्ज-भागमेत्तं होइ।

§ ६७४ तस्सोवट्टणे ठविज्जमाणे एगं पंचिंदियसमयपबद्धं ठविय एदम्मि ओकड्डुक्कड्डणभागहारेणोवट्टिदसादिरेयदिवड्ढगुणहाणीए भागे हिदे तप्पाओग्गचिराण-संतकम्मसंचयदव्वमागच्छइ। एवंविहेण पुव्विल्लसंचयादो बहुदव्वसंचय-करणट्ठं वट्टमाणो अधापवत्तपढमसमयम्मि तदणंतरहेट्ठिमट्ठिदिबंधादो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तमोसरिदूणंतोकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिं च बंधइ।

§ ६७५ संपहि एदमस्सियूण अहियारगोवुच्छाए उवरि णिसित्तदव्व-मिच्छिज्जमाणे एगं पंचिंदियसमयपबद्धं ठविय पुणो एदस्स असंखेज्जभागब्भहिय-दिवड्ढभागहारं ठविदे पढमणिसेयादो संखेज्जावलियमेत्तद्धाणमुवरि चडिदूणावट्ठिद-अहियारट्ठिदीए णिसित्तदव्वमागच्छदि। एवं च एदमस्सियूण पयदगोवुच्छसंचयभाग-हारो परूविदो। संपहि तत्थेव ट्ठिदिपरिहाणिमस्सियूण लब्भमाणसंचयाणुगमं वत्तइस्सामो। को ट्ठिदिपरिहाणिसंचयो णाम ? उच्चदे—एवं ट्ठिदिबंधं च बंधिय पुणो

सम्यक्त्वका उपशम किया। फिर वेदकसम्यक्त्वके साथ अन्तर्मुहूर्त तक रहकर श्रेणिपर चढ़नेके लिये अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनाके साथ दर्शनमोहनीयका फिरसे उपशम किया। इस प्रकार यह जीव जब कषायोंका उपशम करनेके लिए उद्यत होता है तब इसके अधःकरणमें प्रवेश करके उसके प्रथम समयमें विद्यमान रहते हुवे विवक्षित स्थितिमें यथानिषेकका प्राचीन सत्कर्म एक समयप्रबद्धका असंख्यातवाँ भाग प्राप्त होता है।

§ ६७४ अब इस द्रव्यको प्राप्त करनेके लिए भागहार क्या है यह बतलाते हैं—पंचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको स्थापित करे। फिर इसमें अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसे भाजित साधिक डेढ़ गुणहानिका भाग देनेपर वहाँका प्राचीन सत्कर्मरूप संचयद्रव्य आता है। इस प्रकार यहाँ जो पूर्व संचय प्राप्त हुआ है सो उससे बहुत द्रव्यका संचय करनेके लिये यह जीव उपशमश्रेणिपर चढ़ता हुआ अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयमें इसके अनन्तरवर्ती पूर्व समयमें जितना स्थितिबन्ध किया था उससे पल्यके असंख्यातवें भाग कम अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिबन्धको करता है।

§ ६७५ अब इस समय बँधे हुए द्रव्यकी अपेक्षा अधिकृत गोपुच्छामें निक्षिप्त हुआ द्रव्य लाना चाहते हैं, इसलिए पंचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको स्थापित करके फिर इसका असंख्यातवाँ भाग अधिक डेढ़ गुणहानिप्रमाण भागहार स्थापित करे। ऐसा करनेसे प्रथम निषेकसे संख्यात आवलि ऊपर जाकर स्थित हुई अधिकृत स्थितिमें जो द्रव्य निक्षिप्त होता है उसका प्रमाण आ जाता है। इस प्रकार बन्धकी अपेक्षा प्रकृत गोपुच्छामें संचयको प्राप्त हुए द्रव्यके भागहारका कथन किया। अब यहीं पर स्थितिपरिहानिकी अपेक्षा प्राप्त होनेवाले संचयका विचार करते हैं—

शंका—स्थितिपरिहानिसंचय किसे कहते हैं—

अंतोमुहुत्तेणण्णेगट्ठिदिबंधं बंधमाणो अग्गट्ठिदीदो हेट्ठा पलिदोवमस्स संखे०भाग-मेत्तमोसरियूण बंधइ। पुणो त हीणट्ठिदिपदेसग्ग सेसट्ठिदीणमुवरि विहजिय पदमाणं ट्ठिदिपरिहाणिसचओ णाम। तस्सोवट्टणे ठविज्जमाणे एय पंचिंदियसमयपबद्धं ठविय एयस्स सयलतोकोडाकोडीअब्भतरणाणागुणहाणिसलागाओ विरलिय विगं करिय अण्णोण्णब्भत्थरूवूणीकदरासिम्मि परिहीणट्ठिदिअब्भतरणाणागुणहाणी विरलिय विगं करिय अण्णोण्णब्भासजणिदरूवूणरासिणोवट्टदम्मि भागहारत्तेण ठविदे ट्ठिदि-परिहाणिदव्वमागच्छइ। पुणो तम्मि सादिरेयदिवड्ढगुणहाणीए भागे हिदे अहियार-ट्ठिदीए उवरि ट्ठिदिपरिहाणीए पदिददव्वसचओ आगच्छइ। संपहि एवविहेसु तिसु वि सचएसु ट्ठिदिपरिहाणिसचओ पहाण, तस्सेव उवरि समयं पडि वड्ढिदसणादो।

§ ६७६. एदं च ट्ठिदिपरिहाणिकालभाविदव्वमधापवत्तकरणपढमसमयादो

समाधान—ऐसा जीव एक स्थितिवन्धको बाँधकर अन्तर्मुहूर्तबाद जब दूसरे स्थिति-बन्धको बाँधता है तो वह दूसरा स्थितिवन्ध अग्रस्थितिसे पल्यका सख्यातवाँ भाग कम बाँधता है। अर्थात् पहला स्थितिवन्ध जितना होता था उससे यह पल्यका सख्यातवाँ भाग कम होता है। इस प्रकार जितनी स्थिति कम जाती है उसके कर्मपरमाणु शेप स्थितियोंमें विभक्त होकर प्राप्त होते हैं। वस इस प्रकार जो द्रव्य प्राप्त होता है उसे ही स्थितिपरिहानिसचय कहते हैं। अब इस द्रव्यको प्राप्त करनेके लिये भागहार क्या है यह वतलाते हैं—पचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको भाज्यरूपसे स्थापित करे। फिर पूरी अन्त कोड़ाकोड़ीके भीतर जितनी नानागुणहानिशलाकाऐं प्राप्त हों उनका विरलन करके दूना करे। फिर परस्परमें गुणा करके जो राशि उत्पन्न हो उनमेंसे एक कम करे। फिर इसमें परिहीन स्थितिके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानियोंका विरलन करके और विरलित राशिको दूना करके परस्परमें गुणा करनेसे जो राशि आवे एक कम उसका भाग दे और इस प्रकार जो राशि प्राप्त हो उसे पूर्वोक्त भाज्यराशिका भागहार करनेपर स्थितिपरिहानि द्रव्यका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इसमें डेढ गुणहानिका भाग देनेपर अधिकृत स्थितिमें स्थितिपरि-हानिसे द्रव्यका जितना सचय प्राप्त होता है उसका प्रमाण आ जाता है। इस प्रकार यहाँ जो तीन प्रकारके सचय प्राप्त हुए हैं उनमेंसे स्थितिपरिहानिसे प्राप्त हुआ सचय प्रधान है, क्योंकि आगे प्रत्येक समयमें उसीकी वृद्धि देखी जाती है।

विशेषार्थ—वन्धकालके पूर्व समय तक अधिकृत स्थितिमें जितना द्रव्य प्राप्त हुआ रहता है वह प्राचीन सत्कर्म सचित द्रव्य है। बन्धकी अपेक्षा अधिकृत स्थितिमें जितना द्रव्य प्राप्त होता है वह बन्धकी अपेक्षा निक्षिप्त हुआ द्रव्य है। तथा स्थितिपरिहानिसे विवक्षित स्थितिमें प्रति समय जो अतिरिक्त द्रव्य प्राप्त होता है वह स्थितिपरिहानिसचित द्रव्य है। यद्यपि स्थितिपरिहानिसचित द्रव्य बन्धकी अपेक्षा प्राप्त होनेवाले द्रव्यमें ही आ जाता है किन्तु बन्धसे प्राप्त होनेवाले द्रव्यको ध्रुव करके उत्तरोत्तर स्थितिपरिहानिसे जो अतिरिक्त द्रव्य प्राप्त होता है उसकी यहाँपर अलगसे परिगणना की है। इतना ही नहीं किन्तु वह उत्तरोत्तर बढ़ता भी जाता है, इसलिये उसकी प्रधानता भी मानी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इनमेंसे किसका कितना प्रमाण है और वह किस प्रकार प्राप्त होता है इसका विचार मूलमें किया ही है।

§ ६७६ अब स्थितिपरिहानिके कालमें कितना द्रव्य प्राप्त होता है इसका विचार करते

अणंतरहेट्ठिमसमयम्मि बद्धसमयपबद्धं सादिरेयदिवड्ढगुणहाणीए भागं घेत्तूण लद्धमेत्तं हाइदूण पुणो ट्ठिदिपरिहाणीए लद्धमसंखेज्जभागमेत्तदव्वेण अहियं होइ। एसो च तिस्से अहियारट्ठिदीए ओकड्डुक्कड्डणाहि गच्छमाणं पि दव्वं पेक्खियूण असंखेज्जभागब्भहियं होइ। तं कथं? गच्छमाणदव्वस्सोवट्टणे ठविज्जमाणे एयं पंचिंदियसमयपबद्धं ठविय पुणो एदस्स ओकड्डुक्कड्डणभागहारोवट्टिददिवड्ढगुणहाणिमेत्तभागहारे ठविदे चिराणसंचयदव्वमागच्छदि। पुणो एदस्स ओकड्डुक्कड्डणभागहारे ठविदे सादिरेयदिवड्ढगुणहाणिसमयपबद्धस्स पयदगोवुच्छपमाणेण भागहारो जादो। पुव्वुत्तसंचओ पुण समयपबद्धं सादिरेयदिवड्ढगुणहाणीए खंडिय तत्थेयखंडं ट्ठिदिपरिहीणदव्वं च दो वि घेत्तूण होइ, तम्हा एसो अणंतरहेट्ठिमसमयसंचयादो संपहियसमयम्मि गच्छमाणदव्वादो च असंखेज्जदिभागब्भहिओ होइ त्ति सिद्धं। संपहियसंचए चिराणसंतकम्मसंचयदव्वं पेक्खियूण असंखेज्जभागवड्ढी चेव होइ। कुदो? ओकड्डुक्कड्डणभागहारोवट्टिददिवड्ढगुणहाणिखंडिदेगसमयपबद्धमेत्तचिराणसंचयादो एदस्स वट्टमाणसमयसंचयस्स असंखेज्जगुणहीणत्तदंसणादो। एवमधापवत्तकरणपढमसमयसंचयपरूवणा कदा। एत्तो अंतोमुहुत्तमेत्तकालं सव्वमेगमवट्ठिदट्ठिदिं बंधइ त्ति

है—अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयसे उसके अनन्तरवर्ती पीछेके समयमें बंधे हुए समयप्रबद्धमें साधिक डेढ़ गुणहानिका भाग देकर जितना लब्ध आवे उतना घटाकर वह लब्ध द्रव्यप्रमाण होकर पुनः स्थितिकी परिहानिसे प्राप्त हुए असंख्यात भागप्रमाण द्रव्यसे अधिक होता है। और यह द्रव्य उस अधिकृत स्थितिमें अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा व्ययको प्राप्त होनेवाले द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातवें भागप्रमाण अधिक होता है।

शंका—सो कैसे ?

समाधान—क्योंकि, जो द्रव्य व्ययको प्राप्त होता है उसको लानेके लिये भागहारके स्थापित करनेपर पंचेन्द्रियका एक समयप्रबद्ध स्थापित करे। फिर इसका अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे भाजित डेढ़ गुणहानिप्रमाण भागहार स्थापित करनेपर प्राचीन संचित द्रव्य प्राप्त होता है। फिर इस संचित द्रव्यके नीचे अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारको स्थापितकर भाग देनेपर प्रकृत गोपुच्छा-मेंसे व्ययका प्रमाण लानेके लिये यह साधिक डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धका भागहार हो जाता है। परन्तु पूर्वोक्त संचय तो एक समयप्रबद्धको साधिक डेढ़ गुणहानिसे भाजित करनेपर वहाँ प्राप्त हुआ एक भाग और स्थितिपरिहीन द्रव्य इन दोनोंको मिलाकर होता है इसलिए यह द्रव्य अनन्तरवर्ती नीचेके समयमें संचयको प्राप्त हुए द्रव्यसे और वर्तमान कालमें व्ययको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे असंख्यातवें भाग अधिक होता है यह सिद्ध हुआ। किन्तु इस वर्तमान कालीन संचयमें प्राचीन संचय द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धि ही होती है, क्योंकि डेढ़ गुणहानिमें अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका भाग देनेपर जो एक भाग प्राप्त हो उसका एक समयप्रबद्धमें भाग देनेपर प्राचीन संचय द्रव्य आता है। उससे यह वर्तमान समयका संचय असंख्यातगुणा हीन देखा जाता है। इस प्रकार अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयमें जो संचय होता है उसका कथन किया। अब इससे आगे एक अन्तर्मुहूर्त कालतक पूरी अवस्थित स्थितिका बन्ध होता है, इसलिये वहाँ अवस्थित संचय

अंतोमुहुत्तेणण्णेगट्ठिदिं बंध बंधमाणो अगट्ठिदीदो हेट्ठा पलिदो० संखे०भाग मेत्तमोसरियूण बंधइ। पुणो तद्दीणट्ठिदिपदेसग्गं सेसट्ठिदीणमुवरि विहजिय पदमाण ट्ठिदिपरिहाणिसंचओ णाम। तस्सोवट्टणे ठविज्जमाणे एय पंचिंदियसमयपबद्धं ठविय एयस्स सयलंतोकोडाकोडीअब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाओ विरलिय विग करिय अण्णोण्णब्भत्थरूवूणीकदरासिम्मि परिहीणट्ठिदिअब्भंतरणाणागुणहाणी विरलि विगं करिय अण्णोण्णब्भासजणिदरूवूणरासिणोवट्टिदम्मि भागहारत्तेण ठविदे ट्ठिदि-परिहाणिदव्वमागच्छइ। पुणो तम्मि सादिरेयदिवड्ढगुणहाणीए भागे हिदे अहियार-ट्ठिदीए उवरि ट्ठिदिपरिहाणीए पदिददव्वसंचओ आगच्छइ। मणदि एवविहेसु ति वि संचएसु ट्ठिदिपरिहाणिसंचओ पहाणं, तस्सेव उवरि समयं पडि वड्ढिदंसणादो।

§ ६७६. एदं च ट्ठिदिपरिहाणिकालभाविदव्वमणपवत्तकरणपढमसमय

समाधान—ऐसा जीव एक स्थितिबन्धको बाँधकर अन्तर्मुहूर्तबाद जब दूसरे स्थिति-बन्धको बाँधता है तो वह दूसरा स्थितिबन्ध प्रथमस्थितिसे पल्यका संख्यातवाँ भाग कम बाँ अर्थात पहला स्थितिबन्ध जितना होता था उससे यह पल्यका संख्यातवाँ भाग कम होता प्रकार जितनी स्थिति कम जाती है उसके कर्मपरमाणु शेष स्थितियोंमें विभक्त होकर प्राप्त बस इस प्रकार जो द्रव्य प्राप्त होता है उसे ही स्थितिपरिहानिसंचय कहते हैं। अब इ प्राप्त करनेके लिये भागहार क्या है यह बतलाते हैं—पंचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको स्थापित करे। फिर पूरी अन्तःकोड़ाकोड़ीके भीतर जितनी नानागुणहानिशलाकाएं उनका विरलन करके दूना करे। फिर परस्परमें गुणा करके जो राशि उत्पन्न हो उनमें करे। फिर इसमें परिहीन स्थितिके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानियोंका विरलन करके राशिको दूना करके परस्परमें गुणा करनेसे जो राशि आवे एक कम उसका भाग प्रकार जो राशि प्राप्त हो उसे पूर्वोक्त भाज्यराशिका भागहार करनेपर स्थितिपरि प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इसमें डेढ गुणहानिका भाग देनेपर अधिकृत स्थिति हानिसे द्रव्यका जितना संचय प्राप्त होता है उसका प्रमाण आ जाता है। इस प्र तीन प्रकारके संचय प्राप्त हुए हैं उनमेंसे स्थितिपरिहानिसे प्राप्त हुआ संचय प्रधा आगे प्रत्येक समयमें उसीकी वृद्धि देखी जाती है।

विशेषार्थ—बन्धकालके पूर्व समय तक अधिकृत स्थितिमें जितना द्रव्य है वह प्राचीन सत्कर्म संचित द्रव्य है। बन्धकी अपेक्षा अधिकृत स्थितिमें जितना है वह बन्धकी अपेक्षा निक्षिप्त हुआ द्रव्य है। तथा स्थितिपरिहानिसे विवक्षित स्थि जो अतिरिक्त द्रव्य प्राप्त होता है वह स्थितिपरिहानिसंचित द्रव्य है। यद्यपि स्थिति द्रव्य बन्धकी अपेक्षा प्राप्त होनेवाले द्रव्यमें ही आ जाता है किन्तु बन्धसे प्राप्त ध्रुव करके उत्तरोत्तर स्थितिपरिहानिसे जो अतिरिक्त द्रव्य प्राप्त होता है उसकी परिगणना की है। इतना ही नहीं किन्तु वह उत्तरोत्तर बढता भी जाता है, इसलि भी मानी है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इनमेंसे किसका कितना प्रमाण प्रकार प्राप्त होता है इसका विचार मूलमें किया ही है।

§ ६७६ अब स्थितिपरिहानिके कालमें कितना द्रव्य प्राप्त होता है

णिसेयसमयपबद्धपमाणुवलंभादो। एवं रूवूण-दुरूवूणादिकमेण जहण्णपरित्तासंखेज्ज-च्छेदणयमेत्तगुणहाणीसु परिहीयमाणासु संखेज्जभागवड्डीए गंतूण जत्थुद्देसे एयगुणहाणिआयामो ट्ठिदिबंधो जादो तत्थुद्देसे गच्छमाणदव्वं तदणंतरहेट्ठिमसमयसंचयं च पेक्खियूण संपहियसंचओ दुगुणो जादो। चिराणसंचयं पेक्खियूण पुण तक्काले वि असंखेज्जभागवड्डी चेव। पुणो पढमगुणहाणिं तिण्णि खंडाणि काऊण तत्थ हेट्ठिमखंडाणि मोत्तूण उवरिमएयखंडं सेसगुणहाणीओ च ओसरिय बंधमाणस्स तिगुणो संचओ जादो। तं जहा—पढमगुणहाणीए विसेसहाणिमवणेदूण सव्वणिसेया सरिसा त्ति आयामेण तिण्णि खंडे काऊण तत्थेयखंडमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो विदियादिगुणहाणिदव्वं पि तावदियं चेव होदि त्ति तहेव तिण्णि भागे काऊण तत्थ तिभागं घेत्तूण पुव्वमवणिय पुध ट्ठविदतिभागेण सह मेलाविदे ते वि बे-तिभागा जादा। एवमेदे तिण्णि बे-तिभागा एक्कदो मेलिदा तिगुणत्तं सिद्धं। अथवा दुगुणं सादिरेयमिदि घेत्तव्वं। सुहुमदिट्ठीए णिहालिज्जमाणे गुणहाणिअद्धमेत्तविसेसाणं हीणत्तदंसणादो। एत्तो उवरि वि किंचूणत्तं जाणिय जोजेयव्वं। एवं गंतूण पढमगुणहाणिं रूवाहियजहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्तखंडाणि काऊण तत्थ हेट्ठिमदोखंडाणि मोत्तूणुवरिमसव्वखंडाणि सेसगुणहाणीओ च ओसरिय बंधमाणे गच्छमाणदव्वं तदणंतरहेट्ठिमसंचयं च पेक्खियूण असंखेज्जगुणवड्डीए आदी जादा। एत्तो प्पहुडि उवरि सव्वत्थ असंखेज्ज

देने पर जो द्रव्य आवे उतना देखा जाता है। इसप्रकार एक कम दो कम आदि के क्रमसे जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदप्रमाण गुणहानियोंके हीन होनेतक संख्यातभागवृद्धिसे जाकर जहाँ एक गुणहानिआयामप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है वहाँ क्षपकको प्राप्त हुआ द्रव्य और अनन्तर नीचेके समयमें संचित हुआ द्रव्य इन दोनोंकी अपेक्षा वर्तमानकालीन संचय दूना हो जाता है। परन्तु पुरान सत्त्वकी अपेक्षा उस समय भी असंख्यातभागवृद्धि ही है। फिर प्रथम गुणहानिके तीन खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खण्ड छोड़कर ऊपरके एक खंड और शेष गुणहानियोंको घटाकर बन्ध करनेवाले जीवके तिगुना संचय हो जाता है। यथा—प्रथमगुणहानिमें जो उत्तरोत्तर निषेकोंकी विशेष हानि होती गई है इसकी गिनती नहीं करके सब निषेक समान हैं ऐसा मानकर उनके समान तीन खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डको निकालकर अलग स्थापित कर दे। फिर द्वितीयादि गुणहानियोंका द्रव्य भी उतना ही होता है इसलिये उसीप्रकार तीन भाग करके उनमेंसे तीसरे भागको ग्रहण करके पूर्वमें निकालकर अलग स्थापित किये गये तीसरे भागमें मिला देनेपर वे भी दो बटे तीन भागप्रमाण हो जाते हैं। इसप्रकार इन दो बटे तीन भागोंको एकत्रित करनेपर तिगुने हो जाते हैं इसलिये इस समय तिगुना संचय होता है यह बात सिद्ध हुई। अथवा साधिक दुगुना संचय होता है ऐसा कहना चाहिए, क्योंकि सूक्ष्मदृष्टिसे अवलोकन करने पर गुणहानिके अर्धभागप्रमाण विशेषोंकी हानि देखी जाती है। इसीप्रकार आगे भी कुछ कमको जानकर उसकी योजना करते जाना चाहिये। इस प्रकार आगे जाकर प्रथम गुणहानिके एक अधिक जघन्य परीतासंख्यातप्रमाण खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खण्डोंके सिवा ऊपरके सब खण्ड और शेष गुणहानियोंको घटाकर बन्ध करने पर क्षपकको प्राप्त हुआ द्रव्य और अनन्तर नीचेके समयमें संचित हुआ द्रव्य इन दोनोंकी अपेक्षा

अवट्टिदो संचओ होइ। णवरि गोवुच्छविसेसं पडि विसेसो अत्थि सो जाणियव्वो। तत्तो परं पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तमोसरिय अण्णे ट्ठिदिबंधे आढत्ते असखेज्ज-भागवड्ढीए विसरिसो संचओ समुप्पज्जइ। एत्थ वि पुव्वं व परूवणा कायव्वा। एवं जत्थ जत्थ ट्ठिदिबंधोसरणं भविस्सदि तत्थ तत्थ सेसट्ठिदि ट्ठिदिपरिहाणिं च जाणिदूण संचयपरूवणा कायव्वा। एवमणेण विहाणेण अधापवत्त-अपुव्वकरणाणि वोलिय अणियट्टिअद्धाए संखेज्जे भागे च गंतूण जाव दूरावकिट्टिसण्णिदो ट्ठिदिबंधो चेट्ठइ ताव गच्छमाणदव्वं तदणंतरहेट्ठिमसमयसंचयं च पेक्खियूण समयं पडि जो संचओ सो असखेज्जभागवड्ढीए चेव गच्छइ। तदो पलिदोवमस्स संखे०भागमेत्तदूरावकिट्टि-सण्णिदट्ठिदिबंधे अच्छिदे सेसस्स असंखेज्जा भागा हाइयूण असंखेज्जदिभागो वज्झइ। एवं बंधमाणस्स वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव होऊण गच्छइ जाव जहण्ण-परित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तगुणहाणिपमाणो ट्ठिदिबंधो जादो त्ति। तदित्थट्ठिदिं बंध-माणस्स असंखेज्जभागवड्ढीए पज्जवसाणं होइ। पुणो एयगुणहाणिं हाइयूण बंध-माणस्स गच्छमाणदव्वं तदणंतरहेट्ठिमसमयसंचयं च पेक्खियूण संखेज्जभागवड्ढीए आदी जादा। एदं च सेढीए संभवं पडुच्च भणिदं, अण्णहा सेससेसस्स असंखेज्जे भागे परिहाविय बंधमाणस्स तहाविहसंभवाणुवलंभादो। संपहि चिराणसंचयं पेक्खियूणासंखेज्जभागवड्ढी चेव तस्सोकड्डुक्कड्डुणभागहारोवट्टिददिवड्ढगुणहाणि-

होता है। किन्तु गोपुच्छविशेषकी अपेक्षा विशेषता है सो जान लेनी चाहिये। फिर उससे आगे पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम अन्य स्थितिबन्ध होता है, इसलिए असंख्यातभागवृद्धिसे विसदृश सचय उत्पन्न होता है। यहाँ भी पहलेके समान कथन कर लेना चाहिये। इस प्रकार जहाँ जहाँ स्थितिबन्धापसरण होगा वहाँ वहाँ शेष स्थिति और स्थितिपरिहानिको जानकर सञ्चयका कथन करना चाहिये। इस प्रकार इस विधिसे अधःप्रवृत्तकरण और अपूर्वकरणको विता कर अनिवृत्ति करणके कालमें सख्यात बहुभागप्रमाण स्थान जाकर दूरापकृष्टि सञ्ज्ञावाले स्थितिबन्धके प्राप्त होने तक प्रति समयमें व्ययको प्राप्त होनेवाले द्रव्यसे और अनन्तरवर्ती नीचेके समयमें हुए सञ्चयसे प्रत्येक समयमें होनेवाला सञ्चय असख्यातभागवृद्धिको लिये हुए होता है। फिर पल्यके सख्तातवें भागप्रमाण दूरापकृष्टिसंज्ञक स्थितिवधके रहते हुए शेष स्थितिके असंख्यात बहुभागप्रमाण स्थितिका घात करके असंख्यातवाँ भाग प्रमाण स्थितिका बन्ध होता है। सो इसप्रकारका बन्ध करनेवाले जीवके भी प्रति समय असख्यातभागवृद्धि ही होती है और यह जघन्य परीतासंख्यातके जितने अर्धच्छेद हों उतने गुणहानिप्रमाण स्थितिबन्धके प्राप्त होने तक होती रहती है। इस प्रकार यहाँ अन्तमें जो स्थिति प्राप्त हो उसका बन्ध करनेवाले जीवके असख्यातभागवृद्धिका पर्यवसान होता है। फिर एक गुणहानिका कम स्थितिका बन्ध करनेवाले जीवके उस समय व्ययको प्राप्त होनेवाले द्रव्यकी अपेक्षा और अन्तरवर्ती नीचेके समयमें हुए सचयकी अपेक्षा सख्यातभागवृद्धिका प्रारम्भ होता है। किन्तु यह सब श्रेणिमें सम्भव है इस अपेक्षासे कहा है, अन्यथा उत्तरोत्तर जो स्थिति-बन्ध शेष रहता है उसका असख्यातवाँ भाग कम होकर आगे आगे बन्ध होता है इस प्रकारकी सम्भावना नहीं उपलब्ध होती। यहाँ पुराने सचयकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धि ही होती है, क्योंकि उसका प्रमाण एक समयप्रबद्धमें अपकर्षण-उत्कर्षणसे भाजित डेढ़ गुणहानिका भाग

अभिंदेयसमयपबद्धपमाणत्तदंसणादो। एवं रूवूण दुरूवूणादिकमेण जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तगुणहाणीसु परिहीयमाणासु संखेज्जभागवड्ढीए गंतूण तत्थुद्देसे एयगुणहाणिआयामो द्विदिबंधो जादो तत्थुद्देसे गच्छमाणदव्वं अणंतरहेट्ठिमसमयसंचयं च पेक्खिदूण संपहियसंचओ दुगुणो जादो। चिराणसंचयं पेक्खिदूण पुण तक्काले वि असंखेज्जभागवड्ढी चेव। पुणो पढमगुणहाणिं तिण्णि खंडाणि काऊण तत्थ हेट्ठिमदोखंडाणि मोत्तूण उवरिमएयखंडं सेसगुणहाणीओ च ओसरिय बंधमाणस्स तिगुणो संचओ जादो। तं जहा—पढमगुणहाणीए विसेसहाणिमजोइय सव्वणिसेया सरिसा त्ति आयामेण तिण्णि खंडे काऊण तत्थेयखंडमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं। पुणो बिदियादिगुणहाणिदव्वं पि तावदियं चेव होदि त्ति तहेव तिण्णि भागे काऊण तत्थ तिभागं घेत्तूण पुव्वमवणिय पुध ट्ठविदतिभागेण सह मेलाविदे ते वि बे-तिभागा जादा। एवमेदे तिण्णि बे-तिभागा एकदो मेलिदा तिगुणत्तं सिद्धं। अथवा दुगुणं सादिरेयमिदि घेत्तव्वं। सुहुमदिट्ठीए णिहालिज्जमाणे गुणहाणिअद्धमेत्तविसेसाणं हीणत्तदंसणादो। एवमुवरि वि किंचूणत्तं जाणिय जोजेयव्वं। एवं गंतूण पढमगुणहाणिं रूवाहियजहण्णपरित्तासंखेज्जमेत्तखंडाणि काऊण तत्थ हेट्ठिमदोखंडाणि मोत्तूणुवरिमसव्वखंडाणि सेसगुणहाणीओ च ओसरिय बंधमाणे गच्छमाणदव्वं अणंतरहेट्ठिमसंचयं च पेक्खिय असंखेज्जगुणवड्ढीए आदी जादा। एत्तो प्पहुडि उवरि सव्वत्थ असंखेज्ज

होने पर जो द्रव्य आवे उतना देखा जाता है। इसप्रकार एक कम दो कम आदि के क्रमसे जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेदप्रमाण गुणहानियोंके हीन होनेतक संख्यातभागवृद्धिसे जाकर वहाँ एक गुणहानिआयामप्रमाण स्थितिबन्ध हो जाता है वहाँ बन्धको प्राप्त हुआ द्रव्य और अनन्तर नीचेके समयमें संचित हुआ द्रव्य इन दोनोंकी अपेक्षा वर्तमानकालीन संचय दूना हो जाता है। परन्तु पुराने सत्त्वकी अपेक्षा उस समय भी असंख्यातभागवृद्धि ही है। फिर प्रथम गुणहानिके तीन खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खण्ड छोड़कर ऊपरके एक खंड और शेष गुणहानियोंको घटाकर बन्ध करनेवाले जीवके तिगुना संचय हो जाता है। यथा—प्रथमगुणहानिमें जो उत्तरोत्तर निषेकोंकी विशेष हानि होती गई है उसकी गिनती नहीं करके सब निषेक समान हैं ऐसा मानकर उनके समान तीन खण्ड करके उनमेंसे एक खण्डको निकालकर अलग स्थापित कर दे। फिर द्वितीयादि गुणहानियोंका द्रव्य भी उतना ही होता है इसलिये उसीप्रकार तीन भाग करके उनमेंसे तीसरे भागको ग्रहण करके पूर्वमें निकालकर पृथक् स्थापित किये गये तीसरे भागमें मिला देनेपर वे भी दो बटे तीन भागप्रमाण हो जाते हैं। इसप्रकार इन दो बटे तीन भागोंको एकत्रित करनेपर तिगुने हो जाते हैं इसलिये इस समय तिगुना संचय होता है यह बात सिद्ध हुई। अथवा साधिक दुगुना संचय होता है ऐसा कहना चाहिये क्योंकि सूक्ष्मदृष्टिसे अवलोकन करने पर गुणहानिके अर्धभागप्रमाण विशेषोंकी हानि देखी जाती है। इसीप्रकार आगे भी कुछ कमको जानकर उसकी योजना करते जाना चाहिये। इस प्रकार आगे जाकर प्रथम गुणहानिके एक अधिक जघन्य परीतासंख्यातप्रमाण खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खण्डोंके सिवा ऊपरके सब खण्ड और शेष गुणहानियोंको घटाकर बन्ध करने पर बन्धको प्राप्त हुआ द्रव्य और अनन्तर नीचेके समयमें संचित हुआ द्रव्य इन दोनोंकी अपेक्षा

गुणवड्ढी चेव होऊण गच्छइ त्ति घेत्तव्वं ।

§ ६७७. संपहि चिराणसंचयं पेक्खियूणासंखेज्जभागवड्ढीए अंतो कम्हि उद्देसे होइ त्ति भणिदे जहण्णपरित्तासंखेज्जेणोकड्डुक्कड्डणभागहारं खंडेयूण लद्धपमाणेण पढमगुणहाणिं खंडिय तत्थ हेट्ठिमदोखंडाणि मोत्तूणुवरिमासेसखंडाणि सेसगुणहाणीओ च हाइयूण बंधमाणस्स असंखेज्जभागवड्ढीए चरिमवियप्पो होइ । तं कथमिदि भणिदे एय पंचिंदियसमयपबद्धं ठविय पुणो एदस्स दिवड्ढगुणहाणिभागहारं हेट्ठदो ठविय उवरि जहण्णपरित्तासंखेज्जेणोवट्टिदओकड्डुक्कड्डणभागहारे गुणयारसरूवेण ठविदे संपहियसंचओ आगच्छइ । चिराणसंचए पुण इच्छिज्जमाणे एय पंचिंदियसमयपबद्धं ठविय पुणो एदस्स ओकड्डुक्कड्डणभागहारोवट्टिददिवड्ढगुणहाणिभागहारो ठवेयव्वो । एवं कदे चिराणसंचओ अधापवत्तकरणपढमसमयपडिबद्धो आगच्छइ । तेणासंखेज्जभागवड्ढी एत्थ परिसमप्पइ त्ति णत्थि संदेहो ।

§ ६७८. संखेज्जभागवड्ढिपारंभो कत्थ होइ त्ति पुच्छिदे उक्कस्ससंखेज्जोवट्टिद-ओकड्डुक्कड्डणभागहारपमाणेण पढमगुणहाणिं खंडिय तत्थ हेट्ठिमदोखंडं मोत्तूण उवरिम-सव्वखंडाणि सेसगुणहाणीओ च हाइयूण बंधमाणे संखेज्जभागवड्ढीए आदी होइ । एत्थोवट्टणं पुव्वं व काऊण सिस्साण पबोहो कायव्वो । एत्तो प्पहुडि संखेज्ज-भागवड्ढी चेव होऊण गच्छदि जाव ओकड्डुक्कड्डणभागहारस्स एगरूवं भागहारत्तं

असंख्यातगुणवृद्धिका प्रारम्भ होता है। अब इससे आगे सर्वत्र असंख्यातगुणवृद्धिका ही क्रम चालू रहता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

§ ६७७. अब पुराने सञ्चयकी अपेक्षा असंख्यातभागवृद्धिका अन्त किस स्थानमें होता है यह बतलाते हैं—जघन्य परीतासंख्यातसे अपकर्षण-उपकर्षण भागहारको भाजित करके जो लब्ध आवे उतने प्रथम गुणहानिके खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खण्डोंको छोड़कर ऊपरके बाकीके सब खण्ड और शेष गुणहानियोंको घटाकर बन्ध करनेवाले जीवके असंख्यातभागवृद्धिका अन्तिम विकल्प होता है। यह कैसे होता है अब इसी बातको बतलाते हैं—पचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको स्थापित करके नीचे इसके डेढ गुणहानिप्रमाण भागहारको स्थापित करनेपर और ऊपर जघन्य परीतासंख्यातसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारको गुणकाररूपपर स्थापित करनेसे वर्तमान-कालीन सचय प्राप्त होता है। किन्तु पुराने सञ्चयको लानेकी इच्छासे पचेन्द्रियके एक समय-प्रबद्धको स्थापित करके फिर इसका अपकर्षण-उत्कर्षणसे भाजित डेढ गुणहानिप्रमाण भागहार स्थापित करे। ऐसा करनेसे अधःप्रवृत्तकरणका प्रथम समयसम्बन्धी पुराना संचय प्राप्त होता है। अतः यहाँ असंख्यातभागवृद्धि समाप्त होती है इसमें जरा भी सन्देह नहीं है।

§ ६७८. अब संख्यातभागवृद्धिका प्रारम्भ कहाँपर होता है यह बतलाते हैं—प्रथम गुण-हानिके उत्कृष्ट संख्यातसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खण्डोंको छोड़कर ऊपरके सब खण्ड और शेष गुणहानियोंको घटाकर बन्ध करनेपर संख्यात-भागवृद्धिका प्रारम्भ होता है। यहाँपर पहलेके समान अपवर्तन करके शिष्योंको ज्ञान कराना चाहिये। अब इससे आगे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारका एक अङ्क भागहाररूपसे प्राप्त होनेतक

णेदव्वं ति। पुणो तक्काले पढमगुणहाणिमोकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तखंडाणि काऊण तत्थ हेट्ठिमदोखंडाणि मोत्तूणुवरिमसव्वखंडेहि सह सेसासेसगुणहाणीओ परिहाविय बंधमाणे संखेज्जगुणवड्ढीए आदी जादा। तदो ओकड्डुक्कड्डणभागहारदुगुणमेत्तं पढमगुणहाणिं खंडिय तत्थ हेट्ठिमदोखंडाणि मोत्तूण उवरिमासेसखंडेहि सह सेसगुणहाणीओ ओसरिय बंधमाणे चिराणसंचएण सह तिगुणं संचओ होइ। एवं तिगुणचउग्गुणादिकमेण गंतूणुक्कस्ससंखेज्जगुणोकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्ताणि पढमगुणहाणिखंडाणि काऊण तत्थ हेट्ठिमदोखंडाणि परिवज्जिय उवरिमासेसखंडाणि सेसगुणहाणीओ च ट्ठिदिपरिहाणिं करिय बंधमाणे असंखेज्जगुणवड्ढीए आदी जादा। एत्तो पाए उवरि सव्वद्धा संखेज्जगुणवड्ढीए चेव गच्छइ। एवं ट्ठिदिबंधसहस्साणि बहूणि गंतूण तदो उवरिमसंचयं गहिदमिच्छिय ओवट्टणे ठविज्जमाणे एयं पंचिंदियसमयपबद्धं ठविय पुणो तम्मि असंखेज्जवस्सायामेण तक्कालियट्ठिदिबंधेण भागे हिदे एयगोवुच्छपमाणमागच्छइ। पुणो वि अंतोमुहुत्तकालं तं चेव ट्ठिदिं बंधइ त्ति अंतोमुहुत्तेण तम्मि ओवट्टिदे समयपबद्धभागहारो होइ। एवमोवट्टिय इमो संचओ पुध ठवेयव्वो।

§ ६७९ संपहि अण्णेग ट्ठिदिबंधं बंधमाणो तदणंतरहेट्ठिमबंधादो असंखेज्जगुणहीणं हेट्ठदो ओसरइ। एत्थोवट्टणं पुव्वं व कायव्वं। णवरि पुव्विल्लसंचयादो एस संचओ असंखेज्जगुणो होइ। इमं पि संचयदव्वं पुध ठवेयव्वं। एवमसंखेज्ज-

---

संख्यातभागवृद्धिका ही क्रम चालू रहता है। फिर उस समय प्रथम गुणहानिके अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खण्डोंको छोड़कर ऊपरके सब खण्डोंके साथ बाकीकी सब गुणहानियोंको घटाकर बन्ध करनेपर संख्यातगुणवृद्धिका प्रारम्भ होता है। फिर प्रथम गुणहानिके अपकर्षण-उत्कर्षणसे दूने खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खण्डोंको छोड़कर ऊपरके सब खण्डोंके साथ शेष गुणहानियोंको घटाकर बन्ध करनेपर पुराने सत्त्वके साथ तिगुना संचय होता है। इस प्रकार प्रथम गुणहानिके तिगुने और चौगुने आदिके क्रमसे आगे जाकर अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे उत्कृष्ट संख्यातगुणे खण्ड करके उनमेंसे नीचेके दो खण्डोंको छोड़कर ऊपरके सब खण्ड और शेष गुणहानिप्रमाण स्थितिको घटाकर बन्ध करनेपर असंख्यातगुणवृद्धिका प्रारम्भ होता है। अब इससे आगे सर्वदा संख्यातगुणवृद्धिका ही क्रम चालू रहता है। इस प्रकार हजारों स्थितिबन्धोंको बिताकर इससे ऊपरके संचयको लानेकी इच्छासे भागहारके स्थापित करनेपर पंचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको स्थापित करके फिर उसमें तत्काल बँधनेवाले असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धका भाग देनेपर एक गोपुच्छाका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर भी अन्तर्मुहूर्त काल तक उसी स्थितिका बन्ध होता है, इसलिये उसमें अन्तर्मुहूर्तका भाग देनेपर जो लब्ध आवे वह समयप्रबद्धका भागहार होता है। इस प्रकार अपवर्तित करके इस संचयको अलग स्थापित करना चाहिये।

§ ६७९. अब एक अन्य स्थितिबन्धको बाँधता हुआ इसके अनन्तरवर्ती नीचेके बन्धसे असंख्यातगुणा हीन नीचे जाकर बाँधता है। यहाँपर भी पहलेके समान अपवर्तन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि पूर्वके संचयसे यह संचय असंख्यातगुणा होता है। इस संचय द्रव्यको

वस्सायामाणि होऊण संखेज्जट्ठिदिबंधसहस्साणि गच्छंति जाव संखेज्जवस्सट्ठिदिबंधो जादो त्ति। कम्हि पुणो संखेज्जवस्सियो ट्ठिदिबंधो होइ त्ति भणिदे अंतरकरण-समत्तिपढमसमए होइ।

§ ६८०. संपहि एत्थतणसंचय गहिदुमिच्छामो त्ति ओवट्टणे ठविज्जमाणे एयं पंचिंदियसमयपबद्धं ठविय पुणो एदस्स संखेज्जावलियमेत्तं संपहियट्ठिदिबंधायामं भागहारं ठविय भागे हिदे एयगोवुच्छमागच्छइ। एवमंतोमुहुत्तं चेव ट्ठिदिं बंधइ त्ति अंतोमुहुत्तेण तम्मि भागहारे ओवट्टिदे समयपबद्धभागहारो संखेज्जरूवमेत्तो होइ। एदं पि दव्वं पुध ठवेयव्वं। पुणो अण्णेगं ट्ठिदिबंधं बंधमाणो पुव्विल्लबंधादो संखेज्जगुणहीणो हेट्ठदो ओसरइ। एदस्स वि पुव्वओवट्टणं कायव्वं। णवरि पुव्विल्ल-संचयादो इमो संखेज्जगुणो। एसो वि पुध ठवेयव्वो। एवमेदेण कमेण संखेज्जगुणहीणो बंधो होऊण गच्छइ जाव बत्तीसवस्समेत्तो ट्ठिदिबंधो जादो त्ति। सो कम्हि होइ त्ति पुच्छिदे चरिमसमयपुरिसवेदबंधयम्मि होइ। तत्तो प्पहुडि ट्ठिदिबंधो विसेसहीणो होऊण गच्छइ। एवं संखेज्जे ट्ठिदिबंधे ओसारिय णेदव्वं जाव कोहसंजलणस्स संखेज्जंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्समेत्तट्ठिदिबंधो त्ति। तत्तो उवरि संचयं ण लहामो। किं कारणं? एत्तो उवरिमट्ठिदिबंधाणमहियारट्ठिदीदो हेट्ठा चेव पउत्तिदंसणादो।

भी पृथक् स्थापित करना चाहिये। इस प्रकार संख्यात वर्षका स्थितिबन्ध प्राप्त होनेतक असंख्यात वर्षके आयामवाले संख्यात हजार स्थितिबन्ध होते हैं।

शंका—संख्यात वर्षका स्थितिबन्ध किस स्थानमें होता है?

समाधान—अन्तरकरणकी समाप्तिके बाद प्रथम समयमें होता है।

§ ६८० अब यहांका संचय लाना इष्ट है इसलिये इसके भागहारको बतलाते हैं—पंचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको स्थापित करके फिर इसका वर्तमान स्थितिबन्धके आयामवाला संख्यात आवलिप्रमाण भागहार स्थापित करके भाग देने पर एक गोपुच्छाका प्रमाण प्राप्त होता है। इसप्रकार अन्तर्मुहूर्त तक ही स्थिति बाँधता है इसलिये इस भागहारमें अन्तर्मुहूर्तका भाग देने पर समयप्रबद्धका भागहार संख्यात अंकप्रमाण प्राप्त होता है। इस द्रव्यको भी पृथक् स्थापित करे। फिर एक दूसरे स्थितिबन्धको बाँधता हुआ पूर्वोक्त बन्धसे संख्यातगुणा हीन नीचे जाकर बाँधता है। इसे भी पहलेके समान भाजित करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि पिछले सञ्चयसे यह सञ्चय संख्यातगुणा होता है। इसे भी पृथक् स्थापित करना चाहिये। इस प्रकार बत्तीस वर्षप्रमाण स्थितिबन्धके प्राप्त होनेतक उत्तरोत्तर बन्ध संख्यातगुणा हीन होता जाता है।

शंका—बत्तीस वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध किस स्थानमें जाकर होता है?

समाधान—पुरुषवेदके बन्धके अन्तिम समयमें होता है।

इससे आगे स्थितिबन्ध उत्तरोत्तर विशेष हीन होता जाता है। इस प्रकार क्रोधसज्वलनके संख्यात अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षप्रमाण स्थितिबन्धके प्राप्त होने तक संख्यात स्थितिबन्ध हो लेते हैं। अब इससे आगे संचय नहीं प्राप्त होता, क्योंकि इससे ऊपरके स्थितिबन्ध अधिकृत

एत्थुवरि चडिय अंतोमुहुत्तमच्छिय तदो अद्धाक्खएण परिवदमाणगो सुहुमसांपराइयद्धं बोलिय भणियट्ठिदिबंधसामगो जादो। संपहि एवमोदरमाणस्स कम्हि पदेसे अहियारट्ठिदिसंचयं लहइ त्ति पुच्छिदे जम्हि उद्देसे चडमाणस्स संचयवोच्छेदो जादो तमुद्देसं थोवंतरेण ण पावेइ त्ति ओयरमाणस्स संखेज्जंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठ-वस्समेत्तट्ठिदिबंधो जादो। तत्तो प्पहुडि अहियारगोवुच्छा अधाणिसेयसंचयं लहइ। एवं णेदव्वं जाव असंखेज्जवस्समेत्तो ट्ठिदिबंधो जादो त्ति। किंविहो सो असंखेज्ज वस्सिओ ट्ठिदिबंधो त्ति भणिदे तप्पाओग्गसंखेज्जरूवाणि ओकड्डुक्कड्डणभागहारं च अण्णोण्णसुणं करिय णिप्पाइदो जो रासी तत्तियमेत्ता जाव पत्तं ताव संचयं लहामो। एत्तो उवरि संचयं ण लहामो, ओकड्डुक्कड्डणाहि गच्छमाणदव्वस्स ट्ठिदिपरिहाणि संचयं पेक्खियूण बहुत्तुवलंभादो। एवमेत्तियमेत्तकालसंचयं काऊण तदो भणियट्ठि अपुव्व-अधापवत्तकमेण हेट्ठा परिवदिय पुणो वि अंतोमुहुत्तेण कसायउवसामणाए अब्भुट्ठिदो। एदिस्से वि चडमाणस्स हेट्ठीए संचयविही पुव्वं व परूवेयव्वा। णवरि चडमाणस्स भावे संखेज्जरूवगुणिदोकड्डुक्कड्डणभागहारमेत्तट्ठिदिबंधो जादो तदो पहुडि संचयं लहामो, हेट्ठा आयादो वयस्स बहुत्तोवलंभादो। सेसविहीए णत्थि

स्थितिसे नीचे ही प्राप्त होते हैं। इस प्रकार ऊपर चढ़कर और अन्तर्मुहूर्त कालतक वहाँ रहकर फिर उपशान्तमोहका काल पूरा हो जानेके कारण वहाँसे गिरकर और सूक्ष्मसाम्परायिकके कालको बिताकर अभिप्रेत स्थितिबन्धका स्वामी हो जाता है।

शंका—इसप्रकार उतरनेवाले इस जीवके विवक्षित स्थितिका संचय किस स्थानमें प्राप्त होता है?

समाधान—जिस स्थानमें चढ़नेवाले जीवके संचयकी व्युच्छित्ति होती है उस स्थानको थोड़े अन्तरसे नहीं प्राप्त करता इसलिए उतरनेवाले जीवके जब संख्यात अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तब वहाँसे लेकर विवक्षित गोपुच्छा यथानिषेक संचयको प्राप्त होती है।

इसप्रकार असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्धके होने तक जानना चाहिये।

शंका—वह असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध किस प्रकारका होता है?

समाधान—तत्प्रायोग्य संख्यात अंकोंको और अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारको परस्परमें गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हुई उतना इसके पूरा होने तक यह संचय प्राप्त होता है, इससे ऊपर संचय नहीं प्राप्त होता क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा व्ययको प्राप्त होनेवाला द्रव्य स्थितिपरिहानिसे होनेवाले संचयकी अपेक्षा बहुत पाया जाता है।

इस प्रकार इतने कालतक संचय करके फिर अनिवृत्तिकरण, अपूर्वकरण और अधःप्रवृत्तकरणके क्रमसे नीचे गिरकर फिर भी अन्तर्मुहूर्त बाद कषायोंका उपशम करनेके लिए उद्यत हुआ। इसके भी उपशमश्रेणिमें संचयका क्रम पहलेके समान कहना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि चढ़नेवाले जीवके जब संख्यात अंकसे गुणित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तब वहाँसे संचय प्राप्त होता है, क्योंकि नीचे आयसे व्यय बहुत पाया जाता है। इसके अतिरिक्त

णाणत्तं। एवमुवरिं चढिय हेट्ठा ओदरदूणंतोमुहुत्तेण मिच्छत्तं गतूण मणुस्साउअ बंधिय कमेण कालं काऊण मणुसेसुववण्णो अंतोमुहुत्तब्भहियअट्ठवस्साणमुवरि सम्मत्तं संजमं च जुगवं पडिवज्जिय सव्वलहुं कसायउवसामणाए अब्भुट्ठिदो। एत्थ वि संचयविही पुव्वं व परूवेयव्वा। णवरि चढमाणो जाव अप्पणो चरिमट्ठिदिबंधो ताव संचय लहदि त्ति वत्तव्वं। ओदरमाणो वि चढमाणस्स जम्मि चत्तारिमासमेत्तो चरिमट्ठिदिबंधो जादो तमुद्देसमंतोमुहुत्तेण पावेदि त्ति अट्ठमासमेत्तट्ठिदिबंधमाढवेइ ताधे पुव्विल्लचरिमट्ठिदिबंधसंचयस्स अद्धमेत्तसंचयमहियारट्ठिदी लहइ। एत्तो प्पहुडि पुव्वविहाणेण संचयं करेमाणो हेट्ठा ओयरिय अंतोमुहुत्तेण पुणो वि उवसमसेढिमारूढो। एत्थ वि पुव्वं व संचयं कादूणोदरमाणस्स अणियट्टिअद्धाए अब्भंतरे जाधे तप्पाओग्गसंखेज्जरूवगुणिदोकड्डुक्कड्डुणभागहारमेत्तो ट्ठिदिबंधो जादो ताधे तदित्थट्ठिदिं बंधमाणेण अहियारगोवुच्छाए उवरि पढमणिसेयं कादूणुवरि पदेसरयणा कदा। एदस्सुवरि असंखेज्जगुणमण्णेग ट्ठिदिबंध बंधमाणस्स संचयं ण लहामो, अहियारट्ठिदीए आबाहाब्भंतरे पवेसियत्तादो। एसो च अधाणिसेयउक्कस्ससंचओ पुव्वमुवसमसेढिं चढमाणस्सोदरमाणस्स वा तम्मि भवे आबाहाब्भंतरमपविसिय आगदो संपहि चेव पविट्ठो। कधमेदं परिच्छिज्जदे? चढमाणोदरमाणअपुव्वकरण-अणियट्टि-

---

शेष विधिमें कोई भेद नहीं है। इस प्रकार ऊपर चढकर और नीचे उतरकर अन्तर्मुहूर्तमें यह जीव मिथ्यात्वमें गया और मनुष्यायुको बाँधकर क्रमसे मरा और मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। फिर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षके बाद सम्यक्त्व और संयमको एक साथ प्राप्त करके अतिशीघ्र कषायोंका उपशम करनेके लिये उद्यत हुआ। यहाँपर भी सञ्चयविधिका कथन पहलेके समान करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि चढनेवाला जीव अपने अन्तिम स्थितिबन्धके प्राप्त होनेतक सञ्चय करता रहता है यहाँ इतना कथन करना चाहिए। उतरनेवाला जीव भी चढनेवाले जीवके जिस स्थानमें चार माह प्रमाण अन्तिम स्थितिबन्ध होता है उस स्थानको अन्तर्मुहूर्तमें प्राप्त करता है, इसलिये आठ माह प्रमाण स्थितिबन्धका आरम्भ करता है। उस समय पूर्वोक्त अन्तिम स्थितिबन्धके सञ्चयका आधा सचय विवक्षित स्थितिमें प्राप्त होता है। अब यहाँसे आगे पूर्वविधिसे सञ्चय करता हुआ नीचे उतरकर अन्तर्मुहूर्त बाद फिर भी उपशमश्रेणिपर चढता है। यहाँ पर भी पहलेके समान सञ्चय करके उतरनेवाले जीवके अनिवृत्तिकरण कालके भीतर जब तद्योग्य संख्यात अङ्कोंसे गुणित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारप्रमाण स्थितिबन्ध होता है तब उस स्थितिको बाँधनेवाला जीव अधिकृत गोपुच्छामें प्रथम निषेकका निक्षेप करके प्रदेशरचना करता है। फिर इसके ऊपर असंख्यातगुणे अन्य स्थितिबन्धको बाँधनेवाले जीवके अधिकृत स्थितिमें सञ्चय नहीं प्राप्त होता, क्योंकि तब विवक्षित स्थिति अबाधाकालके भीतर पाई जाती है। यह यथानिषेकका उत्कृष्ट सञ्चय जो जीव पहले उपशमश्रेणिपर चढा था और उतरा था उसके उसी भवमें आबाधाके भीतर नहीं प्रविष्ट होकर प्राप्त हुआ था किन्तु अब प्रविष्ट हुआ है।

शंका—यह किस प्रमाण से जाना?

समाधान—चढ़ते समयके और उतरते समयके अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म-

करण-सुहुमसांपराइय-उवसंतकसायकालसव्वसमासादो वेदगसम्मत्त पडिवज्जिय पमत्तापमत्तपरावत्तसहस्सणिबंधणकालादो च मोहणीयस्स अणियट्टिअद्धाणिया आबाहा संखेज्जगुणा, तस्सेव मोहणीयस्स अपुव्वकरणम्मि उक्कस्सिया आबाहा संखेज्जगुणा, अणियट्टिम्मि मोहणीयस्स जहण्णओ ट्ठिदिबंधो संखेज्जगुणो त्ति उवसमसेढीए अप्पाबहुअं भणिहिदि। एदम्हादो जाणिज्जदि जहा चडमाणअपुव्वआबाहादो अंतोमुहुत्तब्भहिय होदूण ट्ठिदअहियारगोवुच्छं पुव्वं चडमाणोदरमाणाणमाबाहाब्भंतरमपविसिय णागमणं जाइ त्ति। एदं च सव्वं मणेणावहारिय विदियाए उवसामणाए आबाहा जम्हि पुण्णा सा ट्ठिदी आदिट्ठा त्ति सुत्तयारेण परूविदं।

§ ६८१ एत्थ विदियाए त्ति वुत्ते विदियभवग्गहणसंबंध विणा दो वि कसाउवसामणवारा घेप्पंति, तेसिं जादिदुवारेणेयत्तावलंबणादो सुत्तस्स अंतदीवयभावेण पयट्टादो वा। संपहि पुव्वं पबद्धसंखेज्जवस्सट्ठिदिबंधियस्स पढमणिसेयं अदूण आबाहब्भंतरे पविसिय अणियट्टिअद्धाए संखेज्जे भागे अपुव्वकरणं च बोलेयूण पुणो कमेण पमत्तापमत्तद्धाणे अहियारगोवुच्छाए उदयमागच्छमाणे कायस जहण्णस्स उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं होइ। एदं च हियए करिय तम्हि उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमिदि वुत्तं। तम्मि ट्ठिदिविसेसे उदयपत्ते पयदुक्कस्ससामित्तं होइ त्ति

सम्परायं और उपशान्तमोह इन सब कालोंका जितना जोड़ हो उससे तथा वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके प्रमत्त और अप्रमत्तके हजारों परिवर्तनोंमें लगनेवाले कालसे मोहनीयकर्मकी अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी जघन्य अबाधा संख्यातगुणी होती है। इससे उसी मोहनीयकी अपूर्वकरणमें उत्कृष्ट अबाधा संख्यातगुणी होती है। इससे अनिवृत्तिकरणमें मोहनीयका जघन्य स्थितिबन्ध संख्यातगुणा होता है। इसप्रकार आगे चलकर उपशमश्रेणिमें अल्पबहुत्व कहेंगे। इससे जाना जाता है कि जो अधिकृत गोपुच्छा चढ़ते समय प्राप्त हुए अपूर्वकरणके अबाधाकालसे अन्तर्मुहूर्त अधिक होकर स्थित है वह पूर्वमें या उपशमश्रेणिपर चढ़ा और उतरा या उसके उस समय प्राप्त हुए अबाधाकालके भीतर नहीं प्रविष्ट होकर प्राप्त होती है। इस सब व्यवस्थाको मनमें निश्चित करके 'विदियाए उवसामणाए आबाहा जम्हि संपुण्णा सा ट्ठिदी आदिट्ठा' ऐसा सूत्रकारने कहा है।

§ ६८१ यहाँ सूत्रमें जो 'विदियाए उवसामणाए' ऐसा कहा है सो इससे दूसरे भवसम्बन्धी उपशमश्रेणिके दोनों ही बार ग्रहण करने चाहिये क्योंकि जातिकी अपेक्षा ये दोनों एक हैं इसलिये एक वचनरूपसे इनका कथन किया है। या यह सूत्र अन्तदीपकरूपसे प्रवृत्त हुआ है, इसलिये सूत्रमें एकवचनका निर्देश किया है। अब पहले जो असंख्यात वर्षप्रमाण स्थितिबन्ध कहा है उसके प्रथम निषेकको प्राप्त करके और अबाधाके भीतर प्रवेश कराके अनिवृत्तिकरणके संख्यात भागोंको और अपूर्वकरणको बिताकर फिर क्रमसे जब अप्रमत्तसंयत और प्रमत्तसंयत गुणस्थानमें अधिकृत गोपुच्छा उदयको प्राप्त होती है तब कायसंज्ञक जघन्यका यथानिषेकस्थिति-प्राप्त द्रव्य उत्कृष्ट होता है। इसप्रकार इस बातको हृदयमें करके सूत्रमें 'तम्हि उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं' यह वचन कहा है। उस स्थितिविशेषके उदयको प्राप्त होनेपर प्रकृत उत्कृष्ट

भावत्थो।

§ ६८२. संपहि एत्थ लद्धपमाणाणुगमे भण्णमाणे पढमवारं चढमाणेण लद्धं सव्वसंचयं ठविय पुणो चउहि रूवेहि तम्हि गुणिदे एयसमयपवद्धस्स संखेज्जदिभागो आगच्छइ, संखेज्जवस्सियट्ठिदिबंधसंचयस्सेव पाहण्णियादो। एवं कोहसंजलणस्स पयदुक्कस्ससामित्तं परूविय संपहि एसो चेव णिसेयट्ठिदिपत्तयस्स वि सामिओ होइ त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

❀ णिसेयट्ठिदिपत्तयं च तम्हि चेव।

§ ६८३. तम्हि चेव ट्ठिदिविसेसे पुव्वणिरुद्धे णिसेयट्ठिदिपत्तय पि उक्कस्सं होइ, दोण्हमेदेसिं ट्ठिदिपत्तयाण सामित्तं पडि विसेसादंसणादो। णवरि दव्वविसेसो जाणेयव्वो, तत्तो पदस्स ओकड्डुक्कड्डणाहि गंतूण पुणो वि तत्थेव पदिददव्वमेत्तेणाहियभावोवलभादो।

❀ उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ६८४. सुगमं।

स्वामित्व होता है यह इसका भावार्थ है।

§ ६८२ अब यहाँ लब्धप्रमाणका विचार करते हैं—पहली वार उपशमश्रेणिपर चढने और उतरनेसे जो सचय प्राप्त हो उस सवको स्थापित करे। फिर उसे चारसे गुणा करनेपर एक समयप्रबद्धका सख्यातवा भाग प्राप्त होता है, क्योंकि यहाँ पर सख्यात वर्षप्रमाण स्थितिवन्धका प्राप्त हुआ सचय ही प्रधान है। इसप्रकार क्रोधसज्वलनके प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करके अव यही निषेकस्थितिप्राप्तका भी स्वामी होता है यह वतलानेके लिये आगेका सूत्र आया है—

* उत्कृष्ट निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका भी वही स्वामी है।

§ ६८३. जो स्थिति यथानिषेकके उत्कृष्ट स्वामित्वके समय विवक्षित थी उसी स्थितिविशेषमें निषेकस्थितिप्राप्त भी उत्कृष्ट होता है, क्योंकि इन दोनों ही स्थितिप्राप्तोंमें स्वामित्वकी अपेक्षा कोई भेद नहीं देखा जाता। किन्तु द्रव्यविशेषको जान लेना चाहिये, क्योंकि यथानिषेकस्थितिमेंसे अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा जो द्रव्य व्ययको प्राप्त हो जाता है वह इसमे पुनः जहाँका तहाँ आ जाता है इसलिये यथानिषेककी अपेक्षा इसमें इतना द्रव्य अधिक पाया जाता है।

विशेषार्थ—पिछले सूत्रमें यथानिषेकस्थितिप्राप्तका उत्कृष्ट स्वामी वतला आये हैं। उसीप्रकार निषेकस्थितिप्राप्तका भी उत्कृष्ट स्वामी जान लेना चाहिये, इसकी अपेक्षा इन दोनोंमें कोई अन्तर नहीं है यह इस सूत्रका भाव है। किन्तु इतनी विशेषता है कि यथानिषेकस्थितिप्राप्तका जितना उत्कृष्ट द्रव्य होता है उससे निषेकस्थितिप्राप्तका उत्कृष्ट द्रव्य अधिक होता है, क्योंकि यथानिषेकमें अपकर्षण उत्कर्षणके द्वारा जिस द्रव्यकी हानि हो जाती है इसमें वह द्रव्य पुनः जहाँका तहाँ आ जाता है।

* उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी कौन है ?

§ ६८४ यह सूत्र सुगम है।

* चरिमसमयकोहवेदयस्स ।

§ ९८५ एत्थ गुणिदकम्मंसियविसेसणं फलाभावादो ण कदं । कुदो फलाभावो चे ? कोहसंजलणपोराणपढमट्ठिदिं सव्वं गालिय पुणो किट्टिवेदगेण मोहक्खवणंतरब्भंतरे गुणसेढिमाहप्पेण णिसित्तपढमट्ठिदीए समयाहियावलियचरिमणिसेयं घेत्तूण पयदसामित्तविहाणे गुणिदकम्मंसियलक्खणफलविसेसाणुवलंभादो । खवगविसेसणमेत्थाणुत्तसिद्धमिदि ण कदं । एवं कोहसंजलणस्स सव्वेसिं ट्ठिदिपत्तयाणमुक्कस्ससामित्तं परूविय सेससंजलणाणं पि सव्वपदाणमेदेण समप्पणट्ठमिदमाह—

* एवं माण-माया-लोहाणं ।

§ ९८६ जहा कोहसंजलणस्स चउण्हं ट्ठिदिपत्तयाणं सामित्तविहाणं कयं एवं माण-माया-लोहसंजलणाणं पि कायव्वं, विसेसाभावादो । णवरि जहाणिसेय-णिसेयट्ठिदिपत्तयाणमुक्कस्सदव्वसंचओ कोहसंजलणस्स बंधे वोच्छिण्णे वि लब्भइ जाव सगबंधवोच्छेदसमओ त्ति । अण्णं च लोभसंजलणस्स उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं गुणिदकम्मंसियस्सेव होइ, एत्तिओ चेव विसेसो ।

---

* जो जीव अपने अन्तिम समयमें क्रोधका वेदन कर रहा है वह उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी है ।

§ ९८५. इस सूत्रमें विशेष फल न देखकर गुणितकर्मांश यह विशेषण नहीं दिया है ।

शंका—इस विशेषणका विशेष फल क्यों नहीं है ?

समाधान—यह जीव क्षपणाके समय क्रोधसंज्वलनकी पुरानी प्रथम स्थितिको पूरीकी पूरी गला देता है फिर कृष्टिका वेदन करते समय अन्तर्मुहूर्तके भीतर अपकर्षण द्वारा गुणश्रेणि-रूपसे प्रथम स्थितिकी रचना करता है । तब एक समय अधिक एक आवलिके अन्तिम निषेककी अपेक्षा प्रकृत स्वामित्वका विधान किया जाता है अतः इसमें गुणितकर्मांशरूप कोई विशेष फल नहीं पाया जाता है ।

सूत्रमें क्षपक विशेषणका बिना कहे ही ग्रहण हो जाता है, इसलिए उसे सूत्रमें नहीं दिया है । इसप्रकार क्रोधसंज्वलनके सभी स्थितिप्राप्तोंके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करके सब संज्वलनों के सभी पदोंका उत्कृष्ट स्वामित्व भी इसीके समान है यह बतलानेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* इसी प्रकार मान, माया और लोभसंज्वलनके सब पदोंका उत्कृष्ट स्वामित्व जानना चाहिए ।

§ ९८६. जिसप्रकार क्रोधसंज्वलनके चारों स्थितिप्राप्तोंके स्वामित्वका कथन किया है उसी प्रकार मान माया और लोभ संज्वलनोंका भी कथन करना चाहिए, क्योंकि इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है । किन्तु इतनी विशेषता है कि उक्त प्रकृतियोंकी अपेक्षा यथानिषेकस्थितिप्राप्त और निषेकस्थितिप्राप्तके उत्कृष्ट द्रव्यका संचय क्रोधसंज्वलनकी बन्धव्युच्छित्ति हो जानेपर भी अपनी अपनी बन्धव्युच्छित्तिके समय तक होता रहता है । तथा दूसरी विशेषता यह है कि लोभ संज्वलनका उदयस्थितिप्राप्त उत्कृष्ट द्रव्य गुणितकर्मांशके ही होता है । बस इतनी ही विशेषता है ।

❀ पुरिसवेदस्स चत्तारि वि ट्ठिदिपत्तयाणि कोहसंजलणभंगो।

§ ६८७. पुरिसवेदस्स जहावसरपत्ताणि चत्तारि वि ट्ठिदिपत्तयाणि कस्से त्ति आसंकिय कोहसंजलणभंगो त्ति अप्पणा कया, विसेसाभावादो। संपहि उदयट्ठिदिपत्तयसामित्तगयविसेसपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

❀ णवरि उदयट्ठिदिपत्तयं चरिमसमयपुरिसवेदखवयस्स गुणिदकम्मंसियस्स।

§ ६८८. तत्थ चरिमसमयकोहवेदयस्स खवयस्स पयदुक्कस्ससामित्तं, एत्थ पुण चरिमसमयपुरिसवेदयस्स खवयस्से त्ति वत्तव्वं। अण्णं च गुणिदकम्मंसियत्तं पि एत्थ विसेसो, तत्थ गुणिदकम्मंसियत्तस्साणुवजोगित्तादो। एत्थ पुण गुणिदकम्मंसियत्तमुवजोगी चेव, अण्णहा पयडिगोवुच्छाए थूलभावाणुप्पत्तीदो।

❀ इत्थिवेदस्स उक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं मिच्छत्तभंगो।

§ ६८९. सुगममेदमप्पणासुत्तं।

❀ उक्कस्सयअधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं णिसेयट्ठिदिपत्तयं च कस्स ?

§ ६९०. सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

---

* पुरुषवेदके चारों ही स्थितिप्राप्त द्रव्योंका भंग क्रोधसंज्वलनके समान है।

§ ६८७ अब पुरुषवेदके चारों ही स्थितिप्राप्तोंके स्वामित्वका कथन अवसर प्राप्त है, इसलिये उनका स्वामी कौन है ऐसी आशंका करके पुरुषवेदके चारों ही स्थितिप्राप्तोंका भङ्ग क्रोधसंज्वलनके समान है यह कहा है, क्योंकि क्रोधसंज्वलनके कथनसे इस कथनमें कोई विशेषता नहीं है। अब उदयस्थितिप्राप्त स्वामित्वसम्बन्धी विशेषताका कथन करनेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

* किन्तु इतनी विशेषता है कि जो गुणितकर्मांशवाला जीव पुरुषवेदका क्षय कर रहा है वह अपने अन्तिम समयमें उसके उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका उत्कृष्ट स्वामी है।

§ ६८८ क्रोधसंज्वलनका कथन करते समय क्षपक क्रोधवेदकके अन्तिम समयमें प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है किन्तु यहाँ पर क्षपक पुरुषवेदकके अन्तिम समयमें यह उत्कृष्ट स्वामित्व होता है यह कहना चाहिये। दूसरे गुणितकर्मांशवाले जीवके इसका उत्कृष्ट स्वामित्व होता है यहाँ इतनी विशेषता और है। क्रोधसंज्वलनके उदयप्राप्तको गुणितकर्मांश होनेकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वहाँ उसका उपयोग नहीं है किन्तु यहाँपर गुणितकर्मांशपना उपयोगी ही है, अन्यथा प्रकृत गोपुच्छा स्थूल नहीं हो सकती।

* स्त्रीवेदके उत्कृष्ट अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है।

§ ६८९ यह अर्पणासूत्र सुगम है।

* उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त और निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी कौन है।

§ ६९० यह पृच्छासूत्र सुगम है।

❀ इत्थिवेदसंजदेण इत्थिवेद-पुरिसवेदपूरिदकम्मंसिएण अंतोमुहुत्तस्संतो दो वारे कसाए उवसामिदा। जाधे बिदियाए उवसामणाए जहण्णयस्स ट्ठिदिबंधस्स पढमणिसेयट्ठिदी उदयं पत्ता ताधे अधाणिसेयादो णिसेयादो च उक्कस्सयं ट्ठिदिपत्तयं।

§ ६६१ एत्थ इत्थिवेदसंजदेणे त्ति वयणं सोदएण सामित्तविहाणट्ठं, परोदएण पयदुक्कस्ससामित्तविहाणोवायाभावादो। तेणेत्थिवेदसंजदेणेत्थिवेद पुरिसवेदपूरिदकम्मंसिएण अंतोमुहुत्तस्संतो दो वारे कसाया उवसामिदा। एक्कवारं कसाए उवसामिय पडिवदिय पुणो वि सव्वलहुं कसाया उवसामिदा त्ति वुत्तं होइ। ण च पुरिसवेदपूरिदकम्मंसियत्तमेत्थाणुवजोगी, त्थिवुक्कसंकमेणोवजोगित्तदंसणादो। ण णवुंसयवेदपूरियकम्मंसिएण अइप्पसंगो, असंखेज्जवस्साउएसु अधाणिसेयसंचयकालब्भंतरे तस्स पूरणोवायाभावादो। सेसं जहा कोहसंजलणस्स भणिदं तहा वत्तव्वं। णवरि असंखेज्ज-वस्साउअमदिरित्तेसु मणुस्सेसु वा संखेज्जंतोमुहुत्तब्भहियसोलसवस्सेहिं सादिरेय-दसवस्ससहस्सपरिहीणमधाणिसेयसंचयकालमणुपालिय तत्थित्थि-पुरिसवेदे पूरेदूण तदो दसवस्ससहस्सिएसुववज्जिय कमेण मणुस्सेसु आगदो त्ति वत्तव्वं। जहा कोह-संजलणस्स उवसामयसंचयाणुगमो सरूवपमाणाणुगमो च कओ तहा एत्थ वि णिरवसेसा

❀ स्त्रीवेद और पुरुषवेदके कर्मांशको पूरण करनेवाला जो स्त्रीवेदके उदयवाला संयत जीव अन्तर्मुहूर्तके भीतर दो बार कषायोंका उपशम करता है और ऐसा करते हुए जब उसके दूसरी उपशामनाके समय जघन्य स्थितिबन्धकी प्रथम निषेकस्थिति उदयको प्राप्त होती है तब वह उत्कृष्ट यथानिषेक और निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी है।

§ ६६१ सूत्रमें 'इत्थिवेदसंजदेण' यह वचन स्वोदयसे स्वामित्वका कथन करनेके लिये दिया है, क्योंकि परोदयसे प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वकी प्राप्ति सम्भव नहीं है। ऐसा जो स्त्रीवेदके उदयवाला संयत जीव है वह स्त्रीवेद और पुरुषवेदके कर्मांशका पूरण करके अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर दो बार कषायोंको उपशमाता है। एक बार कषायोंका उपशम करके और उपशमश्रेणीसे च्युत होकर फिर भी अतिशीघ्र कषायोंका उपशम करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यदि कहा जाय कि पुरुषवेदके कर्मांशका पूरण करना प्रकृतमें अनुपयोगी है सो ऐसी बात भी नहीं है, क्योंकि स्तिवुक-संक्रमणके द्वारा उसकी उपयोगिता देखी जाती है। और ऐसा कथन करनेसे जिसने नपुंसकवेदके कर्मांशका पूरण किया है उसके साथ अतिप्रसङ्ग भी नहीं प्राप्त होता है, क्योंकि असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें यथानिषेक संचयकालके भीतर उसका पूरण करना नहीं बन सकता है। शेष कथन क्रोधसंज्वलनके समान करना चाहिये। किन्तु प्रकृतमें इतना विशेष कहना चाहिये कि असंख्यात वर्षकी आयुवाले तिर्यञ्च और मनुष्योंमें संख्यात अन्तर्मुहूर्त और सोलह वर्ष अधिक दस हजार वर्षसे न्यून यथानिषेक संचयकालका पालन करके तथा वहाँ स्त्रीवेद और पुरुषवेदका पूरण करके फिर वहाँसे निकलकर दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर क्रमसे मनुष्य हुआ। क्रोधसंज्वलनका जिस प्रकार उपशामकसम्बन्धी संचयका और स्वरूपप्रमाणका विचार किया है

कायव्वो ।

❀ उदयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयं कस्स ?

§ ६६२. इत्थिवेदस्से त्ति अहियारसंबंधो । सेसं सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स खवयस्स चरिमसमयइत्थिवेदयस्स तस्स उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं ।

उसी प्रकार वह सबका सब विचार यहाँ भी करना चाहिये ।

विशेषार्थ—यहाँ पर स्त्रीवेदके यथानिषेक स्थितिप्राप्त और निषेकस्थितिप्राप्त उत्कृष्ट द्रव्यके स्वामीका विचार करते हुए जो यह बतलाया है कि पहले स्त्रीवेद और पुरुषवेदका पूरण करके स्त्रीवेदके उदयके साथ संयत होकर दो बार कषायोंका उपशम करते हुए जब दूसरी बार उपशामनाके समय जघन्य स्थितिबन्धकी प्रथम निषेकस्थिति उदयमें आती है तब प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है सो इसका आशय यह है कि सर्वप्रथम यह जीव असंख्यात वर्षकी आयुवाले तिर्यंच या मनुष्योंमें उत्पन्न होवे । फिर वहाँ यथानिषेकका जितना संचयकाल है उसमेंसे संख्यात अन्तर्मुहूर्त और सोलह वर्ष अधिक एक हजार वर्षसे न्यून कालके शेष रहनेपर स्त्रीवेद और पुरुषवेदका संचय प्रारम्भ करे । और इस प्रकार वहाँकी आयु समाप्त करके दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होवे । फिर वहाँसे च्युत होकर मनुष्य होवे । फिर गर्भसे लेकर आठ वर्ष व्यतीत होनेपर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वके साथ संयमको प्राप्त करे । फिर द्वितीयोपशम सम्यक्त्वको प्राप्त करके अतिशीघ्र उपशमश्रेणिपर आरोहण करे और वहाँसे च्युत होकर दूसरी बार पुनः उपशमश्रेणिपर आरोहण करे । फिर क्रमसे च्युत होकर और मिथ्यात्वमें जाकर पुन मनुष्यायुका बन्ध करके दूसरी बार भी मनुष्य होवे और वहाँ भी पूर्वोक्त प्रकारसे क्रिया करे । इस प्रकार दूसरी बार उपशामना करनेवाले इस जीवके जब जघन्य स्थितिबन्धकी प्रथम निषेकस्थिति उदयमें आती है तब प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है । यहाँ स्त्रीवेदके संचयके साथ जो पुरुषवेदके सञ्चयका विधान किया है सो इसका फल यह है कि स्तिवुक संक्रमणके द्वारा पुरुषवेदका द्रव्य स्त्रीवेदमें मिल जानेसे स्त्रीवेदकी यथानिषेकस्थिति या निषेकस्थितिका उदयगत उत्कृष्ट संचय बन जाता है । यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार तो नपुंसकवेदका द्रव्य भी मिलता है पर प्रकृतमें उसका विधान क्यों नहीं किया सो इसका यह समाधान है कि स्त्रीवेदकी यथानिषेकस्थिति या निषेकस्थितिका उत्कृष्ट सञ्चयकाल असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें व्यतीत होता है और वहाँ नपुंसकवेदका बन्ध नहीं होता, अत ऐसे जीवके नपुंसकवेदका अधिक सञ्चय नहीं पाया जाता । यही कारण है कि प्रकृतमें इसका उल्लेख नहीं किया है । वैसे स्त्रीवेदका उदय रहते हुए इसका द्रव्य भी स्तिवुक संक्रमणके द्वारा स्त्रीवेदमें प्राप्त होता रहता है । पर उसकी परिगणना यथानिषेकस्थितिमें या निषेकस्थितिमें नहीं की जा सकती । शेष व्याख्यान संज्वलन क्रोधके समान यहाँ भी जानना चाहिये ।

❀ उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका उत्कृष्ट स्वामी कौन है ।

§ ६६२ इस सूत्रमें अधिकारके अनुसार 'इत्थिवेदस्स' पदका सम्बन्ध कर लेना चाहिये । शेष कथन सुगम है ।

❀ जो गुणितकर्मांश स्त्रीवेदी क्षपक जीव अपने उदयके अन्तिम समयमें विद्यमान है वह स्त्रीवेदके उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी है ।

§ ६६३ एत्थ गुणिदकम्मंसियणिद्देसो तप्पडिवक्खकम्मंसियपडिसेहमुहेण पयदगोवुच्छाए थूलभावसंपायणफलो। खवयणिद्देसो अक्खवयपडिसेहमोहेण; अण्णत्थ गुणसेढीए बहुत्ताभावादो। चरिमसमयइत्थिवेदयणिद्देसो तदण्णपरिहारदुवारेण गुणसेढिसीसयगाहणट्ठो। एवंविहस्स पयदुक्कस्ससामित्तं होइ।

*** एवं णवुंसयवेदस्स।**

§ ६६४ जहा इत्थिवेदस्स चउण्हमुक्कस्सट्ठिदिपत्तयाणं सामित्तपरूवणा कया एवं णवुंसयवेदस्स वि कायव्वा, विसेसाभावादो।

*** णवरि णवुंसयवेदोदयस्से त्ति भाणिदव्वाणि।**

§ ६६५ एत्थ 'णवरि' सद्दो विसेससूचओ। को विसेसो? णवुंसयवेदस्से त्ति भाणियव्वा, अण्णहा पयदुक्कस्ससामित्तविहाणाणुववत्तीदो।

एवमुक्कस्सट्ठिदिपत्तयसामित्तं समत्तं।

*** जहण्णाणि ट्ठिदिपत्तयाणि कायव्वाणि।**

§ ६६६. सुगममेदं पइण्णासुत्तं।

---

§ ६६३ यहाँ सूत्रमें जो 'गुणितकर्मांशिक' पदका निर्देश किया है सो वह इसके विरोधी क्षपितकर्मांशके निषेधद्वारा प्रकृत गोपुच्छाकी स्थूलताको प्राप्त करनेके लिए किया है। 'क्षपक' इस पदका निर्देश अक्षपकका निराकरण करनेके लिए किया है, क्योंकि गुणश्रेणिके सिवा अन्यत्र बहुत द्रव्य नहीं पाया जाता है। तथा सूत्रमें जो 'चरिमसमयइत्थिवेदय' इस पदका निर्देश किया है सो वह स्त्रीवेदसे भिन्न वेदके निषेधद्वारा गुणश्रेणिशीर्षके ग्रहण करनेके लिए किया है। इस तरह पूर्वोक्त विशेषणोंसे युक्त जो जीव है उसके प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है।

* इसी प्रकार नपुंसकवेदका उत्कृष्ट स्वामित्व जानना चाहिये।

§ ६६४ जिस प्रकार स्त्रीवेदके चारों ही स्थितिप्राप्तोंके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन किया है उसी प्रकार नपुंसकवेदका भी कथन करना चाहिये, क्योंकि उससे इसके कथनमें कोई विशेषता नहीं है।

* किन्तु यह उत्कृष्ट स्वामित्व नपुंसकवेदके उदयवाले जीवके कहना चाहिये।

§ ६६५. इस सूत्रमें जो 'णवरि' पद है वह भी विशेष अर्थका सूचक है।

शंका—वह विशेषता क्या है?

समाधान—यह उत्कृष्ट स्वामित्व नपुंसकवेदवालेके ही होता है यह विशेषता है जिसका कथन यहाँ करना चाहिये, अन्यथा प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान नहीं बन सकता है।

इसप्रकार उत्कृष्ट स्थितिप्राप्त द्रव्यके स्वामित्वका कथन समाप्त हुआ।

* अब जघन्य स्थितिप्राप्त द्रव्योंका कथन करते हैं।

§ ६६६. यह प्रतिज्ञासूत्र सुगम है।

❀ सव्वकम्माणं पि अग्गट्ठिदियपत्तयं जहण्णयमेओ पदेसो। तं पुण अण्णदरस्स होज्ज।

§ ६६७. कथमणंतपरमाणुसमण्णिदस्स अग्गट्ठिदिणिसेयस्स जहण्णेणेओ पदेसोवलभइ ? ण, ओकड्डुक्कड्डुणावसेण सुद्धं णिल्लेविज्जमाणस्स एयपरमाणुमेत्तावट्ठाणे विरोहाभावादो। त पुण अण्णदरस्स होज्ज, विरोहाभावादो।

§ ६६८. एवं सव्वेसिं कम्माणमग्गट्ठिदिपत्तयजहण्णसामित्तमेकवारेण परूविय संपहि सेसट्ठिदिपत्तयाणं जहण्णसामित्तविहाणट्ठमुत्तरिमं पबंधामाढवेइ।

❀ मिच्छत्तस्स णिसेयट्ठिदिपत्तयमुदयट्ठिदिपत्तयं च जहण्णयं कस्स ?

❀ सभी कर्मोके अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य प्रमाण एक परमाणु है और उसका स्वामी कोई भी जीव है।

§ ६६७. शंका—जब कि अग्रस्थितिप्राप्त निषेक अनन्त परमाणुओंसे बनता है तब फिर उसमें जघन्यरूपसे एक परमाणु कैसे पाया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षणके कारण उन सबका अभाव होकर एक परमाणु मात्रका सद्भाव माननेमें कोई विरोध नहीं आता है। और इसका स्वामी कोई भी जीव हो सकता है, क्योंकि इसमें कोई विरोध नहीं है।

विशेषार्थ—यहाँ सभी कर्मों के अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यके जघन्य स्वामीका कथन युगपत् किया है सो इसका कारण यह है कि अपकर्षण और उत्कर्षणके कारण अग्रस्थितिमें एक परमाणु रहकर जब वह उदयमें आता है तब यह जघन्य स्वामित्व होता है और यह स्थिति सभी कर्मोंमें घटित हो सकती है, अतः सब कर्मों के स्वामित्वको युगपत् कहनेमें कोई बाधा नहीं आती। यहाँ यह शंका की जा सकती है कि अग्रस्थितिके कर्मपरमाणुओंका अपकर्षण होता है यह तो ठीक है पर उनका उत्कर्षण कैसे हो सकता है, क्योंकि ऐसा नियम है कि बन्धके समय जिनकी जितनी शक्तिस्थिति पाई जाती है उनका उतना ही उत्कर्षण हो सकता है। किन्तु अग्रस्थितिके कर्म परमाणुओंमें जब एक समय मात्र भी शक्तिस्थिति नहीं पाई जाती है तब फिर उनका उत्कर्षण होना सम्भव नहीं है। सो इस शंकाका यह समाधान है कि अग्रस्थितिके कर्म परमाणुओंका अपकर्षण होकर पहले उनका नीचेकी स्थितिमें निक्षेप हो जाता है और फिर उत्कर्षण हो जाता है, इस विवक्षासे अग्रस्थितिके कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण बन जाता है। इसी कारणसे यहाँ अग्रस्थितिके परमाणुओंके अपकर्षण और उत्कर्षणका विधान किया है। अथवा बन्धके समय जिन कर्मोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध नहीं हुआ उनकी अग्रस्थितिका शक्तिस्थितिप्रमाण उत्कर्षण हो सकता है, इस अपेक्षासे भी यहाँपर उत्कर्षण घटित किया जा सकता है और इसीलिए यहाँपर उत्कर्षणका विधान किया है।

§ ६६८ इस प्रकार सभी कर्मों के अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यके जघन्य स्वामित्वको एक साथ कहकर अब शेष स्थितिप्राप्त द्रव्यके जघन्य स्वामित्वका कथन करनेके लिए आगेकी रचनाका आरम्भ करते हैं—

❀ मिथ्यात्वके निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी कौन है ?

§ ६९९ सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

* उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स तप्पाओग्गउक्कस्स-संकिलिट्ठस्स तस्स जहण्णयं णिसेयट्ठिदिपत्तयमुदयट्ठिदिपत्तयं च ।

§ ७०० उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयं णिसेयट्ठिदि-पत्तयं होइ त्ति एत्थ सुत्तत्थसंबंधो । सो च उवसमसम्माइट्ठी छसु आवलियासु उवसमसम्मत्तद्धाए सेसासु आसाणं गंतूण मिच्छत्तं पडिवण्णो त्ति घेत्तव्वं, अण्णहा उक्कस्ससंकिलेसाभावेणोदीरणाए जहण्णभावाणुववत्तीदो । सुत्ते असंतमेदं कथमुवलब्भदे ? ण, तप्पाओग्गउक्कस्ससंकिलिट्ठस्से त्ति विसेसणेण तदुवलद्धीदो । कथमेदस्स उवसम-सम्माइट्ठिपच्छायदपढमसमयमिच्छाइट्ठिणा उवरिमट्ठिदीहिंतो ओकड्डियउदीरिददव्वस्स णिसेयट्ठिदिपत्तयत्तं, कथं च ण भवे बंधसमयणिसेयमस्सियूण, तस्स पुव्वं समुक्कित्तियत्तादो । ओकड्डमाणणिसेयं पि पेक्खियूण ण तस्स वि णिसेयट्ठिदिपत्तयत्तं होदु त्ति, तदब्भुवगमे गुणसेढिसीसओदएण णिसेयट्ठिदिपत्तयस्स उक्कस्ससामित्त-विहाणाइप्पसंगादो । तदो णेदं सामित्तविहाणं घडइ त्ति ? एत्थ परिहारो वुच्चदे—जो

---

§ ६९९. यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

* जो उपशमसम्यक्त्वसे पीछे आकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशसे युक्त प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव है वह निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी है ।

§ ७००. उपशमसम्यक्त्वसे पीछे आकर जो प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव है वह निषेकस्थितिप्राप्तका जघन्य स्वामी होता है इस प्रकार यहाँ पर सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध करना चाहिये । किन्तु वह उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिप्रमाण कालके शेष रहनेपर सासादनमें जाकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये, अन्यथा परिणामोंमें उत्कृष्ट संक्लेशके नहीं प्राप्त होनेसे जघन्य उदीरणा नहीं बन सकती है ।

शंका—इसका निर्देश सूत्रमें तो किया नहीं है अतः यह अर्थ यहाँ कैसे लिया जा सकता है ?

समाधान—नहीं क्योंकि सूत्रमें जो 'तप्पाओग्गउक्कस्ससंकिलिट्ठस्स' यह विशेषण दिया है सो इससे उक्त अर्थका ग्रहण हो जाता है ।

शंका—जो जीव उपशमसम्यक्त्वसे पीछे आकर प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि है वह जिस द्रव्यका ऊपरकी स्थितियोंसे अपकर्षण करके उदीरणा करता है वह द्रव्य निषेकस्थितिप्राप्त कैसे हो सकता है और बन्धके समय निषेकमें जो द्रव्य प्राप्त होता है वह निषेकस्थितिप्राप्त कैसे नहीं होता क्योंकि पहले निषेकस्थितिप्राप्तका इसी रूपसे कथन किया है । यदि कहा जाय कि अपकर्षणसम्बन्धी निषेककी अपेक्षासे इसे निषेकस्थितिप्राप्त कहा जायगा सो ऐसा कथन करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि ऐसा माननेपर गुणश्रेणिशीर्षके उदयसे निषेकस्थितिप्राप्तके उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान करनेपर अतिप्रसंग दोष आता है, इसलिये यह जो उक्त प्रकारसे स्वामित्वका कथन किया है वह नहीं बनता है ?

एवं भणइ ? उदीरणादव्वं सव्वमेव पयदजहण्णसामित्तविसईकयमिदि । किंतु तिस्से चेव हिदीए पुव्वमंतरहमुक्कीरमाणीए पदेसग्गमोकड्डियूणुवरिमहिदीसु समयाविरोहेण पक्खित्तमत्थित्तमेण्णिमोकड्डिय असंखेज्जलोगपडिभागेणोदयम्मि पुणो वि तत्थेव णिसिंचमाणं पयदजहण्णसामित्तविसईकयमिदि भणामो । तदो णाणंतरुत्तदोसो त्ति ।

§ ७०१. संपहि एत्थ पयदसामित्तपडिग्गहिय दव्वपमाणाणुगमं वत्तइस्सामो । तं जहा—मिच्छत्तस्स अंतरब्भंतरहिदअहियारहिदीए अतरकरणपारभसमए णाणासमयपवद्धपडिवद्धणिसेए अस्सियूण तप्पाओग्गमेयसमयपवद्धमेत्तं पदेसग्गमत्थि तं पुण सव्वं णिसेयहिदिपत्तयं ण होइ, किंतु हेट्ठिमोवरिमहिदीणमुक्कड्डणोकड्डणेहि तत्थ सगलिददव्वेण सह समयपवद्धपमाणं होइ । पुणो केत्तियमेत्तमंतरकरणपारंभे अहियारहिदीए णिसेयहिदिपत्तयमिदि पुच्छिदे तदसंखेज्जदिभागपमाणमिदि भणामो ।

समाधान—अब इस शंकाका परिहार करते हैं—प्रकृतमें ऐसा कौन कहता है कि जितना भी उदीरणाका द्रव्य है वह सभी प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विषय है । किन्तु यहाँ हम ऐसा कहते हैं कि पहले अन्तर करनेके लिये उत्कीरणा करते समय उसी स्थितिके द्रव्यका उत्कर्पण करके ऊपरकी स्थितियोंमें यथाविधि निक्षेप किया गया था अब इस समय असख्यात लोकका भाग देकर जितना लब्ध हो उतने द्रव्यका अपकर्पण करके उदयगत उसी स्थितिमें फिरसे निक्षेप करनेपर वह प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विषय होता है, इसलिये जो दोप पहले दे आये हैं वह यहाँ नहीं प्राप्त होता है ।

विशेषार्थ—यहाँ पर मिथ्यात्वके निपेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी बतलाया है । जो उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलि कालके शेष रहनेपर सासादनमें जाता है और तदनन्तर मिथ्यात्वमें जाता है उसके प्रथम समयमें अपकर्पित होकर जो मिथ्यात्वका द्रव्य उदयमें आता है वह सबसे कम होता है, इसलिये उदयस्थितिप्राप्तका जघन्य स्वामी यहाँ पर बलताया है । इसी प्रकार निपेकस्थितिप्राप्तका जघन्य स्वामी भी जान लेना चाहिये । किन्तु यहाँ इतनी विशेपता है कि उस समय जितना भी द्रव्य उदयमें प्राप्त हुआ है वह सबका सब निषेकस्थितिप्राप्त नहीं कहलाता । किन्तु उसी स्थितिसम्बन्धी जितना भी द्रव्य अपकर्षित हो करके वहाँ पाया जाता है वह निपेकस्थितिप्राप्त द्रव्य कहलाता है । यत यह भी जघन्य द्रव्य होता है, इसलिये निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामित्व यहाँ पर दिया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ७०१ अब यहाँ पर प्रकृत स्वामित्वकी अपेक्षा द्रव्यप्रमाणका विचार करते हैं । जो इस प्रकार है—अन्तरकरणके प्रारम्भ समयमें अन्तरके भीतर जो विवक्षित स्थिति स्थित है उसमें मिथ्यात्वका नाना समयप्रबद्धोंसे सम्बन्ध रखनेवाले निषेकोंकी अपेक्षा तत्प्रायोग्य एक समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्य पाया जाता है परन्तु वह सबका सब निषेकस्थितिप्राप्त नहीं होता है । किन्तु नीचेकी स्थितियोंका उत्कर्षण होकर और ऊपरकी स्थितियोंका अपकर्षण होकर वहाँ जो द्रव्यका सकलन होता है उसके साथ वह एक समयप्रबद्धप्रमाण होता है ।

शंका—तो फिर अन्तरकरणके प्रारम्भमें विवक्षित स्थितिमें निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य कितना होता है ?

तस्सोकड्डणे ठविज्जमाणे तप्पाओग्गमेयसमयपबद्धं ठविय पुणो महाणिसेयकालब्भंतरसंचयमिच्छामो त्ति तस्सोकड्डुक्कड्डणभागहारावहिददिवड्ढगुणहाणिभागहारे ठविदे महाणिसेयसंचओ आगच्छइ । ओकड्डणादीहि गंतूण पुणो वि एत्थेव पदिददव्वमेदस्स असंखेज्जदिभागमेत्तमिच्छिय तम्मि भागहारे किंचूणीकदे पयदणिसेयदव्वमागच्छइ । असंखेज्जभागूणं चेदमंतरं करेमाणेणुक्कड्डिय अणुक्कीरमाणीसु ट्ठिदीसु ठविददव्वं होइ । पुणो एदस्सोकड्डुक्कड्डणभागहारे ठविदे पढमसमयमिच्छाइट्ठिणोकड्डिददव्वं पयदणिसेयपविट्ठमागच्छइ ।

§ ७०२ संपहि तप्पाओग्गुक्कस्ससंकिलेसेणोदीरिददव्वमिच्छामो त्ति असंखेज्जलोगभागहारमावलियाए गुणिदं ठवेऊणोकड्डिदे पयदजहण्णसामित्तपडिग्गाहियं दव्वमागच्छइ । एत्थ मिच्छाइट्ठिविदियादिसमएसु जहण्णसामित्तं दाहामो त्ति णासंकणिज्जं, विदियादिसमएसु उदीरिज्जमाणबहुदव्वपवेसेण जहण्णत्ताणुववत्तीदो । पढमसमयम्मि ओकड्डियूण णिसित्तदव्वं विदियादिसमएसु उदयमागच्छमाणमत्थि चेव । तस्सुवरि पुणो वि पुव्वं णिसित्ते ट्ठिदीए उक्कड्डिदपदेसग्गमुदयावलियब्भंतरे ओकड्डियूण

समाधान—विवक्षित स्थितिमें जितना द्रव्य है उसका असंख्यातवाँ भागप्रमाण द्रव्य निषेकस्थितिप्राप्त होता है ऐसा हम कहते हैं।

अब इसको प्राप्त करनेके लिये भागहार क्या है यह बतलाते हैं—एक समयप्रबद्धको स्थापित करे फिर यथानिषेक कालके भीतर संचय लाना इष्ट है इसलिये उसका अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे भाजित डेढ़ गुणहानिप्रमाण भागहार स्थापित करे, इससे यथानिषेकका संचय आ जाता है। अपकर्षणादिकके द्वारा अन्यको प्राप्त हुआ द्रव्य फिरसे इसीमें अर्थात् यथानिषेकके द्रव्यमें सम्मिलित हो जाता है जो कि इसके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अतः इसे अलग करनेकी इच्छासे प्रकृत भागहारको कुछ कम कर देनेपर प्रकृत निषेकका द्रव्य आ जाता है। तात्पर्य यह है कि अन्तरको करते समय उत्कर्षण द्वारा अनुत्कीर्यमाण स्थितियोंमें जो द्रव्य प्राप्त होता है वह पूर्वोक्त द्रव्यसे असंख्यातवें भागप्रमाण कम होता है। फिर इसका अपकर्षण-उत्कर्षणप्रमाण भागहार स्थापित करनेपर प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके द्वारा प्रकृत निषेकसम्बन्धी अपकर्षित द्रव्यका प्रमाण होता है।

§ ७०२. अब तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशके द्वारा उदीरणाको प्राप्त हुआ द्रव्य लाना है इसलिये आवलिके असंख्यातवें भागसे गुणित असंख्यात लोकप्रमाण भागहारको स्थापित करके जो द्रव्य प्राप्त हो उतने द्रव्यका अपकर्षण करनेपर प्रकृत जघन्य स्वामित्वसे सम्बन्ध रखनेवाला द्रव्य आता है।

शंका—यहाँ पर मिथ्यादृष्टिके द्वितीयादि समयोंमें जघन्य स्वामित्व दिया जाना चाहिये ?

समाधान—ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि द्वितीयादि समयोंमें उदीरणाके द्वारा बहुत द्रव्यका प्रवेश हो जाता है, इसलिये वहाँ जघन्य द्रव्य नहीं प्राप्त हो सकता। आशय यह है कि जिस द्रव्यका प्रथम समयमें अपकर्षण होकर ऊपरकी स्थितियोंमें निक्षेप हुआ है वह तो द्वितीयादि समयोंमें उदयमें आता हुआ देखा ही जाता है। किन्तु इसके अतिरिक्त उस स्थितिके जिस द्रव्यका पहले उत्कर्षण हुआ था उसका अपकर्षण होकर फिरसे उदयावलिके भीतर उस

संछुब्भइ। एवं च संछुद्धे एयसमयसंचयादो दुसमयपहुडि समयसंचओ बहुओ होइ त्ति ण तत्थ लाहो अत्थि, तदो ण तत्थ सामित्तं दाउं सक्किज्जइ त्ति भावत्थो। ण गोवुच्छविसेसहाणिमस्सियूण पच्चवट्ठेयं, तत्तो विदियादिसमयसंचयस्स बहुत्तब्भुवगमादो। एवं चेव उदयट्ठिदिपत्तयस्स वि जहण्णसामित्तं वत्तव्वं। णवरि एदस्स पमाणाणुगमे भण्णमाणे एयसमयपबद्धं ठविय पुणो एदस्स दिवड्ढगुणहाणिगुणयारे ठविदे विदियट्ठिदिसव्वदव्वमागच्छइ। पुणो ओकड्डिददव्वमिच्छामो त्ति ओकड्डुक्कड्डण-भागहारो ठवेयव्वो। पुणो वि उदीरणादव्वमिच्छिय असंखेज्जा लोगा आवलिय-पदुप्पण्णा भागहारसरूवेण ठवेयव्वा। एवं ठविदे पयदजहण्णसामित्तविसईकयदव्व-मागच्छइ।

§ ७०३. एत्थ सिस्सो भणइ—उदयावलियचरिमसमए मिच्छाइट्ठिम्मि उदयादो जहण्णझीणट्ठिदियस्सेव पयदस्स वि जहण्णसामित्तं गेण्हामो, चडिदद्धाण-मेत्तगोवुच्छविसेसपरिहाणिवसेण तत्थेव जहण्णत्तदंसणादो। एवं णिसेयट्ठिदिपत्तयस्स वि वत्तव्वं, अण्णहा पुव्वावरविरोहदोसप्पसंगादो त्ति? ण एस दोसो, गोवुच्छ-विसेसेहिंतो विदियादिसमयसंचिददव्वबहुत्ताहिप्पायावलंबणेणेदस्स पयट्टत्तादो। ण

स्थितिमें निक्षेप होता है। और इस प्रकार निक्षेप होनेपर एक समयके सञ्चयसे दो आदि समयोंका सञ्चय बहुत होता है, इसलिये उसमें कोई लाभ नहीं है, अतः द्वितीयादि समयोंमें स्वामित्व नहीं दिया जा सकता। यदि कहा जाय कि द्वितीयादि समयोंमें गोपुच्छविशेषकी हानि देखी जाती है, इसलिए वहाँ जघन्य स्वामित्व बन जायगा सो ऐसा निश्चय करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि गोपुच्छविशेपका जितना प्रमाण है इससे द्वितीयादि समयोंका सञ्चय बहुत स्वीकार किया है। प्रकृतमें जैसे निषेकस्थितिप्राप्तका जघन्य स्वामित्व कहा है उसी प्रकार उदयस्थितिप्राप्तके जघन्य स्वामित्वका भी कथन करना चाहिये। किन्तु इसका प्रमाण लानेकी इच्छासे एक समयप्रबद्धको स्थापित करके फिर इसका डेढ गुणहानिप्रमाण गुणकार स्थापित करनेपर द्वितीय स्थितिका सब द्रव्य आ जाता है। फिर अपकर्षित द्रव्य लाना है, इसलिये अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारको स्थापित करना चाहिये। फिर भी उदीरणाको प्राप्त हुए द्रव्यके लानेकी इच्छासे एक आवलिसे गुणित असख्यात लोकप्रमाण भागहार स्थापित करना चाहिये। इस प्रकार स्थापित करनेपर प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विषयभूत द्रव्य आ जाता है।

§ ७०३ **शंका**—यहाँपर शिष्य कहता है कि जिसप्रकार उदयावलिके अन्तिम समयमें मिथ्यादृष्टिके मिथ्यात्वके उदयसे झीनस्थितिवाले द्रव्यका जघन्य स्वामित्व होता है उसीप्रकार प्रकृत उदयप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामित्व भी उदयावलिके अन्तिम समयमें ही ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि उदयावलिका अन्तिम समय जितना ऊपर जाकर प्राप्त है वहाँ उतने गोपुच्छविशेषोंकी हानि हो जानेसे उदयप्राप्त द्रव्यका जघन्यपना वहींपर देखा जाता है। इसी प्रकार निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका भी जघन्य स्वामित्व कहना चाहिये, अन्यथा पूर्वापर विरोध दोष प्राप्त होता है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि गोपुच्छविशेषोंकी अपेक्षा द्वितियादि समयोंमें

पुव्वावरविरोहदोसासंभवो वि, उवएसंतरपदंसणट्ठं तस्स तहा परूविदत्तादो ।

§ ७०४ संपहि अहाणिसेयट्ठिदिपत्तयस्स जहण्णसामित्तं परूवेमाणो पुच्छाए अवसरं करेइ—

संचित होनेवाला द्रव्य बहुत होता है इस अभिप्रायसे यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है और इससे पूर्वापर विरोध दोष प्राप्त होना भी सम्भव नहीं है, क्योंकि उपदेशान्तरके दिखलानेके लिये यहाँपर इस प्रकारसे कथन किया है ।

विशेषार्थ—जिस समय जो द्रव्य उदयमें आता है वही उस समय उदयसे झीनस्थितिवाला द्रव्य माना गया है, क्योंकि यह द्रव्य उदयप्राप्त होनेसे निर्जीर्ण हो जानेवाला है अतः उसमें पुनः उदयकी योग्यता नहीं पाई जाती । इस प्रकार विचार करनेपर उदयस्थितिप्राप्त द्रव्य और उदयसे झीनस्थितिवाला द्रव्य ये दोनों एक ही ठहरते हैं । यों जब ये एक हैं तो इनका जघन्य और उत्कृष्ट स्वामित्व भी एक ही होना चाहिये । अर्थात् जो उदयसे झीनस्थितिवाले द्रव्यका उत्कृष्ट स्वामी होगा वही उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका उत्कृष्ट स्वामी होगा और जो उदयसे झीनस्थितिवाले द्रव्यका जघन्य स्वामी होगा वही उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी होगा । यद्यपि स्थिति ऐसी है तथापि मिथ्यात्वकी अपेक्षा इन दोनोंका जघन्य स्वामी एक नहीं बतलाया है । उदयसे झीनस्थितिवाले द्रव्यका जघन्य स्वामित्व बतलाते समय यह जघन्य स्वामित्व उपशमसम्यक्त्वसे च्युत होकर मिथ्यात्वको प्राप्त करनेके समयसे लेकर उदयावलिके अन्तिम समयमें दिया है किन्तु उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामित्व बतलाते समय यह जघन्य स्वामित्व उपशमसम्यक्त्वसे च्युत होकर मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें दिया है । इसप्रकार देखते हैं कि इन दोनों कथनोंमें पूर्वापर विरोध है जो नहीं होना चाहिये था । टीकामें इस विरोधका जो समाधान किया गया है उसका आशय यह है कि पूर्वोक्त कथन इस आशयसे किया गया है कि मिथ्यादृष्टि होनेके प्रथम समयसे लेकर उदयावलिके अन्तिम समय तक एक समय कम उदयावलिके भीतर गोपुच्छ विशेषरूप जो द्रव्य संचित होता है उससे उस कालके भीतर अपकर्षण द्वारा संचित होनेवाला द्रव्य न्यून होता है । किन्तु यह कथन इस अभिप्रायसे किया गया है कि द्वितीयादि समयोंमें संचित होनेवाला द्रव्य गोपुच्छविशेषोंसे अधिक होता है, इसलिए उक्त दोनों कथनोंमें कोई विरोध नहीं है । इसप्रकार कौन कथन किस अभिप्रायसे किया गया है इसका पता भले ही लग जाता है तथापि इससे विरोधका परिहार नहीं होता है, क्योंकि आखिर यह प्रश्न तो बना ही रहता है कि मिथ्यादृष्टि होनेके प्रथम समयके द्रव्य और वहाँसे आकर उदयावलिके अन्तिम समयके द्रव्य इनमेंसे कौन कम है और कौन अधिक है ? इस शंकाका टीकामें जो समाधान किया है उसका आशय यह है कि इस विषयमें दो सम्प्रदाय पाये जाते हैं । एक सम्प्रदायके मतसे मिथ्यादृष्टि होनेके प्रथम समयसे लेकर उदयावलिके अन्तिम समयमें जो द्रव्य होता है वह न्यून होता है । और दूसरा सम्प्रदाय यह है कि मिथ्यादृष्टि होनेके प्रथम समयमें जो द्रव्य होता है वह न्यून होता है । चूर्णिसूत्रकारके सामने ये दोनों ही सम्प्रदाय रहे हैं, इसलिये उन्होंने एकका उल्लेख मिथ्यात्वके उदयसे झीनस्थितिवाले द्रव्यके जघन्य स्वामित्वका बतलाते हुए कर दिया और दूसरेका उल्लेख यहाँ किया है । सत्कर्मप्राभृत और श्वेताम्बर मान्य कर्मप्रकृति व पंचसंग्रह इनमें प्रथम मतका ही उल्लेख है । अर्थात् वहाँ मिथ्यादृष्टि होनेके प्रथम समयसे लेकर उदयावलिके अन्तिम समयमें ही जघन्य स्वामित्व बतलाया है ।

§ ७०४ अब यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यके जघन्य स्वामित्वका कथन करते हुए पृच्छासूत्र कहते हैं—

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ७०५. सुगम ।

❀ जो एइंदियट्ठिदिसंतकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो । अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो । वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालियूण मिच्छत्तं गदो । तप्पाओग्गउक्कस्सिया मिच्छत्तस्स जावदिया आबाहा तावदिमसमय मिच्छाइट्ठिस्स तस्स जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं ।

§ ७०६. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे । त जहा—जो एइदियट्ठिदिसंतकम्मेणं जहण्णएणे त्ति उत्ते एइंदिएसु ट्ठिदिसंतकम्मं हदसमुप्पत्तिय काऊण पलिदोवमासंखेज्ज-भागूणसागरोवममेत्तसव्वजहण्णेइंदियट्ठिदिसंतकम्मेण सह गदो त्ति घेत्तव्व । गुणिदकम्मंसियलक्खणेण तव्विवरीयकम्मंसियलक्खणेण वा आगमणेण ण एत्थ पयोजणमत्थि । किंतु एइंदियसव्वजहण्णट्ठिदिसंतकम्ममेवेत्थोवजोगी, तत्थतणपदेस-थोवबहुत्तेण पओजणाभावादो त्ति भावत्थो । कुदो पओजणाभावो ? उवरि दूरद्धाण गंतूण वेछावट्ठिसागरोवमावसाणे पयदसामित्तविहाणुद्देसे हेट्ठिमसंचयस्स जहाणिसेय-सरूवेणासंभवादो । एइंदियट्ठिदिसंतकम्मं पुण तत्थुद्देसे तदभावीकरणेण पयदोव-

❀ मिथ्यात्वके यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी कौन है ?

§ ७०५ यह सूत्र सुगम है।

❀ एकेन्द्रियोंके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें उत्पन्न होकर जिसने अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त किया है। फिर दो छ्यासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन करके जो मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ है। फिर वहाँ तत्प्रायोग्य मिथ्यात्वकी जितनी उत्कृष्ट आबाधा हो उतने काल तक जो मिथ्यात्वके साथ रहा है वह मिथ्यात्वके यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी है।

§ ७०६ अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। जो इसप्रकार है—सूत्रमें जो 'जो एइ दियट्ठिदि सतकम्मेण जहण्णएण' यह पद कहा है सो इससे यह अर्थ लेना चाहिये कि एकेन्द्रियोंमें स्थितिसत्कर्म-को हतसमुत्पत्तिक करके जो जीव एकेन्द्रियका सबसे जघन्य स्थितिसत्कर्म जो पल्यका असंख्यातवाँ भाग कम एक सागर बतलाया है उसके साथ त्रसोंमें उत्पन्न हुआ है। यहाँपर गुणितकर्मांशकी विधिसे या क्षपितकर्मांशकी विधिसे आनेसे कोई प्रयोजन नहीं है किन्तु एकेन्द्रियका सबसे जघन्य स्थितिसत्कर्म ही यहाँ उपयोगी है, क्योंकि ऐसे जीवके कर्म परमाणु थोड़े हैं या बहुत इससे प्रकृतमें प्रयोजन नहीं है यह उक्त कथनका भावार्थ है।

शंका—प्रकृतमें कर्मपरमाणुओंके अल्पबहुत्वसे क्यों प्रयोजन नहीं है ?

समाधान—क्योंकि ऊपर बहुत दूर जाकर दो छ्यासठ सागर कालके अन्तमें जहाँ प्रकृत स्वामित्वका विधान किया है वहाँ इतने नीचेके सचयका यथानिषेकरूपसे पाया जाना सम्भव नहीं है। किन्तु उस स्थानमें जाकर एकेन्द्रियके यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका अभाव कर देनेसे

१ आ० प्रतौ एइदियट्ठिदिपत्तय इति पाठ ।

जोगी, अण्णहा अंतोकोडाकोडीमेत्तट्ठिदिसंतकम्मस्स वेछावट्ठिसागरोवमाणमुवरि वि संभवेण जहण्णभावाणुववत्तीदो। एइंदियजहण्णट्ठिदिसंतकम्मेणेव त्ति णावहारणमेत्थ कायव्वं, किंतु तत्तो समयुत्तरादिकमेण सादिरेयवेछावट्ठिसागरोवममेत्तट्ठिदिसंतकम्मे त्ति ताव एदेसिं पि ट्ठिदिवियप्पाणमेत्थ गहणे विरोहो णत्थि, वेछावट्ठिसागरोवमाणि गालिय उवरि सामित्तविहाणादो। तदो उवलक्खणमेत्तमेदं ति घेत्तव्वं।

§ ७०७ एवंविहेण ट्ठिदिसंतकम्मेण तसेसु आगदो। अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो एवं भणिदे असण्णिपंचिंदियपज्जत्तएसु जहण्णाउएणुववज्जिय सव्वलहुं पज्जत्तीओ समाणिय अंतोमुहुत्तेण देवाउअं बंधिय कमेण कालं काऊण देवेसुववज्जिय सव्वलहुं सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो होदूण विस्संतो विसोहिमापूरिय सम्मत्तं पडिवण्णो त्ति भणिदं होइ। ण च सम्मत्तुप्पायणमेदं णिरत्थयं, सम्मत्तगुणपाहम्मेण मिच्छत्तस्स बंधवोच्छेदं कादूणंतोमुहुत्तमेत्तसमयपबद्धाणं गालणेण फलोवलंभादो। एदस्सेव अत्थविसेसस्स पदंसणट्ठं वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालियूणे त्ति भणिदं। एवं वेछावट्ठिसागरोवमाणि समयाविरोहेण सम्मत्तमणुपालिय तदवसाणे मिच्छत्तं गदो, अण्णहा पयदसामित्तविहाणोवायाभावादो। एवं मिच्छत्त

एकेन्द्रियके योग्य स्थितिसत्कर्म ही प्रकृतमें उपयोगी है अन्यथा अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिसत्कर्मका दो छ्यासठ सागरके ऊपर भी सम्भव होनेसे जघन्यपना नहीं बन सकता है।

एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मके साथ ही जो त्रसोंमें उत्पन्न हुआ है ऐसा यहाँ अवधारण नहीं करना चाहिये। किन्तु एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मसे लेकर उत्तरोत्तर एक एक समय बढ़ाते हुए साधिक दो छ्यासठ सागरप्रमाण स्थितिसत्कर्म तकके इन सब स्थितिविकल्पोंका भी यहाँपर ग्रहण करनेमें कोई विरोध नहीं है, क्योंकि दो छ्यासठ सागर कालके गले जानेके बाद तदनन्तर स्वामित्वका विधान किया गया है, इसलिये 'एइंदियजहण्णट्ठिदिसंतकम्मेण' यह पद उक्त कथनका उपलक्षणमात्र है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये।

§ ७०८ इसके आगे सूत्रमें 'इस प्रकारके स्थितिसत्कर्मके साथ त्रसोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ' जो ऐसा कहा है सो इसका यह तात्पर्य है कि जघन्य आयुके साथ असंज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ। फिर अतिशीघ्र पर्याप्तियोंको पूरा करके अन्तर्मुहूर्तमें देवायुका बन्ध किया और क्रमसे मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ। फिर अतिशीघ्र सब पर्याप्तियोंको पूरा किया। फिर विश्रामके बाद विशुद्धिको प्राप्त करके सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। यदि कहा जाय कि इस प्रकार सम्यक्त्वको उत्पन्न कराना निरर्थक है सो यह बात भी नहीं है, क्योंकि सम्यक्त्व गुणकी प्रधानतासे मिथ्यात्वकी बन्धव्युच्छित्ति करके मिथ्यात्वके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण समयप्रबद्धोंको गलाने रूप फल पाया जाता है। इस प्रकार इसी अर्थविशेषको दिखलानेके लिये सूत्रमें 'वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालियूण' यह कहा है। इस प्रकार दो छ्यासठ सागर काल तक यथाविधि सम्यक्त्वका पालन करके उसके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। यदि इस जीवको अन्तमें मिथ्यात्वमें न ले जाय तो प्रकृत स्वामित्वके विधान करनेका और कोई उपाय नहीं है, इसीसे इसे अन्तमें मिथ्यात्वमें ले गये हैं। इस प्रकार मिथ्यात्वको प्राप्त हुए इस जीवके

पडिवण्णस्स सामित्तुद्देसपदुप्पायणट्ठमुवरिमो सुत्तावयवो—तप्पाओग्गुक्कस्सिय-मिच्छत्तस्स जावदिया आवाहा इच्चादि ।

§ ७०८. एत्थ वेछावट्ठीणमंते उक्कस्ससंकिलेसमावूरिय मिच्छत्तं गदस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स सामित्तमपरूविय पुणो वि अंतोमुहुत्तं गंतूण तप्पाओग्गु-क्कस्साबाहाचरिमसमयमिच्छाइट्ठिम्मि कदमं लाहमुद्दिसिय जहण्णसामित्तविहाणं कीरइ त्ति णासंकणिज्जं, तप्पाओग्गउक्कस्ससंकिलेसमावूरिय मिच्छत्तस्स तप्पाओग्गुक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणेणाबाहाब्भंतरावट्ठिदाहियारट्ठिदिपदेसाणमोकड्डुक्कड्डुणाहि जहण्णीकरणेण लाहदंसणादो पढमसमयउदयगदगोवुच्छादो तप्पाओग्गुक्कस्साबाहचरिमसमयगोवुच्छस्स चडिदद्धाणमेत्तगोवुच्छविसेसेहि परिहीणत्तदंसणादो च । ण एत्थ णवकबंधसंचयस्स संभवो, आवाहाबाहिरे तस्सावट्ठाणादो ।

स्वामित्वविषयक स्थानके दिखलानेके लिए 'तप्पाओग्गुक्कस्सियमिच्छत्तस्स जावदिया आवाहा' इत्यादि आगेका शेष सूत्र आया है ।

७०८. यहाँ पर यदि कोई ऐसी आशका करे कि दो छयासठ सागरके अन्तमें उत्कृष्ट सक्लेशको पूरा करके मिथ्यात्वको प्राप्त हुए प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके स्वामित्वका कथन न करके फिर भी अन्तर्मुहूर्त जाकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अबाधाके अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके जो जघन्य स्वामित्वका विधान किया है सो इसमें क्या लाभ है सो उसकी ऐसी आशका करना ठीक नहीं है, क्योंकि ऐसा करनेसे दो लाभ दिखाई देते हैं। प्रथम तो यह कि तत्प्रायोग्य संक्लेशको पूरा करके मिथ्यात्वकी तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके आवाधाके भीतर प्राप्त हुई अधिकृत स्थितिके कर्मपरमाणु अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा जघन्य कर दिये जाते हैं और दूसरे प्रथम समयमें उदयको प्राप्त हुई गोपुच्छासे तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अवाधाके अन्तिम समयमें जो गोपुच्छा है उसमें जितने स्थान ऊपर जाकर वह स्थित है उतने गोपुच्छविशेषोंकी हानि देखी जाती है। इसप्रकार इन दो लाभोंको देखकर मिथ्यादृष्टि होनेके प्रथम समयमें जघन्य स्वामित्वका विधान न करके उत्कृष्ट अवाधाके अन्तिम समयमें उसका विधान किया है। यदि कहा जाय कि यहाँ नवकबन्धका सञ्चय हो जायगा सो यह बात भी नहीं है, क्योंकि इसका अवस्थान अबाधाके बाहर पाया जाता है।

विशेषार्थ—यहाँ मिथ्यात्वके यथानिषेकस्थितिप्राप्तके जघन्य स्वामित्वका निर्देश किया है। इसकी प्रथम विशेषता यह बतलाई है कि सर्वप्रथम ऐसे जीवको एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मके साथ त्रसोंमें उत्पन्न कराना चाहिये। टीकामें इस विशेषताका खुलासा करते हुए जो कुछ लिखा है उसका भाव यह है कि त्रसोंमें उत्पन्न होनेवाला यह जीव एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाला ही हो ऐसा कोई एकान्त नियम नहीं है किन्तु इस कथनको उपलक्षण मानकर इससे ऐसा जीव भी लिया जा सकता है जिसका मिथ्यात्व स्थितिसत्कर्म एकेंद्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मसे एक समय अधिक हो, दो समय अधिक हो। इस प्रकार उत्तरोत्तर स्थिति बढाते हुए जिसका स्थितिसत्कर्म साधिक दो छ्यासठ सागरप्रमाण हो वह जीव भी यहाँ लिया जा सकता है। इसका कारण यह बतलाया है कि जब प्रकृत जघन्य स्वामित्व साधिक दो छ्यासठ सागरके वाद ही प्राप्त होता है तो इतने स्थितिसत्कर्मवाले जीवको ग्रहण करनेमें कोई

§ ७०६ एत्थ संचयाणुगमे भण्णमाणे पढमाणिसेयट्ठिदिपत्तयजहण्णदव्वं केत्तियमेत्तकालसंचिदमिदि उत्ते अंतोमुहुत्तमेत्तकालसंचिदमिदि घेत्तव्वं। तं जहा—थावरकायादो णिग्गदूण असण्णिपंचिंदिएसुववज्जिय अंतोमुहुत्तकालं सागरोवमसहस्समेत्तिं मिच्छत्तट्ठिदिं बंधमाणो जहाणिसेयट्ठिदिसंचयं काऊण पुणो देवेसुववज्जिय तत्थ वि अपज्जत्तकालं अंतोकोडाकोडिमेत्तट्ठिदिबंधेण संचयं करिय पुणो वि जाव सम्मत्त-ग्गहणपाओग्गो होइ ताव संचयं करेइ त्ति। एवमंतोमुहुत्तसंचओ लब्भइ। उवरि सम्मत्तगुणमाहप्पेण मिच्छत्तस्स बंधवोच्छेदादो णत्थि संचओ। एवं च अंतोमुहुत्त-पमाणसमयपबद्धपडिबद्धदव्वं सम्मत्तेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि परिब्भममाणस्स संखेज्जभागब्भहियआवलियच्छेदणयमेत्तगुणहाणीओ उवरि चडिदस्स संखेज्जावलिय-मेत्तसमयपबद्धपमाणं णस्सियूणेगसमयपबद्धपमाणेणावचिट्ठइ। पुणो एवं पि समय

आपत्ति नहीं है क्योंकि उक्त स्थानको प्राप्त होनेके पूर्व ही यह स्थितिसत्कर्म गल जायगा। इसके बाद सम्यक्त्व उत्पन्न कराकर दो छयासठ सागर कालतक यथाविधि इस जीवको सम्यक्त्वके साथ रखा है सो इसके दो कारण बतलाये हैं। प्रथम तो यह कि इसके मिथ्यात्वका नूतन बन्ध नहीं होता और दूसरा यह कि यह जीव एकेन्द्रिय पर्यायके शेष रहे संचयको तो गलाता ही है साथ ही साथ एकेन्द्रिय पर्यायके बाद त्रस पर्यायमें आनेपर जो सम्यक्त्वको प्राप्त करके पूर्वतक मिथ्यात्वका नूतन बन्ध हुआ है उसे भी यथाशक्य निर्जीर्ण करता है। इसके बाद इसे मिथ्यात्वमें ले जाकर मिथ्यात्वका वहाँके योग्य उत्कृष्ट बन्ध कराये और आबाधाके अन्तिम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व दे। मिथ्यात्वको प्राप्त करनेके प्रथम समयमें यह जघन्य स्वामित्व न बतलाकर जो आबाधाके अन्तिम समयमें बतलाया है सो इसके दो कारण बतलाये हैं। प्रथम तो यह कि मिथ्यात्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयसे लेकर जितने स्थान ऊपर जाकर आबाधाका अन्तिम समय प्राप्त होता है उतने पर्योंकी उसमें हानि देखी जाती है और दूसरा यह कि अपकर्षण उत्कर्षणके द्वारा भी उसका द्रव्य कम हो जाता है। इस प्रकार इन दो कारणोंको देखकर आबाधाके अन्तिम समयमें ही जघन्य स्वामित्व दिया है।

§ ७०६ यहाँ पर संचयानुगमका विचार करनेपर यह यथानिषेकस्थितिप्राप्त जघन्य द्रव्य कितने कालमें संचित होता है ऐसा पूछनेपर अन्तर्मुहूर्त कालमें संचित होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिये। खुलासा इस प्रकार है—स्थावरकाय पर्यायसे निकलकर असंज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त कालतक एक हजार सागरप्रमाण मिथ्यात्वकी स्थितिको बाँधता हुआ यथा-निषेकस्थितिका संचय करता है। फिर देवोंमें उत्पन्न होकर वहाँ भी अपर्याप्त कालतक अन्तः कोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थितिबन्ध करके संचय करता है। फिर भी पर्याप्त होनेपर जबतक यह जीव सम्यक्त्व ग्रहणके योग्य होता है तबतक संचय करता है। इसप्रकार अन्तर्मुहूर्त कालतक होनेवाला संचय प्राप्त हो जाता है। इसके आगे सम्यक्त्वगुणकी प्रधानतासे मिथ्यात्वकी बन्धव्युच्छित्ति हो जाती है, इसलिये संचय नहीं प्राप्त होता। अब यह जो अन्तर्मुहूर्तप्रमाण समयप्रबद्धोंका द्रव्य है सो इसमेंसे सम्यक्त्वके साथ दो छयासठ सागर कालतक परिभ्रमण करनेवाले और संख्यात भाग अधिक एक आवलिके अर्धच्छेदप्रमाण गुणहानियाँ ऊपर चढ़े हुए जीवके संख्यात आवलिप्रमाण समयप्रबद्धोंका नाश होकर एक समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्य शेष रहता है। फिर

पबद्धमेत्तसेसदव्वमसंखेज्जाओ गुणहाणीओ गालिय पच्छा मिच्छत्तं गंतूणाबाहाचरिमसमए समयपबद्धस्स असंखेज्जभागमेत्तं होदूण जहाणिसेयसरूवेण जहण्णयं होदि ति।

§ ७१०. एदस्स भागहारपमाणाणुगमं वत्तइस्सामो। तं जहा—एयं समयपबद्धं ठविय पुणो एदस्स संखेज्जावलियगुणगारे ठविदे असण्णिपंचिदिएसु देवेसु च उववज्जिय अंतोमुहुत्तमेत्तकालं करिय संचयदव्वं होइ। पुणो एदस्स बेछावट्ठिसागरोवमब्भंतरणाणागुणहाणिं विरलिय विगं करिय अण्णोण्णब्भत्थरासिम्मि भागहारे ठविदे गलिदावसेसदव्वमागच्छइ। पुणो एदमहियारगोवुच्छपमाणेण कीरमाणे दिवड्ढगुणहाणिमेत्तं होइ त्ति दिवड्ढगुणहाणिभागहारे ठविदे अहियारगोवुच्छमागच्छइ। इमं बेछावट्ठिसागरोवमकालं सव्वमोकड्डणाए णासेइ त्ति। पुणो वि ओकड्डुक्कड्डणभागहारवेतिभागायामेणुप्पाइदणाणागुणहाणिं विरलिय विगं करिय अण्णोण्णब्भासणिप्पण्णासंखेज्जलोगमेत्तरासिम्मि भागहारसरूवेण ठिदे ओकड्डिदसेसं जहाणिसेयसरूवमहियारट्ठिदिदव्वमागच्छइ। एवमागच्छइ त्ति कट्टु बेछावट्ठिसागरोवमणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी दिवड्ढगुणहाणी असंखेज्जलोगा च अण्णोण्णपदुप्पण्णा संखेज्जावलियोवट्टिदा समयपबद्धस्स भागहारो भागलद्धं च पयदजहण्णसामित्तविसईकयं दव्वं होइ।

यह जो एक समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्य शेष रहा है सो उसमेंसे भी असंख्यात गुणहानियोंको गलाकर अनन्तर मिथ्यात्वमें जाकर आबाधाके अन्तिम समयमें जो एक समयप्रबद्धका असंख्यातवाँ भाग शेष रहता है वही यथानिषेक जघन्य द्रव्य है ऐसा यहाँ समझना चाहिये।

§ ७१० अब इसके भागहारके प्रमाणका विचार करते हैं। यथा—एक समयप्रबद्धको स्थापित करके फिर इसके संख्यात आवलिप्रमाण गुणकारके स्थापित करनेपर असंज्ञी पचेन्द्रियों और देवोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर जितने द्रव्यका सचय होता है उसका प्रमाण आता है। फिर इसकी दो छयासठ सागरके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंको विरलन करके और दूना करके परस्पर गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो उसे उक्त राशिके भागहाररूपसे स्थापित करनेपर गलकर शेष बचे हुये द्रव्यका प्रमाण प्राप्त होता है। फिर इसके अधिकृत गोपुच्छाके बराबर हिस्से करनेपर वे डेढ गुणहानिप्रमाण प्राप्त होते हैं, इसलिए डेढ गुणहानिको भागहार स्थापित करनेपर अधिकृत गोपुच्छा प्राप्त होती है। दो छयासठ सागर कालतक अपकर्षणके द्वारा इसका भी नाश होता रहता है, इसलिये फिर भी अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके दो बटे तीन भागके भीतर जितनी नाना गुणहानियाँ प्राप्त हों उनका विरलन करके और दूना करके परस्पर गुणा करनेसे उत्पन्न हुई असंख्यात लोकप्रमाण राशिको भागहाररूपसे स्थापित करनेपर अपकर्षण होनेके बाद शेष बचा हुआ यथानिषेकरूप अधिकृत स्थितिका द्रव्य आता है। इस प्रकार अधिकृत स्थितिका द्रव्य प्राप्त होता है ऐसा मानकर दो छयासठ सागरके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि डेढ गुणहानि और असंख्यात लोक इनको परस्पर गुणा करके जो उत्पन्न हो उसमें संख्यात आवलियोंका भाग देनेपर जो लब्ध आवे वह एक समयप्रबद्धका भागहार होता है और इस भागहारका एक समयप्रबद्धमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विषयभूत द्रव्य होता है।

§ ७११ संपहि एदेणेव गयत्थं सम्मत्तस्स वि जहाणिसेयट्ठिदिपत्तयजहण्ण-सामित्तं परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ जेण मिच्छत्तस्स रचिदो जधाणिसेओ तस्स चेव जीवस्स सम्मत्तस्स जधाणिसेओ कायव्वो। णवरि तिस्से उक्कस्सियाए सम्मत्तद्धाए चरिमसमए तस्स चरिमसमयसम्माइट्ठिस्स जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं।

§ ७१२ जेण जीवेण मिच्छत्तस्स जहण्णओ जहाणिसेओ पुव्वुत्तविहाणेण विरइओ तस्सेव जीवस्स सम्मत्तस्स वि जहण्णओ जहाणिसेओ कायव्वो। णवरि तिस्से उक्कस्सियाए बेछावट्ठिसागरोवमपमाणाए सम्मत्तद्धाए चरिमसमए वट्टमाणस्स तस्स चरिमसमयसम्माइट्ठिस्स पयदजहण्णसामित्तं कायव्वं, अण्णहा तव्विहाणोवाया भावादो। तं जहा—पुव्वविहाणेणागंतूण पढमछावट्ठिं भमिय पुणो विदियछावट्ठीए अंतोमुहुत्तावसेसे दंसणमोहक्खवणमब्भुट्ठिय अहियारट्ठिदिदव्वं गुणसेढिणिज्जराए णासेमाणो उदयावलियबाहिरट्ठिदमिच्छत्तचरिमफालिदव्वं सव्वं समट्ठिदीए सम्मामिच्छत्तस्सुवरि संकामिय पुणो तेणेव विहिणा सम्मामिच्छत्तचरिमफालिदव्वं पि सव्वं सम्मत्तस्सुवरि संकामेदि। एवं तिण्हं पि जहाणिसेयट्ठिदीओ एकदो कादूण पुणो

§ ७११ अब सम्यक्त्वके यथानिषेकस्थितिप्राप्तका जघन्य स्वामित्व भी इसीसे गतार्थ है यह बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ जिसने मिथ्यात्वका यथानिषेकप्राप्त द्रव्य किया है उसी जीवके सम्यक्त्वके यथानिषेकका कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वके उत्कृष्ट कालके अन्तिम समयमें उस सम्यग्दृष्टिके रहनेपर वह अपने अन्तिम समयमें यथानिषेकस्थितिप्राप्त जघन्य द्रव्यका स्वामी है।

§ ७१२. जिस जीवने मिथ्यात्वका जघन्य यथानिषेक द्रव्य पूर्वोक्तविधिसे प्राप्त किया है उसी जीवके सम्यक्त्वके जघन्य यथानिषेकद्रव्यका भी कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि जो दो छ्यासठ सागरप्रमाण सम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल है उसके अन्तिम समयमें विद्यमान हुए उस सम्यग्दृष्टि जीवके अन्तिम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विधान करना चाहिये, अन्यथा प्रकृत जघन्य स्वामित्वके विधान करनेका और कोई उपाय नहीं है। खुलासा इस प्रकार है—कोई एक जीव है जिसने पूर्वोक्त विधिसे आकर प्रथम छ्यासठ सागर काल तक परिभ्रमण किया। फिर दूसरे छ्यासठ सागरमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिये उद्यत होकर वह अधिकृत स्थितिके द्रव्यका गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा नाश करने लगा और ऐसा करते हुए वह उदयावलिके बाहर स्थित हुए मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिके सब द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वकी समान स्थितिमें संक्रमित करके फिर उसी विधिसे सम्यग्मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिके सब द्रव्यका भी सम्यक्त्वके ऊपर संक्रमित करता है। इस प्रकार तीनों ही कर्मोंकी यथानिषेक स्थितियोंको एकत्रित करके फिर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके अन्तिम समयमें उन तीनों ही

❀ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णयं णिसेयादो उदयादो च ट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ७१७. सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

❀ उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स तप्पाओग्गुक्कस्ससंकिलिट्ठस्स ।

§ ७१८. सुगममेदं सुत्तं ।

❀ अणंताणुबंधीणं णिसेयादो अधाणिसेयादो च जहण्णयं ट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ७१९. सुगममेद पुच्छावक्कं ।

❀ जो एइंदियट्ठिदिसंतकम्मेण जहण्णएण पंचिंदिए गओ । अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो । अणंताणुबंधिं विसंजोइत्ता पुणो पडिवदिदो । रहस्स-

---

है कि दूसरे छ्यासठ सागरमें जब अन्तर्मुहूर्त काल शेष रह जाय तब इस जीवको सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें ले जाय। और वहाँ जब उसका अन्तिम समय प्राप्त हो तब प्रकृत जघन्य स्वामित्व कहना चाहिये। सम्यग्मिथ्यात्वका उदय सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें ही होता है, इसलिये तो इसे उक्त गुणस्थानमें ले गये हैं। तथा सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें जितना स्थान ऊपर जाकर प्रकृत जघन्य स्वामित्व प्राप्त होता है उतने गोपुच्छविशेषोंको कम करनेके लिये यह स्वामित्व सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानके प्रथम समयमें न बतलाकर उसके अन्तिम समयमें बतलाया है।

※ सम्यग्मिथ्यात्वके निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिद्रव्यप्राप्त द्रव्योंका जघन्य स्वामी कौन है।

§ ७१७ यह पृच्छासूत्र सुगम है।

※ जो उपशमसम्यक्त्वसे पीछे आकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशसे युक्त प्रथम समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव है वह उक्त स्थितिप्राप्त द्रव्योंका जघन्य स्वामी है।

§ ७१८. यह सूत्र सुगम है।

विशेषार्थ—इस आशयका सूत्र अनेक बार आ चुका है, इसलिये वहाँ जिस प्रकार वर्णन किया है उसी प्रकार प्रकृतमें भी करना चाहिये। किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वका उदय मिश्र गुणस्थानमें ही होता है, इसलिये उपशमसम्यक्त्वसे च्युत होने पर इस जीवको सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें ही ले जाना चाहिये, यहाँ इतनी विशेषता है। शेष कथन सुगम है।

※ अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य निषेकस्थितिप्राप्त और यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्योंका स्वामी कौन है ?

§ ७१९ यह पृच्छासूत्र सुगम है।

※ जिसने एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मके साथ पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर और अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके अनन्तानुबन्धीकी विसयोजना की।

कालेण संजोएऊण सम्मत्तं पडिवण्णो। बेछावट्ठिसागरोवमाणि अणुपालियूण मिच्छत्तं गदो तस्स आवलियमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयं णिसेयादो अधा णिसेयादो च ट्ठिदिपत्तयं।

§ ७२० एइंदियट्ठिदिसंतकम्मस्स जहण्णयस्सेत्थालंबणमणुवजोगी, अणंताणुबंधिं विसंजोयणाए णिस्संतीकरिय पुणो पडिवादेण अइरहस्सकालपडिबद्धेण संजोइय पडिवण्णवेदयसम्मत्तम्मि अंतोमुहुत्तमेत्तणवकबंधं घेत्तूण परिभमिदबेछावट्ठिसागरोवमंतम्मि सामित्तविहाणादो? ण एस दोसो, सेसकसायाणं धुवावत्थाए अधापवत्तेण समट्ठिदिसंकमपवुत्तिणिवारणट्ठं तदब्भुवगमादो। ण च समट्ठिदिसंकमस्स अहाणिसेयट्ठिदिपत्तयत्ताभावमवलंबिय पच्चवट्ठेयं, अहाणिसित्तसरूवेण समट्ठिदीए संकंतस्स पदेसग्गस्स तब्भावाविरोहादो। तम्हा गुणिदकम्मंसिओ वा खविदकम्मंसिओ वा एइंदियजहण्णट्ठिदिसंतकम्मेण सह गदो असण्णिपंचिंदिएसु तप्पाओग्गजहण्णंतोमुहुत्तमेत्तमीविएसुववज्जिय समयाविरोहेण देवेसुववण्णो। तदो अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं घेत्तूण अणंताणुबंधिं विसंजोइय पुणो अंतोमुहुत्तेण संजुत्तो होदूण सव्वरहस्सेण

फिर जो सम्यक्त्वसे च्युत होकर और अनन्तानुबन्धीका संयोजन करके अति शीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर जो दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन करके मिथ्यात्वमें गया। उसे वहाँ गए जब एक आवलि काल होता है तब वह जीव जघन्य निषेकस्थितिप्राप्त और यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्योंका स्वामी है।

§ ७२० शंका—प्रकृतमें एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मका आलम्बन करना अनुपयोगी है क्योंकि विसंयोजना द्वारा अनन्तानुबन्धीको निःसत्त्व करके फिर सम्यक्त्वसे च्युत होकर और स्वल्प कालद्वारा अनन्तानुबन्धीसे पुनः संयुक्त होकर जो वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है और जिसने अन्तर्मुहूर्तप्रमाण नवक समयप्रबद्धोंका ग्रहण करके दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण किया है उसके प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विधान किया है। इस शंकाका आशय यह है कि जब कि विसंयोजनाके बाद पुनः संयुक्त होने पर दो छयासठ सागरके बाद प्रकृत जघन्य स्वामित्व कहा है तब इस जीवका प्रारम्भमें एकेन्द्रियके योग्य जघन्य सत्कर्मवाला बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जब यह जीव अनन्तानुबन्धीसे पुनः संयुक्त होता है तब अधःप्रवृत्तसंक्रमणके द्वारा इसमें शेष कषायोंका प्रवृत्त समस्थितिसंक्रम न प्राप्त हो एतदर्थ यह बात स्वीकार की है।

यदि कहा जाय कि जो शेष कषायोंका समस्थितिसंक्रम हुआ है उसमें यथानिषेकस्थितिपना नहीं पाया जाता है सो ऐसा निश्चय करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि यथानिषेकरूपसे समस्थितिमें जो द्रव्य संक्रान्त होता है उसे यथानिषेकस्थितिरूप माननेमें कोई बाधा नहीं आती। इसलिये गुणितकर्मांश या क्षपितकर्मांश जो जीव एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मके साथ तत्प्रायोग्य जघन्य अन्तर्मुहूर्तप्रमाण आयुवाले असंज्ञियोंमें उत्पन्न होकर यथाविधि देवोंमें उत्पन्न हुआ। तदनन्तर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके और अनन्तानुबन्धीका

अक्खीणदंसणमोहचरिमसमयम्मि तिसु वि ट्ठिदीसु सम्मत्तसरूवेणुदयमागदासु जहण्णय-मधाणिसेयट्ठिदिपत्तय होइ, चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्सेव चरिमसमयसम्माइट्ठि त्ति सुत्ते विवक्खियत्तादो।

❀ णिसेयादो च उदयादो च जहण्णयं ट्ठिदिपत्तयं कस्स ?

§ ७१३. एत्थ सम्मत्तस्से त्ति अहियारसंबंधो। सुगममण्ण।

❀ उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स पढमसमयवेदयसम्माइट्ठिस्स तप्पाओग्ग-उक्कस्ससंकिलिट्ठस्स तस्स जहण्णयं।

§ ७१४. एदस्स सुत्तस्स मिच्छत्तसामित्तसुत्तस्सेव णिरवयवा अत्थपरूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो। एत्तिओ पुणो विसेसो—तत्थ पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स सामित्त जाद, एत्थ पढमसमयवेदयसम्माइट्ठिस्से त्ति।

स्थितियोंके सम्यक्त्वरूपसे उदयमें आनेपर जघन्य यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य होता है। यहाँ सूत्रमें जो 'चरिमसमयसम्माइट्ठिस्स' पद दिया है सो इससे दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाला अन्तिम समयवर्ती जीव ही विवक्षित है।

विशेषार्थ—यहाँ सम्यक्त्वके यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी बतलाया है। सो इसे प्राप्त करनेके लिये और सब विधि तो मिथ्यात्वके समान है किन्तु इतनी विशेषता है कि जब उक्त जीवको सम्यक्त्वके साथ दूसरे छयासठ सागरमें परिभ्रमण करते हुए अन्तर्मुहूर्त शेष रह जाय तब उससे क्षायिकसम्यग्दर्शनकी प्राप्ति करावे और ऐसा करते हुए जब सम्यक्त्व प्रकृतिके उदयका अन्तिम समय प्राप्त होता है तब यथानिषेकस्थितिप्राप्तका जघन्य द्रव्य होता है।

※ सम्यक्त्वके निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी कौन है ?

§ ७१३ इस सूत्रमें 'सम्मत्तस्स' इस पदका अधिकारवश सम्बन्ध होता है। शेष कथन सुगम है।

※ जो उपशमसम्यक्त्वसे पीछे आकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशसे युक्त प्रथम समयवर्ती वेदकसम्यग्दृष्टि जीव है वह उक्त दोनों स्थितिप्राप्त द्रव्योंका जघन्य स्वामी है।

§ ७१४ जिस प्रकार मिथ्यात्वविषयक स्वामित्व सूत्रका सर्वांगीण कथन किया है उसी प्रकार इस सूत्रका भी कथन करना चाहिए, क्योंकि इन दोनोंके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वविषयक स्वामित्वका कथन करते समय प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके स्वामित्व प्राप्त कराया गया था किन्तु यहाँ पर वह प्रथम समयवर्ती वेदक-सम्यग्दृष्टिके प्राप्त कराना चाहिये।

विशेषार्थ—आशय यह है कि मिथ्यात्वकी अपेक्षा निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थिति-प्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामित्व लानेके लिये जीवको उपशमसम्यक्त्वसे छह आवलिकालके शेष

§ ७१५ संपहि सम्मत्तस्स जहाणिसेयट्ठिदिपत्तयभंगेण सम्मामिच्छत्तजहाणिसेयट्ठिदिपत्तयस्स सामित्तपरूवणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** सम्मत्तस्स जहण्णओ जहाणिसेओ जहा परूविओ तीए चेव परूवणाए सम्मामिच्छत्तं गओ। तदो उक्कस्सियाए सम्मामिच्छत्तद्धाए चरिमसमए जहण्णयं सम्मामिच्छत्तस्स जहाणिसेयट्ठिदिपत्तयं।**

§ ७१६ सम्मत्तस्स जहण्णओ जहाणिसेओ जहा परूविदो, तीए चेव परूवणाए अणूणाहियाए सम्मामिच्छत्तस्स वि पयदजहण्णसामिओ परूवेयव्वो। णवरि सव्वुक्कस्ससम्मत्तद्धाए चरिमसमए सम्मत्तस्स णिरुद्धजहण्णसामित्तं जादं। एत्थ पुण बिदियछावट्ठिअब्भंतरे अंतोमुहुत्तावसेसे सम्मामिच्छत्तं पडिवण्णस्स तप्पाओग्गुक्कस्संतोमुहुत्तमेत्तसम्मामिच्छत्तद्धाए चरिमसमयम्मि पयदजहण्णसामित्तं होइ त्ति एत्तिओ चेव विसेसो।

रहने पर सासादनमें ले जाकर फिर मिथ्यात्वमें ले जाया गया था और तब मिथ्यात्वके प्रथम समयमें उक्त जघन्य स्वामित्व प्राप्त कराया गया था। किन्तु सम्यक्त्वका प्रथम मिथ्यात्व गुणस्थानमें सम्भव नहीं है, इसलिये जिस जीवको सम्यक्त्वकी अपेक्षा निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामित्व प्राप्त कराना हो उसे उपशमसम्यक्त्वका काल पूरा होनेपर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशरूपके साथ वेदकसम्यक्त्वमें ले जाय। इस प्रकार जब यह जीव वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करता है तब इसके उक्त वेदकसम्यक्त्वके प्रथम समयमें जघन्य स्वामित्व होता है। यहाँ सम्यक्त्वकी कम से कम उदीरणा प्राप्त करने के लिये तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशके साथ वेदकसम्यक्त्व प्राप्त कराया गया है।

§ ७१५. अब सम्यक्त्वके यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यके जघन्य स्वामित्वके समान ही सम्यग्मिथ्यात्वके यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामित्व है यह बतलानेके लिये आगेका सूत्र कहते हैं—

*** सम्यक्त्वके जघन्य यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यकी जिस प्रकार प्ररूपणा की है उसी प्ररूपणाके अनुसार कोई एक जीव सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। फिर जब वह सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट कालके अन्तिम समयमें विद्यमान रहता है तब वह सम्यग्मिथ्यात्वके यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी है।**

§ ७१६ जिस प्रकार सम्यक्त्वके जघन्य यथानिषेक द्रव्यका प्ररूपण किया न्यूनाधिकतासे रहित उसी प्ररूपणाके अनुसार सम्यग्मिथ्यात्वके प्रकृत जघन्य स्वामित्वका भी कथन करना चाहिये। किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वके सर्वोत्कृष्ट कालके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वका प्रकृत जघन्य स्वामित्व प्राप्त हुआ था। किन्तु यहाँ पर दूसरे छयासठ सागरके भीतर अन्तर्मुहूर्त कालके शेष रहने पर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुए जीवके सम्यग्मिथ्यात्वके तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त कालके अन्तिम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है, इतनी ही विशेषता है।

विशेषार्थ—सम्यग्मिथ्यात्वके यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यके जघन्य स्वामित्वको प्राप्त करने के लिए और सब विधि सम्यक्त्व प्रकृतिके समान जानना चाहिये। किन्तु यहाँ इतनी विशेषता

⊛ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णयं णिसेयादो उदयादो च हिदिपत्तयं कस्स ?

§ ७१७. सुगममेद पुच्छासुत्तं ।

⊛ उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स तप्पाओग्गुक्कस्ससंकिलिट्ठस्स ।

§ ७१८. सुगममेदं सुत्तं ।

⊛ अणंताणुबंधीणं णिसेयादो अधाणिसेयादो च जहण्णयं हिदिपत्तयं कस्स ?

§ ७१९. सुगममेद पुच्छावक्कं ।

⊛ जो एइंदियट्ठिदिसंतकम्मेण जहण्णएण पंचिंदिए गओ । अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो । अणंताणुबंधिं विसंजोइत्ता पुणो पडिवदिदो । रहस्स-

---

है कि दूसरे छयासठ सागरमें जब अन्तर्मुहूर्त काल शेष रह जाय तब इस जीवको सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें ले जाय । और वहाँ जब उसका अन्तिम समय प्राप्त हो तब प्रकृत जघन्य स्वामित्व कहना चाहिये । सम्यग्मिथ्यात्वका उदय सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें ही होता है, इसलिये ता इसे उक्त गुणस्थानमें ले गये हैं । तथा सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमे जितना स्थान ऊपर जाकर प्रकृत जघन्य स्वामित्व प्राप्त होता है उतने गोपुच्छविशेषोंको कम करनेके लिये यह स्वामित्व सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानके प्रथम समयमें न बतलाकर उसके अन्तिम समयमे बतलाया है ।

*** सम्यग्मिथ्यात्वके निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिद्रव्यप्राप्त द्रव्योंका जघन्य स्वामी कौन है ।**

§ ७१७ यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

*** जो उपशमसम्यक्त्वसे पीछे आकर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्लेशसे युक्त प्रथम समयवर्ती सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव है वह उक्त स्थितिप्राप्त द्रव्योंका जघन्य स्वामी है ।**

§ ७१८. यह सूत्र सुगम है ।

विशेषार्थ—इस आशयका सूत्र अनेक वार आ चुका है, इसलिये वहाँ जिस प्रकार वर्णन किया है उसी प्रकार प्रकृतमे भी करना चाहिये । किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वका उदय मिश्र गुणस्थानमें ही होता है, इसलिये उपशमसम्यक्त्वसे च्युत होने पर इस जीवको सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें ही ले जाना चाहिये, यहाँ इतनी विशेषता है । शेष कथन सुगम है ।

*** अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य निषेकस्थितिप्राप्त और यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्योंका स्वामी कौन है ?**

§ ७१९ यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

*** जिसने एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मके साथ पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर और अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना की ।**

कालेण संजोएऊण सम्मत्तं पडिवण्णो। वेछावट्ठिसागरोवमाणि अणुपालियूण मिच्छत्तं गओ तस्स आवलियमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयं णिसेयादो जहा-णिसेयादो च ट्ठिदिपत्तयं।

§ ७२० एइंदियट्ठिदिसंतकम्मस्स जहण्णयस्सेयासंभवमणुगमोमी, अणंताणु-बंधिं विसंजोयणाए णिस्संतीकरिय पुणो पडिवादेण सासणसम्मत्तपडिवज्जेण संजोइय पडिवण्णवेदयसम्मत्तम्मि अंतोमुहुत्तमेत्तणवकबंधं घेत्तूण परिभमिदवेछावट्ठिसागरोवम-चरिमम्मि सामित्तविहाणादो? ण एस दोसो, सेसकसायाणं सुत्तावत्थाए अधापवत्तेण समट्ठिदिसंकमपडिवत्तिणिवारणट्ठं तदब्भुवगमादो। ण च समट्ठिदिसंकमस्स जहाणिसेय-ट्ठिदिपत्तयत्ताभावमवलंबिय पच्चवट्ठेयं, जहाणिसित्तसरूवेण समट्ठिदीए संकंतस्स पदेसग्गस्स तदाभावाविरोहादो। तम्हा गुणिदकम्मंसिओ वा खविदकम्मंसिओ वा एइंदियजहण्णट्ठिदिसंतकम्मेण सह गदो असण्णिपंचिंदिएसु तप्पाओग्गजहण्णंतो-मुहुत्तमेत्तजीविएसुववज्जिय समयाविरोहेण देवेसुववण्णो। तदो अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं घेत्तूण अणंताणुबंधिं विसंजोइय पुणो अंतोमुहुत्तेण संजुत्तो होदूण सव्वरहस्सेण

फिर जो सम्यक्त्वसे च्युत होकर और अनन्तानुबन्धीका संयोजन करके अति शीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर जो दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन करके मिथ्यात्वमें गया। उसे वहाँ गए जब एक आवलि काल होता है तब वह जीव जघन्य निषेकस्थितिप्राप्त और यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्योंका स्वामी है।

§ ७२ शंका—प्रकृतमें एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मका आलम्बन करना अनुपयोगी है, क्योंकि विसंयोजना द्वारा अनन्तानुबन्धीको निःसत्त्व करके फिर सम्यक्त्वसे च्युत होकर और स्वस्थ कालद्वारा अनन्तानुबन्धीसे पुनः संयुक्त होकर जो वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है और जिसने अन्तर्मुहूर्तप्रमाण नवक समयप्रबद्धोंको ग्रहण करके दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण किया है उसके प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विधान किया है। इस शंकाका आशय यह है कि जब कि विसंयोजनाके बाद पुनः संयुक्त होने पर दो छयासठ सागरके बाद प्रकृत जघन्य स्वामित्व कहा है तब इस जीवको आरम्भमें एकेन्द्रियके योग्य जघन्य सत्कर्मवाला बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि जब यह जीव अनन्तानुबन्धीसे पुनः संयुक्त होता है तब अधःप्रवृत्तसंक्रमणके द्वारा इसमें शेष कषायोंका प्रचुर समस्थितिसंक्रम न प्राप्त हो एतदर्थ यह बात स्वीकार की है।

यदि कहा जाय कि जो शेष कषायोंका समस्थितिसंक्रम हुआ है उसमें यथानिषेक-स्थितिपना नहीं पाया जाता है सो ऐसा निश्चय करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि यथानिषेक-रूपसे समस्थितिमें जो द्रव्य संक्रान्त होता है उसे यथानिषेकस्थितिरूप माननेमें कोई बाधा नहीं आती। इसलिये गुणितकर्मांश या क्षपितकर्मांश जो जीव एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थिति-सत्कर्मके साथ तत्प्रायोग्य जघन्य अन्तर्मुहूर्तप्रमाण आयुवाले असंज्ञियोंमें उत्पन्न होकर यथाविधि देवोंमें उत्पन्न हुआ। तदनन्तर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके और अनन्तानुबन्धीकी

कालेण सम्मत्तं पडिवण्णो। बेछावट्ठिसागरोवमाणि समयाविरोहेण सम्मत्तमणुपालिय तदवसाणे मिच्छत्तं गदो तस्सावलियमिच्छाइट्ठिस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ। तत्तो पर सेसकसायाण समट्ठिदिसंकमेण पडिच्छिदबहुदव्वाबट्ठाणेण जहण्णभावाणुववत्तीदो।

❀ उदयट्ठिदिपत्तयं जहण्णयं कस्स ?

§ ७२१. अणताणुबंधिग्गहणमिहाणुवट्टदे। सेसं सुगमं।

❀ एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो। तम्हि संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता एइंदिए गओ। असंखेज्जाणि वस्साणि अच्छियूण उवसामयसमयपबद्धेसु गलिदेसु

विसयोजना करके फिर अन्तर्मुहूर्तमें अनन्तानुबन्धीसे संयुक्त होकर अति स्वल्प कालद्वारा सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। फिर दो छ्यासठ सागर काल तक यथाविधि सम्यक्त्वका पालन करके अन्तमें मिथ्यात्वमें गया उसके मिथ्यात्वमें गये एक आवलि कालके अन्तमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है। एक आवलि कालके बाद जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं होता इसका कारण यह है कि एक आवलिके बाद शेष कषायोंका समस्थितिसक्रमण होकर अनन्तानुबन्धीमें बहुत द्रव्य प्राप्त हो जाता है, अतः जघन्यपना नहीं बन सकता।

विशेषार्थ—यहाँ अनन्तानुबन्धीके निषेकस्थितिप्राप्त और यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी बतलाया है। जिसे यह स्वामित्व प्राप्त कराना है उसका प्रारम्भमें एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाला होना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि इससे विसयोजनाके बाद जब यह जीव अनन्तानुबन्धीसे पुनः सयुक्त होता है तब इसके समस्थिति-संक्रमण अधिक नहीं पाया जाता है। यदि ऐसा न मानकर इसके स्थितिसत्कर्मको सञ्ज्ञीके योग्य मान लिया जाता तो इससे निषेकस्थितिप्राप्त और यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य बहुत हो जाता और तब उक्त द्रव्यको जघन्य प्राप्त करना सम्भव न होता। यही कारण है कि प्रकृतमें एकेन्द्रियके योग्य जघन्य स्थितिसत्कर्मवाले जीवको ग्रहण करके प्रकृत जघन्य स्वामित्व ग्रहण किया गया है। फिर भी यह वचन उपलक्षणरूप है जिससे यहाँ ऐसा जीव भी लिया जा सकता है जिसका स्थितिसत्कर्म अधिकसे अधिक साधिक दो छ्यासठ सागरप्रमाण हो, क्योंकि जिस स्थल पर जाकर जघन्य स्वामित्व प्राप्त करना है उससे एक समय कम स्थितिके रहते हुए संयुक्त अवस्थामें समस्थितिसक्रमणके द्वारा निषेकस्थितिप्राप्त और यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यके अधिक होनेका डर नहीं है। शेष कथन सुगम है।

❀ उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी कौन है ?

§ ७२१ इस सूत्रमें 'अणताणुबधि' इस पदका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि यहाँ उसकी अनुवृत्ति पाई जाती है। शेष कथन सुगम है।

❀ जो कोई एक जीव एकेन्द्रियके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें आया। वहाँ सयमासयम और संयमको बहुतबार प्राप्त करके और चार बार कषायोंका उपशम करके एकेन्द्रियोंमें गया। वहाँ असख्यात वर्षों तक रहकर उपशामक-सम्बन्धी समयप्रबद्धोंके गल जाने पर पचेन्द्रियों में गया। वहाँ अन्तर्मुहूर्तमें अनन्तानु-

पंचिंदिएसु गदो। अंतोमुहुत्तेण अणंताणुबंधिं विसंजोइत्ता तदो संजोएऊण जहण्णेण अंतोमुहुत्तेण पुणो सम्मत्तं घेत्तूण वेछावट्ठिसागरोवमाणि अणंताणुबंधियो गालिदा। तदो मिच्छत्तं गदो तस्स आवलियमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयमुदयट्ठिदिपत्तयं।

§ ७२२ ण एत्थ पुणा वि विसंजोइज्जमाणाणमणंताणुबंधीणं खविदकम्मंसियत्तं णिरत्थयमिदि णासंकणिज्जं, संजुत्तावत्थाए सेसकसायपडिबो पडिच्छिज्जमाण-दव्वस्स जहण्णीकरणेण फलोवलंभादो। तम्हा जो जीवो एइंदियजहण्णपदेससंतकम्मेण सह तसेसु आगदो। तत्थ य संजमासंजमादीणमसइं लंभेण चदुक्खुत्तो कसायाणमुवसामणाए च गुणसेढिणिज्जरणं बहुदव्वमगालेदूण काऊण पुणो एइंदिएसु पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तकालमच्छिय णिग्गालिदोवसामयसमयपबद्धो समयाविरोहेण पंचिंदिएसुववज्जिय अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तमाहप्पपुरस्सरमणंताणुबंधिं विसंजोइय संजुत्तो सम्मत्तं सम्मत्तपडिलंभेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि अणट्ठिदीए गालिय पडिवदिदो तस्स आवलियमिच्छाइट्ठिस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ त्ति सिद्धं।

बन्धीकी विसंयोजना करके तदनन्तर उससे संयुक्त हो जघन्य अन्तर्मुहूर्तकाल द्वारा फिरसे सम्यक्त्वको प्राप्त करके दो छयासठ सागर काल तक अनन्तानुबन्धियोंको गलाता रहा। तदनन्तर मिथ्यात्वमें गया। उसे वहाँ गये जब एक आवलि काल होता है तब वह उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी है।

§ ७२२. यदि यहाँ ऐसी आशंका की जाय कि जब अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना होनेवाली है तब उन्हें पूर्वमें ही क्षपितकर्मांश बतलाना निरर्थक है तो ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि संयुक्त अवस्थामें अनन्तानुबन्धीमें शेष कषायोंका द्रव्य जघन्य होकर प्राप्त होता है, इसलिये इसकी सफलता है। अतः जो जीव एकेन्द्रियके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें आया और वहाँ संयमासंयमादिककी अनेकबार होनेवाली प्राप्ति द्वारा और चार बार हुई कषायोंकी उपशामना द्वारा गुणश्रेणिरूपसे बहुत द्रव्यको गलाकर फिर एकेन्द्रियोंमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक रहकर और वहाँ उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंको गलाकर यथाविधि पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ। फिर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त करके अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना की। फिर उससे संयुक्त होकर और अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त करके अधःस्थिति द्वारा दो छयासठ सागरप्रमाण स्थितियोंको गलाकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ उसके मिथ्यात्वको प्राप्त हुए एक आवलि कालके होने पर प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है यह बात सिद्ध होती है।

विशेषार्थ—यहाँ पूर्वमें क्षपितकर्मांशकी विधि बतलाकर फिर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कराई गई है। इस पर शंकाकारका यह कहना है कि जब आगे चलकर अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना होनेवाली ही है तब पूर्वमें क्षपितकर्मांशपनेके विधान करनेकी क्या सफलता है। इसका जो समाधान किया है उसका आशय यह है कि क्षपितकर्मांशकी विधि अन्य कषायों

❀ **बारसकसायाणं णिसेयट्ठिदिपत्तयमुदयट्ठिदिपत्तयं च जहण्णयं कस्स ?**

§ ७२३. सुगमं ।

❀ **जो उवसंतकसाओ सो मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स जहण्णयं णिसेयट्ठिदिपत्तयमुदयट्ठिदिपत्तयं च ।**

§ ७२४. एदस्स सुत्तस्सत्थो उदयादो जहण्णझीणट्ठिदियसामित्तसुत्तस्सेव वक्खाणेयव्वो । णवरि एत्थ पढमसमयसामित्तविहाणं साहिप्पाओ मिच्छत्तस्सेव वत्तव्वो ।

❀ **अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं जहण्णयं कस्स ।**

§ ७२५. सुगमं ।

❀ **अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण तसेसु उववण्णो । तत्थ तप्पाओग्गुक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणस्स जद्देही आबाहा तावदिमसमए तस्स जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं । अइक्कंते काले कम्मट्ठिदिअंतो सइं पि तसो ण आसी ।**

पर भी लागू होती है। इससे यह लाभ होता है कि जब यह जीव अनन्तानुबन्धीसे संयुक्त होता है तब अन्य कषायोंका कम द्रव्य अनन्तानुबन्धीरूपसे संक्रमित होता है। शेष कथन सुगम है।

* बारह कषायोंके निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी कौन है।

§ ७२३ यह सूत्र सुगम है ?

* जो उपशान्तकषाय जीव मरकर देव हुआ है वह प्रथम समयवर्ती देव निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी है।

§ ७२४ जिस प्रकार उदयसे झीनस्थितिविषयक स्वामित्व सूत्रके अर्थका व्याख्यान किया है उसी प्रकार इस सूत्रके अर्थका व्याख्यान करना चाहिये। किन्तु यहाँ जो प्रथम समयमें स्वामित्वका विधान किया है सो मिथ्यात्वके समान इसका अभिप्राय सहित व्याख्यान करना चाहिये।

* यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी कौन है ?

§ ७२५ यह सूत्र सुगम है।

* अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ जो त्रसोंमें उत्पन्न हुआ है। किन्तु इसके पूर्व कर्मस्थितिप्रमाण कालके भीतर जो एक बार भी त्रस नहीं हुआ है। फिर वहाँ तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट स्थितिको बाँधते हुए जितनी आबाधा होती है उसके अन्तिम समयमें वह यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी है।

§ ७२६ एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे। तं जहा—जो जीवो सव्वावासयविसुद्धीए सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमणुपालिय अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णपदेससंतकम्मं काऊण तेण सह सण्णिपंचिंदिएसु उववण्णो। एसो च जीवो अइक्कंते काले कम्मट्ठिदीए अब्भंतरे सइं पि तसो ण आसी। कम्मट्ठिदिअब्भंतरे तसपज्जायपरिणामे को दोसो च? एइंदियजोगादो असंखेज्जगुणतसकाइयजोगेण तत्थुप्पज्जिय बहुदव्वसंचयं कुणमाणस्स णिरुद्धट्ठिदीए जहण्णभावाहिसेयाणुप्पत्तिदोसदंसणादो। तसकाइएसु आगंतूण सम्मत्तुप्पत्तिसंजमासंजमादिगुणसेढिणिज्जराहिं पयदणिसेयस्स जहण्णीकरणवावारेण लब्भमाणस्स लाहो दीसइ त्ति णासंकणिज्जं, ओकड्डुक्कड्डणभागहारादो जोगगुणगारस्स असंखेज्जगुणत्तेण अप्पाणिसेयवयस्स तत्थ णिज्जरादो आयस्स बहुत्तदंसणादो। तम्हा अइक्कंते काले कम्मट्ठिदिअब्भंतरे तसपज्जायपडिसेहो सफलो त्ति सिद्धं।

§ ७२७ एत्थ कम्मट्ठिदि त्ति भणिदे पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणब्भहिय एइंदियकम्मट्ठिदीए गहणं कायव्वं, सेसकम्मट्ठिदिअवलंबणे पयदोवजोगिफलविसेसाणुवलंभादो। जइ एवं पच्छा वि तसभावपरूवणा णिरत्थिया त्ति ण पच्चवट्ठेयं,

---

§ ७२६. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। जो इस प्रकार है—जो जीव समस्त आवश्यकोंकी विशुद्धिके साथ सूक्ष्मनिगोदियोंमें कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहा और अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्म को प्राप्त करके उसके साथ संज्ञी पंचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ। किन्तु यह जीव इसके पूर्व कर्मस्थितिप्रमाण कालके भीतर एक बार भी त्रस नहीं हुआ।

शंका—कर्मस्थिति कालके भीतर त्रस पर्यायके योग्य परिणामोंके होनेमें क्या दोष है?

समाधान—एकेन्द्रियके योगसे असंख्यातगुणे त्रसकायिकोंके योगके साथ त्रसोंमें उत्पन्न होकर बहुत द्रव्यका संचय करनेवाले जीवके विवक्षित स्थितिमें जघन्य यथानिषेककी प्राप्ति नहीं हो सकती है। यही बड़ा दोष है जिससे इस जीवको कर्मस्थिति कालके भीतर त्रसोंमें नहीं उत्पन्न कराया है। यदि ऐसी आशंका की जाय कि त्रसकायिकोंमें आकर सम्यक्त्वकी उत्पत्ति और संयमासंयम आदिके निमित्तसे होनेवाली गुणश्रेणिनिर्जराओंके द्वारा प्रकृत निषेकको जघन्य करनेमें लगे हुए जीवके लाभ दिखाई देता है सो ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षणरूप भागहारसे योगका गुणकार असंख्यातगुणा होनेके कारण यथानिषेक द्रव्यकी यहाँ निर्जराकी अपेक्षा आय बहुत देखी जाती है, इसलिये पिछले बीते हुए समयमें कर्मस्थितिके भीतर त्रसपर्यायका निषेध करना सफल है यह सिद्ध होता है।

§ ७२७. यहाँ सूत्रमें जो कर्मस्थिति पद निर्देश किया है सो उससे पल्यके असंख्यातवें भागसे अधिक एकेन्द्रियके योग्य कर्मस्थितिका ग्रहण करना चाहिये क्योंकि अन्य कर्मस्थितिका अवलम्बन करने पर प्रकृतमें उपयोगीरूपसे उसका कोई विशेष लाभ नहीं दिखाई देता है। यदि ऐसा है तो एकेन्द्रिय पर्यायसे निकलनेके बाद भी पीछेसे त्रसपर्यायमें उत्पन्न कराना निरर्थक है

उक्कड्डणाणिबंधणलाहस्स अंतोमुहुत्तपडिबद्धस्स तत्थ दंसणादो त्ति जाणावणट्ठमेद-मोइण्णं 'तत्थ तप्पाओग्गमुक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणस्स' इच्चादि। तत्थुप्पण्णपढमसमए चेव तप्पाओग्गुक्कस्ससंकिलेसेण तप्पाओग्गुक्कस्सट्ठिदिमंतोमुहुत्तमाबाहं काऊण बंधइ। एवं बंधमाणस्स जहेही एसा तप्पाओग्गुक्कस्सिया आबाहा तेत्तियमेत्तकालमुक्कड्डणाए वावदस्स तस्स तावदिमसमयतसस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ त्ति एसो एदस्स भावत्थो, उवरि सामित्तविहाणं पि तत्थ तसकाइयणवगबंधस्सावट्ठाणादो। एत्थ संचयादि-परूवणा जाणिय कायव्वा।

❀ एवं पुरिसवेद-हस्स-रइ-भय दुगुंछाणं।

सो ऐसा निश्चय करना भी ठीक नहीं है, क्योकि एक अन्तर्मुहूर्त काल तक होनेवाला उत्कर्षण-निमित्तक लाभ वहाँ देखा जाता है। और इसी बातके बतलानेके लिये सूत्रमें 'तत्थ तप्पाओग्ग-मुक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणस्स' इत्यादि वाक्य कहा है। त्रसोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें ही तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट सक्लेशके द्वारा तद्योग्य उत्कृष्ट स्थितिको बाँधता है जिसका आबाधा काल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होता है। इस प्रकार बन्ध करनेवाले इस जीवके तद्योग्य जितनी उत्कृष्ट आबाधा होती है उतने काल तक उत्कर्षणमें लगे हुए इस त्रसजीवके अन्तिम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका भावार्थ है। इसके आगे स्वामित्वका विधान इसलिये नहीं किया है, क्योकि वहाँ त्रसकायिकके नवकबन्धका सद्भाव पाया जाता है। यहाँ पर सचय आदिकी प्ररूपणा जानकर कर लेनी चाहिए।

विशेषार्थ—आशय यह है कि अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्म करनेके लिये पहले इस जीवको पल्यके असख्यातवें भागसे अधिक कर्मस्थितिप्रमाण काल तक सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें रहने दे। तथा इसका एकेन्द्रियोंमें रहनेका जो काल है उस कालके भीतर इसे त्रसोंमें उत्पन्न कराना युक्त नहीं है, क्योंकि इससे लाभके स्थानमें हानि अधिक है। लाभ तो यह है कि अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा प्रकृत निषेकका द्रव्य उत्तरोत्तर कम होता जाता है पर जितना यह द्रव्य कम होता है उससे बहुत अधिक न्यूतन द्रव्य उसमें प्राप्त होता रहता है, क्योंकि अपकर्षण-उत्कर्षण गुणकारसे योगगुणकार असख्यातगुणा बड़ा है। इसलिये जब तक अभव्यके योग्य जघन्य द्रव्य नहीं होता तब तक इसे एकेन्द्रियोंमें ही रहने दे। फिर वहाँसे त्रसोंमें उत्पन्न करावे, यहाँ उत्पन्न होने पर तद्योग्य उत्कृष्ट सक्लेशसे तद्योग्य उत्कृष्ट आबाधा प्राप्त करनेके लिये उत्कृष्ट स्थितिबन्ध करावे। फिर आबाधाके अन्तिम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व प्राप्त करे। अबाधाके अन्तिम समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व प्राप्त करानेमें दो लाभ हैं। एक तो त्रसपर्यायमें आने पर जितने स्थान ऊपर जाकर जघन्य स्वामित्व प्राप्त हुआ है उतने गोपुच्छविशेषोंकी हानि देखी जाती है और दूसरे उदयावलिके सिवा उतने काल तक उत्कर्षण होता रहता है जिससे प्रकृत निषेकका द्रव्य उत्तरोत्तर सूक्ष्म होता जाता है। इस प्रकार बारह कषायोंके यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका जघन्य स्वामी कौन है इसका विचार किया।

❀ इसी प्रकार पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्साके विषयमें भी जानना चाहिये।

§ ७२८ जहा बारसकसायाणं तिण्हं पि ट्ठिदिपत्तयाणं जहण्णसामित्तं परूविदं तहा एदेसिं पि कम्माणं परूवेयव्वं, विसेसाभावादो ।

* इत्थि-णवुंसयवेद-अरदि-सोगाणमधाणिसेयादो जहण्णयं ट्ठिदिपत्तयं जहा संजलणाणं तहा कायव्वं ।

§ ७२९ अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णपदेससंतकम्मेण सह तसकाइएसुप्पाइय आबाहाचरिमसमए सामित्तविहाणेण विसेसाभावादो ।

* जम्हि अधाणिसेयादो जहण्णयं ट्ठिदिपत्तयं तम्हि चेव णिसेयादो जहण्णयं ट्ठिदिपत्तयं ।

§ ७३० सुगममेदमप्पणासुत्तं, पुव्विल्लादो अविसिट्ठपरूवणत्तादो ।

* उदयट्ठिदिपत्तयं जहा उदयादो झीणट्ठिदियं जहण्णयं तहा णिरवयवं कायव्वं ।

§ ७३१ सुगममेदमप्पणासुत्तं ।

एवं जहण्णसामित्तं समत्तं ।

—ः—

---

§ ७२८. जिस प्रकार बारह कषायोंके तीनों ही स्थितिप्राप्त द्रव्योंके जघन्य स्वामित्वका कथन किया है उसी प्रकार पूर्वोक्त कर्मोंके विषयमें भी जानना चाहिये, क्योंकि इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है ।

* स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति और शोकके जघन्य यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका कथन संज्वलनोंके समान करना चाहिए ।

§ ७२९. क्योंकि दोनों स्थलोंमें अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसकायिकोंमें उत्पन्न होकर आबाधाके अन्तिम समयमें स्वामित्वका विधान किया है, इसलिए इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है ।

* उक्त कर्मोंका जिस स्थलपर जघन्य यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य होता है उसी स्थलपर जघन्य निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका भी कथन करना चाहिए ।

§ ७३०. यह अर्पणासूत्र सुगम है, क्योंकि इसका व्याख्यान पूर्वोक्त सूत्रके व्याख्यानके समान है ।

* तथा उक्त कर्मोंके जघन्य उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका सम्पूर्ण कथन उदयसे झीनस्थितिवालेके जघन्य द्रव्यके समान करना चाहिये ।

§ ७३१. यह अर्पणासूत्र सुगम है ।

इस प्रकार जघन्य स्वामित्वका कथन समाप्त हुआ ।

—o—

❀ अप्पाबहुअं ।

§ ७३२. सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं । तं च दुविहं जहण्णुक्कस्सभेएण । तत्थुक्कस्सप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

❀ सव्वपयडीणं सव्वत्थोवमुक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं ।

§ ७३३. कुदो ? उक्कस्सजोगेण बद्धेयसमयपबद्धे अंगुलस्सासंखे०भागेण खंडिदे तत्थेयखंडपमाणत्तादो ।

❀ उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमसंखेज्जगुणं ।

§ ७३४. एत्थ गुणगारपमाणमोकड्डुक्कड्डणभागहारपदुप्पण्णकम्मट्ठिदिणाणागुणहाणिसलागण्णोण्णब्भत्थरासिमेत्तं । णवरि तिण्णिवेदचदुसंजलणाणं तप्पाओग्गसंखेज्जरूवोवट्टिदअंगुलस्सासंखे०भागमेत्तो गुणगारो । एत्थोवट्टणं ठविय सिस्साणं गुणगारविसओ पडिबोहो कायव्वो ।

❀ णिसेयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयं विसेसाहियं ।

§ ७३५. केत्तियमेत्तेण ? ओकड्डुक्कड्डणाहिं गंतूण पुणो वि तत्थेव पदिददव्व-

---

* अब अल्पबहुत्वका अधिकार है ।

§ ७३२ अधिकारका निर्देश करनेवाला यह सूत्र सुगम है । यह अल्पबहुत्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । अब इनमेंसे उत्कृष्ट अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्य सबसे थोड़ा है ।

§ ७३३ क्योंकि उत्कृष्ट योगसे बाँधे गए एक समयप्रबद्धमें अङ्गुलके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग लब्ध आवे उतना इसका प्रमाण है, इसलिये यह सबसे थोड़ा है ।

* उससे उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य असंख्यातगुणा है ।

§ ७३४ यहाँपर अपकर्पण-उत्कर्पण भागहारसे कर्मस्थितिके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिको गुणा करनेपर जो लब्ध आवे उतना गुणकारका प्रमाण है । अर्थात् इस गुणकारसे उत्कृष्ट अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यके गुणित करनेपर उत्कृष्ट यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य प्राप्त होता है यह इसका भाव है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अङ्गुलके असंख्यातवें भागमें तत्प्रायोग्य संख्यात अङ्कोंका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना तीन वेद और चार संज्वलनोंकी अपेक्षा गुणकार होता है । यहाँपर भागहारको स्थापित करके शिष्योंको गुणकारविषयक ज्ञान कराना चाहिये ।

* उससे उत्कृष्ट निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य विशेष अधिक है ।

§ ७३५ **शंका**—कितना अधिक है ?

समाधान—अपकर्पण उत्कर्पणके द्वारा जो द्रव्य व्ययको प्राप्त होता है उस

मेत्तेण । तं पुण अधाणिसेयदव्वस्स असंखे० भागमेत्तं । तस्स पडिभागो ओकड्डुक्कड्डण-भागहारो ।

❀ उदयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयमसंखेज्जगुणं ।

§ ७२६ कुदो ? सव्वेसिं कम्माणं गुणसेढिगोवुच्छोदएण पत्तुक्कस्सभावत्तादो । एत्थ गुणगारो सम्मत्तस्स अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो । लोहसंजलणस्स संखेज्जरूवगुणिददिवड्ढगुणहाणिमेत्तो । तिण्णिसंजलण तिवेदाणं तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जदिभागमेत्तो । सेसकम्माणमसंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्तो । एत्थोवट्टणं ठविय सिस्साणं पडिबोहो कायव्वो ।

एवमुक्कस्सप्पाबहुअं समत्तं ।

❀ जहण्णयाणि कायव्वाणि ।

§ ७२७ एत्तो उवरि जहण्णट्ठिदिपत्तयाणमप्पाबहुअं कायव्वमिदि भणिदं होइ ।

❀ सव्वत्थोवं मिच्छत्तस्स जहण्णयमग्गट्ठिदिपत्तयं ।

§ ७२८ किं कारणं ? एगपरमाणुपमाणत्तादो ।

जिससे वहाँ प्राप्त होकर जितना इसका प्रमाण है उतना अधिक है किन्तु वह यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसका प्रतिभाग अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार है।

❀ उससे उत्कृष्ट उदयस्थितिप्राप्त द्रव्य असंख्यातगुणा है।

§ ७२६ क्योंकि सभी कर्मोंके गुणश्रेणिगोपुच्छाके उदयसे इस उत्कृष्ट द्रव्यकी प्राप्ति होती है, इसलिए यह उत्कृष्ट निषेकस्थितिप्राप्तसे भी असंख्यातगुणा है। यहाँ सम्यक्त्वका गुणकार अङ्गुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। लोभसंज्वलनका गुणकार संख्यात अङ्कोंसे गुणित डेढ़ गुणहानिप्रमाण है। तीन संज्वलन और तीन वेदोंका गुणकार तत्प्रायोग्य पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। तथा शेष कर्मोंका गुणकार पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है। यहाँ पर भागहारको स्थापित करके शिष्योंको प्रतिबोध कराना चाहिये।

इस प्रकार उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

❀ अब जघन्य अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिये।

§ ७२७ अब इससे आगे जघन्य स्थितिप्राप्त द्रव्योंके अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिये यह इस सूत्रका तात्पर्य है।

❀ मिथ्यात्वका जघन्य अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्य सबसे थोड़ा है।

§ ७२८ क्योंकि इस प्रमाण एक परमाणु है।

ॐ जहण्णयं णिसेयट्ठिदिपत्तयं अणंतगुणं ।

§ ७३९. कुदो ? अणंतपरमाणुपमाणत्तादो ।

ॐ जहण्णयमुदयट्ठिदिपत्तयमसंखेज्जगुणं ।

§ ७४०. कथमेदेसिमुवसमसम्माइट्ठिपच्छायदपढमसमयमिच्छाइट्ठिणोदीरिदासंखेज्जलोगपडिभागियदव्वपडिबद्धत्तेण समाणसामियाणमण्णोण्णमवेक्खिय असंखेज्जगुणहीणाहियभावो त्ति णासकणिज्ज, समाणसामियत्ते वि दव्वविसेसावलंबणेण तहाभावाविरोहादो । तं जहा—णिसेयट्ठिदिपत्तयस्स अहियारट्ठिदीए अतर करेमाणेण उवरिमुक्कड्डिदपदेसा पुणो संकिलेसवसेणासखेज्जलोगपडिभाएणोदीरिदा सामित्तविसईकया उदयादो जहण्णट्ठिदिपत्तयस्स पुण अतोकोडाकोडीमेत्तोवरिमासेसट्ठिदीहिंतो ओकड्डिय उदीरिदसव्वपरमाणू सामित्तपडिग्गहिया तदो जइ वि एक्कम्मि चेव उद्देसे दोण्ह सामित्तं सजादं तो वि णाणेयणिसेयपडिबद्धत्तेण असखेज्जगुणहीणाहियभावो ण विरुज्झदे । एत्थ गुणयारोकड्डुकड्डणभागहारोवट्टिददिवड्ढगुणहाणिवग्गमेत्तो ।

---

* उससे जघन्य निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य अनन्तगुणा है ।

§ ७३९. क्योंकि इसका प्रमाण अनन्त परामाणु है।

* उससे जघन्य उदयस्थितिप्राप्त द्रव्य असंख्यातगुणा है ।

§ ७४० **शंका**—जब कि उपशमसम्यक्त्वसे पीछे आकर प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीव असख्यात लोकका भाग देकर जितने द्रव्यकी उदीरणा करता है उसकी अपेक्षा इन दोनोंका स्वामी समान है तव फिर इनमेंसे एकको असंख्यातगुणा हीन और दूसरेको असख्यातगुणा अधिक क्यों बतलाया है ?

समाधान—ऐसी आशका करना ठीक नहीं है, क्योंकि यद्यपि इनका स्वामी समान है तथापि द्रव्यविशेपकी अपेक्षा ऐसा होनेमें कोई विराध नहीं आता। खुलासा इस प्रकार है—निपेकस्थितिप्राप्तकी अपेक्षासे अन्तरको करनेवाले जीवके द्वारा विवक्षित स्थितिके जिन कर्मपरमाणुओंका उत्कर्षण करके ऊपर निक्षेप किया है उनमेसे सक्लेशके कारण असख्यात लोकका भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतने वे ही कर्मपरमाणु उदीर्ण होकर स्वामित्वके विपयभूत होते हैं। किन्तु जघन्य उदयस्थितिप्राप्तकी अपेक्षा तो अन्तःकोड़ाकोड़ीप्रमाण ऊपरकी सब स्थितियोंमेंसे अपकर्षण होकर उदीरणाको प्राप्त हुए सब परमाणु स्वामित्वरूपसे स्वीकार किये गये हैं, इसलिये यद्यपि एक ही स्थलपर दोनों स्थितिप्राप्त द्रव्योंका स्वामित्व होता है तो भी एक स्थितिप्राप्तमें नाना निषेकोंके कर्मपरमाणु हैं और दूसरेमें एक निपेकके कर्मपरमाणु हैं, इसलिए इनके परस्परमें असख्यातगुणे अधिक और असख्यातगुणे हीन होनेमें कोई विरोध नहीं आता है। यहाँ पर अपकर्पण-उत्कर्षण भागहारका डेढ़ गुणहानिके वर्गमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे उतना गुणकारका प्रमाण है।

❀ जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमसंखेज्जगुणं ।

§ ७४१ एत्थ गुणगारपमाणमसंखेज्जा लोगा तप्पाओग्गासंखेज्जरूवाणि वा । कथमसंखेज्जलोगमेत्तगुणगारुप्पत्ती ? उच्चदे—उदयट्ठिदिपत्तयस्स जहण्णदव्वे इच्छिज्जमाणे दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धे ठविय तेसिं ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण पडुप्पण्णा-मसंखेज्जा लोगा भागहारसरूवेण ठवेयव्वा । एवं ठविदे इच्छिददव्वमागच्छइ । जहाणिसेयट्ठिदिपत्तयस्स पुण जहण्णदव्वं संखेज्जावलियमेत्तसमयपबद्धे अंगुलस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थेयखंडमेत्तं होइ । एदस्सोवट्टणे ठविज्जमाणे संखेज्जावलिय-मेत्तसमयपबद्धाणं वेछावट्ठिसागरोवमब्भंतरणाणागुणहाणि विरलिय विगुणिय अण्णोण्ण-ब्भत्थरासिम्मि भागहारत्तेण ठविदे गलिदसेसदव्वमागच्छइ । एवं च सव्वदव्वमुवरिम अंतोकोडाकोडीमेत्तट्ठिदिविसेसेसु विहंजिय ट्ठिदमधाणिसेयजहण्णसामित्तविसईकय गोपुच्छपमाणेण कीरमाणं दिवड्ढगुणहाणिपमाणं होइ त्ति दिवड्ढगुणहाणी वि एदस्स भागहारो ठवेयव्वा । एवं ठविदे इच्छिददव्वमागच्छइ । पुणो एदम्मि पुव्विल्लदव्वे ओवट्टिदे असंखेज्जा लोगा गुणगारो आगच्छइ ।

§ ७४२ अहवा जहाणिसेयट्ठिदिपत्तयस्स वि असंखेज्जा लोगा भागहारो ।

❀ उससे जघन्य यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य असंख्यातगुणा है ।

§ ७४१. यहाँ पर गुणकारका प्रमाण असंख्यात लोक है या तत्प्रायोग्य असंख्यात अङ्क है ।

शंका—असंख्यात लोकप्रमाण गुणकारकी उत्पत्ति कैसे होती है ?

समाधान—उदयस्थितिप्राप्त जघन्य द्रव्यको लानेकी इच्छासे डेढ़ गुणहानिप्रमाण समय-प्रबद्धोंको स्थापित करके उनके भागहाररूपसे अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारके द्वारा उत्पन्न किये गये असंख्यात लोकोंको स्थापित करना चाहिये । इस प्रकार स्थापित करनेपर इच्छित द्रव्यका प्रमाण आ जाता है । किन्तु यथानिषेकस्थितिप्राप्तका जघन्य द्रव्य तो संख्यात आवलिप्रमाण समय-प्रबद्धोंमें अङ्गुलके असंख्यातवें भागका भाग देनेपर जो एक भाग प्राप्त उतना होता है । इसका भागहार स्थापित करनेपर संख्यात आवलिप्रमाण समयप्रबद्धोंके भागहाररूपसे जो छयासठ सागरके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंका विरलन करके और दूना करके परस्पर गुणा करनेसे जो अन्योन्याभ्यस्त राशि उत्पन्न होती है उसे स्थापित करनेपर गलकर जो द्रव्य शेष रहता है उसका प्रमाण आ जाता है । इस प्रकार ऊपरके अन्तःकोड़ाकोड़ी प्रमाण स्थितिविशेषोंमें जो सब द्रव्य विभक्त होकर स्थित है उसके यथानिषेकके जघन्य स्वामित्वके विषयभूत गोपुच्छके बराबर हिस्से करनेपर वे डेढ़ गुणहानिप्रमाण प्राप्त होते हैं, इसलिए डेढ़ गुणहानिको भी इसके भागहाररूपसे स्थापित करना चाहिए । इस प्रकार स्थापित करनेपर इच्छित द्रव्यका प्रमाण आ जाता है । फिर इसमें पूर्वोक्त द्रव्यका भाग देनेपर असंख्यात लोकप्रमाण गुणकार प्राप्त होता है ।

§ ७४२ अथवा यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका भी असंख्यात लोकप्रमाण भागहार होता है,

कुदो ? पुव्वपरूविदभागहारे संते पुणो वि ओकड्डणमस्सियूणुप्पण्णवेछावट्ठिसागरोवम-ब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमसंखेज्जपलिदोवमपढमवग्गमूलमेत्ताण अण्णोण्णब्भत्थ-रासीए असंखेज्जलोगपमाणाए भागहारत्तेण पवेसदंसणादो। तदो एदम्मि हेट्ठिमरासिणा ओवट्टिदे तप्पाओग्गासंखेज्जरूवमेत्तो गुणगारो आगच्छदि त्ति घेत्तव्वं।

❀ **एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसाय-पुरिसवेद हस्स-रइ-भय-दुगुंछाणं।**

§ ७४३. जहा मिच्छत्तस्स जहण्णओ अप्पाबहुगआलावो कओ तहा सम्मत्तादि पयडीणं पि अणूणाहिओ कायव्वो, विसेसाभावादो। णवरि सामित्ताणुसारेण गुणयारविसेसो जाणियव्वो।

❀ **अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवं जहण्णयमग्गट्ठिदिपत्तयं।**

§ ७४४. सुगमं।

❀ **जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमणंतगुणं।**

§ ७४५. एत्थ वि कारणं सुगमं।

❀ **जहण्णयं णिसेयट्ठिदिपत्तयं विसेसाहियं।**

क्योंकि पूर्वोक्त भागहारके रहते हुए फिर भी अपकर्षणकी अपेक्षा दो छयासठ सागरके भीतर उत्पन्न हुई पल्यके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण नाना गुणहानिशलाकाओंकी असंख्यात लोकप्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशिका भागहाररूपसे प्रवेश देखा जाता है। फिर इसे नीचेकी राशिसे भाजित करनेपर तत्प्रायोग्य असंख्यात अङ्कप्रमाण गुणकार आता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

* **इसी प्रकार सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इनका भी जघन्य अल्पबहुत्व कहना चाहिए।**

§ ७४३. जिस प्रकार मिथ्यात्वके जघन्य अल्पबहुत्वका कथन किया है न्यूनाधिकताके बिना उसी प्रकार सम्यक्त्व आदि प्रकृतियोंके अल्पबहुत्वका भी कथन करना चाहिए, क्योंकि मिथ्यात्वके कथनसे इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि सबकी अपेक्षा गुणकार एकसा नहीं है इसलिए अपने अपने स्वामीके अनुसार गुणकार जानना चाहिये।

* **अनन्तानुबन्धियोंका जघन्य अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्य सबसे थोड़ा है।**

§ ७४४. इस सूत्रका अर्थ सुगम है।

* **उससे जघन्य यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य अनन्तगुणा है।**

§ ७४५. यहां जो जघन्य अग्रस्थितिप्राप्त द्रव्यसे जघन्य यथानिषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यको अनन्तगुणा बतलाया है सो इसका कारण सुगम है।

* **उससे जघन्य निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्य विशेष अधिक है।**

§ ७४६. एदं पि सुगमं, समाणसामियत्ते वि दव्वगयविसेसमस्सियूण विसेसाहियभावस्स पुव्वमेव समत्थियत्तादो।

❀ जहण्णयमुदयट्ठिदिपत्तयमसंखेज्जगुणं।

§ ७४७. कुदो ? सामित्तभेदाभावे वि सेसकसायपरिवाडीए पडिच्छिदूणुक्कड्डिददव्वमाहप्पेण पुव्विल्लादो एदस्सासंखेज्जगुणत्तदंसणादो। एत्थ गुणगारो असंखेज्जा लोगा।

❀ एवमित्थिवेद-णवुंसयवेद-अरदि-सोगाणं।

§ ७४८. जहा अणंताणुबंधिचउक्कस्स जहण्णट्ठिदिपत्तयाणमप्पाबहुअं परूविदं एवं पयदकम्माणं पि परूवेयव्वं; दव्वट्ठियणयावलंबणे विसेसाणुवलंभादो। पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे सामित्ताणुसारेण गुणगारविसेसो जाणियव्वो।

एवमप्पाबहुअं समत्तं। तदो ट्ठिदियं ति पदस्स विहासा समत्ता। एत्थेव 'पयडी य मोहणिज्जा' एदिस्से मूलगाहाए अत्थो समत्तो।

तदो पदेसविहत्ती सचूलिया समत्ता।

— ‡ —

§ ७४६. यह सूत्र भी सुगम है। यद्यपि यथानिषेक और निषेकस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी एक है तथापि द्रव्यगत विशेषताकी अपेक्षासे विशेषाधिकता होती है इसका समर्थन पहले ही कर आये हैं।

❀ उससे जघन्य उदयस्थितिप्राप्त द्रव्य असंख्यातगुणा है।

§ ७४७. क्योंकि यद्यपि निषेकस्थितिप्राप्त और उदयस्थितिप्राप्त द्रव्यका स्वामी एक है तथापि शेष कषायोंसे संक्रमित होकर उत्कर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यके माहात्म्यसे पूर्वकी अपेक्षा यह असंख्यातगुणा देखा जाता है। यहाँ पर गुणकारका प्रमाण असंख्यात लोक है।

❀ इसीप्रकार स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति और शोकका अल्पबहुत्व जानना चाहिये।

§ ७४८. जिसप्रकार अनन्तानुबन्धियोंके चारों जघन्य स्थितिप्राप्त द्रव्योंका अल्पबहुत्व कहा है इसीप्रकार प्रकृत कर्मोंके जघन्य स्थितिप्राप्त द्रव्योंका अल्पबहुत्व भी कहना चाहिये क्योंकि द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं पायी जाती। पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करने पर तो स्वामित्वके अनुसार गुणकारविशेष जानना चाहिये।

इसप्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होनेपर 'झिदियं' पदका विशेष व्याख्यान समाप्त हुआ। तथा यहीं पर 'पयडी य मोहणिज्जा' इस मूल गाथाका अर्थ समाप्त हुआ।

इसप्रकार चूलिका सहित प्रदेशविभक्ति समाप्त हुई।

— :—

१ पदेसविहत्तिचुण्णिसुत्ताणि

पुस्तक ९

[1]पदेसविहत्ती दुविहा—मूलपयडिपदेसविहत्ती उत्तरपयडिपदेसविहत्ती च। तत्थ मूलपयडिपदेसविहत्तीए गदाए उत्तरपयडिपदेसविहत्तीए एगजीवेण सामित्तं। [2]मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्ती कस्स? बादरपुढविजीवेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ तदो उव्वट्टिदो तसकाए वेसागरोवमसहस्साणि सादिरेयाणि अच्छिदाउओ अपच्छिमाणि तेत्तीसं सागरोवमाणि दोभवग्गहणाणि तत्थ अपच्छिमे तेत्तीसं सागरोवमिए णेरइयभवग्गहणे चरिमसमयणेरइयस्स तस्स मिच्छत्तस्स उक्कस्सए पदेससंतकम्मं। एवं बारसकसाय-छण्णोकसायाणं। [3]सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ को होदि? गुणिदकम्मंसिओ दंसणमोहणीयक्खवओ जम्मि मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं तम्मि सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ। [4]सम्मत्तस्स वि तेणेव जम्मि सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते पक्खित्तं तस्स सम्मत्तस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मं। णवुंसयवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं कस्स? गुणिदकम्मंसिओ ईसाणं गदो तस्स चरिमसमयदेवस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं। इत्थिवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं कस्स? गुणिदकम्मंसिओ असंखेज्जवस्साउए गदो तम्मि पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण जम्हि पूरिदो तस्स इत्थिवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं। पुरिसवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं कस्स? गुणिदकम्मंसिओ ईसाणेसु णवुंसयवेदं पूरेदूण तदो कमेण असंखेज्जवस्साउएसु उववण्णो। तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण इत्थिवेदो पूरिदो। तदो सम्मत्तं लब्भिदूण मदो पलिदोवमट्ठिदीओ देवो जादो। तत्थ तेणेव पुरिसवेदो पूरिदो। तदो चुदो मणुसो जादो सव्वलहुं कसाए खवेदि। तदो णवुंसयवेदं पक्खिविदूण जम्हि इत्थिवेदो पक्खित्तो तस्समए पुरिसवेदस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं। [10]तेणेव जाधे पुरिसवेद-छण्णोकसायाणं पदेसग्गं कोधसंजलणे [11]पक्खित्तं ताधे कोधसंजलणस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं। एसेव कोधो जाधे माणे पक्खित्तो ताधे माणस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं। [12]एसेव माणो जाधे मायाए पक्खित्तो ताधे मायासंजलणस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं। एसेव माया जाधे लोभसंजलणे पक्खित्ता ताधे लोभसंजलणस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं।

---

(१) पृ १। (२) पृ ९। (३) पृ ७२। (४) पृ ७६। (५) पृ ८०। (६) पृ ८८। (७) पृ ९३। (८) पृ ९९। (९) पृ १०४। (१०) पृ ११। (११) पृ १११। (१२) पृ ११३। (१३) पृ १२४।

[1]मिच्छत्तस्स जहण्णपदेससंतकम्मिओ को होदि ? सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदाउओ तत्थ सव्वबहुआणि अपज्जत्तभवग्गहणाणि दीहाओ अपज्जत्तद्धाओ तप्पाओग्गजहण्णयाणि जोगट्ठाणाणि अभिक्खं गदो। तदो तप्पाओग्गजहण्णियाए वड्ढीए वड्ढिदो। जदा जदा आउअं बंधदि तदा तदा तप्पाओग्गउक्कस्सएसु जोगट्ठाणेसु वट्टदि हेट्ठिल्लीणं ट्ठिदीणं णिसेयस्स उक्कस्सपदेसतप्पाओग्गं उक्कस्सविसोहिमभिक्खं गदो। जाधे अभवसिद्धियपाओग्गं जहण्णगं कम्मं कदं तदो तसेसु आगदो। संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धो। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता तदो वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालेदूण तदो दंसणमोहणीयं खवेदि। अपच्छिमट्ठिदिखंडयमवणिज्जमाणयमवणिदमुदयावलियाए जं तं गलमाणं तं गलिदं। जाधे एक्किस्से ट्ठिदीए दुसमयकालट्ठिदिगं सेसं ताधे मिच्छत्तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। [2]तदो पदेसुत्तरं दुपदेसुत्तरमेवमणंताणि ट्ठाणाणि तम्मि ट्ठिदिविसेसे। [3]केण कारणेण ? जं तं जहाक्खयागदं तदो उक्कस्सयं पि समयपबद्धमेत्तं। [4]जो पुण तम्मि एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे उक्कस्सगस्स विसेसो असंखेज्जा समयपबद्धा। [5]तस्स पुण जहण्णयस्स संतकम्मस्स असंखेज्जदिभागो। [6]एदेण कारणेण एयं फद्दयं। [7]दोसु ट्ठिदिविसेसेसु विदियं फद्दयं। [8]एवमावलियसमयूणमेत्ताणि फद्दयाणि। [9]अपच्छिमस्स ट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमयजहण्णफद्दयमादिं कादूण जाव मिच्छत्तस्स उक्कस्सं ति एदमेगं फद्दयं।

[10]सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स ? तधा चेव सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमच्छिदूण तदो तसेसु संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामेदूण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालेदूण मिच्छत्तं गदो। दीहाए उव्वेलणद्धाए उव्वेलिदं तस्स जाधे सव्वं उव्वेल्लिदं उदयावलिया गलिदा जाधे दुसमयकालट्ठिदियं एक्कम्मि ट्ठिदिविसेसे सेसं ताधे सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णपदेससंतकम्मं। [11]तदो पदेसुत्तरं। [12]दुपदेसुत्तरं। णिरंतराणि ट्ठाणाणि उक्कस्सपदेससंतकम्मं ति। [13]एवं चेव सम्मत्तस्स वि। [14]दोण्हं पि एदेसिं संतकम्माणमेगं फद्दयं।

[15]अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स ? अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णयं काऊण तसेसु आगदो संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धूण चत्तारिवारे कसाए उवसामिदूण एइंदिए गदो। तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमच्छिदूण कम्मं हदसमुप्पत्तियं कादूण कालं गदो तसेसु आगदो कसाए खवेदि

(१) पृ० १२४-१२५। (२) पृ० १५६। (३) पृ० १५७। (४) पृ० १५९। (५) पृ० १६२। (६) पृ० १६३। (७) पृ० १६४। (८) पृ० १६६। (९) पृ० १६७। (१०) पृ० २०२-२०३। (११) पृ० २१७। (१२) पृ० २१८। (१३) पृ० २४४। (१४) पृ० २४५। (१५) पृ० २४६।

अपच्छिमे द्विदिखंडए अवगदे अपच्छिमद्विदिखंडगस्स उदयावलियाए गलंतीए एक्किस्से द्विदीए सेसाए तम्मि जहण्णयं पदं। [1]तदो पदेसुत्तरं। णिरंतराणि द्वाणाणि जाव एगट्ठिदिविसेसस्स उक्कस्सपदं। एवमेगफद्दयं। एदेण कमेण अट्ठण्हं पि कसायाणं समयूणावलियमेत्ताणि फद्दयाणि उदयावलियादो। अपच्छिमट्ठिदिखंडयस्स चरम-समयजहण्णपदमादिं कादूण जावुक्कस्सपदेससंतकम्मं ति एदमेगं फद्दयं।

[2]अणंताणुबंधीणं मिच्छत्तभंगो। [3]णवुंसयवेदस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स? तधा चेव अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णेण संतकम्मेण तसेसु आगदो संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामिदूण तदो विपरिणामिएसु उववण्णो। तत्थ अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए त्ति सम्मत्तं घेत्तूण बेछावट्ठि सागरोवमाणि सम्मत्तद्धमणुपालिदूण मिच्छत्तं गंतूण णवुंसयवेदमणुस्सेसु उववण्णो। सव्वचिरं संजममणुपालिदूण खवेदुमाढत्तो। तदा तेण अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुहमाणं संछुद्धं। उदओ णत्थि णिरवसेसा तस्स चरिमसमयणवुंसयवेदस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं। तदो पदेसुत्तरं। णिरंतराणि द्वाणाणि जाव तप्पाओग्गो उक्कस्सओ उदओ त्ति। [4]एवमेग फद्दयं। अपच्छिमस्स द्विदिखंडयस्स चरिमसमयजहण्णपदमादिं कादूण जाव उक्कस्सपदेससंतकम्मं णिरंतराणि द्वाणाणि। एवं णवुंसयवेदस्स दो फद्दयाणि। एवमित्थिवेदस्स। णवरि तिपलिदोवमिएसु णो उववण्णो। पुरिसवेदस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स? चरिमसमयपुरिसवेदोदयक्खवगेण घोलमाणजहण्ण-जोगट्ठाणे वट्टमाणेण जं कम्मं बद्धं तं कम्ममावलियसमयपबद्धो संकामेदि। जत्तो पाए संकामेदि तत्तो पाए सो समयपबद्धो आवलियाए अकम्मं होदि। तदो एगसमय-मोसक्किदूण जहण्णयं पदेससंतकम्मट्ठाणं। तस्स कारणमिमा परूवणा कायव्वा। पढमसमयअवेदगस्स केत्तिया समयपबद्धा। दो आवलियाओ दुसमऊणाओ। केण कारणेण? [5]जं चरिमसमयसवेदेण बद्धं तमवेदस्स विदियाए आवलियाए तिचरिम-समयादो त्ति दिस्सदि दुचरिमसमए अकम्मं होदि। जं दुचरिमसमयसवेदेण बद्धं तमवेदस्स विदियाए आवलियाए चदुचरिमसमयादो त्ति दिस्सदि। तिचरिमसमए अकम्मं होदि। [6]एदेण कमेण चरिमावलियाए पढमसमयसवेदेण जं बद्धं तमवेदस्स पढमावलियाए चरिमसमए अकम्मं होदि। जं सवेदस्स दुचरिमाए आवलियाए पढमसमए पबद्धं तं चरिमसमयसवेदस्स अकम्मं होदि। जं दिस्सदे च तं दुचरिमसमय-सवेदावलियाए विदियसमए बद्धं तं पढमसमयअवेदस्स अकम्मं होदि। एदेण

(१) पृ २५१। (२) पृ २५२। (३) पृ २५६। (४) पृ २६७-२६८। (५) पृ २७४। (६) पृ २८२। (७) पृ २८३। (८) पृ २६१। (९) पृ २९३। (१०) पृ २९४। (११) पृ २९५। (१२) पृ २९६।

कारणेण वेसमयपवद्धेण लहदि अवगदवेदो। सवेदस्स दुचरिमावलियाए दुसमयूणाए चरिमावलियाए सव्वे [1]च एदे समयपवद्धे अवेदो लहदि। एसा ताव एक्का परूवणा। [2]इमा अण्णा परूवणा। दोहि चरिमसमयसवेदेहि तुल्लजोगेहि बद्धं कम्मं तेसिं तं संतकम्मं चरिमसमयअणिल्लेविदं पि तुल्लं। दुचरिमसमयअणिल्लेविदं पि तुल्लं। एवं सव्वत्थ। [3]एदाहि दोहि परूवणाहि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि परूवेदव्वाणि। [4]जहा—जो चरिमसमयसवेदेण बद्धो समयपवद्धो तम्हि चरिमसमयअणिल्लेविदे घोलमाण-जहण्णजोगट्ठाणमादिं कादूण जत्तियाणि जोगट्ठाणाणि तत्तियमेत्ताणि संतकम्मट्ठाणाणि। [5]चरिमसमयसवेदेण उक्कस्सजोगेणे त्ति दुचरिमसमयसवेदेण जहण्णजोगट्ठाणेणे त्ति एत्थ जोगट्ठाणमेत्ताणि [संतकम्मट्ठाणाणि] लब्भंति। [6]चरिमसमयसवेदो उक्कस्सजोगो दुचरिमसमयसवेदो उक्कस्सजोगो तिचरिमसमयसवेदो अण्णदरजोगट्ठाणे त्ति एत्थ पुण जोगट्ठाणमेत्ताणि पदेससंतकम्मट्ठाणाणि [लब्भंति]। [7]एवं जोगट्ठाणाणि दोहि आवलियाहि दुसमयूणाहि पदुप्पण्णाणि। एत्तियाणि अवेदस्स संतकम्मट्ठाणाणि सांतराणि सव्वाणि। [8]चरिमसमयसवेदस्स एगं फद्दयं। [9]दुचरिमसमयसवेदस्स चरमट्ठिदिखंडगं चरिमसमयविणट्ठं। [10]तस्स दुचरिमसमयसवेदस्स जहण्णगं संतकम्म-मादिं कादूण जाव पुरिसवेदस्स ओघुक्कस्सपदेससंतकम्मं ति एदमेगं फद्दयं।

[11]कोधसंजलणस्स जहण्णयं पदेससंतकम्मं कस्स? चरिमसमयकोधवेदगेण खवगेण जहण्णजोगट्ठाणे जं बद्धं तं जं वेलं चरिमसमयअणिल्लेविदं तस्स जहण्णयं संतकम्मं। [12]जहा पुरिसवेदस्स दोआवलियाहि दुसमऊणाहि जोगट्ठाणाणि पदु-प्पण्णाणि एवदियाणि संतकम्मट्ठाणाणि सांतराणि। एवमावलियाए समऊणाए जोगट्ठाणाणि पदुप्पण्णाणि एत्तियाणि कोधसंजलणस्स सांतराणि संतकम्मट्ठाणाणि। [13]कोधसंजलणस्स उदए वोच्छिण्णे जा पढमावलिया तत्थ गुणसेढी पविट्ठल्लिया। तिस्से आवलियाए चरिमसमए एगं फद्दयं। [14]दुचरिमसमए अण्णं फद्दयं। [15]एव-मावलियसमयूणमेत्ताणि फद्दयाणि। चरिमसमयकोधवेदयस्स खवयस्स चरिमसमय-अणिल्लेविदं खंडयं होदि। तस्स जहण्णसंतकम्ममादिं कादूण जाव ओघुक्कस्सं कोधसंजलणस्स संतकम्मं ति एदमेगं फद्दयं।

[16]जहा कोधसंजलणस्स तहा माण-मायासंजलणाणं। [17]लोभसंजलणस्स जहण्णगं पदेससंतकम्मं कस्स? अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णगेण कम्मेण तसकायं गदो।

---

(१) पृ० २६७। (२) पृ० २६८। (३) पृ० २६६। (४) पृ० ३०१। (५) पृ० ३१५। (६) पृ० ३१७। (७) पृ० ३१६। (८) पृ० ३७३। (६) पृ० ३७५। (१०) पृ० ३७६। (११) पृ० ३७७। (१२) पृ० ३७८। (१३) पृ० ३७६। (१४) पृ० ३८०। (१५) पृ० ३८१। (१६) पृ० ३८२। (१७) पृ० ३८३।

तम्मि संजमासंजम सजमं च बहुवार लद्धाउओ कसाए च उवसामिदाउओ। तदो कमेण मणुस्सेसुववण्णो। तीए संजमद्धमणुपालेदूण कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स चरिमसमयअधापवत्तकरणे जहण्णग लोभसंजलणस्स पदेससंतकम्मं। [1]एदमादिं कादूण लोभुक्कस्सय संतकम्म णिरंतराणि ट्ठाणाणि। अणंताणुबंधीणं जहण्णय पदेससंतकम्मं कस्स? अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण तसेसु आगदो। तत्थ संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धो। चत्तारि वारं कसाए उवसामेदूण तदो कमेण मणुसो जादो। तत्थ तीए संजमद्धं कादूण खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स चरिम समयट्ठिदिखंडए चरिमसमयअणिल्लेविदे अण्णं कम्मसाणं जहण्णय पदेससंतकम्मं। [2]तदादिय जाव उक्कस्सियादो एगमेव फद्दय।

पुस्तक ७

[3]कालो। [4]मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसविहत्तिओ केवचिरं कालादो होदि? जह ण्णुक्कस्सेण एगसमओ। अणुक्कस्सपदेसविहत्तिओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णु क्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। [5]अण्णोवदेसो जहण्णेण असंखेज्जा लोगा त्ति। अधवा खवग पडुच्च वासपुधत्तं। एवं सेसाणं कम्माणं णादूण णेदव्वं। णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमणुक्कस्सदव्वकालो जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। [6]जहण्णकालो जाणिदूण णेदव्वो।

[7]अंतर। मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मियंतरं जहण्णुक्कस्सेण अणंतकाल-मसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। एवं सेसाणं कम्माणं णेदव्वं। णवरि सम्मत्त सम्मा मिच्छत्ताणं पुरिसवेद चदुसंजलणाणं च उक्कस्सपदेसविहत्तिअंतरं णत्थि। [8]अंतरं जहण्णयं जाणिदूण णेदव्वं।

[9]णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो जहण्णुक्कस्सभेदेहि। अट्ठपदं कादूण सव्व कम्माणं णेदव्वो। सव्वकम्माणं णाणाजीवेहि कालो कायव्वो। [10]अंतरं णाणाजीवेहि सव्वकम्माणं जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा।

[11]अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवमपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं। [12]कोधे उक्कस्स पदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। पच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। [13]कोधे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

(१) पृ ३८४। (२) पृ ३८५-३८६। (३) पृ ३८६। (४) पृ १। (५) पृ २। (६) पृ ३। (७) पृ ४। (८) पृ ५। (९) पृ ६। (१०) पृ ७। (११) पृ १५। (१२) पृ १६। (१३) पृ २७। (१४) ३७। (१५) पृ ५। (१६) पृ ५१। (१७) पृ ७४। (१८) पृ ७५। (१९) पृ ७६।

लोभस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। अणंताणुवंधिमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। कोधे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। सम्मामिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। [1]सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। हस्से उक्कस्सपदेससंतकम्ममणंतगुणं। [2]रदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं। [3]सोगे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। अरदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। [4]भए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। कोधसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं। [5]माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायासंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। लोभसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

णिरयगदीए सव्वत्थोवं सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंतकम्मं। [6]अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं। कोधे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। पच्चक्खाणमाणो उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। [7]कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। कोधे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। [8]मिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। हस्से उक्कस्सपदेससंतकम्ममणंतगुणं। [9]रदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं। [10]सोगे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। अरदीए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। भए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। [11]पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। [12]कोधसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायासंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। लोभसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। एवं सेसाणं गदीण णादूण णेदव्वं।

(१) पृ० ७८। (२) पृ० ७९। (३) पृ० ८०। (४) पृ० ८१। (५) पृ० ८२। (६) पृ० ८३। (७) पृ० ८४। (८) पृ० ८५। (९) पृ० ८६। (१०) पृ० ८७। (११) पृ० ८८। (१२) पृ० ९०।

[1]एइंदिएसु सम्मत्तेोर्न सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्म । [2]सम्मामिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं । [3]अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं । कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । पच्चक्खाणमाण उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहिय । लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । [4]लोभे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । मिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । हस्से उक्कस्सपदेससंतकम्ममणंतगुणं । रदीए उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्म संखेज्जगुणं । सोगे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहियं । अरदीए उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहियं । णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहियं । दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंतकम्मं विसेसाहिय । भए उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहियं । माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । कोहे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । मायाए उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय । लोहे उक्कस्सपदेससंतकम्म विसेसाहिय ।

[5]जहण्णदंडओ ओघेण सकारणो भणिहिदि । [6]सम्मत्ते सव्वत्थोवं जहण्णपदेससंतकम्म । [7]सम्मामिच्छत्ते जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं । [8]केण कारणेण ? [9]सम्मत्ते उव्वेल्लिदे सम्मामिच्छत्तं जेण कालेण उव्वेल्लेदि एदम्मि काले एक्कं पि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरं णत्थि एदेण कारणेण । [10]अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं । [11]कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहिय । मायाए जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । लोहे जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । मिच्छत्ते जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं । [12]अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं । कोहे जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । मायाए जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । लोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहिय । पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । कोहे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहिय । मायाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहिय । लोभे जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । कोहसंजलणे जहण्णपदेस

(१) पृ ९१ । (२) पृ ९२ । (३) पृ ९३ । (४) पृ ९४ । (५) पृ ९५ । (६) पृ ९६ । (७) पृ ९७ । (८) पृ ९८ । (९) पृ ९९ । (१०) पृ १०० । (११) पृ १०२ । (१२) पृ १०३ । (१३) पृ १०४ । (१४) पृ १०५ । (१५) पृ १०७ । (१६) पृ १०९ । (१७) पृ ११० । (१८) पृ १११ ।

संतकम्ममणतगुण । [1]माणसजलणे जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । पुरिसवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं । [2]मायासजलणे जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय। णवुंसयवेदे जहण्णपदेससतकम्ममसंखेज्जगुण । इत्थिवेदस्स जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । [3]हस्से जहण्णपदेससतकम्ममसंखेज्जगुण । [4]रदीए जहण्णपदेससतकम्मं विसेसाहिय । सोगे जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुण । अरदीए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं । दुगुछाए जहण्णपदेससतकम्मं विसेसाहिय । [5]भए जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । लोभसजलणे जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय ।

णिरयगइए सव्वत्थोवं समत्ते जहण्णपदेससंतकम्म । [6]सम्मामिच्छत्ते जहण्ण-पदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं । अणताणुबधिमाणे जहण्णपदेससंतकम्मंमसंखेज्जगुणं । कोहे जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहियं । मायाए जहण्णपदेससतकम्मं विसेसाहिय । लोभे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । मिच्छत्ते जहण्णपदेससतकम्ममसखेज्जगुण । [7]अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससतकम्ममसखेज्जगुण । [8]कोहे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । मायाए जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहियं । लोभे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । कोहे जहण्णपदेस-सतकम्मं विसेसाहिय । मायाए जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । [9]लोभे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहियं । इत्थिवेदे जहण्णपदेससंतकम्ममणतगुण । णवुसयवेदे जहण्जपदेससंतकम्म सखेज्जगुण । पुरिसवेदे जहण्णपदेससतकम्म-मसंखेज्जगुण । [10]हस्से जहण्णपदेससतकम्मं सखेज्जगुण । रदीए जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । सोगे जहण्णपदेसतकम्मं संखेज्जगुणं । अरदीए जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहियं । दुगुंछाए जहण्णपदेससंतकम्म विसेसाहिय । [11]भए जहण्णपदेस-सतकम्म विसेसाहिय । माणसजलणे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । कोहसजलणे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । मायासंजलणे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । लोहसजलणे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । [12]जहा णिरयगईए तहा सव्वासु गईसु । णवरि मणुसगदीए ओघ ।

[13]एइंदिएसु सव्वत्थोव सम्मत्ते जहण्णपदेससतकम्म । सम्मामिच्छत्ते जहण्ण-पदेससतकम्ममसंखेज्जगुण । अणंताणुवधिमाणे जहण्णपदेससतकम्ममसंखेज्जगुण । [14]कोहे जहण्णपदेससतकम्म विसेसाहिय । मायाए जहण्णपदेससतकम्मं विसेसाहिय ।

(१) पृ० ११२ । (२) पृ० ११३ । (३) पृ० ११४ । (४) पृ० ११५ । (५) पृ० ११६ । (६) पृ० ११७ । (७) पृ० ११८ । (८) पृ० ११६ । (६) पृ०१२० । (१०) पृ० १२१ । (११) पृ० १२२ । (१२) पृ० १२३ । (१३) पृ० १२४ । (१४) पृ० १२६ ।

लोभ जहण्णपदससंतकम्मं विसेसाहियं। मिच्छत्ते जहण्णपदससंतकम्ममसंखेज्जगुणं। [1]अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंतकम्ममसंखेज्जगुणं। कोधे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायाए जहण्णपदससंतकम्मं विसेसाहियं। लोभे जहण्णपदससंतकम्मं विसेसाहियं। पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदससंतकम्मं विसेसाहियं। कोहे जहण्ण पदेससंतकम्मं विसेसाहियं। मायाए जहण्णपदससंतकम्मं विसेसाहियं। लोहे जहण्ण पदससंतकम्मं विसेसाहियं। पुरिसवेदे जहण्णपदेससंतकम्ममणंतगुणं। इत्थिवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं। [2]हस्से जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं। रदीए जहण्णपदससंतकम्मं विसेसाहियं। सोग जहण्णपदेससंतकम्मं संखेज्जगुणं। अरदीए जहण्णपदससंतकम्मं विसेसाहियं। णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। दुगुंछाए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। भए जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। माणसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। कोहसंजलणे जहण्णपदससंतकम्मं विसेसाहियं। मायासंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं। [3]लोभसंजलणे जहण्णपदेससंतकम्मं विसेसाहियं।

एत्तो भुजगारं [4]पदणिक्खेव-वड्ढीओ च कायव्वाओ। जहा उक्कस्सय पदेससंतकम्मं तहा संतकम्मट्ठाणाणि। एवं पदसविहत्ती समत्ता।

झीणाझीणचूलिया

[5]एत्तो झीणमझीणं ति पदस्स विहासा कायव्वा। तं जहा। अत्थि ओकड्डणादो झीणट्ठिदियं उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं संकमणादो झीणट्ठिदियं उदयादो झीणट्ठिदियं। ओकड्डणादो झीणट्ठिदियं णाम किं? जं कम्ममुदयावलियब्भंतरे ट्ठियं तमोकड्डणादो झीणट्ठिदियं। जमुदयावलियबाहिरे ट्ठिदं तमोकड्डणादो अज्झीणट्ठिदियं। [6]उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं णाम किं? जं ताव उदयावलियपविट्ठं तं ताव उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। [7]उदयावलियबाहिरे वि अत्थि पदेसग्गमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। तस्स णिदरिसणं। तं जहा—जा समयाहियाए उदयावलियाए ट्ठिदी एदिस्से ट्ठिदीए जं पदेसग्गं तमाविट्ठं। तस्स पदेसग्गस्स जइ समयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता एद्दस्स तं कम्मं ण सक्का उक्कड्डिदुं। [8]तस्सेव पदेसग्गस्स जइ वि दुसमयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। एवं गंतूण जदि वि अइच्छियाए आबाहाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि

(१) पृ १२९। (२) पृ १३। (३) पृ १३१। (४) पृ १३२। (५) पृ १३३। (६) पृ १७१। (७) पृ २३५। (८) पृ २३७। (९) पृ २३९। (१०) पृ २४२। (११) पृ २४३। (१२) पृ २४४। (१३) पृ २४५। (१४) पृ २४६।

उक्कडुणादो झीणट्ठिदियं । [1]समयुत्तराए उदयावलियाए तिस्से ट्ठिदीए जं पदेसग्गं तस्स पदेसग्गस्स जइ जहण्णियाए आबाहाए समयुत्तराए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पदेसग्गं सक्का आबाधामेत्तमुक्कड्डिदुमेक्किस्से ट्ठिदीए णिसिंचिदुं । [2]जइ दुसमयाहियाए आबाहाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तिसमयाहियाए वा आबाहाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता । एवं गंतूण वासेण वा वासपुधत्तेण वा सागरोवमेण वा सागरोवमपुधत्तेण वा ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं सव्वं पदेसग्गं उक्कड्डुणादो अज्झीणट्ठिदियं ।

[3]समयाहियाए उदयावलियाए तिस्से चेव ट्ठिदीए पदेसग्गस्स एगो समओ पबद्धस्स अइच्छिदो त्ति अवत्थु । दो समया पबद्धस्स अइच्छिदा त्ति अवत्थु । तिण्णि समया पबद्धस्स अइच्छिदा त्ति अवत्थु । एवं णिरंतरं गंतूण आवलिया पबद्धस्स अइच्छिदा त्ति अवत्थु । [4]तिस्से चेव ट्ठिदीए पदेसग्गस्स समयुत्तरावलिया बद्धस्स अइच्छिदा त्ति एसो आदेसो होज्ज । [5]तं पुण पदेसग्गं कम्मट्ठिदिं णो सक्का उक्कड्डिदुं । समयाहियाए आवलियाए ऊणियं कम्मट्ठिदिं सक्का उक्कड्डिदुं । [6]एदे वियप्पा जा समयाहियउदयावलिया तिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गस्स । [7]एदे चेव वियप्पा अपरिसेसा जा दुसमयाहिया उदयावलिया तिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गस्स । [8]एवं तिसमयाहियाए चदुसमयाहियाए जाव आबाधाए आवलियूणाए एवदिमादो त्ति ।

[9]आवलियाए समयूणाए ऊणियाए आबाहाए एवदिमाए ट्ठिदीए जं पदेसग्गं तस्स के वियप्पा ? [10]जस्स पदेसग्गस्स समयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि पदेसग्गमेदिस्से ट्ठिदीए णत्थि । जस्स पदेसग्गस्स दुसमयाहियाए आवलियाए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता तं पि णत्थि । [11]एवं गंतूण जद्देही एसा ट्ठिदी एत्तिएण ऊणा कम्मट्ठिदी विदिक्कंता जस्स पदेसग्गस्स तमेदिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गं होज्ज । तं पुण उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं । एदं ट्ठिदिमादिं कादूण जाव जहण्णियाए आबाहाए एत्तिएण ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता जस्स पदेसग्गस्स तं पि पदेसग्गमेदिस्से ट्ठिदीए होज्ज । तं पुण सव्वमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं । [12]आबाधाए समयुत्तराए ऊणिया कम्मट्ठिदी विदिक्कंता जस्स पदेसग्गस्स तं पि एदिस्से ट्ठिदीए पदेसग्गं होज्ज । तं पुण उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं । [13]तेण परमज्झीणट्ठिदियं । [14]समयूणाए आवलियाए ऊणिया आबाहा एदिस्से ट्ठिदीए वियप्पा समत्ता ।

---

(१) पृ० २४७ । (२) पृ० २४८ । (३) पृ० २५१ । (४) पृ० २५२ । (५) पृ० २५३ । (६) पृ० २५७ । (७) पृ० २५८ । (८) पृ० २६० । (९) पृ० २६१ । (१०) पृ० २६२ । (११) पृ० २६३ । (१२) पृ० २६४ । (१३) पृ० २६५ । (१४) पृ० २६६ ।

एदादो ट्ठिदीदो समयुत्ताए ट्ठिदीए वियप्पे भणिस्सामो।[1] सा पुण का ट्ठिदी। दुसमयूणाए आवलियाए ऊणिया जा आबाहा एसा सा ट्ठिदी। इदाणिमेदिस्से ट्ठिदीए अवत्थुवियप्पा केत्तिया? आवलिया दुट्ठिदियाए ट्ठिदीए अवत्थुवियप्पा तदो रूवुत्तरा। जहेही एसा ट्ठिदी तत्तिय ट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसयं जस्स पदे सग्गस्स तं पदेसग्गमेदिस्से ट्ठिदीए होज्ज। तं पुण उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। एदादो ट्ठिदीदो समयुत्तरट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसयं जस्स पदेसग्गस्स तमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। एवं गंतूण आबाहामेत्तट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसं जस्स पदेसग्गस्स एदीए ट्ठिदीए दीसइ तं पि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं।[2] आबाहासमयुत्तरमेत्तं ट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसं जस्स पदेसग्गस्स तं पि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। आबाहा दुसमयुत्तरमेत्तट्ठिदिसंतकम्मं कम्मट्ठिदीए सेसं जस्स पदेसग्गस्स एदिस्से ट्ठिदीए दिस्सइ तं पि पदेसग्गमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। तेण परमुक्कड्डणादो अज्झीणट्ठिदियं। दुसमयूणाए आवलियाए ऊणिया आबाहा एवडिमाए ट्ठिदीए वियप्पा समत्ता।

एत्तो समयुत्तराए ट्ठिदीए वियप्पे भणिस्सामो। एत्तो पुण ट्ठिदीदो समयुत्तरा ट्ठिदी कदमा? जहण्णिया आबाहा तिसमयूणाए आवलियाए ऊणिया एवडिया ट्ठिदी।[3] एदिस्से ट्ठिदीए एत्तिया चेव वियप्पा। णवरि अवत्थुवियप्पा रूवुत्तरा। एस कमा जाव जहण्णिया आबाहा समयुत्तरा त्ति। जहण्णियाए आबाहाए दुसमयुत्तराए पहुडि णत्थि उक्कड्डणादो झीणट्ठिदियं। एवमुक्कड्डणादो झीणट्ठिदियस्स अट्ठपदं समत्तं।

एत्तो संकमणादो झीणट्ठिदियं।[4] जं उदयावलियपविट्ठं तं, णत्थि अण्णो वियप्पो।

[5]उदयादो झीणट्ठिदियं। जमुदिण्णं तं, णत्थि अण्णं।

[6]एत्तो एगेगझीणट्ठिदियमुक्कस्सयमणुक्कस्सयं जहण्णयमजहण्णयं च।

सामित्तं।[7] मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादो झीणट्ठिदियं कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सम्मत्तं दंसणमोहणीयं खवेंतस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुब्भमाणयं संछुद्धमावलिया समयूणा सेसा तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादो झीणट्ठिदियं।[8] तस्सेव उक्कस्सयमुक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं। उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स? गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजमगुणसेढी संजमगुणसेढी च एदाओ गुणसेढीओ

(१) पृ २५७। (२) पृ २५८। (३) पृ २५९। (४) पृ २० । (५) पृ २७१। (६) पृ २७२। (७) पृ० २७३। (८) पृ २७४। (९) पृ २७५। (१) पृ २७६। (११) पृ २७८। (१२) पृ २७७।

काऊण मिच्छत्तं गदो । जाधे गुणसेढिसीसयाणि पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स उदयमागयाणि ताधे तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

[1]सम्मत्तस्स उक्कस्सयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो संकमणादो उदयादो च झीणट्ठिदियं कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुं दंसणमोहणीयं कम्मं खवेदुमाढत्तो [2]अधट्ठिदियं गलंतं जाधे उदयावलियं पविस्समाणं पविट्ठं ताधे उक्कस्सयमोकड्डुणादो वि उक्कड्डुणादो वि संकमणादो वि झीणट्ठिदियं । [3]तस्सेव चरिमसमयअक्खीणदंसणमोहणीयस्स सव्वमुदयं तमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

[4]सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं कस्स ? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वलहुं दंसणमोहणीयं खवेमाणस्स सम्मामिच्छत्तस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुब्भमाणयं संछुद्धं उदयावलिया उदयवज्जा [5]भरिदल्लिया तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं । उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ काऊण ताधे गदो सम्मामिच्छत्तं जाधे गुणसेढिसीसयाणि पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स [6]उदयमागदाणि ताधे तस्स पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स उक्कस्समुदयादो झीणट्ठिदियं ।

[7]अणंताणुबंधीणमुक्कस्सयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजम-संजमगुणसेढीहि अविणट्ठाहि अणंताणुबंधी विसंजोएदुमाढत्तो तेसिमपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुब्भमाणयं संछुद्धं तस्स उक्कस्सयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं । [8]उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ? संजमासंजम-संजमगुणसेढीओ काऊण तत्थ मिच्छत्तं गदो जाधे गुणसेढिसीसयाणि पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स उदयमागयाणि ताधे तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

[9]अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदो जाधे अट्ठण्हं [10]कसायाणमपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुब्भमाणयं संछुद्धं ताधे उक्कस्सयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं । उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ? [11]गुणिदकम्मंसियस्स संजमासंजम-संजम-दंसणमोहणीयक्खवणगुणसेढीओ एदाओ तिण्णि गुणसेढीओ काऊण असंजमं गदो तस्स पढमसमयअसंजदस्स गुणसेढिसीसयाणि उदयमागदाणि तस्स अट्ठकसायाणमुक्कस्सयमुदयादो-झीणट्ठिदियं ।

[12]कोहसंजलणस्स उक्कस्सयमोकड्डणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ? गुणिद-

(१) पृ० २८४ । (२) २८५ । (३) पृ० २८६ । (४) पृ० २८७ । (५) २८८ । (६) पृ० २८९ । (७) पृ० २९२ । (८) पृ० २९३ । (९) पृ० २९४ । (१०) पृ० २९५ । (११) पृ० २९६ । (१२) पृ० ३०० ।

कम्मसियस्स कोध खवेंतस्स चरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमयमसंछुहमाणयस्स उक्कस्सयं तिण्णं पि झीणट्ठिदियं। [1]उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय पि तस्सेव। एव चेव माणसंजलणस्स। णवरि माणट्ठिदिखंडय चरिमसमयमसंछुहमाणयस्स तस्स चत्तारि वि उक्कस्सयाणि झीणट्ठिदियाणि। एव चेव मायासंजलणस्स। णवरि मायाट्ठिदिखंडय चरिमसमयमसंछुहमाणयस्स तस्स चत्तारि वि उक्कस्सयाणि झीणट्ठिदियाणि। लोहसंजलणस्स उक्कस्सयमोकड्डणादितिण्ण पि झीणट्ठिदिय कस्स ? गुणिदकम्मसियस्स सव्वसंकम्ममावलियं पविस्समाणयं पविट्ठं ताधे उक्कस्सयं तिण्ह पि झीणट्ठिदियं। उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय कस्स ? चरिमसमयसकसायक्खवगस्स।

इत्थिवेदस्स उक्कस्सयमोकड्डणादिचदुण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ? इत्थिवेदपूरिदकम्मसियस्स आवलियचरिमसमयमसंछोहयस्स तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि उक्कस्सयाणि। [2]उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं चरिमसमयइत्थिवेदक्खवयस्स।

पुरिसवेदस्स उक्कस्सयमोकड्डणादिचदुण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स ? [3]गुणिदकम्मंसियस्स पुरिसवेदं खवेमाणयस्स आवलियचरिमसमयमसंछोहयस्स तस्स उक्कस्सयं तिण्णं पि झीणट्ठिदियं। उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियं चरिमसमयपुरिसवेदस्स।

णवुंसयवेदस्स उक्कस्सयं तिण्णं वि झीणट्ठिदिय कस्स ? गुणिदकम्मसियस्स णवुंसयवेदेण उवट्ठिदस्स खवयस्स णवुंसयवेदआवलियचरिमसमयमसंछोहयस्स तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि उक्कस्सयाणि। उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय तस्सेव चरिमसमयणवुंसयवेदक्खवयस्स।

छण्णोकसायाणमुक्कस्सयाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि कस्स ? गुणिदकम्मसिएण खवएण ताधे अंतरं कीरमाणं कदं तेसिं चेव कम्मंसाणमुदयावलियाओ पुण्णाओ ताधे उक्कस्सयाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि। [4]तेसिं चेव उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय कस्स ? गुणिदकम्मसियस्स खवयस्स चरिमसमयअपुव्वकरणे वट्टमाणयस्स। णवरि हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं जइ कीरइ भय-दुगुंछाणमवेदगो [5]कायव्वो। अह भयस्स तदो दुगुंछाए अवेदगो कायव्वो। अह दुगुंछाए तदो भयस्स अवेदगो कायव्वो। उक्कस्सय सामित्तं समत्तमोघेण।

[6]एत्तो जहण्णयं सामित्तं वत्तइस्सामो। मिच्छत्तस्स जहण्णयमोकड्डणादो उक्कड्डणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं कस्स ? उवसामगो जहि आवलियासु सेसासु

(१) पृ १२। (२) पृ ११। (३) पृ १४। (४) पृ १०५। (५) पृ १०६। (६) पृ १७। (७) पृ १८। (८) पृ १०९। (९) पृ ११। (१) पृ १११। (११) पृ ११२।

आसाणं गओ तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं। [1]उदयादो जहण्णयं झीणट्ठिदिय तस्सेव आवलिय-मिच्छादिट्ठिस्स।

[2]सम्मत्तस्स ओकड्डुणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स? उवसमसमत्तपच्छायदस्स पढमसमयवेदयसम्माइट्ठिस्स ओकड्डुणादो उक्कड्डुणादो संकमणादो च झीणट्ठिदिय। [3]तस्सेव आवलियवेदयसम्माइट्ठिस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदिय। [4]एवं सम्मा-मिच्छत्तस्स। णवरि पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स आवलियसम्मामिच्छाइट्ठिस्स चेदि।

अट्ठकसाय-चउसंजलण-पुरिसवेद-हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं जहण्णयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो च झीणट्ठिदिय' कस्स? उवसंतकसाओ मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स जहण्णयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो संकमणादो च झीणट्ठिदिय'। [5]तस्सेव आवलियउववण्णस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदिय'।

[6]अणंताणुबंधीण जहण्णयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो सकमणादो च झीणट्ठिदिय कस्स? सुहुमणिओएसु कम्मट्ठिदिमणुपालियूण सजमासजम सजम च बहुसो लभिदाउओ चत्तारि वारे कसाए उवसामेयूण तदो अणताणुबधी विसंजोएऊण संजोइदो। तदो बेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालेयूण तदो मिच्छत्त गदो तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णय तिण्ह पि झीणट्ठिदिय। [7]तस्सेव आवलियसमय-मिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदिय।

[8]णवुंसयवेदस्स जहण्णयमोकड्डुणादितिण्ह पि झीणट्ठिदियं कस्स? अभव-सिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण तिपलिदोवमिएसु उववण्णो। तदो अंतोमुहुत्तसेसे सम्मत्त लद्ध। बेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालिद। सजमासंजमं संजम च बहुसो गदो। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता अपच्छिमे भवे पुव्वकोडाउओ मणुस्सो जादो। तदो देसूणपुव्वकोडिसंजममणुपालियूण अंतोमुहुत्तसेसे परिणामपच्चएण असंजम गदो। ताव असजदो जाव गुणसेढी णिग्गलिदा त्ति तदो संजमं पडिवज्जियूण अतोमुहुत्तेण कम्मक्खयं काहिदि त्ति तस्स पढमसमयसजम पडिवण्णस्स जहण्णयं तिण्ह पि झीणट्ठिदिय'। [9]इत्थिवेदस्स वि जहण्णयाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि एदस्स चेव। तिपलिदोवमिएसु णो उववण्णयस्स कायव्वाणि। [10]णवुसयवेदस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदिय कस्स? सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमणुपालियूण तसेसु आगदो। सजमासजमं सजमं सम्मत्तं च बहुसो गओ। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता

(१) पृ० ३१६। (२) पृ० ३२०। (३) पृ० ३२२। (४) पृ० ३२२। (५) पृ० ३२७। (६) पृ० ३२८। (७) पृ० ३३३। (८) पृ० ३३४। (९) पृ० ३३६। (१०) पृ० ३४०।

गदो एइंदिए गदो । पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागमच्छिदो ताव जाव उवसामयसमय-पबद्धा णिग्गलिदा त्ति । तदो पुणो मणुस्सेसु आगदो । पुव्वकोडी देसूणं संजममणु-पालियूण अंतोमुहुत्तसेसे मिच्छत्तं गदो । दसवस्ससहस्सिएसु देवेसु उववण्णो । अंतोमुहुत्तमुववण्णेण सम्मत्तं लद्धं । अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए त्ति मिच्छत्तं गदो । तदा वि विकड्डिदाओ ट्ठिदीओ तप्पाओग्गसव्वरहस्साए मिच्छत्तद्धाए एइंदिएसु उववण्णो । तत्थ वि तप्पाओग्गउक्कस्सयं संकिलेसं गदो तस्स पढमसमयएइंदियस्स जहण्णय-मुदयादो झीणट्ठिदियं ।

[1]इत्थिवेदस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं ? एसो चेव णवुंसयवेदस्स पुव्वं परूविदो जाधे अपच्छिममणुस्सभवग्गहणं पुव्वकोडी देसूणं संजममणुपालियूण अंतोमुहुत्तसेसे मिच्छत्तं गओ । तदो वाणवेंतरदेवीसु उववण्णो अंतोमुहुत्तमुववण्णा उक्कस्ससंकिलेसं गदो । तदो विकड्डिदाओ ट्ठिदीओ उक्कड्डिदा कम्मंसा जाव तदा अंतोमुहुत्तमुक्कस्सइत्थिवेदस्स ट्ठिदिं बंधियूण पडिभग्गो जादो । आवलियपडिभग्गाए तिस्से देवीए इत्थिवेदस्स उदयादो जहण्णयं झीणट्ठिदियं ।

[2]अरदि-सोगाणमोकड्डणादितिगझीणट्ठिदियं जहण्णयं कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो । संजमासंजमं सम्मत्तं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामेयूण एइंदिए गदो । तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमच्छियूण जाव उवसामयसमयपबद्धा गलंति तदो मणुस्सेसु आगदो । तत्थ पुव्वकोडी देसूणं संजम-मणुपालियूण कसाए उवसामेयूण उवसंतकसाओ कालगदो देवो तेत्तीससागरोवमिओ जादो । जाधे चेव हस्स-रदीओ ओकड्डिदाओ उदयादिणिक्खित्ताओ अरदि-सोगा ओकड्डिदा उदयावलियबाहिरे णिक्खित्ता । से काले दुसमयदेवस्स एगा ट्ठिदी अरदि-सोगाणमुदयावलियं पविट्ठा ताधे अरदि-सोगाणं जहण्णयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं । [3]अरदि-सोगाणं जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ? एइंदिय-कम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो । तत्थ संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो । चत्तारि वारे कसायमुवसामिदा । तदो एइंदिए गदो । तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागमच्छिदो जाव उवसामयसमयपबद्धा णिग्गलिदा त्ति । तदो मणुस्सेसु आगदो । तत्थ पुव्वकोडी देसूणं संजममणुपालियूण अपडिवदिदेण सम्मत्तेण वेमाणिएसु देवेसु उववण्णो । अंतोमुहुत्तमुववण्णो उक्कस्ससंकिलेसं गदो । अंतोमुहुत्तमुक्कस्सट्ठिदिं बंधियूण पडिभग्गो जादो । तस्स आवलियपडिभग्गस्स भय-दुगुंछाणं वेदयमाणस्स

(१) पृ ३४१ । (२) पृ ३४९ । (३) पृ ३५ । (४) पृ ३५२ । (५) पृ ३५४ ।

आसाणं गओ तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं।[1]उदयादो जहण्णयं झीणट्ठिदियं तस्सेव आवलियमिच्छादिट्ठिस्स।

[2]सम्मत्तस्स ओकड्डुणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स? उवसमसमत्तपच्छायदस्स पढमसमयवेदयसम्माइट्ठिस्स ओकड्डुणादो उक्कड्डुणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं। [3]तस्सेव आवलियवेदयसम्माइट्ठिस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं। [4]एवं सम्मामिच्छत्तस्स। णवरि पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स आवलियसम्मामिच्छाइट्ठिस्स चेदि।

अट्ठकसाय-चउसंजलण-पुरिसवेद-हस्स-रदि-भय-दुगुंछाणं जहण्णयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो च झीणट्ठिदियं कस्स? उवसंतकसाओ मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स जहण्णयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं। [5]तस्सेव आवलियउववण्णस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं।

[6]अणंताणुबंधीणं जहण्णयमोकड्डुणादो उक्कड्डुणादो संकमणादो च झीणट्ठिदियं कस्स? सुहुमणिओएसु कम्मट्ठिदिमणुपालियूण संजमासंजमं संजमं च बहुसो लभिदाउओ चत्तारि वारे कसाए उवसामेयूण तदो अणंताणुबंधी विसंजोएऊण संजोइदो। तदो वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालेयूण तदो मिच्छत्तं गदो तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं। [7]तस्सेव आवलियसमयमिच्छाइट्ठिस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं।

[8]णवुंसयवेदस्स जहण्णयमोकड्डुणादितिण्हं पि झीणट्ठिदियं कस्स? अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण तिपलिदोवमिएसु उववण्णो। तदो अंतोमुहुत्तसेसे सम्मत्तं लद्धं। वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालिदं। संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता अपच्छिमे भवे पुव्वकोडाउओ मणुस्सो जादो। तदो देसूणपुव्वकोडिसंजममणुपालियूण अंतोमुहुत्तसेसे परिणामपच्चएण असंजमं गदो। ताव असंजदो जाव गुणसेढी णिग्गलिदा त्ति तदो संजमं पडिवज्जियूण अंतोमुहुत्तेण कम्मक्खयं काहिदि त्ति तस्स पढमसमयसंजमं पडिवण्णस्स जहण्णयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं। [9]इत्थिवेदस्स वि जहण्णयाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि एदस्स चेव। तिपलिदोवमिएसु णो उववण्णयस्स कायव्वाणि। [10]णवुंसयवेदस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स? सुहुमणिगोदेसु कम्मट्ठिदिमणुपालियूण तसेसु आगदो। संजमासंजमं संजमं सम्मत्तं च बहुसो गओ। चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता

(१) पृ० ३१६। (२) पृ० ३२०। (३) पृ० ३२२। (४) पृ० ३२२। (५) पृ० ३२७। (६) पृ० ३२८। (७) पृ० ३३३। (८) पृ० ३३४। (९) पृ० ३३६। (१०) पृ० ३४०।

तदो एइंदिए गदो । पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागमच्छिदो जाव जाव उवसामयसमय-पबद्धा णिग्गलिदा त्ति । तदो पुणो मणुस्सेसु आगदो । पुव्वकोडी देसूणं संजममणु-पालियूण अंतोमुहुत्तसेसे मिच्छत्तं गदो । दसवस्ससहस्सिएसु देवेसु उववण्णो । अंतोमुहुत्तमुववण्णेण सम्मत्तं लद्धं । अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए त्ति मिच्छत्तं गदो । तदो वि विकड्डिदाओ ट्ठिदीओ तप्पाओग्गसव्वरहस्साए मिच्छत्तद्धाए एइंदिएसु उववण्णो । तत्थ वि तप्पाओग्गउक्कस्सयं संकिलेसं गदो तस्स पढमसमयएइंदियस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं ।

इत्थिवेदस्स जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं ? एसो चेव णवुंसयवेदस्स पुव्वं परूविदो जाधे अपच्छिममणुस्सभवग्गहणं पुव्वकोडी देसूणं संजममणुपालियूण अंतोमुहुत्तसेसे मिच्छत्तं गओ । तदो देवाणियदेवीसु उववण्णो अंतोमुहुत्तमुववण्णा उक्कस्ससंकिलेसं गदो । तदो विकड्डिदाओ ट्ठिदीओ उक्कड्डिदा कम्मंसा जाधे तदो अंतोमुहुत्तमुक्कस्सइत्थिवेदस्स ट्ठिदिं बंधियूण पडिभग्गो जादो । आवलियपडिभग्गाए तिस्से देवीए इत्थिवेदस्स उदयादो जहण्णयं झीणट्ठिदियं ।

[1]अरदि-सोगाणमोकड्डणादितिगझीणट्ठिदियं जहण्णयं कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो । संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण तिण्णि वारे कसाए उवसामेयूण एइंदिए गदो । तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमच्छियूण जाव उवसामयसमयपबद्धा गलंति तदो मणुस्सेसु आगदो । तत्थ पुव्वकोडी देसूणं संजम-मणुपालियूण कसाए उवसामेयूण अवसंतकसाओ कालगदो देवो तेत्तीससागरोवमिओ जादो । जाधे चेव हस्स-रदीओ ओकड्डिदाओ उदयादिणिक्खित्ताओ अरदि-सोगा ओकड्डिदा उदयावलियबाहिरे णिक्खित्ता । से काले दुसमयदेवस्स एया ट्ठिदी अरइ-सोगाणमुदयावलियं पविट्ठा ताधे अरदि-सोगाणं जहण्णयं तिण्हं पि झीणट्ठिदियं । अरइ-सोगाणं जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदियं कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो । तत्थ संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो । चत्तारि वारे कसायमुवसामित्ता । तदो एइंदिए गदो । तत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-भागमच्छिदो जाव उवसामयसमयपबद्धा णिग्गलिदा त्ति । तदो मणुस्सेसु आगदो । तत्थ पुव्वकोडी देसूणं संजममणुपालियूण अपडिवदिदेण सम्मत्तेण वेमाणिएसु देवेसु उववण्णो । अंतोमुहुत्तमुववण्णो उक्कस्ससंकिलेसं गदो । अंतोमुहुत्तमुक्कस्सट्ठिदिं बंधियूण पडिभग्गो जादो । तस्स आवलियपडिभग्गस्स भय-दुगुंछाणं अवेदयमाणस्स

(१) पृ. १४१ । (२) पृ. १४९ । (३) पृ. १५० । (४) पृ. १५१ । (५) पृ. १५४ ।

[1]अरदि-सोगाण जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदिय'। [2]एवमोघेण सव्वमोहणीयपयडीण जहण्णमोकड्डणादिझीणट्ठिदियसामित्त परूविद।

अप्पाबहुअ। सव्वत्थोवं मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय। उक्कस्सयाणि ओकड्डणादो उक्कड्डणादो सकमणादो च झीणट्ठिदियाणि तिण्णि वि तुल्लाणि असखेज्जगुणाणि। एव सम्मामिच्छत्त-पण्णारसकसाय-छण्णोकसायाणं। सम्मत्तस्स सव्वत्थोवमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदिय। सेसाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि उक्कस्सयाणि तुल्लाणि विसेसाहियाणि। [3]एव लोभसंजलण-तिण्णिवेदाण।

एत्तो जहण्णय' झीणट्ठिदिय। मिच्छत्तस्स सव्वत्थोव जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदिय'। सेसाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि तुल्लाणि असंखेज्जगुणाणि। [5]जहा मिच्छत्तस्स जहण्णयमप्पाबहुअं तहा जेसिं कम्मसाणमुदीरणोदओ अत्थि तेसिं पि जहण्णयमप्पाबहुअं। अणताणुबंधि-इत्थिवेद-णवुंसयवेद-अरइ-सोगा त्ति एदे अट्ठ कम्मसे मोत्तूण सेसाणमुदीरणोदयो। जेसिं ण उदीरणोदयो तेसिं पि सो चेव आलावो अप्पाबहुअस्स जहण्णयस्स। [6]णवरि अरइ-सोगाण जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदिय' थोवं। सेसाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि तुल्लाणि विसेसाहियाणि। [7]अहवा इत्थि-णवुंसयवेदाणं जहण्णयाणि ओकड्डणादीणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि तुल्लाणि थोवाणि। उदयादो जहण्णय झीणट्ठिदियमसंखेज्जगुण। अरइ-सोगाणं जहण्णयाणि तिण्णि वि झीणट्ठिदियाणि तुल्लाणि थोवाणि। जहण्णयमुदयादो झीणट्ठिदिय' विसेसाहिय'। [8]एवमप्पाबहुए समत्ते झीणट्ठिदिय' ति पद समत्तं होदि।

झीणाझीणाहियारो समत्तो।

ट्ठिदियं ति चूलिया

ट्ठिदिय' ति ज पद तस्स विहासा। [9]तत्थ तिण्णि अणियोगद्दाराणि। त जहा—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअ च। समुक्कित्तणाए अत्थि उक्कस्सट्ठिदिपत्तय' णिसेय-ट्ठिदिपत्तय अधाणिसेयट्ठिदिपत्तय उदयट्ठिदिपत्तय' च। [10]उक्कस्सयट्ठिदिपत्तय णाम किं? ज कम्म बंधसमयादो उदए दीसइ तमुक्कस्सट्ठिदिपत्तय'। [11]णिसेयट्ठिदिपत्तयं णाम किं? जं कम्म जिस्से ट्ठिदीए णिसित्त ओकड्डिद वा उक्कड्डिद वा तिस्से चेव ट्ठिदीए उदए

(१) पृ० ३५५। (२) पृ० ३५६। (३) पृ० ३५७। (४) पृ० ३५८। (५) पृ० ३५९। (६) पृ० ३६१। (७) पृ० ३६२। (८) पृ० ३६६। (९) पृ० ३६७। (१०) पृ० ३६८। (११) पृ० ३७०।

दिस्सइ तं णिसेयट्ठिदिपत्तयं । अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं णाम किं ? जं कम्मं जिस्से ट्ठिदीए णिसित्तं अणोकड्डिदं अणुक्कड्डिदं तिस्से चेव ट्ठिदीए उदए दिस्सइ तमधाणिसेय ट्ठिदिपत्तयं । उदयट्ठिदिपत्तयं णाम किं ? [1]जं कम्मं उदए जत्थ वा तत्थ वा दिस्सइ तमुदयट्ठिदिपत्तयं । एवमट्ठपदं । एत्तो एक्केक्कट्ठिदिपत्तयं चदुव्विहमुक्कस्समणुक्कस्सं जहण्णमजहण्णं च ।

सामित्तं । मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं कस्स ? अग्गट्ठिदिपत्तयं एक्को वा दो वा पदेसा एवमेगादि-एगुत्तरियाए वड्ढीए जाव तात्र उक्कस्सयं समय पबद्धस्स अग्गट्ठिदीए जत्तियं णिसित्तं तत्तियमुक्कस्सएण अग्गट्ठिदिपत्तयं । तं पुण अण्णदरस्स होज्ज । [2]अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयं कस्स ? तस्स ताव संदरिसणा— उदयादो जहण्णयमाबाहामेत्तमोसक्किदूण जो समयपबद्धो तस्स णत्थि अधाणिसेय-ट्ठिदिपत्तयं । समयुत्तराए आबाहाए एत्तदिमचरिमसमयपबद्धस्स अधाणिसेओ अत्थि । तदो पाए जाव असंखेज्जाणि पलिदोवमवग्गमूलाणि तावदिमसमयपबद्धस्स अधाणिसेओ णियमा अत्थि । एक्कस्स समयपबद्धस्स एक्किस्से ट्ठिदीए जो उक्कस्सओ अधाणिसेओ तत्तो कदिगुणं उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं ? तस्स णिदरिसणं । जहा— ओकड्डुक्कड्डणाए कम्मस्स अवहारकालो थोवो । अधापवत्तसंकमेण कम्मस्स अवहारकालो असंखेज्जगुणो । ओकड्डुक्कड्डणाए कम्मस्स जो अवहारकालो सो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । [3]एवदिगुणमेक्कस्स समयपबद्धस्स एक्किस्से ट्ठिदीए उक्कस्सयादो अधाणिसेयादो उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं ।

[4]इदाणिमुक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं कस्स ? सत्तमाए पुढवीए णेरइयस्स जत्तियमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयं तत्तो णिसेयमुत्तरकालमुववण्णो जो णेरइओ तस्स जहण्णेण उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं । एवमिह पुण काले सो णेरइओ तप्पाओग्गुक्कस्सयाणि जोगट्ठाणाणि अभिक्खं गदो । [5]तप्पाओग्गउक्कस्सयाहि वड्ढीहि वड्ढिदो । जिस्से ट्ठिदीए णिसेयस्स उक्कस्सपदं । [6]जा जहण्णिया आबाहा अंतोमुहुत्तुत्तरा एवदिसमयमणुदिण्णा सा ट्ठिदी । तदो जोगट्ठाणाण मुवरिल्लमद्धं गदो । दुसमयाहियआबाहाचरिमसमयमणुदिण्णाए एयसमयाहिय आबाहाचरिमसमयमणुदिण्णाए च उक्कस्सयं जोगमुववण्णो । तस्स उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं । [7]णिसेयट्ठिदिपत्तयं पि उक्कस्सयं तस्सेव ।

(१) पृ १७१। (२) पृ १७२। (३) पृ १७३। (४) पृ १७४। (५) पृ १७६। (६) पृ १७७। (७) पृ १७८। (८) पृ १८ । (९) पृ १८१। (१०) पृ १८२। (११) पृ १८२। (१२) पृ १९२। (१३) पृ १९३। (१४) पृ १९४। (१५) पृ १९५। (१६ पृ १९६।

उदयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयं कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ संजमासंजमगुणसेढिं संजमगुणसेढिं च काऊण [1]मिच्छत्तं गदो जाधे गुणसेढिसीसयाणि उदिण्णाणि ताधे मिच्छत्तस्स उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं। एवं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पि। [2]णवरि उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयमुदयादो झीणट्ठिदियभंगो।

[3]अणंताणुबंधिचउक्क-अट्ठकसाय-छण्णोकसायाणं मिच्छत्तभंगो। णवरि अट्ठकसायाणमुक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं कस्स ? संजमासंजम-संजम-दंसणमोहणीयक्खवयगुणसेढीओ त्ति एदाओ तिण्णि वि गुणसेढीओ गुणिदकम्मंसिएण कदाओ। एदाओ काऊण अविणट्ठेसु असंजमं गओ। पत्तेसु उदयगुणसेढिसीसएसु उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं। [4]छण्णोकसायाणमुक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं कस्स ? चरिमसमयअपुव्वकरणे वट्टमाणयस्स। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं जइ कीरइ भय-दुगुंछाणमवेदओ कायव्वो। [5]जइ भयस्स तदो दुगुंछाए अवेदओ कायव्वो। अध दुगुंछाए तदो भयस्स अवेदओ कायव्वो।

कोहसंजलणस्स उक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं कस्स ? उक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं जहा पुरिमाणं कायव्वं। उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं कस्स ? कसाए उवसामित्ता पडिवदिदूण पुणो अंतोमुहुत्तेण कसाया [6]उवसामिदा विदियाए उवसामणाए आबाहा जम्हि पुण्णा सा ट्ठिदी आदिट्ठा। तम्हि उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं। [7]णिसेयट्ठिदिपत्तयं च तम्हि चेव। उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं कस्स ? [8]चरिमसमयकोहवेदयस्स। एवं माण-माया-लोहाणं।

[9]पुरिसवेदस्स चत्तारि वि ट्ठिदिपत्तयाणि कोहसंजलणभंगो। णवरि उदयट्ठिदिपत्तयं चरिमसमयपुरिसवेदक्खवयस्स गुणिदकम्मंसियस्स। इत्थिवेदस्स उक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तयं मिच्छत्तभंगो। उक्कस्सयअधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं णिसेयट्ठिदिपत्तयं च कस्स ? [10]इत्थिवेदसंजदेण इत्थिवेद-पुरिसवेदपूरिदकम्मंसिएण अंतोमुहुत्तस्सतो दो वारे कसाए उवसामिदा। जाधे विदियाए उवसामणाए जहण्णयस्स ट्ठिदिबंधस्स पढमणिसेयट्ठिदी उदयं पत्ता ताधे अधाणिसेयादो णिसेयादो च उक्कस्सयं ट्ठिदिपत्तयं। [11]उदयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयं कस्स ? गुणिदकम्मंसियस्स खवयस्स चरिमसमयइत्थिवेदयस्स तस्स उक्कस्सयमुदयट्ठिदिपत्तयं। [12]एवं णवुंसयवेदस्स। णवरि णवुंसयवेदोदयस्से त्ति भाणिदव्वाणि।

---

(१) पृ० ४००। (२) पृ० ४०२। (३) पृ० ४०३। (४) पृ० ४०४। (५) पृ० ४०५। (६) पृ० ४०६। (७) पृ० ४१८। (८) पृ० ४१६। (६) पृ० ४२०। (१०) पृ० ४२१। (११) पृ० ४२२। (१२) पृ० ४२३।

मढण्णयाणि ट्ठिदिपत्तयाणि कायव्वाणि । [१]सम्मत्तस्सावि भग्गट्ठिदिपत्तय मढण्णयमेओ पदेसो । तं पुण अण्णदरस्स होज्ज । मिच्छत्तस्स णिसेयट्ठिदिपत्तय-मुदयट्ठिदिपत्तयं च मढण्णयं कस्स ? उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स तप्पाओग्गुक्कस्ससंकिलिट्ठस्स तस्स मढण्णयं णिसेयट्ठिदिपत्तयमुदयट्ठिदिपत्तयं च । [२]मिच्छत्तस्स मढण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं कस्स ? जो एइंदियट्ठिदिसंतकम्मेण मढण्णएण तसेसु आगदो अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णा । वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालियूण मिच्छत्तं गदो । तप्पाओग्गउक्कस्सियमिच्छत्तस्स आवलिया आबाहा तावदिमसमयमिच्छाइट्ठिस्स तस्स मढण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं ।

जघ मिच्छत्तस्स रचिदा अधाणिसेओ तस्स चेव जीवस्स सम्मत्तस्स अधाणिसेओ कायव्वा । णवरि तिस्से उक्कस्सियाए सम्मत्तद्धाए चरिमसमए तस्स चरिमसमयसम्माइट्ठिस्स मढण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं । णिसेयादो च उदयादो च मढण्णयं ट्ठिदिपत्तयं कस्स ? उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स पढमसमयवेदयसम्माइट्ठिस्स तप्पाओग्गउक्कस्ससंकिलिट्ठस्स तस्स मढण्णयं । [३]सम्मत्तस्स मढण्णओ अधाणिसेओ तहा पडिसेओ तीए चेव परूवणाए सम्मामिच्छत्तं गओ । तदो उक्कस्सियाए सम्मामिच्छत्तद्धाए चरिमसमए मढण्णयं सम्मामिच्छत्तस्स अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं । सम्मामिच्छत्तस्स मढण्णयं णिसेयादो उदयादो च ट्ठिदिपत्तयं कस्स ? उवसमसम्मत्तपच्छायदस्स पढमसमयसम्मामिच्छाइट्ठिस्स तप्पाओग्गुक्कस्ससंकिलिट्ठस्स ।

[४]अणंताणुबंधीणं णिसेयादो अधाणिसेयादो च मढण्णयं ट्ठिदिपत्तयं कस्स ? जो एइंदियट्ठिदिसंतकम्मेण मढण्णएण पंचिंदिए गओ । अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो । अंतोमुहुत्तेण पुणो पडिवदिदो । रहस्सकालेण संजोएदूण सम्मत्तं पडिवण्णा । वेछावट्ठिसागरोवमाणि अणुपालियूण मिच्छत्तं गओ तस्स आवलियमिच्छाइट्ठिस्स मढण्णयं णिसेयादो अधाणिसेयादो च ट्ठिदिपत्तयं । [५]उदयट्ठिदिपत्तयं मढण्णयं कस्स ? एइंदियकम्मेण मढण्णएण तसेसु आगदो । तम्हि संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता एइंदिए गओ । असंखेज्जाणि वस्साणि अच्छिदूण उवसामयसमयपबद्धेसु गलिदेसु [६]पंचिंदिएसु गदो । अंतोमुहुत्तेण अणंताणुबंधी विसंजोइत्ता तदो संजोएदूण मढण्णएण अंतोमुहुत्तेण पुणो सम्मत्तं लद्धूण वेछावट्ठिसागरोवमाणि अणंताणुबंधिणो गालिदा । तदा मिच्छत्तं गदा । तस्स आवलियमिच्छाइट्ठिस्स मढण्णयमुदयट्ठिदिपत्तयं ।

(१) पृ ४२४। (२) पृ ४२५। (३) पृ ४१ । (४) पृ ४३५। (५) पृ ४३६।
(६) पृ ४३७। (७) पृ ४३८। (८) पृ ४३९। (९) पृ ४४ । (१०) पृ ४४१।

[1]बारसकसायाण णिसेयट्ठिदिपत्तयमुदयट्ठिदिपत्तय च जहण्णय कस्स ? जो उवसतकसाओ सो गदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स जहण्णय णिसेयट्ठिदिपत्तयमुदयट्ठिदिपत्तय च। अधाणिसेयट्ठिदिपत्तयं जहण्णयं कस्स ? अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण तसेसु उववण्णो। तप्पाओग्गउक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणस्स जद्देही आवाहा तावदिमसमए तस्स जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तय। अइक्कते काले कम्मट्ठिदिअंतो सइ पि तसो ण आसी। [2]एवं पुरिसवेद-हस्स-रइ-भय दुगुंछाणं। [3]इत्थिणवुंसयवेद-अरदि-सोगाणमधाणिसेयादो जहण्णय ट्ठिदिपत्तय जहा संजलणाणं तहा कायव्वं। जम्हि अधाणिसेयादो जहण्णय ट्ठिदिपत्तयं तम्हि चेव णिसेयादो जहण्णय ट्ठिदिपत्तय। उदयट्ठिदिपत्तय जहा उदयादो झीणट्ठिदिय जहण्णय तहा णिरवयवं कायव्वं।

[4]अप्पाबहुअं। सव्वपयडीणं सव्वत्थोवमुक्कस्सयमग्गट्ठिदिपत्तय। उक्कस्सयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमसंखेज्जगुणं। णिसेयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सय विसेसाहिय। [5]उदयट्ठिदिपत्तयमुक्कस्सयमसंखेज्जगुण।

जहण्णयाणि कायव्वाणि। सव्वत्थोव मिच्छत्तस्स जहण्णयमग्गट्ठिदिपत्तय। [6]जहण्णय णिसेयट्ठिदिपत्तय अणतगुणं। जहण्णयमुदयट्ठिदिपत्तय असखेज्जगुणं। [7]जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमसंखेज्जगुणं। [8]एव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसाय-पुरिसवेद-हस्स-रइ-भय-दुगुंछाणं। अणंताणुबंधीण सव्वत्थोव जहण्णयमग्गट्ठिदिपत्तय। जहण्णयमधाणिसेयट्ठिदिपत्तयमणतगुण। जहण्णय णिसेयट्ठिदिपत्तय विसेसाहिय। [9]जहण्णयमुदयट्ठिदिपत्तयमसखेज्जगुणं। एवमित्थिवेद-णवुंसयवेद-अरदि-सोगाणं।

तदो ट्ठिदिय ति पदस्स विहासा समत्ता। एत्थेव पयडीय मोहणिज्जा एदिस्से मूलगाहाए अत्थो समत्तो।

ट्ठिदिय ति अहियारो समत्तो

तदो पदेसविहत्ती सचूलिया समत्ता।

---

(१) पृ० ४४२। (२) पृ० ४४४। (३) पृ० ४४५। (४) पृ० ४४६। (५) पृ० ४४७। (६) पृ० ४४८। (७) पृ० ४४६। (८) पृ० ४५०। (६) पृ० ४५१।

२ अवतरणसूची

पुस्तक १

क्रमाङ्क	पृ०	क्रमाङ्क	पृ०	क्रमाङ्क	पृ०
अ ४ अप्रतिबुद्धे [illegible]	१४९	अ २ अभिय होदि उदओ	८	२ सम्मत्तुप्पत्ती वि य	११८
ए ३ एकम्मे य [illegible]	१२९	व ५ [illegible]	२८७		

सूचना—टीकाकारने पृष्ठ १२ में '[illegible]' तथा पृष्ठ ६५ में 'पवि उक्कड्डदि' ये दो अंश उद्धृत किये हैं। पुस्तक ७ के पृ. २१५ में भी 'पवि उक्कड्डदि' रचना यथावत् उद्धृत है।

३ ऐतिहासिक नामसूची

पुस्तक १

	पृ०		पृ०		पृ०
अ अनन्त जिन	१	य यतिवृषभस्थविर	१ ७	व व्याख्यानाचार्य भट्टारक	२४५
उ उच्चारणाचार्य	१ ७ १८७	यतिवृषभाचार्य	११५, १ १ १४		

पुस्तक ७

	पृ०		पृ०		पृ०
आ आचार्य (सामान्य)	१ १५२	उ उच्चारणाचार्य	७, ८, ११	य यतिवृषभस्थविर	६९
आचार्यभट्टारक	१ २	च चूर्णिसूत्रकार	२४५, २६६ १९५	यतिवृषभाचार्य	८
		ज [illegible]	२१६	वीर (जिन)	१११

४ ग्रन्थनामोल्लेख

पुस्तक १

	पृ०		पृ०		पृ०
उ उच्चारणा	११४	च चूर्णिसूत्र	११४ १८९	व वेदना	६, ११, ७५, १८५
उपदेश ([illegible])	२६	म [illegible]	६१	[illegible]	६५
				स सूत्र (वचन)	६१, ६५

पुस्तक ७

	पृ०		पृ०		पृ०
उ उच्चारणा	२० ५ ६४ १११	च चूर्णिसूत्र	० २० ११ ६०	व [illegible]	१११
[illegible]		ट [illegible]	१११	[illegible]	११ ११, ६०
[illegible]	९६				
क [illegible]	१६				

५ न्यायोक्ति

पुस्तक १

पृ०

[illegible] १ ८

६ चूर्णिसूत्रगतशब्दसूची

पुस्तक ९

इस शब्दानुक्रमणिकामें सर्वनाम शब्द और क्रियापद छूटे हैं। शेष पूरे शब्दोंका सग्रह है।

पुस्तक ७

७ जयधवलान्तर्गतविशेषशब्दसूची

पुस्तक १

पुस्तक ७